‘ १८५७ का भारतीय स्वातंत्र्य-समर ’

ग्रंथ की जीवनी

१८५७ के भारतीय स्वातंत्र्य समर के अिस महान् ग्रथ में कही हुअी प्रमाणिक कथा अद्वितीय है। यह ग्रथ अेक प्रामाणिक अितिहास के नाते ससार के किसी भी अच्छे ग्रथालय का गौरव बढायगा; किन्तु अिस ग्रंथ के अद्वितीय लेखक के समान ही अिस ग्रथ की जीवनी भी अद्भुत प्रसगों से भरी हुअी है। श्रीकृष्णचद्र के समान अिस ग्रंथ को गर्भ में ही मार डालने के जतन हुअे, जन्म के बाद् दूर दूर भागना पडा, जनता के हाथ में पहुँचने को वर्षोंतक झगडना पडा है।

अिस ग्रंथ का उद्देश और नाम का स्पष्टीकरण लेखकही ने दिया है। वीर सावरकरने लंदन में रहते हुअे ‘ अभिनव भारत ’ की ओर से स्व-संपादित ‘ तलवार ’ पत्र के अेक लेख में, जो पत्र पॅरिस से प्रकट होता था, लिखा था, ‘ भारत माता स्वाधीन बनाने के लिअे हिंदुस्थान फिर अेक बार अुत्थान करे और फिर से अेक सफल स्वातंत्र्ययुद्ध करे यही १८५७ के भारतीय स्वातंत्र्य—समर ग्रंथ लिखने का हेतु है। ’ लेखक का विचार था, कि आगामी स्वातंत्र्ययुद्ध में राष्ट्र की सर्वांगपूर्ण सिद्धता होने के लिअे जिस संगठन और कार्यपद्धति का अवलंबन क्रांतिदल के अनुयायियों को करना पडेगा अुस की रूपरेखा अिस अैतिहासिक ग्रथ के द्वारा क्रांतिकारियों के सामने प्रस्तुत हो जाय। १८५७ में लडे गये स्वातंत्र्य-समर का दिव्य तथा अुदात्त आदर्श राष्ट्र के सामने यदि न रखा जाता, तो क्रांति—संदेश

तथा क्रांति के निश्चित सिद्धान्तों का भारत भर में प्रभावी प्रचार अिस तरह न हो पाता। सो, ५७ के क्रांतिवीरों के ओजपूर्ण शब्दों द्वारा और अुस से भी अधिक ओजपूर्ण कामों द्वारा क्रांति-संदेश देने के लिये वीर सावरकरजी ने अुन क्रांतिवीरों का स्मरण किया। संपूर्ण राजनैतिक स्वातंत्र्य तथा अुसे प्राप्त करने के लिअे विदेशी राजसत्ता के साथ सशस्त्र युद्ध द्वारा राष्ट्रीय क्रांति, यही अेकमात्र और अन्तिम साधन होने की निश्चिति-ये दोनों बातें, अुस समय (१९०८) हिंदुस्थानमें चालू राजनैतिक विचारगति तथा कृति के क्षितिज पर भी न अुगी थीं। अुस समय के गरम दल ने यह कुछ विचित्र तथा असम्भव सा कह कर अुस का नाम लेना भी अच्छा न माना था; नरम दल के नेताओं ने तो अिन कल्पनाओं ही को दोषपूर्ण बता कर घोर निंदा की और कुछ नीतिवादी धर्मध्वजियों ने अनैतिकता के नाम पर अुन का धिक्कार किया। अुस समय की अखिल भारतीय राष्ट्रीय महासभा (कॉंग्रेस) की आकांक्षा तथा साधना केवल यहॉंतक ही सीमित थी, कि हर समस्या समझौते से सुलझायी जाय और 'सुधारों' की ओर ऑंख लगाये रहे। स्वाधीनता के लिअे समर तो दूर, स्वातंत्र्य, क्रांति ये शब्द भी अुस समय के माननीय लब्धप्रतिष्ठ देशभक्तों को अपरिचित थे, अुन की बुद्धि की पहुँच के बाहर थे। सावरकरजी ने अेक अितिहास-लेखक के नाते अिस ग्रंथ का नाम केवल 'राष्ट्रीय अुत्थान का अितिहास' या '१८५७ का युद्ध' अैसा ही कुछ नहीं रखा। कारण स्पष्ट है। तत्कालीन भारतीय देशभक्तों के प्रतिदिन के विचारों में कम से कम अितने शब्दों को घुला देने और अिन शब्दों की तह में हानेवाले अुदात्त ध्येयवाद से नौजवानों को अनजान में भी प्रभावित करने के लिअे सावरकरजीने अिस ग्रंथ का नाम जानबूझ कर '१८५७ का भारतीय स्वातंत्र्य-समर' रखा। सशस्त्र क्रांति को सफल बनाना हो तो राजनीतिज्ञता और देशभक्ती की लहर सैनिकों तथा सब सेनाविभागों तक पहुँचाने की अत्यत-आवश्यकता का अनुरोध सावरकरजी आग्रह के साथ करते आये है। ५७ के अिस क्रांतियुद्ध के अितिहासने निस्सदेह सिद्ध कर दिखाया है, कि ९० वर्षों के पूर्व हमारे पुरखाओंने, संपूर्ण

स्वाधीनता प्राप्त करने के लिअे अुस राष्ट्रीय संघर्ष में सेना के भारतीय सैनिकों की सशस्त्र तथा सक्रिय सहायता प्राप्त की थी और मातृभूमि की मुक्ति के लिअे भीषण युद्ध रचा था। सावरकरजीने देखा, कि क्रांतिकारी दृष्टिसे अिस अितिहास को भारतीयों के सामने रखा जाय तो भारतीय नौजवानों में अेक नयी लहर, अेक नयी स्फुरणा अुमड पडेगी और अुन के हृदय में अेक नयी श्रद्धा घर करेगी, कि पराधीनता को नष्ट करने के लिअे आज की स्थिति में अन्य सब मार्गों की विफलता देख, ५७ का प्रयोग यदि फिर दुहराया जाय तो अुस की सफलता, पहले से अधिक निश्चित रूपसे, प्राप्त करने की पूरी सम्भावना है।

सावरकरजीने अिस उद्देश से ग्रंथ की कल्पना की। भारतीयों को हृदय की भाषा में यह अितिहास समझाने के लिअे

मराठीमें ग्रंथ लिखा।

वीर सावरकरजी की आयु केवल २३ साल की थी, जब १९०८ में लंदन में यह ग्रंथ मराठी भाषामें पूर्ण किया। लंदन की 'फ्री अिंडिया सोसाअिटी' की साप्ताहिक प्रकट बैठकों में सावरकरजी अपने भाषणों में अपने ग्रंथ के कुछ अध्यायों का अंग्रेजी अनुवाद सुनाया करते थे। किन्तु अिससे या अन्य किसी कारण से अंग्रेजी खुफियों को अिस ग्रंथ के रुख का अंदाजा लग गया और अुन्होंने अपना निश्चित मत अूपरी अधिकारियों को बताया, कि यह ग्रंथ राजद्रोही, अत्यंत विद्रोहजनक क्रांतिकारी साहित्य है। थोडेही दिनों में मूल मराठी ग्रंथ से दो अध्याय गायब हुअे मालूम पडे। बादमें पता चला, कि खुफियोंने अपने हस्तकों द्वारा अुन्हें चुराकर स्कॉटलंड यार्ड में पहुँचा दिये थे। फिरभी क्रांतिकारियों ने मराठी पाण्डुलिपी अत्यंत गुप्ततासे तथा भारतीय चुंगीविभाग अेवं डाक विभाग की काकदृष्टिसे बचाकर भारत में अिच्छित स्थानपर पहुँचा दिया। किन्तु क्रांति की भीषणता से भय खाकर महाराष्ट्र की बडी बडी मुद्रण संस्थाओंने ग्रंथ छापने का साहस करना स्वीकार न किया। निदान, 'अभिनव भारत' के अेक सदस्यने अपने ही मुद्रणालय में छापनेका बीडा अुठाया। किन्तु लंदन से भारत के खुफिया विभाग को सावधान किये

जानेसे अिस ग्रंथ के छपने की भनक अुसके कान में पडी। महाराष्ट्र की बडी बडी तथा लब्धप्रतिष्ठ मुद्रण-संस्थाओं की एक ही समय में अचानक छापा मारकर तलाशियाँ शुरू हुआीं। सौभाग्य से अेक पुलीस के अफसर द्वाराही अिस की खबर अुस साहसी सदस्य को मिली और पुलीस वहाँ पहुँचने के पहलेही मराठी पाण्डुलिपि सुरक्षित स्थानपर पहुँच गयी। लाचार होकर 'अभिनव भारत' वालोंने वह पाण्डुलिपि लदन के बदले पॅरिस भेज दी और वहाँसे ग्रंथकार के पास पहुँचा दी गयी।

भारत में अिस पुस्तक का मुद्रण असम्भव सिद्ध होनेपर—ध्यान रहे यह १९०८ का समय था—अुसे जर्मनी में छपवाना तय हुआ; क्यों कि, वहाँ संस्कृत साहित्य छपता था। किन्तु वहाँ के देवनागरी टंक (टाअिप) बिलकुल रद्दी और अजीब ढंग के होनेसे और विशेषतया, जर्मन जुडारियों को [कंपांझिटरों को] मराठी भाषा किस चिडिया का नाम है यह मालूम न होनेसे, धन और समय का काफी खर्च होने के बाद अुस विचार को रद कर दिया गया।

सब प्रकार से असुविधाअें देख कर, पराधीनता की बलिहारी से अिस

ग्रंथ का अंग्रेजी अनुवाद

करना अभिनव-भारत वालोंने तय किया और तदनुसार आअि. सी. अेस् के विद्यार्थियों तथा बॅरस्टरी पढनेवालों ने अनुवाद करने का काम अुठाया। भारतीय विद्यापीठ के कीर्तिप्राप्त अुपाधिधारी ये लोग 'अभिनव भारत' अिस गुप्त क्रांति संस्था के सदस्य थे। अनुवाद पूरा होनेपर श्री. वी. वी. अेस् अय्यर की देखरेख में अिंग्लैंडही में मुद्रित करने की सोची गयी। किन्तु ब्रिटिश गुप्तचर कोअी मक्खियाँ थोडे ही मार रहे थे! अुन्होंने जब्ती की डाँटडपट से तथा अन्य कारवाअियों से अिंग्लैंड भर में अुसे छापना असम्भव कर दिया। तब अंग्रेजी पांडुलिपि पारिस भेज दी गयी। किन्तु अुस समय की फ्रान्सीसी सरकार अंग्रेजों की भीगी बिल्ली थी। जर्मनी के हमले का डर होने से फ्रान्स को अिंग्लैंड का मुँह ताकना पड रहा था, जिस से अंग्रेजों के अिशारे पर फ्रान्सीसी

गुप्तचरों ने 'अभिनव भारत' की हलचलों को दबा देने की चेष्टा चलायी थी। अिस से फ्रान्स में भी अिस ग्रंथ की छपाअी न हो सकी। किन्तु क्रांतिकारी भी कच्ची मिट्टी के नहीं बने थे। कअी चालें चलकर अुन्हों ने हॉलंड की अेक मुद्रण संस्था को अंग्रेजी पुस्तक छापने पर राजी कर लिया और अिधर क्रांतिकारियों ने जोरदार अफवा अुडायी, कि फ्रान्स ही में पुस्तक छप रही है। अंग्रेजी खुफिया-विभाग दंग रह गया। फ्रान्स के सभी मुद्रणालयों को अुन्हों ने छान मारा और अिधर हॉलंडमें, ब्रिटिशों को सुराग मिलने के पहले ही, पुस्तक छप गयी। अुस संस्करण की सभी प्रतियाँ हॉलंड से फ्रान्स में पहुँचायी गयीं और गुप्तरूपेण अुनका प्रसार करने के लिअे छिपा रखी गयीं।

अिस ग्रंथ की पाण्डुलिपि हॉलंड पहुँचने के पहले सावरकरजी की प्रामाणिक जानकारी तथा क्रांतिकारी भावगति से पूर्ण लेखन के प्रभाव की कल्पना से ब्रिटिश तथा भारतीय ब्रिटिश सरकार पतलून में काँपने लगीं। मुद्रण-भाषण-लेखन स्वातंत्र्य का गला फाडकर पुकार करनेवाले अंग्रेजों के शासकों ने, जो पुस्तक अबतक छपी नहीं थी और यह बात निश्चितरूपसे वे जानते थे, उसपर पाबंदी लगा दी। **प्रकाशन के पहले ही पुस्तक पर मनाही!** अिंग्लंड के समाचारपत्रों ने अिस अन्याय पर सरकार को खूब रगेदा। मुद्रण-स्वातंत्र्य का गला घोंटनेवाली मनाही आज्ञा जब सावरकरजी पर जारी की गयी तो अुन्होंने लंदन टाअिम्स में पत्र लिखकर सरकार पर कडी आलोचना की भरमार की! अुन्होंने लिखा था:—स्वयं सरकार कहती है, कि मूल पाण्डुलिपि छपने को कहाँ गयी है, अुसे वह नहीं जानती। तो फिर सरकार किस सबूत पर कहती है, कि यह पुस्तक राजद्रोह की प्रेरणा करनेवाला भयंकर साहित्य है, और वह भी प्रकाशित होने के पहले? अिसके लिअे दो ही तर्क सम्भवनीय हो सकते हैं—या तो, सरकार के पास ही यह पाण्डुलिपि होनी चाहिये, या तो न होनी चाहिये। यदि हाँ, तो वैध अुपाय यही था, कि सावरकर जी को राजद्रोह के अभियोग में न्यायालय के सामने खडा किया जाय; यदि ना, तो अनधिकार तथा

अविश्वासी समाचारों का विश्वास कर सरकार किस मुँहसे निश्चित मत देती है, कि अिस पुस्तक में राजद्रोह ही प्रतिपादित है ?" टाअिम्स ने केवल यह पत्र छापा ही नहीं अपनी ओरसे यह भी जोड दिया, कि 'जब सरकार ने स्पष्टतया अुद्दण्डता से पुस्तकपर मनाही लगाने का असाधारण काम किया है, तब मालूम होता है, दाल में अवश्य कुछ काला है। [समथिंग व्हेरी रॉटन अिन दि स्टेट ऑफ डेनमार्क]

हॉं, तो अंग्रेजी संस्करण छप जानेपर क्रांतिकारियोंने अुसकी सैंकडों प्रतियाँ कअी तरकीबें लडाकर भारत में भेज दीं। अुनमें अेक तरकीब यह थी, कि अुन प्रतियोंपर 'पिक्विक् पेपर्स,' 'स्कॉटस् वर्क्स,' 'डॉन क्विकजोट' आदि झूठे नाम छपे लिफाफों में लपेटकर वे भेजी गयीं। कुछ प्रतियॉं बनावटी पेंदियों तथा खानोंवाली संदूकों में भेज दी गयीं। अिसतरह का अेक संदूक स्व. सर सिकंदर हयात खॉं, पंजाब के प्रधानमंत्री (जो सावरकरजी की 'अभिनव भारत' गुप्त संस्था के सदस्य थे और लंदनमें अुस समय विद्यार्थी थे, भारत में ले आये थे और बम्बअी के काकदृष्टि चुंगी धिकारियों की कअी ऑंखों में धूल झोंककर वह संदूक सुरक्षित निकल गया; अिसी तरह कअी पार्सलें भी निकल गयीं। और यह पुस्तक कअी बडे बडे नेताओं, अभिनव भारत के सदस्यों, महाविद्यालयों, ग्रंथालयों तथा क्रांतिकारियों के सहानुभूतिको तथा कुछ भारतीय सैनिकों के पास पहुँच गयी। अिस पुस्तक के प्रथम संस्करण की सभी प्रतियॉं, मय भेजने के खर्च के, 'अभिनव भारत' ने विनामूल्य वितरित कीं। फिर फ्रान्समें यह पुस्तक प्रकट रूप से १७ आगस्त १९०९ को प्रकाशित की गयी और आयर्लंड, फ्रान्स, रूस, जर्मनी, मिश्र और अमरीका के क्रांतिकारियों ने अिस पुस्तक का अच्छा स्वागत किया।

'अभिनव भारत' के क्रांतिकारी संगठन को कुचल देने के लिअे अिंग्लैंड तथा भारत के शासकोंने १९१० में अनेक यंत्रणाओं से क्रांतिकारियों को हैरान करने का अेक जोरदार कार्यक्रमही जारी किया था। कअी भारतीयों को फॉंसी दिया गया; कअी कालेपानी

पर भेजे गये, सैकडो को १० से १४ वर्षोतक की सश्रम कारावास की सजाअें दी गयीं। वीर सावरकरजी को तो दो जन्मों की (५० साल) सजा देकर अण्डमान भेजा गया।

अितनी भयंकर चोटें होने पर भी 'अभिनव भारत' के लाला हर-दयाल, प्रख्यात साहसी श्रीमती कामा, चट्टोपाध्याय आदि क्रांतिकारियोंने अिस ग्रंथ का दूसरा संस्करण छापना तय किया। श्री. लाला हरदयालने अमरीका में 'अभिनव भारत' की शाखा स्थापित कर 'गदर' नामक अेक समाचारपत्र शुरू किया। क्रांतिदल की सहायता के लिअे

ग्रंथ का दूसरा संस्करण

प्रकट रूप से बेचना प्रारंभ हुआ। और अुस का अनुवाद अुर्दू, पंजाबी, तथा हिंदी में 'गदर' पत्र में क्रमशः प्रकाशित होने लगा, जिससे सैनिकों तथा खेती के लिअे कॅलिफोर्निया में बसे हुअे सिक्खों में नये जागरण की लहर दौडने लगी। जल्द ही १९१४ का युरोपीय महासमर छिडा। भारतीय सेना में विद्रोह पैदा करने की चेष्टा अिस समय की गयी, जिस में अिस ग्रंथ का काफी हाथ था। अिस पुस्तक की कअी प्रतियाँ अमरीका में १५०) रु. में बिक गयी थीं।

वीर सावरकर के पकडे जाने पर मूल मराठी पाण्डुलिपि श्रीमती कामा के पास पारिस भेजी गयी। ब्रिटिश गुप्तचरों को अिसकी बू तक न मिले अिस लिअे श्रीमती कामाने

मूल मराठी पाण्डुलिपि का जेवर बॅंक ऑफ पारिस में सुरक्षित रख दिया था। किन्तु जर्मनी के आक्रमण से तथा श्रीमती कामा की मृत्यु से न पारिस बॅंक रही, न 'जेवर' का गाहक। बहुत खोज करने पर अुस का कहीं पता न लगा। मराठी साहित्य की अमिट हानि कर यह ग्रंथराज नष्ट हो चुका।

अंग्रेजी प्रति के कहीं और भी संस्करण निकले होंगे, किन्तु हमारी जान में जितने प्रयत्न हैं अुन्हीं का लेखा यहाँ दिया गया है।

सं. १९१७ में राजकोट जेल के कार्यालय में बैठ कर हॉलंड से प्राप्त संस्करण की तीन प्रतियॉं टंकित (टाअिप) कर अुस के अंदर होनेवाले दो चित्रों की भी प्रतियॉं अनुवादक ने बनायी थीं। तीस वर्षों के अुथलपुथल के बाद भी अुनमेंसे अेक प्रति आज सुरक्षित है।

अिस ग्रंथ का तीसरा संस्करण

'हिंदुस्थान सोशिआलिस्ट रिपब्लिकन असोसिअेशन' के तत्त्वावधान में हुतात्मा सरदार भगतसिंहजी ने १९२९ के अन्त में, गुप्तरूपसे, छपाया था अब तक के संस्करणों पर लेखक का नाम 'अॅन अिंडियन नॅशनॅलिस्ट' था। भगतसिंहजी द्वारा प्रकाशित संस्करण पर वीर सावरकरजी का नाम दिया हुआ था। अिस का प्रचार भी ठीक हुआ। गुप्तरूपसे प्रचारित होने पर भी अच्छे मूल्यपर काफी संख्या में लोगों ने पुस्तक खरीदी और सरकारने भी काफी प्रतियॉं जब्त कीं। १९३०-३१ में 'लॅमिंग्टन रोड शूटिंग केस' नाम से प्रसिद्ध अेक बडा सनसनीदार मुकदमा बम्बअीमें चला था, जिस में प्रमुख अभियुक्त था अिस ग्रंथ का अनुवादक। ५७ के स्वातंत्र्यसमर का वितरण करने से राजद्रोह का प्रचार करने का अेक अभियोग अुस पर था। जब हाअिकोर्ट में सबूत के तौर पर अिस की अेक प्रति पुलीस ने पेश की तो हर बहाने बॅरिस्टरों ने अुसे पढने के लिअे अवकाश मॉंगा और अुन्हें मिला भी। १९३० के सत्याग्रह आंदोलन में अिस के कुछ अध्यायों की साअिक्लोस्टाअिल पर बनायीं नकलें बोरीबंदर के सामने बेची जाती देखी गयी थीं। राजगोपालाचार्यजी ने भी गुप्तरूप से मगवा कर अिस को पढा है। आज भारत में कहीं कहीं मिलनेवाली प्रतियॉं भगतसिंहजी द्वारा ही प्रकाशित हुअी पायी जाती हैं।

१९४२ में पूज्य नेताजी सुभाषचंद्र बोसने 'आजाद हिंद' सेना का संगठन किया। नेताजी को अिस ग्रंथकी अेक प्रति मलाया पहुँचने पर मिली थी। कोलालपुर के अेक विक्रेताने

अिस ग्रंथ क तामिल संस्करण

प्रसिद्ध किया, जिस का प्रथम भाग वोलकॅनो [ज्वालामुखी] नामसे प्रकाशित हुआ था। अिस ग्रंथ का पूरा अुपयोग नेताजीने किया था, यहाँ तक, कि 'चलो दिल्ली' अमर नारा भी सावरकरजी की अिसी ग्रंथ के प्रथम खण्ड से लिया गया।

१९३७ में जब पहली बार राष्ट्रीय महासभा के चुने प्रतिनिधियों का मंत्रिमडळ प्रांत प्रात में स्थापित हुआ, तब जब्त साहित्य को मुक्त करवाने के लिअे जनताने बडा आदोलन किया; किन्तु अन्य पुस्तकों से मनाही हटाने परभी सावरकरजी के अिस महान् ग्रंथ की जब्ती हटाने का साहस ये काँग्रेसी स्वातन्त्र्योपासक न कर पाये!

किन्तु दूसरी बार १९४६ में प्रातिक शासनसूत्र कॉंग्रेसियोंने सम्हाला तब बम्बअी के नौजवानोंने गुप्तरूपसे अंग्रेजी संस्करण का पुनर्मुद्रण किया और मंत्रिमंडल को चेतावनी दी, कि 'जेल जानेकी जोखम उठाकर भी, हम यह क्रांति-गीता बेचने जा रहे हैं।' किन्तु अिधर मंत्रिमण्डलने समग्र सावरकर साहित्य की जब्ती रद् कर देने की घोषणा की और अिस तरह ३८ वर्षों का अन्याय दूर हो गया। सारा भारत बम्बअी मन्त्रिमण्डल को धन्यवाद देगा!

अब अिसका अंग्रेजी सुंदर संस्करण प्रसिद्ध हो चुका है तथा मराठी 'आवृत्ति' भी निकल गयी है।

अिस प्रकार भारतीय स्वाधीनता के लिअे 'अभिनव भारत' ने सशस्त्र क्राति का संगठन शुरू किया तब से, नेताजी सुभाषचंद्र बोस की आजाद हिंद सेना के साथ चढाई तक, सब को प्रेरणा देनेवाला यह अनमोल ग्रंथ क्राति-कारियों का ग्रंथसाहब बन गया था और आगामी क्रांतिकारियों का दीपस्तम्भ बना रहेगा। ब्रिटिश साम्राज्य की समस्त शक्ति, कंस की तरह, अिस ग्रंथ के श्रीकृष्ण को मिटाने में असमर्थ रही; क्यों कि, गोकुलवासी जनों के समान देशभक्त क्रांतिकारियोंने अुसे प्राणों के अंचल में छिपा कर अुसकी रक्षा की। कहते हैं अितिहास की पुनरावृत्ति होती है, गोकुल से यह नंदकिशोर अब प्रकट रूप से वासुदेव बना है! सभी छल-कपट तथा दुष्ट हमलों से बचकर यह कृष्णचंद्र

अब मथुरा में पहुँच रहा है और अनेक यंत्रणाओं, वनवास, देह दंड, काला पानी, अपनों ही से दुःख को सह कर **क्रांति के द्रष्टा वीर सावरकरजी** वसुदेव के समान कंस के कारागार से मुक्त हो कर अपने लाडले ग्रंथ की विजय को देखने के लिअे अुत्सुक हैं। भारत का अहो भाग्य!

जिस अिच्छा और आकांक्षा से वीर सावरकरजी ने मात्र २३ वर्ष की आयु में यह 'अितिहास' लिखा, अुस को सफल होते देखने को आप अुत्सुक हैं। १८५७ का स्वातंत्र्य-समर समाप्त हुआ यह विचार ही गलत है। भारतीय स्वाधिनता के रणयज्ञ का वह अेक अध्याय, अेक काण्ड था! ५७ का यह अितिहास विद्यापीठों में केवल अेक प्रामाणिक विवरण के तौर पर पढाया जाने में सावरकरजी को संतोष नही है; वह भविष्य में मार्गदर्शक तथा चैतन्य की स्फूर्ति का अखण्ड स्रोता बन कर रहेगा-रहना चाहिये।' सो, भारत सपूर्ण स्वतंत्र बन जाने तक अिस 'अितिहास' का कार्य पूरा नहीं होगा। कंस को मार कर द्वारिका में अेक नया राज्य श्रीकृष्णचंद्र ने बसाया; यह ग्रंथ भी अब मथुरा पहुँच चुका है और केवल वही नहीं पश्चिम में नया राज खडा कर भारत की अखण्डता को अुसे सिद्ध करना है, तब तक १८५७ का रणयज्ञ पूरा नहीं होगा। १९०७ की १० मअी को लंडन में, १८५७ को ५० वर्ष पूरे होने के अुपलक्ष्य में, अेक समारोह मनाया गया था। अुस समय युवक सावरकरजी ने अपने भाषण में कहा था:—

'१० मअी १८५७ को प्रारंभित युद्ध १० मअी १९०७ को समाप्त नहीं हुआ है और अुस १० मअी तक समाप्त न होगा, जबतक कि साधना पूरी होकर भारतमाता सपूर्ण स्वाधीनता को प्राप्त न करेगी।'

पाठक! अिस ग्रंथ को पढने के पहले अितना पर्याप्त नहीं है?

८

प्रथम संस्करण में ग्रंथकर्ता की भूमिका

अब पचास वर्ष बीत चुके है, परिस्थिति बदल चुकी है, दोनों दलों के प्रमुख अभिनेता काल के गाल में छिप चुके है, सो; १८५७ का युद्ध अब प्रचलित राजनैतिक क्षेत्र की मर्यादा लाँघ चुका है; जिससे अुसे 'अितिहास' की कक्षामें रखना योग्य होगा।

अिस दृष्टिसे जब मैं अितिहासकार की आँखों से अुस ज्ञान-गर्भ तथा भव्य महादृश्य की खोज करने बैठा तो १८५७ के अुस 'बलवे' में स्वातंत्र्य समर की जगमगाहट देख मैं दंग रह गया। मृत वीरों की आत्माअें हुतात्मता के तेजोवलय में रची हुअी थीं; भस्मराशी में तेजस्वी प्रेरणा के स्फुलिंग दीख पडे। अितिहास के अेक अत्यंत अुपेक्षित कोने में गहरे दबे पडे अुस दृश्य को पाकर, मेरे देशबंधु भी अत्यंत मधुर निराशा का अनुभव करेंगे, जब कि, मै खोज की किरणों में अुसके दर्शन कराअूँगा। मैंने वही चेष्टा की और आज मैं भारतीय पाठको के सामने, यह चौंका देनेवाला किन्तु प्रामाणिक, १८५७ के महत्त्वपूर्ण बनावों का, चित्र रखने में समर्थ हुआ हूँ।

जिस राष्ट्र को अपने अतीत का सच्चा भान न हो, अुसके लिअे कोअी भविष्य नहीं है। अिसी के साथ यह भी सत्य है, कि हर राष्ट्र को केवल गर्वभरे अतीत की क्षमता ही नहीं विकासित करनी चाहिये, भविष्य को सुधारने के लिअे अुसका अुपयोग करने के ज्ञान की भी योग्यता होनी चाहिये। राष्ट्र को अपने देश के अितिहास का दास नहीं, स्वामी रहना चाहिये। क्यों कि, अतीत में किये हुअे कुछ कामों का फिर से अुसी तरह दुहराना महत्त्वपूर्ण होनेपर भी निरी मूर्खता है। शिवाजी महाराज के समय मुसलमानों के प्रति द्वेषभाव न्यायपूर्ण और आवश्यक था; किन्तु केवल अिस बूतेपर, कि हमारे

पुरखाओं का मन अुसी द्वेषसे भरा हुआ था, आज भी अुसी भाव को अुभाडना अन्याय और मूर्खता होगी।

अिस ग्रंथ में दिये गये सब प्रमाण लगभग अंग्रेज लेखकों के ही हैं; अुनके अपने पक्ष के कर्तृत्व का चित्र जिस विस्तार तथा श्रद्धा से रंगा है अुसी तरह दूसरे पक्ष को भी न्याय करना अुनके लिये असम्भव हो गया होगा। हो सकता है, आवश्यक हुआ होगा, कि अिस ग्रंथ में वर्णित के अलावा दूसरे कअी प्रसंग अनुल्लेखित रह गये हो; अिस ग्रंथ में कअी प्रसंग गलत तरीके से वर्णित हों। किन्तु यदि कोअी देशभक्त अितिहासकार अुत्तर भारत में जाय और अुन लोगों के मुँह से, जिन्होंने अुस प्रलय को देखा हो या अुस युद्ध में शायद अग्रसर हो लडे हों, जानकारी प्राप्त करे, तो अब भी अिस महान् युद्ध के बारे में सच्ची और ठीक बातें सुरक्षित रखने के साधन मिल जायँ। जल्द से जल्द यह उद्योग न किया जाय तो दुर्भाग्य से ये साधन हाथ से निकल जायँगे। अेक या दो दशकों में, अुस युद्ध में हाथ बॅटानेवाली पीढी की पीढी, फिरसे कभी न लौटने के लिअे कालकवलित हो जायगी, तो अुन वीरों के प्रत्यक्ष दर्शन करने का आनंद तो दूर, अुनके किये कामों का लेखा भी अितिहास में अधूरा रह जायगा। बहुत देरी होने के पहले ही, कोअी देशभक्त अितिहासकार अिस हानि से बचने के लिये कटिबद्ध न होगा?

अिस ग्रथ में वर्णित महत्त्वपूर्ण घटनाओं तथा अितिहास के प्रमुख सूत्र के समान ही, छोटा से छोटे संदर्भ या अुल्लेख और अत्यंत साधारण बात को प्रमाणित ग्रथों के आधार से सिद्ध किया जा सकता है।

विराम करने के पहले मै अेक अिच्छा प्रकट करना चाहता हूँ, कि किसी भारतीय सज्जन की लेखनी से अत्यंत त्वरित १८५७ की कहानी अैसी लिखी जाय, जो देशभक्तिपूर्ण होने पर भी प्रामाणिक हो और बहुत विस्तारसे कही जानेपर भी सुसंगत हो; और अैसे सुंदर कार्य के कारण मेरा यह नम्र लेखन जल्द ही विस्मृत हो जाय।

ग्रंथकर्ता

संदर्भ-ग्रंथ

— अंग्रेजी —

[पहले पुस्तक का नाम फिर लेखक का नाम है।]

(१) दि मॉर्क्विस ऑफ डलहौसीज अॅडमिनिस्ट्रेशन ऑफ ब्रिटिश अिंडिया—सर अेडविन आर्नोल्ड

(२) दि हिस्टरी ऑफ अिंडियन म्यूटिनी—चार्लस बॉल.

(३) अे लेडीज अेस्केप फ्रॉम ग्वालियर—श्रीमती कूपलंड.

(४) दि अिंडियन रिबेलियन; अिट्स् कॉजेस अॅन्ड रिजल्टस् अिन अे सीरीज ऑफ लेटर्स—डॉ अलेक्जांडर डफ.

(५) लेटर्स अॅन्ड डिस्पॅचेस्—सर विन्सेंट आयर.

(६) रेमिनिसन्सिस ऑफ दि ग्रेट म्यूटिनी १८५७-५९—विलियम फोर्बस्-मिचेल.

(७) रियल डेन्जर अिन इंडिया—फॉर्जेट.

(८) स्टेट पेपर्स (कअी संख्याअें)—जार्ज विलियम फॉरेस्ट.

(९) अिन्सिडेन्ट्स अिन दि सीपॉय वॉर १८५७-५८—(सर होप ग्रॅट के व्यक्तिगत जर्नलों से संग्रहित, जिस में अेच. नॉलिस की टिप्पणियों के कअी अध्याय जोड दिये हैं)—सर जेम्स होप ग्रॅट.

(१०) अॅन अकाअुंट ऑफ दि म्यूटिनीज अिन अवध अॅन्ड ऑफ दि सीज ऑफ लखनअू रेसिडेन्सी—मार्टिन रिचर्ड गबिन्स.

(११) अेसेज ऑन दि अिन्डियन म्यूटिनी—हॉलोवे.

(१२) हिस्टरी ऑफ दि अिन्डियन म्यूटिनी—होम्स.

(१३) वेस्टर्न अिंडिया बिफोर अॅन्ड ड्यूरिंग दि म्यूटिनी; पिक्चर्स ड्रॉन फ्रॉम लाअिफ—सर जॉर्ज ले ग्रॅंद् जेकब.

(१४) अे हिस्टरी ऑफ दि सीपॉय वॉर अिन अिंडिया—३ खण्डों में—सर जॉन विलियम के.

(१५) हिस्टरी ऑफ दि अिन्डियन म्यटिनी—६ खण्डों में—के अॅन्ड मॅलेसन.

(१६) ट नेटिव्ह नॅरेटिव्हस्—मुअिनल-दिन-हसनखाँ.

(१७) फिक्शन्स कनेक्टेड वुअिथ दि अिन्डियन आअुट-ब्रेक ऑफ १८५७ अेक्सपोज्ड—अेडवर्ड लेकें.

(१८) सेन्ट्रल अिन्डिया ड्यूरिंग दि रेबेलियन ऑफ १८५७—थॉमस लो; अेम. आर. सी. अेस.

(१९) रेड पॅम्फलेट—के. बी. मॅलेसन.

प्रथम संस्करण में ग्रंथकर्ता की भूमिका

(२०) व्हाय अिज दि अिंग्लिश ओडियस टु दि नेटिव्हस् ऑफ अिंडिया—विलियम मार्टिन.

(२१) दि सीपॉय रिवोल्ट; अिट्स् कॉजेस् अॅन्ड कॉन्सिक्वेन्सिस—हेन्री मीड.

(२२) अे अियर्स कॅम्पेनिंग अिन अिंडिया फ्रॉम मार्च १८५७ टु मार्च १८५८—ज्युलियस जॉर्ज मेडले.

(२३) नेटिव्ह नॅरेटिव्हस्—मेटकाफ.

(२४) फॉर्टिवन अियर्स अिन अिंडिया—लॉर्ड रॉबर्टस्.

(२५) माय डायरी अिन अिन्डिया अिन दि अियर १८५८—१८५९—दो खण्डों में सर वि. हॉवर्ड रसेल.

(२६) पर्सनल नॅरेटिव्ह ऑफ कानपुर—शेफर्ड.

(२७) रेकलेक्शन्स—सिल्वेस्टर.

(२८) दि पाटणा क्रायसिस—विलियम टेलर.

(२९) दि स्टोरी ऑफ माय लाअिफ—मीडोज टेलर.

(३०) दि स्टोरी ऑफ कानपुर—मॉवरे थॉमसन.

(३१) कानपुर—सर जॉर्ज ऑटो ट्रेवेलियन.

(३२) कम्प्लीट हिस्टरी ऑफ दि ग्रेट सीपाय वॉर—व्हाअिट.

(३३) दि डिफेन्स ऑफ लखनअू—विल्सन.

(३४) हिस्टरी ऑफ दि सीज ऑफ दिल्ली—वहॉं मुलाजिम अेक अफसर.

(३५) मिलिटरी नॅरेटिव्ह—

(३६) नॅरेटिव्ह ऑफ दि अिंडियन रिव्होल्ट, आदि; 'अिलस्ट्रेटेड टाअिम्स' से पुनर्मुद्रित.

— मराठी —

(३७) शिपायांचें बंड—श्री. विनायक कोंडदेव ओक.

(३८) झांशीच्या राणीचें चरित्र—श्री. पारसनीस.

— बंगाली —

(३९) शिपाअी युद्धेर अितिहास.

———

अनुवादक की भी सुनिये

पूज्य सावरकरजीने अुनकी अनोखी पुस्तक का अनुवाद हिन्दी में लिखने की अनुज्ञा देकर मेरा बडा अुपकार किया है। अहिन्दी प्रांतोंमें हिन्दी प्रचार का काम करने में मेरा यह भी मन्तव्य था, कि राष्ट्रभाषा का भण्डार अन्य भारतीय भाषाओं के अुत्तमोत्तम ग्रंथों के अनुवाद से भर दिया जाय। किन्तु, केवल अेकही पुस्तक अब तक मेरी सहायता से हिन्दी संसार के सामने आयी—वह है 'हिन्दुओं की अवनति की मीमांसा'। मैंने राष्ट्रभाषा की सेवा के बल पर वह धृष्टता की; भारतियोंने बडी सहृदयता से अुसका स्वागत किया। अब फिर मैंने दूसरी बार यह धृष्टता की है। किन्तु, अिस के बारे में मुझे झिझक नहीं, गर्व है। मै अपने भाग्य को सराहता हूँ; कि मैं अैसे महान् ग्रंथ के विचारों का वाहक—भारवाहक—बना। महाराणा प्रताप को वहन करने में अुन के घोडे को—चेतक को—जिस गर्व का अनुभव होता होगा, वही गर्व मुझे सावरकरजी के अनमोल विचारों को वहन करने में होता है। क्यों कि, जब यह ग्रंथ भारत में आ ही न सकता था, तब अिन के पन्नों को रट कर लोगों को सुनाने में मुझे बडा संतोष मिलता था। अिस ग्रंथने क्रांतिकारियों को जीवनमंत्र पढाया, सं. १९०९ में प्रकाशित अिस ग्रंथ में 'करेंगे या मरेंगे'; 'चलो दिल्ली' जैसे, आजकल भारतियों के गर्व के निशान बने, नारे प्रत्यक्ष दीख पडते हैं। अिस ग्रंथ को चोरी से पढने की लालसा श्री. राजगोपालाचारी भी संवरण न कर पाये थे। १९३० में बम्बअी में अिस के पन्नों को टंकित कर खोंचेवालों द्वारा वितरित करने में हम लोग मस्त रहते थे। पूज्य सुभाष-चन्द्रजी पर अिस ग्रंथने प्रभाव डाला था। अैसे ग्रंथ का परिचय पूर्णरूपेण मेरे

भारतीय बंधुओं को कराने में मुझे स्थान मिला, अिस से मैं मेरा जन्म सफल समझता हूँ।

तेअीस वर्ष की आयु ही क्या होती है? पर अुसी आयु में पूज्य सावरकरजीने यह पुस्तक लिखकर हिंदुस्थान की अभूतपूर्व सेवा की है। स्व. लोकमान्य टिलकजीने ' अितिहास छात्र वृत्ति ' के लिअे सावरकरजी के विषय में क्रांतिकारियों के भीष्म स्व. पं. शामजी कृष्ण वर्मा को अनुरोध कर भारतीय राष्ट्र का सदा के लिअे अुपकार किया है, अिस से हर कोअी सहमत होगा, जो अिस ग्रथ को समझ कर पढेगा।

ब्रिटिश म्यूजियम में संरक्षित सरकारी तथा अन्य पत्रों तथा संलेखों की अलमारियाँ भरी पडी हैं। अुनकी छानबीन कर राष्ट्रीय दृष्टिसे हमारे देश के महान् संघर्ष का प्रामाणिक अितिहास तो अिस ग्रंथ में हअी है—वही अुसका अेक अुद्देश है—किन्तु रूखी और गभीर भाषा की क्लिष्टता से अपनी पाण्डिताअी की छाप लोगों के मनपर लगाने के लिअे सावरकरजीने यह ग्रंथ नहीं लिखा। स्वतंत्रता के महान् यज्ञ को प्रत्यक्ष करने के लिअे अिस मंत्र-दृष्टाने यह गाथा गायी है। क्यों कि, सावरकरजी सर्वप्रथम कवि है, फिर असाधारण वक्ता, लब्धप्रतिष्ठ लेखक, दूरदृष्टि राजनैतिक संत हैं। अितिहास की कथा को काव्यपूर्ण भाषा में अुन्हों ने लिखा है। अुपन्यास के समान सुललित, मनोहारी।

और अिस से मैंने कहा, कि मैंने धृष्टता की है : अुस काव्य को, व्यग को, अुस ओज को, राष्ट्रीय स्वातंत्र्य की लगन को यदि मैं अभिव्यजित न कर पाया हूँ, तो पाठक मेरी घोर निंदा करेंगे। और मैं पहले से यह प्रार्थना कर छुटकारा नहीं पाता, कि ' मेरा प्रथम प्रयत्न होने से क्षमाशील पाठकगाण मेरे दोषों की क्षमा कर दें '। यदि मुझसे अुन महान् विचारों का वहन अच्छी तरह नहीं बना हो, तो मुझे निंदा को सिर आँखों पर रखना चाहिये; यदि मैं बहुत अंशों में सफल हुआ हूँ, तो प्रशंसा को नम्रता के साथ ग्रहण करना चाहिये।

मेरी जान में श्री. सावरकरजी की तरह १८५७ के स्वातंत्र्य-समर का विचार, मात्र श्री. जयचन्द्रजी विद्यालंकारने किया है-चाहे वह कितनी ही संक्षेप में क्यों न हो ! अब भी अैसे अितिहासज्ञ-जो अपने को वैसा मानते हैं- पडे हैं जो १८५७ के प्रसंग को मात्र ' गदर ' ही मानने का हठ करते हैं। अिसी से मैं जयचन्द्रजी का अुलेख कर चुका हूँ।

१५ अगस्त १९४७ से अंग्रेज भारतवर्ष के गले पर दबाया हुआ बूटवाला पैर हटाकर, अब दाहिनी रान पर रख कर खडा है। हम अिसे स्वतंत्रता मानते हैं—हाँ, पहले हम न बोल सकते थे, न अुठ पाते थे। अब हम बैठ सकते हैं, बोल सकते है। अेक महत्त्वपूर्ण बात हम कभी न भूलें : अंग्रेजों का विश्वास कभी न करना चाहिये। संसार भर में किसी अंग्रेज का विश्वास करना हो, तो केवल दो स्थानों में होनेवाले का-अेक चित्र में दिखायी देनेवाला, दूसरा कब्र में दफनाया हुआ! तीसरे किसी अंग्रेज का विश्वास करने से सदाही हानि होगी। अिस का प्रत्यक्ष अुदाहरण आज पूर्व पंजाब की सीमापर अुपस्थित है। अिस बात के कअी अुदाहरण अिस ग्रंथ में पाये जायँगे।

अिस ग्रंथ में कहीं भी रोमन अक्षरों का अकारण अुपयोग नहीं किया है। अंग्रेजी भाषा भी देवनागरी में लिखी जानी चाहिये; अिस सिद्धान्त को मैंने निबाहा है।

अन्त में, सहृदय पाठकों से यही प्रार्थना है, कि अिस ग्रंथ से जो भी आनंद मिले अुसका जश श्री सावरकरजी को देकर, सब दोषों का अधिकारी मुझे बनाअें और भारतीय स्वतंत्रता की रक्षा के लिअे हर युवक को अिस का पठन करने का अनुरोध करें।

' वंदेमातरम् '
७८७ ब, सदाशिव पेठ
पुणें २
भाद्रपद २००३

सज्जनों का सेवक
ग. र. वैशंपायन

अिस ग्रंथ के अनुवादक–पं. ग. र. वैशंपायन

आभार

श्री. सावरकरजीने अपने अनूठे ग्रंथ का हिंदी संस्करण प्रकाशित करने का गौरव हमे प्रदान किया है, अिसलिअे हम आप के अत्यंत आभारी हैं।

हिन्दी में प्रकाशन करने का यह हमारा पहला अवसर है। यदि हमारे अिस साहस का अच्छा स्वागत हिन्दी संसार करेगा, तो आगामी प्रकाशन के लिअे हम अुत्साहित होंगे।

बम्बअी सरकारने कागज की सुविधा कर दी, हम अुसे धन्यवाद देते हैं। श्री. ग. र. वैशंपायनजी के तो हम अत्यंत ऋणी है। आप के अनथक परिश्रम ही से हम यह ग्रंथ पाठकों के करकमलों में रख पाये हैं।

अकथनीय महँगी, निपुण कर्मचारियों की कमी, मुद्रणालयों की अडचनें कागज की असुविधा आदि सैंकडों अडचनों से सामना करने पर अब यह ग्रंथ प्रकाशित हुआ है। हमारे परिश्रम को सफल बनाना अब पाठकों की रसिकता पर निर्भर है।

अिस ग्रंथ में **रूसी चित्रकार का १८५७ में बनाया हुआ चित्र** अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वह केवल अिसी संस्करण में है। श्रीमंत नानासाहब का चित्र भी समकालीन होने से महत्त्वपूर्ण है, जो हमें श्री. वि. मा. देशमुख वकील (पुणें) के दुर्लभ संग्रह से मिला है। हम अुन के आभारी हैं! हमारे भाअी श्री. र. श्री. जोगलेकरजी की भी अितनी सहायता हुअी है, कि अुनके आभार मानना आवश्यकही नहीं, हमारा कर्तव्य है।

'अग्रणी' मुद्रणालयने जो सहयोग दिया अुस के लिअे धन्यवाद। चित्रकार श्री. देशपांडेजी तथा श्री. केळकर के भी हम ऋणी हैं।

किन्तु श्री. नानाराव गोखले की सृजन-शक्ति के फलस्वरूप हर अध्याय पर हम चित्र दे सके हैं, जिस के लिअे हम अत्यंत ऋणी हैं । श्री. विनायकरावजी परांजपे तथा बंधु ने तो हर तरह से सहायता की है; किन शब्दों में हम अुन्हें धन्यवाद दें ?

× × ×

हमारा आगामी प्रकाशन

महाराष्ट्र के माननीय नेता, सव्यसाची संपादक श्री. शि. ल. करंदीकर से लिखित 'सावरकर चरित्र, [अर्थात भारतीय क्रांति के आंदोलन का लगभग ५० वर्षों का प्रामाणिक अितिहास] हम प्रकाशित कर रहे हैं । अिस की भाषा भी श्री. ग. र. वैशंपायनजी की लिखी हुअी है । मूल ग्रथ मराठी में १९४३ में प्रकाशित हुआ था, जो तुरन्त जब्त भी हुआ था । अिस ग्रंथ को बम्बअी विद्यापीठ ने सर्वोत्तम ग्रंथ के नाते स. १९४३ का पारितोषिक दिया था । अिस की विशेषता यह है, कि श्री. **सावरकरजी की कविता का अनुवाद कविता ही में दिया है** । डिमाअी आकार के लगभग ६०० पृष्ठ होंगे । मार्च १९४८ के अन्त तक प्रकाशित हो जायगा । आशा है, हिन्दी संसार अुस का समादर करेगा ।

६९२ बुधवार पेठ
पुणें २

वि. श्री. जोगलेकर.
व्यवस्थापक, **निर्मल साहित्य प्रकाशन.**

चित्रसूची

अिस ग्रंथ में क्या है?

खण्ड १ ला – ज्वालामुखी

खण्ड २ रा – प्रस्फोट

संदर्भ

[‘१८५७ का भारतीय स्वातंत्र्य-समर’ ग्रंथ में स्थान स्थान पर अुद्धृत अंग्रेजी अुद्धरणों का अनुवाद अुसी जगह दिया है; किन्तु जो सज्जन मूल अुद्धरण पढना चाहें, अुन की सुविधा के लिअे नीचे दिये जाते हैं। ग्रंथ में संदर्भ के क्रमांक दिये हुअे हैं, जैसे ‘सं. १.’ अुस का मूल अुद्धरण नीचे पढिये।]

ज्वा
ला
मु
खी

ज्वालामुखी

हिंदुस्थान का जागरित ज्वालामुखी अब भडकने लगा है। तप्तरस के डरावने सोते अब अुस के अंदर में खौलने लगे हैं। स्फोटक रसायन का भीषण मिश्रण घोटा जा रहा है और स्वातंत्र्यप्रेम का स्फुलिंग अुस पर गिर रहा है। अत्याचारी शासन! अब तक अवसर हाथ से नहीं गया; अभी सोच लो। अिस में जरा भी टालमटूल किया तो अुद्धत और पीडक शासन को ज्वालामुखी के समान धधकते प्रतिशोध का परिचय प्रस्फोट की प्रचंडता ही से होगा, अिस में संदेह नहीं!

१८५७ का
भारतीय स्वातंत्र्य-समर

प्रथम खंड

ज्वा ला मु खी

अध्याय १ ला

स्वधर्म और स्वराज्य

एक अनपढ देहाती भी इस बातको समझता है, कि एक मडैया भी बनानी हो तो वह कच्ची नींवपर कभी खडी नहीं हो सकती। १८५७ में हुई क्रांति का इतिहास-लिखने का दम भरनेवाले इतिहास-लेखक जब उपर्युक्त मामूली सिद्धान्त की ओर ध्यान न देकर, क्रांति के सच्चे कारणो की छानबीन न करते हुए ही बेधडक प्रतिपादन करते है, कि इस क्राति-मंदिर की भव्य रचाई मात्र एक तिनके पर हुई है, तब या तो वे मूर्ख है अथवा, जो अधिक संभव है, वे जानबूझकर अपने को तथा दूसरों को धोखा दे रहे हैं। चाहे जो हो, इतनी बात निर्विवाद है कि इतिहास-लेखक-के पवित्र कार्य के लिये वे पूर्णतया अपात्र है।

महान धार्मिक तथा राजनैतिक क्रांतियों की तहमें होनेवाले मूल-सिद्धान्तो को जाननेके पहले उपरसे विरोधी दीखनेवाली घटनाओंका समन्वय कर दिखाना सर्वशः असम्भव है। अनगिनत चक्रों तथा अगणित पेचों से भरे, प्रचंडशक्ति का निर्माण करनेवाले, यत्र मे शक्ति कैसे पैदा की जाती है इसका पता यदि हमे न हो तो उसे देखकर हमें बडा अचरज होगा; किन्तु उस यंत्र के पुर्जो के पूरे ज्ञान से होनेवाले आनद का अनुभव कभी न होगा। जब लेखक फ्रान्स की राज्यक्रांति या हालड की धार्मिक क्राति के सनसनीखेज प्रसगों का वर्णन करते है और उन के घोरतम समरप्रसगो के शब्दचित्र अंकित करते हैं, तब उन प्रसगो की जगमगाहट तथा अतिमहत्ता ही से उनके मनःश्चक्षु ऐसे तो चौंधिया जाते है, कि उन-क्रातियो के मूल सिद्धान्तो का विश्लेषण करने को पैठने के लिए आवश्यक धीरज तथा शान्ति उनके पास नहीं बचती। क्राति की तहमें होनेवाले अज्ञात कारणों तथा कार्य करनेवाले गुप्त शक्ति-स्रोतों को पूरीतरह बिना परखे क्रातिके सच्चे स्वरूप का दर्शन कभी नहीं होगा; और इसीसे केवल कथन की अपेक्षा तत्त्वदर्शनही को इतिहासमें अधिक महत्त्व होता है।

सिद्धान्तों ही को ढूँढने में इतिहासकार और एक भूल कर जाता है। हर घटना के भिन्न भिन्न प्रकार के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष, विशेष और साधारण, आवश्यक एव आकस्मिक कारण होते हैं। उनके ठीक श्रेणि-विभाजन में ही इतिहासकार की कुशलता है। इसी छानबीन मे कई इतिहासकार चकरा जाते है; क्योंकि आकस्मिक कारणों ही को वे आवश्यक मानते है और किसी अग्निकाड के मामले की जॉच करनेवाले न्यायाधीश के समान, जिसने दियासलाइ जलानेवालेको बरी कर सलाई ही को दोषी ठहराया, अपनी हँसी करा लेते हैं। किसी घटना का सच्चा महत्त्व, इस तरह कारणों की मिलावट कर देनेसे, कभी मालूम नहीं होता। यही नहीं, जिस क्रातिमें अनगिनत मानव तलवार के घाट उतार दिये गये और एक विशाल देश वीरान हो गया वह क्रांति कुछ मानवोंने 'स्वातः-सुखाय' तथा अपने छिछोरे स्वार्थ को सीधा करने के लिए सगठित की यह मानकर, सपूर्ण मानवजाति, उन मानवों की स्मृति को, शापपर शाप देती है। और इसी से किसी घटना का और खासकर क्रातिकारी घटना-

चक्रों का इतिहास लिखते समय, मात्र उनका वर्णन कर या आकस्मिक कारणों से उनका संबंध जोड, लेखक सच्चे इतिहास को कहने में कभी कृतकार्य नहीं होगा। इस लिए निःपक्षपाती इतिहासकारक को चाहिए कि वह क्राति की रचाई की नींव को सर्वप्रथम टटोले। मूल और आद्य की खोज तथा विश्लेषण ही उसका काम है!

फ्रेंच राज्यक्रातिपरक एक महत्त्वपूर्ण आलोचनामें इटलीके क्रांतिवीर मॅजिनी कहते हैं कि हर क्राति के पीछे कोई न कोई आद्य सिद्धान्त होना ही चाहिए। इतिहास-पुरुषके जीवनमें होनेवाली सपूर्ण उथल पुथल का नाम है क्राति। क्रातिकारी आदोलन का आधार क्षणजीवी तथा ढुलमुल, दुखदायी कारण कभी नहीं होता; वरच क्रातिकी तहमें ऐसे एक सर्वक्षोभक सिद्धान्त का होना आवश्यक है कि, जिसके कारण सहस्र सहस्र मानव युद्ध के आव्हान को स्वीकार करते है, सिहासन डॉवाडोल हो जाते हैं; राजमुकुट चूर होते है, बनते हैं; आज के आदर्श मिट्टीमें मिलकर उनके स्थानपर नये आदर्श उदित होते हैं और अनगिनत जन अपना पवित्र लहू हँसते हँसते बहा देते हैं। जिस मात्रा में क्राति की तहमे होनेवाला सिद्धान्त मगलकर या हानिकर होगा उसी मात्रामें क्रातिको पवित्र या अपवित्र माना जाता है। व्यक्तिगत जीवनमें हो या इतिहासमें हो, किसी मानव या समूचे राष्ट्रके कर्मोंकी भलाई बुराई उनकी तहमे होनेवाले हेतुके स्वरूपपरही निर्भर है। इस कसौटीको यदि हम भूल जायँ, तो अलक्सादरके साम्राज्यवर्धक युद्ध और गॅरीबाल्डीके नेतृत्वमें लडे गये इटलीके स्वातत्र्ययुद्धके भेदका महत्त्व हमारे ध्यानमें आ ही नहीं सकता। इन दो घटनाओंका ठीक मूल्य ऑकनेके लिए इन युद्धोंको खडा करनेवाले प्रणेताओंके आद्य हेतुका निश्चय पहले करना पडेगा; या उन क्रातियोंका सपूर्ण इतिहास लिखनेके लिए उनके तहके हेतु, उनके प्रणेताओंके मनकी तीव्र भावना तथा आकाक्षाएँ आदि बुनियादी कारणोंसे उन क्रांतियोंकी घटनाओंके कारणोंके सिलसिलेको मिलानकर जॉचना चाहिए। पक्षपाती तथा दूषित दृष्टिवाले इतिहास लेखकोंने जान बूझकर छोडी तथा दुर्लक्षित छोटी मोटी घटनाएँ उपर्युक्त दूरबीनसे सुस्पष्ट दीखने लगेगी। और इसतरह जब हम प्रारंभ करें तब सरसरी तौरपर असबद्ध दीखनेवाली

घटनाओंमें एकाएक सिलसिला दिख पडता है, टेढीमेढी रेखाएँ सीधी हो जाती हैं; अंधेरा उज्वल हो जाता है और पहले जो गंदा लगता था वह अब सुंदर भासता है; उसीतरह, पहलेके सनसनीदार प्रसग अब अलोने मालूम होते हैं और जाने या अनजाने, किन्तु सुस्पष्ट रूपमें, सच्चे इतिहासके प्रकाशमें, क्रांति निखर पडती है।

१८५७ की प्रचड क्रांतिका इतिहास, इसी वैज्ञानिक दृष्टिसे, आजतक किसी भी विदेशी या स्वदेशी लेखकने नहीं लिखा है। और इसीसे उस क्रांति के बारे में अनहद विचित्र, असत्य एव अन्याय्य कल्पनाएँ संसार भर में पक्की हो गयी हैं। अंग्रेज ग्रथकारोंने इस बारे में ऊपर गिनाये हुए सभी प्रमादों को अपनाया है। उनमें कुछ ऐसे हैं जिन्होंने केवल घटनाओं का वर्णन करनेसे अधिक कुछ नहीं किया; तो भी बहुतेरोंने यह इतिहास पक्षपाती तथा दुष्ट बुद्धिसे प्रेरित हो कर ही लिखा है। उनकी दूषित दृष्टि उस क्रांति के बुनियादी सिद्धान्त को न देख सकती थी और न देख सकी। क्या कोई समझदार व्यक्ति कभी ऐसा विवेचन कर सकता है कि इस अतिविशाल क्रांति को चेतना देने-वाला कोई विशेष सिद्धान्त था ही नहीं? पेशावर से कलकत्तेतक उछली हुई लहर, अपने उत्पात के जबडे में निश्चित रूपसे, कुछ हडप जाने का उद्देश न रखते हुए, उठी हो यह क्या कभी सम्भव हो सकता है? दिल्लीके घेरे, कानपुरकी कतलें, हजारों वीरों का खेत रहना, और ऐसी ही कई उदात्त और स्फूर्तिमयी घटनाएँ, क्या उसी तरह के उदात्त और स्फूर्तिप्रद आदर्श के बिना ही घटी होंगी? किसी छोटेसे गाँव का हाट भी बिना किसी हेतु के, नहीं भरता। तो फिर जिस हाट की दूकानें पेशावरसे कलकत्तेतक फैली हुई रणभूमिपर करीनेसे लगी हुई थीं, जहाँ राज्य और साम्राज्य बेचे जा रहे थे, और जहाँ चलन का सिक्का केवल लहू ही था; हम कैसे माने कि वह विराट हाट बिना किसी कारणपरपरा के बना और बिगडा? नहीं। न वह बाजार बिना कारण के बना, न टूटा! अंग्रेज इतिहासकारोंने ठीक इसी बात को, इस लिए नहीं कि उनके लिए इसे मनवाना दूभर था वरन् इसे मान लेना उन्हीं के हक में हानिकर था, जानबूझकर टाल दिया है।

इस अनुदार उपेक्षा से भी अधिक विश्वासघातक, धोखा-देह और १८५७ की क्रांति की मूल भित्ति ही को बदलकर उसे विकृत रूप देनेवाली अजीब सूझ अंग्रेज इतिहासकारोंने दी है, और उसी का हूबहू अनुवाद उनके सामने दुम हिलानेवाले भारतीय चापलूसोंने किया। वह सूझ है चबाकर चिकनाकर के कहना कि इस क्रांति का मूल कारण था चरबी लगाये काडतूस! अंग्रेजी इतिहास तथा अंग्रेजी पैसों से स्फूर्ति पानेवाले एक भारतीय इतिहासकार कहते हैं, "गौ तथा सुअर की चरबी से लिपटे काडतूसों की केवल अफवाह से ये बेवकूफ के बादशाह, बस, पागलसे हो गये।" किसीने कभी पृच्छा की कि यह कथन कहाँतक सत्य है? "किसी एकने कहा, दूसरेने उस की हाँ में हाँ मिला दी। दूसरा बिगडा, तीसरा उस की हामी भरने लगा और इस तरह भेडिया धसान शुरू हुआ; जिससे कुछ अविचारी सिरफिरे उठे और विद्रोह की आग सुलग उठी।" हम इसका विश्लेषण आगे करनेही वाले हैं कि लोगों ने अंधे बनकर कहाँतक इसी कारतूसी गप का विश्वास किया। किन्तु जिन्होंने केवल अंग्रेजी इतिहास ग्रथोंका बारीकीसे परिशीलन किया है और उसपर कुछ विचार किया है उन्हें स्पष्टतया मालूम होगा कि अंग्रेज ग्रथकारों ने इसी ढकोसलेपर जोर देकर उसीपर क्रांतिके जनकत्व को लादने का महान जतन किया है। सोचने की बात है कि यदि क्रांति की पैदाइश केवल काडतूसों से हुई हो तो श्रीनानासाहेब, दिल्ली के बादशाह, झाँसीवाली रानी, रुहेलखड के खान बहादुरखाँ उस क्रांति में क्यों कर शामिल हो गये? ये थोडेही अंग्रेजी सेना के सिपाही थे! और तब उन काडतूसों को दाँत से काटने की सख्ती कभी नहीं हुई थी! यदि काडतूसों ही के कारण विशेषतः और पूरीतरह क्रांति की आग भडकी हो तो अंग्रेज गवर्नर-जनरल के आज्ञापत्र के निकलनेही, कि "अबसे उनका (काडतूसोंका) चलन बद कर दिया जाता है," क्रांती शान्त हो जानी चाहिये थी। ग. ज. ने तो सैनिकों को छूट दी थी कि "चाहे तो वे अपने हाथों काडतूस बना लें।" किन्तु न सिपाहियों ने वैसा किया न नौकरी को लाथ मार इस झझट से फट्से निकल गये; बल्कि सैनिकोंने युद्ध के राही बनना स्वीकार किया सो क्यों? सैनिकही केवल नहीं, किन्तु सहस्र सहस्र शान्तिप्रिय नागरिकजन, राजा महा-

राजा, कि जिनका सेना से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्षरूपसे कोई सबंध न था, सब विद्रोही बन उठे। सो, इससे स्पष्ट हो जाता है कि सैनिक तथा नागरिक, राजा तथा रंक एवं मुसलमान को उत्तेजित करने में काडतूसों के इस आकस्मिक कारणने कोई हाथ नहीं बँटाया था।

यह भी उपपत्ति उतनीही भ्रमपूर्ण है कि अवधप्रांत को हथियानेसे क्रांति का उठाव हुआ। कई जन, जिन्हें अवधके राजवंशके भविष्यत् के विषय में रत्तीभरभी अपनौवा नहीं था, सरपर कफन बाँधे लडते ही ये न; तो फिर, इस युद्धमें उनका क्या मन्तव्य था? अवधका नवाब तो स्वयं कलकत्तेके किलेमें कैदीकी दशामें बैठा था, और अंग्रेज इतिहासकारों के कथनानुसार उसके प्रजाजन उसकी राजनीतिसे ऊब उठे थे। यदि यह सच था तो सैनिक, तालुकदार, और नवाब की रियायामें बहुतेरे जन, अपने नवाबके लिए तलवार सँवारकर क्योंकर आगे बढे? किसी बंगाली 'हिंदूने' उस समय इंग्लंडमें रहते हुए क्रांतिपर एक निबंध प्रकट किया था उसमें 'हिंदू' कहता है—"हमें आश्चर्य होगा यह सुनकर कि, कितनेही साधारण जन, जिन्होंने न कभी नवाबको देखा था, न आगे कभी देखनेका मौका मिलने की आशा थी, उसका शोकपूर्ण इतिहास बताये जानेपर, अपने झोंपडों में रोते पीटते रहे। और, इस बात की जानकारी भी हमें कभी न होगी कि कितनेही सैनिक सिपाही वाजिदअलीशाहपर गुजरे अत्याचारों का प्रतिशोध लेनेके लिए—मानो यह अत्याचार स्वयं उनपर ही हुए हों,—अपने आँसुओंको पोंछकर हरदिन, उस प्रतिशोधके लिए लडने को प्रतिज्ञाबद्ध होते थे"। सिपाहियों को नवाबके लिए इतना अपनौवा क्यों कर पैदा हुआ? और उनकी आँसुओं की झडी क्यों लगी जिन्होंने कभी नवाबको देखातक न था? उत्तर स्पष्ट है; इससे साफ पता लगता है कि केवल अवधप्रांत की स्वाधीनता छिन जानेसे क्रांतिका प्रस्फोट नहीं हुआ।

अधिक से अधिक यह कहा जा सकता है कि चरबीवाले कारतूसों का भय तथा अवध का ग्रहण ये मात्र आकस्मिक तथा अस्थायी कारण थे। किन्तु इन्ही कारणों को यदि हम मूल कारण मान बैठें तो क्रांति के सच्चे स्वरूप का दर्शन हमें कभी मालूम न होगा। ऐसी भूल यदि हम करें तो मानना पडेगा कि ये दो कारण न होते तो क्रांति होती ही नहीं; इससे

बढकर भ्रमपूर्ण तथा मूर्खतापूर्ण उपपत्ति क्या हो सकती है। कारतूसो का भय न होता तो उस भय की तह में होनेवाली मनोगति दूसरे किसी रूप में प्रकट होती और वही क्रांति फिरसे घटित होती। अवध छीना गया न होता तो राज्यों के हडप जाने की मनोगति का रूप दूसरे किसी राज्य के विध्वंसन मे दीख पडता। फ्रेंच राज्यक्रांति के सच्चे कारण, खाद्यपदार्थों की महँगाई, बॅस्ताइल कारागार, राजाका पॅरिस से निकल जाना या दावते. ये नही थे! इन से उस क्रांति की कुछ घटनाओ पर कुछ थोडा प्रकाश पडेगा, किन्तु उसमें क्रांति का पूरा दर्शन होना असम्भव है। राम-रावण युद्ध में सीताजीका अपहरण एक नैमित्तिक-प्रासंगिक-कारण था; सच्चे कारण तो इससे बहुत गहरे और अदृश्य थे।

हाँ तो, इस क्रांतिकी तहमें क्या मूल कारण तथा हेतु काम कर रहे थे जिनके कारण हजारों वीरों की तलवारें नंगी हो कर रणक्षेत्र में चमकीं; मलिन तथा जंग लगे राजमुकुटों को फिरसे जगमगाने तथा पैरोंतले रौंदे जानेवाले झण्डो को फिरसे लहराने की सामर्थ्य पैदा हुई; जिनके कारण, सहस्र सहस्र पुरुषोंने अपना खून वर्षोतक बहा दिया; मौलवियों ने जिनका प्रचार किया, विद्वान ब्राह्मणोंने जिसे विजयी होनेका आशीर्वाद दिया; जिनके विजयी होने के लिए दिल्लीकी मस्जिदों तथा काशी के मन्दिरों से प्रार्थनाएं गूंजकर देवलोक तक पहुँच गयीं, जिन के लिये यह सब हुआ वे सिद्धान्त -मूल कारण-आखिर क्या थे?

वे महान सिद्धान्त थे स्वधर्म और स्वराज्य। प्राणोंसे प्यारे स्वधर्मपर छुपे और घातक आक्रमण होने के लक्षण जब दिखायी देने लगे तब धर्मरक्षा के लिये उठी मेघगर्जन-सी क्रांतियुद्ध की ललकारों मे मूल कारणोंका आभास मिलता है, धोखेबाज दुष्ट करतूतोंसे ईश्वरदत्त स्वाधीनता का अपहरण कर जब राष्ट्र राजनैतिक पराधीनता की जंजीरो से जकडे जाने की बात ध्रुव सत्य बन गयी, तब स्वराज्य प्राप्त करने की पवित्र साधना से प्रेरित होकर जो महाभीषण आघात उन दास्य शृंखलाओं पर किया गया उसी मे क्रांतियुद्ध के मूल कारण मिल जाते हैं। अन्य स्थानो में किसी इतिहास में यह स्वदेश और स्वधर्म की लगन, अपने राष्ट्रमें उदात्तता की

जिस मात्रा में प्रकट हुई उस मात्रा में, शायद ही कहीं मिल पाती है. विदेशी और पक्षांध इतिहासकारोंने अपनी इस महाप्रतापी भूमि का चाहे जितना घृणास्पद चित्र बनाने का जतन किया हो, किन्तु जबतक इतिहास के पन्नों से चित्तौड का नाम नष्ट नहीं होता, और जब तक उनपर प्रतापादित्य तथा गुरु गोविंदसिंग का नाम अमिट अंकित है तबतक हिंदुस्थान के सपूतों के अस्थि अस्थि में और मज्जा मज्जामें यह स्वराज्यप्रेम तथा स्वधर्मप्रेम गहरा ही गहरा भिदा हुआ नजर आयगा! पराधीनता के गाढे कुहरेमें वह कुछ समय के लिए भलेही धुधला हो जाय—सूरज भी कभी मेघोंसे ढक जाता है—किन्तु उस स्वयसिद्ध सिद्धान्त की दमकती आभा जब जगमगा उठती है तब सब कुहरा छँट जाता है, मेघ तितर बितर हो जाते हैं। थोडे में, स्वधर्म और स्वराज्य के परपरागत महान् सुदर सिद्धान्तों का वायुवेग से प्रसार होने को १८५७ में जो कारणों का सिलसिला बन पडा उसका सानी और किसी स्थानमें शायद ही नजर आया है। इसी सिलसिलेने हिंदुस्थान की कुछ सुप्त भावनाओं को विचित्र तरहसे भडकाया और स्वधर्म तथा स्वराज्य के लिये युद्ध करने की सिद्धता में लोग लग गये। स्वराज्यस्थापनाके घोषणापत्रमें दिल्ली का बादशाह कहता है " भारतके सुपुत्रो! यदि हम ठान लें तो बहुत जल्द शत्रुओं को मटियामेट कर देंगे। शत्रुओंको मिटा कर हम हमारे प्राणोंसे भी प्यारे स्वधर्म तथा स्वराज्य को निर्भय कर छोडेंगे!"* इस अंतिम वाक्य में सूचित उदात्त सिद्धान्तों के लिये यह युद्ध लडा गया· इस क्रातियुद्धसे अधिक पवित्र युद्ध ससार भरमें और कहाँ पायेंगे?

'देश और धर्मकी रक्षा'—

दिल्लीके सिहासनसे घोषित स्पष्ट, शुद्ध तथा महान्, स्फूर्तिशील, शब्द-समूहहीमें १८५७की क्रातिका बीज समाया हुआ है। बरेलीके घोषणापत्रमें बादशाह कहता है " भारतके हिंदुमुसल्मानो! उठो! भाइयो उठो! परमात्माके सभी वरदानोंमें, स्वराज्यही उसका दिया हुआ सर्वोत्तम वरदान

* रेकीकृत 'फिक्शन्स एक्सपोज्ड ॲन्ड, उर्दू वर्क्स.

है। जिस शैतानने उसे हमसे छलसे लूट लिया है, देखें वह कबतक उसे सँभाल सकता है? प्रभुकी इच्छाके विरुद्ध बना यह बनाव कबतक टिक सकता है? नहीं, कभी नहीं टिक सकता। अंग्रेजोंने अबतक इतने तो घृणित अत्याचार किये हैं कि अब, निश्चय, उनके पापोंका घडा भर चुका है। और, मानों उसीको और भरनेके लिए हमारे परमपवित्र धर्मको नष्ट करनेकी शरारत उन्हे सूझी है! ऐसी दशाके रहते भी क्या तुम घोडे बेच-कर सो जाओगे? किन्तु परमात्माकी इच्छा ऐसी नहीं मालूम देती; क्योंकि अंग्रेजोंको इस देशके बाहर भगा देनेकी प्रेरणा, हिंदुओं और मुस्लिमोंके हृदयमें उसी प्रभुने पैदा की है। और निश्चय जानो कि उसी दयामयकी कृपासे और तुम्हारी वीरतासे इसी हिंदुभूमिमें उनकी करारी हार होगी. उनका नामभी यहाँ न बचेगा। हमारी सेनामें अबसे छोटे बडेका भेद मिटकर हमेशा समता का पालन होगा; क्यों कि, इस प्रकारके धर्मयुद्धमें स्वधर्मकी रक्षाके हेतु जो अपनी तलवार उठाते है वे सभी श्रेष्ठ वीर हुतात्मा होते हैं। वे सभी हमारेलिए भाईके समान हैं। उनमें छोटे बडेका भाव हो ही नहीं सकता। इससे हे भारतीय भाइयो, हम फिरसे कहते हैं, कि इस परम पवित्र सर्वोत्तम देव-कार्यके लिए उठो और रणक्षेत्रमें कूद पडो!"

क्रांति के नेताओं की ये उदात्त बातें देखकर भी क्रांति की तह में होने-वाला महान् कारण जो भाँप नहीं सकता वह, जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, या तो मूर्ख है अथवा बडा धूर्त होना चाहिए। मानवको प्रभुके दिये हुये इस उदार निधिकी रक्षा करना अपना कर्तव्य है यह जान कर स्वधर्म और स्वराज्य के लिए भारतीय रणवीरोंने अपनी तलवारें निष्कोषित कीं, इससे अधिक दृढ सबूत और क्या हो सकता है? क्रांतिकाल में समय समयपर भिन्न भिन्न स्थानोंसे प्रकट हुई घोषणाओं ही से यह स्पष्ट मालूम होता है कि अब क्रांति के मूल सिद्धान्तों की चिकित्सा करते रहना वस्तुतः अनावश्यक ही है। ये घोषणाएँ किसी अनकटोटेसे नहीं की गयी थीं, बल्कि आदरणीय तथा शक्तिशाली सिंहासन ही से वे उद्घोषित की गयी थीं। उस समय की क्षुब्ध क्रोध-भावना की जीती जागती परछाँई इन घोषणाओं में स्पष्टतया दीख पडती है। युद्ध के इस कालखण्ड में

डर या दबाव से सच्चे भावों का उच्चारण करने में किसी तरह रुकावट न होनेसे, राष्ट्रके अंतःकरण की सच्ची प्रतिध्वनियाँ इन घोषणाओं मे निनादित हो रही थीं, इसमें तनिक भी सदेह नहीं! सो, यह कहना पडता है कि 'स्वधर्म और स्वराज्य' की प्रचंड वीर गर्जना–इस क्रांतिमें 'शस्त्र उठानेवाले सभी वीर श्रेष्ठ थे'–अपनी उदात्तता को डकेकी चोटपर संसार को सुना रही है।

किन्तु, उपर्युक्त दो सिद्धान्तोंको, एकदूसरेसे भिन्न या पूर्णतया स्वतत्र थोडेही माना गया था? कमसेकम पौर्वात्योंको तो ऐसा कभी नहीं लगा कि स्वधर्म और स्वराज्यका एकदूसरेसे कोई नाता नहीं है। मॅझिनी के कथनानुसार, पौर्वात्य मन, इसी परपरागत और सपूर्ण श्रद्धासे, मानता आया है कि स्वर्ग और पृथ्वीके बीच कोईभी लॉघनेमें महान् कठिन किलाबंदी खडी नहीं है; उलटे, स्वर्ग और पृथ्वी तो एक ही महतत्त्वके दो छोर हैं। स्वधर्मकी हमारी कल्पना स्वराज्यकी कल्पनासे जरा भी विरोधी नहीं है। बिना स्वधर्मके स्वराज्य जिसतरह घृणास्पद और तुच्छ है, उसीतरह बिना स्वराज्यके स्वधर्म दुबला और अपाहिज है! इसीसे, ऐहिक अभ्युदय–स्वराज्य-की यह तलवार अपने पारलौकिक निःश्रेयसकी चिंता करनेवाले स्वधर्मकी रक्षाके लिए हमेशा नंगी ही रहनी चाहिए। पौर्वात्य मन का यह रुख इतिहासमें कई प्रसगो में प्रतीत होता है। पूरबमें सभी क्रांतियाँ धर्मक्राति का रूप ले लेती है, यहाँ तककि, पूरबमें धर्मसे दूर रहनेवाली किसी क्राति होने का खयालतक नहीं किया जाता–इसका कारण धर्म इस विशाल अर्थवाची शब्द में मिल जाता है। भारतीय इतिहास मे पायी जानेवाली 'स्वधर्म और स्वराज्य' की यह जुडवा सिद्धान्तपद्धति १८५७ की क्रातिमेंभी पूर्णरूपसे निखर पडी है। दिल्लीकी बादशाह की घोषणा का उल्लेख हम पहले करही चुके हैं। आगे चल कर एक समय पर, जब अंग्रेजोंने दिल्लीको घेर लिया था और युद्ध बिल्कुल अपनी टोंचपर पहुँच चुका था, तब बादशाहने सभी भारतीयों को सबोधित कर और एक घोषणा की थी; वह थी–
"परमात्माने सपत्ति, सत्ता और स्वदेश क्यो दिया है? इसलिए नहीं कि केवल हम अपने (स्वार्थके) लिए उनका उपभोग करें; बल्कि स्पष्ट है कि हम उनका उपयोग धर्मकी रक्षा के लिए ही करें" किन्तु इस-

पवित्र साधनाको पूरा करनेके साधन कहाँ है ? उपर्युक्त घोषणामें बताया हुआ प्रभुका दिया हुआ परम-कृपा-निधि ' स्वराज्य ' है ही कहाँ ?

कहाँ है वह सपत्ति ? कहाँ गया वह स्वदेश ? कहाँ लोप हुई वह स्वसत्ता ? पराधीनताकी ताऊनमे यह सब स्वर्गीय स्वातन्त्र्य मरा हुआ-सा पडा है। उपर्युक्त घोषणा ही मे, यह पराधीनता की बीमारी हिंदुस्थानका गला कैसे घोंट रही है यह बताने के लिए, इस घटनाओं का ब्योरेवार वर्णन किया गया है कि नागपूर, अवध और झाँसीके राज्य अंग्रेजोंने कैसे मटियामेट कर दिये थे। धर्मरक्षा के सभी साधन गँवाने से प्रभु की इस पवित्र भूमीमे हम धर्मनाश के पातकमें साक्षी हो रहे हैं यह बात लोगो को इस वर्णनसे प्रतीत कराने का खास हेतु था। क्यों कि, प्रभु की यही आज्ञा है कि पहले स्वराज्य हासिल करो! क्यो कि, वही स्वदेश की रक्षा का मूलमत्र है। जो स्वराज्य प्राप्त करने के लिए जतन नही करता, जो गुलामी मे बेखबर सोता है वह धर्म का शत्रु और पाखडी है। इसलिये धर्म के लिए उठो और स्वराज्य प्राप्त करो।

' धर्म के लिए उठो और स्वराज्य प्राप्त करो '--भारतीय इतिहास मे इस सिद्धान्त के असरकारी अनुभव से भरे चाहे जितने दिव्य तथा उदात्त प्रसग मिल जायँगे। सत रामदास ने २५० वर्ष पहले यही महामत्र महाराष्ट्र को दिया था,

" धर्मके लिए मरे। मरते हुए पूरीतरह मारे। मारते मारते छिन ले। अपना राज्य " (दासबोध)

१८५७ की क्रांतिमे भी यही मूलमत्र था। क्रांतिका मनोविज्ञान यही है। श्री गुरुरामदासका उपर्युक्त छंदही क्रांतिका स्पष्ट तथा सत्य स्वरूप दिखानेवाली एकमात्र दूरबीन।

इस दूरबीनसे जब हम देखने लगते है तो हमें किस प्रकारका सुभव्य दृश्य दिख पडता है। स्वधर्म और स्वराज्यके लिए हुए इस युद्धकी पवित्रतापर अपजशके कारण जरा भी आँच नहीं आती। गुरु गोविंदसिंगकी जीवनीकी उज्जल आभा मे, उनकी चेष्टाएँ उनके जीवनकालमें सफल न हो पानेपरभी, मलिनताकी छायातक नहीं पड सकती। अथवा, १८४८के

इटलीके उत्थानको उस समय भलेही हार खानी पडी हो, फिर भी हम उसकी पवित्रतामें कोई कमी नहीं मानते।

जुस्टिस मॅकार्थी कहता है "सच तो यह है, कि उत्तर भारतके कई विभागोंमें तथा उत्तरपच्छम प्रात में वहाँ के निवासियोंने अंग्रेजी हकूमत के विरुद्ध विद्रोह किया। इस विद्रोह में केवल सैनिक ही शामिल थे या यह केवल सेनाही में विद्रोह था, सो बात नहीं है। मालूम होता था कि इस विद्रोह में सेना का असतोष, राष्ट्रीय द्वेष और वहाँ के अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध धर्मनिष्ठ प्रतिशोध का पागलपन, इन सब की मिलावट हो चुकी थी। देशी सैनिकों का हिस्सा भी इसमें था ही। ईसाई राजसत्ता के विरुद्ध लडने के लिए हिंदु मुसलमान भी आपसी वैर को भूलकर एक हुए थे। द्वेष और भय ही इस महान् विद्रोह के कारण थे। चरबीवाले कारतूस के लिए अनबन तो इस समूचे ज्वालाग्राही अंबारपर पडी, बहाना बनी, चिनगारी थी। इस चिनगारी से यदि स्फोट न हुआ होता तो और किसी चिनगारीसे वह जाग उठता। "एक क्षण में मेरठ के सैनिकों को ध्येय, ध्वज और धुरीण मिल गये और झट सैनिक विद्रोह का स्वरूप एक क्रांतियुद्ध में पलट गया। प्रभात के सूरज की किरणोंसे चमकती हुई जमुना के किनारे जब ये क्रांतिकारी आ पहुँचे तब अनजाने उन्होंने इतिहास के महान् प्रसग को हस्तगत किया और उसी क्षण सैनिक विद्रोहने धार्मिक एव राष्ट्रीय युद्ध का स्वरूप धारण किया"*

चार्ल्स् बॉल लिखता है, "आखिर यह सैलाब किनारेपर आही धमका और उस से भारत की नैतिक भूमि पूरीतरह सिंच गई! उस समय तो ऐसा लगा कि इन उछलतीं लहरों के नीचे भारत में से समूचा युरोपीय जीवनही लोप हो जायगा; और जब इस विद्रोह की भयकर बाढ उतर जायगी और फिरसे पहले के समान शान्ति हो जायगी तब विदेशियों के दास्य से विमुक्त स्वाभिमानी स्वतंत्र भारत देशी नरेशों के स्वतंत्र राजदंड को ही अभिवादन करेगा! विद्रोहने अब

---

* हिस्टरी ऑफ अवर ओन टाईम्स खण्ड ३.

और ही किन्तु महत्त्वपूर्ण रुख लिया। धार्मिक पागलपन की धुन में सने और काल्पनिक अन्यायों का बदला लेनेके विचार से उत्तेजित समूचे राष्ट्र का वह द्वेषसे लडा हुआ युद्ध बन बैठा।*

सिपाहियोंके युद्ध के संपूर्ण इतिहासमें व्हाइट लिखता है "अवधके लोगोंने जो हिम्मत दिखाई उसका गौरवपूर्ण उल्लेख मैं यदि न करूँ तो इतिहासकारके सत्यप्रतिपादनके कर्तव्यका पालन न करने की भूल कर बैठूँगा। नैतिक दृष्टिसे, अवध के तालुकदारोंने खूनी विद्रोहियोंका साथ देनेमें बडी भारी भूल की थी। इस बातको छोडकर देखा जाय तो अपनी मातृभूमि तथा अपने राजाके लिए एक शुद्ध आदर्शसे प्रेरित हो कर लडनेवालों की गिनती महान् देशभक्तोंमें करना आवश्यक है!"

* अिंडियन म्यूटिनी, वाल्यूम १ पृ. ६४४

अध्याय २ रा

कारणों का सिलसिला

यदि यह बात सच है कि १८५७के रणक्षेत्रपर इस समस्याका निर्णय होनेवाला था कि उत्तरमें हिमालय तथा दक्षिणमें महासागरसे परिसीमित यह आर्यमही पूर्णतया स्वतंत्र रहे या नहीं, तो १७५७के उस दिनसे, जिस दिन यह समस्या पहलेपहल सामने आयी, इस कारण-पक्तिका प्रारंभ होता है। पहलेपहल, पलासीके रणक्षेत्रपर, खुल्मखुल्ला इस समस्याकी चर्चा हुई कि हिंदुस्थान अंग्रेजोंके अधीन रहे या नहीं। उसी दिन और उसी रणक्षेत्रमें-जहाँ इस समस्याकी पहलेपहल चर्चा छिडी-क्रांति-युद्धका बीज बोया गया। पलासीकी घटना न हुई होती तो १८५७का युद्धभी लडा न जाता। पलासीकी वह घटना सौ सालकी पुरानी हो चुकी थी फिरभी भारतियोंके अंतःकरणमें उसकी याद सदाही जाग्रत थी। उसका प्रमाण देखना हो तो उत्तर भारतमें २३ जून १८५७ के महाभयंकर किस्सेको स्मरण करना चाहिए! इस विशाल भूखंडमें, पंजाबसे कलकत्तेतक जहाँ कहींभी खुला मैदान हो वहाँ, सहस्र सहस्र क्रांतिकारी एकही समयमें कई रणमैदानोंमें, सूर्योदयसे सूर्यास्तपर्यंत, "आज हम पलासीका बदला लेंगे" इस प्रकार प्रकट आव्हान देकर अंग्रेजोंके साथ भिडनेका दृश्य दिख पडता है।

पलासी की युद्धभूमिपर हिंदुस्थानने स्वाधीनता के लिए फिरसे एक संग्राम करने की सौगंध ली; तो, मालूम होता है, इंग्लंडभी मानो उस

प्रतिज्ञापूर्ति के दिन को, जबतक हो सके, नजदीक लाने को उत्सुक हुआ था ।। क्यों कि, पलासीमें क्रांतियुद्ध का बीज बोकर ही अंग्रेज चुप न रहे, उन्हों ने भारत भरमें इस वृक्ष को लहलहाता हुआ देखने के लिये अनथक चेष्टाएं कीं। बनारस, रुहेलखण्ड तथा बंगाल में वारन हेस्टिंग्सने वृक्ष की अच्छी तरह देखभाल की। मैसूर, असई, पुणें, सातारा तथा उत्तर भारतकी उपजाऊ भूमिमें वेलस्लीने वही किया। किन्तु यह सब बिना असीम चेष्टाओं के थोडे हि बना? क्यो कि इस भूमि को पहले जोतना आवश्यक था—हॉं, मामूली हलसे नहीं, तलवारों तथा बंदूकोंसे। पुणें के शनिवारवाडेपर, सह्याद्री की दुर्गम चोटीपर, आगरे के किलेपर और दिल्ली के सिंहासनपर ये मामूली हल किस काम के? जब यह पथरीला भूभाग खोदकर चूर्ण चूर्ण कर दिया गया, तब भूलसे जो कुछ छोटे टीले बच गये थे उनका अत्याचारो से सफाया कर दिया गया। और इस जोताइमें अंग्रेजों के अन्याय्य तथा विश्वासघात के प्रहार से छोटे नरेश धूलमें मिल गये।

अंग्रेजोंने जिन अक्लके दुश्मन नरपशुओंके बलपर इन सब विजयोंको प्राप्त कर इन प्रदेशोंपर कब्जा कर लिया उन्हेंभी वे पूरी तरह खिलाते पिलाते न थे, न उनकी पीठ सुहलाते थे। पूरे सौ सालोंतक अंग्रेज देशी सैनिकोंको जुल्म जबरदस्ती की चक्कीमें पिसते जाते थे। मराठों या निजाम के सैनिक जब महत्त्वपूर्ण लडाइयोंमें विजयी होकर आते तब उन्हें पारितोषिक तथा जागीरे मिला करती थीं, जहॉं 'कंपनी' सरकारने उनके सैनिकोंको 'मीठे धन्यवादके' सिवा कुछ भी न दिया था। जिन सिपाहियोंके केवल बलपर हिंदुस्थान अंग्रेजोंके अधीन हुआ उनसे सेनापति आर्थर वेलस्ली इतना हीन बरताव करता कि यदि कोई सिपाही घायाल हो जाय तो उसे रुग्णालयमें पहुँचाने के बदले तोपसे उडा देता था।

इस तरह जब अंग्रेज स्वय ही हिंदुस्थान भरमें असंतोष तथा द्वेष का बीज बोते जाते थे, तब उनके यत्नों का पूरा फल प्राप्त होने का समय भी जल्द आ लगा। हिंदुस्थानकी स्वाधीनतापर ऑंच आनेवाली है, यह बात पुणें के नाना फडनवीस तथा मैसूर के हैदरसाहबने भॉंप

लिया था। उस दिनसे इस संकट का डर अस्पष्ट ही क्यों न हो हिंदी नरेशों को सता रहा था, और इसका प्रत्यक्ष परिणाम वेलोर के विद्रोह में दीख पडा। वेलोर की यह बगावत १८५७ के प्रचंड उत्थान का पूर्वप्रयोगही (रीहर्सल) था।

जिस तरह रंगमचपर प्रत्यक्ष नाटक खेले जाने के पहले कई पूर्वप्रयोग होना आवश्यक होता है उसी तरह इतिहासमेंभी सपूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करनेके पहले (खेल के सभी साधनोंको जुटानेके लिए) बगावत के रूपमें ऐसे कई पूर्वप्रयोंगो का खेला जाना आवश्यक होता है। इटलीमें १८२१ के आरंभसे ऐसे पूर्वप्रयोग होते थे; और १८६१ में उनका खेल इतिहासके रंगमचपर सफल हुआ। १८०६ की वेलोरकी बगावत एक छोटासा किन्तु पूर्वप्रयोगही था। इस उत्थानमें जनता और राजपुरुषोंने सैनिकोंको अपनी ओर कर लिया था। बाजारोंमें फकीरो का स्वॉग भरे कई सौ प्रचारक प्रचार कर रहे थे। विद्रोहके चिन्हके नाते रोटियों को भी उस समय बॉटा गया था। हिंदू और मुसलमान दोनो धर्म तथा स्वातत्र्यके लिए एक होकर उठे थे। किन्तु यह पहलाही पूर्वप्रयोग होने के कारण इस उत्थान मे उन्हें अपजश मिला। चिंता नहीं! आखरी प्रयोग (खेल) के पहले ऐसे कई पूर्वप्रयोग दुहराये जाने चाहिए। हॉ, उनमे काम करनेवाले नट जीवटसे पूर्वप्रयोगोंको जारी रखें, अपजशसे हार कर पूर्वप्रयोग बंद न होने पावें। और ऐसाही नाटक खेले जाने के लिए हिंदुस्थान और इग्लंड दोनों राष्ट्र दिनरात लगे रहे थे। और इस खेलके अभिनेता, जो रूपरचना (मेकअप्) कर रहे थे, भी कोई साधारण, दरिद्र और बुद्धू नहीं थे। तंजावर की गद्दी, मैसूरकी मसनद, रायगडका सिंहासन, दिल्लीका दीवान–ई–खास (वहॉके बहादुर राजपुरुष) ये थे उस महान् खेल के चुने हुए अभिनेता। और इन सबपर शान दिखाने के लिए ही मानो १८४६ मे हिंदुस्थानके किनारेपर डलहौसीका पौरा पडा। बस, अब पलासीके रणमैदानपर, जिसके लिए लोग शपथबद्ध हुए थे, उस कार्य का आरंभ होनेमें बहुत समय नहीं रहा था!

ऊपर बतायी कारण-परपरासे यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि डलहौसीके भारतमें पदार्पण करनेके पहले समूचे भारतमें असतोषका बीज बहुत गहरा

पैठकर उगने लगा था। अंग्रेजोंके राज्य हड़प जानेसे राजा तथा महाराजा तो अंदरसे जलभुन रहे थे।

पलासीकी शतमवत्सरी जल्दही पूरी होने को है इस विचारसे तो जनतामें एक अजीब आशाकी किरण चमक रही थी और खास कर अंग्रेजोंकी मातहत सेनाके सिपाही ही अंदरही अंदर क्रोध और कीनेसे जल रहे थे। ऐसे समयमें इस दबे हुए असंतोषको शान्त करनेका प्रयत्न करनेवाला दूसरा कोई भी वाइसराय यदि हिंदुस्थानमें आया होता तो भी इस काममें वह कहाँतक सफल होता यह कहा नहीं जा सकता; उसकी सफलतामें संदेह था। उस समय यह प्रश्न रहा ही न था कि कंपनी सरकारकी राजनीति अच्छी है या बुरी, भारतभरमें सवाल यह हो रहा था कि कंपनीका राज यहाँ रहेही क्यों? इस सवाल का फैसला करनेका और एक जोरदार कारण मिला था—डलहौसीका वाइसरायके नाते भारतमें आना। क्यों कि, उसने मारनेके लिए मीठेमें घोले विषकी गोली देनेकी नीतिको फेंककर, खुल्लमखुल्ला और प्रत्यक्ष अत्याचारका प्रारम्भ किया, जिससे सब जनताके अंतःकरणोंमें गहरी चोट न लगे तो और क्या हो?

अंग्रेज इतिहासकारों ने डलहौसी का वर्णन "अंग्रेजी साम्राज्य का संस्थापक" कहकर किया है। यही एक बात डलहौसी की क्षमता तथा स्वभाव का भान करा देने को काफी है। जिस राष्ट्र में देशों को छीनने के अन्याय्य युद्ध और पराये राष्ट्र तथा वंशपर किये अत्याचार सबको पसंद होते हैं, उस राष्ट्रमें अकथनीय अन्याय तथा शोषण करने-वाले ही लोगों को सम्मानित किया जाय तो इसमें अचरज की कोई बात नहीं है। ऐसेही इस साम्राज्यमें (जहाँ अन्याय तथा अत्याचार अधिक से अधिक करने की होड़ लगती हो) लॉर्ड डल-हौसी को साम्राज्य संस्थापक की सुयोग्य उपाधि समर्पण की गयी थी। सचमुच इससे बढ़कर उसके स्वभाव का यथातथ्य वर्णन करने को दूसरा शब्द मिलना भी दूभर हो चुका है। जिसकी पृष्ठपोषक अंग्रेजों की सौ साल की कुटिल राजनीति की कुतपस्या रही थी, जिसमें दुर्दम्य आत्मविश्वास था किन्तु स्वभावसे जो अत्यंत हेकड था, जिसके रक्तमांसमें अंग्रेजोंकी आसुरी साम्राज्यसत्ता का घमंड तथा प्रतिष्ठा पूरेपूर भिद चुके

थे और जो बुद्धिमान् न होते हुए भी साहसी था, वह डलहौसी "मैं भारत की भूमि को समथल बनाने आ रहा हूँ" इन दर्पपूर्ण उद्गारों के साथ, इस देश के किनारेपर उतरा।

डलहौसीने यहाँ आते ही ताड लिया कि जबतक पंजाब में वीरवर रणजीतसिह है तबतक भारत की भूमिको समतल बना डालने का उसका अत्यत प्रिय ध्येय वह कभी सफल नहीं कर पायगा। इसीसे, भलेबुरे तरीकों से पंजाब के इस शेरको दासता के कटघरे मे बंद करने की डलहौसीने ठान ली। किन्तु पंजाब के सिंह के नाखून साधारण-से न थे। अपनी मादपर हमला होने की सम्भावना देखते ही वह चिलियाँवाला की अपनी गढीसे बाहर निकला और अपने पंजे के प्रखर प्रहार से उसने शत्रु को कुचल कर लहू-लुहान कर दिया। किन्तु हाय! चिलियाँवाला की गुहा के मुँह पर बैठे इस शेरको गुजरात की ओरसे पिछाडी की किलाबंदी को तोडकर एक आस्तीन के साँपने अकस्मात् आ कर घेरा और बाँध लिया। तात्काल उस शेर की माँद उसीका कारागार बनी। रणजीतकी रानी जिंदाकौर लदनमें कुढती घुलती मर गई और उस शेरका छौना धुलिप-सिह फिरंगी शत्रु के फेंके टुकडों को चाबते हुए भिखारी की तरह पेट पालते वहीं रहा।

पजाब प्रांत पर हाथ साफ करने के बाद डलहौसीने बडे गर्व के साथ लदन को लिखा कि, 'ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार अब हिमालयसे कन्या-कुमारीतक अखण्ड हो चुका है।' किन्तु अंग्रेजी हकूमतकी सीमाएँ उत्तरमें हिमालय तथा दक्षिणमें सागरतक लग जानेसे उत्तर और दक्षिण की सीमाओं की बराबरी करनेवाली सीमाएँ पूरब तथा पश्चिममें बढाना तो आवश्यक ही था। तो फिर देरी क्यों ? इन शान्तिदूतोंने बरमा की शान्ति देवी को इतना कसकर गले लगाया कि उसीसे उस बेचारी शान्ति देवी की पसलियाँ चूर चूर होकर उसका अंतकाल हो गया ! यह प्रेमभरा दूतकर्म जल्दही समाप्त हुआ और बरमा भी साम्राज्यमें शामिल कर दिया गया। हिमालयसे रामेश्वर तथा सिंधूसे ईरावती तक समूचा प्रदेश लाल रंगमें रंगा गया। किन्तु डलहौसी ! तुझे इसका डर

क्यों नहीं कि अब जल्द ही इससे बढकर भडकीला लालरंग सबदूर फैलने-वाला है !

पाठकगण ! पंजाब और बरमाका अंग्रेजी साम्राज्यमे शामिल होनेका पूरा मतलब तुम्हारे ध्यानमे आ चुका है ? केवल नामों से इसका ठीक खयाल हमें नहीं आ सकता। अकेला पंजाबही ५०,००० वर्गमील होकर उसकी आबादी लगभग चार करोड है। जिनके किनारे पुराने समयमे ऋषियोंने पवित्र वेदमत्रोका सामगायन किया था, वेदों की उन्ही पचनदियों के जलसे इस भूमिकी सिचाई हुई है। ऐसे प्रदेश को जीतने के लिए यूनानसे अलक्सादर दौड आया था तब इसी भूमि की रक्षाके हेतु पुरुराजाने घमासान युद्ध किया। ऐसे प्रदेशको हडप कर रावण की हवस भी शान्त हो जाती ! किन्तु भूमि हडप जाने की डलहौसी की भूख केवल पंजाब खानेसेही नहीं, बल्कि बरमा का विस्तीर्ण भूखण्ड निगलने पर भी शान्त न हो सकी ! इसतरह भलेही अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य की चतुःसीमाएँ बढायीं किन्तु उनके अंतर्गत प्राचीन राजाओं की समाधियाँ तो बची रही थीं। इसीसे उनको भी उखाडकर समूची भूमि समतल करनेकी डलहौसीने ठानी और वह उसी के पीछे पडा। उन समाधियोंके रहनेसे कुछ बहुत बडा हिस्सा रुक जानेका कारण इस करतूतकी तहमें नहीं था; उसे यह डर था कि कहीं इन्हीं मृत स्मारकोंमें से, एकदिन, भारतके साथ किये गये अन्यायोंका प्रतिशोध लेनेवाला, कोई वीर प्रकट न हो। और, सचमुच सातारेके मृत अवशेषों के नीचे एक वैभव-शील हिंदुसाम्राज्य दबा पडा था। और कयामत के दिन होनेवाले ईसाके मृतोत्थान में दृढविश्वास करनेवाले इस डलहौसी को यदि यह डर हो कि इसी सातारेसे एकाध हिंदुसम्राट निकल कर विदेशियों को मटियामेट करते हुए स्वराज्य की स्थापना करेगा, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं थी। स. १८४८ के अप्रैलमें सातारेके महाराज अप्पासाहब की मृत्यु हुई। यह सवाद पाते ही सातारा जब्त करनेकी डलहौसीने ठानी। और बहाना ? यही कि महाराज निःसन्तान मरे। देहात के एक साधारण खेतीहर की झोंपडी भी उसके निःसन्तान मरनेपर जब्त नहीं की जाती, बल्कि उसके दत्तक-पुत्रको या आत्मीय नातेदारोंको दी जाती है। और सातारेका राज्य किसी किसान की कुटी तो थी ही नहीं; अंग्रेजी राजका वह 'मित्र' था।

१८३९ में ब्रिटिश सत्ताको उलटा देनेके षडयंत्रमें शरीक होनेके अपराधमें छत्रपति प्रतापसिंहको गद्दीसे हटाकर अंग्रेज सरकारने छत्रपति आपासाहबको उनके स्थानमें सिंहासनपर बिठाया था।*

"डलहौसीका शासन" पुस्तकमें श्री आर्नोल्ड लिखते हैं, "छत्रपतिकी पदच्युतिकी कहानी अकथनीय तथा (अंग्रेजों के लिए) कलंकित करनेवाली हैं।" ऐसी अपमानपूर्ण तथा निर्लज्ज पदच्युति के बाद अंग्रेजोंने निःसन्तानताके कारण सातारकी गद्दीपर प्रतापसिंहके भाईको बिठाया, जिससे अंग्रेजोंने नातेदारको सिंहासनपर बैठनेका अधिकार (जो हिंदुशास्त्रोंकी सर्वसम्मतिसे न्यायसंगत है) प्रत्यक्षरूपसे मान लिया। इस मामलेमें सत्य यही है, कि डलहौसीने अपने राष्ट्रके खूनमें भिदे विश्वासघातको काममें लाकर उपर्युक्त स्पष्ट मान्यताको जानबूझकर ठुकरा दिया; क्यों कि, वही तरीका उस समय उसका उल्लू सीधा करता था।

भिन्न-भिन्न राजाओंसे किये अलग अलग संधिपत्रोंमें दत्तक पुत्रका, दत्तक मातापिताके राजसिंहासनपर बैठनेका, अधिकार अमान्य करनेकी शर्त किसी स्थानपर अंग्रेजोंसे रखी जानेका उल्लेख नहीं मिलेगा। सं. १८२५में कोटाके राजाके दत्तकको मान्यता देते समय कंपनी सरकारने स्पष्ट ही कहा था कि शास्त्रकी सम्मतिके अनुसार अन्य सर्वसाधारण हिंदुके समान, कोटा नरेशको भी दत्तक लेने या अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करनेका अधिकार है।+

सं. १८३७में फिर एकबार, जब ओरछाके राजाने दत्तक गोद लिया

---

* छत्रपतिको जब सातारेकी गद्दीपर बिठाया गया तब जो संधि हुई थी उसमें 'सरकार'ने जो सर्वप्रथम शर्त रखी थी वह यों है.—

"बहादुर अंग्रेज सरकार अपनी ओरसे मान्य करती है कि दर्ज किया हुआ प्रांत और प्रदेश छत्रपति महाराजको (सातारा नरेशको) अथवा उनके संस्थानको दिया जायगा, महाराज छत्रपति और महाराजके पुत्रपौत्र, वंशज तथा उत्तराधिकारियोंको सदा के लिए, याने पीढी दर पीढी उपर्युक्त प्रदेशपर राज्य करते रहने का अधिकार है (सं. १)।"

+ पार्लियामेंटरी पेपर्स १५ फरवरी १८५० पृ. १५३.

तब अंग्रेजोंने उसे मान्यता देकर वचन दिया था कि, " स्वतंत्र हिंदु-नरेशोंको दत्तक गोद लेने और अन्य दूरके उत्तराधिकारीको खारिज करनेका पूरा अधिकार है; और हिंदु धर्मशास्त्र ऐसे कामको विरोध न करता हो तो अंग्रेज सरकारको उसे स्वीकार करनाही पडेगा। "* मतलब, यह बेखटके कहा जा सकता है कि एक बार स्पष्ट दिये और खतपत्रोंमें दर्ज किये वचनोंसे, यह कहकर कि ऐसे वचन दिये ही नहीं थे, इनकार करनेकी निर्लज्जता तथा साहस अंग्रेज राजनीति के बिना और किसी स्थानमें नहीं पाया जायगा। केवल उपर्युक्त घोषणाओंहीमें नहीं किन्तु अन्य कई अवसरोंपर अंग्रेजोंने स्पष्टतया मान्य किया है कि, हिंदुधर्मशास्त्रके अनुसार हर हिंदुनरेशको पुत्र गोद लेनेका जन्मसिद्ध अधिकार है ही। थोडेमें १८४६ से ४७ के दो वर्षोंके छोटेसे कालखण्डमेंही, अंग्रेजोंने कई दत्तक वारिसोंका गद्दीपर बैठनेका अधिकार मान्य कर, उनके राज्य कारोबारको सम्मत किया था।

आश्वासनों तथा आपस में की हुई संधियों के शब्दजाल में संस्थानों पर दखल करने के मूल कारणों को ढूंढना तो बिलकुल ऊँधे रास्ते जाना है। इन सब बनावों की सच्ची पृष्ठभूमि यह है कि, डलहौसी समूचे भारत को 'समथर' बनाने के लिएही यहाँ आया था और यहाँ तो भूमिमें गडा हुआ सातारे का मृत साम्राज्य फिरसे उठ खडा होने की चेष्टा कर रहा था, जिससे स्पष्ट है कि, प्रतापसिंह तथा अप्पासाहबने हिंदुधर्मशास्त्र के आज्ञानुसार यद्यपि दत्तक गोद लिया था तो भी अंग्रेजो ने, सातारा नरेश निःसंतान होनेके बहाने, सातारा जब्त कर लिया। सातारे का सिंहासन! इसीपर शिवाजी महाराज को श्री गागाभट्टने राज्याभिषेक किया था! इसी सिंहासन के सामने बाजीराव प्रथमने अपना उज्ज्वल जश तथा विजयश्री धर कर अपना मस्तक नवाया था। महाराष्ट्र, देख! जिस सिंहासन को श्री शिवाजी महाराज ने विभूषित किया था, संताजी धनाजी जैसे वीरवरोंने जिसे राजवंदना अर्पण की थी उसी सिंहासन के, डलहौसीने, टुकडे टुकडे कर डाले! अर्जियाँ, प्रार्थनाएँ, और शिष्टमंडल ले जाना;

* पार्लियामेंट पेपर्स १५ फरवरी १८५० पृ. १४१

यदि तुमसे हो सके तो! किन्तु डलहौसी यदि तुम्हारी बातपर ध्यान न दे तो? तुम समझते हो कि, निदान अंग्लैंडमें तो कंपनी सरकार के संचालक तुम्हारी सुनेंगे। डलहौसी तो, भई, एक सादा मानव है, किन्तु हो सकता है कि अिग्लैंड में रहनेवाले ये संचालक ईश्वरीय अवतार हो। यही न? महाराष्ट्रीय किसी भी व्यक्ति ने अबतक इन देवमानुसों का मुँह तक नहीं आँका था! और इसी से निश्चय हुआ कि रंगो बापूजी जैसे निष्ठावत तथा सुयोग्य सज्जन अिग्लंड जाय और सातारे की दुखभरी कहानी वहाँ के सत्ताधारियो को सुनायँ। सफलता मिले या न मिले, उन्हें विश्वास हुआ कि एकबार जतन तो करना चाहिये। किन्तु अपनी बसीठी मे सफलता मिलेगी, (जो कि जनमभर में सत्य न होनेवाली बात थी,) इस आशा-पर वे कहाँतक राह देखते रहते? रगो बापूजी आखिर लंदन् हाल रास्ते की फर्श को कहाँ तक घिसते? और हाँ; करोडो रुपये अंग्रेज बॅरिस्टरों के जेब में उडेलने पर जिन्हें घर लौटने को एक पाई भी पास न बचेगी और "सातारे का राज्य कभी नहीं मिलेगा" यह अशिष्ट उत्तर कंपनी के सञ्चालकों ने साफ साफ जिन्हे दिया जायगा वह रगो बापूजी इस तरह अपमान और मखौल करनेवाला तोहफा अंग्रेजोंसे प्राप्त होनेतक, अपने विफल आशातंतु मे आखिरतक चिपके रहेंगे!

जब रगो बापूजी लंदन को जानेकी सिद्धता करनेमें व्यस्त थे तभी एक नयी घटनाने डलहौसीका मन हर लिया। नागपुर राज्यका पतला और बिगडा हुआ पौधा उखाड फेंकनेका अनायास बहाना मिला था। नागपुरके एकमात्र अधिपति भोसले अपनी आयुके ४७ वें वर्षमें अचानक स्वर्ग सिधारे। बरारका यह अधिपति अंग्रेज सरकार का माननीय मित्र था।*

और यही अंग्रेजो की मित्रता भोसलेके विनाशका सामान हुआ। जिन्हें भान था कि अंग्रेज उनसे द्वेष करते है, वेही बच गये। किन्तु अंग्रेजोंको

---

* १८२६ की सधि यों थी:—ईस्ट इंडिया कंपनी और महाराजा रघोजी भोसले, उनके उत्तराधिकारी तथा वारिसो के साथ सार्वकालिक मित्रता की यह सधि है।

अपने गले का हार मानने की मूर्खता जिन्होंने की थी उन्हीं का, अनहद निर्दयता और विश्वासघातसे, अंग्रेजोंने सत्यानाश कर डाला। वराड का राज्य कोई अंग्रेजोंके बाप की जमीदारी नहीं थी; या अंग्रेजो की मर्जीपर ही जिन की हस्ती अवलम्बित हो ऐसा कोई सामतराज्य भी न था। फिरगी सरकार के समान वह एक स्वतत्र और स्वयपूर्ण राज्य था। जे. सिलव्हियनने अंग्रेजोंको साफ शब्दोंमे ललकारा था "किस कारणसे और किस न्यायके दिखावेसे (चाहे वह पाश्चिमात्य हो या पौर्वात्य) अंग्रेजो को हक है कि वे केवल इसलिए किसी के राज्य को जब्त करे कि उसका राजा निःसंतान मरा"।

सचमुच वह सब एक हथकडे का इद्रजाल था। एक उडा ले और दुसरा साथी चुपचाप उसे छिपाये रखे! एक सिर काट ले और दूसरा साथी चिल्ला चिल्ला कर पुकारता जाय 'किस न्याय या निर्बंध के आधार पर तुमने यह काम किया है?' मानों, चोरों और खूनी डाकुओं को अपने काम की पुष्टिमें किसी न्याय, निर्बंध की आवश्यकता होती है! स. १८५३ में निदान डलहौसीने अपने "मित्रोंके" गलेपर खूनी खंजर फेर ही दिया! और केवल इसी बहाने कि भोसलेने दत्तक गोद न लिया। राजा रघूजीको प्रबल आशा थी कि उन्हें पुत्र अवश्य होगा किन्तु एकाएक उनका अन्तकाल हुआ। फ़िर भी उनकी धर्मपत्नी रानी को दत्तक गोद लेनेका पूरा अधिकार था। हाँ, इसके पहले मृत राजाओकी रानियोने गोद लिए दत्तक पुत्र को अंग्रेजोंने न माना होता तो हमें कुछ कहना न था, किन्तु यह तो सब जानते हैं कि १८२६ में दौलतराव शिंदे की विधवा रानीके गोद लिए हुए, १८३४ में धारके राजाकी विधवा के लिए हुए और १८४१ में किसनगढकी रानीके लिए हुए दत्तकको अंग्रेजोंने मान लिया था। एक दो नहीं, कई एक दत्तविधानोंको अंग्रेजोने मान्यता दी थी। किन्तु, ध्यान रहे; ये सब दत्तविधान मान लेना उस समय अंग्रेंजोंके लाभ मे था। हाँ, इस बार राजा रघूजीकी रानीका दत्तक मान लेना उनके स्वार्थके विरुद्ध था, जिससे स्पष्ट है कि अंग्रेजोका हानि-लाभही उनकी नीतिका आधार था। नागपुर नरेशने दत्तक नहीं लिया और सातारेके छत्रपतिने गोद लिया इससे दोनोंके राज्योपर अंग्रेजोंनें कब्जा जमाया। तर्कशास्त्र भी यहाँ लाचार हो जाता है।

नागपुर-प्रांत जब्त कर डलहौसीने ७६८३२ वर्ग मील का प्रदेश, जिसकी जनसंख्या ४६,५०,००० और वार्षिक आय ५० लाख की थी, हडप लिया। असहाय रानियाँ अपना सिर पीटती रो रही थी उसी क्षण राजमहल के द्वार खटखटाये गये। दरवाजों को धडाम से खोलकर अंग्रेजी सेना अंदर घुस पडी; अस्तबल से घोडों को खोल दिया गया; ऊपर चढी हुई रानियों को बलपूर्वक नीचे उतार कर हाथियों को मवेशी बाजार में बेचने भेजा गया, सोने चांदी के अलंकार राजमहाल से लूट कर गली गली में नीलाम कर दिये गये। रानी के गले की शोभा बढानेवाली कंठमाला बाजार की मिट्टीमें मलिन हुई। एक हाथी के मात्र सौ रुपये इस हिसाब से सभी हाथी बेच मारे गये। और, फिर, इसमें क्या आश्चर्य, कि वे घोडे, जो डलहौसीके प्रतिदिन के खाने से भी अधिक मूल्यवान तथा अच्छी खुराक पा कर पुष्ट थे, बीस बीस रुपयों में बेचे गये। और घोडोंकी उस जोडी को, जिनपर स्वयं राजा रघूजी सवार होते थे, पांच रुपयों में दिये गये। हौदे के साथ हाथी, और जीन चढाये घोडे तो बेच डाले अवश्य; फिर भी, देखो, उन रानियों के गहने उनकी देहपर पडे हुए हैं! क्यों न उस जेवरको बेचा जाय? और आखिर, अन्य वस्तुओंके समान इन जेवरों को भी रास्ता दिखाया गया; बेचारी रानियोंकी देहपर फूटी मणि भी न रही! किन्तु तिस पर भी अंग्रेजों से 'मित्रता' न छूटी। इसलिए उन्होंने राजमहलकी भूमि खोदना प्रारंभ किया। हायरे दैव! रानियोंके अंतःपुरके शय्यागारोंको अपवित्र करनेको अंग्रेजी कुदाली सँवारी गयी! पाठक, चौंको मत, व्यथित न बनो! क्यों कि, अभी तो अंग्रेजी कुदालीने अपना काम शुरूही किया है; उसे आगे चलकर बहुत काम करना है—वह कर रही है। देखो, रानीका पलंग भी उसने तोड फोड दिया और अब उसके नीचेकी भूमि खोदी जा रही है! कैसे कहें? महाराणी अन्नपूर्णाबाई उस समय अपनी घडियाँ गिन रही थी। नागपुरके श्रेष्ठ भोसले घरानेकी यह विधवा राजमाता राज्य तथा घरानेके अपमानसे दुःखित कराह रही थी, तभी उसकी बगलके दालानके उसीके शय्यास्थानके नीचे, अंग्रेजोंकी कुदाली अपना विध्वंसन-कार्य बढा रही थी। बगलके दालानके आर्त कराहोंका साथ देनेको इस कुदालीकी टनटनाहटका कैसा

घोर पार्श्वसंगीत ! और इस भीषण बनाव का कारण ? यही कि राजा रघूजी भोसले किसी पुत्रको गोद लेनेके पहले स्वर्ग सिधारे !*

अपने प्राचीन राजवंशपर मढे गये असहनीय अपमानकी आगसे तड़पती हुई, रानी अन्नपूर्णाबाईने अंतिम साँस ली। फिर भी राणी बंका की यह आशा मरी नहीं कि 'अब भी अंग्रेज न्याय करेगा'। उसकी वह आशा भी अंतिम साँस छोड गई; हाँ, किन्तु अंग्रेज बॅरिस्टरोंको भरपेट खिलानेके पहले नहीं! फिर रानी बंकाने क्या किया ? फिरंगियोंसे 'राजनिष्ठ' रहकर अपनी शेष आयु समाप्त की! जब झाँसीकी बिजलीकी कडकडाहट हुई और रानी बंकाने जब देखा कि उसके बेटे अपनी तलवारें सँवारकर स्वराज्य-संग्रामके महायज्ञमें जा रहे है, तब भोसलेकी इसी विधवा रानी बंकाने उन्हें धमकाया कि 'मैं स्वयं जाकर अंग्रेजोंको तुम्हारे षडयन्त्रकी खबर देती हूँ और तुम्हें कत्ल करवाती हूँ'। बंका! उस महान् लब्धप्रतिष्ठ वंशको कलंकरूप बनी पापिनी! जा, गहरे–बहुत गहरे नर्कमें जा, वहीं तुझे आसरा मिलेगा! किन्तु, क्या मालूम, अपने राष्ट्रसे विश्वासघात करनेवाले जीवको नर्कमें भी स्थान मिलता है या नहीं!

* डलहौसीज ॲडमिनिस्ट्रेशन पृ. १६५–१६८

अध्याय ३ रा

नानासाहब और लक्ष्मीबाई

बजाओ! इतिहास के अग्रदूतो! अपनी तुरहियाँ और शंख जोरसे फूँको! क्यो कि, दो महान वीरश्रेष्ठोका प्रदेश अब इतिहास के रंगमंचपर हो रहा है। हिंदमाता के गलेके हारके मानो, ये दो आबदार मोती! इस समय स्वदेश के क्षितिजको अमा के घटाटोप अंधेरेने जब पूरी तरह व्याप्त कर दिया था तब दो दमकते हुए तेजोगोलोंके समान ये दो व्यक्ति स्वदेशके आकाशमें चमक रहे है। अपनी देहके खूनकी आखरी बूँद तक स्वदेशपर हुए अन्याय्य अत्याचारो का प्रतिशोध लेने को सिद्ध हुए, मानो, ये दो भयकर 'अकाली' ही है। स्वदेश, स्वधर्म और स्वराज्यके लिए अपने प्राणोको निछावर करनेवाले येही दो हुतात्मा वीर! शिवाजीको जन्म देनेवाली भारमाताका खून अब तक सूखा नही है—ससार को आव्हान देकर सिद्धकर दिखानेवाले तलवारके धनी ये दो महावीर, मानो, प्रतिनिधिरूप खडे हैं! स्वराज्यकी परम पवित्र महत्त्वाकाक्षा को अंतःकरणमें पालनेवाली येही दो विभूतियाँ। हारमें भी धवलित कीर्ति से अलकृत धर्मयुद्धके येही दो धर्मवीर! इसीसे पाठक, उठो, परम आदरसे खडे हो कर इन वीरोका स्वागत करो! क्योकि, नानासाहब पेशवा तथा झाँसीवाली महारानी ये दो विभूतियाँ अब इतिहासके रंगमंचपर पदार्पण कर रही हैं।

पावनप्रताप महाराष्ट्रके माथेरानकी पहाडियोंके पठारके प्राकृतिक

सौंदर्यका वर्णन करें या उसकी तलहटीमे फैले हुए हरे मुलायम मखमली कछारोंका वर्णन करें; हम निर्णय नहीं कर पाते। इस सुंदर पहाडियोंकी उपत्यकामे-तथा गगनचुंबी माथेरानकी गिरिशिखरोंकी छायामे वेणू नामक एक छोटासा गॉव, उस प्रकृति-सुंदर भूप्रदेशकी शोभाको और सुंदर बनाते हुए, वहाँ सुखसे बसा हुआ था। उस वेणू गॉवके प्राचीन और प्रतिष्ठित घरानोंमें माधवराव नारायण भट का घराना अग्रसर माना जाता था। इस देहाती सीधे-सादे वातावरणमे रहकर भी माधवराव तथा उनकी शीलवती धर्मपत्नी गंगाबाई सुखचैनसे जीवन बीता रहे थे। इस सुखी परिवारमे १८२४ ई. मे गंगाबाईकी गोद बेटेसे भर जानेके कारण सबके मुँहपर आनंद लहरें मार रहा था। यह पुत्र और कोई न होकर नानासाहब पेशवा था, जिसका नाम सुनतेही फिरंगियोंके छक्के छूट जाते हैं। स्वाधीनता और स्वदेश के लिए झूझकर अपना नाम इतिहासमे अमिट अंकित करनेवाला वही नानासाहब !

इसी अरसेमे, बाजीराव द्वितीय अपने राजसिंहासनसे वंचित होकर गंगाके किनारे ब्रह्मावर्तमें अपनी शेष आयु बिता रहा था। कई महाराष्ट्रीय परिवार उसके साथ थे। और बाजीराव अपने पाससे खर्चकर उदारताके साथ उनको पालता है यह मालूम होनेपर और भी कई परिवार उसके पास आकर बसे। १८२७ ई. मे बाजीरावकी शरणमे ब्रह्मावर्तको पहुँचे परिवारोंमे माधवरावका परिवार भी था। वहाँ रहते हुए माधवरावके इस बालकसे बाजीराव बहुत आकर्षित हुआ और फिर तो नानासाहब सारे राजदरबार ही का लाडला बना। बचपनहीमें दीख पडनेवाली वह तेजस्विता, वह गहरी छबी, वह असाधारण बुद्धि—बाजीरावके मनपर इनकी गहरी छाप पडी, जिसके फलस्वरूप बाजीरावने उसे गोद लेनेका निश्चय किया। ७ जून १८२७ को बाजीराव द्वितीयने विधिपूर्वक बडे समारोहके साथ नानासाहबको गोद ले लिया। नानाकी उम्र उस समय २॥ वर्षकी थी। इस प्रकार वेणू गॉवमे पैदा हुआ यह साधारण बालक, भाग्यबलसे, पेशवाके सिंहासनका उत्तराधिकारी—दत्तकही क्यो न हो—बन बैठा।

मराठी साम्राज्यके पेशवाके पदपर उत्तराधिकार प्राप्त होना निःसंदेह

एक बडे भाग्य की बात थी। किन्तु, हे तेजस्वी राजछौने! इस महा-भाग्य के साथ, तुझे भांन है कि, कितने बडे दायित्व की धुरा तेरे कंधेपर आ पडी है? पेशवा का सिंहासन कोई मामूली बात नहीं है। इसीपर वे महाप्रतापी बाजीराव प्रथम चढे थे और यहींसे उन्होंने एक साम्राज्य का सचालन किया है। पानीपत का युद्ध इसी सिंहासनके लिए लडा गया था। पेशवाओंके मस्तक पर अभिसिंचन करनेके लिए इसी सिंहासनपर सिंधु का पवित्र जल उडेला गया था। वडगाव की संधि इसीके लिए हुई और सबसे महत्त्वपूर्ण बात है, पराधीनता का पापी स्पर्श इसी सिंहासनको होनेवाला है– नहीं पहले ही हो चुका है। समझे बालक! सिंहासनका उत्तराधिकारी होनेका मतलब है उस सिंहासनकी रक्षाका भार उठाना और उसका सुयश अक्षुण्ण रखने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध होना। तो फिर पेशवाके इस सिंहासनकी प्रतिष्ठा बनाये रखना स्वीकार है न? या तो पेशवाके इस गद्दीपर विजय का मुकुट विराजमान हो जाय; या तो, चित्तौड की वीरांग-नाओं के समान इस सिंहासन को धधकी हुई पवित्र चिताग्निमें स्वाहा कर देनाही योग्य होगा! पेशवाके सिंहासन की शान अक्षुण्ण रखनेका और कोई चारा नहीं है! प्यारे राजकुमार! सोच ले यह कर्तव्यभार; और तभी पॉव धरो उस पेशवाके गद्दीपर। जब तेरे इस दत्तक पिताने बाजीराव (२ य) ने हृदयको दहलानेवाले ताने मारनेका लोगों को अवसर दिया कि 'पेशवाका मस्तक झुक गया,' तबसे यह देश लज्जासे निस्तेज हो गया है और सब चाहते हैं कि यदि इस गद्दीका अंतही होना हो तो वह आरम्भ के समान हो–नष्ट होना हो तो भी लडते लडते! ओ चुलबुले कुमार! ऐसी शान और दृढतासे पेशवा के सिंहासन पर चढो, जिससे इतिहास भी गर्वसे पुकारेगा कि हॉ हॉ, प्रथम पेशवा बालाजी विश्वनाथके स्पर्शसे गर्वित सिंहासन उसके आखरी उत्तराधिकारी नानासाहब पर भी गर्व करता है।

हॉ, इसी अरसेमे काशीक्षेत्रमें चिमाजीअप्पा पेशवाके संगी साथियोंमें मोरोपंत तांबे अपनी धर्मपत्नी भागीरथीके साथ थे। इन पतिपत्नीके सपनेमें कभी खयाल नहीं आया होगा कि आगे चलकर उनका नाम अमर होनेवाला है। विधनाने जिस बालिकाको भारतमाताके हाथमे चमकनेवाली तलवारका स्थान देनेका संकेत किया था, उसके मातापिता होनेका गर्व

इस परिवारको है। गुलाबकी कँटीली शाखाओंको कहाँ पता होता है कि बसतमे अपनी महकसे सबको मस्त बनानेवाला फूल-उसकीही कोखसे खिलनेवाला है? भलेही शाखा इसे न जाने, किन्तु हिन्दुभूमिके बसतका आगमन होतेही फूल ने तो अपना सिर ऊँचा किया! १८३५ ई. मे भागीरथीबाईने वीरकन्या लक्ष्मीको जन्म दिया। उसका नाम मनूबाई रखा गया।

मनू तीन चार वर्षोकी हुई तब यह ताम्बे परिवार काशी छोड ब्रह्मावर्तमे बाजीराव के पास आ गया। वहाँ मनू सबकी लाडली बनी, उसे सब 'छबेली' कहते थे। राजकुमार नानासाहब और यह फूहड छबेली! जब ये दो बच्चे अल्हडपनसे एक दूसरेको चिपकते होगे तब ब्रह्मावर्तके लोगोकी बाछें खिलती होगी। नानासाहब और छबेली को शस्त्रशालामे तलवार चलानेकी शिक्षा लेते हुए देखकर किसकी ऑखें अत्यानदसे न चमकती हो? नानासाहब और लक्ष्मी इसी शिक्षाके बलपर आगे चलकर स्वराज्य और स्वधर्मकी रक्षामे डटनेवाले जो थे। हाँ, जिन्होंने इन बालकोकी शस्त्र–शिक्षाकी उन्नति देखनेका सौभाग्य प्राप्त किया था, वे उनका उज्ज्वल भविष्य न देख पाये, जहाँ उनकी तलवारोंका कौशल रणक्षेत्रमे देखनेका सौभाग्य जिन्हें प्राप्त हुआ वे उनकी बचपनकी बाल–लीलाओंको देखनेसे वचित रहे। चाहे जो हो; ये चर्मचक्षु भले ही उस दृश्य को देख नहीं सके, कल्पना का ऐनक लगाते ही हम अतीत की उनकी बाल–क्रीडाको हू–ब–हू देख सकते हैं। और साहब और रावसाहब (नानाका चचेरा भाई) जब अपने शिक्षकके नेतृत्वमे पाठ पढते थे तब छबेली भी उन्हे ध्यानसे देखती थी और कुछ लिखना–पढना भी उनकी देखादेखी सीख गयी। हाथीपर हौदेमे चढ नानासाहब जाते हो तब छोटी छबेली लाडसे कहती 'मुझे भी उठा लो न भैय्या'।* कभी नानासाहब उसे ऊपर उठा लेते और हाथीपरसे हथियार चलानेकी शिक्षा देते। कभी घोडेपर चढे नाना लक्ष्मीकी बाट जोहते खडे रहते, इतनेमें लक्ष्मी भी कमरमे तलवार लटकाए, वायुसे बिखरे बालों को सॅवारती, घोडा दौडाती वहाँ आ धमकती, किन्तु 'अपनी

* पारसनीसकृत 'झाँशीकी रानीका चरित्र' (मराठी)

सवारी के तेज जानवर को रोकने के कष्ट से उसकी गौर छवि और ही आरक्त गौर हो उठती। अब नाना १८ सालका और लक्ष्मी ७ साल की थी। ठीक बचपन से इनमें गाढी मित्रता पैदा हो चुकी थी। एक ही अनादि शक्ति के ये दो रूप थे और एक ही महान् साधना के लिए उनका जन्म हुआ था, जिससे उनका एक दूसरे के प्रति आकर्षण विद्युत् परमाणु के समान प्राकृतिक ही था। इस समय ब्रह्मावर्त में १८५७ के क्रांतियुद्ध के तीन महत्त्वपूर्ण व्यक्ति बढ रहे थे—नानासाहब, लक्ष्मी और तात्या टोपे। आगे अभिनीत होनेवाले महाभीषण नाटक के तीन प्रमुख अभिनेताओं की रूपरचना (मेक--अप्) करने के लिए ही, मानो, विधाताने ब्रह्मावर्त की रंगशाला का निर्माण किया था। कहते हैं, हर भाईदूज के दिन, नाना और लक्ष्मी—दो ऐतिहासिक भाई-बहन, दिवाली का समारोह संपन्न करते थे। सोने की थालीमें नीरांजन रखकर अपने हाथो नाना की आरती उतारनेवाली मोहक किन्तु तेजस्वी छबेली का चित्र हम अपने मनःचक्षुओं के सामने खींच सकते हैं। एक ही कामधेनु के बच्चो, एकही कान के कोहीनूरो, तुम भाईबहन एक दूसरे को प्रेमसे तोहफे दो। हम भी उसी भारतमाता के कोखसे जन्मे है: हमारी भी नसो में वही खून बह रहा है; हम सब भाई बहन हैं; हर क्षण हमारे लिए दिव्य भाईदूज के समान है। अपने हृदय को सुवर्णपात्र बनाकर उसमें प्रेम की दिव्य ज्योति को जगमगाओ! लक्ष्मीबाई नानासाहब की मंगल आरति उतार रही है; इस प्रकार के दिव्य अवसर—जो इतिहास ही को अद्भुत आकर्षक कहानियों से भी अधिक अद्भुत रमणीयत्व प्राप्त कर देते हैं—संसार के किसी अन्य राष्ट्र के इतिहास में शायदही मिलेंगे। हे भारतमाता! जबतक ऐसे भाई बहन तुम्हारी कोख से जन्म पाते है तबतक तुम्हें कोई भय नहीं है। जबतक ऐसे दिव्य भाईदूज के प्रसंग और उनकी उनसे भी बढकर स्फूर्तिप्रद कहानियाँ जीवित हैं; तबतक किसकी हिम्मत है कि तुम्हारी ओर आँख उठाकर देखे? और यदि कोई ऐसी दुष्ट चेष्टा करने की धृष्टता करे तो विश्वास करो कि कानपुर का भाई और झाँसी की बहन, ये दोनों भाईदूजका वह महान् समारोह फिरसे शुरू करेंगे।

नानासाहब और मनूबाई के बचपन ही में उन के आगामी बडप्पन

का बीज पाया जाता है। वे बच्चे जब नन्हे थे तभी से उनके रोम रोम में स्वराज्य के लिए प्रेम, आत्माभिमान की गहरी सूझ, और पुरखाओं का योग्य अभिमान मिद गया था। स्वराज्य शक्ति ने जब पुणें से उठकर ब्रह्मावर्तमें अपना अड्डा जमाया तब नानासाहब, लक्ष्मीबाई, रावसाहब तात्या टोपे जैसे छोटे छोटे पौधे वहाँ अपने छोटे छोटे कोपलों को बाहर धकेल रहे थे। उनसे एक पौधा थोडे ही समयमें झाँसी के उपवन मे बोया गया। स. १८४२ में झाँसी के गगाधरराव बाबासाहब महाराज से छबेली का गठबधन हुआ और इस तरह वह छबेली झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई बन गयी। वहाँ राजसभा में वह बहुत जनप्रिय हुई और उसने अपनी प्रजा के प्रेम तथा भक्तिपूर्ण राजनिष्ठा को कैसे प्राप्त किया इस का इतिहास आगे चल कर मालूम होगा।

स. १८५१ में बाजीराव द्वितीय मर गया। अच्छाही हुआ। उस की मृत्युपर एक भी आँसू बहाने की आवश्यकता नहीं है। क्यो कि, स. १८१८ में अपना राज्य गँवा कर, यह पेशवा घराने का कुलबोरन, दूसरे राजाओं के राज्य छिन जाने में सहायता देते हुए जीवन बिता रहा था। ईस्ट इडिया कपनी के दिये हुए आठ लाख की प्रतिवार्षिक पेन्शन से इसने काफी बचाया था और उसे उसी कपनीके नोटोंमे लगा रखा था। फिर अफगानिस्तान से जब अंग्रेजोंने युद्ध शुरू किया तब इसने अपने बचाये हुए धनसे पचास लाख रुपया अंग्रेजोको कर्जा देकर उन की सहायता की। थोडेही दिनोंबाद फिर अंग्रेजों का सिक्ख राष्ट्र के साथ युद्ध जारी हुआ। और सब को आशा (और केवल अंग्रेजोंको डर था) थी कि ब्रह्मावर्त का यह मराठा, सिक्खों का साथ देकर अंग्रेजो के सामने डट जायगा। जब लगभग समूचा हिंदुस्थान औरगजेब के विरुद्ध युद्ध करने में मशगूल था, तब, कहते हैं, पजाब में गुरु गोविदसिंह की हार होनेपर मराठों से सहाय प्राप्त करने के लिए आप महाराष्ट्र में चले आये। अब तो उत्तर भारतमें जाकर, मराठों को सहयोग देनें का अधूरा वचन और काम पूरा करने का मौका आया था। किन्तु, हाय! बाजीरावने ऐन वक्तपर सब गुड गोबर कर डाला। इसी बाजीने-शिवाजी के पेशवाओं के इस कुलदीपक ने--अपनी गाँठ को काटकर अंग्रेजों की सहायता के

लिए एक सहस्र पैदल सेना और एक हजार घुडसवार भेज दिये। अपने शनिवार वाडे (पुणें में) की रक्षा के लिए इस के पास सेना न थी. पर, हाँ, गुरु गोविंदसिंह की पवित्र भूमी को भ्रष्ट होनेमें अंग्रेजों की सहायता के लिए इस को सेना मिल गयी! अभागे भारत! मराठा सिक्खो का राज्य ले और सिक्ख मराठो को पीटे—और यह सब क्यों! क्यों कि इन दोनों की लाशों पर अंग्रेज बेहोश होकर नाचे इसलिए! हमें हृदय से यमराज को धन्यवाद देना चाहिये कि यह स्वदेशद्रोही बाजीराव १८५७ के पहले इस लोक से विदा हुआ!

मरने के पहले, बाजीराव ने वसीयतनामा कर रखा, जिस मे उस के दत्तक पुत्र नानासाहब को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर पेशवाई के सब अधिकार दे दिये थे! किन्तु बाजीराव की मृत्युका सवाद पाते ही अंग्रेज सरकारने घोषित किया कि आठ लाख की पेन्शन में नानासाहब का कुछ भी अधिकार नहीं है। अंग्रेजों के इस निर्णय को सुन के नानासाहब की दशा क्या हुई होगी?, उन के मनमें उमडते हुए विचारो और भावों ने कैसे खलबली मचायी थी इस की झाँकी उनके पत्रमें मिलती है। पत्र यों है:—

" पेशवा के श्रेष्ठ परिवार के साथ साधारण जनों का सा बर्ताव करने में कंपनी ने महान् अन्याय किया है। स्व. श्रीमंत बाजीरावसाहब ने जब अपना राजसिंहासन कंपनी को सौंपा तब स्पष्टतया तय हुआ था कि उस के बदले मे कंपनी वार्षिक आठ लाख रुपया दे। यदि पेन्शन सदा के लिए चालू न रहता हो, तो फिर पेन्शन के बदले में छोडा हुआ राज्य भी तुम्हारे पास सदा के लिए क्यो कर रह सकता है? एक फरीक तो (संधि की शर्तों) प्रतिज्ञापत्र पर पूरा अमल करे और दूसरा फरीक जानबूझ कर उसे ठुकराय यह तो घोर अन्यायपूर्ण, असगत, और वाहियात बात है।"

दत्तक पुत्र के नाते अपने पिता के किसी अधिकार पर कोई हक नहीं है, अंग्रेजों की इस दलील का मुँहतोड उत्तर अगले परिच्छेद में देकर हिंदुशास्त्रों, न्यायशास्त्र तथा राजनीतिशास्त्र के उद्धरण देकर अपने उत्तर की पुष्टि करते हुए आगे लिखा है, " पेन्शन बंद करने का कारण बताते हुए कंपनीने कहा है कि बाजीराव (२ य) ने पेन्शन से बचा कर जो

रकम इकट्ठी की है वह इतनी अधिक है कि उनके परिवार के खर्च के लिए काफी है। कंपनी भूलती है कि यह पेन्शन आपस की संधि के एक शर्त के अनुसार मिलती थी और उस के खर्च करने के तरीके पर कोई नियंत्रण उस शर्त मे नहीं रखा गया है। इस से हमारा सीधा सवाल है कि, पेन्शन किस तरह खर्च किया जाय यह पूछने का कंपनी को क्या अधिकार है? रत्तभर भी नही है। कंपनी ने कभी अपने नौकरों से भी पूछा था कि उन के पेन्शन को वे कैसे व्यय करते है और उससे कितनी बचत करते है। तब कितने आश्चर्य की बात है कि जो प्रश्न अपने नौकरों से कंपनी नहीं पूछ सकती वह एक राजवंशीसे किया जा रहा है और संधि की शर्तों को ठुकराने का बहाना ढूंढा जा रहा है।"* इस तरह तर्कसंगत और स्पष्ट निवेदनपत्र लेकर नानासाहब का अत्यंत विश्वासी नयदूत (अँम्बॅसडर = एलची) अजीमुल्लाखान इंग्लैंड रवाना हुआ।

१८५८ के क्रांतियुद्ध में काम करनेवाले व्यक्तियों मे अजीमुल्लाखाँ का नाम खास ध्यान में रखना चाहिये। स्वातंत्र्य-समर की सूझ जिन असाधारण, बुद्धिशाली तथा विशाल हृदय की व्यक्तियों के मन में सर्व-प्रथम पैदा हुई, उन में अजीमुल्ला का स्थान बहुत ऊँचा है; और जिन अनेक आयोजनों के कारण अन्यान्य अवस्थाओ से गुजरती हुई क्रांति का विकास हुआ उनमें अजीमुल्ला की योजनाएँ महत्त्व रखती है।

अजीमुल्ला का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ था। अपने गुणों के बलपर उसकी उन्नति हुई और आखिर वह नानासाहब का विश्वसनीय मंत्री बना। बचपन में गरीबी के मारे वह एक अंग्रेज परिवार मे नौकर रहा था। किन्तु उस हैसियत में भी महत्त्वाकांक्षा की ज्योति उसके अंतःकरणमें सदासे जलती रहती थी। साहब का 'बॉय' बनकर रहते हुए उसने कई विदेशी भाषाए सीख ली और थोडेही समय में वह अंग्रेजी तथा फ्रान्सीसी भाषाए धारावाही ढंगसे बोलने लगा। इन

* नानाज क्लेम अगेन्स्ट दि ईस्ट इंडिया कंपनी.

दो भाषाओं का पूरा अध्ययन कर लेने के बाद, अजीमुल्लाने फिरंगी की सेवा छोड दी और कानपुर की एक पाठशाला में भरती हो गया। अपनी असाधारण क्षमता के कारण थोडेही समयमें वह उसी पाठशाला में शिक्षक हुआ। वहाँ उसका बडा नाम हुआ और उसकी विद्वत्ता की कीर्ति नानासाहब के कानोंतक पहुँच गयी, जिससे उस का प्रवेश बिठूर के दरबारमें हुआ। पहले ही उस की दी हुई नेक सलाह नानासाहब को जँच गयी, जिसकी उन्होंने प्रशंसा की और फिर तो, बिना अजीमुल्ला की सलाह के नानासाहब कोईभी महत्त्वपूर्ण काम नहीं करते थे। स. १८५४ में नानासाहब ने उसे अपना एलची बनाकर अिंग्लैंड भेजा। उसका चेहरा सुंदर था; साथमें उसकी वाणी भी मीठी किन्तु गंभीर थी। अंग्रेजों के उस समय के रीतिरिवाजो का बहुत अच्छा जानकार था जिससे लंदनके राजनैतिक क्षेत्रमें वह बहुत जल्द प्रिय बन बैठा! इसकी मीठी वाणी की मोहिनी और मुसलमानी रुबाब के तेजस्वी व्यक्तित्त्व से कई आंग्ल युवतियाँ उस पर आशिक हो गयीं। उस समय लंदनके क्रीडोद्यानों में और ब्रायटन के पुलिन पर जवेरात से लदे इस हिंदी 'राजा' को देखने के लिए लोगों के झुंड के झुंड उमड पडते थे। ऊँचे, प्रतिष्ठित घरानों की कई अंग्रेज महिलाओं तो इससे इतनी पागल हो गयी थीं, कि उसके भारत लौट आनेपर भी, प्रेमभीनी चिठ्ठियाँ उसे भेजा करती थीं। आगे चलकर जब हॅवेलॉक की सेनाने बिठूर छीन लिया तब हॅवेलॉक को वहाँ 'अपने प्रीतम अजीमुल्ला' के नाम लिखे अंग्रेज महिलाओं के हस्ताक्षरमें कई पत्र प्राप्त हुए।

किन्तु, अजीमुल्लाके अंग्रेज युवतिओं को अपने पीछे पागल बनाने पर भी ईस्ट इंडिया कंपनीने अपने हठीले रुखपर जरा भी आँच न आने दी। कुछ समयतक वह उसको गोलमोल उत्तर देती रही और निदान टका-सा जवाब दे दिया, कि " गवर्नर जनरलने जो निर्णय दिया है, कि दत्तकपुत्र नानासाहब को अपने पिता की पेन्शन पर किसी तरह का अधिकार नहीं है, हमारी रायमें बिलकुल ठीक है। " इस तरह उस की यात्रा का प्रमुख हेतु बिगड जानेपर खाली हाथ लौटते समय उसका मन कुछ दुःखी हुआ। 'कुछ' इस लिए कहा है कि, इसी समय एक नूतन आशा उस

के मन मे सिर ऊँचा कर रही थी। उस आशा कि सफलता में किसी विदेशी की सम्मति अपेक्षित नहीं थी, किन्तु उसकी सफलता केवल उस के स्वदेश तथा देशबाधवों पर निर्भर थी। स्वजनों की अनुमति कैसे प्राप्त करें? साम, दाम, भेद ये तीन इलाज करनेपर भी स्वदेश की स्वाधीनता प्राप्त नहीं होती तब, किस दण्ड-शक्ति का उपयोग करें? इस विचारसे अजीमुल्ला के हृदय में एक नूतन आशा, एक नवचैतन्य पैदा हुआ।

ठीक इसी समय लदन की प्रतिष्ठित बस्तीमें एक क्षत्रिय चिंतामग्न हो बैठा था। असे भी यही विचार सता रहा था कि अर्जी-प्रार्थना से जो प्राप्त नहीं होता उसे किस उपाय से हासिल करे? और असीम निराशा के परिणाम से पैदा होनेवाले प्रतिशोध से अभिभूत हो कर वह अन्यान्य आयोजनों के विषय में सोच रहा था। यह क्षत्रिय था सातारे का एलची रंगो बापूजी। पेशवा का प्रतिनिधि अजीमुल्ला उनसे कई बार मिलता था और उन दोनों में गुप्त मत्रणाएँ भी हुआ करती थीं। स्वाधीनता प्राप्त करने के आयोजनोंमे मशगूल छत्रपति तथा पेशवा के इन दो एलचियों को कुछ समय के लिए भूलकर नानासाहब की गतिविधिपर ध्यान देना हमें आवश्यक है।

वह दिन बडे सौभाग्य का होगा, जब ससार के सम्मुख श्रीमंत नानासाहब पेशवा की जीवनी सिलसिलेवार रखी जायगी। किन्तु तबतक नानासाहब के कट्टर शत्रु अंग्रेज इतिहासकारो के उन के जीवन के मोटे प्रसगों का वर्णन यहाँ करना असगत न होगा। आवश्यक होनेपर उन के जवान होनेतक का इतिहास हम जान ही चुके हैं। उनका ब्याह सागली के महाराज की ममेरी बहन से हुआ था। स. १८५७ के उत्थान का कार्यक्रम उत्तर भारत के लिए निश्चित करनेपर नानासाहब के इस नातेदार सालेने उसीतरह का संगठन तथा क्राति महाराष्ट्र मे भी करने के लिए पटवर्धन वशीय रियासतों में सब प्रकासे सिद्धता कर रखी थी। अपने पिता की मृत्यु के बाद नानासाहब बिठूर ही में रहे!-यह नगर यों भी दर्शनीय था; उसकी किलाबदी से टकराकर बहनेवाली भागीरथीने उसकी शोभा और भी बढा दी थी। नानासाहब के राजमहल की बारहदारी से तो दृश्य बहुत सुदर दीख पडता था। आगे फैला हुआ भागीरथी का प्रशात जल, उस के तटपर आनदसे

क्रीडा करनेवाले स्त्री-पुरुषों के झुंड और रमणीय तथा शिल्प-कौशल्य के प्रसिद्ध मंदिरों के आकाश में ऊँचे उठे और गंगा-तटपर दूरतक चमचमाते हुए, कांचन-कलश; सभी दृश्य अत्यंत मनोहारी था। राजमहल के दिवारों के अंदर चौडे बने मार्ग, किनारे लगे हुए हाट, राजनैतिक कार्यालय और मंत्रिमंडल के प्रधान भवन-इनसे वहाँ के महान् कार्यकलापों की कल्पना आ जाती थी! राजमहल के अंदर उसके विशाल सभागृहों में कीमती कालीनें बिछी हुई थीं; रंगबिरंगी चिकें लटक रही थीं। रसिकता से चुने हुए तथा कीमती चीनी मिट्टीके बरतन, जडाऊ रत्नोंसे चमकते झाड-फानूस, सुंदर सजे हुए शीशे, बढिया कारीगरी के हाथी-दाँत के नमूने और मणिरत्नों से बढी शोभा—कहाँतक वर्णन करें? सारांश, हिंदु राजप्रासाद में मिलनेवाले सभी भोग-विलास तथा वैभव बिठूर में बसने आये थे।* श्रीमंत नानासाहब के घोडे तथा ऊँट चांदी के साजसामानसे सजे थे। घुडसवारी का नानासाहब को बहुत शौक था और कहते है, उस समय अश्वविद्यामें लक्ष्मीबाई तथा नानासाहब अपना सानी कोई नहीं रखते थे। उन की अश्वशालामें शुद्ध बीज के चुने हुए घोडे थे। प्राणीसंग्रह का भी उन्हे बडा चाव था: उनके संग्रहालय के शिकारी कुत्तों, हिरनों, मृगोंको देखने के लिए दूर दूर से लोक आया करते थे। किन्तु सबसे महत्त्वपूर्ण बात है, नानासाहब अपने शस्त्रागार पर अधिक गर्व करते थे। उस शस्त्रागार में सब प्रकार के तथा हर काम के शस्त्र, पैनी फौलादी तलवारे, लंबे निशाने की अचावत् बंदूकें तथा छोटे बडे मुँह की तोपें रखी हुई थीं।

अपने उच्च कुल तथा वीर वंश का सार्थ गर्व करनेवाले नानासाहबने अपने मन में ठीक निर्णय कर रखा था कि या तो अपनी वैभवशाली परंपरा की शोभा बढानेवाला जीवन व्यतीत करेंगे या नामोनिशान मिटाकर समाप्त हो जायेंगे। यह भी ध्यान देने योग्य है कि, प्रमुख

* थॉमसन का लिखा 'कानपुर' अवश्य पठनीय है; क्यों कि, कानपुर की कत्ल से बचे दो में से एक यह जीव है, जिससे इस की पुस्तक का विशेष महत्त्व है।

सभाभवनो मे सहज ध्यान में आ जाय इसतरह, मराठों के इतिहास का गौरव बने महान् तथा शक्तिशाली वीरों के चित्र लटकाये गये थे।* उन वीरों से नानासाहब क्या बातें करते होंगे? छत्रपति शिवाजी का चित्र उन्हें क्या सदेश देता होगा? जब उनकी दृष्टि बाजीराव प्रथम, पानिपत के सदाशिवराव भाऊ, राजवशी युवक विश्वास-राव, सद्गुणी माधवराव तथा राजनीतिकुशल नाना फडनवीस के चित्रोंपर पडती होंगी तब क्या भाव उनके मनमें उमडते होंगे? ऐसे महान् राजपुरुषो के कुल से संबध होनेकी एकमात्र भावना नानासाहेब की मनोगति को किस ओर मोडती होगी? अपने पुरखा जिस महान् हिंदू साम्राज्य के प्रमुख प्रतिनिधि–नहीं, नहीं, राज्यकर्ता —थे उस साम्राज्य की पेन्शन अपने शत्रुसे अर्जी–प्रार्थनाएँ कर मॅगते रहना, इस मानहानि का भारी विषाद नानासाहब के मन को चुभता होगा इसमें क्या सदेह? शिवाजी महाराज की गौरवपूर्ण स्मृति नानासाहब के जिस अंतःकरणमें सदा भरी रही थी उसमें, शिवाजी महाराज के महान् कार्यों की ऐतिहासिक कथाओं ने प्रतिशोध और क्रोध की ज्वालाओं को अवश्य भड़काया होगा। 'संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते'– सज्जनों को अपमान के पहले मृत्यु अधिक पसंद होती है। नानासाहब भी इस तरह के मानी सज्जन थे। आत्माभिमान ही उस उत्तम राजकुमार की सपत्ति थी —वीरोंका सदासे यही नियम है। इससे गोरे अधिकारियों के निमत्रण को स्वीकार करने की कल्पना उन्हे नहीं भाती थी। क्यों कि, वे पेशवा थे और पेशवा के सम्मानमें तोपे दागने की प्रथा का पालन करने कपनी कभी न राजी होती। नानासाहब स्वस्थशरीर थे; सादगी उनका स्वभाव था। खराब आदतें या नशा से वे कोसो दूर थे।+ नानासाहब को कईबार नजदीक से देखनेवाले एक अंग्रेजने लिखा है कि उसने पहले पहल जब नानासाहब को देखा तो उनके २८ वर्ष के

* चार्लस् बॉल कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १ पृ. ३०५
+ ए क्वाएट ऍन्ड अन्ऑस्टेन्शस यग मॅन नॉट ॲट ऑल ॲडिक्टेड टु एनी एक्स्ट्रॅव्हॅगट हॅबिट्स्–सरजॉन के.

होनेपर भी वे ४० साल के पुख्ता पुरुष मालूम होते थे। ऐसे तो उनका बदन मोटा ही था; चेहरा गोल; आँखे शेर के समान सब ओर फिरनेवाली, तेजस्वी और भेदक थी। उनका रंग स्पॅनियॉर्ड के समान गेहुआ था; उनकी बातों में हँसोडपन झलकता था।* दरबार मे वे किनखाबी वेश पहनकर जाते। परम उदार और दयापूर्ण हृदय से उन्होंने प्रजा का प्रेम प्राप्त किया था। अपनी जनता के लिए वात्सल्यभाव रहना तो स्वाभाविक ही है किन्तु जिन अंग्रेजों ने उनके विरुद्ध षड्यन्त्र कर उनका सर्वनाश किया उन अंग्रेजों से भी सदा शिष्ट तथा उदार बरताव रखते थे, यह विशेष बात है, किसी अंग्रेज नौजवान दपति का मन हुआ कि चार दिन सैर करें तो 'महाराजा' नानासाहब के यहाँ उनकी अगवानी होती थी। कानपुरमें रहते ऊब उठे कई गोरे और उनकी मेमें 'महाराजा' नानासाहब की राजधानी में आते थे और बिठूर से बिछुडते समय उनसे कीमती शालें, मौल्यवान् मोतियो तथा मणियो को भेटस्वरूप ले जाते थे।* इससे स्पष्ट है कि, व्यक्तिगत विद्वेष का विष नानासाहब के मन को छू तक न गया था। जिस शत्रुको रणक्षेत्रपर अत्यंत कठोरतासे हना जाता है, उसी शत्रुपर उपकार कर उदारता से, सामाजिक शिष्टाचार के नियमों का पालन करने का महान् ऊँचा तथा वीरता को शोभा देनेवाला आदर्श भारतीय इतिहास तथा महाकाव्यो में बार बार गौरवपूर्ण रूपसे वर्णित है। राजपूत वीर अपने हाडवैरी से भी कल्पनातीत उदारतासे पेश आते थे। इससे ध्यान में रखना चाहिये की उस समय नानासाहब और अंग्रेज अच्छे दोस्त थे।+ जबतक 'महाराजा' नानासाहब के राजमहल में दावतों पर हाथ साफ करने का अवसर मिल जाता था तबतक अंग्रेज हाकिम और उन की मेमें नानासाहब की प्रशसा के पुल बाधते थे;

* ट्रेव्हेल्यान कृत 'कानपुर' पृ. ६८-६९

+ नानासाहब हमारे देशबाधवो से सबध आनेपर जिस सच्चाई से हमेशा पेश आते थे वह अकथनीय है। हाकिम उनकी मित्रता और सरलता में पूरा विश्वास करते थे; पताकाधारी उन्हे महान् पुरुष कहते थे। —ट्रेव्हेल्यान कृत 'कानपुर'

किन्तु वेही नानासाहब जब स्वराज्य और स्वदेश के लिए कानपुर के रण-मैदान में पवित्र खड्ग सँवार कर खडे हो गये तब उन्ही अंग्रेजोने उनपर अनगिनत हीन और अशिष्ट अभियोगों की वर्षा की।

श्रीमत नानासाहब शिक्षित और बहुत सभ्य थे। राजनीतिमे बहुत रस लेते थे; राजनैतिक हलचलोपर बारीकी से ध्यान देते थे। बडे बडे राष्ट्रों की छोटी मोटी घटनाओंपर गौर करते थे, जिस के लिए अंग्रेजी समाचार पत्रोंको ध्यानपूर्वक पढते थे। हर दिन, दैनिक पत्रों को टॉड नामक अंग्रेज से पढवा कर सुनते थे–यह टॉड आगे चलकर कानपुर में मारा गया–और इसीसे इंग्लैड और भारत में होनेवाले राजनैतिक हेरफेर बहुत बारीकी से जान लेते थे। अवध प्रात कपनीने जब्त किया। उस-पर जब गहरा विवाद होता तब नानासाहब अपनी स्पष्ट सम्मति प्रकट करते कि इस चालसे अंग्रेजोने युद्ध को न्योता दिया है।*

उपर्युक्त सभी वर्णन नानासाहब के शत्रुओं के लिखे इतिहास से इकठ्ठा कर लिया है, जिससे, ध्यान रखने की बात है कि, उन के शत्रुओं से वर्णित गुण नानासाहब के विशेष मोटे मोटे गुण होने चाहिये। क्यों कि, नानासाहब से जलनेवाले इन अंग्रेज इतिहासकारोंने, अगतिक होकर आवश्यक स्थानमे ही उन सद्गुणों की प्रशसा की होगी अन्यथा ऐसा वें कभी न करते। इस प्रशसा का बडा महत्त्व है। क्यों कि, यह सत्यकथन लाचार हो कर कह जाने के बाद इन्हीं अंग्रेज इतिहासकारोंने, नानासाहब के स्वातंत्र्य-समर में कूद पडते ही उनके विरुद्ध मे इतना उबाल निकाला हैं कि मानो ये शैतानियत भरा बदला हो। अंग्रेजी विषैली लेखनी, नाना को 'बदमाश', 'डाकू' 'राक्षस' 'शैतान का परकाला' आदि विशेषण लिखते समय राक्षसी आनद से बौखला उठती है। खैर, इन सब विशेषणों का श्रीमत नानासाहबपर लागू होना मान भी लिया जाय, फिर भी नाना-साहब स्वदेश और स्वराज्य के लिए लडे और झूझते हुए लहूलुहान हुए यह एक ही बात, हम भारतियो के हृदय में, उन की प्रिय स्मृति सदा

---

* चार्लस् बॉलकृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १ पृ. ३०४

बनाय रखने के लिए काफी है। समूचे संसार को यह सूचित होना आवश्यक था, कि भारत की स्वाधीनता को छिनने का पाप करनेवाले का प्रतिशोध—आज नहीं तो कल, जल्द या देरीसे—भयंकर और सर्व भक्षक प्रतिशोध अवश्य लिया जाता है। नानासाहब भारतभूमि का प्रत्यक्ष क्रोध! इस भारती का नृसिंहमंत्र। हॉ, यही एक बात हमारे अंतःकरण पर नानासाहब का महान् व्यक्तित्व अमिट अंकित करेगी! हॉ, केवल यही एक मात्र गुण भी! और फिर साथ साथ उनकी निजी उदारता, तीव्र कुलाभिमान और उससे भी महनीय देशप्रेमसे छलकता विशाल हृदय, इन सब की स्मृति हमारा मस्तक उनके चरणोंमें विनम्र कराती है। और फिर जिसका बल भीम-सा है, मुकुटसे मस्तक सुशोभित है, जिनकी तेजस्वी और सचेत ऑखें छेडे गये आत्माभिमानके कारण आरक्त बनी है, जिनकी कमरमें लटकती तलवार तीन लाखके मूल्यवान म्यानसे बाहर निकलनेको तडप रही है, और जिनकी सारी देह स्वराज्य तथा स्वधर्मके अपमानका प्रतिशोध लेनेकी तीव्र आकाक्षा तथा क्रोधसे, लाल हो उठी है, वह भव्य मूर्ति हमारे मनःचक्षुओंके सामने खडी हो जाती है और हमें प्रभावित कर देती है।

उमडते हुए परस्पर-विरोधी भावो, जरा ठहरो! उधर देखो; क्या हाः हाः कार मचा है! आखिर अंग्रेजों से नानाको उद्धत उत्तर मिला कि बाजीराव (२ य) की पेन्शनपर उसका कोई हक नहीं, वरंच उसे बिठूरके उत्तराधिकारित्व के सारे अधिकारों को भी छोडना पडेगा और ऊपरसे कंपनीसरकार शेखी बघारती थी कि उसने बिलकुल न्यायपूर्वक निर्णय किया है। न्याय? अबसे न्याय अन्यायकी बातें अंग्रेज न करें, उसका निश्चित उत्तर देनेकी उन्हे आवश्यकता नही हैं। बहुत गहरी सिद्धता पूर्णताको पहुँच चुकी है और न्याय अन्याय का प्रश्न-कानपुरके रणमैदानपर हल होगा, यह निश्चित है। उसी स्थानमें मराठोंके हृदयोंपर चोट करना न्याय या अन्याय है इसकी पूरी चर्चा होगी। सिरकटे कबध, घावोंसे छिदे शरीर और लहूकी नहरें ही प्रश्नका उत्तर देगे! और हॉ, कानपुरके कुऍके किनारेपर बैठे गीध यह सब बहस सुनेंगे और न्याय अन्याय की समस्याके विषयमें पचायतका निर्णय सुनाऍगे।

इस प्रकार के असाधारण समारोह की बडी भारी सिद्धता नानासाहब के राजमहल में हो रही थी, तब उनकी बहन छबेली थोडेही हाथपर हाथ धरे बैठी रही! उसके सामने भी उसी न्याय अन्याय की समस्याने अपना जबडा खोला था! स. १८५३ में उस के पति की मृत्यु पर जब उसने दामोदरको गोद लिया, तो दत्तक लेनेके अधिकार को ठुकराकर अंग्रेजोंने झाँसी को जब्त किया। किन्तु झाँसी ऐसी मामूली रिसायत न थी जो मात्र कहने भरसे या एक पत्र से हडप ली जाय! वहाँ नागपुर की बंका नहीं, नानासाहब की प्यारी बहन छबेली रानी लक्ष्मीबाई राजदण्ड सँवारे थी; उसने ऐसी आज्ञा को कूडेमें फेंक दिया। अंग्रेजों की यह कठोर और नीच धूर्तता की कार्रवाई को देख उस के आत्माभिमान तथा प्रतिष्ठा पर चपत पडी; इस अपमान से उस के क्रोध की आग धधक उठी और उसने साफ कह दिया "क्या मैं झाँसी छोडूँ? मै नहीं छोडूँगी। जिस मे हिम्मत हो वह एक बार जरा आजमा तो देखे! मेरा झाँसी नहीं दूँगी!!*

* डलहौसीज ॲडमिनिस्ट्रेशन वाल्यूम २

अध्याय ४ था

अवध

भारत के शासकों में से राज्य प्रबंध के बारे में वास्तविकता से अधिक पातकों के लिए हम जिन्हें दोषी मानते है उनमें डलहौसी को शामिल करते हमें जरा भी संकोच नहीं होता। डलहौसी जैसे शासक सर्वश्रेष्ठ अत्याचारी सत्ता के मुख होते हैं। इग्लड के स्वामियो की आज्ञा का पालन करना ही इन भारवाहकों का काम होता है। इससे भारत में घटे अत्याचारी कामों का पूरा दोष उनके सिर मढना पूर्णतया भ्रमपूर्ण और अन्याय्य है। उसकी नियुक्ति जहॉ हुई थी वहॉ की परिस्थिति के अगतिक दास के नाते डलहौसी अपना काम करता था। इससे उसके अच्छे बुरे कर्मो का बहुत बडा हिस्सा, जिन्हों ने ऐसी स्थिति पैदा की उनके सिर जा पडता है। जबतक कारोबारविषयक नीति का निर्धारण इग्लैंड के बडों से किया जाता था और उसको सिर ऑखो पर रख कर जिन्हें चलना पडता था उनमें डलहौसी के समान ईमानदार सेवक शायद ही कोई होगा। डलहौसी के इग्लैड-निवासी स्वामियोंने और उनके हिंदुस्थानमें रहनेवाले सहयोगियों ने पैदा की परिस्थितिमें उत्पन्न, दोनोंके कुकर्मो के लिए डलहौसीही को मात्र दोषी मानना ठीक न होगा। सौ वर्षो पहले उनके पुरखाओं ने कडे परिश्रम से बोये बीज की राजनैतिक डकैती की फसल का मौसम अवश्य डलहौसी ने साधा। किन्तु इस प्रकार की अन्याय्य सत्ताके उत्तराधिकार की परंपरा उसका आधार न होती तो डलहौसी ऐसे कितने राज्योंपर दखल करता! उसके पुरखाओ के कई

पीढियों ने धीरे धीरे, भिन्न भिन्न रियासतोंकी नींव कुतर कर पोली कर रखी थी, जिसका डलहौसी को पाठ पढाया गया था; और इसीसे कलम के जोरे से ही उसने उनमें से कई राज्य अंग्रेजी सत्ता में शामिल कर लिये।

स. १७६४ में पहले पहल अवधके नवाब का ईस्ट इंडिया कंपनीसे पाला पडा; तबसे कंपनी सरकारके हितू सेवक अवधका यह उपजाऊ प्रांत हडप जानेका जतन बराबर करते रहे। अवधका नवाब अपने ही पैसोंसे अपनी 'रक्षा' के लिये अंग्रेजी सेनाको रख ले–इस तरह उसे दबाकर अंग्रेजोंने उनकी सेनाके वेतनखर्चके मदमें सालाना सोलह लाख रुपये नवाबसे अैंठे। इस प्रकारके 'संरक्षण तथा ऐच्छिक सख्तीसे' नवाबका भंडार खाली हो गया। फिरभी अंग्रेजोंने उसे सूचित किया (वास्तवमें वह छुपी आज्ञा ही थी) कि यदि वह अपना राज तथा वैभव बनाय रखना चाहता हो, तो वह अपने हिंदी सेनाविभाग को तोड दे और उसके स्थानपर अंग्रेजी सेनाको रख ले। अंग्रेज अच्छी तरह जानते थे; कि जो खजाना इस 'संरक्षक' सेनाके वेतन ही को पूरा नहीं कर पाता, उसे और लादे हुए सेनाविभागोंके वेतनको पूरा कर देना सर्वथा असम्भव है और सचमुच इसे जाननेही से उन्होंने अपनी मॉंग नवाबके सिर मढी। और निदान, (उसकी इच्छाके विरुद्ध) कंपनीने उसे बताया कि, भले ही राजकोष खाली हो, रियासतका प्रदेश तो है न ! फिर क्या था ! नवाब का मंगल करनेही के हेतुसे प्रेरित होकर, कंपनीने वार्षिक दो करोडकी आय का वह प्रांत सदाके लिए हडप लिया और गोरे सैनिकोंकी पलटनें नवाब की नौकरीमें जबरदस्ती रख दीं। वह प्रांत था रुहेलखंड और दोआब !

अवध के इस प्रदेशपर डाका मार अंग्रेजोंने नवाब के साथ एक संधि की जिससे तय हुआ कि क्यों कि नवाबने सभी प्रदेश से स्वामित्व के सब अधिकार छोड दिये हैं, बचा हुआ सब प्रदेश उस के वंश में पीढी दर पीढी नवाब के अधिकार में चलता रहेगा। इस संधिपत्र में एक शर्त यह थी कि नवाब कभी अपनी प्रजापर अत्याचार न करे। स. १८०१ में यह संधि हुई और उस के बाद जब चाहा तब करोडों रुपये कंपनीने उस से ऐंठे। अवध के सभी राजाओं का भविष्य अब कंपनी के सेनाधिकारियों के हाथ था।

इसतरह कपनी को दिये हुए जबरदस्ती के कर्ज तथा दान के कारण राज-कोष खाली हो गया और नवाब के लिए स्वतन्त्ररूपसे अपने प्रदेश पर राज चलाना, किसी तरह के सुधार करना असम्भव सा हो गया। किन्तु 'ससार का भला करने की ठेकेदार कपनी सरकार नवाब साहब को लगातार सताती रही कि राज्यप्रबध में अपनी रियाया को सुखी और सतुष्ट करने के लिए अवश्य सुधार करें। किन्तु नवाब क्या कर सकता था ? राज की आमदनी बढाने के प्रयत्नों में कंपनी हर बार कोई न कोई बहाना कर टाग अडाती। राज के जिन पुराने निर्बंधों (कानूनों) के कारण जनता सुखी थी उन सभी निर्बंधों को रद कर कपनी ने नये कानून बनाये। इन बदले हुए निर्बंधों के कारण जनता की दुर्दशा हुई; जिससे कपनीने भी अपनी भूल कोई दस साल के बाद मान ली। मतलब, कपनीने नवाब के अंतर्गत राज्यप्रबधमें अनधिकार हस्तक्षेप किया; जहाँ दूसरी ओर से यह जताना शुरु किया कि नवाब की प्रजा किसी प्रकार की शिकायत न करे। एक तरफसे कपनीकी बेहूदी माँगों को पूरा करते करते नवाबका कोष खाली हो गया और फिर नयी नयी माँगोंको पूरा करने (और वे तो पूरी होनी ही चाहिये) नवाब कहीं रियायापर बोझ डाले तो कपनी नवाबको उसके कुप्रबंधके लिए कोसती, क्यों कि जनता सचमुचही नये करोंसे असतुष्ट थी; इस तरह नवाबके शासनको अग्रेजोंने अपाहिज–सा बना डाला! किन्तु कहीं दूसरी ओर अवसर देखकर अन्यायका विरोध करते हुए राजनैतिक सुधार प्राप्त करनेको जनता सगठित हो उठती, तो वहाँ जनताके सगठनको कुचलनेके लिए 'आश्रित' अंग्रेजी सेनाके हाथमें रही संगीनें तथा तलवारें हमेशा सिद्ध थी और फिर भी कंपनी आखीरतक यह आग्रह करती रही कि राज्यका कोई जीव शिकायत न करे। वास्तविकता यह थी कि यदि राज्यप्रबंध में सच्चा सुधार तथा असरकारी सुधार होना आवश्यक था और प्रजा को सुखी करना था, तो सबसे पहले ब्रिटिश रेसिडेंट को वापस बुलाकर नवाब को अपने अंतर्गत कारोबार में पूरी स्वतन्त्रता देनी चाहिये थी। किन्तु सब कुछ इसके विपरीत हो रहा था, जिस से प्रजा के असंतोष का दोष पूरी तरह कपनी के सिर आ पडता है।*

* चार्लस बॉल कृत इडियन म्यूटिनी खण्ड १ पृ. १५२.

लार्ड हेस्टिंग्सने स्वय यह निर्दोष प्रमाण दे रखा है। तिसपर भी कपनी ने नवाब को यह डॉट दी थी कि यदि वह अपनी प्रजा को सुखी रखने का प्रबध न करे तो कपनी यह मानेगी कि स. १८०१ की सधि रद हो चुकी है।

और सचमुच, स. १८०१ की सधि को ठुकराया गया और बेचारे नवाब ने स. १८३७ मे फिर से नई सधि की। हॉ, इस सधि ने यद्यपि नवाब की सत्ता को बहुत मात्रा मे कमजोर बनाया था, फिर भी स. १८०१ की छलकपट की सधिसे अपना गला छुडाने के लिए नवाब ने नई सधि पर हस्ताक्षर किये थे। स. १८४७ मे वाजिद अलीशाह नवाब बना। उसने पहिले ही ठान ली थी कि स्वराज्य के प्राणों को कुतरनेवाले इस गोरे विषैले कीडे को पूरी तरह नष्ट करेंगे और इसी से राज्य के प्राणो की आधारभूत सेनामे सुधार करना शुरू किया। इस नौजवान राजाने सैनिकोंके अनुशासन के बारे मे नये नियम बनाये, और कभी कभी वह स्वय सैनिक सचलन (परेड) का निरीक्षण किया करता था। सभी सेना-विभागो को प्रतिदिन सवेरे नवाब के सामने सचलन करना पडता था, जहॉ सिपहसालार का गणवेश (युनिफार्म) धारण कर वह स्वय उपस्थित रहता। उसने कडे अनुशासन की घोषणा की थी कि जो सैनिकदल (रेजिमेंट) सचलन भूमिपर (परेड ग्राउंडपर) आनेमे देरी कर दे, उसे २००० रुपये दण्ड देना पडेगा और स्वय नवाब भी ढिलाई करे तो वह भी दण्ड देगा।*

नवाब अपनी शक्ति बढा रहा है यह देखकर कपनी का माथा ठनका। ब्रिटिश रेसिडेंटने थोडेही समयमें सभी सैनिक कार्यक्रमोंको बंद करवाया, और साथ नवाबको चेतावनी दी कि नवाब यदि उसकी सेना बढाना चाहता हो तो कपनी भी 'आश्रित' सेना बढा देगी और उसका बढा हुआ खर्च पुरा करनेको प्रतिवर्ष और रकम देनी पडेगी. यह शर्त नवाब को माननी पडेगी! यह सुनतेही उस आत्माभिमानी नवाबके तनबदनमे आग लग गयी; किन्तु समयको पहचानकर उसे सेना-सुधारकी साहसी योजना को

* मेटकाफकृत 'नेटिव्ह नॅरेटिव्हस् ऑफ दि म्यूटिनी; पृ. ३२–३३.

स्थगित करना पडा। लाचार, उसे चुप रहना पडा। फिर भी 'उदार' कंपनी सरकार रट लगाये हुई थी कि नवाबको उसकी रियाया को सुखी करनेके लिए राज्यप्रबंधमें सुधार करने चाहिये!

किन्तु अब नवाब को अपने राज्यप्रबंध को सुधार कर प्रजा को सुखी करने की योजना सोचने की आवश्यकता नहीं है। क्यों कि, भारत के सभी स्वतंत्र संस्थानों का राज्यप्रबंध सर्वोत्तम कर देने का दायित्व अपने सिर लेकर और जल्द से जल्द जनमंगल साधने की साधना का व्रत लेकर ईस्ट इंडिया कंपनी का प्रतिनिधि डलहौसी हिंदुस्थान आ पहुँचा है। राजनीतिज्ञ की पैनी बुद्धि से उसने परख लिया कि असलमें १८३७ की संधि एक बडी भारी भूल हो गयी है। क्यों कि पुरानी संधि रद्द करने से, अवध के स्वतंत्र राज्यपर दखल करने का एक अच्छे से अच्छा बहाना हाथ से निकल गया। स. १८०१ की संधि की यह एक शर्त, कि 'नवाब को ऐसा प्रबंध करना चाहिये जिससे प्रजा सुखी हो,' जब चाहें तब अयोध्या को हडप जाने के लिए अंग्रेजों के पास अकाट्य प्रमाण था। अब यह १८३७ की भूल कैसे सुधारी जाय? या तो, संधि से साफ इनकार ही क्यों न किया जाय? बस, झगडा खतम! और सचमुच, किसी तरह कोई परदापोशी न करते हुए नवाब को स्पष्ट कह दिया गया कि '१८३७ की जैसी कोई संधि अबतक बनी ही नहीं'! अंग्रेजों को इस संधिका पूरा स्मरण था—१८३७ के बाद थोडेही वर्षोंमें उन्हे इस का भान हुआ। स. १८४७ में लॉर्ड हार्डिंग्टन ने इस संधि के होने की बात स्पष्ट घोषित की थी। आगे चल कर १८५१ में तो कर्नल स्लीमनने संधि हो जाने की बात दावे से कही थी। और १८५३ में केवल इस का जिक्र ही नहीं, प्रत्यक्ष वह संधिपत्र ही उस वर्ष के कंपनी के खतपत्रोंमें अन्य संधिपत्रों के साथ नत्थी कर रखा गया था।*

और तिसपर भी अंग्रेजोंने उस संधि की हस्ती से इनकार कर दिया और वाजिद अलीशाह को सूचित किया गया कि यदि प्रजा के हित में

* डलहौसीज ॲडमिनिस्ट्रेशन खण्ड २ पृ. ३६६.

नवाब का कारोबार न हो, तो राज्य का प्रबध अपने हाथों में लेने को कपनी बाध्य हो जायगी !

सोचने की बात है, कि ऊपरके सभी प्रश्न डलहौसीके भारतमें पग धरने के पहले, कभी के निर्णीत हो चुके थे। उसके पुरखाओंने पापी हेतुसे प्रेरित होकर यह प्रदेश हडप जानेका मार्ग उसके लिए निकाल दिया था और उनके ये सभी जतन लगभग सफल होने को थे। डलहौसीके लिए अब एक आखिरी चोट करनेका कार्य ही शेष छोडा गया था। पंजाब और बरमा की तरह सेनाके बलपर अवधपर दखल करने का विचार किसी काम का न था। नवाबपर यह अभियोग नहीं लगाया जा सकता था कि उसने मित्रताके योग्य सहायता कभी न दी थी। क्यों कि, वह हर बार अंग्रेजोंके काम आया था ! इसके पहले कई बार, क्या नवाबने स्वय हानि उठाकर अंग्रेजो को धन नहीं दिया था ? यहॉं तक कि कई लडाइयोंमें अंग्रेजोंकी दुबली हालत देखकर उन्हे रसद पहुँचा कर उनकी सहायता की थी।

और, नागपुर की तरह नवाब के औरस सतति न होने का बहाना बनाने को भी गुजाइश नहीं थी। नवाब की औरस सतानोंसे समूचा राजमहल भरा हुआ था ! झॉसी के समान वहॉं दत्तक पुत्र की भी अडचन न थी; क्यों कि वाजिदअली तो स्वर्गस्थ नवाब का सीधा राजमान्य तथा प्रजा-मान्य पुत्र था और वही गद्दीपर चढा था। मतलब, अवध के नवाब ने इन में से कोई अपराध नहीं किया था, जिसके कारण अनेकों राजा अपने राज्योंसे हाथ धो बैठे थे। हॉं, नवाब ने उपर्युक्त कोई भी अपराध भले ही न किया हो, किन्तु उस मूर्खने एक अक्षम्य अपराध तो किया था ! इससे बढकर क्या अपराध हो सकता है, कि हर तरह समृद्ध तथा सुजला सुफलां सुनहली फसलसे लहराती अयोध्या की भूमि उसके हाथ में थी ? वह देखते ही बनता है कि इग्लैंड के सरकारी विवरण की 'नीली पुस्तकों' की रूखी रचना भी इस सुदर और समृद्ध भूमिका वर्णन करनेमें काव्यकल्पना की रसीली भाषा से भर जाती है !

सरकारी विवरणमें लिखा है "इस सर्वोत्तम भूमिमें भूपृष्ठसे बीस फीटपर, और कहीं कहीं तो दस फीटपर भी, कहीं भी भरपूर पानी मिलता

है। ऊँचे ऊँचे बाँसके जंगलोंसे लहराता हुआ, आम्रवृक्षोंकी घनी छायासे शीतल और हरी हरी उची फसलोंसे शस्यशामल यह भूप्रदेश अत्यंत वैभवशाली और मनोहारी है। इमलीके वृक्षोंकी घनी छायासे नारंगियोंकी सुगधसे, अंजीरोंके मनोहारी रंगोंसे और पुष्परेणुओंसे सर्वत्र महकती हुई मधुर सुगंधोंसे इस प्रकृतिसुंदर भूमिके वैभवमें और ही चार चॉद लग जाते हैं।

और इसीसे, ऐसी हरीभरी भूमि का स्वामी बनने के अपराध के कारण नवाब को सिंहासन से नीचे खींच पटकने के लिए कोई भी धूर्त अंग्रेज नहीं हिचकिचायगा। डलहौसी यह बात अच्छी तरह जानता था और निदान १८५६ में अवध जब्त करने की आज्ञा घोषित की गयी किन्तु इस के लिए कारण क्या बताया गया? यही, कि नवाब अपने राज्य में आवश्यक सुधार करने को सिद्ध नहीं है!

यदि इंग्लैंड, प्रजा का असंतोष तथा कुशासन इन दो ही कारणों को, नवाब को गद्दीसे उतारने में काफी मानता हो, तो, फिर भारत के एक दिन के उसके शासन का भी समर्थन इंग्लैंड नहीं कर पायगा। चीन में अफीम खाने का व्यसन है; अफगानिस्तान में स्वेच्छाचारी राज खुले आम चल रहा है; यही नहीं, इंग्लैंड की खुली आँखों के सामने रूसमें अत्याचार और लूटखसोट पराकाष्ठापर पहुँच गये है; तो फिर चीनी सम्राट, अफ़गानी अमीर या रूसी जार को उनके सिंहासन से उखाड उन देशोंपर दखल करने की हिम्मत इंग्लैंडमें है? पडोसी उस के घरमें कुप्रबंध करे तो उस के हाथ पाँव बाँध कर उसीके मुँह में कपडा ठूँस कर, उस के घरपर दखल करने का हक तुम्हें कैसे प्राप्त हो सकता है? किसी भी दशामें स. १८०१ की संधि के अनुसार अयोध्या का राज छीनने का कंपनी को अधिकार नहीं था। और जिस कुशासन के बारे में उन्होंने आकाश सिरपर उठा रखा था उस का दायित्व कंपनी के पिठ्ठुओं के सिर ही तो था न? डलहौसी की जीवनी तथा शासन का इतिहास लिखनेवाले श्री. आर्नोल्डने बडे आग्रहसे लिखा है कि "अवध के नवाबने इससे भी बढकर कई अपराध किये थे। एक तो वह अपने स्त्री-पुरुष सेवकोंको शाल दुपट्टे पारितोषिकके रूपमें दिया करता था। एकबार १२ मईको आतशबाजीका बडा समारोह किया था; यहाँ तक कि उसने एक

दिन शाहबेगम तथा ताजबेगमको दावत दी। हाँ, इससे बढकर और क्या भयकर अपराध नवाब कर सकता था? नवाब सवेरे पौष्टिक औषधियाँ भी खाता था। नवाबकी यह सब बुरी करतूतें (!) अंग्रेजोंने शान्तिसे सह ली किन्तु गद्दीसे नही उतारा था। इसके लिए अंग्रेजोंको जितने भी धन्यवाद दिये जायँ, कम होंगे!! फिर भी अंग्रेजोकी सहनशीलताकी भी कोई सीमा तो है ही! क्यों कि एक दिन बीजाश्व (स्टॅलियन) जब घोडियो से संभोग करता था तब नवाब स्वय वहाँ उपस्थित रहा। बेचारे बीजाश्व को लज्जा आयी होगी; उस घोडेपर तरस खाकर, ऐसे समय उपस्थित होनेके अक्षम्य अपराध के कारण अंग्रेजोने नवाब को गद्दी से हटा दिया।"

ऐसे छिछोरे और मूर्खतापूर्ण अभियोग नवाबपर लगा कर फिर उसका शासन अयोग्य होने का डका ये दुष्ट-बुद्धि अंग्रेज इतिहासकार ससार भर में पीटें यह बडे अचरज की बात है! सचमुच ऐसी घटनाओं को देखने के लिए उन्हे स्वयं भारतमें न जाना चाहिये। यही क्यों? उन्हीं के देशमें तथा उन्ही के राजमहलो में और धनी सरदारोंके प्रासादों में उन्हे इससे भी बढकर अश्लील बातें देखने को मिलेंगी। और फिर अवध की घोडियो पर हुए अत्याचारो से बढकर होनेवाले भयकर बलात्कारों तथा व्यभिचारो को रोकने के लिए इन सरदारों तथा उनके शासक की जागीरो या राज्य को जब्त करने का काम ये लोग करेंगे तो हम मानेंगे कि इन्होने अपना समय अच्छे काम मे लगाया, अस्तु।

डलहौसीका निर्णय नवाबको सूचित करनेवाला आज्ञापत्र रेसिडेंटके पास पहुँचतेही वह सीधा राजमहलमे पहुँचा और नवाबसे कहा कि वह अपने हस्ताक्षरके साथ यह लिख दे, "मै अपना राज्य कपनीको सौप देने को सिद्ध हूँ।" नवाबने निर्णयपत्र पढा और उसपर हस्ताक्षर करनेसे साफ इनकार किया। नवाब से हस्ताक्षर कर लेने मे सहायता देने के लिए रेसिडेंटने वजीर तथा रानी को रिश्वत देने का भी जतन किया; तथा साथ में यह डॉट भी दी कि नवाब हस्ताक्षर करनेपर राजी न हो जाय तो उसके लिए मुकर्रर पेन्शन भी उसे नहीं दी जायगी। इस गाज गिरनेसे नवाब ढारें मारकर रोने लगा। किन्तु बेकार। तीन दिन बीते फिर भी

नवाब इनकार पर डटा रहा, तब ब्रिटिश सेना अनधिकार लखनौमें घुस पडी और नवाब के राजमहल के साथ समूचे अवध पर दखल कर लिया गया। रनवासों को लूटा गया; बेगमों को अपमानित कर नवाबको सिंहासनसे उतार फेंका गया और उस के राजमहल को ब्रिटिश सोजीरों के रहने की बारिक बना दिया गया। इस तरह तब तक के नवाबी कुशासन का अंत होकर अंग्रेजों के स्वर्गराज्य (?) का प्रारभ कर दिया गया।

अवध का शासक मुसलमान था, किन्तु उसके बडे बडे जमींदार हिन्दू ही थे। जागीरी तथा ताल्लुकदारी के पूर्ण अधिकार उन के वंश में पीढी दर पीढी अखण्ड चालू थे। सैंकडो गाँव एक एक जमींदार के स्वामित्व मे पले जाते थे। इन जागीरों की रक्षा के लिए उन के पास छोटी-सी सेना तथा गढ भी हुआ करते। इसीसे कपनी का क्रोध इन जमींदारोंपर उतरा इसमे क्या आश्चर्य है? इन बलशाली जमींदारों को मटियामेट कर सभीको दरिद्रता की एक ही सतह पर लाने के लिए मालगुजारी के प्रबध की कंपनी की चक्की पिसने लगी। ताल्लुकदारों से उनके मातहत होनेवाले सैंकडों गाँव छिने गये, उन की जमीनें जब्त की गयी; गढ तहसनहस कर दिये गये; अवध की समूची भूमिमे दुःखसे कुहराम मच गया। कल का अमीर आज अकिंचन बन गया। पुराने तथा ऊँचे घराने के वशजों को किसी अनाडी गोरे युवक की आज्ञापर गाँव गाँव में भगाया गया; सब ओर अपमान और अप्रतिष्ठा ऊधम मचा रहे थे; और हर एक परिवार को बेहाल बना दिया गया।*

* इन जमींदारों के विषय में 'के' लिखता है:—(स. ५)

उन की हालत बहुत बुरी थी। उन्हें भिन्न भिन्न विपत्तियों का सामना करना पडता था और वे शायद ही उन सब के झोंको से बच सकते थे। जब एकाध बडे ताल्लुकदार को अधिकार से पूरी तरह वंचित करने का बहाना न मिलता तब घोषित किया जाता कि वह बदमाश है; या पागल है। इस तरह उसे बदनाम कर उसका सत्यानाश करने का तत्काल उपाय किया जाता। यह बरताव बडा कठोर अन्याय

अंग्रेजोंका दावा है कि यह सब गरीब किसान और काश्तकारों के हित के लिए किया गया था! अत्याचारी जमींदार अपने किसानों तथा प्रजा का शोषण करते थे जिससे प्रजा के हिमायती (?) अंग्रेज उनको जमींदारों के क्रूर चगुलसे छुडाने की नयी रीति शुरू कर रहे थे। हाँ, इस ढकोसले से कितने असामी और किसान धोखे में आये वह अब अवध के रणमैदानपर जल्द ही दीख पडेगा। अपने स्वामी की ईमानदारी से सेवा करनेवाले ये विश्वासी देहाती, घरबार से वंचित, पूर्णतया लुटे गये और दर दर भटकनेवाले अपने जमींदारों तथा ताल्लुकदारों को मिलने जाते और अपने स्वामी के समक्ष उनकी निष्ठा और प्रेम प्रकट करते। मतलब, अवध के नवाब से ठेठ साधारण किसान तक हर एक भुक्तभोगी था। एक भी स्थान ऐसा न बचा था कि जहाँ लूटखसोट, आग, बलात्कार की धूम न मची हो; एक भी घर न था जो उध्वस्त, स्मशानवत् न बना हो। नवाबी कुशासन की जगह यह अतीव मंगलकारी अच्छा शासन जो आया था!!

स्वराज्य और पराराज्यमें कितना बडा अंतर होता है इस का स्पष्ट भान, मानो, ऐसी दुःखपूर्ण रीतिसे, अवध की जनता को कराया गया था। पुराना पूरा इतिहास उनके नेत्रोंके सम्मुख नाच रहा था। उन्हे अब पूरा विश्वास हो गया था कि ऐसी पराधीनतासे मौत भी अच्छी है। स्वदेशका सर्वनाश होकर स्वराज्य भी मिट्टीमें मिल गया, अब कहाँ तक इस देशमें पडे रहेंगे? इस अत्यंत लज्जापूर्ण तथा अपमानित जीवनसे उन्हे घृणा हो आती थी! 'पराधीन सपनेहु सुख नाही' तुलसीदासके इन शब्दोंका पूरा अर्थ उनके हृदयपर अंकित हो गया था, परतन्त्रता वस्तुतः विषैली मक्खियोंका विषपूर्ण छत्ता है। उन्हें भान हुआ, कि जब तक यह छत्ता भारत के छतमें लटकता रहेगा तब तक डलहौसीके समान उसकी मक्खियाँ अपना विषैला डंख, हमारी मृत्युतक, मारतीही रहेंगी; इसीसे उन्होंने सोचा कि डलहौसी जैसी एकाध मक्खीको मारकर काम नहीं बनेगा। इस

और महान गंभीर भूल थी। क्यों कि इसतरह उनका सफाया करने को न तो वे छातीपर के बोझ थे, न कोई डाकू।

लिए उन्होंने निश्चय कर लिया कि, इस समूचे विषैले मधुछत्तेहीको उठाकर फेंकना है। इस तरह, स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए भीषण रण करनेका निश्चय कर अपने कमानका रोदा चढ़ाया।

इसी समय, अयोध्याके समान अन्य प्रांतोमें भी जमींदारों तथा जागीरदारोंका पूरा सफाया करनेके लिए 'इनाम कमिशनकी' चक्की चल रही थी। जो जमीनें या जागीरें तलवारकी सनद्पर प्राप्त की गयी थीं उनको, लिखित सनदें न होनेके बहाने जब्त कर ली गयीं। इस इनाम कमिशन के पाटोंके पीसनेकी शक्तिका ठीक भान करानेको इतना कहना काफी है कि दस वर्षमें ३५००० जागीरों और इनामों की जॉच की गयी और उनसे २१००० को जब्त करवाया। इस तरह भारतमें, किसी तरह की सपत्ति का भरौसा न रहा। राजा महाराजाके सिंहासन, सरदारोंके 'इनाम', जमीनदारोंकी आय, तालुकदारोंके तालुक, नागरिकों के घरबार सब के सब इस भीषण दावमें भस्मसात् हो गये। जीना भी एक पहेली हो चुकी; हर एक को सदेह रहता आज हमारी आजीविका है, कल यह बचेगी भी? स्वराज्य और परराज्य, स्वातंत्र्य और पारतंत्र्य इनके विरोध का नगा रूप जनताके सामने भीषण रूपमें प्रकट हुआ। इस तरह सब आबालवृद्धोंको अपनी वर्तमान दशाका दारुण भान हो गया। उनका मन कहता, ऐसी दशामें एक जंतु का सा जीवन जीनेकी अपेक्षा मानवके समान मानसे मौत के मार्गमें चलना ही मंगलकारी है।

इस तरह, अबतक के हिंदी नरेशो के कुशासन से उन के राज्यों को मुक्त कर अंग्रेजोंने, अपने स्वर्गराज्य के सुशासन (?) का अनुभव भारतियों को कराना शुरू किया!।
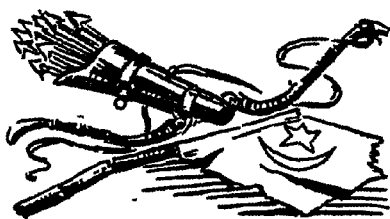
अध्याय ५ वाँ

आग में घी

जिस पराधीनता में, गत अध्याय मे वर्णित अन्याय्य और अत्याचारी करतूतों और अबतक न बताये गये सैंकडों अपराध (जो अकथनीय और अनगिनत हैं) खुले आम बरते जाते है, उस परवशता को खुली आँखों सहने और जिन की शैतानियत से यह सब हुआ उन के आगे गर्दन झुकाने में, क्या, स्वधर्म का सच्चा नाश नहीं है? किस धर्मने आज तक पराधीनता और दासता की घोर निंदा नहीं की! सब धर्म मानवी जीवन का यही आदर्श बताते हैं कि, जगन्नियता परमात्मा के, तथा चराचर को स्वयंमुक्त होने के लिए ही अपने रूपमें पैदा करने-वाले करतार के, चित्स्वरूप में मुक्ति प्राप्त करें! उस निर्मल निरंजन से तद्रूप होना हो तो मानव मे किसी प्रकार की कमी न रहे। किन्तु जिस राष्ट्र को गुलामी का शाप लग चुका हो वहाँ अधूरापन के बिना हो ही क्या सकता है? न्याय की पराकाष्ठा ही प्रभु है और न्याय का निःशेष अभाव ही पराधीनता है। स्वाधीनता का परम विकास ही परमात्मा है और स्वातंत्र्य का संपूर्ण अस्त ही पराधीनता है। इससे जहाँ प्रभुकी हस्ती है वहाँ परतन्त्रता का स्थान नहीं है और जहाँ पराधीनता धूम मचाती हो वहाँ देवता या दैवी गुण कैसे रह सकते हैं? और जहाँ देवता को स्थान न हो वहाँ धर्म कहाँसे टिक सकेगा? सारांश, अन्याय के मसाले से बनी यह परवशता जहाँ कुहराम मचाती हो वहाँ सच्चे धर्म का होना असम्भव सा होता है। गुलामी का सीधा रास्ता नर्कमे पहुँचाता है, जहाँ सच्चा धर्म

स्वर्गका साधन है। स्वर्ग के रास्ते जाना हो तो पहले दासता की शृंखला को तोड देना चाहिये। श्री समर्थ रामदास ने शिवाजी, तथा श्री प्राणनाथ महाराज ने छत्रसाल को स्पष्ट शब्दोंमे यही उपदेश दिया था: यह व्यावहारिक वेदान्त है। धर्म उसी की रक्षा करता है, जो धर्मकी रक्षा करे और धर्म की रक्षा चाहनेवाले को श्री रामदासस्वामीने ढाई सौ वर्ष पहले यह महामत्र दिया था 'मरना सीखो शत्रु को मारते हुए और मारते मारते अपना (स्व) राज ले लो।' १८५७ मे पराधीनता से कुचली हुई प्रजा के हृदय मे यही महामत्र गूजने लगा था।

जिन्होंने यह अप्राकृतिक और अन्यायसे उत्पन्न पराधीनता को भारतके चाले मढा उन्हींने, न केवल भारतमे, वरंच सारे ससारमें धर्मपर हमला करनेका प्रारंभ सबसे पहले किया। कौनसा धर्म है जिसने अन्याय की निंदा न की हो? किन्तु इस मूक निदाकी पर्वाह न करते हुए भारतमें पग धरनेके क्षणसे १८५७ के भीषण काण्डतक हिंदू और मुसमानोंके धर्मको रौंध डालनेका ढंगदार और लगातार जतन फिरगी शत्रुओंसे किया गया है। आफ्रिका और अमरीकाके मूल वन्य जातियोको ईसाई बना लेने की अपूर्व विजयसे इग्लैंडकी गर्दन कुछ तन गयी थी; और उससे उन्हें बलवती आशा थी कि भारतमे भी ईसामसीहका क्रूस भारतभरमे ऊँचा उठेगा। अंग्रेजोंको तो पूरा विश्वास था कि भारतके निवासी एक बार पश्चिमी सभ्यताकी झलक पर ऑख उठाअेगे तो, बस, वे अपने धर्मपर लज्जित होंगे और उसे त्याग देंगे, वेद और कुरानसे अंजीलको अधिक पवित्र मानेंगे; मंदिर और मस्जिदें खाली होकर गिरजाघरमं समा जायेंगे। इस कथन का प्रमाण उन्नीसवी सदीके प्रथमार्धमें हर अंग्रेजके लेखन, भाषण या सामाजिक साहित्यमे स्पष्टतया मिल जाता है। स. १८५७में ईस्ट इडिया कंपनीके प्रमुख सचालक श्री. मॅगल्सने " हाउस ऑफ कॉमन्समें " कहा था :—

" भारतके एक छोरसे दूसरे छोर तक ईसाकी विजयपताका गर्वसे लहरानेके ही लिए भारतका विशाल साम्राज्य परमात्माने हमारे हाथ सौंपा है। इसीसे समूचे भारतको ईसाई बनाने के इस महान् कार्यमें किसी तरह ढीलापन न करते हुए हर एक अपनी शक्तिभर जतन करे!"

स. १८३६ मे बंगालमे पहले पहल एक अंग्रेजी पाठशाला खोली गयी। उसके उपलक्ष्यमे मेकॉलेने निश्चित आशा प्रकट की थी कि, "आगामी ३० वर्षोके अंदर अंदर एक भी मूर्तिपूजक न बचेगा।" (स. ६. मेकॉलेका अपनी मॉ को लिखा पत्र—अक्तू १८३६)

हिंदुमुसलमानोंके धर्ममतोंके बारेमें फिरंगियोंके मन इतने तीव्र द्वेष तथा ईर्ष्यासे विषाक्त हो गये थे कि बडे बडे पाश्चिमात्य लेखक शिष्टाचार की मामूली सीमाओंको भी तोडकर इन दो. धर्मोपर अवसर पातेही लज्जाहीन दोप मढते थे।

सारे भारत को ईसाई बना देनेमे ईस्ट इंडिया कंपनी इतना आग्रह क्यो रखती थी इस का कारण स्पष्ट है। उन्हे विश्वास था कि एक बार हिंदुस्थान के दोनो धर्म लोप हो जायें कि, फिर वहॉ की राष्ट्रीय भावना अपनी मौतसे मर जायगी, और जिस का स्वत्व मर चुका हो ऐसे राष्ट्रपर राज करना जितना सरल है, उतना उन जीवित मानवोंपर नहीं, जिनमें अपनत्व और आत्माभिमान जीवित है; अर्थात् यह सारा मामला धार्मिक नहीं, राजनैतिक था। और उनकी इसी कुटील राजनीतिमे अंग्रेजोंने उपर्युक्त कार्य के लिए तलवार का उपयोग क्यो नहीं किया, इसका कारण मिल जाता है। औरंगजेब के इतिहास से इंग्लैंड बहुत कुछ सीख चुका था, उस युगके साम्राज्य की राजनीति की कच्ची पक्की कडियों को वे ठीक तरह जॉच चुके थे। जित राष्ट्र का धर्मही नष्ट करनेसे उस राष्ट्र को सदा के लिए गुलामी मे रखना सरल होता है, यह रहस्य औरंगजेब के इतिहास से अंग्रेजोंने हृदयंगत किया था, और प्रकट रूपसे धर्मान्धता से कष्ट देने की मूर्ख नीतिपर चलना अंग्रेजोने जान बूझकर छोड दिया। और इसी से धीरे धीरे किन्तु लगातार, हिंदुस्थान को ईसाईस्थान बना छोडने का धंधा, प्रकट रूपसे न सही, अप्रकटरूप से अंग्रेजों ने जारी रखा।

उस समय रेवरेंड केनडी लिखता है:—"जबतक हमारा साम्राज्य भारत में होगा तब तक हमें कभी न भूलना चाहिये कि, किसी प्रकार की अडचनोंकी पर्वाह न करते हुए भारतभरमें ईसाईधर्मका फैलाव करनाही हमारा प्रमुख कार्य है। हिमाचलसे लंका तक सारा भारत जब तक ईसाई न बनेगा और हिंदू तथा मुस्लीम धर्म की निंदा करना शुरू न करेगा तब

मतलब नहीं ! हम यही बताना चाहते हैं कि हिंदु मुसलमानोंको यह पता न लगा कि उनके धार्मिक रीतिरिवाजोंपर होनेवाला यह आक्रमण किस हद तक चलेगा। क्यों कि, इस तरह नये निर्बंध बनानेका अधिकार चलाने की धुनमें अंग्रेजोंने जनताकी धार्मिक रीतिरिवाजो में हठात् हस्तक्षेप करना शुरू किया था। इन निर्बंधोंकी अच्छाई बुराईको तूल देनेका कोई कारण नहीं था। बात स्पष्ट है कि, धर्मशास्त्रके बताये हुए सामाजिक रीती-रिवाजों में किसी तरह हेरफेर करना हो तो हर धर्मके योग्य विद्वानोंको इकट्ठा कर उस धर्ममतके अनुयायियोंकी सम्मतिसे ही हो सकता है। पराये धर्मको सिर ऑखोंपर रख कर चलनेवाले विदेशी शासकोंको, धर्ममें दखल न देनेके स्पष्ट वचन देनेपर भी, हिंदु या मुस्लीम धर्ममें किसी तरह की योग्यता और ज्ञान न रखनेवाले विधर्मियोंके बहुमतके आधारपर तथा अपनी निरकुश सत्ताके बलपर, उन धर्मोंके अनुयायियोंके स्पष्ट और प्रकट विरोधके होते हुए भी, धार्मिक रिवाजोंमे हेरफेर जबरदस्तीसे करना, शोभा नहीं देता। फिर ब्रिटिशोंके जुलमी शासनमें और औरंगजेब की धर्मान्धतापूर्ण राजनीतिमें क्या भेद रहा? आज सती—बंदीका निर्बंध हुआ; क्या पता है, एक अन्याय लोगोंने चुपचाप सह लिया है इससे, कल मूर्तिपूजाको अपराध करार देनेवाला कानून न बन जाय? पहला अन्याय सहन करने पर दूसरा अन्याय अवश्य छातीपर चढ बैठेगा। नये निर्बंधों के आधार पर धर्ममें दखल देनेकी इस पद्धति को काम करने देना तो औरंगजेब की तलवार के आगे गर्दन झुकाना ही था। जब की अंग्रेज औरंगजेब बन गये तो भारतीयो को भी शिवाजी या गुरु गोविंद-सिंग को खडा करने के बिना कोई चारा न रहा। यही उस समय भारतीय जनता की मनोगति थी।

ईसाई मिशनरियो ने भी गली गली में प्रचार कर इस अशान्ति को बढावा दिया। वे साफसाफ बकते थे कि थोडेही दिनोंमें समूचा भारत ईसाई बननेवाला है। इधर हिंदु और इस्लाम धर्म की नींव खोद डालने के लिए नये नये निर्बंध सम्मत करने का काम जारी रखा था। आग-गाडी (रेलगाडी) की सुविधा देशभरमें हो गयी और उसमें बैठने का प्रबंध, छूत अछूत की रोक न होनेसे, हिंदु जातिनिष्ठा के भावों को चोट पहुँ-

जानेवाला था। मिशनरियो की बडी बडी पाठशालाओ को बडी बडी रकमें सहायतार्थ देनेकी घोषणा सरकार कर चुकी थी। जब कि, लॉर्ड कॅनिंग स्वयं अपने हाथों हजारों रुपयो का दान उन्हें देता था तब समूचे भारत को ईसाई बनाने का उसका हेतु स्पष्ट हो जाता है। और, हॉ, धर्म-भ्रष्ट ईसाइयो को पहले की (हिंदु या मुस्लीम रहते हुए) उनकी मौरूसी संपत्ति को गॅवाने का भय है? अच्छा, धर्मांतर के साथ वह संपत्ति भी उसके साथ जाने की सुविधा देनेवाला एक कानून बना दिया जाय; बस!

और मिशनरी अपना प्रचार भाषणोंद्वारा कर ही रहे थे कि संवाद मिला, धर्मांतरित व्यक्ति के अपने पूर्वधर्मकी मौरूसी संपत्तिके बारेमे सब तरहके हक कायम रखनेका कानून बन चुका है। और एक बात खुल गयी कि ईसाई धर्मप्रचारक तथा उनके आचार्य (बिशप) को दिये जानेवाले मोटे मोटे वेतन हिंदुस्थानही के खजानेसे दिये जाते थे। साधारण सरकारी कर्मचारी से लेकर बडे अफसरोतक, हर अंग्रेज मे ईसाईकरण का मोह इतना व्याप्त हो गया था कि प्रत्येक गोरा अधिकारी अपने मातहत 'काले' को ईसाई बन जाने का साग्रह अनुरोध किया करता था (सख्ती भी!)! भारत के पैसे से पुष्ट बने सरकारी कर्मचारी, भारत ही के पैसे के बलपर भारत की जडपर कुल्हाडी मार रहे थे और सरकार उनको तरजीह देती थी। और सरकार के नामपर थे केवल लॉर्ड कॅनिंग और उस के कौन्सिलर! इस दशामे लोगोंके मन मे यह भय घर कर गया था। ब्रिटिश राज मे आगे चल कर भारतीय धर्मोपर कठोर आघात होनेवाला है। इस भयंकर अशान्ति को नष्ट करने के लिए मिशनरियों ने भारत का प्रमुख स्थान बने सेना के सैनिकों को ही ईसाई बनाने का जतन शुरू किया। विचार यह था कि जनता बिगड उठे तो उस अशान्ति की लपट सैनिकों तक पहुँचने का डर न रहेगा। लोग इस कुटिल दॉव को भॉप गये थे, इस का प्रमाण उस समय के विद्रोहियो के घोषणापत्रोंमे मिल जाता है। घोषणापत्रों मे उल्लेखित दुःख तथा शिकायतें अक्षर अक्षर सत्य होनेका प्रमाण उस समय के अंग्रेज इतिहासकारोंके उन वाक्यों में मिलता है, जो अनिच्छा से किन्तु लाचार होकर उन्हें लिखने पडे। प्रत्यक्ष लडाई चालू न हो तब सिपाहियों को फुरसत थी। और

तब अंग्रेज कर्नल, कप्तान तथा अन्य सेनाधिकारी अपना समय किस तरह बिताते होंगे? कल्पना कर सकते हो, पाठक? और कुछ न करते हुए ईसाई धर्मपर भाषण झाडते थे! और सिपाहियों को सुनना अनिवार्य था। इस तरह उनकी मतिमें भ्रम पैदा करना अफसरो का फुरसत का धंदा था। और ये भाषण सरल और शिष्ट भाषा मे थे? नहीं, कभी नहीं। जिसके केवल पवित्र नामोच्चारण से हर हिंदू का अतःकरण भक्ति-भाव से भर जाता है उन प्रभु रामचंद्रजी को, तथा जिस का नाम मुसलमानोंके हृदयमे आदरपूर्ण डर पैदा करता है उन हजरत मुहम्मदसाहब को ये ईसाई धर्म-प्रचारक चुनी हुई गालियोंसे संबोधित करते थे। इसी बीच वेद तथा कुरानकी पवित्रता को भ्रष्ट किया जा रहा था; मूर्तियोंको भी भ्रष्ट कराया जा रहा था। यदि कोई सैनिक इन दुष्ट फिरंगियोंको तानेको ताना और गालीको गाली सूदसमेत लौटा देता तो मिशनरी कर्नेल उस गरीबकी 'घी-रोटी' बंद कर देते थे। अंग्रेजोंकी सैनिकी बारिक मे रहना तो स्वधर्मपर अंगार रख कर ही जीवन बिताना था। कोई सिपाही ईसाई बन जाता तो उसे बहुत बढावा मिलता और ऊँचे पदपर उसकी 'तरक्की' होती। हॉ, जो सचमुचही अच्छी योग्यता रखते थे उनकी दाद न दी जाती और वह भी जानबूझ कर। एक आवारे सैनिकको स्वधर्मत्याग करने पर हवालदार बनाया गया और दूसरे स्वधर्मद्रोही हवालदारको सूबेदार मेजर का पद दिया गया।*

सेनाके सिपाही गरीब, गँवार और अल्पदर्शी थे। ऐसे सैनिकोको धर्मभ्रष्ट किया जाय तो फिर साधारण जनताको धर्मभ्रष्ट करना तो बाएँ हाथका खेल होगा, इस गहरे विचारसे अंग्रेजोने निश्चय किया कि पहला हमला इन सैनिकों ही पर किया जाय और इस निर्णयके अनुसार सब ओरसे प्रकट-अप्रकटरूपसे हिंदु-मुसलमानोंके धर्मोपर आक्रमण शुरू हुआ। यहाँ तक कि, सेनामे कमांडर और कर्नैल के पदपर होनेवाले गोरोंने स्पष्टरूपसे समाचारपत्रोंद्वारा प्रकट करनेकी हिम्मत की कि, सिपाहियोको धर्मभ्रष्ट करनेके एकमात्र हेतुही से वे सेनामे भरती हुए थे। बंगाल पैदल-

* एक बंगाली हिंदू लिखित 'कॉजेस् ऑफ दि म्युटिनी'

सेनाका कमांडर स्वयं सरकारी विवरणमें लिखता है:-" मैं लगातार २८ वर्षों तक सिपाहियोंको ईसाई बनानेका काम कर रहा हूँ। मैं मानता हूँ कि इन मूर्तिपूजक जंगली सैनिकोंकी आत्मा सैतानसे सुरक्षित रहे ऐसा प्रबंध करना मेरा सेनाविषयक कर्तव्य ही (मिलिटरी ड्यूटी) है। " एक हाथमें बाइबल और दूसरे हाथ में सैनिकी आज्ञापत्रोंके पुलिंदे लेकर राज करनेका काम दिनरात चलाया जाता हो, उन के मातहत रहनेमें अपने धर्मकी जड से खुदाई होगी, उसको बचाना असम्भव कर दिया जायगा, इस प्रकारका डर सैनिकोंके मनमें घर कर जाय; तो यह डर निराधार था यह कहने का साहस कौन कर सकता है ? देशभर में लोगोंके मनमें यह बात बैठ गयी, कि यहाँके सभी धर्मोंको दबाकर उनके स्थानपर ईसाके धर्मका साम्राज्य स्थापित करनाही अँग्रेज सरकार की नीति है।

हिंदु मुसलमानो के हृदयोंमें फिरंगियोंके प्रति तीव्र द्वेषकी आग कैसे धधकती थी इसका वर्णन करते हुए एक अंग्रेज लिखता है, ' मेरे परिचित एक मौलवी, जो ऊपरसे बडा दोस्त बनता था, एकबार मृत्युशय्यापर पडा था। मैं उसके पास बैठा था ! मैंने पूछा, " मौलवीसाहब आप बताइए आपकी अंतिम इच्छा क्या है " ? प्रश्न सुनते ही वह बेचैन हो उठा, उसके मुँहपर विषाद छा गया। मैंने जब इतना दुखी होनेका कारण पूछा, तो उसने बताया, " साहब, मैं साफ साफ बताता हूँ कि मेरी सारी आयुष्यमें मैंने दो फिरंगियोंको भी कत्ल नहीं किया इसी टीससे मैं दुखी हूँ ! " और एक अवसरपर एक पंडित और प्रतिष्ठित हिंदुने मेरे मुँहपर साफ सुनायी-" हम तो उस दिनकी प्रतीक्षामें बेचैन है कि, तुम यहाँसे कब टलोगे और हमारे पुरखाओंको शोभा देनेवाले स्वराज्यका कारोबार फिरसे कब चालू होगा ! "*

इस प्रकार अशान्ति की लपटें देशभर में उछल रही थीं तभी डलहौसीने फिर एकबार हिंदूधर्मपर एक नया आक्रमण करना शुरू किया। अंग्रेज सरकार की सभी करतूतो का समर्थन करने का व्रत लिये हुए अंग्रेज इतिहासकार भी इस ज्यादती का समर्थन नहीं कर पाते। हिंदुधर्म-

---

* रेवरेंड केनेडी एम; ए.

शास्त्रों में बतायी, और सदियों से देशभर मे लोगोंने प्रेमसे अपनायी दत्तक गोद लेनेकी परम पवित्र धार्मिक प्रथा ही को ठुकराने के लिए यह ईसाई वीर डलहौसी आगे बढा, तब समूचा भारत थर्रा उठा। अब तक (देश-भरमे) बारूद का अंबार ठूँस कर भरा पडा था, केवल उसमें चिनगारी की आवश्यकता थी और डलहौसीने अपने इस करतूत से उस कमी की पूर्ति की।

मानो, इस धधकती क्रोधाग्नि मे घी उँडेलनेके लिए नये कारतूसों का उपयोग करने की आज्ञा सिपाहियोपर लादी गयी। इसके साथ साथ बदूकों मे उपयोग करने के लिए नये कारतूस बनाने के कारखाने स्थान स्थानपर खोले गये। कारतूस खराब न हो इस लिए उसे चिकना करने के लिए एक खास किस्म की चरबी चुपडी जाती थी; तिसपर यह आज्ञा जारी हुई की इसकी चरबीसे चिकनी की हुई टोपी हाथ से न काटते हुए, जैसा कि अबतक हो रहा था, दॉत से काटी जाय। इसके अनुसार फिर स्थान स्थानपर सैनिकोंको बदूक चलाने तथा कारतूसों की टोपी दॉत से तोडने की शिक्षा देनेकी पाठशालाएँ खोली गयी! इनके बारे मे बनाये गये सरकारी विवरणोंमे लिखा है कि 'नयी दूर-वेधी (लॉग रेंज) राइफलें सैनिकों को बहुत भाती है।'

एकबार कलकत्तेके पास डमडम छावनीका एक ब्राह्मण सैनिक हाथमे पानी का लोटा लिए छावनीको लौट रहा था। वहॉ एक भंगी आया, जिसने ब्राह्मणके लोटेसे पानी पीना चाहा। ब्राह्मणने कहा 'मेरा लोटा तेरे छूनेसे अपवित्र हो जायगा'। तिसपर भंगी बोला 'महाराज! अब आपकी ऊँची जातिका अभिमान छोड दीजिये! आप जानते है कि अब आपको गाय और सुअरकी चरबी आपके दॉतोंसे काटनी पडेगी? ये नये कारतूस जानबूझकर ऐसी चरबीसे चिकने किये जा रहे है, समझे?" इतना सुनना था, कि वह ब्राह्मण सिपाही तत्काल आपेसे बाहर होकर, मानों भूतसे दबाया हुआ, छावनीकी ओर दौड पडा। उसके वहॉ पहुँचते ही सब सिपाही क्रोधसे पागल हो उठे और चारो ओर डरावनी- कानाफूसी जारी हो गयी। सैनिकों के मनमें बैठ गया कि फिरगियोंने उनका धर्म भ्रष्ट करने ही के लिए कारतूसोंमें गौ और सुअरकी चरबी लगानेकी ठानी थी। सरकारकी ओरसे

घोषणा की गयी कि धर्मभ्रष्ट करनेकी बात तो दूर ही रही; किन्तु कारतुसों मे गौ का खून और सुअरकी चरवी लगाये जानेकी बात सरासर झूठी और कपोलकल्पित बात है।

तो फिर यह झूठी खबर क्यों कर फैली? इसका दायित्व सरकारपर था या सैनिकोंपर? यदि गौ का खून और सुअर की चरबी सचमुच कारतूसोंमे चुपडी गयी हो तो इसमे सरकारका अज्ञान था या और कोई हेतु छिपा था? यह बात तो एक क्षणके लिए टिक न पायगी कि इन कारतूसोंमे क्या लगाया था या उनमे क्या लगाया गया था इसका पता अंग्रेजोंको नहीं था। क्यो कि, स. १८५३मे ये कारतूस नये बनाये गये और कानपुर, रगून, फोर्ट विलियम आदि स्थानोंमे 'काले' सैनिकोंको दिये गये थे; उन्हें जरा भी सदेह न था कि उन मे कोई अपवित्र वस्तु लगायी गयी हो; उन सैनिकोंने जब अंग्रेजोंका विश्वास कर अपने दाँतोंसे उन कारतूसोंकी टोपीको काटा तब भी अंग्रेज अफसर पूरी तरह जानते थे कि कारतूसों को किस तरह चिकना किया गया था। स. १८५३के दिसंबर के सरकारी विवरणमे यह बात साफ शब्दोंमे बतायी है।* यहाँतक कि सिपहसालार भी इसे ठीक तरह जानते थे। और हाँ, गौ या सुअरका खून या चरवी चाटना दोनों धर्मोमे अपवित्र, इसीसे त्याज्य होना स्वीकार किया है, इस सत्यको जानते हुए भी इन काडतूसोंके कारखाने भारतमे स्थानस्थानपर धडाधड खोले गये। इन कारखानो में, काम करनेवाले निम्न स्तरके लोगोंसे ठीक जानकारी प्राप्त कर बराकपुरके सिपहियोंने इस चरवीवाले संवादको देशभरमें फैला दिया और वह भी इतने वेगसे कि बिजली भी हार मान जाय! केवल दो सप्ताहोंमे घर घरमें हिंदु और मुसलमान, बिना इन चिकने कारतूसोंके, दूसरी चर्चाही नहीं करता था। ज्यो ज्यों इस कारणसे लोगोंके क्रोधकी मात्रा बढने लगी, त्यों त्यो वाइसरायसे ले कर साधारण गोरे सिपाही तक हरएक दावेके साथ बार बार कहता था कि यह चरबीवाली बात एक झूठी अफवाह थी!

---

* के कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १, पृ. ३८०

फिरगी सरकारका हर बयान, इस बारेमें, सरासर झूठ था किन्तु यह जानते हुए भी लोगों को दावे के साथ जान बूझकर बताया जाता था कि इस कारतूसी गप का विश्वास न करो। जगी लाट साहब इस बातको निश्चित रूपसे चार साल पहलेसे जानते थे, इस सत्य से भी अब सरकारने प्रकट रूपमें इनकार कर दिया। यहाँ तक कि अंग्रेज इतिहासकार भी आग्रह से प्रतिपादन करते थे कि डमडम के कारतूसों में गाय की या सुअर की चरबी कभी काममें नहीं आयी! यह तो इन अनाडी और मिथ्या-धर्मी सिपाहियों के मस्तिष्क की उपज है। किन्तु अब हम कह सकते है कि चरबीवाली बात सरकार पूरी तरह जानती थी। कारतूसों मे लगाये जानेवाली चरबी के ठेकेदारने उस समय अपने इकरारनामे (अहदनामे) मे स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि "गौ की चरबी ही दी जायगी।" साथ उसमें यह भी शर्त थी कि चरबी की दर दो आने (दो पेन्स) रतल होगी। जब इस अहदनामें की खबर मालूम हुई तो फिरंगी सरकारने फिरसे आज्ञा जारी की "कारतूसोंके लिए चरबी केवल बकरों या भेडों की ली जाय, गौ या सुअर की चरबी का उपयोग कभी न किया जाय।" इस नई घोषणा से यह बात उतर आती है कि तबतक गौ तथा सुअर की चरबी का उपयोग होता रहा होगा। इस घोषणा का कारण ही यही था कि अब तक सिपाहियों ने जो अभियोग सरकार पर लगाया था वह सत्यही था। श्री. फॉरेस्ट के प्रकाशित असली सरकारी खतपत्रो से तो स्पष्ट हो जाता है कि कारतूसोंके लिए जो चरबी ली जाती थी उसमे गौ और सुअर की चरबी मिली हुई रहती थी और इस बातको सब बडे गोरे अफसर जानते थे* (स. ७) हाँ, जब सैनिकोंने इन कारतूसोंकी टोपीको दाँतसे तोडनेसे साफ

---

* वे लिखता है ".... इस चरबी की बनावट मे गौ की चरबी रहती थी इस विषय में रत्ती भर भी सदेह नहीं है (खण्ड १ पृ. ३८१)

लॉर्ड रॉबर्टस् कहता है:—

"श्री. फॉरेस्ट के सरकारी रिकार्डकी हालमें जो जाँच की उससे सिद्ध होता है कि कारतूसोंको चिकना करनेके लिए जो मिश्रण बनाया जाता था उसमें निषिद्ध वस्तुएँ—गौ की वसा तथा चरबी—निःसंदेह रहती थी; और

इनकार कर दिया, तब सेनाधिकारियोंने शपथसे कहा, कि यह चरबीवाला मामला, बस, ढकोसला है। तिसपर भी, जो सिपाही अपने धार्मिक विश्वासों (?) के कारण दाँतसे टोपी काटनेसे इनकार करते थे, उन्हे बडी सजा देनेकी धमकी भी दी जाती। किन्तु इस डॉटडपटकी पर्वाह न करते हुए अपने धर्मकी रक्षाको, हर स्थितिमें, सिपाहियोंने सबसे ऊपर माना; तब सरकारने अपनी चाल बदली और सैनिकोंको छूट दी कि चरबी लगी जगहपर कागजका उपयोग किया जा सकता है। किन्तु जिस सरकारने गौ और सुअरकी चरबीका उपयोग करनेकी नीचता दिखायी, वही सरकार, सुविधाके लिए दिये हुए कारतूसी कागजको और थोडा चिकना बनानेके लिये, भला, और कोई दुष्ट छलविद्याका प्रयोग न करेगी इस की क्या निश्चिति? किसी तरह एक बार अनजानमें गौ और सुअरकी चरबीसे सैनिकोके मुँह अपवित्र हो जायँ कि मिशनरी कर्नल और कमांडर अधिकारी उन्हे ताना मारते थे "देखा! तुम धर्मभ्रष्ट हो गये!" इस तरह एक ओर से, सेनाके ऊँचे अफसर अपनी खराब करतूतोंसे इनकार कर तथा निर्लज्जतासे अपनी बात को बार बार बदल कर, सैनिकोंकी बेचैनी और क्रोधको शांत करनेका जतन कर रहे थे, जहाँ दूसरी ओर ये ही महाशय धर्मद्वेषके जोशमें संचलन-स्थान (परेड-ग्राउंड) पर, श्रीरामचंद्रजी तथा हजरत मुहम्मदसाहबको गालियाँ गिनानेवाले पर्चे, हजारोंकी संख्यामें वितरण कर सैनिको की क्रोधाग्नि को भडका रहे थे। इस कारतूस-विरोधी आंदोलन का प्रारंभ ठीक जनवरीके प्रारंभ से हुआ था और जनवरीके समाप्त होते होते सरकार और एक बार झुक गयी; नई आज्ञा जारी हुई की "अबसे सैनिक अपने हाथों बनाई चरबी को काम मे लाया करें।" आगे चलकर और एक सैनिकी पर्चेमे श्री. बर्चने सब के लिए प्रकट किया कि अबसे सैनिकों के पास एक भी निषिद्ध कारतूस नहीं पहुँच पायगा। सफेत झूठ के सरदार के भी, इस कथनने कान काट लिये। सं. १८५६ में

इस कारतूसी मामलेमें सैनिकोंके धार्मिक विश्वासोंकी ओर तनिक भी ध्यान न देने की भूल की गयी है।

(फॉर्टी इयर्स इन इंडिया पृ. ४३१)

अंबाला केन्द्रसे बाईस हजार पाँचसौ तथा स्यालकोटसे चौदा हजार याने कुल ३६५०० कारतूस रवाना हुए। राइफल–शिक्षा–केन्द्रोंमें इन्हीं कारतूसोंका उपयोग इस समय भी सरेआम हो रहा था। गोरखा टुकडियोंमें ये कारतूस खुलकर बाँटे गए और सेनाधिकारी डाँट दिखाते थे कि सैनिकों को जबरदस्ती इन काडतूसोंका उपयोग करना पडेगा। एक स्थानमें सैनिकोंने डट कर इनकार किया तो समूची पलटनको दण्ड दिया गया।

तब सिपाहियोंको भान हुआ कि इन काडतूसोंको दाँतसे काटना पडे या न पडे, एक बात निश्चित है कि जब तक इस सारे झंझट की जड यह पराधीनता, यह राजनैतिक गुलामी पूरी तरह नष्ट न की जाय तब तक वे सुखसे नहीं रह सकेंगे। पारतन्त्र्यके पचडेमें पिचनेवाले प्राणियोंको कैसा धर्म! धर्मका सबसे प्रथम चिन्ह है स्वतन्त्र राष्ट्र का स्वतंत्र नागरिक होना!

उठो, भारत, अब उठो! गुरु श्रीरामदासका यह उपदेश ग्रहण करोः—

धर्मके लिये मरें।
मरते सभी को मारें।
मारते मारते ले लें।
राज्य अपना॥

इसी संदेसेको अपने हृदयमें रटते हुए, हिंदुस्थानका हर सैनिक स्वराज्य और स्वधर्मके लिए मैदानमें उतरनेको अपनी तलवार पैनी करने लगा।
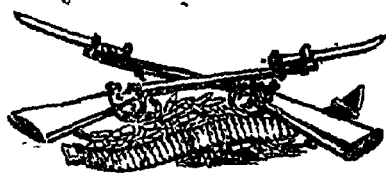
अध्याय ६ वाँ

वह महान् यज्ञ

सो, अपना राजनैतिक स्वातंत्र्य छीननेके लिए तथा अपनी पितृभू और पुण्यभूके उज्ज्वल बिरदकी रक्षाके हेतु सशस्त्र प्रतिकार करनेके लिए

विषम विग्रहमें उतरनेको सिद्ध रहना होगा; बिना इसके दूसरा कोई चारा नहीं है। तब इस रुधिर–महोत्सवके अधिष्ठाता देवता–अग्नि-नारायण–को सबसे पहले प्रसन्न कर लेनेकी हमें उतावली करनी चाहिये। पुराणोंकी कथा है, इन्द्रजितने समरांगणमें उतरनेके पहले इस मन्तव्यसे एक यज्ञ किया था, कि धधकती अग्निज्वालाओंसे अजेय रथ प्रकट होकर उसे मिल जाय। यह सच है कि उसकी साधना ही राक्षसी और पापी होनेके कारण उसका मन्तव्य पूरा न हो सका। किन्तु हमारी साधना, हमारा आदर्श, अत्यंत न्यायसगत और परमपवित्र होनेसे हमारे इस महान् यज्ञमें कोई रुकावट पैदा होनेकी थोडी भी सम्भावना नहीं है। हम इस बातको पूरी तरह जानते हैं, कि जिसे हम सत्य समझते हैं और उसके लिए अपने प्राणोंकी बाजी लगानेपर उतारू होते हैं, वह सत्य अपने स्थानमें स्वभावसे भलेही पवित्र और न्यायपूर्ण हो, फिर भी उसका पृष्ठपोषण करनेको उतनीही मात्रामें शक्तिबल खडा नहीं करते तबतक वह सत्य दावेसे विजयी होता हो, सो बात नहीं है! तो भी अपनी शक्तिभर पूरी तरह सत्यके लिए झझनेमें भी सच्चे रणबाँकुरेको स्वर्गीय रणावेशसे अभिभूत असीम वीरानंद ही भरपूर मिल जाता है।

तो फिर, प्रज्वलित करो उस यज्ञवेदी को ! क्यो कि, अग्निनारायण का वरदान हमें प्राप्त होना अत्यत आवश्यक है ।

यज्ञवेदीपर अतिविशाल और अत्यंत गहरी यज्ञवेदी अच्छी तरहसे खोद डालो। देखो, राष्ट्रीय क्रोधाग्निकी लपटें एक दूसरेपर कूद रही है ! इस यज्ञ का संकल्प बहुत पहले, याने १७५७ में, किया जा चुका है । इसीसे इस यज्ञ की प्रथम आहुति का सम्मान पलासी की रणभूमि को देकर, धकेल दो उसे इस वेदीमे ।

कहाँ है वह पंजाब का सिरताज कोहेनूर ? इस काम में हाथ बँटाने के लिए डलहौसीने स्वय आगे बढकर उस कोहेनूर को उस के असली स्वामी खालसा वीर गुरु गोविंदसिंगजी से कब का लूट लिया है। हिंदुस्थान के सार्वभौमत्वका एकमात्र प्रतीक, प्राचीन ऐतिहासिक कालसे कीर्तिमान् इस निर्मल, शान्त आभा-किरणोंके कोहेनूर हीरे के अतिरिक्त और कौनसी आहुति इस लपलपाती अग्निज्वाला को भडकाने मे अधिक समर्थ होगी ? इसलिए धकेल दो उस पंजाब के कोहेनूर को उस यज्ञवेदीमे !

अब इस के बाद बरमा की आहुति पडनी चाहिये। इससे वहाँ के राजा थीबा को भगा दो राज की सीमा के बाहर और धकेल दो यज्ञज्वाला की ऊँची उठी अग्निशिखा मे !

अरे ! उस ओर स्वय छत्रपति शिवाजी महाराजका सिंहासन जो है, उसे क्यों कर भुले हो। सातारेमें यों ही उसे सडते रहने देनेमे क्या गौरव ? उसके सर्वश्रेष्ठ होनेका सम्मान उसे अवश्य मिलही जाना चाहिये। इससे, हे परम दयामयी ऑग्ल सत्ते ! अपने फडकते हुए पैने नाखूनोंसे अधिकसे अधिक विध्वस करो, सातारेके सिंहासनको मिट्टीमे मिला दो (जहाँ उसके स्वामी सुखसे राज करेंगे) और, उस राष्ट्रीय क्रोधकी अग्नि और धधककर महाभीषण हो जाय इसलिए धकेल दो सातारेका सिंहासन ! स्वाहाऽ !

केवल नागपूरकी गद्दीकी आहुति राष्ट्रीय क्रोधकी सहारपरक अग्निदेवताके लिए तो क्षुद्र वस्तु होगी ! सो इस गद्दीके साथ साथ नागपुरके उदास राजमहल, हाथी, घोडे और साथ रानियोंको भी, मात्र उनसे बलपूर्वक छीने गये जेवरोंके साथही नहीं, बल्कि उनके भयंकर आर्त आक्रोशके

ले आना; धकेलो इन सबको एक साथ इस धूधू जलनेवाली यज्ञ-वेदीमें ! स्वाहा ऽऽ!

अब तो, इस यज्ञ की अग्निज्वालाएँ ऊँची, और ऊँची गयीं, एक दूसरे पर झपटती हुई आकाशको छूने जा रही हैं, किन्तु इससे भी अधिक भीषण भयंकरतासे यज्ञाग्नि भडकनी चाहिये। तब धकेल दो झाँसीकी बिजलीको; स्वाहा ऽऽ !

यज्ञवेदी से उफनती हुई अग्नि के गहरे उदर में कितनी प्रचंड खल-बली और उथलपुथल मची है उसका भान करानेवाली प्रलयंकारी घर-घराहट तुम्हें सुनायी नहीं देती ? निश्चय, कोई भीषण प्रस्फोटक क्रांति, अग्निज्वालाओं के पेटमें अस्थि–मांस–मज्जायुक्त साकार रूप बनकर बाहर निकलने की सिद्धता हो चुकी है : इसीसे, जो भी हाथ लगे इस अग्निमें स्वाहा करो ! स्वाहा करो, अर्काटके नवाब को ! जाने दो ताजोर की गद्दी को अंदर ! खैरपुर के अमीर की खैर स्वाहा होने ही में है ! धकेल दो अंदर जैतपुर और सम्भलपुरके राजमुकुट ! सिकिम का स्वाहा करो; जमींदार, तालुकदार, जागीरदार, वतनदार-सब को स्वाहा करो ! स्वाहा !

अब डमडमकी बारी है ! दोस्तो और दुश्मनो ! जल्दी करो; भारतभर फैले हुए डमडम जैसे अनेकों उद्योगालयोंसे लाखों नये कारतूस ले आओ· गौ तथा सुअरकी वसा और चरबीमें अच्छी तरह डुबोकर झोंक दो इस सर्वसंहारक तथा सर्वभक्षक अग्निकी कराल ज्वालामें ! देखो बहुत ऊँची उठी इन लपटोंसे राष्ट्रीय क्रोधकी रणदेवताका रूप निखर रहा है ।

यज्ञवेदीकी उफनती अग्निज्वालाओंपर तांडव करती हुई महाकाली—इस महायज्ञकी अधिष्ठात्री—अब स्वयं साकार हो रही है। काली, भवानी, नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः—शत शत दंडवत् प्रणाम ! चंडिके, तुम्हारे भीषण तांडवतले अन्याय, अत्याचार और पाशविक शक्ति कुचलकर खाकमें मिल जाती है; तुम्हारे हाथ की गदाकी चोटसे दासताकी शृंखला चकनाचूर हो जाती है; राष्ट्रकी हस्तीकी रक्षा प्राणोंपर खेलकर भी करनेका समय आ पडता है; और आकाश युद्धके बादलोंकी काली घटासे ओझल हो जाता है; राष्ट्ररक्षाके हेतु आवश्यक युद्धमें रणभूमिमें खूनकी नहरें बहती हैं; तब तुम्हारी लपलपाती जिव्हाएँ उस उष्ण रक्तको पेटभर पी जानेको प्यासी

रहती हैं, हे महादेवी—मृत्यु भी तुम्हारा ही दूसरा रूप है—हे महाकाली; तुम्हें शत शत प्रणाम ! हमारे इस स्वाहाकारसे प्रसन्न होओ ! हमारी पूजा-प्रार्थनाओंको स्वीकार करो ! जगद्धात्री ! हमारे खड्गकी धारको और पैनी बनाकर, क्या, तुम अपना विजयी वरदहस्त उसपर न रखोगी ?

" विजय का वरदान शायद न भी मिले, किन्तु तुम्हारे खड्ग को मै प्रतिशोध का वरदान अवश्य दूँगी ! ! प्रतिशोध ! हाँ, बदला ! अत्याचारी, अन्यायी पाशवी शक्ति की टाग तोडनेवाला समर्थ बदला ! प्रकृति की गूढ दण्डशक्ति को, इसी प्रतिशोध को, देखकर अत्याचारी राजसत्ता मौतसे भी अधिक डरती है। इस दैवी दंडशक्ति की हथेली मे आगामी विजय का बीज पडा रहता है ! !

अध्याय ७ वाँ

गुप्त संगठन

गत अध्यायोंमें बताया गया है कि भारतभरमें क्रांति की बयार जोरोंसे बहने लगी: इधर बिठूरमें भी स्वातंत्र्य–समर की यशस्विताकी दृष्टिसे इस युद्धमें आवश्यक सब बातोंको संगठित करनेका एक कार्यक्रम बनाया गया!

तीसरे अध्यायमें, लंदनमें गुप्त योजनाएँ बनाते हुए रंगो बापूजी तथा अजीमुल्लाको हमने छोड दिया था! सातारेके इस क्षत्रिय और बिठूरके नाँ साहबके बीच होनेवाली बातचीतको इतिहासमें, भले ही, ब्योरेवार न लिखा गया हो, इतना तो निश्चितरूपसे कह सकते हैं कि इन दोनोंने मिलकर लंदनमें क्रांतिके उत्थानकी रूपरेखा बनायी थी। लंदनसे रंगो बापूजी सीधे सातारा पहुँच गये। किन्तु अजीमुल्ला सीधे भारतमें न आ सके। जिनके सामने खडे होकर यह स्वातंत्र्य–युद्ध लडना था उनकी सत्ता तथा राजनीतिके तानेबाने केवल भारत ही में मर्यादित न रहे थे; जिससे, जिस किसी मोर्चेसे ब्रिटिशोंको सताया जा सके, वहाँ हमला करना आवश्यक हो गया था। साथमें यह भी जाँचना आवश्यक था कि इस आगामी स्वातंत्र्य–युद्धमें युरोपके किस देशसे प्रत्यक्ष सहाय और नैतिक सहानुभूति प्राप्त हो सकते हैं। इसी उद्देशसे भारतको लौटनेके पहले अजीमुल्लाने युरोपखंड-भरमें यात्रा की। संसारभरके मुसलमानोंके खलीफाका स्थान, तुर्की सुलतानकी राजधानीको भी वह हो आया। उस समय रूस–तुर्की युद्ध चालू था, जिसमें सेवस्तपुलकी महत्त्वपूर्ण लडाईमें इंग्लैंडको हार खानी पडी थी,

यह सुनकर अजीमुल्ला कुछ समय तक रूसमें रहा। अंग्रेज इतिहासकारोंको पूरा संदेह है, कि अजीमुल्लाका वहाँ जाना इसी उद्देशसे होगा कि इंग्लैंड-के विरुद्ध एशियामें रूस कहीं मोर्चा लेता है या नहीं? और इसकी सम्भावना हो तो रूसके साथ आक्रमक तथा संरक्षक संधि की जाय! राष्ट्रीय उत्थानके नगाडे अब बजने लगे तब और उसके बाद लोग प्रकट-रूपसे बोलने लगे, कि रूसी जार और रूसी सेना फिरंगियोंसे युद्ध करनेकी सोच रहे हैं। इस बातके प्रकाशमें उपर्युक्त संदेहकी और पुष्टि होती है। अजीमुल्ला जब रूसमें था तब लंदन टाइम्सका जंगी संवाददाता तथा सुप्रसिद्ध लेखक श्री. रसेलके साथ उसकी बातचीत हुई थी। बेचारे रसेल को इसका खयाल तक न था कि रूस–तुर्की युद्धकी समाप्तिके बाद थोडेही दिनोंमें उसे अपने अतिथिके आश्चर्यकारी युद्ध–प्रयत्नोंके संवाद भारतसे भेजनेकी बारी आयगी। अंग्रेजोंकी हार का संवाद पाते ही १८ जूनको अंग्रेज तथा फ्रांसके संयुक्त सेना–विभागोंको रूसने बहुत हानि पहुँचाकर भगा दिया। इस संवादको पातेही अजीमुल्ला अंग्रेजी शिबिरमें किसी तरह घुस गया। उसका वेश भारतीय तथा राजसी ठाठका था। श्री. रसेलसे मिलते ही अजीमुल्लाने कहा "जिन छुपेरुस्तुमोंने (रूसी सिपाहियोंने) अंग्रेज–फ्रेंचकी संयुक्त हरावलको भी भगाया, उन वीरोंको तथा उनकी राजधानीको एक बार देख आने की इच्छा होती है। * अजीमुल्ला किसीको बनाने तथा व्यंग करनेमें सिद्ध–हस्त था। जिन रूसी वीरोंने अंग्रेज और फ्रान्सीसियोंके छक्के छुडाये थे उन्हें देखनेकी अजीमुल्लाकी इच्छाको पूरी करनेके लिए रसेलने उसे उसके खेमेमें आनेको कहा। शामके झुट-पुटे तक वह आग उगलती रूसी तोपोंको बडे कुतूहलसे देखता रहा। उन तोपोंसे उडा एक गोला उसके निकट आ धमकनेपर भी वह वहाँसे न हटा। रातको खेमेमें लौटनेपर आनंदसे भरे अजीमुल्लाने रसेलसे कहा,

* उपर्युक्त जानकारी सुविख्यात 'रसेलकी दैनंदिनी' (रसेलस् डायरी) पुस्तकसे दी है। १८५७के युद्धमें लंदन-टाइम्सके संवाददाता की हैसियतसे वह भारतमें आया था। उसकी लिखी बहुतेरी घटनाएँ उसकी 'आँखों देखी' है।

"मुझे इससे भारी संदेह है कि यह बलवान् और सुसंगठित रणव्यूह तोडनेमें तुम कहाँ तक सफल होंगे।" रात उसने रसेलके डेरेमें काटी और सवेरे लौटते समय उसने रसेलकी मेजपर एक चिट रखी-"शुभेच्छा के साथ धन्यवाद! आपने स्वयं मेरी आगमगत करनेमें जो कष्ट उठाये उसके लिए धन्यवाद देनेकी अनुज्ञा मुझे दीजिये।"

अजीमुल्ला के रूससे लौटनेपर वह कहाँ कहाँ ठहरा यह कहना दूभर है। किन्तु बाद से प्रसिद्ध हुए कानपुर के क्रांति घोषणापत्रों से स्पष्ट दिखायी पडता है कि अजीमुल्ला, मिस्र के साथ राजनैतिक संबंध प्रस्थापित करने के यत्नोंमें व्यस्त था।*

इसके बाद अजीमुल्ला युरोपके दौरेसे बिठूर लौट आया तब उस समय क्रांति दलके सारे प्रमुख नेता वहाँ इकट्ठा हुए थे। फिर क्या था? बिठूरके राजमहलका वातावरण ही बदल गया। किसी समय भारतवर्षमें विजयी वैभवसे लहरानेवाला जरीपटका, मराठोंका झण्डा, आजतक कोनेमें बेकार पडा था। जिनकी खनखनाहटसे हजारों मराठी तलवारें रणभूमिमें उमडकर अपूर्व वीरताके गान करतीं थीं, वे नाल बाजे, डंके नगाडे, अबतक भयानक तथा दुःखी सुर निकालते थे। और जिसपर मुगल सल्तनत का भवितव्य

* भारतमें जारी राजनैतिक शोषणकी जानकारी देनेवाला अजीमुल्लाका तुर्की सुल्तानके नाम लिखा हुआ असल पत्र लॉर्ड रॉबर्ट्सके हाथ लगा था। इस बारे में लॉर्ड रॉबर्ट्स लिखता है:— "अजीमुल्लाके नाम उसकी अंग्रेजी प्रेमिकाओंके कई पत्र तथा एक फ्रान्सीसीके दो पत्र थे...लाफों (Lafont) के पत्रोंसे मालूम होता है कि कलकत्तेके असंतुष्ट तथा राजद्रोही जनों तथा, शायद, चंद्रनगरके फ्रान्सीसियोंसे यह आशा की गयी थी, अंग्रेजी जूएको उतार फेंकनेके काममें वे सहायता करें-इस आमंत्रणके संतोषजनक उत्तरकी आशा लगाये वह बैठा होनेकी सम्भावना थी। इस पत्रव्यवहारका कुछ हिस्सा बंद लिफाफेमें पडा था और अजीमुल्लाके हस्ताक्षरमें कई पत्र थे। इनमें से दो कुस्तुनतुनियाके ओमरपाशाके नाम थे, जिनमें हिंदी सैनिकोंकी अशान्ति तथा भारतकी बिगडी हालत का सरसरी तौरपर जिक्र था।"

लाचार, अवलंबित था, वह पेशवाकी राजमुद्रा बिठूरके राजभवनमें स्वयं ही विधवा होकर संदूकमें बंद पडी थी। किन्तु अब कुछ और ही रंग दीख पडता था। कोनेमें धूल चाटते पडा 'जरीपटका' नवचेतनासे फिर लहराने लगा। पुराने समरगीतोंको लगभग भुलानेवाले मारू बाजे फिर अपने रण-संगीतसे ब्रह्मावर्तका वातावरण भरने लगे और पेशवाकी राजमुद्रा पराधीनताके शापको नष्ट करनेके लिए उतावली हो उठी। नानासाहब की वे "व्याघ्रके समान भेदक और तेजस्वी" आंखे आत्माभिमानपर आघात होते ही, अजीमुल्लाके आगमनके बाद, और ही चमकीली और बडी हो गयीं। फिर एक बार भगवान् श्रीकृष्णके 'तस्मात् युद्धाय युज्यस्व' वीरसंदेशने नानासाहबका अंतःकरण नयी प्रेरणासे भर गया। बिठूरके कोने कोनेमें यही मंत्र गूँज उठा, "तस्मात् युद्धाय युज्यस्व-सो; उठो, लडनेको सिद्ध हो जाओ!" क्यों कि, अपने ही देशमें-हिंदुस्थानमें ही-विदेशी शासनकी गुलामीकी बेडियोंमें जकडे पडे रहनेका लोगोंके भाग्यमें बदा था! स्वराज्य ही समाप्त हुआ तब स्वातंत्र्यका जन्मसिद्ध अधिकार भी लोप हो गया। स्वदेश और स्वाधीनताको फिरसे प्राप्त करनेके साम-दाम-भेद आदि सभी उपाय परस्त हो गये थे। इस प्रश्नका सुलझाव एक ही रहा-'युद्ध'। "हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं, जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्-समरमें मारे जाओगे तो स्वर्गका सुख पाओगे; युद्धमें जीत होगी तो इस कर्मलोकका राज करोगे" गीता का संदेश गूँज उठा "इस लिए, उठो; युद्ध करनेमें तुम किसी प्रकारका पाप नहीं करते।" इस दिव्यमंत्रसे नानासाहबकी आँखें और भी चमक उठी (स. ९)*

नानासाहबने देश की स्थिति की पहले पूरी जाँच की। अपने देशबांधवों की गरीबी हालत तथा शोषण और तिसपर भी उनके धर्मपर

* (स. ९) उस समय, नानाका मन्तव्य था, कानपुर में अपने राज की नींव डालना; पेशवा की महान शक्तिको फिरसे पहले के स्थान पर बिठाना; और अपने भाग्य का विधाता बनकर उस अलोप राजदण्ड के वैभव को फिरसे अपने हाथों बढाना। बस, इसी तरह के कोई विचार उसे उत्तेजित कर रहे थे। ट्रेव्हेलियन पृ-१३३

होनेवाले भयकर आक्रमण आदि को देख उसने पराधीनता की पुरानी पीडा की चिकित्सा कर निश्चय किया कि, बस, एक तलवार ही इस प्राण-घाती रोग का अंत कर सकती है। यह तो पूरी तरह नहीं बताया जा सकता कि नानासाहब ने अपने मनमें इस विषय में क्या निश्चय किया था और कौनसा कार्यक्रम पक्का किया था, फिर भी अनुमान लगाया जा सकता है, कि पहले तलवारके बलपर अंग्रेजोको निकाल बाहर करना और अपना स्वातंत्र्य प्रस्थापित करना; फिर, हिंदुस्थान के नरेशों की सगठित एकता के झण्डे के नीचे भारतीय केन्द्रीय सत्ता को खडी करना; यही ध्येय मुख्यतः अपने मनमे स्थिर किया होगा। आपसी फूट की दावमें फँसकर पराधीनता के पाशमें स्वदेश किस तरह पकडा गया, इसका इतिहास नानासाहब की ऑखों के सामने प्रत्यक्ष होकर नाचने लगा। उस के सामने एक ओर श्री शिवाजी महाराज और दूसरी ओर अपने पिताका—बाजीराव द्वितीयका—चित्र लगा था। एक साथ उन दो चित्रोको देख, पहलेका वैभव और आजकी लज्जापूर्ण दशामें होनेवाला विरोध नानासाहबकी ऑखोंमे तैरने लगा! और इस लिए, सबोंके सहयोगसे पहले समरभूमिवर युद्ध कर भारतीय स्वाधीनताको लौटा लाना; और आपसी फूटको गहरी गाडकर ससारके स्वतत्र देशोंके बराबरका स्थान स्वाधीन भारतको प्राप्त कर देनेवाली शासन—सस्था हिंदुस्थानमे प्रस्थापित करना—यही नानासाहबका सर्वप्रथम कार्यक्रम था।

हिंदुस्थानसे नानासाहब यही अर्थ लेते थे, कि हिंदु और मुसलमानोंका सयुक्त राष्ट्र-यह उनका स्थिर विचार था। जबतक मुसलमान इस देशमे विदेशी शासक थे तबतक उनसे भाईचारा रख कर एकसाथ आनंदसे रहने को सिद्ध होना तो राष्ट्रीय दुबलेपनको मान लेना था; और इसीसे मुसलमानोको पराया मानना उस समयके हिंदुओंको आवश्यक और शोभा देनेवाला था। किन्तु उस मुगली राजसत्ताका अन्त, पजाबमें गुरु गोविंदसिंगने, राजपूतानेमे राणा प्रतापने, बुन्देलखण्डमे छत्रसालने तथा दिल्लीमें तो मराठोंने उस 'तख्त—ताऊस' पर स्वय चढकर, एक शतीके झगडेके बाद, किया था। हिंदुपदपातशाहीने उस मुगली सल्तनको एक ही कौर में निगल लिया और उसे मिट्टीमें दफना दिया। तब मुसलमानोंसे हाथ

मिलाना किसी तरह राष्ट्रीय अपमानकी बात न थी, वरच वह एक उदा-रतापूर्ण सहयोग था। इस लिए, हिंदुमुसलमानोने आपसी द्वेषको अतीत मे छोड दिया; क्यो कि अब उनका नाता शासक और गुलामका न होकर, धर्मके भिन्न होते हुए भी, पूरे भाईचारेका था। अब वे दोनो हिंदभूमिकी संतान थे। नाम उनके भिन्न थे किन्तु एक ही, भारतमाताकी गोदमें वे पलते थे। इस तरह भारतमाता दोनोंकी माता होनेसे वे दोनो एकही खूनके भाई माने गये। नानासाहब, बहादुरशाह, मौलवी अहमदशाह, खान बहादुरखाँ तथा १८५७ की क्रातिके अन्य नेता, ऐसे ही कुछ बंधुभावसे प्रेरित होकर, आपसी द्वेषको भूल कर (क्यो कि, अब अपनोंसे वैर रखना अदूरदर्शिता तथा मूर्खता का परिचय देना था) स्वदेशके झण्डेके नीचे खडे हो गये। मतलब, नानासाहब और अजीमुल्लाके कार्य-क्रम की उदार नीति यही थी, कि पहले हिंदू तथा मुसलमान एक होकर कधेसे कधा मिलाकर स्वदेशकी स्वाधीनताके सग्राममें पूरा बल लगायें और स्वातन्त्र्य प्राप्त होते ही हिंदी नरेशोंके सयुक्त आधिपत्यमे एक सघ-राज्यकी स्थापना करें।

अब, बिठूरके राजमहालके हर विचारी व्यक्तिको एकही विचारने घर दबाया था, कि उपर्युक्त ध्येयको कैसे पहुँचा जाय? स्वाधीनताके हेतु किये जानेवाले युद्धमें यश प्राप्त करनेके लिए दो बातोंकी अत्यत आवश्यकता थी। एक तो भारतभरमें एक प्रचण्ड विचार--आदोलनको लहरा देना और दूसरे, इस साधनाकी पूर्णताके लिए एकही समयमें समूचे स्वदेशके उत्थानकी योजना करना। थोडेमें, हिंदुस्थानको स्वातन्त्र्योन्मुख बनाके उसके लिए ठीक कहाँ चोट की जाय इसका मार्गदर्शन करना, ये दो बातें स्वाधी-नता की अंतिम साधनाकी दृष्टिसे भारी महत्त्वपूर्ण थीं। और इस सारी योजनाके पूर्ण परिणति होने तक कपनी सरकारको इसकी गध तक न आने पावे। इतिहासके अनुभवोको न भूलते हुए, बल्कि उससे योग्य सीख लेकर तुरन्त बिठूरमे एक गुप्त संगठन की स्थापना हुई।

इस गुप्त क्रातिमण्डल की जानकारी अब और कभी प्राप्त करना वैसा ही दूभर है जैसा कि अन्य गुप्त सस्था के बारे में हुआ करता है! किन्तु

जो कुछ सत्य बातें कभी कभी प्रकाशमें आ जाती है, उनको देख जितना भी इन क्रांतिकारी नेताओं को सराहा जाय थोडा ही होगा।*

स. १८५६ के कुछ पहले, इस राजकीय साधना की दीक्षा जनता को देनेके लिए नानासाहबने समूचे भारत में प्रचारकों को भेज दिया था। ऊपर से, नानासाहब पूरे परखे हुए तथा राजनीतिज्ञ कुछ चुने हुए अपने जनोंको, दिल्लीसे म्हैसूरतक के सभी नरेशोंके पास इस लिए भेजे थे, कि उन्हे इस क्राति युद्धमें सहयोगी बनकर भारतीय सघराज्यके ध्येयको प्रत्यक्ष बनानेमे अगुआई करनेको प्रेरित करें। साथ साथ हर रियासतके शासकके नाम भेजे हुए खरीतोंमें इस बातका पूरा और प्रभावी विवरण था, कि औरस संतान न होनेका बहाना बताकर स्वदेशी राज्योंको मटियामेट करने, तथा भारतको बहुत हीन दशाको पहुँचानेका कुटिल दॉव अंग्रेज किस खूबीसे खेल रहे हैं; अब तक बनी रही रियासतोंकी भी वही दशा करनेका क्या ढंग है; और पराधीनता की चक्कीमें ' स्वधर्म और स्वराज्य, कैसे पिसे जाते हैं। और साथ उन खरीतोंमे आग्रहके साथ अनुरोध किया गया था कि ये नरेश अपनी ही स्वाधीनताके लिए इस क्रातियुद्धमें हाथ बॅटाएँ। कोल्हापूर, पटवर्धनी रियासतें, अवधके नवाब, बुंदेलखण्डके नरेश और अन्य कई स्थानोंमे नानासाहबके ये खरीते पहुँच पाये थे इसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिल जाता है। नानासाहबके एक एलची को अंग्रेजोंने मैसूर दरबारके पास जाते हुए बंदी बनाया था। इसकी गवाही इतनी महत्त्वपूर्ण है कि उसे हम यहाँ पूरी उद्धृत करते हैं।

" अवधके जब्त होनेके पहले दो तीन महीनोंसे श्रीमंत नानासाहबने यह पत्र-व्यवहार जारी किया था। शुरू शुरूमे किसीने दाद न दी; क्यों कि, हर एकको विजयके बारेमें सदेह था। किन्तु अवधके जब्त होनेपर

* इस विषय में ट्रेव्हेलियन लिखता है:—जिन धनी और सभ्य ईसाइयोंनें शाति और सद्भाव के मंत्र का उपदेश देनेका व्रत लिया हो वे भी इतनी पूर्ण संगठन-नीति को कायम नहीं करेंगे, जैसी कि इन षडयंत्रकारियोंने अशान्ति और विद्रोह फैलाने के लिए की थी। —'कानपुर' पृ. ३९

नानासाहेबने पत्रोंकी वह बौछार की कि धीरे धीरे लखनऊके शासक नाना-साहबके साथ कुछ सहमत हो गये। पूरबियोंके राजा मानसिंहको भी बात जँच गयी। सैनिकोंने अपना संगठन खडा करनेका उद्योग किया, जिसे लखनऊके शासकोंने सहायता दी। अयोध्याके खग्रास ग्रहण तक किसीसे उत्तर नहीं मिलता था; किन्तु उसके बाद हर एककी आँखे खुल गयी और उसने नानासाहबसे संबध जोडना जारी किया। फिर कारतूसोंका मामला बना, जनता बिगड उठी। फिर क्या था? नानासाहबपर पत्रोंका सैलाब बढ आया!" * सं ११.

इस प्रकार, स्वातन्त्र्ययुद्धका गुप्त प्रचार चालू था। विशेषतः दिल्लीके दीवान-ई-खासमें क्रांतिका बीज अच्छी तरह जड पकड रहा था। अंग्रेजोंने दिल्लीके बादशाहकी सल्तनत ही नहीं छीन ली थी, वरंच बाबरके वंशकी 'बादशाह' उपाधीको भी रद करनेका निश्चय अभी अभी किया था। ऐसी दुर्दशामें दिल्लीके बादशाह तथा उसकी अत्यंत प्रिय, चतुर एवं दृढ बेगम जीनत महलने पक्का निश्चय किया, कि गतवैभवको फिरसे प्राप्त करनेका यह आखिरी मौका हाथसे न जाने दिया जाय। मरनाही है तो दिल्लीके बादशाह तथा उसकी बेगमकी शानको शोभा देनेवाले मौतको गले लगायेंगे, यह भी प्रण उन्होंने उसी समय कर लिया। इसी समय अंग्रेजों

---

* महीनों, नहीं सचमुच बरसोंसे, देशभरमे अपने षडयंत्रका जाल ये बुन रहे थे। एक दरबारसे दूसरे दरबारको, विशाल भारतके एक छोरसे दूसरे छोर तक नानासाहबके दूत गुप्त रूपसे शायद गूढ लिखा हुआ संदेसा और निमंत्रण लेकर, भिन्न जाति तथा धर्मके नरेशोंके पास पहुँच गये थे। हॉ, मराठोंसे उन्हें अत्यधिक आशा थी......विद्रोहके प्रकट होनेके पहले देशभरमें फैली जालसाजीमे नानासाहबका पूरा हाथ था इस बारेमे मेरे मनमे रंच भी संदेह नहीं है। देशके भिन्न भिन्न विभागोंमें भिन्न भिन्न गवाहोंके बयानोंके मेलसे नानासाहबकी जालसाजीकी बात तर्कके क्षेत्रसे सत्यके क्षेत्रमे आ जाती है।—के कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १ पृ. २४-२५ इसी दूतने नानाके भिन्न भिन्न दरबारोंके नाम भेजे पत्रोंकी बडी लंबी तालिका दी हुई है।

का ईरानसे युद्ध छिड़ा था। साथ साथ भारतमें उत्थान हो तो बडा सहायक होगा यह मानकर ईरानके शाहने दिल्लीके बादशाहके साथ गुप्त राजनैतिक बातचीत चालू की थी। बादशाहके घोषणापत्रमें तो स्पष्ट रूपसे कहा गया था कि दिल्ली दरबारसे ईरानको विश्वासी राजदूत भेजा गया था। बादशाहके दरबारमें जब यह हलचल हो रही थी तब स्वयं दिल्ली नगरमें लोगोंके भावोंको अंतःकरणके गहरे स्तरसे उभाडनेके लिए एक महान् आंदोलन चालू होनेके लक्षण दिखाई दे रहे थे। शहरमें प्रकटरूपसे दीवालोंपर पर्चे चिपकाये गये थे। १८५७ में लिखित एक पर्चेमें यों लिखा था:—फिरंगियोंसे भारतको मुक्त करनेके लिए अब ईरानी सेना आ रही है। इस लिए काफिरोंके चंगुलसे छूटनेके लिए छोटे बडे, पढे लिखे या अनपढ सैनिक या नागरिक सभी भारतीयोंको चाहिये कि अब रण-मैदानमें कूद पडें।"*

ये भित्तिपत्रक (वॉल पोस्टर्स) दिल्ली नगरमें प्रकटरूपसे लग जाते थे किन्तु अंग्रेजोंको इनके कर्ताका पता कभी न लगा। भारतीय समाचारपत्रोंमें भी ये घोषणाएं छपती थीं और उनपर गूढ तथा सांकेतिक भाषामें टीकाटिप्पणी भी प्रकाशित होती थी। दिल्लीके राजमहलसे शाहजादे तथा उनके मुसाहिब कभी गुप्तरूपसे तो कभी प्रकटरूपसे इसको बढावा देते थे और गुप्त षड-यंत्रोंका जाल बुन रहे थे। राजा जवानबख्तके घुडदौडके मैदानपर सार्जंट फ्लेमिंगका लडका छः वर्षोंसे घुडसवारीका अभ्यास कर रहा था। किन्तु १८५७ के अप्रैलमें यह अंग्रेज युवक वजीर महबूब अलीके घर गया था। वहाँ जवानबख्त उसे देखकर आपेसे बाहर होकर बोले 'जा, निकल जा यहाँसे! फिरंगीका मुँह देखतेही मेरा खून खौल उठता है।' यह कहकर जवानबख्त उस अंग्रेज युवक के मुँहपर थूके+ (स. १२) हॉ, अन्य लोक, इस ढीठ शाहजादे के समान उबल न पडते हुए अपना आंदोलन गुप्तरूपसे चलाते थे। एक अंग्रेज महिला श्रीमती आल्डवेल ने अपने कानों सुनी बात की गवाही दी है, कि कई मुस्लीम माताएँ अपने

---

* के कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड २ पृ. ३०.
+ मिलिटरी नॅरेटिव्ह पृ. ३७४

बच्चों को अल्लाह से यह दुआ माँगना सिखाती थी कि अंग्रेजों का जड़-मूल से सत्यानाश हो जाय * दिल्ली के बादशाह का गृहामात्य (प्राइव्हेट सेक्रेटरी) मुकुदीलाल कहता है-" राजमहल के दरवाजों के पास बैठकर मुगल तथा अन्य लोग विद्रोहपर मशविरा करते थे। सैनिक अब जल्द ही विद्रोह करनेवाले है: दिल्ली की सेना भी अंग्रेजों के विरुद्ध उठेगी; फिर आम लोग सैनिकों के साथ फिरंगियों का बोझ उखाड फेकेंगे और स्वराज्य में सुखी होंगे, इसी तरह के कुछ विचार जनता प्रकट करती थी। लोगोंके मनमें यह आशा दृढ होती जा रही थी कि स्वराज्य हो जाते ही सब सत्ता तथा अधिकार अपनेही हाथ आ जायेंगे।" इस तरह दिल्लीके घर घरमें विद्रोह की भावना जग रही थी। बस, अब स्फोट होनेमें एक चिनगारी की आवश्यकता थी।

दिल्ली और बिठूर इन दोनों राजधानियोंके समान डलहौसीकी हडप नीति की आखरी बलि अवधकी राजधानी लखनऊ भी विप्लवके झोले फेंक रही थी। लखनऊका नवाब तथा उसका वजीर कलकत्तेके पास रहते थे। ऊपरसे ऐसा मालूम पडता था कि लखनऊका वजीर रँगरेलियोंमें मगन है; किन्तु असलमे अली नकीखाँ नानासाहब के समान कलकत्तेके पास आगामी षडयन्त्रकी रूपरेखा चितारेनेमें मशगूल रहता था। बंगालके सैनिकोंको अपनी ओर कर, निश्चित समयपर वे कब विद्रोह करें इस बारे मे उसकी गुप्त किन्तु विशाल और साहसी मन्त्रणाएँ देखकर अली नकीखाँकी बुद्धिपर अचमा होता है। सैनिकोंमें अंग्रेज-विरोधी भावोंका प्रचार करनेके लिए फकीर और सन्यासीका भेष देकर अपने कई प्रचारकोंको उसने सेनामे भेजा था। सेनाके हिंदी अफसरोंके साथ पत्र-व्यवहार जारी कर उनको यह बात जँचा दी कि कपनीसरकार की नौकरीकी अपेक्षा स्वराज्यमे कई गुना अधिक लाभ हो सकता है। अवधपर दखलकर अंग्रेजोंने कैसे अक्षम्य अपराध किया है, नवाबके राजपरिवारसे कितनी नीचतासे पेश आये, बेगमों तथा रानियोंको धक्के मारकर राजमहलसे

* ट्रायल ऑफ दि किंग ऑफ दिल्ली.

किस तरह निकाल बाहर कर दिया गया आदि दिल दहलानेवाले अत्याचारोंके चित्र इतनी करुणापूर्ण रीतिसे सिपाहियोंके सामने चितारे जाते कि सैनिकों की आँखोंसे आँसू बहने लगते। और फिर उसी जोशमे गंगाका पानी हाथमे लेकर या कुरानपर हाथ रखकर सौगंध लेते कि "दममे दम हो तब तक अंग्रेजी शासनको कुचलना यही हमारा ध्येय रहेगा" इस तरह सूबेदार-मेजर, सूबेदार जमादार ये अफसर भी जब शपथ-बद्ध होते थे, तब सारी कंपनी उनके पीछे अपने आप, उसी ध्येय की हो जाती। इस तरह अवधके वजीरने अलग अलग तरकीबोंसे बंगालकी सारी सेना अपने वशमें कर ली* [बंगाली पलटनसे मतलब है अवध, आगरा आदि स्थानोंके निवासी पूरबिये, मुसलमान और हिंदुओं की बनी सेना] कलकत्ते के फोर्ट विलियम में भी अली नकी खॉ के दूत क्रांतिका संदेश गुप्तरूपसे फैला रहे थे।

भिन्न भिन्न शासकों तथा नरेशों के पास ब्रह्मावर्तसे पत्र भेजने पर नानासाहब ने जनता की भीतरी शक्ति को जगाने मे अपना बल लगाया था। बिठूर, दिल्ली, लखनऊ, सातारा और अन्य प्रमुख नरेशों के क्रांतियुद्ध में शामिल हो जाने से पैसे की कमी क्योंकर रहेगी? जनतामें जिन्हे कुछ विशेष स्थान हो ऐसे लोगोंको अपनी ओर कर लेनेके कामपर फकीरों, पंडितों तथा संन्यासियोंको ताबडतोड भेजा गया था। यह कहना, कि ये सभी फकीर, सचमुच फकीर ही थे, साहस होगा। क्यों कि, कुछ फकीर तो अमीरी ठाठमे घूमते थे। उनकी यात्रा हाथीपर होती थी। सिरसे पैरतक शस्त्रोंसे सधे

---

* (सं. १३) बारकपुरके सैनिकोंके पत्रही अंग्रेजोंके हाथ पडे थे! 'के' ने उन्हीको उद्धृत किया है। "सहायक तोपचीने कहा कि पूरी रेजिमेंट अवधके नवाब साहबके पक्षमे जानेको सिद्ध है। सूबेदार मदारखॉ, सरदार खॉ, और राम शाहीलालने कहा 'विश्वासघात करनेमें 'बेटीचोद' फिरंगी अपना सानी नहीं रखते अवध के नवाबसाहब ने गद्दी छोड दी तो उन्हें पेन्शन तक न दिया।" ऐसे कई पत्र बादमें अंग्रेजों के हाथ लगे—के कृत इंडियन म्यूटिनी प्रथम खण्ड पृ. ४२९.

सैनिक उनकी रक्षाके लिए साथ रहते। एक प्रकारसे ऐसे फकीरका अड्डा तो किसी सेना की छावनी मालूम होती थी। ऐसे ठाट-बाटसे लोगोंपर उनका गहरा प्रभाव पडता और सरकारको भी किसी संदेह की गुंजाइश न मिलती। लोगोंके आदरपात्र बडे बडे मौलवी इस राजकीय पवित्र युद्धके प्रचारार्थ हजारों रुपयोंके साथ भेजे जाते। नगर नगरमें, गॉव गॉवमे, ये मौलवी तथा पंडित, फकीर एवं सन्यासी देशके एक कोनेसे दूसरे कोने तक यात्रा कर, इस राजकीय स्वातन्त्र्य युद्धका गुप्त प्रचार करते थे। इससे प्रेरणा प्राप्त कर फिर भिन्न भिन्न गुप्त संस्थाओं ने अपनी ओरसे प्रचार जारी किया। वैतनिक प्रचारकों का स्थान अब अवैतनिक स्वयंसेवकोंने लिया। दर दर भीख मॉगनेके बहाने देशभरमें, जनताकी शक्तिको जगानेके लिए स्वातन्त्र्य, स्वदेशभक्ति एवं स्वधर्म प्रेमका बीज बोना प्रारंभ किया। इस स्वातंत्र्य-युद्धकी सिद्धता इतनी सावधानी और गुप्ततासे हो रही थी कि प्रत्यक्ष स्फोट के गोले भडकने तक धूर्त अंग्रेजोंको उसकी सैन जरा भी न मिली। ये फकीर और सन्यासी जब किसी गॉवमे पहुँचते तब उस गॉवमे एकाएक अशान्तिकी ऑधी आ जाती। अंग्रेजोंको कभी कभी संदेह हो जाता। बाजारोंमे कानाफूसी चालू रहती। भिश्ती 'साब' को पानी देनेसे इनकार कर देता। बिना सूचनाके अंग्रेज घरोंमे काम करनेवाली आया एकाएक नौकरी छोड देती। बावरची 'मेमसाब' के 'आगे' जानबूझकर नंगे बदन पहुँच जाते और चपडासी छोकरे संदेसा पहुँचानेको जाते हुए अपने 'साब' के सामनेसे तनकर चलते; तो कभी साब की हँसी उडानेके लिए जानबूझकर बुद्धू बनकर मुँह बिचकाते निकल जाते।* किन्तु इस एकाएक हुई जनजागृतिको देख अंग्रेज हैरान हो जाते, पर कोई खास संदेह न होता। ये फकीर और पंडित सैनिक शिबिरके इर्दगिर्दही घूमते रहते। हिंदु और मुसलमान सिपाही इन धर्माचार्योंको बडी श्रद्धासे मानते थे जिससे यदि कभी अंग्रेजोंको इसमे भेद होनेका संदेह हो जाता तो भी उनके विरुद्ध कार्रवाई

* ट्रेव्हेलियन कृत 'कानपुर'

करनेकी हिम्मत न करते। क्यों कि, उन्हे भय था कि कहीं सैनिकोंकी अशान्तिमें और एक बहाना न मिल जाय। एकबार एकाएक अंग्रेजोंको सुराग मिला कि किसी सन्यासीने क्रांतियुद्धका बीज किसी सिपाहीके घरमें जाकर बोया है। मीरतके अंग्रेज सेनाधिपतिने छावनीके पास अखाडा बनाये सन्यासीको वहाँसे निकल जानेको कहा। किसी सादे भोले भक्तका सा बनकर वह सन्यासी वहाँसे हाथीपर चढ, बिदा हुआ और पासहीके गावमें एक सैनिक के बरही में अड्डा जमा दिया।* वह देशभक्त मौलवी अहमदशाहभी इसी तरह सारे देशभर घूम घूमकर क्रांतिका प्रचार कर रहा था। इस मौलवी के नाम का तेजोमंडल हिंदुस्थान के चारों ओर नटा दमकता है और उस के महान् तथा वीरता के कार्योंके वर्णन हम आगे देनेवाले है। इस मौलवीने फिर लखनऊहीमें दस दस हजार लोगोंकी सभाओं मे खुल्लमखुल्ला प्रचार शुरू किया, कि 'स्वदेश और स्वधर्म का मंगल चाहते हो तो फिरंगियोंको तलवारके घाट उतारनेके बिना और कोई चारा नही है।' इसपर उसे पकडकर राजद्रोह के अपराधमें अंग्रेजोने फाँसीपर लटकाया।

हर सेना-विभागमें धार्मिक प्रसगोंके लिए एक मुल्ला और एक पण्डितको नियुक्त करनेका रिवाज था। इससे लाभ उठानेके हेतु कई क्रांतिकारी मुल्ला और पण्डितके पदपर सेनामें भरती हुए थे, जो रातमें अपनी क्रांति-पुराणकी पोथी सिपाहियोंके आगे चुपचाप खोल देते। इस तरह ये राजनैतिक सन्यासी, पंडित, मौलवी लगातार दो वर्षोंतक प्रचार करते रहे, और उन्होंने आगामी भीषण युद्धकाण्डकी भूमिका पूरी कर दी।

जहाँ ये घुमक्कड सन्यासी और मौलवी प्रचारक गाँव गाँवमें उपदेश देते फिरते थे, वहाँ शहरोंमें स्थानिक प्रचारक भी अपना काम पूरा करते थे। बडे बडे तीर्थक्षेत्रोंमें, जहाँ हजारों यात्रिक जमा होते थे, ये क्रांतिकारी जनताके मनमें फिरंगियोंके देशी राज्योंके हडप जानेके विषयमें, जो मौन तथा अप्रकट निषेध था उसको, अंग्रेजोंके तीव्र द्वेषमें बदल देते थे। गंगाके तटपर बसे तीर्थक्षेत्रोंमें क्या खलबली मची हुई थी, गंगास्नानके संकल्पके

---

* दि मीरत नॅरेटिव्ह

साथ साथ क्रांतियुद्धका संकल्प भी किस तरह पढ़ाया जाता था आदि बातोंका वर्णन हम उन स्थानोंके उत्थानके कथनमें देंगे। इन्हीं क्षेत्रोंमें फिरंगियोंका द्वेष इतनी पराकाष्ठापर पहुँच गया था कि काशीके मंदिरोंमें राजामहाराजाओंकी आज्ञासे. वहाँके पुजारी क्रांतिदलको यश मिलनेकी प्रार्थनाएँ बडे समूहके साथ करते थे।*

स्वधर्म और स्वराज्यको हर दिन कैसे अपमानित किया जाता है. इस बातको सर्वसाधारण जनताके मनमें जँचा देनेके लिए सरल और सादी भाषामें प्रचार करना आवश्यक था। क्रांतिदलने, इसके लिए यात्रा, रासमण्डली, रामलीला, अन्य समारोह, आल्हा आदि साधनोंको अपने प्रचारतंत्रमें शामिल कर लिया था। क्यों कि, इन अवसरोंपर बडे चावसे हजारों लोग जमा होते हैं। कठपुतलियाँ अब और ही भाषा बोलने लगी थी, उनका नाच भी अब डरावना और उग्र मालूम होता था। थानोंके सामने, पेडोंकी छायामें, धरमसालाओंमें तथा चौक चौकमें कुछ औरही गूढ संदेशसे भरे पँवारे और आल्हाके सुर निकलने लगे। रामलीला तथा रासमण्डलीके गानोंमें वीरताके ऐसे गान सुनायी पडते, जिनसे दर्शकों की भुजाएँ फडकने लगतीं, उनकी छाती तन जाती कुछ पराक्रम करने की इच्छासे खून गरम हो जाता; ठीक उस समय विषय बदला जाता और दर्शकोंको देशकी दुर्दशा का करुणा-पूर्ण वर्णन सुनाया जाता, उसमें फिरंगी के विरुद्ध लोहा लेने लोगों को भडकाया जाता और फिर अपने पुरखाओं के समान वीरता के काम कर दिखानेकी स्फूर्ति देनेवाले गान सुनाये जाते। सरकार जिनके आवागमन की कभी पर्वाह न करती थी उन देहातोंमें घूमनेवाली मण्डलियोंका भी उपयोग क्रांतिका संदेश फैलाने का काम देनेमें क्रांतिदलके होशियार नेता न चुके थे। कलकत्तेसे पंजाबतक ये मण्डलियाँ अपने देशबांधवोंके आगे भयकर खेल (?) हर रात को कर दिखाती थी।+

---

* रेड पॅम्फ्लेट (लाल-पत्रक)

+ ट्रेव्हेलियन कृत 'कानपुर' शॉर्ट नॅरेटिव्हस्

किन्तु इससे प्रचार कार्य पूरा न हुआ। स्त्रियोंमें इसका प्रचार करने के लिए वैद्, बहुरूपिये, जिप्सी जादूगर तथा ज्योतिषी आदि लोगों की स्त्रियोंको यह काम सौंपा गया। जिप्सी ज्योतिषी स्त्रियाँ यह भविष्य कथन करतीं कि अब ग्रहों का ऐसा जोर हुआ है, जिससे फिरंगियों का राज्य अब निश्चित नष्ट होनेवाला है। बहुरूपिया विदेशी शासन के घृणित षड्यंत्र का दर्शन कराते थे। वैद् स्त्रियाँ बतातीं कि माताको पीडा देनेवाले पिशाच्च को झाडने तथा पराधीनता की डायन को जलाने का एकमात्र उपाय विप्लव है। अंग्रेजी शासन का द्वेष स्त्रियोंमें किस सीमा को पहुँच पाया था और अंग्रेजी हुकमत का सत्यानाश देखने लिए वे कितनी आतुर थीं इसका वर्णन आगे आयगा। थोडेमें, तीर्थक्षेत्र, मठ, मंदिर, सिपाही, सैनिक, नागरिक, आम जनता, नाटक मण्डली, महिला एवं पुरुष—सभीमें क्रांतियुद्धका प्रचार किया जाता था।

हर स्थानमें, पारतन्त्र्यसे घृणा और स्वराज्यके लिए बेचैनी दीख पडती थी। " मेरा धर्म मर रहा है, मेरा देश मुर्दा हालतमें है, मेरे स्वदेश बंधुओंको कुत्तेसे भी बदतर जीवन जीना पड रहा है " ऐसे ही डरावने भावोंसे हरएक हृदय जल रहा था। हाँ, साथ साथ यह भी दुर्दम्य आकांक्षा पैदा हुई थी कि अपने देशका उद्धार हो, हमारे देश—निवासी मानवको शोभा देनेवाला वीरोंके योग्य जीवन प्राप्त करे। साथ स्वाधीनताकी प्राप्तिके लिए अपने (तथा शत्रुके) खूनकी नहरें बहानेका मामूली मूल्य देनेको भी राजी थे।

स्वाधीनताकी तीव्र लालसा अंतःकरणमें प्रेरित करने और उसकी प्राप्तिके लिए कटिबद्ध होनेको जनताको सिद्ध करना हो तो कवितासे बढकर जोरदार साधन दूसरा नहीं हो सकता। साधारण लोगोंके अंतःकरणमें एकाध महान विचार बस गया हो तब भी शब्दोंद्वारा उसकी व्याख्या करना प्रायः असम्भवसा होता है। किन्तु कविही इस विचारको सबसे अधिक तीव्रतासे अपनी प्रतिभामें उसका अनुभव करता है और फिर उसे ऐसी मनोहर वाङमय-देह देता है कि, वह विचार लोगोंके अंतःकरण की तह तक घुस जाता है, और जनता पहलेसे भी अधिक उस महान् विचार के भक्त बन जाती है। इसीसे

क्रांतिकारी उत्थानोंमें राष्ट्रीय काव्यका महत्त्व अनमोल है। राष्ट्रीय गीत तो उज्ज्वल ध्येयसे छलकती राष्ट्रीय आत्मा का काव्यदेहमें अनुभव है। लोगोंके हृदयोंको जोडनेका इससे बढकर प्रभावी साधन दूसरा नहीं है। स्वधर्मकी रक्षा तथा स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए आवश्यक स्वाधीनताकी तीव्र आकांक्षासे जब भारतभूमि जागृत हो उठी, तब राष्ट्रीय अंतःकरणसे राष्ट्रीय काव्य यदि फूट न निकलता तो बडे अचरजकी बात होती। दिल्लीके बादशाहके दरबारके एक प्रमुख शायरने एक राष्ट्रीय गीत बनाया था और बादशाहने स्वयं सबको यह आदेश दिया था कि, "यह गीत हर सार्वजनीन सभा, समाज, समारोहमें तथा हर देशवासीके कण्ठसे गाया जाय।" इस गीतमें इतिहासकालके वीरत्वपूर्ण कृत्यों तथा अबकी हीन दासताका वर्णन था। ठीक कलतक जिनके सिर को कर्तुमकर्तुं राजशक्तिका राजमुकुट शोभा दे रहा था, उन्हींको कुत्तेकी मौतमें मरनेकी बारी आयी थी। जिनका धर्म कलतक धर्मके सम्मानसे जीवित था, उसके शरीरसे राजसत्ताका संरक्षक कवच ही टूट-पडनेसे वह लूला हो गया है! कल जो सम्राट्‌-पदपर बैठे थे वे आज विदेशी शत्रुओंके पैरोंतले रौंधे जा रहे हैं—इस तरहके कई विषयोंकी गूँज इस राष्ट्रीय गीतसे प्रतिध्वनित होती थी। (प्र. १४ देखो)

इस तरह जब यह राष्ट्रगीत लोगोंमें पूर्ववैभव को स्मरण करा कर वर्तमान की दारूण दशा को स्पष्ट कर रहा था, तभी, मानो, आगामी आशा का सितारा चमक उठे और प्रजामें फिरसे नया उत्साह पैदा हो जाय इस लिए देशभर में एक भविष्यवानी फैल रही थी। भविष्य की मन की उडानें ही भविष्य-कथन होती हैं। हिंदुस्थान का अंतःकरण स्वराज्य के लिए बेचैन होने लगा तब इन भविष्यो-में भी स्वराज्य का उल्लेख होने लगा। उत्तरमें हिमालय से लेकर दक्षिणमें रामेश्वर तक बडे बूढे, सभी एकही बात बोलने लगे—'सहस्रों वर्षों-के पहले एक प्राचीन तपोधन मुनिने यह भविष्य कथन किया है कि राज्य-स्थापनासे ठीक सौ बरसों के बाद फिरंगी राजसत्ता का अंत होनेवाला है। भारतीय समाचार पत्रोंने इस भविष्यवानीको बहुत प्रसिद्धि देकर साथ यह भी सूचित किया था कि "कंपनीका राज्य २३ जून १८५७ को अपने शासनके सौ वर्ष पूरा करेगा। इस भविष्यवानीसे भारतमें कई अजीब बातें

साहबसे सलाहकर अपने प्रातकी बागडोर हाथमें ले, युद्ध सामुग्री को जुटाने मे व्यस्त था। इस धर्मयुद्धकी जड पटनेमे इतनी गहरी उतर गयी थी कि वह समूचा नगरही क्रातिदल का एक प्रमुख गढ बन गया था। स्वदेश तथा स्वधर्मके लिए मौलवी, पण्डित जमींदार, किसान, बनिया, वकील, विद्यार्थि सब पथोके लोक बलिदान करने को सिद्ध हुए जाते थे। इस गुप्त क्रातिसगठन का सचालक एक पुस्तकविक्रेता था। कलकत्तेमे तो अवध के नवाब तथा अली नकीखॉने सैनिकोंमें विद्रोहकी बुआई अच्छी तरह की थी, अब फसल काटनेका अवसर ही ताक रहे थे। हैदराबादकी मुस्लीम जमात भी जाग्रत होकर गुप्तरूपसे मशविरे कर रही थी। कोल्हापूर–दरबारके चारो ओर क्रातिकी बयार बह रही थी। नजदीकमे होनेवाले राष्ट्रीय युद्धमें, अपने अनुयायियोंके साथ आकर राष्ट्रीय झण्डेके नीचे खडे होनेको पटवर्धन–रियासते तथा नानासाहबके ससुर सागलीके राजा सिद्ध थे। यहॉ तक कि सुदूर मद्रासमे १८५७ के प्रारंभमें भित्तिपत्रक लगे हुए थे, –'स्वदेशबधुओ तथा धर्मबधुओ उठो, सबके सब उठो! और काफिर फिरंगियोंको यहॉसे भगा दो। उन्होने प्रत्यक्ष न्यायनीतिको पैरोंतले कुचल डाला है और हमारा स्वराज्य छीन लिया है। हमारे देशको मटियामेट करनेपर फिरंगी तुले हुए हैं, तब इस असहनीय अत्याचारसे मुक्त होनेका एक मात्र उपाय है फिरंगियोंसे युद्ध पुकारना। यह स्वाधीनताका धर्मयुद्ध है, न्यायके लिए ठाना हुआ यही वह धर्मयुद्ध! इस युद्धमे जो खेत रहेंगे वे हुतात्मा (शहीद) होंगे; किन्तु इस राष्ट्रीय कर्तव्यसे दूर रहनेवाले कोई पापी दुरात्मा या कायर देशद्रोही हों तो उनके लिए नर्कके अग्निमुख जबडा खोले राह देख रहे है। बधुगण! तुम किसे पसद करते हो? अभी निर्णय करो। अभी!"

भिन्न भिन्न प्रातोमे स्वतत्ररूपसे काम करनेवाले क्रांति–सगठनकर्ताओको जोडनेवाले स्वतत्र प्रवासी प्रचारक भी गुप्तरूपसे काम कर रहे थे। जब तक बने पत्र कम लिखे जाते; और, जो भी लिखने पडते वे गूढ भाषामे और बिना किसी व्यक्तिके नाम के! कुछ समय के बाद अंग्रेज हरएक पत्रको सदेहसे देखने लगे और उन्हे खोलकर पढने लगे। तब अपनी योजनाओ

का गन्ध भी सुराग शत्रुको न मिले इस लिए क्रांतिदलवाले आकडों या अलग रेखाओं की बनी सांकेतिक भाषामें लिखने लगे।*

इस तरह सबदूर सिद्धता हो रही थी ऐसे हि अवसरपर, सैनिकों की धार्मिक भावनाको छेडने की दुष्ट बुद्धिसे उत्पन्न कारतूसोवाली भयंकर भूल अंग्रेजोंने की; जिससे उनके पातकोंका प्याला लबालब भर गया। अपने देशभाइयों के अंतःकरण में धडकनेवाले ध्येय को प्राप्त करने के लिए लडे जानेवाले स्वातंत्र्य-संग्राम में ठीक महुरतपर पहली गोली चलाने का सम्मान प्राप्त करनेकी सैनिकोंमें स्पर्धा शुरू थी। नानासाहब तथा अली-नकीखॉने हर सैनिक-विभागके सिपाहियोंपर किस तरह दबाव रखा था और उनमें देशप्रेमकी लहर लहरानेके लिए फकीर, सन्यासी भेजनेका उपाय कैसे जारी था इसका वर्णन हम पहले कर चुके है। किन्तु अंग्रेजोंने कारतूसोंकी कमीनी कारवाई करनेके कारण हर सिपाही क्रांतिका स्वयं-प्रचारक बन गया और अपने साथीको इस स्वातंत्र्ययुद्धमें शपथबद्ध होनेको उसकाने लगा। इन दो महीनोंमें बारकपुर, पंजाब, महाराष्ट्र, मेरट, अंबाला आदि छावनियोंके सैनिक-विभागोंमें अवधके नवाबके नामसे हजारो पत्र भेजे गये। किन्तु एकसाथ आये इन पत्रोंके बोझसे लदी डाककी थैलियॉ देख अंग्रेज अफसर-खास कर सर जॉन लॉरेन्स-संदेह से सभी थैलियों को जॉचते थे। अब तक सिपाहियों मे एक अजीब आत्मविश्वास दृढ हो गया था। काली नदीके युद्धमें घायल सिपाहियों को जब तोफसे उडा देने की सजा हुई तब अंग्रेजोंने सिपाहियो से पूछा था कि क्यों कर उन्होंने विद्रोह किया? ठंडे दिलसे सिपाहियोंने कहा हम सिपाही एक हो जायें तो गोरे तो ऊंटके मुँह मे जीरेके बराबर होंगे।" अंग्रेजोके हाथ लगा एक पत्र बताता है- "भाइयो। हम खुद ही फिरंगीकी तलवारें अपने बदनमें घोपते हैं, हम सब मिलकर उठें तो विजय हमारी है। कलकत्तेसे पेशावर तक की भूमिमें खुला मैदान हो जायगा।" रातमे सैनिक गुप्त बैठकें करते थे। साधारण सभामें सब प्रस्ताव मान्य किये जाते और अंतरंग-मंडल का निर्णय हर एक पर बंधनकारी समझा जाता था। गुप्त सभामें आते हुए कोई पहचान न ले

---

* इन्नेट कृत सिपॉय रिवोल्ट पृ. ५५.

इस लिए केवल ऑखे छोडकर मुंह वस्त्रसे ढँक लिया जाता था। सभामें अंग्रेजोंके देशभरमे किये अत्याचारो का किस्सा बयान किया जाता था* षडयंत्रियोंसे किसी का नाम शत्रुको बताने का संदेह किसीपर हो जाय तो उसे प्राणदण्ड की सजा दी जाती। सब को विचारों का आदान प्रदान करने का सामूहिक अवसर प्राप्त हों इस लिए अलग अलग कंपनियॉ त्योहारों, उत्सवोंपर अन्य कंपनियो को दावत देतीं और इस बहाने सैनिकोंके स्नेहसम्मेलन बडी सफलतासे संपन्न होते। चुने हुए सैनिकोंकी बैठक सूबेदारके घरपर होती थी। सेना के नये रंगरूट को भी समझाया गया था कि राजनैतिक तथा धार्मिक आक्रमण किस तरह होते हैं। हर सिपाही अंग्रेजोंसे टकराने को उत्सुक था। फिर भी, कब, कैसे और कहॉसे प्रारंभ किया जाय तथा भिन्न भिन्न टोलियोंके नेता कौन होंगे इस विषयमें उन्हें कुछ भी जानकारी न दी जाती। इसका दायित्व अफसरोंपर था। हरएक सैनिक, अपनी इच्छासे, गंगाका पानी या तुलसीदल हाथमें लेकर या कुरान उठाकर शपथ लेता था कि कंपनी जो करेगी वह करने को वह बाध्य है। इस तरह पूरी कंपनी शपथबद्ध हो जाती, तब उस कंपनी के नेतागण दूसरी कंपनीके नेताओंसे बातचीत चलाते और अपनी अपनी ईमानदारी का प्रमाण देकर संयुक्त यत्न शुरू करते। सिपाहियोंके शपथोंके समानही कंपनियोंमें आपसमें होनेवाली शपथें भी अटल और अंतिम मानी जाती थीं। समूचे संगठनमें एक कंपनी एक इकाई होती थी। आगे चलकर अंग्रेजोंने इस विषयमें बहुत सामग्री जमा की। और उसी के आधारपर श्री. विल्सनने सरकारी विवरण मे लिखा है: " मुझे निश्चय मालूम होता है कि, ३१ मई १८५७ यही दिन सामूहिक उत्थान के लिए मुकर्रर था। हर कंपनीमें तीन जनोंकी एक समिति होती थी और यही समिति विद्रोह

* (स. १६)....१ के कृत इंडियन म्यूटिनी प्रथम खण्ड पृ. ३६५

२. " सचलनभूमि (परेड ग्राऊंड) पर लगभग १३०० व्यक्ति जमा थे। उनका सिर और मुंह जरासे हिस्से को छोड ढँके हुए थे। अपने धर्मपर बलिदान होनेकी बातें वे कह रहे थे–" नॅरेटिव्ह ऑफ इंडियन म्यूटिनी पृ. ५.

की व्यवस्था देनी थी। इसलिए, सैनिक क्या सोचते थे इस की कल्पना-तक न थी। आपसमे इस सेना-विभागोंने तय कर लिया था जो एक कंपनी करे वही दूसरी करेगी'। यह समिति महत्त्वपूर्ण योजनाएँ बनाने तथा आवश्यक पत्रव्यवहार करने का काम करती थी। इस पद्धतिसे निर्णय किया गया था, कि ३१ मई ही उत्थान का दिन सब सिपाही जाने। वह दिन रविवार का था। जिससे बहुतेरे गोरे अफसर अनायस गिरजाघर ही में पाये जाएँ। और ये सब बडे अफसर अन्य अफसरोंके साथ कत्ल होनेवाले थे। उसके बाद रवी की मालगुजारी के वसूलसे भरा सरकारी खजाना लूटने का इरादा किया। कारागारोंको तोडकर सभी बंदियो को मुक्त करने का निश्चय हुआ था। क्यो कि, उत्तरपश्चिम प्रांतके बंदियोंसे ही लगभग २५०००की सेना खडी हो सकती थी। उत्थानके दिन ही शस्त्रागारो तथा गोलाबारूदके अंबारोपर दखल करना तय हुआ था: और जहॉ हो सके गढो और किलोको भी रोके रखना निश्चय हुआ था। यह थी क्रांतिसंगठनकी रचाई और समूची सेना उसमे हाथ बँटाने को सिद्ध थी।"

इस गुप्त संगठन को आर्थिक सहायता देने को लखनऊके साहूकार, नाना-साहब का खजाना, वजीर अली नकी खॉ, दिल्लीका राजमहल और क्रांतिकारी बडे नेता समर्थ थे। सैनिक जब उपर्युक्त आयोजनोंपर गुप्त मशविरा करते तब एक बिलकुल छोटीसी भूल के कारण किसी नराधम के द्वारा कुछ गुप्त बाते खुल गयी। तब सरकारी आज्ञा जारी हुई कि सिपाही विद्रोही होनेका संदेह जहाँ भी हो वहॉ समूची रेजिमेंट तोडकर सैनिको को भगा दिया जाय। वाह जी! यह तो बहुत अच्छा हुआ! नेकी और पूछ पूछ? क्यो कि क्रांतिकी ज्वालाको फैलाने के स्वयंसेवक, प्रचारक संन्यासी, सरकारही स्वय दे रही है। क्रांतिदलके नेताओंने बडे परिश्रमसे भिन्न भिन्न रियासते, सर्वसाधारण जनता तथा सेना इस त्रयीका सुंदर समन्वय कर रखा था। हॉ, मुल्की अधिकारी इसमे से छूट गये थे। किन्तु इन्ही हाकिमोंने आगे चलकर क्रांतिकार्यमे क्या क्या महत्त्वपूर्ण कार्य किये थे इसकी सिलसिलेवार जानकारी देना आवश्यक है। नंबरदार-पटवारोंसे लेकर ऊँची अदालतके न्यायाध्यक्षोंतक हिंदु मुसलमान सभी अधिकारी, वकील, कारिंदे सबके सब इस क्रांतिसंगठनमे गुप्तरूपसे

साहाय्यक थे। सरकारको इस असीम वर्गके लोगोका क्रांतिकी ओर झुकाव तथा चेष्टाओंके बारेमें जराभी संदेह क्योंकर न हुआ इसका कारण बहुत सरल है। ये ही तो सरकारकी ऑखें थी जिनके द्वारा उन्हे प्रकाश मिलता था न! इनपरहीं तो सरकारको निर्भर रहना पडता था न! और इन लोगोंने यह ठान ली थी कि इस नाजुक क्षणके आ पहुँचने तक सरकारसे जरा भी विरोध न दिखाया जाय। यहॉ तक कि जब किसी क्रांतिकारी नेताको पकडनेका काम उनके सिर आता, तब उससे चुपचाप पूरी सहानुभूति रखनेवाले ये हिंदी अधिकारी, किसी अंग्रेज हाकिमके समान बडी क्रूरतासे उससे पेश आते और कडा दण्ड भी देते। मेरठके सिपाहियोंका मुकदमा चला तब इन्ही हिन्दी न्यायधीशोने उन्हे भयंकर कठोर दण्ड दिया, किन्तु बादमें पता चला कि येही न्यायाध्यक्ष तथा अन्य कर्मचारी क्रांतिके पृष्ठपोषक थे। लखनऊके हर चौराहेमें, जनताको चेतावनी देनेके लिए ज्वलत भाषामें लिखे गुमनाम पर्चे दीवारोंपर चिपकाये जाते। उनसे एक बानगी यहॉ हम देते है:—

"हिंदुमुसलमान भाइयो उठो, और आपसके सहयोगसे भारतके भविष्यका एक बार निर्णय कर डालो। क्यों कि, एक बार यदि यह अवसर हाथसे निकल जाय तो जीना भी भारी हो जायगा यह निश्चय मानो। इससे यही मौका है। ध्यान रहे, इस बार नहीं तो कभी नही।" अंग्रेज अधिकारी पूरी तरह जानते थे कि ऐसे परचे प्रतिदिन नये चिपकाये जाते थे, फिर भी उन्हे फाड डालनेके बिना उनसे कुछ न बनता। क्यो कि, एक पत्रक जहॉ फाडा चुका वहॉ दूसरा दिखायी देता। पुलीसने साफ कह डाला था, कि इन पत्रकोंको कौन चिपकाता है इसे ढूंढ निकालना हमारी बुद्धिके बाहरकी बात है। हॉ, बादमें अंग्रेजोको पता चला कि स्वयं पुलीसके आदमीही क्रांतिदलके सदस्य थे।*

केवल रूसी क्रांतिहीमें नहीं, भारतीय क्रांतियुद्धमें भी पुलीस जनताके साथ पूरी सहानुभूतिसे पेश आती थी। क्रांतिके गुप्त सगठनका पहिया अब बडे वेगसे घूमने लगा था, सो, यह आवश्यक कार्य था कि भिन्न

---

* रेड पॅम्फ्लेट भाग २.

भिन्न चक्रोंकी गति एक ही लयमें चलती रहे। इसी उद्देशसे बंगालमें एक क्रांतिदूत हाथमें लाल कमल लेकर सैनिक शिबिरमें चुपचाप घुस पडा। उसने वह लाल कमल एक कंपनीके सूबेदार मेजरके हाथमें थाम दिया, उसने अपने सहायकको दिया और इस तरह वह रक्तकमल हर सिपाहीके हाथसे गुजरा और अंतिम सिपाहीने इसे क्रांतिदूतको लौटा दिया। बस, काम हो गया! एक शब्द भी बिना बोले यह क्रांतिदूत तीरके वेगसे निकल जाता और मार्गमें दूसरी कंपनीके हिंदी मुख्य अधिकारीके पास दे देता। इस तरह काव्यमय बना यह रहस्यपूर्ण क्रांतिसंगठन एकमात्र रक्तमय विचारसे भर जाता। मानो, यह रक्तकमल क्रांतिकी अंतिम राजमुद्रा ही थी। इसकी कल्पनातक नहीं की जा सकती कि इस रक्त-कमलको छूतेही सैनिकोंके मनमें किन भावोंका बवंडर पैदा होता था। सचमुच, किसी उच्च श्रेणीके वक्ता भी अपनी अमोघ वक्तृतासे जिस वीरभावको जगानेमें असफल होंगे उस वीरभावका संचार इन लडाकू सैनिकोंमें उस निर्वाक् रक्तकमलने अपनी लालिमाकी वक्तृतासे कराया। *

कमलपुष्प! शुचिता, यश एवं प्रकाशका कवियोंसे माना हुआ काव्यमय प्रतीक! और उसका रंग? रक्तोज्वल! इस पुष्पके केवल स्पर्श ही से हृदयपुष्प विकसित हो उठता है। सैकडो सैनिकोंके हाथों जब यह कमल-पुष्प एक दूसरेके हाथमें पहुँचाया गया होगा, तब इस पुष्पके मूक संदेश में बहुत गहरा, गूढ अर्थ तथा महान् साधनाकी स्फूर्ति निःसंदेह सूचित की जाती होगी! इस रक्तकमलने, सचमुच सबके अंतःकरणोंको साधा। क्यों कि बंगालके सिपाही और किसान एक ही बात बोलते थे— " सब कुछ लाल हो जायगा! " और यह कहते समय उनकी आँखें ऐसी चमकतीं जिससे तुरन्त निश्चय हो जाता कि बहुत गहरा अर्थ भरा होगा। " सब कुछ लाल हो जायगा "—किन्तु किसके हाथों? +

* (स. १७) नॅरेटिव्ह ऑफ म्यूटिनी पृ. ४ (साथ इस पुस्तकमें उस विख्यात रक्तकमल पुष्पका चित्र भी मुद्रित है)

+ ट्रेव्हेलियन कृत 'कानपुर'

इस रक्तकमलने तथा उसकी तहमें मुद्रित भावने हर व्यक्तिके हृदयमें एकही ध्वनि गूँजा दिया था। किन्तु देशभरमें फैले प्रमुख क्रांति–केन्द्रोंमें भी इसी तरहकी सामान्य साधना तथा शुद्धभावनाको जागृत रखनेके लिए उन्हें बार बार भेंट देना आवश्यक था। इस लिए ब्रह्मावर्तका राजमंदिर छोड क्रांतिसंगठनकी शृंखलाकी भिन्न भिन्न कडियोंको साधनेके उद्देशसे नानासाहब बाहर निकले। उनके भाई बालासाहब तथा आकर्षक व्यक्तित्वका वाक्चतुर मंत्री अजीमुल्ला भी साथ थे। किसलिए निकले थे ये? हाँ, 'तीर्थयात्रा'के लिए! सचमुच एक ब्राह्मण और एक मुसलमान हाथमें हाथ दिये तीर्थक्षेत्रको जा रहे है! क्याही, अनोखा प्रसंग है!

१८५७ की यह बात है। "बाबास्थानों' को एक बार जाना आवश्यक ही था न! इससे सबसे पहले वे दिल्ली पहुँचे। वहाँ, सलाह–मशविरेके समय किस बातपर अधिक जोर दिया गया था यह तो दीवान–ई–खास या शायद उस समयका दिल्लीका वातावरण ही बता सकता है। ठीक इसी समय आगरेसे कोई न्यायाध्यक्ष श्री. मोरेल नानासाहबसे मिलने आया था। नानासाहबने उसका बडा शानदार स्वागत किया। उस बेचारे को क्या पता था कि दो एक महीनोंमें अंग्रेजों का कुछ और ही तरीकेसे स्वागत करनेके उद्योगमें नानासाहब व्यस्त थे। दिल्लीके सब प्रबंध को अपनी आँखो देखकर नानासाहब अंबाला गये। १८ अप्रैल को सबसे महत्त्वपूर्ण बने क्रांतिकेन्द्रमें–लखनऊमें–पहुँचे। उसी दिन लखनऊमें एक घटना हुई थी। वहाँ के चीफ कमिशनर सर हेन्री लॉरेन्स की फिटनपर लोगोंने हमला कर रोडे और कीचड फेंके थे। और उसी दिन नानासाहब का आगमन हुआ था। इससे लखनऊभरमें एक अनोखे आनंद तथा जागृति की लहर फैल गयी थी। लखनऊके मुख्य मुख्य मार्गोंसे नानासाहबका विशाल जुलूस निकाला गया, जनतामें अपने होनेवाले सेनापतिके दर्शन होनेसे एक अनोखा आत्मविश्वास झलकने लगा। नानासाहब स्वयं सर हेन्री लॉरेन्ससे मिलने गये और बातचीतके दौरानमें योंही कह गये कि लखनऊकी सैरके लिए ही उनका आना हुआ है। लॉरेन्सने अपने साथी कर्मचारियोंको आज्ञा दी कि वे नानासाहबका अच्छी तरह सम्मान करें। बेचारा लॉरेन्स! नानाकी

सैर किस प्रकारकी थी, उस गरीबको क्या कल्पना थी ? लखनऊसे नानासाब काल्पी पहुँचे। इसी बीच जगदीशपुरके कुँवरसिंहसे नानासाहबका गुप्त पत्रव्यवहार जारी था, साथ साथ राजनैतिक गतिविधीके सूत्रोंको जुडाया जाता था।* इस तरह दिल्ली, अबाला, लखनऊ, काल्पी आदि केन्द्रोंके नेताओंसे मिल तथा आगामी सग्रामकी निश्चिति कर और रूपरेखा समझा कर अप्रैलके अन्तमें नानासाहब बिठूरको लौटे।+

उधर प्रमुख नेताओंसे मिलकर क्रातिके उत्थानका महूरत निश्चित करने की दृष्टीसे तथा सब कार्योंमे मेल पैदा करनेके लिए नानासाहब यात्रा कर रहे थे; उधर जनता भी 'उस दिन' के लिए पूरी सिद्धता करे इसलिए क्रातिदूतों की एक गुप्त अनोखी मण्डली यात्राके लिए निकल पड़ी थी। ऐसे तो यह सूझ नयी न थी। जब जब क्रातिका कार्य इस देशमें शुरु हुआ तब तब इन क्रातिदूतोंने—चपातियोंने—देशभर के कोने कोनेमें क्रांति-संदेश पहुँचाने का काम अवश्य किया था। क्यों कि, वेलूरके 'विद्रोह' मे भी चपातियोंने अपना हाथ बँटाया था। देशके सुदूर कोनेमें अपने अदृश्य पाखोंसे उडते हुए, ये देवदूतिकाएँ अपने ज्वलन्त सदेशसे देशके हर व्यक्ति का अतःकरण चेताने का काम करती थीं। ये कहाँसे आतीं

---

* रेड पॅम्फ्लेट

+ इस यात्रामें नानासाहबने बहुत स्थानोंको भेट दी होगी, किन्तु जब कि, अंग्रेज ग्रथकार उसका जिक्र टालते है तो हम भी उन्हे छोड देते हैं। हॉ, यह उद्धरण विशेष महत्त्वपूर्ण है।

उसके बाद उस महान् जोडीने (नानासाहब और अजीम) पर्वतीय यात्रा के बहाने (मेन ट्रंक रोड) सीधे राजमार्गके सभी छावनियोंको भेट दी और अबालेतक पहुँच गये। यह सूचित किया जाता है कि उनके शिमले जानेमें यह हेतु था कि पर्वतीय छावनियोंके गोरखा सैनिकोंमें अशान्ति पैदा कर दी जाय। किन्तु अंबाले पहुँचनेपर जब उन्हें पता चला कि उन पलटनोंका बडा हिस्सा वहींके छावनियोंमें आ गया है तो उनका काम न बना और आगे जाना इस बहाने टाल दिया कि वहाँ ठढ बहुत है। —रसेल की डायरी। (स. १८ देखो)

और किधर चली जाती इसकी किसीको कानोंकान भी खबर न थी। हाँ, जो लोग इस विचित्र चिन्होंके आगमन की राह देखते थे, उन्हे ये चपातियाँ ठीक ठीक गूढ मंत्र सुनाकर गुम हो जातीं, किन्तु जिनके पास ये क्रांति-दूतिकाएँ अचानक पहुँच जातीं उनसे वे लंबी चौडी बातें करतीं, और उन्हें अपना बना लेतीं। कुछ अक्लके दुश्मन सरकारी कर्मचारियोंने इन चपातियों को जब्त कर लिया और बार बार उन्हें तोड मरोड जाँचा। वे मानते थे कि इससे कुछ सुराग पायेंगे। पर खूबी यह थी कि 'बोल' कहते ही किसी टोनहाई के समान अपना मुँह जोरसे बंद कर लेतीं! ये चपातियाँ आम तौरपर गेहूँ या मकेके आटेसे बनती थीं। उनपर कुछभी लिखा न रहता। किन्तु जो जानते थे उन्हे केवल छूनेसे ये चपातियाँ क्रांतिसंदेश पढाकर उत्साहसे भर देतीं! हर गावके चौकीदारके पास यह चपाती होती थी। पहले वह उससे एक टुकडा तोडकर खा जाता और बची हुई चपाती सबको 'प्रसाद' के तौरपर बॉट देता। फिर जितनी चपातियाँ उस गॉवमें पहुँची हो उतनीही फिरसे बन जातीं और ये ताजी चपातियाँ पासके दूसरे गॉववालोंको पहुँचायी जातीं। वहाँ का चौकीदार फिर उसी तरीके मे और गॉवको भेज देता। इस तरह भारतीय क्रांतिकी यह ज्वलन्त अग्निशलाका हर देहात, हर कसबेमें घुसकर क्रांतिकी अग्निसे समूचे देशमे आग जलाती गयी। हाँ, जल्दी करो! क्रांतिदूतिके, जल्दी करो! भारतके सभी सुपुत्रोंको यह संदेश समझा दे, कि सबको स्वाधीन बनानेके हेतु अपने राष्ट्रने पवित्र धर्मयुद्धकी घोषणा की है! चल, क्रांतिदूतिके, आगे बढ! दश-दिशाओंमें चक्कर काट! काली रातमें भी न ठहर! सब ओर वातावरणको भर देनेवाली यह भयंकर पुकार गूँजा दे, कि 'माता, समरांगणको चल पडी है! उठो, सब उठो, और उसकी रक्षा करो'। नगरके फाटक बंद हों तो उनके खुलने तक खडी न रह कर आकाशमार्गसे उडकर अटर चली जा। मार्गमें पर्वतके दर्रे बहुत भीषण हैं कगार कटा हुआ और ढाल है, जंगल डरावने, नदियोंका पानी असीम गहरा है। फिर भी, इन डरावनी रुकावटोंकी पर्वाह न करते हुए यह प्रलयका संदेश लेकर तीरके वेगसे बढ। तेरी तेज गतिपर ही देश और धर्मके जीने मरनेका प्रश्न अवलंबित है। इससे, जितने मील

तुम दौड सको, दौड; पराकाष्ठा कर। वायुको भी मात कर दे। शत्रु यदि तेरी एक देह चूर चूर कर दे तो, हे अनोखी दूतिके, वैसे सैकडो रूप स्वयं निर्माण कर इस राष्ट्रके अस्तित्वके आनबानके समय आगे दौड। तेरी प्रत्येक नूतन देह और आत्मामें हजारो जिव्हाएँ निकलने दे। सबको पुकार। पतिपत्नी, माताबालक, भाईबहन इन सबको, उनके हितुओंको, नातेदारोंको, दैवी योजनासे भागमे बदे इस कामको सफल बनानेके लिए, पुकार! मराठोंके भालों, राजपूतोंके खड्गो, सिक्खोके कृपाणों, मुस्लीमोके चॉदको, सबको आने दे और इस यज्ञसमारोहको सफल बनने दे। पुकार कानपुरकी रणदेवीको! झॉसी दुर्गके सब देवताओंका आवाहन कर। जगदीशपुरके अधिष्ठाताको ले आ। इस क्रांतियुद्धको सफल बनानेके लिए तुरहियॉ, रणभेरियॉ, ध्वज, पताकाएँ, रणगीतों और वीरगर्जन सबको, सबको पुकार! राष्ट्रकी अधिष्ठात्री देवी महामगल समारोहके लिए उतावली हो गयी है; सो, सभी अनुयायियोको निमत्रण दे। सबको मालूम हो जाय कि वह मगल महूरत आ लगा है।"

भाइयो! उठो, कमर कसो और अभागे अत्याचार! तुम भी इस हरीभरी पहाडीपर अपनी उन्मत्त सुखनिद्रासे बाज आकर तथा जरा ऑखे खोलकर अच्छी तरह देख। दूरसे हरीभरी लगनेवाली यह पहाडोंकी चोटी सचमुच ऐसीही होगी यह माननेकी भूल कोई न करे; इसकी कल्पना-तक किसीको नही होती कि पर्वतशिखरपर चलना बडी भयकर भूल होगी। अच्छा; तुम चढो उस शिखरपर! अत्याचारी शासन! रौंधो तुम इस भूमिको! अब १८५७ का वर्ष दमकने लगा है; अब कुछही क्षणोंमें सब जान जायँगे कि कालिदासका कथन इस समय भारतपर यथार्थ लागू होता है:—

> शमप्रधानेषु तपोधनेषु
> गूढं हि दाहात्मकमास्ति तेजः।
> स्पर्शानुकूला इव सूर्यकान्ता
> स्तदन्यतेजोऽभिभवाद्वमन्ति ॥
>
> —शाकुन्तल (द्वितीयाङ्क, श्लोक ७)

प्रस्फोट

☆

प्रस्फोट

" जिन सैनिकों ने अंग्रेजी शासन को आजतक फैलाया और अुसे बनाय रखने में बल लगाया अुन्हीं सैनिकों की तलवारें आज अंग्रेजों की गर्दनोंपर पड रही थीं। अिस दृश्य से छक्के छूट कर अंग्रेजी शासन मेरठ से भाग कर दिल्ली पहुँचा तब वहाँ बादशाह ने अेक हाथ से अुस का गला घोंट कर दूसरे से अुस का राजमुकुट भी छिन लिया! जिस के मुँह पर मेरठ की स्त्रियाँ भी भरे चौराहे में थूकीं ओर जिस के राजमुकुट आदि अलंकार लोगों ने बलपूर्वक खींच लिये, वह शस्त्रों से आहत, लहूलुहान अंग्रेजी शासन, अपने अंग्रेजी खून से लथपथ, बाल पकड तथा हड्डियों की मालाअें गले में डाल, कराहती, कसकती, कलकत्ते को चल देने के लिअे बेचैन दिखायी देती थी! "

" तप और शान्तिही जिनका धन है; उनमे जला देनेवाला अग्नितेज भी गुप्तरूपसे भरा हुआ है. ध्यान रहे एकबार यह अग्नि छिड जाय तो सारे विश्व को भस्म कर देनेकी सामर्थ्य उसमें होती है ।"

ओ दुनियावाले सुनो ! सहिष्णुता भारत का महान् गुण है अवश्य, किन्तु भारतके इस स्वभावसिद्ध गुणसे अमर्याद लाभ उठाने का दुष्ट षडयन्त्र यदि कोई रचेगा तो, ध्यान रहे, जिस हिदुस्थानके अतःकरण मे सबके साथ सहिष्णुतासे पेश आनेवाली अपरपार क्षमाशीलता भरी है उसी हिदुस्थानके हृदयवेदीमे प्रतिशोधसे प्रज्वलित होनेवाली प्रलयंकर अग्नि भी सुरक्षित है ! महादेव का तीसरा नेत्र जानते है न ? जब तक वह ऑख बद हो तबतक शिवजी बरफ-से ठडे और शात ! किन्तु वह तीसरी ऑख खुली नहीं और समूचे ब्रह्माड को उस की प्रलयकर ज्वालाओने भस्म किया नहीं ! ज्वालामुखी की कल्पना कर सकते हो ? ऊपरसे तो उसका मुँह हरी घासके फर्शसे ढका हुआ होता है । जब उसका मुँह फट जाय तो उससे खौलता हुआ तप्तरस उगलने लगता है ! ठीक उसी तरह शिवजी के तृतीय नेत्र से भी अधिक प्रलयकर हिदुस्थान का जागरित ज्वालामुखी अब भडकने लगा है । तप्तरसके डरावने सोते अब उस के उदर मे खौलने लगे है । स्फोटक रसायन का भी मिश्रण घोंटा जा रहा है और स्वातन्त्र्यप्रेमका स्फुलिंग उसपर गिर रहा है । अत्याचारी शासन ! अबतक अवसर हाथसे नहीं गया. अभी सोच लो । इसमे जरा भी टालमटूल किया तो उद्धत और पीडक शासन को ज्वालामुखीके समान धधकते प्रतिशोध का परिचय प्रस्फोट की प्रचडता से ही होगा: इसमें सदेह नही ।

खण्ड प्रथम समाप्त

खण्ड २ रा

प्र स्फो ट

अध्याय १ ला

हुतात्मा मंगल पांडे

सत्तावनी क्रांतिके विषयमें बनी अनेक आश्चर्यकारी घटनाओंकी तहमें सबसे बडी अजीब बात उस संगठनकी गुप्तता थी। बडे बडे चतुर अंग्रेज शासकोंको भी इस बातका निश्चित पता न चला कि इस महान् प्रस्फोटका मूल क्या था। क्यों कि, क्रांतिका धडाका समूचे हिंदुस्थानभर धधकते हुए भी और एक वर्ष बीत जाने पर भी, उन अंग्रेज शासकोंके मनमें यह बात बैठ गई थी कि 'चरबीसे चिकनी कारतूस ही इस क्रांतिका कारण है'। किन्तु बादमें धीरे धीरे अंग्रेजों पर यह बात खुलती गई कि काडतूसोंका मामला तो मात्र एक आकस्मिक कारण था। और वे ही अब स्वयं सुनाते हैं कि "स्वधर्म और स्वराज्यके पवित्र हेतुसे प्रेरित होकर ही १८५७ के क्रांतिवीर लडे थे"* अंग्रेजोंकी सजग सत्ता

---

* (स. १९) मॅलिसन् कहता है:— एक बहानेके रूप और इसी रूपमें मात्र काडतूसोंने विद्रोह कराया। षड्यंत्रकारियोंने इन बहानोंसे पूरा

सिरपर होनेपर भी उसे रच भी खबर न होने देकर, नानासाहब, मौलवी अहमदशहा तथा अली नकी खॉने क्रांतिके जालकी बुनाई इतनी कुशलता तथा गुप्ततासे की थी कि, उनको जितना सराहे थोडाही होगा। जिन नेताओंने, सफलताके साथ एक दूसरेकी सहायताके लिए कंधेसे कंधा मिलाकर लडनेकी आवश्यकता हिंदु-मुसलमानोंको जँचा दी, और सैनिक, पुलीस, जमींदार, मुलकी अधिकारी, किसान बनिया, साहूकार आदि जनताकी सभी श्रेणियो तथा स्तरोंके लोगोंको क्रांतिकी कल्पनासे भर दिया, उनके गुप्त-संगठन-चतुरताका कोई जोड नहीं मिलेगा। क्रांतिका यह संगठन पर्याप्त हो गया, उसी समय, बंगालके सैनिकोंपर चरबीसे चिकने काडतूसोंको बरतनेकी सख्ती सरकार

लाभ उठाया और उन्हें यह अवसर इसलिए मिला कि, जैसा कि मैंने सिद्ध करनेकी चेष्टा की है, सैनिकों तथा लोगोंकी कुछ श्रेणियोंका मन इस बातका विश्वास करनेको राजी बनाया गया था, कि हर बातमें उनके विदेशी स्वामियोंका दुष्ट हेतु है।"

मेडली कहता है:—असलमें, चरबीसे चिकने कारतूसोंकी बात तो बहुत दिनोंसे, कई कारणोंसे, लगाये गये सुरंगोंमें जलायी दियासलाईके समान थी।"

"श्री डिजरायलीने तो साफ शब्दोंमे इस मान्यताकी निंदा की कि चिकने कारतूस कभी उस विद्रोहके मूल कारण हो सकते है।"— चार्लस बॉल कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १, पृ ६२९.

इससे एक डग आगे जाकर एक लेखक लिखता है:— यह तो संदेहके परे सिद्ध कर दिखाया है कि, कारतूसोंका डर तो बहुतेरोंके लिए एक बहाना मात्र था! जिन काडतूसोंकी टोपी दॉतसे तोडनेपर अपनी जातिको गँवानेके भयका इतना बतंगड बनाया गया था, उन्हीको, हमसे लडते समय, हमींपर; वेही सिपाही खुलकर चलाते, उनमें कोई हिचकिचाहट न थी।

कर रही थी। यह माना जाता था कि इन कारतूसोका सर्वप्रथम प्रयोग १९ वी पलटनपर होगा। यह फरवरीका महीना था। बंगालमें छावनी डाले पलटनोंसे ३४ वी पलटन विद्रोहको आतुर हो रही थी। यह पलटन तब बारकपुरमें थी। कलकत्तेके पास डेरा डाले अली नकी खॉने इस समूचे पलटनको क्रातियुद्धका मत्र पढाकर शपथबद्ध कर रखा ही था। इसी पलटणकी कुछ कपनियॉ १९ वी पलटनमे कुछ काल तक लायी गयी थी। उस परस्पर सबंधसे वह पूरी १९ वी पलटन क्रांतिके पक्षमें हो गयी थी। अंग्रेजोको इसकी कल्पना तक न थी, जिससे उन्होंने कारतूसी प्रयोगके लिए इसी उन्नीसवी पलटनको चुना और उसपर इस बारेमें सख्ती की। किन्तु, इस समूचे पलटनने उस आज्ञाको साफ ठुकरा दिया और शासकोको चेतावनी दी कि यदि इस विषयमें उनपर सख्ती की जाय तो, अपनी तलवारोसे उसका प्रतिकार करनेमें वे नहीं हिचकिचायेंगे। अंग्रेजी स्वभावके अनुसार इसपर उन्होने 'काले आदमी'को दबाना शुरू किया; किन्तु अंग्रेजोंको तुरन्त होश आया कि यह वह पहलेका "काला आदमी' अब नही रहा। यह सत्य तलवारोकी झनझनाहटने उनके कानमें भर दिया। अंग्रेजोंको, इस अपमानको चुपचाप पी लेना पडा, क्यों कि, सिपाहियोंको डरानेके लिए उनके पास गोरी पलटनें न थीं। इस कमीको पूरी करनेके लिए मार्च महीनेके प्रारभमे बरमा से एक अंग्रेजी पलटन कलकत्तेको लायी गयी। फिर, १९ वी पलटनको तोड देनेकी आज्ञा जारी हुई। इस आज्ञाका प्रथम प्रयोग बारकपुरमें ही करनेका निश्चय हुआ।

किन्तु अपने देशबंधुओके अपमानका यह प्रसंग खुली आखो देख हाथ मलते बैठनेको बारकपुरकी पलटन सिद्ध न थी। और इन सैनिकोंमें मगल पाडेकी तलवार तो अपनी म्यानमें पडी रहनेसे इनकार करने लगी। १९ वीं पलटनके समान ३४ वीं पलटन भी कपनीसरकारकी सेनासे खारिज हो जानेको सिद्ध हो गयी थी। इसके सब स्वदेशभक्त वीर चाहते थे कि समूची पलटन तोड दी जाय तो बहुत अच्छा हो जायगा। विचार-शील और नीतिज्ञ नेताओंने सभी सहयोगियोंकी सलाह लेनेकी दृष्टिसे और एक महीना सब्र करनेका आदेश दिया। और विद्रोह का दिन निश्चित

करने को भिन्न भिन्न पलटनों के नाम बारकपुरमे पत्र भेजे गये। किन्तु मगल पाडे का खड्ग तब तक कहॉ सब्र करता !

मगल पाडे जन्मसे भलें ही ब्राह्मण माना गया हो, वह कर्मसे क्षत्रिय था· और उसे नौजवान शूर सैनिककी हैसियत ही मे उसके साथी जानते थे। समरागणमें असीम साहसी और शूर, चरित्रसे अतीव शुद्ध तथा पापसे दूर रहनेवाले, स्वधर्मपर प्राणोंसे अधिक प्रेम करनेवाले इस तेजस्वी युवक ब्राह्मणवीर हृदयमें स्वदेशकी, स्वाधीनताकी साधना बस जानेसे उसकी सारी देह किसी विद्युत्-शक्तिसे भर गयी थी। ऐसे वीरकी तलवार क्यों कर पडी रहे ? हॉ, हुतात्मा (शहीद) की तलवारें तो कभी पडी नहीं रहती। हुतात्माका दीप्तिमान् मुकुट केवल उन्हीं वीरोंके मस्तकपर विराजमान होता है, जो जश-अपजशकी पर्वाह न करते हुए अपनी प्रिय साधनाको अपने उष्ण रक्तमे नहलाते हैं। यों इस 'व्यर्थ' की बलिके खूनमें से ही विजयकी निर्मल मूर्ति साकार हो उठती है। अपने धर्मबधुओंपर अत्याचार होगा इस खयाल ही से मगल पाडे का हृदय व्यथित हो उठा और उसने हठ पकडा कि तुरन्त सारी पलटन विद्रोह कर दे। जब उसे पता चला कि अपने इस अनुरोधको क्रांतिदलके नेतागण नहीं मानेंगे तो वह आपेसे बाहर हो गया। तुरन्त उसने एक भरी राइफल उठाई· और सचलनभूमिकी ओर यह चिल्लाते हुए दौड पडा, " भाईयो ! उठो, उठो, किस सोचमें पडे हो ? उठो, तुम्हे तुम्हारे धर्मकी सौगध है। आओ, स्वाधीनताके लिए इन कमीने शत्रुओं-पर टूट पडे।" सार्जट मेजर ह्यूसनने जब यह सब देखा तब उसने सिपाहियोंको आज्ञा दी कि मगल पाडे को गिरफ्तार किया जाय। कोई सिपाही मगलपाडे को छूनेका साहस न कर सका, हॉ, पाडेकी राइफलसे गोली छूटी और गोरे अधिकारीकी लाश भूमिपर फडकने लगी। इसी क्षण, ले. बॉग्ह वहॉ आ पहुँचा। सचलन भूमिपर पहुँचते पहुँचते पॉडेकी राइफलसे और एक गोली चली और इधर लेफ्टनट साहब अपने घोडेके साथ भूमिपर गिर पडे। मगल पाडे अपनी रायफल फिरसे भर रहा था, इतनेमे यह अफसर सँभलकर उठा और अपनी पिस्तौल मगल पाडे पर तानी। पाडेने इसकी जरा भी चिंता न करते हुए अपनी तलवार उठाई

और गोरेपर झपटा । ऑन्हने गोली चलायी, पर निशाना चूक गया; तब उसने भी तलवार सँवारी, किन्तु इतनेमें पांडेने ध्यानसे वार किया और लेफ्टनट साहब धराशायी हो गये। फिर और एक गोरा पांडेपर झपटा; त्यों ही एक सैनिकने अपनी बदूककी नली उसके सिरमें दे मारी। "खबरदार, पांडे के पास कोई न जाने पावे", सभी सैनिक एक साथ चिल्ला उठे, तुरन्त कर्नल व्हीलरने मगल पाडेको गिरफ्तार करने को कहा। फिर सिपाही चिल्लाये, "इस परम पवित्र वीर का बाल भी बाँका न होने देंगे" अंग्रेजी खूनका बहाव और सैनिकों की विद्रोह-वृत्ति देख कर्नल व्हीलर वहाँसे हट गया और सेनापतिके निवास की ओर दौड पडा। इधर खूनसे रगे अपने हाथों को ऊँचा कर मगल पाडेने पुकारा —"भाइयो! उठो! उठो!" सेनापति हीअर्सने जब यह सुना तो गोरे सैनिको को साथ ले वह पाडे की ओर बढा 'अब मैं फिरगी के हाथ पड जाऊँगा; इससे मौत हजार दरजे अच्छी है' इस विचारसे बेहोश होकर मंगल पाडेने अपनी राइफल अपनी छातीपर दागी। घायल होकर वह भूमिपर गिर पडा। उसे उठाकर रुग्णालयमें पहुँचाया गया, अंग्रेज अफसर भी इस शूर सैनिककी बहादुरीसे हैरान होते हुए अपने स्थानो को लौट पडे। यह घटना २९ मार्च १८५७ को हुई।

आगे चलकर सैनिक न्यायाध्यक्षोंके समक्ष मगल पाडेका मुकदमा चला। तहकिकातमें उसे डाँटा गया कि उसके साथी षडयंत्रकारियोंका नाम वह बता दे। किन्तु उस धीर युवकने किसीका नाम देनेसे इनकार कर दिया। साथ यह भी कहा, कि उसने जिन गोरोंको मारा था उनसे किसी तरह व्यक्तिगत कोई द्वेष न था। यदि मगल पाडेने अवसर पाकर अपने व्यक्तिगत कीने का प्रतिशोध लेनेके लिए गोरोंको मारा होता तो उसका नाम शहीदोंकी टोलीमें नहीं, क्रूर हत्यारोंमें लिखा जाता। किन्तु मगल पाडेका यह काम एक ऊँची और उदात्त साधनाकी लगन की प्रेरणासे हुआ था। गीताके उपदेशपर—लाभ अलाभ, जय पराजयकी चिंता न करते हुए लडो,—चलते हुए स्वधर्म और स्वराज्यकी रक्षाके हेतु उसकी तलवार उठी थी। स्वधर्म और स्वराज्य-पर होनेवाले अत्याचारोंको खुली आँखों देखनेकी अपेक्षा मौत गले लगाना अच्छा है इसी निश्चयसे वह बाहर निकला था। उसके इस साहस-

पूर्ण कामकी तहमें होनेवाली उसकी देशभक्ति तथा वीरता तो, नितात सराहनीय है! मगल पाडेको फॉसीकी सजा दी गयी। ८ अप्रैलका दिन मुकर्रर हुआ। हुतात्मा के खूनमें चाहे जिस दिव्य स्फूर्तिका सोता होता हो, हमारे मनमे तो केवल उनके नामही से ऊँचे भाव उमडते हैं, तो फिर शहादतको गले लगानेके लिए उत्सुक उस हुतात्माको अपने सामने जीता जागता खडा देख उसपर असीम श्रद्धा रखनेवाले जनोंपर उसकी कितनी गहरी छाप पडती होगी? इसमे क्या आश्चर्य, कि मगलपाडेके दर्शन जिन लोगोको हुए उन्हे उसके बारेमे दिव्य प्रेम तथा भक्तिभाव का अनुभव हुआ होगा। समुचे बारकपूरमें मगल पाडेको फॉसी देनेवाला एक भी जल्लाद न मिला। आखिर उस हीन कार्यको करने के लिए कलकत्तेसे चार जल्लाद बुलवाये गये। दिनाक (तारीख) ८ अप्रैल को सबेरे ही सैनिकी सरक्षणके साथ फॉसी के तख्तेपर पहुँचाया गया। वह वहॉ शानसे वध–स्तभ की सीढियों पर चढा। जब वह चिल्ला चिल्लाकर कह रहा था कि "अपने सहयोगी षडयत्रिकारियोंके नाम इस मुँहसे कभी नहीं निकल सकते" तभी उसके गर्दनपर फॉसीका रस्सा दबाया गया और मगल पाडेकी दिव्य आत्मा अपने अचेतन कलेवर को यहीं छोडकर स्वर्ग सिधारी!!

क्रातियुद्धकी पहली भिडन्त यहॉ हुई और इस तरह उसकी पहली बलि होनेका सम्मान मगल पाडेको प्राप्त हुआ। मगल पांडे! जिस हुतात्माका खून क्रातिके बलिदानकी परपरा पैदा करनेवाला सोता है, उसके नामकी अमर स्मृति हमारे अंतःस्तलमे सदा सुरक्षित होनी चाहिये। गत तीन वर्षोंसे अधिक समय रुझाये हुए स्वातत्र्यके बीजको मगलपाडेके उष्ण रक्तकी सिचाई पहलेपहल प्राप्त हुई। जब इस बीजका वृक्ष लहलहायगा तब कहीं इस महान् धैर्यशील वीर, जिसने इसे सबसे प्रथम सींचा, को भूला न जायँ।

हॉ; मगल पाडे स्वर्ग सिधारा किन्तु उसकी प्रेरणा तो भारतभरमे भिद गई और जिस सिद्धान्तके लिए वह लडा वह अमर हो गया। क्रांतिके लिये उसने अपना लहू बहाया; साथ उसने अपना नाम भी उसपर

अंकित कर दिया। स्वधर्म और स्वराज्यके लिए लडे गये १८५७ के युद्धके सभी क्रांतिकारियोंको शत्रुओं तथा मित्रोंने 'पांडे' नाम दिया।* प्रत्येक माता अपने बालकको, गर्वके साथ, इस हुतात्माकी कीर्तिगाथा रसपूर्वक समझा दे।

* देखो स. २०.
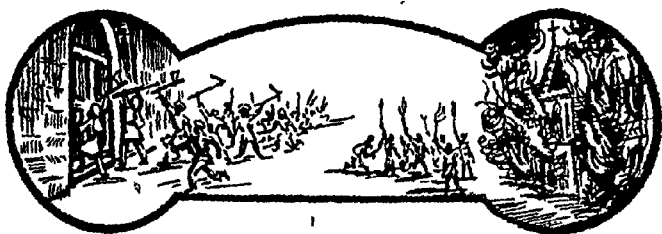
अध्याय २ रा

मेरठ

मंगल पांडेके लहूसे सींचा हुआ हुतात्मापनका बीज अंकुरित होनेके लिए बहुत देर तक रुकना न पडा। ३४ वीं पलटनके सूबेदारको इस लिए दोषी ठहराया गया कि वह रातमें क्रांतिकी गुप्त बैठकें बुलाता है, और उसे कत्ल कर दिया गया। और जब १९ वीं और ३४ वीं पलटनें विद्रोहकी गुप्त योजनाएँ कर रही थीं इसका लेखी प्रमाण मिला तब उनके सैनिकोंको निःशस्त्र कर भगा दिया गया। सरकारके मनसे तो यह 'दण्ड' दिया गया था; किन्तु उन सिपाहियोंने इसे अपना सम्मान माना। उस दिन गोरी पलटनोंको तैयार रखा गया था। अंग्रेज सेनाधिकारी मानते थे कि जल्द ही अपनी मूर्खतापर ये सैनिक पस्ताएँगे कि व्यर्थमें बेकार होना पडा। किन्तु उन हजारों सैनिकोंने किसी घिनौनी और अछूत वस्तुके समान अपने तलवारोंको आनंदसे डाल दिया और गुलामीकी जंजीरोंको तोडनेका सुख पाया। उन्होंने अपनी वर्दियोंको खींच-फाडकर निकाला, बूटोंको फेंक दिया और, मानो, दासताका पाप धो डालनेके लिए पासकी नदीमें नहाने दौडे। उस समयकी प्रथाके अनुसार सिपाहियोंको अपनी टोपियाँ अपने जेबसे खर्च कर खरीदनी पडती थीं, इससे कंपनी सरकारने टोपियाँ उनके पास रहने दीं किन्तु पापसे मुक्त होनेके लिए नदीमें नहानेके पश्चात् इस पराधीनताके चिन्हको सिर-पर चढानेको वे कहाँ राजी थे? छिः! ऐसा निंदनीय काम करनेकी किसकी कामना होगी? दूसरेकी टोपियाँ पहनकर अकडनेके दिन अब फिरसे इस

भारत न आएँगे! तो फिर फेंक दो उन गुलामीके चिन्होंको! हजारों टोपियाँ आकाशमें उडीं; किन्तु गुरुत्वाकर्षणके अटल नियमसे वे फिर भारतभूमिपर ही गिर पडीं! अरे, हिंदमाता फिरसे अपवित्र हो गयीं? सैनिको दौडो, जल्दी करो और अंग्रेज अधिकारियोंके समक्ष इन दूसरे दास्यचिन्होंको फाडो, तोडो, मिट्टीमें पटककर पाँवतले रौंदो! सैकडों सिपाही अपवित्र टोपियोंको पैरोंतले कुचलने लगे। यह तो प्रत्यक्षरूपसे सरकारी सत्ताका अपमान था। सिपाहियोंका यह टोपियोंपर नाचना देख, क्रोध तथा आश्चर्यसे अंग्रेज अधिकारी हैरान हो गये। *

मंगलपांडेके खूनसे बंगालहीमें नहीं, दूसरे छोरपर अंबालेमें भी क्रांतिकी तीव्र लहर पैदा हुई। गोरोंकी प्रमुख छावनी अंबालेही में थी और सेनापति ॲन्सन उस समय वहाँ था। अंबालेके सैनिकोंने एक नयी तरकीब सोची थी, कि जो भी अफसर उनके विरुद्ध हो उसका घरही जला दिया जाय। फिर क्या था? हर रातमें देशद्रोही तथा उपद्रवी सेनाधिकारियोंके घरोंमें आगका अवांछित आगमन होता। यह आग सुलगानेका काम इतनी गुप्ततासे और झटपट होता, मानो, अग्निदेवता स्वयं इस गुप्त संगठनका सदस्य बने हो। आग लगनेकी तो धूम मच गयी, और हजारों रुपयोंका इनाम, 'आग लगानेवाले बदमाशको पकडा देनेके लिए,' सरकारसे घोषित होनेपर भी, एक भी क्रांतिकारीने मुखबिर बननेका पाप न किया। अन्तमें सेनापति ॲन्सनने गवर्नर जनरलको लिखाः—यह तो एक पहेलीसी बन गयी है, कि आग कैसी लगती है इसका पता नहीं चलता। हर एक जन आँखोंमें रात काटता है, फिर भी इन उपद्रवोंके जनकको जानना पूरेपूर असम्भव हो गया है।' अप्रैलके अंतमें फिर उसने लिखा, "मुझे भी यह बडा अजीब मालूम होता है कि अंबालेकी आगोंका मूल हमें नहीं मिल रहा है। किन्तु एक बात स्पष्ट होती है, कि उनपर हुए अत्याचारोंका बदला लेनेके लिए जिन्होंने इस भयंकर तरीकेका अवलम्बन किया है, उन 'दुष्टों'में भी कितना अभेद्य संगठन है और यदि कोई भेदिया बन जाय तो उसे मिलनेवाले भयंकर दण्डका डर, लोगोंके

* रेड पॅम्फ्लेट, खण्ड १, पृ. ३४

मनको कैसे दबोच बैठा है!" अंग्रेजी शासनका बल तो भारतमें भेदियोंकी हस्ती ही है। और इसीसे, अंबालेमें एक भी विश्वासघाती न मिला तो सेनापति ॲन्सनके हाथ पॉव फूल गये। मनहीमन इन सैनिकोंके गुप्त संगठनपर आश्चर्य करते हुए उनका बदला लेनेकी उधेडबुनमें वह व्यस्त रहा।

इस तरह, यह अग्निकाण्ड भारतमें स्थान स्थानपर चालू हो जानेके संवाद आने लगे। हॉ, अंतिम अग्निप्रलयकी दाव भडकनेके पहले इस तरह इन चिनगारियोंका इधर उधर उडना क्रमप्राप्तही था। नाना-साहबके लखनऊ आनेसे कुछ ऊधम मच गया ही था। यहॉ भी भेदियो तथा विदेशी गोरोके घर आगके मुखमें जा रहे थे। जिन्होने समूचा देश पराधीनताकी श्रृंखलासे जकड लिया था, उन अंग्रेजोंको छटक जानेका किंचित् भी अवसर न देकर यहीं ठढे कर दिया जाय, इस उद्देशसे भारत-भरमें, एक ही साथ दावानलको भडकानेके लिए ३१ मईका दिन निश्चित हुआ था। लखनउकी गुप्त-सभाने क्रांतिदलके कार्यक्रमको यद्यपि अनुमति दी थी, फिर भी वहॉके सैनिक अपने उत्साहको कहॉतक रोके रखेंगे? तिसपर भी गुप्त बैठकोंमें होनेवाले जोशीले भाषण सुनकर और भिन्न भिन्न स्थानपर होनेवाले आगके उपद्रवोके संवाद सुनकर उनको और ही तेहा आ जाता! ३ मईकी बात है, भडकीले चार सिपाही लेफ्टनट मेंशॅमके खेमेमें घुस गये और कहा, 'देखो, तुम्हारे साथ हमारा व्यक्तिगत कोई झगडा नही है, किन्तु जबकि तुम फिरंगी हो, तुम्हारा खात्मा होगा" * जमदूत जैसे विकराल सैनिकोंको देख लेफ्टनट मेंशॅमकी घीग्घी बॅध गयी और वह गिडगिडाकर कहने लगा "तुम्हारी इच्छाही हो तो तुम मुझे एक क्षणमें खतम कर सकते हो। किन्तु, भाई, मुझ जैसे मामूली आदमीको मारकर तुम्हें क्या मिलेगा? मै मारा जाऊँगा तो और कोई मेरी जगहपर तैनात होगा। मतलब, दोष मुझ अकेलेका नहीं, शासनपद्धतिका है; तो फिर मुझपर दया क्यो नहीं करते?"। उसके इस तरह कहनेमे सिपाहियोंका क्रोध

* चार्लस बॉल कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १, पृ. ५२

कुछ कम हो गया: उन्हे यह बात जँच गयी कि अपनी साधना परायी अंग्रेजी राज्यसत्ताको जडमूलसे उखाड फेकना है; अपने नेताओंके इस उपदेशका उन्हे स्मरण हो आया और वे लौट गये। किन्तु यह बात सेनाधिकारियोंतक पहुँच गयी और सर हेन्री लॉरेन्सने चालबाजीसे सारी रेजिमेन्टको निहत्था कर दिया!

किन्तु मेरठमें कुछ दूसरे रूपमें एक सनसनीदार आँधी उठी थी! सिपाही सचमुच काडतूसी मामलेसे चिढते हैं या नही इसे आजमानेके लिए अंग्रेजोंने एक नई तरकीब ढूढ निकाली और उसके अनुसार ६ मईको एक घुडदलके सभी सैनिकोंको काडतूस अनिवार्य करनेका प्रयोग करनेकी ठानी। किन्तु नब्बेमेंसे केवल पॉच सैनिक इन काडतूसोंको छूने-पर राजी हो गये! फिर उन्हें और एक बार काडतूस उठानेका आदेश दिया गया, तब तो सभीने इनकार कर दिया और अपने डेरेको लौट गये। मुख्य सेनापतिको सवाद सुनाया गया। उसकी आज्ञासे सभी सिपा-हियोंको सैनिक न्यायालयके सामने पेश किया गया और पचासी सैनिकोंको आठसे दस साल तककी कडी सजा दी गयी।

यह दिल दहलानेवाला प्रसग ९ मई के दिन हुआ। इन पचासी सैनिकों को; गोरे पैदल सिपाही तथा तोपखाने के बीच खडा किया गया था। हिंदी सिपाहियो को यह दृश्य देखनेको उपस्थित रहने की आज्ञा दी गयी थी। पहले इन पचासियोंके गणवेश (वर्दी) उतारने की गोरो को आज्ञा हुई। उन्होंने गणवेशों को चीर फाडकर उतारा, जिसमें दण्डित सिपाहियोंके हाथ खींचे गये; फिर सबको हथकडियाँ पहनायी गयीं। जिन हाथोंको अबतक शत्रुओंका कलेजा काटने के उपयुक्त तलवारे शोभा देती थीं, उन्हीं हाथोंको अब भारी बेडियोंसे बंदी बनाया। इस दृश्य को देखकर उपस्थित सब सिपाही चिढ गये, किन्तु कुछ दूर तोफखानेको सिद्ध देखकर अपनी तलवारोंको उनके स्थानपर ही दबा रखा। फिर इन पचासी सैनिकों को दस दस सालकी कडी सजा होनेकी आज्ञा सुनायी गयी; उन धर्मवीरोंको भारी बेडियो के बोझसे झुकाते हुए बंदीगृहको दौडाया गया। भविष्यत् कालही इस बातको खोलेगा, कि वहाँ उपस्थित देशभक्त सैनि-कोंने अपने धर्मवीर भाइयोंको क्या क्या सैनें की थीं। इन इशारोंसे

बंदियोंका उत्साह दुगना हो गया। उनकी सैनोसे ऐसा ही कुछ मतलब निकलता होगा कि "जिस विदेशी गुलामीमे गौ और सुअर की चरबीसे चिकने काडतूसो को छूनसे इनकार करनेपर दस दस सालके सश्रम और उग्र दण्डको पाना है, इस गुलामी का पूरी तरह निःपात करेंगे; और केवल तुम्हारी ही नहीं, गत सौ वर्ष प्यारी मातृभूमिके पैरोंमें जकडी हुई पराधीनता की शृंखलाओं को भी हम चकनाचूर कर देंगे।"

हॉं तो, यह सब प्रसग सवेरे हुआ था। अब सैनिको को अपने मनपर काबू रखना असम्भव हो गया, क्यो कि विदेशी शासकोंने इनके समक्ष केवल इस लिए उनके देशबंधुओंको कठोर दण्ड दिया कि उन्होंने मात्र अपनी स्वधर्म–रक्षाके हेतु आत्माभिमान प्रकट किया था। उस अपमान और लज्जासे लज्जित होकर मन ही मन क्रोधसे जलते हुए सैनिक अपने बारकोंमे लौट आये। जब योंही वे बाजारसे गुजर रहे थे तब गॉवकी स्त्रियॉं उन्हे फटकारती रहीं "देखो तो। उनके भाई वहॉं जेलमे सड रहे है और ये मक्खियोका शिकार करने योही खड रहे है। थूः थूः ऐसे जीवन पर। व्यर्थ तुमने अपनी मॉं को कष्ट दिये!"* पहलेही उनका मन दुखी था; अपमानसे उनका अंतर जल रहा था; अब मार्गमे स्त्रियोसे पडी इस मर्मभेदी फटकारसे वे चुप कैसे बैठ सकते थे? उस रातको सैनिक–शिबिरमे जगह जगह अनगिनत गुप्त बैठके हुई। ३१मई तक टहरना अब दूभर हो गया। जब उनके साथी जेलमे सडते हो तब क्या, वे इधर हाथपर हाथ धरे बैठे रहें? जब गॉवके बालक और औरतें 'ये है देश–द्रोही' कह कर उँगली उठाती हो, तब वे अन्य स्थानके सेनिकोंके विद्रोह करने तक कैसे रुके रहें? ३१ मई तो तीन सप्ताह दूर था, फिर क्या, तब तक फिरंगियोंके झण्डेतले वे खडे हो जायें? नहीं, नहीं। कल तो इतवारही है। तब कलका सूरज अस्ताचलको पहुँचनेके पहले देशभक्त बंदियोंकी बेडियॉं टूटनी चाहिए और साथ भारतमाताकी पराधीनताकी बेडियॉं भी चकनाचूर कर, स्वातंत्र्यका झण्डा फहराना ही चाहिए; इस निश्चयके अनुसार, इस सदेशके साथ कि, "हम

* जे. सी विलसन.

११ या १२ मईको वहाँ पहुँच जाते हैं; सब कुछ सिद्ध रहे", तुरन्त दिल्लीको एक हलकारा रवाना हुआ। *

निदान १० मईके रविवार के सूरजकी पहली किरणें मेरठपर पडीं। १८५७ की इस सिद्धताकी अंग्रेजोंको बहुत कम खबर थी; मेरठके सिपाहियोंकी गुप्तमण्डलियोंकी बैठकों की तो उन्हे कानोकान भी खबर न थी; अन्य स्थानोंके सैनिकोंसे उनका जो आदानप्रदान होता था उसके विषयमें तो कुछ भी मालूम न था। इतवारको सैनिक उठे और प्रतिदिनका अपना काम करने लगे। घोडा-गाडियाँ, गरमीसे बचने के लिए ठढी चीजोंका उपयोग, सुगंधित फूल, सैर, गाना बजाना सब कुछ ठीक रोज की तरह मजेसे चल रहा था। कुछ थोडे अंग्रेजोंके घरके नौकर एकाएक काम छोडकर चले गये; इसपर आश्चर्य करनेसे अधिक कुछ न किया गया। इधर सिपाहियोंकी बैठकोंमें, सामूहिक हत्याकाण्ड हो या न हो, इस विषयपर बहस मची हुई थी। २० वीं रेजिमेंट आग्रहके साथ कहती थी कि, "जब गोरे गिरजाघरमें पहुँच जाय तभी उठना चाहिये और हर हर महादेव का नारा लगाते हुए मुलकी और सैनिक अंग्रेजोंको, उनके परिवारके साथ, कत्ल करते हुए दिल्लीको आगे चला जाय।" बहसके अन्तमें यही प्रस्ताव सर्वसम्मत हुआ। गिरजाघरके घंटोंकी घनघनाहटके सुनतेही अंग्रेज अपने बालबच्चोंके साथ गिरजाघरको चल पडे। इधर इस धूमधाममें मेरठ तथा आसपासके देहातोंसे हजारो लोग अपने पुराने शस्त्रोंको लेकर जमा हो रहे थे। देशकार्य के लिए मेरठ के सभी जन सिद्ध हुए; फिरभी अंग्रेजोंके कानोंपर जूँ तक न रेंगी थी। शामको पाच बजे प्रार्थनाके बुलावेका घटा घनघनाने लगा। हाँ, अपने पापोंका हिसाब देनेको करतार के सामने पहुँचने के पहले शायद अंग्रेजोंकी यह आखरी प्रार्थना थी! किन्तु इधर सैनिकोंके शिबिरमें 'मारो फिरंगी को' के भीषण नारोंने वातावरण को भर दिया था।

सबसे पहले सैंकडों सवार देशभक्त धर्मवीरोंको मुक्त करनेके लिए

* रेड पॅम्पलेट

अपने घोड़ोंको बंदीगृहकी ओर दौड़ा रहे थे। बंदीगृहके बंदीपाल भी क्रांति-कारियोंके साथी थे। इशारेका नारा, 'मारो फिरंगीको' सुनतेही जेलोंके फाटक धडाधड खुले और बंदीपाल अपने देशबधुओंके साथ होकर क्रांतिदलमें मिल गया। क्षणभरमें कारागारकी दिवारोंकी इटसे इट बजायी गयीं। उस अकथनीय दृश्यकी कल्पना भी ठीकसे नहीं होती, जब ये मुक्त बंदी अपने मुक्तिदाता देशभक्तोंके गले लिपट गये होंगे। गगनभेदी गर्जनाओंको बुलंद करते हुए, उन विनौने बंदिगृहको पीछे छोड, ये सब वीर गिरजाघरकी ओर घोडे फेंकते हुए चले। किन्तु तब तक एक पैदल पलटन विद्रोह प्रकट कर चुकी थी। ११ वीं पलटनके कर्नल फिनिसने वहाँ आकर सदाके समान अकडकर डॉट डपट देना शुरू कर दिया। किन्तु सिपाही उसपर काल की तरह झपटे। २० वीं पलटनके एक सैनिकने अपनी पिस्तौलसे ठीक निशाना मारा और घोडेके साथ सवारको भूमिपर लिटा दिया। क्या पैदल सेना, क्या तोपखाना, क्या हिंदू, क्या मुसलमान सभी गोरोंका गला घोंटनेको तरस रहे थे। मेरठके बाजारमें यह सवाद पहुँचा और वहाँका वातावरण एकदम भडक उठा, और जहाँ भी जिसे कोई गोरा मिला उसका काम तमाम कर दिया गया। बाजारके लोगोंने तलवार, भाला, लाठी, चप्पू जो भी हाथ लगा उठा लिया और मार्ग मार्गमें अंग्रेजोंका पीछा करना शुरू कर दिया। अंग्रेजोंके बगले, कार्यालयों, सार्वजनीन इमारतों, होटलों में आग लगायी गयी। मेरठका आकाश डरावना और विचित्र दीख पडता था। धुएँके स्तभों और आगकी भयानक लपटोंसे वातावरण व्याप्त होकर सहस्र सहस्र कंठोंके पुकारों और विशेषतः 'मारो फिरंगीको' की गर्जनासे सारी दिशाएँ गूँज उठी। विद्रोह शुरू होते ही, जैसा कि निश्चय था, दिल्लीसे संबंधित तार काट दिये गये और रेल की पूरी तरह मोर्चाबंदी की गयी। अंधेरी रात होनेसे जो अंग्रेज बच गये थे वे अब अपना जी बचाने की सोच रहे थे। कुछ तो अस्तबलमें छिप गये, कुछ एक रातभर पेडोंके नीचे पडे रहे; कुछ अपने घरके कोठेपर छिप गये। कुछ अंग्रेज खड्ड या खाईमें छिपे, कुछ एकने किसानोंका स्वांग बना लिया; कुछ तो अपने बावर्चियों के चरणोंमें लोटकर शरण माँगने लगे। अंधेरा होतेही सैनिक दिल्लीकी दिशामें चल पडे, तो गाँवमें बदला लेनेका

कार्य पूरा करने का दायित्व मेरठके नगरवासियोंने अपने सिर ले लिया। अंग्रेजोंका बदला लेनेकी हवस इतनी पराकाष्ठापर पहुँच गयी थी, कि जब उनके कुछ पत्थर के बने मकान जलाये न जा सके तो उनको ढहाकर चकनाचूर कर दिया गया। कमिशनर ग्रेटहेडका बंगला भी सुलगाया गया। कहते है, कि फिर भी वह छिप रहा था। तब मेरठवालोंने सशस्त्र होकर उसके बंगलेको घेर लिया। तब वह अपने बावर्ची की शरण मे गया और अपने तथा अपने परिवारके प्राण बचानेके लिए गिडगिडाने लगा। निदान, बटलरने लोगोंको भुलवा देकर दूर हटा दिया और उस आगसे ढहते हुए बंगलेसे कमिशनर भाग खडा हुआ। भीडने श्रीमती चेम्बर्सको बंगलेके बाहर खींच लाकर चम्पूसे भोंक दिया। कॅप्टन क्रेगीने अपनी औरत तथा बच्चोंको घुडसवारोंकी वर्दी पहनाकर, उनका रंग नजर न आय उस तरह, एक टूटे मंदिरमें छिपा रखा। डॉ. खिर्स्ती और पशुवैद्य डॉ. फिलिप्स पर हमलाकर उन्हे कत्ल कर दिया गया। कॅप्टन टेलर, कॅप्टन मॅक्डोनाल्ड और ले. हेंडरसन का डटकर पीछा करके उनका काम तमाम कर दिया। कई स्त्रियाँ और बच्चे जलते घरोंमे अग्निमें जल मरे। ज्यो ज्यों अंग्रेजी खूनकी आहुति पडने लगी त्यो त्यों क्रांतिकारियोका आवेश और उग्र बढने लगा। रास्तेसे गुजरनेवाले भी गोरोंकी लाशको लाथ मारकर उनका अपमान करने लगे। शायद किसीको दयासे अंग्रेजोंपर तरस आ जाय तो हजारों लोग वहाँ दौड आते और चिल्ला उठते "मारो फिरंगीको!" फिर वहाँ उपस्थित किसी सैनिककी कलाईके बेडीके चिन्ह बताकर वे चिल्लाते, "इसका बदला अवश्य लिया जाय।" बस, फिर दयाको कोई अवसर न मिलता और तलवारें चमक उठती!

असलमें, क्रांतिके उत्थानकी दृष्टिसे मेरठका क्रम सबके अन्त मे होना चाहिये था। क्यों कि केवल दो पल्टनें पैदलसेना और एक पलटन घुडसवार; बस, इतनीही हिंदी सेना थी, जहाँ एक पूरी रायफल पलटन तथा गोरे ड्रगूनोंकी एक पूरी पलटन वहाँ मौजूद थी। साथमें पूरा तोफ-खाना अंग्रेजोंके वशमे था। इस दशामें सिपाहियों को जश मिलना दूभर था। इस लिए विद्रोहके साथ बदला लेनेका काम मेरठकी जनतापर

पर छोड हिंदी सैनिक दिल्लीको चलने बने; उनको मार्गहीमें रोककर भुन डालना बिलकुल सहज था। किन्तु वहाँ के मुल्की तथा सैनिक अधिकारियोंमें पैदा हुई घबराहट, अनुशासन तथा समयकी सूझका न होना आदि बातोंके लिए अंग्रेज इतिहासकारोंको भी शरमसे अपनी गर्दन झुकानी पडी। हिंदी घुडदलका प्रमुख कर्नल स्मिथ, पता लगनेपर कि उसके मातहत सवारोंने विद्रोह किया है, अपने प्राणोंको बचानेके लिए भाग खडा हुआ। तोपखानेका सेनाध्यक्ष तोपोंको जमा कर उन्हें मोर्चेपर खींच लानेके विचारमें था तब तो विद्रोही सैनिक कब के दिल्लीके मार्गको तय कर रहे थे। फिरभी, सारी अंग्रेज सेना उनका पीछा करनेके बदले रातभर हाथपर हाथ धरे बैठी रही थी।

सत्य यह है कि मेरठमें अचानक क्रांतिकी चिनगारी पड कर वह धधक उठी तो अंग्रेजोंके छक्के छूट गये और वे बावले बने; दूसरे दिन तक इस अनोखे और अचानक विद्रोहके बारेमें वे कुछ तय न कर सके। इधर सैनिकोंका कार्यक्रम पहलेसे निश्चित था। वह यों था:—पहले अचानक हमला किया जाय, बंदिवानोंको मुक्त कर अंग्रेजोंको कत्ल किया जाय, फिर उस अचानक विद्रोहसे अंग्रेज घबडाये हुए हों, तब मेरठके लोग सब ओरसे लूटमार करते और आग जलाते अंग्रेजोंको यह पता न लगने दें कि असलमें विद्रोहका केन्द्र कहाँ है। इससे उनकी अक्ल काम न करेगी, वे अपनी जानकी खैर की टोहमें चूर होंगे, तभी सैनिक दिल्लीके रास्ते चल पडे। यह कार्यक्रम बडे कौशलसे बनाया गया था। पहले, भारतके हृदय दिल्लीपर काबूकर तुरन्त इस सैनिकी विद्रोहको राष्ट्रीय युद्धका रूप दे देना और अंग्रेजोंकी इज्जत तथा रुबाबको धूलमें मिला देना—यह था क्रांतिकारी नेताओंका दाँव, बडा लाजवाब था, इसमें क्या संदेह? चतुरतासे यह कार्यक्रम बनाया गया था और ठीक उसीके अनुसार पूरा भी हुआ। अंग्रेजोंको पूरा हाल मालूम होनेके पहले, तार काटकर, मार्गोंपर मोर्चाबंदी कायम कर, और बंदियोंको मुक्त कर अत्याचारी अंग्रेज शासकोंके खूनसे भूमि रंगाते हुए ये दो हजार क्रांतिवीर सिपाही अंग्रेजी खूनसे रंगे अपने तलवारोंको हवामें फेंककर 'चलो दिल्ली, चलो दिल्ली,' के साथ नारे लगाते हुए अपने मार्गको तय कर रहे थे।

अध्याय ३ रा

दिल्ली

अप्रैलके अतमें श्रीमत नानासाहब पेशवा दिल्लीको भेट देकर आये थे। और तबसे हर एक जन सर्व सम्मतिसे निश्चित ३१ मई इतवार की ओर आँख लगाये बैठा था। ठीक ३१ मईको यदि समूचा हिंदुस्थान उठता तो अंग्रेजी शासनके विनाश तथा भारतीय विजयी स्वाधीनताका सस्मरणीय प्रसग इतिहासमें अंकित करनेके लिए १८५७ के बाद बहुत समय न जाता! किन्तु मेरठके अकालिक विद्रोहने क्रांतिकारियोंकी अपेक्षा अंग्रेजोंको अधिक सुविधा कर दी।* मेरठके बाजारमें तेजस्वी

---

* (स. २१) इतनी बात पक्की है कि, यदि समूचे भारतमें एकाएक विद्रोह फूट पडता और अंग्रेज बेखबर होते, तो हमारे (गोरे) बहुत ही थोडे जन इस वेगवान् संहारसे बच जाते। फिर तो, ब्रिटिश राष्ट्रको फिरसे हिंदुस्थानको जीतना बडा कठिंण कार्य हो जाता अथवा तो हमें अपने पूरबी साम्राज्यके लिए सदाही काला दाग माथे लगा लेना पडता।—मॅलेसन खण्ड ५.

"मेरठके भयकर विद्रोहने हमें एक बडा लाभ अवश्य पहुँचाया। वह यह कि समूचे भारतके सैनिकोंके विद्रोहका निश्चित कार्यक्रम ३१ मईको था, जहाँ इस कुअवसरके उत्थानने हमें समयपर जागरित किया" व्हाइट का इतिहास, पृ. १७

देशप्रेमी स्त्रियोंने अपने मर्मभेदी शब्दोंसे सैनिकोंको छेडा और उन्हे अपने सैनिक बधुओंको छुडवानेको उकसाया, जिससे एक नूतन, गर्वपूर्ण घटनाको इतिहासमें स्थान मिला, यह ठीक है। किन्तु मेरठके सैनिकोंने अपने इस अकालिक उत्थानने शत्रुको चेतावनी देकर अनजाने अपने देशबधुओंको बडे संकटमें फँसा दिया।* दिल्लीमें सभी सैनिक हिंदी ही थे। मगल पांडेकी हुतात्मतासे वे भी बेचैन हो रहे थे। किन्तु बादशाह बहादुरशाह और बेगम जीनतमहलने बडी चतुरतासे सबको रोके रखा था! इसी समय मेरठकी गुप्त सस्थासे यह संदेश उनके पास पहुँचा "हम कल पहुँच रहे है, आवश्यक प्रबंध किया जाय।" यह अनपेक्षित और अजीब सदेश दिल्लीको पहुँचते पहुँचते मेरठके दो हजार सैनिक 'चलो दिल्ली' के नारे जगाते हुए दिल्लीके मार्गको तय भी करने लगे थे। प्रत्यक्ष रात की आँखोसे नींद गायब थी। हजारो घोडोंकी टापों तथा उनकी हिनहिनाहटसे; तलवारो तथा सगीनोंकी खनखनाहटसे मार्ग चलते हुए क्रातिकारियोंके भीषण नारोसे और उनकी भयप्रद कानाफूसीसे, भला, रातकी आँख कैसे झपकेगी? जब पौ फटी तब मेरठका तोपखाना अपना पीछा नहीं करता है यह देख कर बडा अचरज हुआ। सैनिकगण रातकी सब थकावटको भूल गये और रच भी आराम् न करते हुए फिरसे जोर लगाकर रास्ता तय करना जारी रखा। मेरठसे दिल्ली करीब ३२ मील है। सवेरे लगभग ८ बजे मेरट की सेनाका एक हिस्सा परमपवित्र यमुना नदीके पास आ

* (सं. २२) बाजार (मेरठके) की स्त्रियोंने, सचमुच, हमें ३१ मई १८५७ के सगठित और एक साथ होनेवाले कत्लेआमसे बचाया है। सुरगे बिछायी गयी थीं, सिलसिला बाध दिया गया था तथा और तीन सप्ताह तक धीमे जलनेवाली दिया–सलाई जलानेका विचार नही था। स्त्रियोंके मुखसे पडी चिनगारीने उन सुरंगोंको सुलगा दिया और १० मईकी रातने उस भयंकर दृश्यका प्रारंभ देखा, जो अंग्रेजी हुकूमतके नीचे भारत आनेसे, तब तक कभी नहीं देखा गया था।–जे. सी. विलसन कृत ऑफीशियल नॅरेटिव्ह.

पहुँचा। शीतल वायुलहरोंसे, मानो, स्वातंत्र्य प्राप्त करने के काममें लगनसे जुटे हुए वीरोंको और बढ़ावा देनेवाली कालिंदी को देख, सैकडो सैनिकोंने एकसाथ "जय जमुनाजी" का नारा लगाकर जमुनाको वंदन किया। नावोंके उतराते पुलसे दिल्ली की ओर घोडे दौडने लगे। किन्तु, हाँ, क्या सचमुच "जमुनाजी'को इनकी पवित्र साधना का भान था? तो फिर, चलते समय उस पवित्र कार्यको जमुनाको बताकर, तथा उसका शुभाशीर्वाद लेकर आगे बढ़नाही अनिवार्य था। यह बात? तब खींचो उस गोरे को जो पुलपर से गुजर रहा है और हाँ, उस का खून, कालिंदी के काले पानी मे, मिला दो। वही खून उसे उस क़ारण को समझायगा जिस कारणने ये सिपाही इतने जोरोंसे दौडते हुए दिल्ली जा रहे हैं।

नावों का पुल पार कर सिपाही दिल्लीके तट ही से टकरा गये। यह सवाद पातेही अंग्रेज सेनाध्यक्षोंने दिल्लीके सभी सैनिको को सचलन भूमिपर 'एक कतार' होने की आज्ञा दी और उन के आगे 'राजनिष्ठा' पर भाषण झाडना शुरु किया। ५४ वें सेनाविभाग के कर्नल रिप्लेने मेरठी सिपाहियोंका मुकाबला करनेकी सूझ पेश की। उसके सैनिकोंने कहा "दिखा दो हमे है कहाँ वे सिपाही (जो मेरठसे आये है)"। फिर हम उन्हें देख लेते है भाई!" कर्नलने कहा "शाबाश" और यह सेनाविभाग क्रातिकारियोपर टूट पडनेको आगे बढ़ा। कुछही दूरीपर उन्हे मेरठी घुडसवार किलेके रुख दौडते हुए नजर आये। घुडदलके पीछे पीछे रक्तरजित वस्त्र पहने अंग्रेजी खूनकी प्यासी मेरठकी पैदल सेना भी आगे कदम बढाती आ रही थी। दोनो ओर की सेनाकी चार आँखें हुईं तब दोनोंने एक दूसरेको सैनिकवंदना की और दिल्लीवाले मेरठवालोंसे मित्रभावसे गले मिले। जब मेरठी पलटनने 'अंग्रेजी शासनका विनाश हो' और 'बादशाह अमर रहे' के नारे लगाये तो दिल्लीवालोंने 'उसके उत्तरमें नारा जगाया 'मारो फिरंगीको'! कर्नल रिप्ले इस गडबडीमें चिल्लाने लगा 'यह क्या माजरा है?" जवाब गोलियोंकी बौछारने दिया और उसकी देह छलनी होकर धूलमें लोटने लगी। दिल्लीकी सेनाके अंग्रेज अधिकारियोंका इसी तरह सफाया हो गया। फिर मेरठी देशभक्त घुडसवार नीचे उतरे और अपने दिल्लीवाले साथियोको गले मिले! इसी समय

जनता के बनाये सम्राट बहादुरशाह

दिल्लीका इतिहासप्रसिद्ध 'कश्मीरी दरवाजा' खोला गया और क्रांतिके नारे लगाते हुए ये स्वाधीनताके सैनिक दिल्लीके अंदर प्रवेशित हुए।

मेरठका दूसरा सेनाविभाग भी कलकत्ता-दरवाजेसे दिल्लीमें प्रवेश करनेकी चेष्टा कर रहा था। पहले यह दरवाजा बंद रहा; किन्तु सैनिकोंके प्रहारसे कुछ ढीला पडा और धीरे धीरे खुलता गया। पूरा खुल जानेपर वहॉके 'पहरेदार' क्रांतिके नारे लगाते हुए सिपाहियोंमें जा मिले। कलकत्ता-दरवाजेसे आये सैनिकोंने अपना रुख सबसे पहले दर्यागंजमें बसे अंग्रेजोंके बंगलोंकी ओर किया। किन्तु वे पहलेही आगसे धू धू जल रहे थे। आगकी लपटसे बचे अंग्रेज तलवारकी झपटमें आ गए। पासही विदेशी दवाओंसे पूर्ण तथा केवल अंग्रेजोंको आसरा देनेवाला एक अस्पताल था। दर्यागंजके अंग्रेजोंको आसरा देनेसे वहॉके बंगले जलकर खाक हुए यह प्रत्यक्ष देखकर भी इस अस्पतालने गोरोंको छिपनेकी जगह थी, इस बातपर सिपाहियोंका बिगडना ठीक ही था। इसीसे उन्होंने सब बोतलें तोड दीं। रुग्णालयको तहसनहस कर, मानो स्वयं महाकालही हाथमें खड्ग लिए हुए अंग्रेजोंके खूनकी प्यास बुझानेके लिए अन्यान्य रूपोंमें दिल्लीके घर घरमें घूमने लगा! हॉ, अब इस सेनाको एक झण्डेकी आवश्यकता पडी। किन्तु ऐसी सेनाको कपडेके टुकडेका झण्डा क्या फबेगा? जहॉ कहीं गोरेका सिर मिला उसे भालेकी नोकपर खोंस दिया गया और फिर इन भय-सूचक झण्डोंको उछालते हुए यह सेना बडे वेगसे आगे बढती गयी।

दिल्लीके राजमहलमें सिपाही और नागरिक जन बडी भीडमें इकट्ठे हुए थे और उन्होंने 'बादशाहकी जय!' के नारोंसे राजमहलको भर दिया था। कमिश्नर फ्रेजर जलदी जलदी राजमहलमें जा रहा था। इतनेमें पास ही खडे नजुल बेगने उसके गालमें हत्यार भोंप दिया। यह सूचना पातेही फ्रेजरकी देहको कुचलते हुए सब क्रांतिवीर सीढीसे उपर जाने लगे। फ्रेजरको रौंदते हुए सिपाही, ऊपरके मंजिलपर रहनेवाले जेनिंग्ज तथा उसके परिवारके कमरेकी ओर धुसे। अंदरसे द्वार बंद करनेका प्रयत्न हुआ, तो सिपाहियोंके धमाकेसे दरवाजा टूट गया और वे अंदर घुसे। जेनिंग्ज, उसकी लडकी तथा एक मेहमान तलवारके घाट

उतार दिये गये। डरसे कॉपते हुए दिल्लीके रास्तेमें भागनेवाला वह कॅप्टन डगलस कहाँ है? काटो उसे। और यह कोनेमें मुंह छिपाये बैठा कायर कलेक्टर? भेज दो उसे नर्कमें! हॉ, अब दिल्लीके राजमहलमें फिरंगीके नामपर कोई न बचा था! वीरो, तुम अब थोडा आराम कर सकते हो! दिल्लीके इस पुराने राजमहलके प्रांगणमें बुडदल अपना डेरा डाले और रातभर रास्तेको तय करते सैनिकोंको दीवानी-ई-खास में आराम करने दो!

इस तरह, दिल्लीके राजमहल पर जनताकी सेनाने पूरी तरह दखल कर लिया। बादशाह, सम्राज्ञी जीनतमहल तथा सैनिकनेता सब मिलकर आगामी कार्यक्रमके बारेमें सलाह मशविरा करने लगे। अब २१ मईतक ठहरना निरी मूर्खता होगी। इसलिए, परिस्थितिको समझकर बाहशाहने प्रकटरूपमें क्रांतिकारियों का साथ देना स्वीकार किया। इस धूमधाममें मेरठके तोपखानेके बहुतेरे विद्रोही सैनिक दिल्ली आ पहुँचे। इन्होंने राज-महलमें प्रवेशकर बादशाह तथा नूतन उदय होनेवाले स्वातंत्र्य-सूर्यको २१ तोपें दागकर सैनिक-वंदना की। क्रांतिदलके नेताओंसे लम्बी चर्चा और बहस करनेके बाद जो कुछ संदेह बादशाहके मनमें था वह तोपोंकी इस गडगडाहटके साथ साफ उड गया और सम्राटपदकी सैकडो आकांक्षाएँ उसके अंतस्तलमें जगमगाने लगी! अंग्रेजोंके खूनसे रंगी हुई अपनी तलवारोंको हवामें फेंक कर क्रांतिनेता बादशाहसे बोले "सम्राट्! मेरठके अंग्रेजोंकी करारी हार हुई है। दिल्ली तो आपके ही हाथ है और पेशावरसे कलकत्ते तक सभी सैनिक और जनता आपकी आज्ञाकी राह देख रहे है। विदेशियों की बनायी पराधीनताकी शृंखलाओंको तोड अपना ईश्वरप्रदत्त स्वातंत्र्य प्राप्त करनेके लिए समूचा भारत जागरित हो उठा है। इसलिए स्वातंत्र्यका झण्डा आप उठाइए, जिसके नीचे भारतभरके वीरवर इकट्ठा होकर लडेंगे। हिंदुस्थानने अब स्वातंत्र्य-समर घोषित किया है। आप यदि हमारा नेतृत्व करें तो हम क्षणार्धमें फिरंगी सैतानोंको या तो सागरतलमें डूबो देंगे अथवा गीधोंको उनके मांसकी दावत देंगे।"* इस तरह हिंदु और मुसलमान नेताओंकी सर्वसम्मत तथा उत्तेजनापूर्ण-वक्तृता सुनकर,

* चार्लस बॉलकृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १, पृ. ७४

बादशाहको भी धीरज बँधाया। शहाजहाँ तथा अकबरकी स्मृतियोंसे उनके मनको भर दिया और यह विचार घर कर गया कि पराधीनतामें जीवित रहनेकी अपेक्षा स्वदेशको स्वतंत्र करनेके युद्धमें कट जानाही बेहतर है। बादशाहने सैनिकोंसे कहा " अपना खजाना खाली पडा है, तुम्हे वेतन कहाँसे मिलेगा" ! सिपाही तुरन्त गरज उठे " हम समस्त भारतके अंग्रेजी खजानोंको लूटकर आपके चरणोंमें धर देंगे। " * इसपर बादशाहने क्रांतिका नेतृत्व करना मान लिया, तब वहाँ उपस्थित सभी कंठोंसे निकली 'सम्राट की जय हो!' प्रचंड ध्वनिसे आकाश गूँज उठा।

राजमहलमें यह घटना हो रही थी तब बाहर नगरभरमें भयंकर अधाधुंधी मच रही थी। दिल्लीके सैकडों नागरिक हाथ लगे शस्त्रको उठाकर क्रांतिकारियोंमें मिल रहे थे और किसी अंग्रेजकी बलि ढूँढते हुए गली गली छान रहे थे। दोपहर बारह बजे दिल्ली बँकको लोगोंने घेर लिया। बँकका व्यवस्थापक बेरिस फोर्ड अपने परिवारके साथ लोगोंके प्रतिशोधकी आगमें जल गया, सब बँक तहस-नहस हुई। फिर जनताकी दृष्टि 'दिल्ली गॅजेट'के मुद्रणालयपर पडी। मेरठके संवादको छापनेमें वहाँके कर्मचारी मगन थे, त्यों ही बाहर क्रांतिके नारे सुनायी पडे। चंद मिनिटोंमें वहाँके ईसाई कर्मचारियोंको ईशूके पास भेज दिया गया; टंको (टाइप) को फेंक दिया गया; यंत्रोंको तोड-फोड दिया गया, जो भी चीज अंग्रेजोंके छूनसे अपवित्र होनेका संदेह हुआ उसे मिट्टीमें मिला दिया गया। क्रांतिकी लपट अब उग्र बनकर आगे बढी। किन्तु वह देखा उधर गिरजाघर? इधर क्रांतियुद्धकी धूम मची हो, और वही मात्र अपना शिखर आकाशमें घुसाकर तनकर खडा रहे? इसी गिरजाघरमें, अंग्रेजी शासन को भारतमें अमर करने के लिए, प्रार्थनाएँ की गयीं थी। आकाशके बापके नाम, क्या कभी इस गिरजाघरके भक्तोंको भूलसे भी यह बताया गया था, कि एक प्रजाका दूसरी प्रजापर-इंग्लंडका हिंदुस्थानपर-शासन करना सर्वथा अन्याय है, अपराध है? उलटे, इन पक्षपाती ईसाई संस्थाओंने अत्याचारी पीडकोंको अपनी शरणमें लेकर उनके पारलौकिक कल्याणकी अपेक्षा उनके ऐहिक स्वार्थसाधन ही की अधिक चिंता की थी। इस

---

* मेटकाफ

प्रकारके ये सैतानी अड्डे अपने बीचमें टिकने दिये; इसीका बदला गौ और सुअरकी चरबीसे चुपडे कारतूसोंके रूप अदा किया जा रहा है! तो फिर क्यों न आगे बढा जाय? देखते क्या हो? खींचो नीचे उस क्रूर ईसाई धर्म चिन्हको! गिरा दो दिवारोंपर लटकते चित्र चकनाचूर करो उस ध्यानमंदिर तथा खिस्तीपीठको। और एकही गर्जना करो 'जय क्रांति'। हर दिन गिरजाघरमें घंटा बजता है। तुमभी आज लौटते समय इन घंटोंको खब टनटनाहटसे बजाओ! घंटो, चलने दो तुम्हारी घनघन! अजी आज इतनी देरतक यह घनघनहट होनेपर भी एकभी अंग्रेज इस ओर नहीं झाँकता; सो क्यों? घंटो! इन 'काले' हाथोंका स्पर्श तुम्हे कहांतक भाता है? तुम सह नही सकते? अच्छा, तो जाओ नीचे! हमारे भाई तुमपर नाचने को खडेही है! अपने स्थानसे जब एक एक घंटा हडडकर नीचे गिर पडता तब उसकी घनघनाहट को सुन वह क्रांतिकारियोंका जमघट विकट हास्यके फव्वारोंके साथ कानाफूसी कर रहा था 'क्या तमाशा है!'

किन्तु इधर दूसरी ओर इससे भी बढकर भीषण घटना हो रही थी। राजमहलके पासही अंग्रेजोंने गोलाबारूद का एक बहुत बडा अंबार बना रखा था। इसमें युद्धके उपयुक्त अनगिनत सामग्री भर रखी थी। कमसे कम नौ लाख कारतूस, आठसे दस हजार राइफले, बंदूकें, घेरेमें काम आनेवाली तोपें और धडाकेसे उडनेवाली सुरंगोकी मालिकाएँ वहाँ भरी पडी थी। क्रांतिकारियोंने इस अंबारपर दखल करनेकी ठानी। किन्तु यह कोई कुटियामें गुड फोडनेका काम थोडे ही था? वहाँके अंग्रेज पहरेदार चाहते तो एक दियासलाई जलाकर चाहे जितनी आक्रमक पलटनोंको एक क्षणमें खाकमें मिला सकते थे। इसीसे इस अंबारपर दखल करना पहाडसे टक्कर लेना था। किन्तु क्रांतिका जीना भी, बिना उसके, सुरक्षित न था। तब हजारों सैनिकोंने यह काम करनेका निश्चय किया। सम्राटके नामसे एक संदेश वहाँके मुख्याधिकारीके पास भेजा गया कि वह उस अंबारको सम्राटके अधीन कर दे। अैसे कागजी संदेशोंसे कहीं राज्य या सिंहासनका लेनदेन होता है? लेफ्टनंट विलोबीने इसका उत्तरतक देनेकी पर्वाह न की। इस अपमानसे गुस्से होकर हजारों सिपाही शस्त्रागारके तटपर चढे। अंदर नौ अंग्रेज और कुछ हिंदी नौकर थे। दिल्लीके दुर्गपर सम्राटका झण्डा फहरते हुए जब उन

दी लोगोंने देखा तब वे भी क्रान्तिकारियोंमें मिल गये; हॉ, बचे हुए नौ ग्रेज बडी बहादुरीके साथ जान हथेलीपर लेकर लडने लगे। किन्तु निकोंकी इतनी बडी सख्याके सामने ये मुठ्ठीभर अंग्रेज खडे नही रह कते थे, यह साफ दिखायी दे रहा था। तब उन्होने भी यह सोच रखा था ; जब शस्त्रागारको अपने हाथमें रखना असभव हो जायगा तब उसे पूरी रह उडा देगे· क्यों कि समूचा शस्त्रागार क्रांतिकारियो को सौप देनेपर ी उनके प्राणोंकी खैर न थी। इधर सैनिकोको भी इस बातकी पूरी ल्पना थी कि यदि अंबारको उडा दिया जायगा तो अनगिनत साथियो , प्राणोंकी बलि चढेगी, फिरभी सैनिकोने जोरदार आक्रमण जारी रखा। नकी सहायताके लिए दिल्लीके सैकडो नागरिक दौड पडे थे। इतनेमें हसा, दोनो दलो को जिसकी पहलेसे अपेक्षा थी, हजारों तोपे एकसाथ टने पर होनेवाली गडगडाहटके समान एक धमाका हुआ और धुऍ र आगके स्तभ आकाशमें फूट पडे। उन नौ अंग्रेज बहादुरोंने क्रांति-रियोंके हाथ शस्त्रागार दे देनेसे इनकार किया और स्वय उसमे ग लगाभर उन्होंने आत्म-बलिदान किया। उस प्रस्फोट के भयकर माकेसे २५ सैनिको तथा पासके मार्गपर खडे ३०० आदमियोंके रीरोंकी सचमुच बोटी बोटी उड गयी।

हॉ, इतने भीषण स्फोटमें इतने लोगोंकी बलि चढाकर भी शस्त्रागार दखल करनेका जतन बिलकुल व्यर्थ न हुआ। बंदूकोंका एक खासा र हाथ लगा, जिससे हर एकके हिस्सेमें चार चार बदूके आयी। जब क यह केन्द्र अंग्रेजोंके अधीन था तब तक छावनीके सभी हिंदी सिपाही हॉके अग्रेज अफसरोंके आज्ञाकारी थे। हॉ, इन हिंदी लोगोंने अपने ाइयोंसे भिडंनसे इनकार किया था तो भी वे अंग्रेजोंके विरुद्ध भी द्रोही नहीं बने थे।। शामके लगभग चार बजे इस प्रचड स्फोटसे सारा ली शहर थर्रा उठा; और सब छावनीके सिपाही उठे और 'मारो फिरगिको, मारे ललकारते हुए अंग्रेजोंपर टूट पडे। गॉर्डन, स्मिथ, रेव्हली और ो भी गोरा मिला—हर एकको कत्ल कर दिया गया। एक शतीके बाद जागरित राष्ट्रीय प्रतिशोधने पुरुष, स्त्रियाँ, बालक, घरबार, ईट पत्थर, रडी, मेज, कुर्सी, रक्त, मॉस, हाड—मतलब, अग्रेजोसे सबंधित सबकुछ

तोडफोडकर नष्टभ्रष्ट कर दिया। निदान, सम्राट्की आज्ञाने कुछ अंग्रेजोको इस हत्याकाण्डसे बचा लिया; उन्हे राजमहलमें बंदी बनाकर रखा गया। किन्तु उन क्रूरकर्मा अंग्रेजोंके विरुद्ध जनताका क्रोध इतना भडक उठा था कि चार पाच दिन खींचातानी करनेके बाद सम्राट्ने उन पचास बंदियोको लोगोंके हाथ सौंप देना ही उचित माना। १६ मईको इन पचास अंग्रेजोंको खुले मैदानमे ले जाया गया। हजारो नागरिक यह दृश्य देखने को जमा हुए और सभी अंग्रेजी हुकूमत तथा दुष्टता को कोसते थे। सूचना पातेही सैनिकोंने उन ५० अंग्रेजोंके सिर धडसे जुदाकर दिये। एकाध अंग्रेज तलवारसे बचनेके लिए सिर एक ओर झुकाकर दयाकी याचना करता, तब भीडसे यह चिल्लाहट होती कि, "हथकडियों का बदला"। "पराधीनता का प्रतिशोध"। "शस्त्रागार की बलि का बदला! अवश्य लिया जाय।" तब तलवार उस झुके सिर को साफ उतार देती। अंग्रेजो का हत्याकाण्ड ११ से १६ मई तक जारी रहा। इस बीच सैकडो अंग्रेज अपनी जान बचानेको दिल्लीसे भाग निकले। कुछ गोरोंने अपने मुँहपर स्याही पोत उसे काला बना लिया और काले आदमीका 'घृणित' वेश चढा लिया। कुछ गोरे जगलोंमे भागते हुए घामकी प्रखरतासे जल मरे। कुछ एक फकीरकी मालियाँ रटकर सन्यासीके वेशमे देहातोमें गये और अपनी खैर मनायीं। किन्तु इस स्वाँगको जब देहातियोंने भाँप लिया तो उनका काम तमाम कर दिया। इतना सब होते हुए भी न किसी गाँवमे, न दिल्ली नगरमें एक भी अंग्रेज स्त्रीसे छेडछाड हुई।* यह बात अंग्रेजोंसे नियुक्त जॉच समितिने सिद्ध की है और अंग्रेज इतिहासकारोने भी एक राय होकर मान ली है। फिर भी उस समयके ईसाई धर्मप्रचारकोंने इग्लैंडमे झूठी अफवाहे फैलानेमे कोई कसर थोडे ही उठा रखी थी? हमें साफ कहनेमे

* स. २३ "चाहे जितनी क्रूरता तथा रक्तपात हो गया हो, बादमे जो किस्से होनेकी बात फैलायी गयी, कि स्त्रियोंसे छेड छाड हुई, उनकी आबरू लूटी गयी, मैने जहाँ तक तहकिकात की है, इसके सच्चे होनेका कोई ठीक प्रमाण मुझे न मिला।"—ऑनरेबल सर विलियम मूर के. सी. एस्. आइ, हेड ऑफ दि इंटेलिजन्स ब्रँच डिपा.

कोई प्रत्यवाय नहीं है कि उपर्युक्त हत्याकाण्डके नामपर अपनी 'निजी स्मृतियाँ' इन अंग्रेज धर्मप्रचारकोंने लिखकर फैला दीं; उनसे बढ़कर हीन, घृणित, दुष्ट और सफेद झूठका प्रचार करनेका साहस अबतक किसीने नही दिखाया होगा। जो राष्ट्र अपने नागरिको को ये साफ झूठ बाते, कि "अंग्रेज स्त्रियोंको दिल्लीके मार्गोंमे नगी घुमायी गयी; उनपर खुलेमे बलात्कार किया गया. उनके स्तन काटे गये और अंग्रेज कुमारी लडकियो पर भी बलात्कार हुए," बोलनेकी छूट देता है, वह राष्ट्र सत्यका कहाँ तक आदर कर सकता है, इसकी सहजमें कल्पना कर सकते है। १८५७ की क्राति इस लिए नहीं हुई कि हिंदी लोग अंग्रेज महिलाओंको चाहते थे (यो तो चकलेमे उन्हे मिल जातीं) बल्कि भारतसे इन गोरोकी हस्ती मिटानेके लिए यह क्राति थी!!

हॉ तो, मेरठके बाजारमें गॉवकी स्त्रियोंने ताना मार कर जो बवडर खडा किया था, उसने एक शतीतक दृढमूल बने पराधीनताके विषवृक्षको एक साथ जडमूलसे उखाड दिया। इन पॉच दिनोंमें क्रातिदलको जो असाधारण यश मिलता गया, उसका कारण था, पराधीनतापर कुठाराघात करनेको सब जातियों तथा सब प्रवृत्तिके लोग आगे आये थे। मेरठकी औरतोंसे लेकर दिल्लीके सम्राटतक हर एकके अंतस्तलमे स्वधर्मरक्षा तथा स्वराज्य पानेकी लगन लगी थी। इस तीव्र इच्छाको गुप्त क्रांतिकारी संस्थाओंने आवश्यक रूप दे रखा था; इसीसे केवल-पॉचही दिनोंमें स्वराज्य का झण्डा हिदुस्थानके केन्द्र—दिल्ली—मे फहर सका। १६ मईको दिल्लीमे अंग्रेजी सत्ताका छोटासा भी चिन्ह नही रह पाया था। अंग्रेजोंके लिए द्वेष इतनी पराकाष्ठापर पहुँचा था कि यदि भूलसे किसीके मुँहसे अंग्रेजी शब्द निकल जाय तो निर्दयतासे उसे रगेदा जाता। 'यूनियन जॅक' की धज्जियाँ लोग मार्गमें चलते कुचलते थे, जहाँ वह स्वराज्यका विजयी ध्वज, जिससे पराधीनताके दाग उष्ण रक्तसे साफ धोये गये थे, बडी शानसे लहरा रहा था। स्वाधीनताका प्रेम इतना उमड आया था कि इन पॉच दिनोंमें समस्त दिल्लीनगरमें एक भी राष्ट्रघातक नराधम नही पाया गया। स्त्रीपुरुष, गरीब धनी, बूढे जवान, सैनिक नागरिक, मौलवी पण्डित, हिंदू मुसलमान, सबके सब स्वदेशके झण्डेके नीचे जमा होकर विदेशी

दासतापर अपनी तलवारसे प्रखर प्रहार कर रहे थे। और 'इसी असाधारण देशभक्ति, स्वातंत्र्य-प्रेम और अंग्रेजोंसे तीखी द्वेषभावनासे, मेरठकी महिलाओंके उन शब्दोंने उस धूल चाटते सिंहासनको फिरसे ठीक स्थानपर बिठाया।

'ये पाँच दिन, सचमुच, भारतीय इतिहासमें सस्मरणीय रहेंगे। क्यों कि इन्ही पाँच दिनोंमें गजनीके महमूदकी चढाईसे चले आये हिंदु–मुस्लीमके विषाक्त झगडोंको, कुछ समयतक क्यों न हो, गाड दिया था। पहले पहल इस राष्ट्रने तब घोषणा की कि, " अबसे हिंदु और मुस्लिम आपसी दुश्मन नहीं है। विजित और विजेता का उनका संबंध समाप्त हो चुका है, आजसे हिंदु मुसलमान भाई भाई हैं। ' जिस भारतमाताको मुसलमानोंके चंगुलसे श्री शिवाजी महाराज, महाराणाप्रताप, छत्रसाल, प्रतापादित्य, गुरु गोविंदसिंग एवं महादजी शिंदेने मुक्त किया वही भारतमाता उस दिन अपने बेटोंको आदेश देती थी कि " बच्चों! आजसे तुम भाई भाई हैं और मैं तुम दोनोंकी मैय्या हूँ।"
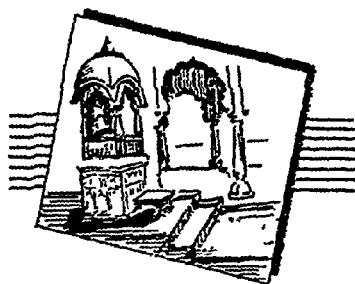
अध्याय ४ था

विष्कंभ तथा पंजाब-काण्ड

दिल्लीके स्वतंत्र हो जानेका संवाद विद्युत् गतिसे देशभरमें फैल गया, जिससे भारतीय तथा विदेशी लोग सन्नाटेमें आ गये। अंग्रेज इस घटनाका पूरा अर्थ समझ न पाये, उनकी अक्ल चकरा गयी। हिंदुस्थानभरमें शान्तिका साम्राज्य बसा हुआ है इस विश्वाससे लॉर्ड कॅनिंग उधर कलकत्तेमें चैनकी नींद सो रहा था। इधर सेनापति ॲन्सन शिमलेके शीतल शैल शिखरोंपर सैर करनेकी सोच रहा था। जब कॅनिंगको दिल्ली स्वतंत्र हो जानेका दो पंक्तियोंका तार आया तब उसे पढकर वह अपनी आँखोंपर विश्वास न कर पाया। अंग्रेजोंके समान भारतीयोंको भी डर लगता था; क्यों कि, दिल्लीके इस अचानक विद्रोहसे गुप्त क्रांतिकारी संगठनके सभी आयोजन व्यर्थ हो चुके थे। और दिल्लीके अचानक उत्थानसे भौचक्के होकर अंग्रेज सैनिक हलचलोंकी दृष्टिसे जो भद्दी भूल कर बैठे थे, उसे दुहरानेकी सम्भावना न थी। उलटे, अपनी भूल सुधारनेका मौका उन्हें प्राप्त हुआ था। दिल्लीके सिंहासनको सम्राट्से छीन लेना तो अब दो एक दिनमें जोरदार हमला करके सहजमें बन सकता था। किन्तु पहलेसे निश्चित ३१ मई को सब स्थानोंमें एक साथ विद्रोह फूट निकालता, तो एकही दिनमें क्राति की सफलता निश्चित थी। खैर, भलेही वह इरादा अब छोडना पडा, मेरठके अनपेक्षित विद्रोहके बावजूद भी क्रांतिकारियोंने दिल्लीपर दखल कर लिया, उसीसे क्रांतिको एक विशाल राष्ट्रीय रूप मिल गया; और इस असाधारण संवादसे भारतभरमें औरही लहर उठी थी। समस्या अब यह थी

कि इस अचानक उत्थानसे लाभ उठाया जाय, या, पहलेसे निश्चित ३१ मईतक रुका जाय? केंद्रीय–क्रांति–कार्यालयने क्या निश्चित किया था? हाँ, अन्य केंद्रोंमें यदि अपनी ही इच्छासे विद्रोह हो तो क्या मेरठके विद्रोहके कारण पैदा हुई गडबडीका उन्हे सामना न करना पडेगा? ऐसे ही कुछ प्रश्नोंपर हर केन्द्र के नेता उधेडबुनमें पडे थे और निश्चय न होनेसे चुप रहें। अनिश्चय, अस्थिरतासे बढकर क्रांतिको मारनेवाला दूसरा कोई विष नहीं है।

जितना वेग तथा सार्वदेशिक फैलाव अधिक हो, क्रांतिकी सफलताकी सम्भावना भी अधिक होती है। पहले हमलेके बाद व्यर्थ समय गँवाया जाय और शत्रुको दम लेने की फुरसत मिले तो उसे अनायास अपना सगठन दृढ करनेका अवसर मिल जाता है। सबसे पहले विद्रोह करनेवाले जब देखते है कि उनके बाद कोई मैदानमें नहीं आता, तो वह हिम्मत हारने लगते है; और धूर्त शत्रु भी सचेत होकर नये विद्रोहियोंके मार्गमें रोडे अटकाता जाता है। इससे, पहला हमला और क्रातिका सर्वत्र फैलाव इसके दरमियान शत्रुको सिद्धता करनेका अवकाश देना, सदाही क्रातिके लिए हानिप्रद होता है। किन्तु यहाँ ठीक वही हुआ जो न होना चाहिये। पहलेसे निश्चित कार्यक्रमके विरुद्ध इस अचानक उत्थानसे अन्य स्थानके क्रातिदलके नेता भौचक्के हो गये और कुछ समयके लिए 'भयी गति साँप छछूँदर केरी।' चुप कैसे रहें और नहीं तो उत्थान कैसे करे।

क्रातिदलमें पैदा हुई यह अनिवार्य निष्क्रियता अंग्रेजोंके लिए अत्यत लाभकारी सिद्ध हुई। भारतमें पाँव धरनेसे लेकर आजतक ऐसा सुन्न कर देनेवाला भयकर सवाद सुननेकी बारी यह पहलीही थी। जिन सैनिकोंने अंग्रेजोंकी सत्ता आजतक बढाकर उसे बनाये रखनेमें सहायता दी वेही सैनिक आज अंग्रेजोंकी जानके ग्राहक बने थे। इस दृश्यसे घबडा कर अंग्रेजी सत्ता मेरठसे दिल्ली भाग खडी हुई। पर वहाँ बादशाहाने एक हाथसे उसका गला दबोचकर दूसरे हाथसे उसका राजमुकुट छीन लिया। वह अंग्रेजी राजसत्ता, जिसके मुँहपर मेरठके चौराहेकी स्त्रियाँ थूकीं और जिसके राजमुकुट आदि सभी अलंकार लोगोंने बलपूर्वक छीन लिए थे तथा तलवारोंके घावोंसे लहूलुहान हुई थी, अंग्रेजी खूनसे लथपथ अपने

बालोंको पकडकर तथा हड्डियोंकी माला गलेमें डालकर कराहती, बिलखती, कलकत्तेका आसारा लेनेकी चेष्टा कर रही थी। हिंदुस्थानकी अंग्रेजी सत्ताके प्राकृतिक रीढ तो थी नहीं। इस मई महीनेमें आगरेसे बारकपुर तकके ७५० मीलके टापूमें गोरे सैनिकोंकी केवल एक ही पलटन थी। इस दशामें, जैसे कि क्रांतिदलने निश्चय किया था, इस टापूमें ठीक समयपर एक साथ विद्रोह होता तो, एक क्या ऐसे दस इंग्लैंडभी यदि कमर कसकर आते तो भी हिंदुस्थानको अपने हाथमें न रख सकते! गोरोंकी यह एक पलटन तब दानापुरमें थी। पंजाब तथा सीमा प्रांतमें कई गोरी पलटनें थीं; किन्तु उनका वहीं रहना आवश्यक था। ऐसे बाँके समयमें अधिकसे अधिक गोरी सेनाको इकट्ठा लानेके लिए लार्ड कॅनिंग पहलेसे चेष्टा कर रहा था। ठीक इसी समय ईरानसे अंग्रेजोंका युद्ध थम गया और वहाँकी सेनाको तुरन्त भारत जानेकी आज्ञा दी गयी। ईरानका युद्ध रुका, फिर भी चीनसे अंग्रेजोंने झगडा मोल लिया था और वहाँ सेनाको भेजनेका प्रबंध हो चुका था। किन्तु भारतमें यह धमाका होतेही चीनकी ओर जानेवाली सेनाको यहाँ रोक रखना कॅनिंगने उचित जाना। रंगून जानेवाली इन दो पलटनोंको कलकत्तेहीमें ठहरानेकी आज्ञा हुई साथमें ४३ वीं पैदल पलटन तथा मद्रासकी बंदूकधारी (फ्युजिलियर्स) पलटनको सिद्ध रखनेको मद्रास गवर्नरको आदेश दिया गया।

इस तरह चारों दिशाओंसे गोरी सेना कलकत्तेकी दिशामें जमा हो रही थी, तभी सैनिक विद्रोह को शान्त करने के लिए एक जतन हुआ। एक प्रकट पत्रक बनाकर उसे गाँव गाँवमें चिपकानेकी उसने आज्ञा दी। यह कहने की आवश्यकता नहीं, कि उसी कदीमी ढंगसे और मसालेसे यह पत्रक भरा हुआ था। पर्चेमें लिखा था: "तुम्हारे धर्म तथा रीतरिवाजोंमें दस्तदाजी करना हमारा इरादा नहीं है। स्पष्ट है कि तुम्हारी धार्मिक भावना-को दुखाकर तुम्हारे धर्मका मखौल उडाना हमारा उद्देश्य कभी होही नहीं सकता। तुम चाहो तो अपने हाथों काडतूस बना सकते हो। तिसभर भी तुम कंपनी सरकारके विरुद्ध विद्रोह कर बैठे हो; ध्यान रहे, यह नमक-हरामी है।" किन्तु ऐसे थोथे पत्रकोंकी ओर ध्यान देनेकी फुरसद किसे थी? इधर सवाल यह था कि ऐसे पत्रक घोषित करनेका अधिकार अंग्रेजोंको

इस देशमें है या नहीं ? तो फिर, ऐसे समयमें ऐसी घोषणाओंका प्रदर्शन लोगोंको शान्त करनेके बदले उन्हें उभाडनेके कामका था। ऐसे थोथे पत्रकोंको पढनेका समय किसके पास था ? क्यों कि, सभीके कान दिल्लीसे घोषित होनेवाली आदरणीय राजाज्ञाकी ओर लगे थे! क्या ही मजेदार दृश्य है ! एकही समयमें दो घोषणापत्र ! एक दिल्लीसे स्वाधीनताका तथा दूसरी ओर कलकत्तेसे पराधीनताका ! अर्थात् हिंदुस्थानने दिल्लीकी राजाज्ञा को सिर आँखोंपर रखा और इसीने कॅनिगने अपनी लेखनीको तोडकर दिल्लीपर तोपें दागनेकी आज्ञा दी।

सर सेनापति ॲन्सनको . दिल्ली स्वतंत्र होनेका तार जब मिला तब वह शिमलेमें था। वह सोचही रहा था कि क्या करें, उसके हाथमें कॅनिंग की आज्ञा पडी कि दिल्लीपर दखल करो। क्रांतिके संगठनके बल तथा योजनाओंके बारेमें अंग्रेजोंका इतना अज्ञान था कि एक सप्ताहमें दिल्लीको हथियाने और एक महीनेमें विद्रोहको दबानेका उन्हें भ्रमपूर्ण विश्वास था। पंजाबके कमिशनर सर जॉन लॉरेन्सने भी ॲन्सनको दिल्लीपर दखल करनेका त्वर्य (अर्जंट) तार भेजा था। किन्तु दिल्लीपर दखल करनेका काम कितना कठिन है इसका भान कॅनिंग और लारेन्सकी अपेक्षा सेनापति ॲन्सनको अधिक था, जिसमें उसने पूरी सिद्धता होने तक धीरज रखना ही उचित जाना। शिमलेकी पहाडीसे वह अंबालेकी छावनीमें पहुँचा नहीं कि उसे शिमलेमें प्रचंड खलबली मच जानेकी खबर मिली। गोरखाओंकी नसीरी पलटनने विद्रोह कर दिया—ऐसी अफवाह सब ओर खूब फैल जानेसे शिमलेके अंग्रेजोंके हाथ पाँव फूल गये थे। उस वर्ष शिमलामें इतनी कडी गरमी पडी थी, जिसे अंग्रेज सह न सके। तब वहाँकी ठंडी पहाडी कोठियाँ तथा मनोहर बागोंके सुख उन्हें महँगे पडने लगे। गोरखा पलटनके आनेकी खबर पातेही औरतें और बच्चे जहाँभी शरण मिले वहाँ भागने लगे। इस दौडकी स्पर्धामें पीठके बोझोंके बावजूदभी पुरुषोंने स्त्रियोंको हराया और वे आगे बढ गये ! अंग्रेजी वीरताका यह प्रदर्शन दो दिनतक खुले मैदानमें हो रहा था: किन्तु कोई गोरखा विद्रोही वहाँ नहीं आया। जिससे वह बंद हो गया। कलकत्तेमें भी ऐसेही दृश्य दिखायी देते थे। एकाएक अफवाह

उठती, बारकपुरकी पलटन अंग्रेजोंके विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह कर उठी है तब सारे अंग्रेज, उनकी औरतें और बच्चे सबके सब किलेके रुख दौडने लगते। कुछ एकने तो विलायतके जहाजके टिकटभी कटवाये। कुछ अपना बोरिया बिस्तर कसकर बांध, किलेमें भाग जानेकी सिद्धता कर चुके थे। कुछ गोरोंने अपना काम छोड कार्यालयके कोनेमें छिप जानेकी बहादुरी भी दिखायी। मेरठ और दिल्लीके विद्रोहने यह सब अस्तव्यस्त कर दिया था और अभी कानपुरका आगमन तो होनेवाला था!

अंबाले पहुँचतेही ॲन्सनने दिल्लीके मुहासरे के लिए तोपें तथा अन्य स्फोटास्त्र सिद्ध कर रखनेकी आज्ञा दी। आजतक ऐसे बाँके समयसे अंग्रेजोंको पाला नहीं पडा था, किन्तु अब तो उनकी दुर्बलतापर ही प्रकाश पड रहा था। अंग्रेजोंकी दशा बडी दयनीय हुई थी। कार्यका ठीक प्रबंध करते करते ॲन्सनके नाकमें दम हो गया। अबतक गोरे अफसरोंका यही काम था कि हिंदी सैनिकोंको हुक्म दे दें, किन्तु अब गोरे सैनिकोंसे उस अधिकारमदसे पेश आनेसे काम नहीं चल सकता था। क्यों कि ये गोरे सैनिक अपनी ऐशोआरामकी आदतों तथा उद्दताईको थोडेही एक दिनमें भूलनेवाले थे। और हर एक काममें हिंदी सिपाहीसे बेगार करवाना तो असम्भव-सा था। सवारी, मजदूर, रसद, यहाँतक कि, घायल सैनिकोंको उठानेके लिए टाटकी डोलियाँ तथा रुग्ण-गाडियाँ (ॲम्ब्युलन्स) जुटाना भी दूभर था। अडज्युटन, क्वार्टर मास्टर, कमसरियट, वैद्यक विभाग" किसीको भी अपने विभाग सहायक-सेवकों तथा आवश्यक सामग्रीसे भरपूर बनाना असम्भव होनेसे बडी कठनाई पेश हुई थी। हिंदुस्थानके लोगोंकी सहायताके बिना, कितनी दुबली तथा अपाहिज थी अंग्रेजी सत्ता! जब पहलीही बार ये हिंदी लोग बिगड उठे तो अंबालेसे दिल्लीको छावनी ले जाना भी अंग्रेजोंके लिए कठिन हो गया। क्यों कि, सब जाति तथा श्रेणीके हिंदी लोग, जो घटनाएँ हो रही थी उनपर ध्यान रखते हुए, तटस्थरूपसे अलग खडे थे। धनियोंसे लेकर मजदूरोंतक कोई भी, इन दिनों सहजमें डूबती हुई अंग्रेजी राजसत्ताको

बचानेकी चेष्टा नहीं करता था।* सचमुच, भारतीय लोग सदाही ऐसे उदासीन रहते तो, जैसा कि के साहब बता रहे है, अंग्रेजोंकी राजसत्ता एकही दिनमे मिट्टीमे मिल जाती। किन्तु वह भाग्यशाली दिन १८५७ के वर्षमें उदय नहीं हुआ। यह कहना चाहिये कि सत्तावन साल तो रातकी घोर निद्राके बाद आई हुई नये जागरणकी ऊषा थी। आगामी उज्ज्वल उजेलेकी स्पष्ट कल्पना जो पहलेही कर सके थे, वे अपनी शय्या छोडकर जागरित हो उठे थे; किन्तु जो अब भी मानते थे कि रात समाप्त नहीं हुई, उन्होंने पराधीनताका ओढना फिरसे मुँहपर तानकर बेखबर सोना ही उचित माना। इन निद्रालु वीरोंमे, कुंभकर्णके कान काटनेकी स्पर्धा पटियाला, नाभा, तथा जींद इन तीन रियासतोंमे लग गयी थी। क्रांतिको अमर करना या उसे मारना, दोनो बातें इन रियासतोंके अधीन थीं। ये संस्थान दिल्ली और अम्बालेके बीचके टापूमे होनेसे, बिना उनकी सहायताके अंग्रेजोंका पीछा अरक्षित रह जाता। ये संस्थान यदि अन्योंके समान उदासीन भी रहते तो भी क्रांतिकी यशस्विताकी बहुत सम्भावना थी। किन्तु, उलटे, पटियाला, नाभा तथा जींद रियासतोंने अंग्रेजोंसे बढकर क्रूर तथा निठुर चोटे क्रांतिकार्यपर करना शुरू किया, तब तो दिल्ली और पंजाबका संबंध खण्डित हुआ। इन संस्थानोंने दिल्ली सम्राटके निमंत्रणको ठुकरा कर संदेशवाही सवारोंका सफाया कर दिया, तथा अपने कोषोंसे पैसा निकालकर अंग्रेजोंपर निछावर कर दिया, उनके लिए रगरूट भरती किये और अंग्रेजी सेना जिन प्रदेशोंसे गुजरनेवाली थी उनकी रक्षा कर अंग्रेजोंके साथ दिल्लीपर चढाई करनेका साहस किया। और जो क्रांतिकारी अपने घरबारपर अंगार रखकर दिल्लीके राष्ट्रीय ध्वजकी रक्षाके हेतु जान पर खेल गये उन क्रांतिवीरोंको, गुरु गोविंदसिंगके सिक्ख कहलानेवाले इन संस्थानोंने, यंत्रणा देकर मारा।

पटियाला, नाभा और जींद इन तीन रियासतोंसे पूरी सहायता मिलनेका विश्वास होनेपर अंग्रेजोंकी हिम्मत बढ गयी। पटियालाके राजाने सैनिकदल तथा तोफखाना अपने भाईके साथ भेजकर उसे थानेसर मार्गकी रक्षाका

---

* के कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड २

भार सौपा, और स्वय जींदका शासक पानिपतकी (सैनिक दृष्टिसे) अत्यत प्रबल भूमिपर मोर्चा लगाये बैठा। इस तरह इन दो प्रमुख मोर्चोंके सुरक्षित हो जाने पर दिल्लीसे अम्बालेतकके सभी मार्ग और बेरोकटोक पजाबसे अंग्रेजोंका सबध, पूरीतरह भयमुक्त हुए। किन्तु दिल्ली स्वतत्र होनेका सवाद मिलतेही ॲन्सनका दिल बैठ गया था। और फिर, शिमलेकी हिमशीतल छायामें अबतक सुखसे समय बितानेके बाद अब वीरान मैदानकी प्रखर गरमीमे झुलसना पडेगा इस विचारसे उसके मनमे डर छा गया। इस तरह मानसिक व्यथा और शरीर व्याधीसे जर्जर होकर २७ मई १८५७को यह सेनापति ॲन्सन हैजेसे मर गया। उसी दिन उसका स्थान सर हेन्री बर्नार्डने ले लिया।

पुराने सेनापतिको दफनाकर नये सेनापतिके नेतृत्वमें अंग्रेजी सेना दिल्लीपर चढाई करने चली। तब अंग्रेजोको विजयकी इतनी पक्की निश्चिती थी कि वे प्रकट रूपसे शेखी बघारनेमे मगन थे कि, "सबेरे युद्ध शुरू होगा और शामतक दिल्लीमे दुश्मनोंका खून पीयेंगे।" यह सेना अम्बालेसे चली तब इन गोरोंके अंतःकरणका गुप्त गरल जगत्की जानमें पूरी तरह आ गया। कहा गया 'मेरठके सभी सैनिक शैतानके बच्चे है (हीदन्स)। मेरठ और दिल्लीमे केवल काडतूसी 'अफवाह'का विश्वास कर इन दुष्टोंने 'निष्पाप' अंग्रेजोंकी हत्या की! इन लोगोंके देश–हिंदुस्थान–मे धर्म और सभ्यता कितने जगली होंगे?" हॉ, जो गुप्तही है उसको नगे रूपसे ससारके सामने रखनेसे क्या लाभ? नहीं तो झूठी अफवाहोंसे सत्य तथा जगलीपनसे सभ्यतापर घृणा करनेके लिए स्वय परमात्मा प्रवृत्त होगा। हाय, हाय, सत्य और परमात्माकी विडबनाको धो डालनेके लिए लहूकी नहरेंही बहानी पडेंगी!!

अम्बालासे दिल्लीके मार्गपर पडे सैकडों गॉवोसे गुजरते हुए जो भी आदमी हाथ लगे उन्हे एक कतारमें सैनिक–पचायतके सामने खडा किया जाता और सबके सबको फॉसीकी सजा सुनायी जाती और अत्यत राक्षसी तथा जगली तरहसे कत्ल किया जाता! मेरठके हिंदी लोगोंने अंग्रेजोंको कत्ल किया यह बात सही है; किन्तु जंगली क्रूरतासे नहीं! तलवारके एकही वारसे सिर जुदाकर दिया जाता, बस। किन्तु अंग्रेजोंका बडप्पन इसमें है

कि उन्होंने इस गलत तरीकेको ठीक कर दिया। पचायत फाँसीका फैसला सुना देती तबसे फाँसीका मचान खडा होनेतक गोरे सैनिक उन देहातियो-पर अत्यत निर्दय तथा पाशविक अत्याचार करते थे। मौतकी सजा पाये हुए इन बेचारोंके सिरके बाल एक एक कर नोच दिये जाते; सगीनें घोंप-कर उनके शरीरसे खिलवाड किया जाता। और इसमेंभी बढकर यह काम करनेको कहा जाता जिसके सामने मौत तो मामूली बात हो जाती है। पाठक, हृदय थामे पढो! उन बेबस देहातियोंके मुखमें गोमांस ये गोरे सैनिक भालो और सगीनोंकी नोकोंसे ठूंस देते थे।*

हाँ; तो, पाठकगण, यह कहते हम भूल गये कि सैनिक पचायतका नाटक वैसाही अब तक चला आ रहा है जैसा उस समय था! सैकडों गरीब किसानोंको गोरूके समान बाडेमें बिठाकर उनका 'न्याय, किया जाता! नेदर्लैंडसूमें जब इसी तरह क्राति हुई थी, तब आल्व्हानेने भी इस तरहका एक न्यायालय बनाया था। इसमें न्याय इतना योग्य और अचूक था कि कभी कभी न्यायाध्यक्षही अपने आसनपर सोया हुआ पाया जाता। निर्णय देनेका समय आनेपर उसे जगाया जाता तब बडी गभीरतासे अपराधियोंपर दृष्टिक्षेप कर निर्णय सुनाता "सबको फाँसी!" मालूम होता है, उसी नेदर्लैंडसूके ऐतिहासिक देहदण्डालय (डेथचेंबर) का परिवर्तित तथा परिवर्धित सस्करण हिंदुस्थानमें बनाया था। क्यो कि, यहाँके पच कभी न सोते थे! यहाँ तक कि न्यायासनपर बैठनेके पहलेहीं उनसे शपथ करायी जाती थी "मैं अभियुक्तके अपराधी या निर्दोष होनेपर गौर न करते हुए सबको देहान्तका दण्ड दूँगा"× और, फिर इस तरह शपथबद्ध

---

* हिस्टरी ऑफ दि सीज ऑफ दिल्ली.

× (स. २४) सैनिक-पचायतके आसनपर बैठनेके पहले पच शपथ करते थे कि अपराधी या निर्दोष होनेकी पर्वाह न करते हुए बदीको फाँसीकी सजा फर्मायेंगे, और उनमें से एकाध इस अविवेकी बदलेके विरुद्ध आवाज उठातेही उसके साथी शोर कर उसे चुप कर देते। चटपट निर्णयके बाद फाँसीपर जानेवाले बदियोंको खिजाया जाता और अनाडी सोजीरोंसे

अंग्रेज पत्र 'काले' आदमी को फैसला सुनाकर एकमात्र मत्र फाँसी फर्मानेका काम जिस आसनपर बैठकर करते उसे अंग्रेजीमें "कोर्ट मार्शल" नाम रखा गया था!

दिल्ली और मेरटमें मरे मुट्ठीभर अंग्रेजोंकी हत्याका भयंकर राक्षसी बदला लेनेके लिए हाथ आये हर मानवकी हत्या की जाती। इस तरह हजारों गरीब किसान मारे गये और मरनेके पहले उनपर पाशविक अत्याचार किये जाते थे। इस ढगमें गुजरते हुए सेनापति बर्नार्ड दिल्ली जानेके पहले मेरठकी गोरी पलटनोंको साथ ले जानेके इरादेसे उधर मुडा। हम कह चुके हैं कि मेरटमें काफी गोरी सेना थी। यह सारी सेना अम्बालेमें चली सेनासे मिलने को मेरटमें चल पडी थी। किन्तु इन दो सेनाओंकी भेंट होनेके पहलेही दिल्लीका राष्ट्रीय सैनिकदल मेरठी गोरी फौजसे भिडनेको आगे बढा। दिनाक ३० मईको हिंडन नदीपर दोनोंका सामाना हुआ। हिंदी सेनाका दाहिना पासा प्रबल तोपखानेके कारण निर्भय होनेसे अंग्रेजोंकी उस ओर कुछ न चली। किन्तु घमासान युद्धके कारण बायाँ पासा अंग्रेजी सेनाके दबावके सामने टिक न सका। गडबडीमें पाच तोपें पीछे छोडकर हिंदी सेना दिल्लीतक हटी। किन्तु, गोरे आकर उन तोपोंपर दखल करें उसके पहले ११ वी पल्टनके एक सिपाहीने डटकर मौतका सामना किया। कोई अपना कर्तव्य करे या न करे, देहमें प्राण हों तब तक राष्ट्रसेवाका प्रण उसने किया था। देशसेवाकी इस लगनसे, गोरोंका हाथ तोपोंपर पडे इसके पहले उसने बारूदमें आग लगा दी, जिसके प्रचड धमाकेसे कॅप्टन ॲन्ड्रूज और उसके साथी जलकर खाक हो गये तथा कई घायल हो गये। इस तरह अनेक शत्रुके सिर हिंदमाताके चरणोंपर चढा देनेके बाद उस हुतात्माने अपनाभी मस्तक उसकी गोदमें सदाके लिए धर दिया। जिस तरह दिल्लीके शस्त्रागारको दाग देनेके साहसपूर्ण आत्मबलिदानके लिए अंग्रेज इतिहासकार लेफ्टेनंट विलोबीकी कीर्ति गाते हैं, उसी तरह मातृभूमिके लिए हुतात्मा बनकर

यत्रणाएँ दी जातीं जहाँ पढे लिखे अफसर तमाशा देखते और उसमें रस लेते। —होम्सकृत हिस्टरी ऑफ दि सीपॉय वॉर पृ. १२४

मौतको गले लगानेवाले उन वीरोंका स्तुतिगान हमें अवश्य करना चाहिये। किन्तु, दुर्भाग्य! उन हुतात्माओंका नामतक इतिहास नहीं जानता। इन अनामिक वीर सैनिकोंके बारेमें के लिखता है "'विद्रोहियों'में भी राष्ट्रकार्य (नॅशनल कॉज) सफल करनेके लिए प्राण हथेलीपर लेकर कराल कालके गालमें घुसनेवाले शूर वीर थे,--इस घटनासे हम अच्छी तरह यह बात सीख गये।" *

इस पहली भिडन्तमें अंग्रेजोंको पूरी विजय मिली, तब वे मानते थे कि दिल्ली तो दो एक दिनमें हथिया लेंगे; इस प्रकार की पूछताछ करनेवाले कई पत्र भी चारों ओरसे आने लगे, किन्तु बात कुछ और ही थी। क्रांतिका यह अनोखा भडाका होकर देशभरमें उसकी ज्वालाएँ भडक रही थीं, तो भी उसका नेतृत्व कर अनुशासनपूर्वक उसका मार्गदर्शन करने के लिए आवश्यक धैर्य तथा नीतिज्ञता दिल्लीमें नहीं थी। हाँ, दिल्लीके हर बाशिंदेने यह प्रण किया था कि 'जबतक दम में दम हो, मातृभूमि को स्वतंत्र करके ही दम लेंगे।" ३० मई को रातभर पीछे हटकर आये हुए सैनिकोंकी लोगोंने बडी निंदा की; तब तैश आकर फिर वे ३१ मईको मैदानमें उतरे। क्रांतिकारी तोपें आग उगल रही थीं, अंग्रेजी तोपें भी उनका मुकाबला कर रही थीं। किन्तु, उस दिन क्रांतिकारी तोपें ठीक निशानेपर गोले फेंकती थीं और क्रांतिकारी भी उस दिन असाधारण धैर्यसे डटे हुए थे, जिससे अंग्रेजोंकी ओर मृतोंकी संख्या बहुत बढ गयी। तिसपर मईकी चिलचिलाती धूप भी अंग्रेजोंको हैरान कर रही थी। इसीसे, अंग्रेजोंने शामके बाद चारों ओरसे हमला करनेकी ठानी। किन्तु क्रांतिकारियोंने अपनी तोपोंसे प्रलयंकर आग उगाली और अपनी फैली हुई पाँतीको भी सँवार लिया और जब ठीक अंग्रेजी सेना हमला प्रारंभ कर रही थी; तभी बडी कुशलतासे राष्ट्रीय सेना हट गयी! बहुत अच्छा क्रांतिवीरो! एक दिनमें तुमने काफी प्रगति की है। कल भी इसी तरह कुशलतासे तुम हट जाओगे तो बस अंग्रेजोंकी बन आयी समझो! क्यों, कि छोटी

* के कृत हिस्टरी ऑफ दि इंडियन म्यूटिनी खण्ड २ पृ. १३८

लड़ाई नहीं, एक मुठभेडके लिए आवश्यक बल अब उनमे नही बचा है। दिनांक १ जूनको, पहलेही पस्त हुए अंग्रेजोंके पडावकी पिछाडीपर एक सेनादल चढ आता दिखायी पडा। काले सैनिकोंका यह दल देख कर अंग्रेजोंके छक्के छूट गये। फिरभी आत्मरक्षाके हेतु सम्हलकर खडे हो ही रहे थे कि पता चला, यह क्रान्तिकारियोंकी सेना नहीं, वरंच मेजर रीडके नेतृत्वमे गोरखा-सैनिक-दल है। अम्बालेकी अंग्रेज सेनाको सिक्खोंने सहायता दी, तो मेरटकी गोरी सेनाकी सहायताके लिए गोरखे दौड आये। अब बेचारे दिल्लीके क्रातिकारी क्या कर सकते है? ये दोनो अंग्रेजी सेनाएँ ७ जूनको मिलीं। साथमें नाभा नरेशकी सहायतासे बनी, मुहासरेका काम करनेवाली कपनी आ पहुँची। जब यह कपनी अबाले पहुँचेगी तो उसपर टूट पडनेकी प्रार्थना पाचवी पलटनके सिपाही गोरखा सैनिकोंसे कर रहे थे, किन्तु गोरखोंने स्वधर्म या स्वदेशकी सेवा करनेसे साफ इनकार कर दिया और यह घेरा-दल दिल्ली आ पहुँचा। अंग्रेजोंकी सयुक्त सेना अब निःशक होकर अलीपुर तक पहुँच गयी।

अंग्रेजी सेनाके अलीपुर जातेही क्रातिकारी सेना दिल्लीसे फिर निकली और बुदेलकी सरायके पास अंग्रेजोपर हमला किया। अंग्रेजी सेना पूर्णतया सुसगठित थी। आवश्यक तोपचियोंसे युक्त तोपखाना, युद्धोपयोगी सामग्री, कार्यकुशल प्रमुख अधिकारीगण, अनगिनत नये पर्याप्त सैनिक एव बचाव तथा आक्रमणके लिए सुविधाजनक युद्धक्षेत्र आदि किसी बातकी कमी अंग्रेजोको न थी, जहाँ एक पवित्र साधनाबलके बिना क्रातिकारियोंके पक्षमें और कुछ नहीं था। उनका नेता एक नरेश था किन्तु आयुभरमें उसने लडाई कभी न देखी थी। क्रातिदलमे शिक्षित सैनिकोंकी अपेक्षा ऐरेगैरेही अधिक थे और उपरसे अपने ही देशबधु सिक्ख तथा गोरखे शत्रुकी सहायता कर रहे थे, यह सब सोचकर उनका दिल बैठ गया। इधर अंग्रेजोने ठान ली थी कि 'यह लडाई एक दर्शनीय तमाशा होगा।' किन्तु स्वराज्यकी अत्युच्च साधनासे सैनिकोंके हृदयमे ऐसी कुछ दिव्य स्फूर्ति तथा ऐसा अनोखा जीवट प्रेरित था; कि इन सभी अडचनोको उन्होने खिलवाड माना। उस दिन क्रातिकारियोंने वे जौहर दिखाये, कि अंग्रेजोको जँच

गया कि "यह लडाई एक दर्शनीय तमाशा नहीं, बल्कि यह सचमुच भयंकर तथा प्राणोंका सट्टा है। दिल्लीके तोपचियोंने अंग्रेज तोपोंके मुँह बंद कर दिये। गोरे तोपची तथा उनके गोरे अधिकारी एक के बाद एक खतम होने लगे तब दिल्लीकी तोपोंने और ही आग उगलना शुरू किया। तब तो अंग्रेजोंने पैदल सेनाको तोपखानेपर ही चढाई करनेकी आज्ञा दी। वे ठेठ तोपों तथा युद्ध द्रव्यागार पर ही टूट पडे, किन्तु क्रांतिदल टससे मस न हुआ। स्वधर्म और स्वराज्यके इस युद्धमें ये क्रांतिकारी सच्चे वीर की तरह डट गये और अंग्रेजी सगीनें उनके शरीरोंसे आरपार निकल जानेतक वे अपनी जगहसे न हटे। इन दुर्दैवी वीरवरोंके साथ रहकर धीरज बंधानेवाला एक भी नेता होता, तो उन्हें किसी पथप्रदर्शन की आवश्यकता नहीं थी। क्यों कि, अंग्रेजी सगीनोंसे देहकी छलनी बननेपर भी, स्वधर्म और स्वराज्यपर निछावर होनेवाले ये वीर रचभी न हटे, जहाँ इन के 'सिपहसालार' तोपकी पहली ही गडगडाहटके साथ दिल्लीको बहादुरीसे भाग गये थे। ऐसे अवसरपर इस अभागी सेनाके बायें पासेपर अंग्रेजी घुड-दलने तथा पिछाडीपर होर्स ग्रँट की गाडीचढी तोपोंने हमला किया, तब, अपनों तथा परायोंसे सताये गये तथा दिनभर की लडाईसे थके हुए सैनिक हार गये, उनकी पाँती टूट गयी और उन्हें दिल्लीको लौटना पडा। सेनापति बर्नार्डने विजयको पक्की करनेके लिए अंग्रेजी सेनाको और दबाते चले जानेकी आज्ञा दी, तब गोरी सेना दिल्लीके सरक्षक तट तक पहुँच गयी। आजकी लडाईका परिणाम यह निकला कि अब दिल्लीके आसपासके टापू परसे क्रांतिकारियोंका काबू उखड गया और गोरोंको दिल्लीके किलेपर ही सीधे हमला करनेके अनुकूल आक्रमणभूमि अनायास मिल गयी। यहाँ एक बात कहना उचित है, कि सीमूरके नेतृत्वमें अत्यंत वीरतासे लडे गोरखा कंपनीका गुणगान अंग्रेज इतिहासकारोंने विशेष रूपमे किया है। क्यों कि, अपनीही माताके पुत्रोंकी गर्दन काटनेमें अत्यधिक उत्साह तथा वीरता दिखानेमें आनंद माननेवाले गोरखोंका शौर्य तथा निष्ठा अंग्रेजोंने बार बार बखानी है।

बुंदेल की सरायकी लडाई गोरखोंके बलपर अंग्रेजोंने जीती किन्तु इससे उनका भ्रम भी दूर हो गया। क्यों कि, रातमें दिल्लीके अंदर प्रवेश

कर अपने कट्टर शत्रुको लहूसे नहलानेके स्वप्न पूरे चूर चूर हो गये। इस लढाईने इस कटु सत्यका अनुभव अग्रेजोको कराया कि क्रातिकारी सेना कोई गैरो का जमघट नहीं है। स्वधर्म और स्वराज्यकी रक्षाके हेतु म्यानसे बाहर पडी तथा सात्विक क्रोधका पानी चढी तलवारे दिल्लीकी किलाबदीपर चमकती थी। इस लडाईमे अग्रेजोके चार अफसर और ४७ सैनिक खेत रहे, घायलोकी सख्या १३० तक पहुँची थी। किन्तु उनकी छावनीमे जिस बातसे दुःख तथा निराशाकी गाढी घटा छा गयी थी, वह थी ॲडज्युटट जनरल कर्नल चेस्टरकी मौत। पाठक अनुभव करेंगे कि ये अग्रेज इतिहासकार क्रातिदलकी हानिका वर्णन करनेमें कभी कभी अतिशयोक्तिमें उपन्यास को भी मात कर देते है। यहाँ बताना आवश्यक है कि उस दिनके घमासान युद्धमें क्रातिकारियोकी तोपोकी हानिको बताते हुए एक ग्रथकार तेरहकी सख्या देता है, जहाँ दूसरा उनकी सख्या छब्बीस होने की बात दावेसे कहता है। और बात यह है कि ये दोनों ग्रथकार सैनिक अधिकारीके नाते उस लडाईमें स्वय उपस्थित थे।

हाँ, तो ८ जून के सायकाल, दिल्लीकी किलाबदीको अग्रेजी सैनिकोंने घेरा डाल दिया। अम्बाला और मेरठसे सेनाको सुरक्षित ले आना बडी मात्रामें पजाबकी हालतपर अवलबित था। इससे मेरठके विद्रोहका उस प्रातपर क्या प्रभाव पडा, वहाँके राष्ट्रीय विचारके लोगोंने उससे क्या लाभ उठाया और उनकी गतिविधि क्या रही तथा उनके विरुद्ध अग्रेजोंने कौनसी चालें चली और उन्हें कहाँतक सफलता मिली इन बातोंको देखना आवश्यक है। सिक्खोंका साम्राज्य नष्ट होकर जब पजाबपर अग्रेजोका अधिकार हुआ तब उस प्रातमें लार्ड डलहौसीने ऐसी नीति जारी की, जिससे स्वातत्र्यकी आकाक्षा तथा क्षात्रवृत्ति सिक्खोके इन दोनो प्रभावशाली गुणोंका पूरा नाश हुआ। इस नये लूटे हुए प्रांतकी बागडोर जब सर हेन्री लॉरेन्स और सर जॉन लॉरेन्सके हाथ आयी तो उनका पहला कदम था लोगोंको निहत्थे करना और सिक्खोंको अग्रेजी सेनामें भरती करना। फिर उन्होंने उत्तर भारतकी अधिकाश गोरी सेनाको पजाबमें रख दिया। इस तरहसे सब ओरसे दबाये जानेसे जनताको पेट पालनेके लिए खेती पर ही निर्भर रहना पडा, दूसरा कोई चाराही न रहा। राष्ट्रकी जनशक्ति जब

केवल खेतीबाडी ही मे मगन रहती है, तब, स्पष्ट है कि उस राष्ट्रकी क्षात्रवृत्ति धीरे धीरे लोप हो जाती है। लोगोंको 'शान्ति' का युग अच्छा लगता है। खेतीमें खलल पैदा होती हों तो क्रांतिके कामोंमें सहजमें, हाथ बँटानेकी चेष्टा नहीं करते। अंग्रेजोके इस अतिकुटिल राजनैतिक सिद्धातने पंजाबमें बडी सफलता पायी। सिक्खोंका साम्राज्य नष्ट होनेसे दशवर्षोके अंदर बहुसख्य सिक्ख समाज अपनी तलवारोंको पूर्णतया भूलकर, हल जोतनेमे अपना गौरव समझने लगा; जिन थोडे सिक्खोंके पास अब तक शस्त्र था उसे उन्होने अपनेही देशबधुओंका नाश करनेके लिए अंग्रेजोंके सुपुर्द कर दिया। इस तरह पहलेही पूरा बदोबस्त हो चुका था। पंजाबमें किसी तरहका ऊधम होनेकी रच भी सम्भावना न होनेका विश्वास सर जॉन लॉरेन्सको हो गया था। अन्य अंग्रेजी अधिकारियोंके समान उसे भी मई के प्रारंभ तक आगामी भीषण संकटकी जरा भी कल्पना न थी। धूपकालके लिए लाहौरसे मसूरीकी ठंडी पहाडोकी सैर करनेका उसका विचार पक्का था। इसी समय मेरठ और दिल्लीके संवादोंसे पंजाबभी थर्रा गया। इन सवादोंमे भरे भयकर और गभीर अर्थको चतुर अंग्रेजोंने झट भाँप लिया और विदेशी साम्राज्यको उखाडनेकी चेष्टा करनेवालोंका सामना करनेके लिए सिद्ध होकर अपना मसूरी जानेका विचार उसने छोड दिया।

पंजाबी सेनाका बडा भारी हिस्सा इस समय मियॉमीरमें था। मियॉ-मीर की छावनी लाहौरके बहुत पास होनेसे लाहौरके किलेकी रक्षाके कामपर सबके सब हिंदी सिपाही तैनात हुए थे। मियॉमीरकी छावनीमें हिंदी सैनिक सख्यामें गोरे सैनिकोंसे लगभग चौगुने थे; फिर भी मेरठके बलवेका सवाद मिलने तक अंग्रेजोंको हिंदी सैनिकोंपर जराभी सदेह न हुआ। किन्तु उस खबरके पहुँचते ही, हर हिंदी सैनिकपर शक होने लगा कि कहीं वह अपने मेरठी भाइयो के गुप्त षडयन्त्रमे शामिल तो नहीं है? लाहौर की सेनाका सरदार था रॉबर्ट मॉतगॉमेरी। सर जॉन लॉरेन्स और रॉबर्ट मॉतगॉमेरी दोनों अतिशय धैर्यशील तथा सयमशील थे। किसी भी भयकर अनपेक्षित अड़चनमें उनकी समयकी सूझ सराहनीय थी। इस समय पंजाबके सैनिकोंमें राष्ट्रीय स्वातत्र्यकी लहरका क्या प्रभाव पडा था इसको टटोलना ठीक होगा। अंग्रेजोंने सिपाहियोंकी मनोगतिको

जाननेके हेतु एक ब्राह्मण खुफिया नियुक्त किया था। इस ब्राह्मणने देश-द्रोही का काम बडी ईमानदारीके साथ अदा किया। मॉतगॉमेरीसे कहा "साब! क्रान्तिका विष सैनिकोंके अदर पूरा मिद गया है, (गलेपर तर्जनीको फेरकर) पूरेपूर!!" ब्राह्मणके इस अभिनयपूर्ण वाक्यसे लॉरेन्स तथा मॉतगॉमेरीकी ऑखें पूरी खुल गयी। उन्हे मालूम हो गया कि, क्रातिका सगठन केवल उत्तरभारत ही मे नहीं, पजाबमे भी दृढ हुआ था। पजाबमे क्रातिकी अग्नि काफी धुधुवाती रही केवल चिनगारी पडनेकी टोहमे थी! यह गुप्त रहस्य मेरठके अचानक बलवेसे जाननेका अनायास अवसर उनके हाथ लगा। मॉतगॉमेरीने मेरठके बलवेको मनही मन धन्यवाद देकर तुरन्त सिपाहियोको निशस्त्र करनेकी आज्ञा दी। ३० मई को सवेरे मियॉमीरके सिपाहियोंका सामूहिक सचलन होनेकी आज्ञा हुई। हिंदी सिपाहियोको अपने भविष्यके बारेमे रच भी सदेह पैदा न हो जाय, इस लिए गोरे लोगोके लिए एक सुदर नाचका आयोजन जानबूझकर किया गया। मनोविनोदके रहस्य पर क्रातिकारी सिपाही सोचे इसके पहले ही गोरे रिसाले तथा तोपखानेने सब हिंदी सिपाहियोंको घेर लिया। सिपाही भौचक्के हुए। जब सचलन चालू था, तभी तोपें तयार रखने की आज्ञा दी गयी थी। सिपाहियोंसे सख्तीसे शस्त्र रखवाये गये। क्रोधसे कॉपते किन्तु सुसज्जित तोपखानेको देख पस्त हुए लाचार हजारो सिपाही हथियार डालकर एक शब्द भी मुँहसे न निकालते हुए सीधे अपने बारिकोको लौटे।

इन्हीं सिपाहियोने अफगानी युद्धमें अग्रेजोके प्राण बचाये थे। इनसे शस्त्र रखवानेका काम जारी था तभी लाहौरके किलेकी ओर एक गोरी पलटन भेजी गयी। इन गोरोने किलेके तोफखानेके बलपर किलेके हिंदी सिपाहियोंसे शस्त्र रखवाये, उन्हे निकाल बाहर कर दिया और किलेपर काबू जमा लिया। इस आयोजनमे अग्रेज यदि रचभी लचरपन या ढीलापन रखते तो केवल एक पखवाडेके अदर पंजाबभरमे क्रातिकी ज्वालाएँ धूम मचानेका दृश्य दीख पडता। क्यो कि, मियॉमीरके सिपाही लाहौरके किलेपर कब हमला करते है, इसकी ओर पेशावर, अमृतसर, फिलौर और जालंदरकी हिंदी पलटनें ऑख लगाये बैठी थी। पर, जब मियॉमीरके सिपाही निःशस्त्र कर दिये गये है और लाहौरका किला भी अग्रेज

ले चुके है यह संवाद सब ओर फैल गया तब अंग्रेजोंका आतंक बढकर पंजाबमें उन्हे सुरक्षित भूमि मिल गयी। उनकी धाक खूब जम गयी।*

किन्तु लाहौर के किले के सुरक्षित स्थान से भी बढकर अमृतसर के गोविंदगढ का स्थान था। गोविंदगढ सिक्खों का पवित्र स्थान था। वहाँ कहीं कुछ हो जाता तो वहाँ के सिक्ख विद्रोह करनेकी अधिक सम्भावना थी, इस लिए सिपाहियों की खास नजर थी। इस मे मियाँमीर के निहत्थे सिपाही गोविंदगढ को कब्जा करनेके लिए अमृतसरकी ओर कूच कर जाने की अफवाह फैली थी। आगामी संकट को भाँपकर अमृतसर की रक्षाके लिए जाट और सिक्ख किसानों से प्रार्थना की। उनकी प्रार्थना को मान-कर इन अंग्रेजनिष्ठ देशद्रोहियोंने अंग्रेजों की सहायता की और १५ मईके पहले लाहौर के समान अमृतसर का किला भी अंग्रेजों के हाथ लगा। इस तरह लाहौर तथा अमृतसरके दो महत्त्वपूर्ण स्थान क्रांतिके संपर्कसे पूर्णतया दूर रहे।

पंजाबकी रक्षाका आवश्यक प्रबंध पूरा कर सर जॉन लॉरेन्सने अपने प्रांतके बाहर अपनी सैनिक शक्तिको बढाना प्रारम्भ किया। दिल्लीके संवाद पातेही उसने बारंबार कहा कि यह 'बलवा' नहीं, एक 'राष्ट्रीय उत्थान है। फिर भी उसे यह भ्रम था कि थोडेही समयमें यदि दिल्लीपर दखल कर सके तो और किसीभी स्थानमें क्रांतिका कोंपल नहीं निकलेगा। इसी लालसासे वह सेनापति ॲन्सनको पत्र पर पत्र लिखता रहा कि कुछ भी करो किन्तु जूनके पहले दिल्लीको हथिया लो। यहाँ तक, कि अम्बालेकी सेनामें सख्याकी कमी न हो इस लिए वह लगातार पंजाबी सेनाविभागों को उधर भेजता रहा। हाँ, साथ, पंजाबकी रक्षाका पूरा दायित्व उसने अपने सिर लिया ही था। इस सहायक सेनाकी पहली पलटन थी, डॅलीके नेतृत्वमें,

* स. २५ "पंजाब यदि हाथमें जाता तो हमारा सर्वनाश हो जाता! हमारे पास सैनिक सहायता पहुँचनेके पहले तो सभी अंग्रेजोंकी हड्डियाँ धूपमें सूखती पडी होतीं। उस संकटसे बचकर फिर सिर ऊँचा करना और पूरबमें अपने शासनको जमाना इंग्लैंडके लिए असम्भव था। — लाइफ ऑफ लॉर्ड लॉरेन्स

गाइड कोर। जॉन लारेन्सको डॅलीके शौर्य तथा क्षमतापर विशेष भरोसा था, जिससे गाइड-कोरका नेतृत्व कर दिल्लीपर चढ जानेकी उसे आज्ञा दी। बडे वेगसे मार्ग तय करते हुए अपनी सेनाके साथ डॅली बुटेलकी सरायको वहॉकी मिडन्तके दूसरे दिन, पहुँचा। दिल्लीको घेरनेमें अब दो देशद्रोही पलटनें जमा हुई थीं। एक बीड के नेतृत्वमें लडनेवाली गोरखा पलटन तथा डॅनीके नेतृत्वमें लडनेवाली पंजाबी पलटन। ये दोनों पलटने अंग्रेजोंकी बडी प्यारी थीं: और कौन कह सकता है कि यह प्यार अयोग्य था? देशद्रोहियोंकी नमकहरामी-मात्राको मापनेपर अंग्रेजोंके प्यारको वे सर्वथा क्यों न पात्र हो?

डॅलीकी पलटन दिल्लीको रवाना होनेपर सर जॉन लॉरेन्सने पंजाबकी राजनैतिक स्थितिकी फिर एकबार बारीक छानबीन की। इस प्रांतमें हिंदु-मुसलमान तथा सिक्खोंमें कट्टर शत्रुता सदा धुधुवाती रहती थी। उत्तर भारतके समान यहॉ भी हिंदु-मुसलमानोंमें राजनैतिक एकताके भाव जागरित होना अत्यंत आवश्यक था। इसका महत्त्व पंजाब-निवासी अब तक समझ न सके थे। ऐसे तो उनकी स्वाधीनताका अन्त होकर दस सालभी पूरे नहीं हुए थे। किन्तु १८४९ मे जो सिक्ख अपनी तलवारे अंग्रेजोंकी गर्दन रेतनेके लिए समरांगणमें जुट जाते थे, वे ही सिक्ख आज १८५७में अंग्रेजोंसे लिपटकर नाच रहे थे। इस अजीब ऐतिहासिक रहस्यका स्पष्ट कारण यह था कि, सिक्खोंके स्वाधीनता गॅवानेको थोडाही समय बीता था, कि १८५७ की क्रांति फूट पडी। खालसा गुरुके शूर बॉके इन अनुयायियोंने मुसलमानी गुलामीसे इतना तीव्र द्वेष किया, जिसके कारण एक शतीतक लगातार मुसलमानोंसे लडाइयॉ की। अर्थात् इन्ही सिख्खोने अंग्रेजी सत्ताका सच्चा स्वरूप पहचाना होता तो, निश्चित बात है, कि वे अंग्रेजी हुकुमत को क्षणभरभी टिकने न देते। किन्तु 'अंग्रेजी सत्ता याने सौ टका गुलामी' यह विचार इन अज्ञ वीरोंके अंतःकरणपर पूर्णरूपसे अंकित होनेके पहलेही, १८५७की क्रांति फूट पडी। भारतीय राजनीतिमें जब एक अनोखी क्रांति करवट ले रही थी उसी समय अंग्रेजोंकी गुलामी की जंजीर भारतके पावोंमें जकडी जा रही थी। सदियोंसे कोनेमें सडते हुए राष्ट्रीय जीवनके कई सोते अपने बॉधोंको तोडकर एक महानदी में मिल रहे थे। यह महानदी

है सभी इकाइयोको अपने में समानेवाली भारत की राष्ट्रीय एकताकी गगा। ससार के सभी बडे और सगठित राष्ट्र, ऐसी एकता के पहले,–या यों कहिए कि उसी एकता के लिए, गडबड, मतभेद तथा आपसी वैरभाव-बीच की इन अनिवार्य अवस्थाओं से गुजरे हुए है। जब इटली, जर्मनी और इग्लैंड क्रमसे रोमनों, सॅक्सनो और नॉर्मनों के अधिकार मे थे तब वहाँ कितने आपसी झगडे थे इसपर ध्यान दिया जाय तथा उन राष्ट्रोंके वशो, धर्मों तथा प्रांतोंके बीच चलनेवाली घोर शत्रुता को देखा जाय तथा आपसी प्रतिशोधमें होनेवाली राक्षसी यत्रणाओं पर गौर किया जाय तो इनके सामने भारत की फूट तो एक छिछोरी बात मालूम होती है। उपर्युक्त देशोंने उनमे रहनेवाले भिन्न भिन्न लोगो की एकता आपसी झगडो की भट्टीमे तथा अत्याचारी विदेशी शासन की आगमे गला कर, अब अटूट बना डाली और वे शक्तिशाली राष्ट्र बन गये है इस वास्तविकतासे कौन इनकार कर सकता है?

इसी ऐतिहासिक विकास–प्रक्रियासे भारतभूमिमे भी, यहाँ बसनेवाले भिन्न मानव वश तथा वर्ण एक सॉचेमे ढलकर एक–राष्ट्रीयत्वका उदय हो रहा था। अग्रेजी पराधीनताकी बटीमे उत्तर भारतीय जनताकी आपसी फूट चकनाचूर हो गयी, और उसीसे अत्याचारी शासनको उखाड फेकनेको उसमें प्रेरणा हुई। किन्तु उस समय इस राजकीय दासताका रूप तथा उसका घोर परिणाम पूरीतरह जॅच जानेके लिए दस वर्षोका समय भी पर्याप्त न हुआ। और इसीसे सिक्ख तथा जाट उस महान् राष्ट्रीय बनावकी प्रक्रियाको समझ न सके, जिससे सयुक्त भारतीय राष्ट्रके निर्माणमे उन्होंने कुछ भी भाग न लिया। *

---

* (स. २६) सर जॉन लॉरेन्स २१ अक्तूबर १८५७ के एक पत्रमें लिखता है:–"सिक्ख यदि हमारे विरुद्ध क्रातिकारियोसे मिल जाते तो हमें बचाना मानवी पहुँचके बाहरकी बात होती। किसीको आशाही न थी, कोई इसे भॉप नही सकता था, कि अपनी गॅवायी हुई राष्ट्रीय स्वाधीनताको हडपनेवालोंका प्रतिशोध लेनेके मौकेसे लाभ न उठाया जायगा, ये लोग इस लोभको सवरण करेंगे।"

पंजाबके अंग्रेजी शासकोंने क्रांतिकी इस कच्ची कडीको ठीक पहचाना और बडी चतुरतासे उन्होंने इस बातसे पूरा लाभ उठाया। उन्होंने सिक्ख और जाटोंको मुसलमानोंके विरुद्ध उभाडनेकी कुटिल कार्रवाई की। सिक्खोंमें किसी समय फैली हुई भविष्यवाणीका स्मरण जान बूझकर उन्हें कराया गया। भविष्यवाणी यह थी कि, जिस स्थानमें मुगल सम्राटोंने सिक्खोंके गुरुओंको कत्ल किया, उसी राजधानी दिल्लीपर सिक्ख एक दिन चढाई करेंगे, वहाँ,के सिंहासनको मटियामेट करेंगे। अंग्रेजोंने 'खालसा'ओंको यह जताना शुरु किया कि वह दिन अब आ लगा है, भविष्यवाणी सच निकलेगी। किन्तु, हाँ यदि अकेले सिक्खही दिल्लीपर चढाई करें और उसे जीतें, तो अंग्रेजोंको क्या लाभ? हाँ, बहादुरशाहके स्थानपर रणजीतसिंह आ-जायगा बस! किन्तु बहादुरशाह और रणजीतसिंह दोनोंको अंगूठा दिखाकर स्वयंही दिल्लीके सिंहासनपर बैठनेका जिनका प्रमुख मन्तव्य था, उन्होंने इस भविष्यवाणीमें और थोडा घुसेड दिया हो तो वह स्वाभाविक था। यह परिवर्धित भविष्यवाणी कहती थीः-सिक्ख दिल्लीपर दखल करेंगे; मुगल सिंहासन मटिया-मेट हो जायगा। किन्तु; हाँ, खालसा सिक्खों और ताम्रमुखी (गोरे) अंग्रेजोंके संयुक्त जतन हीसे होगा! वाहवा! क्या भविष्यवाणी है! सिक्ख इस जालमें फँसे और भविष्यवाणी सच्ची निकली। धूर्त अंग्रेजोंने 'गुरुदे खालसा' की भावुकतासे पूरा लाभ उठाया। दिल्लीके बारेमें सिक्खोंका द्वेष भडक उठे इस लिए झूटमूठ यह बात फैला दी कि बहादुरशाह की पहली आज्ञा थी, सभी सिक्खोंको कत्ल किया जाय। बेचारा बूढा बहादुर शाह! क्या दुर्भाग्य है। इन्हीं दिनों, सम्राट दिल्लीकी गली गलीमें जाकर पुकारता फिरता था कि 'यह युद्ध फिरंगियोंके खिलाफ है, इसमें किसी भी हिंदी आदमीका बालभी बाँका न हो'*

क्रांतिदलके तनतोड प्रयत्न करने परभी सिक्ख अंग्रेजोंसे मिल गये। किन्तु पंजाबमें और भी पलटनें थीं जो केवल हिंदी सिपाहियोंकी बनी थीं। उन्होंने अंग्रेजोंसे लोहा लेनेका निश्चय किया था और योग्य अवसर की ताकमें थे। इन पलटनोंके सिपाही ही केवल स्वातंत्र्यके लिए प्रतिज्ञाबद्ध

---

* मेटकॉफ

न थे, वरन् सेना के बाहर के हजारो लोग क्रांतिका मंत्र सब ओर फैलाने को कटिबद्ध थे इसीसे, मियॉमीर के सिपाहियोको निःशस्त्र बनाने पर भी, अंग्रेजोंको बहुतही जल्द मालूम हो गया, कि जिस भूमिको कडी जान कर वे उस पर डटे है वह अदरसे सेध लगकर पोली बन गयी है। लाहौर तथा अमृतसर के दो किले यद्यपि सुरक्षित थे, फीरोजपुरका गोला-बारूदका केन्द्र बहुत ही असुरक्षित था। कहीं विद्रोही सिपाही उसपर कब्जा करनेके जतन तो नही कर रहे है! इसे आजमानेके लिए १३ मईको सिपाहियोका एक सचलन तय हुआ। किन्तु सचलनके समय सैनिक इतनी शान्तिसे पेश आये कि उनके कलेजेको चीरनेवाले ज्वलन्त प्रतिशोधका सुराग अंग्रेजोंको रचभी न मिला। इसलिए उन्हे निःशस्त्र करने का विचार रद हुआ। हॉ, दो पलटनोंको अलग किया गया। एक पलटनको संचलन करते हुए बाजारोंमे घुमाया गया। हॉ, इन बाजारोंमे आजकल क्या सौदा हो रहा है इसकी अंग्रेजोको थोडेही कल्पना थी? ग्राहक और व्यापारी दोनोंके प्रचारसे सिपाहियोमे स्वाधीनताकी लहर खूब जोर मार रही थी। बाजारोंमे सचलन करते हुए निकल जानेपर सिपाहियोंने अपनी हिचकिचाहट, संदेह-शीलता आदि तजकर एकही पक्का निश्चय कर लिया। उसी क्षण 'हर हर महादेव'का नारा बुलन्द हुआ और तब फीरोजपुरका शस्त्रागार सँभालना असम्भव हो जानेसे अंग्रेजोको उसे जलानेके बिना कोई चारा न रहा। इसके बाद जिस दिल्लीका राष्ट्रीय झण्डा सब भारतवासियोको उसके नीचे खडे हो जानेका निमत्रण देनेके लिए लहरा रहा था, उसी दिल्लीकी ओर द्रुतगतिसे दौड पडे। इसी समय फीरोजपुरकी जनताने बलवा कर दिया ओर अंग्रेजोके बंगलो, डेरो, क्लबघरो तथा गिरजाघरो को जला दिया गया। गोरोका शिकार करनेके लिए लोग घूमने लगे। किन्तु मेरठसे तारद्वारा चेतावनी मिलनेके कारण सब गोरे बारिकोंमे छिपे रहे। सिपाहियोकी टोहपर रहे गोरे सैनिकोंने जो मिले उसे तलवारके घाट उतारा और कुछ दूरी तक उनका पीछा कर अपनी अविचारी कत्लेआम तथा पैशाचिक अत्याचारोकी शेखी बघारते हुए गोरे सैनिक लौट पडे।

क्रांतिकारी सेनाके समान सीमोत्तर प्रांतके अफगानी जगली गिरोहोंकी भी धाक अंग्रेजोंपर जमी थी। १८५७ की क्रांतिका प्रचार

गुप्तरूपसे बहुत जोरोंसे होता था तब लखनऊकी एक गुप्त संस्थाने काबुलके अमीरसे सहायताकी प्रार्थना की थी! १८५५ में फॉरसीथके हाथ लगे एक पत्रसे यह निःसंदेह कहा जा सकता है कि लखनऊके मुसलमान अमीर दोस्त मुहम्मदसे संबंध जोडनेमें मगन थे। उस पत्रमें लिखा है: "अवधपर तो अब दखल हो चुका, हैदराबादकी भी वही गत होगी, तब मुसलमानी आधिपत्यके नामपर कुछ भी न बचेगा। समयपर ही इसका इलाज होना चाहिये। यदि स्वराज्यके लिए लखनऊके लोग बलवा करें तब, अमीरसाहब, हम आपसे किस प्रकारकी सहायतापर भरोसा रख सकते हैं?" लखनऊके इस पत्रके उत्तरमें राजनीतिज्ञ अमीरने इतनाही कहा कि उसपर विचार होगा। किन्तु काबुलके अमीरसे इग्लैंडने पहलेही मित्रता की संधि कर ली थी। अमीर से अधिक पेशावरके पास मुसलमानी गिरोहो का ही भय अंग्रेजोंको लगता था। इस सीमोत्तर प्रदेशमें कुछ मुल्लाओं को भेज दिया गया। इनका काम था, उन टोलियोंमें उस विचार को फैला देना कि अंग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह न किया जाय! पेशावरके पास होनेवाले सभी अंग्रेज अफसर सबके सब धैर्यशील, राजनीतिज्ञ तथा मॅजे हुए सिपाहीथे उन्होंने इस आगामी संकटको भाँप लिया और बडे कष्ट उठाकर ही जॉन लॉरेन्सके पेठू निकलसन, एडवर्डस् तथा चेम्बरलेन, इन अंग्रेज अफसरोंने तुरन्त इलाज कर उस संकटको टाला। पहले उन्होंने उन पठानोंके गिरोहोंको अपनी सेनामें भरती करनेकी ठानी। ये पठान पैसेके लालची होते हैं, इस लिए अंग्रेजोंने उन्हें रिश्वत देना चाहा। इस तरह इन गिरोहोंको खरीद कर पंजाबमें धुधुवाती अशान्तिको दबानेके लिए इनकी गश्ती पलटनें बनायीं।

पेशावरके साहसी गोरे अफसरोंने पहली चोट करनेकी दृष्टिसे सैनिकोंको निःशस्त्र करनेका दाँव किया। किन्तु अंग्रेज सेनानी तथा अन्य सेनाधिकारियोंको अपनी पलटनोंके सिपाहियोंपर लदे जानेवाले अपमानके बारेमें बडा दुख होता रहता था। कारण यही था, कि १८५७की क्रांतिका संगठन इतने गुप्तरूपसे किया गया था कि गोरे अफसर भरोसा नहीं कर सकते थे कि उनके मातहत कोई क्रांतिदलके सिपाही होंगे फिर भी कॉटन

और निकल्सनने २१ मईको गोरी पलटनके पहरेमें इन हिंदी सिपाहियोंको खडाकर शस्त्र रख देनेको कहा। इस अचानक अडचनमें फँस जानेके कारण सैनिकोंने चुपचाप हथियार डाल दिये; उनके अफसर इस अकारण अत्याचारको चुपचाप देखना सहन न कर सके। उन्होंने भी अपने हथियार तथा अपने तमगे और फीतें फेंक दीं और सरकारको गालियाँ देते हुए सिपाहियोंके साथ हो गये!

पेशावरकी पलटनके हथियार डलवानेपर होतीमर्दानकी ५५ वीं पलटनपर यही प्रयोग करनेका मौका अंग्रेजोंके हाथ लगा। पंजाबके प्रांताधिकारी पूरी तरह जान गये थे कि यह पलटन क्रांतिदलके फँदेमें फँस चुकी थी। किन्तु स्थानीय सेनाधिकारी स्पाटिस्वुड सरकारी संदेहको ठीक न मानता था। वह आग्रहसे जताता कि उसके सिपाही कभी विद्रोह न करेंगे। किन्तु, तिसपर भी, सरकारने सैनिकोंको निःशस्त्र बनानेके लिए उसे दबाया। कर्नल स्पाटिस्वुड इससे बडा चिढ गया; और जब मई २४ को सैनिकोंके नेताओंने उसे पूछा कि "पेशावरसे गोरी पलटन हमपर चढ कर आ रही है क्या?' तब उसने यों ही अगड बगडं उत्तर दिया जिससे सैनिक कुछ नाराजसे हुए और लौट पडे। पेशावरका दृश्य दुहरानेके लिए, इन सिपाहियोंके हथियार डलवानेके लिए, सचमुच पेशावरसे एक गोरी पलटन चल पडी थी। सिपाहियोंकी मानहानिका यह दुष्ट और क्षोभकारी प्रसंग देखना पसंद न होनेसे कर्नल स्पाटिस्वुडने अपने कमरेमें जाकर आत्महत्या कर ली! इसकी खबर पहुँचतेही ५५ वीं पलटनने सरकारी खजानेपर हमलाकर अपने शस्त्र और झण्डे उठाये, और पैसा लूट लिया तथा पराधीनताके बानेको लाथसे ठुकराकर दिल्लीके रास्ते चल पडे। किन्तु दिल्ली पास थोडेही था! गोरे सैनिकोंकी नाकाबंदीको तोडते हुए, पूरा पंजाब रौंदते हुए चले जाना था। साथ एक अंग्रेजी पलटन उनका पीछा करती थी, सो अलग! इस दशामें विजयकी आशा समाप्त मानकर वे आपसमें कहने लगे 'पेशावरके सैनिकोंके समान उन्होंने भी हथियार रख दिये होते तो अच्छा होता।' किन्तु सलाह हुई कि पराधीनताकी जंजीरसे जकडे रहनेकी अपेक्षा फाँसीकी रस्सी गर्दनमें कस जाना अच्छा है। फिर यह नारा लगाते हुए कि, 'हम लडते लडते मरेंगे' पीछा करने

वाले अंग्रेजोंको ललकारा और सचमुच ५५ वीं पलटनके वीरवरो ने स्वदेश और स्वातन्त्र्यके लिए झूझकर मौतको गले लगाया। ५५ वीं पलटनकी हौतात्म्य–कथा अंतःकरणको रुला देनेवाली परम शोक-प्रद है! अंग्रेजी पलटनने इनका पीछा इतना जोरदार किया था, कि घोडेकी पकड ढीली न करते हुए निकलसन चौवीस घंटे घोडा दौडाता रहा। सैंकडों सिपाही खेत रहे और बचे हुए लडते लडते सीमाप्रांतके बाहर हट गये। किन्तु वहाँभी उन्हे कौन आसरा देता? पठान गिरोहोंने तो उन्हें बहुत सताया। एक्का दुक्का सिपाही मिलनेपर उसे बलात् मुसलमान बना दिया जाता। इस तरह ये सिपाही स्वधर्मकी रक्षाके लिए लडते हुए, कश्मीरके महाराज गुलाबसिंहजीके आसरेकी आशासे कश्मीरको भागे। पेटमें अनाजका एक कण नहीं, ठंढीसे बचनेको आवश्यक कपडे नहीं; तापनेको आग नहीं, इस दशामे इन सैकडों हिंदू सिपाहियोंके लिए सारे भूपृष्ठपर अपने पवित्र धर्मका त्राता कोई न रहा। इस दुःखसे आँसू बहाते और पहाडी प्रदेशको लाँघते कश्मीर जा रहे थे, तब अंग्रेजोंने स्थान स्थानपर आयोजनपूर्वक जंगली जनावरोंके समान बडी निर्दयतासे उनका शिकार किया। तिसपर भी हिंदु तथा हिंदुधर्मका कोई न कोई तारनहार अपनी पुकार सुनेगा इस भोली आशासे कुछ सिपाही इस शिकारसे भी किसी तरह बचकर कश्मीर चले गये। किन्तु हाय सिपाहियोंका वह भ्रम भी अब दूर हो जायगा! कश्मीरके राजपूतवंशी गुलाबसिंहको जब पता चला कि स्वधर्म के मान की रक्षाके लिए प्रत्यक्ष कालके गालमें कूदनेको सिद्ध ये सीपाही उसके पास आ रहे है; तब उसने आज्ञा कि उन सिपाहियोंको कश्मीरकी सीमामे पाँव न धरने दिया जाय! यहाँ तक, कि उस हिंदू नरेशने अंग्रेजोंको अपनी इस महान् करतूतकी खबर दी कि 'जहाँ भी कोई सिपाही कश्मीरकी सीमामें मिले उसे गोलीसे उडा दिया जाय,'–यह घोषणा उसने की है। ओ सैनिको! अब या तो अपने धर्मको छोडो, या गुलामी या मौत पसंत करो। शाबाश वीरो! तुमने मौतही पसंद कीया! इन सैनिकोंकी इतनी क्रूर कत्ल अंग्रेजोंने चलायी थी कि मैदानोंमे गडे हुए फाँसीके तख्ते, हिंदूरक्तके लगातार अभिषेकसे भींगे, सडने लगे थे तब भी अंग्रेजोंकी पिपासा शान्त न हुई। कायम बने वधस्तंभभी इस कामसे ऊब गये, तब

तोपोंने अपने मुँह आगे बढाये और ५५ वीं पलटनके जिन सिपाहियोंने अंग्रेजी खूनका एक बिंदु भी नहीं गिराया था, उनसे बचे हुओंको तोपके आगे बाँधकर उडा दिया गया! " हजारों हिंदू इसतरह एक क्षणमें जम-राजके घर पहुँचाये गये; किन्तु आखिर दम तक "—उस भयंकर रक्त-पातसे लज्जित अंग्रेज इतिहासकार गवाही देता है—" ये क्रातिकारी अत्यत धीरज तथा शान्तिसे हँसते हँसते मर जाते; हाँ, अंग्रेज जल्लादोंसे आग्र-हसे कहते कि फाँसीके फदेमें लटकाकर कुत्तेकी मौतसे मारनेकी अपेक्षा वीरोंके समान हमें तोपसे उडा दो। "

असभ्य जगली जाति भी जिसपर लज्जित हो; उस तरीकेसे शूरवीरोंका कत्ले आम अंग्रेजोंने किया। इसपर यह स्पष्ट सम्मति देते हुए भी, कि ' यह काम निःसदेह क्रूरताका था ' सब अंग्रेज इतिहासकार शेखी बघा-रते है कि, " यह तात्कालिक क्रूरता केवल मानवताकी सदाके मगलके हेतु थी। " वाह! मानवताके मगलमे यह राक्षसी क्रूरता थी! अंग्रेज इतिहासाज्ञो, इस अपने वाक्यको फिर न भूलना! ' घडीभरकी क्रूरता और सदाका मानवताका मगल! ' इस वाक्यका सच्चा अर्थ तुम्हे ज्ञात है? किन्तु, ध्यान रहे, आगे चलकर इस अर्थको भूल न जाना। हाँ, तो मान-वताके मगल की शुभकामनाके हेतु यह बर्बरताका बरताव किया था, तुमने? बहुत अच्छा। किन्तु तुम जानते हो न, उधर कानपुरका हिंदुवीर नानासाहब है?

और एक बात कहना आवश्यक है। जो अंग्रेज ग्रथकार क्रांतिकारियोंसे हुई हत्याओंको भडकीले रगमे रंगानेमें एक दूसरेसे, मानों, होड लगाते हैं, वेही महाशय, उनके ही देशबधुओंसे किये अक्षम्य और अमानुष अत्याचारोंके बारेमें कुछ भी न लिखते हुए जानबूझकर निर्लज्ज मौन रखते हैं! इन अभागे, किन्तु देशप्रेमसे छलकते, सैनिकोंको कत्ल करनेके पहले अंग्रेजोंने उनको और क्या क्या यत्रणाएँ दी होंगी भगवान् जाने? क्यो कि अंग्रेज इतिहासज्ञोंने इस प्रसग ही को इतिहाससे काट दिया; जानबूझकर उसका जिक्र टाल दिया। ' के ' स्पष्ट कहता है " अंग्रेज अफसरोंके किये भयकर क्रूर करतूतोका पूरा प्रमाण देनेवाले अनगिनत पत्र मेरे पास हैं; फिर भी आगे चलकर यह विषयही ससारके सामने न रहे इस लिए एक

भी अक्षर न लिखनाही अच्छा रहेगा। " क्या खूब ! इसे कहते हैं इतिहासकार ! जिन चाडालोंने दिल्लीके मार्गपर मिलनेवाले हर देहातीके मुँहमें बलपूर्वक गोमॉस ठूँसा, उन्हींने इस ५५वी पलटनके सिपाहियोंको तोपोंसे उडा देनेके पहले उनके मुँहमें बलपूर्वक गोमॉस ठूँसकर उन्हें भ्रष्ट न किया हो, इसका हमारे पास क्या प्रमाण है ?

पेशावरकी ओर जब ये क्रूर और अमानुष घटनाएँ हो रही थीं तब इधर जालदरमें क्रातिकी ज्वाला भडक उठी थी। जॉन लॉरेन्सने पजाबके आम सिपाहियोंको निःशस्त्र करनेका क्रम जारी किया था। फिलौर और जालदरमें अबतक यह काम हो जाना चाहिये था, किन्तु वहॉके सैनिकोंका सराहनीय सयम तथा सगठनक्षमताके कारणही यह सकट दूर रहा था। जलदर दोआबके इन सिपाहियोंने अपने अन्य पजाबी भाइयोंके समान बलवेकी सिद्धता कर रखी थी। दिल्लीकी चढाईमें बदी बने एक देशभक्त हविलदारके कथन तथा अन्य सरकारी खतपत्रोंसे स्पष्ट होता है कि 'जालदर दोआबमें एकही क्षण सार्वत्रिक बलवा कर देने की सिद्धता हो चुकी थी। योजना यह थी, जब जालंदरसे एक दल होशियारपुर भेजा जायगा तब ३१ वीं पैदल पलटण बलवाकर फिलौरकी ओर जाय; इसके वहॉ पहुँचते ही फिलौरकी ३री पलटन विद्रोह करे और दोनों मिलकर दिल्ली चल पडें। अन्य स्थानोंमें भी यही तरीका निश्चित था। किन्तु दुर्भाग्यवश शत्रुको पहले सूचना मिल जाती। हॉ, फिलौरवाली पलटनने अन्ततक अनोखी गुप्तता रखी थी। दिल्लीके घेरेवाली कपनी तथा उसकी सामग्रीकी धज्जियॉ उडा देना फिलौरवालोंके लिए आसान था। किन्तु सर्वसम्मत कार्यक्रममें किसीतरह बाधा पैदा न हो इस लिए योग्य समयकी राह देखते हुए अन्ततक यह पलटन चुप रही। निदान सर्व सम्मतिसे निश्चित ९ जून का दिन आते ही जलंदर क्वीन्स रेजिमेंटके प्रमुख कर्नलका बगला जला दिया गया। इस इशारेसे जालदरके सिपाहियोंने आधी रातको बलवे की तुरही बजायी। ऐसे तो उस समय कुछ गोरी पलटनें और तोपें तैयार थीं; किन्तु इस आकस्मिक और सर्वसम्मत सार्वत्रिक बलवेने तथा सैनिकोंकी भीषण घोषणाओंने अंग्रेजोंके होश उड गये। अंग्रेज पुरुष, स्त्री, बच्चा सुरक्षित स्थानमें पहुँचनेके लिए भागा।

ऐसे मामूली लोगोंकी हत्या करनेका अवकाश जालंदरके सिपाहियोंके पास था ही कहाँ ! दिल्लीपर नये फहराये स्वातंत्र्यके झण्डेपर अंग्रेजी तोपें निशाना साधे खडीं होनेसे हरएक दिल्ली जानेको छटपटा रहा था। जब ॲडज्युटंट ब्रॉगशॉने अकारण मुँह चलाया तब एक सवार दौड आया और उसने उसे गोलीसे उडा दिया। अंग्रेजोंका अन्ततक सैनिकोंपर भरोसा था और अपने प्रांताधिपतिको उनके शस्त्र डलवानेकी आवश्यकता न होनेकी बात भी लिख भेजी थी। और यह विश्वास उचित भी था। क्यो कि, सिपाहियोंने कत्ले आम करने का तो टालही दिया, साथ साथ जो अंग्रेज अबतक वहाँसे भाग न सके थे उन्हें भी न छेडा। इस तरह जालंदरकी सेनाने अपना कार्यक्रम सुयोग्य रीतिसे पूरा किया। जिन अंग्रेज अफसरोंने उनका भरोंसा किया था उनके प्राणोंको कोई धक्का नहीं पहुँचाया गया। इस तरह अपनी सभ्यता का सैनिकोंने परिचय दिया।* यद्यपि सरकार

---

* अंग्रेजोंने एक कल्पित अत्याचारकी कहानी गढकर उसे 'कलकत्तेकी काली कोठरी' (ब्लॅक होल) का नाम दिया है और इसपर विश्वास कर भोला संसार अंग्रेजोंके कुटिल मस्तिष्ककी इस उपजपर सिराज उद्दौलाको शाप देता रहता है। हाँ, एक काली कोठरीकी सच्ची कहानी सुनकर आपके काटो तो खून नहीं वाली दशा होगी और वह भी उस दुष्टके शब्दोंमें है जिसने उसका आविष्कार किया। "हथियार डालने पडेंगे इस भयसे भागनेवाले कुछ सिपाही, जो अंग्रेजोंके निशानेसे बचकर भागे थे, पंजाबमें अजनालेके पास एक टापूमें छिपे हुए थे। इन २८२ अभागोंको पकडकर श्री. कूपर अजनाले ले आया। अब इनका क्या करें, उसके सामने यह प्रश्न था। उनका न्याय करनेके लिए उनको केन्द्रमें पहुँचानेके साधन उसके पास कहाँ थे ? उसने स्वयं सबको देहान्तका दण्ड दे दिया होता तो अन्य पलटनें तथा विद्रोही क्रांतिकारियोंपर आतंकछा जाता और आगामी रक्तपात टल जाता, इसलिए 'एक बडे दायित्वको उठा लेनेका ज्ञान उसे होते हुए भी उसने सबको कत्ल करनेका फैसला कर डाला। उसके अनुसार दूसरे दिन सवेरे दस दसके जत्थेमें बंदियोंको खडाकर सिक्खोंद्वारा उनपर गोलियाँ चलायीं। इस तरह २१६का तो काम तमाम हो गया।

और सरकारी कर्मचारियोंने इन सिपाहियोंसे सभ्य बर्ताव किया था और सिपाही भी इसके लिए कृतज्ञता प्रदर्शित करते थे, फिरभी इन संबंधोंको उन्होंने राष्ट्रीय कार्यके आडे कभी न आने दिया और स्वदेश और स्वाधीनताका बुलावा आनेपर इन्ही सिपाहियोंने राष्ट्रकार्यमें अपना सर्वस्व हवन कर दिया।

रातही रात, बलवा करनेके पहले फिलौरके सैनिकबंधुओंको सूचना देनेके लिए एक सवारको भेजा था। जालंदरसे इस सवारके पहुँचते ही फिलौरने विद्रोह कर दिया। अब जालंदरवाले फिलौर पहुँच जानेकी बात रही थी। हाँ, यह कोई आसान काम नहीं था। क्यों कि, अंग्रेज रिसाले तथा तोपखानेको भुलावा देकर उन्हें निकलना चाहिये था। किन्तु अंग्रेजी सेनामें वह गडबडी और जलदी मची थी, जहाँ क्रांतिकारियोंका कार्यक्रम निश्चित तथा अनुशासनपरक था, जिससे जालंदरवाले सैनिक किसी अशान्तिके बिना फिलौर पहुँच गये। अपने हजारों साथियोंका स्वागत करनेको फिलौरके सैनिक बहुत बडी संख्यामें आगे बढे। एक दूसरेसे गले मिलनेके बाद अपने हिंदी अफसरोंके नेतृत्वमें

किन्तु फिर भी अबतक ६६ लोग तहसीलके कच्चे जेलमें ठूँसे पडे थे। प्रतिकार होनेकी सम्भावनाको महसूस करते हुए भी कूपरने उस जेलके द्वार खोलनेकी आज्ञा दी। किन्तु, आश्चर्य! कोठरीसे किसी हलचलके चिन्ह न देख पडे! अंदर झाँकनेपर मालूम हुआ कि ६६मेंसे ४५की लाशें जमीनपर फडक रही थीं। कूपरको इसका कारण अज्ञात था कि उस कोठरीके सभी झरोखे पक्के बंद थे, जिससे वह कोठरी सचमुच काल कोठरी (ब्लॅक होल) बनी थी। बचे हुए लडखडाते २१को गोलियोंसे मार दिया गया (१–८–५७)" कूपरने स्वयं दायित्व उठाकर किये इस महत्त्वपूर्ण कामपर अज्ञानी दयावान् सज्जनोंने बहुत शोर मचाया और घोर निंदा की। किन्तु, रॉबर्ट मॉटगॉमेरीने निश्चयपूर्वक कहा कि कूपरके इस कार्यसे लाहौरकी पलटनोंमें विद्रोहकी भावना फैलनेसे चुक गयी; कूपरका काम बिलकुल ठीक था।—होम्सकृत हिस्टरी ऑफ दि इंडियन म्यूटिनी पृ. ३६३

यह सयुक्त सेना दिल्लीको चल पडी। बीचमें एक नदी थी उसके परले काठे इन शूर वीरोंके चरण चूमनेको लुधियाना नगरी तडप रही थी। उसी दिन सवेरे अंग्रेज अधिकारियोंको जालदरके विद्रोहकी खबर तारद्वारा पहुँचायी गयी थी; किन्तु वह उन्हे बडी देरीसे मिली। वहॉ के अफसर महसूस कर रहे थे, कि सिपाहियोंको काबूमें रखना दूभर है। क्यों कि, उन्हे तारसे खबर मिलनेके पहले सिपाहियोंको जालदरवाले अपने साथियोंके निकलनेकी खबर पहुँच चुकी थी। फिलौरसे आनेवाले इस टिड्डीदलको लुधियानेके इस ओर सतलजपर रोके रखनेका चतुर इरादा लुधियानेवाले अग्रेज अफसरोंने किया। और उसके अनुसार पुलको उध्वस्त कर, अंग्रेज, सिक्खों और नाभानरेशके सहायक दलोंके साथ, नदी किनारे पहरा भरने लगे। क्रातिकारियोंको यह खबर पहुँच गयी तब ४ मील ऊपर जाकर रातमें उन्होने नदी पार करना शुरू किया! नावोंमें कुछ पार पहुँच पाये थे: कुछ आ रहे थे, कुछ अपनी बारी की राह देख रहे थे;तब अंग्रेजों और सिक्खोंने उन-पर तोपोंकी बौछार की। रातको लगभग १० बजे क्रातिकारियोंको गोरे सैनिकोके ठिकानेका पत्ता ही न लगने पाया। ऐसी बॉकी दशामे अंग्रेजों तथा सिक्खोंने तोपों की आडमें धावा बोल दिया। आक्रमणका जुस्सा धीमा पड जानेपर क्रातिकारियोंने रत्तीभी न हटते हुए शत्रुओंपर गोलियोंकी वर्षा कर दी। अंग्रेजोंके अनपेक्षित हमलेसे सिपाहियोंमें कुछ अस्तव्यस्तता आ गयी थी, फिर भी दो घटोंकी लडाईके बाद अपनी पॉतको सिपाहियोंने ठीक कर लिया। इतनेमें एक सैनिककी गोली सीधी अंग्रेज सेनापतिकी छातीमें घुस गयी और विलियम वहॉ ढेर हो गया। उसी समय आधी रातके घनघोर तम-पटलको चीरकर इन स्वातत्र्योपासकों के सिरपर अपने हिमशीतल ज्योत्स्नारसकी वर्षा करनेके लिए धवल चद्रमा आकाशमे प्रकट हुआ था। इस चादनीमें अंग्रेजोंके सभी डॉवपेच क्रातिकारियोंके सम्मुख खुल गये; तब उन्होंने गोरोंपर जोरदार धावा बोल दिया। इस प्रखर प्रहारके सामने डटे रहना असम्भव होनेसे अग्रेजसेना तथा उनके निष्ठावान् सिक्ख सैनिकोंने तुरन्त पिछे हटकर अपनी खैर मनायी।

अंग्रेजों तथा सिक्खोंकी सयुक्त सेनापर प्राप्त विजयसे उत्साहित होकर क्रातिकारी सिपाही दो पहरतक लुधियाना नगरमें पहुँच गये। यहॉ एक

मौलवी 'अंग्रेजोंकी दासताकी शृंखलाको तोडकर स्वराज्यकी स्थापना करो' यह मन्त्र लोगोंको पढा रहा था। मौलवीके प्रचारके कारण लुधियाना पंजाबके क्रांतिदलका एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र बन गया था। 'पराधीनताकी बेडियोंपर अब आखिरी प्रहार करनेको आगे बढो' यह सूचना पातेही सारे नगरमे 'जय क्रांति'की गर्जनाएँ गूँज उठीं। सरकारी गुदाम लूट, जलाकर भस्मसात् कर दिये गये। गोरोंके गिरजाघर, बंगले, समाचार-पत्रके कार्यालय तथा मुद्रणालय–सब कुछ जला दिया गया। अंग्रेजोंके मकानों तथा खासकर अंग्रेजोंके सामने दुम हिलाकर पेट पालनेवाले देशी लाचार 'कुत्तोंके' निवासोंको ठीक बता देनेके लिए वहाँके नागरिक सिपाहियोंके साथ चलनेमें स्पर्धा कर रहे थे। बंदिशालाएँ तोड दी गयीं। जो चीज सरकारी या अंग्रेजोंके अधिकारकी मिले उसे जला दिया जाता था! जो जल नहीं सकती थीं उन्हें समतल कर दिया जाता। मतलब, सारी लुधियाना नगरी क्रांतिकी ज्वालासे चमक उठी थी।

हाँ, किन्तु क्रांतिकारियोंका दिल्ली जाना बहुत आवश्यक था। लुधियानेका किला तो पंजाबकी कुंजी ही थी और उसपर पूरा कब्जा रखना सैनिक दाँवपेचों तथा नैतिक विजयकी दृष्टिसे बडा हितकर साबित होता और दिल्लीके समान लुधियानाभी क्रांतिका केन्द्रीय कार्यालय बनता, तो उससे अंग्रेजी राजसत्ताको बडा धक्का पहुँचता। सिपाही इन सब बातोंको अच्छीतरह जानते थे, किन्तु उस परिस्थितिको देखते हुए उनका वहाँ रहना बडा कठिन हो गया था। क्यों कि, वहाँ उनका कोई नेता न था और वे रहे सीधे सिपाही! उनके पास गोलाबारूद भी न था। ऐसे बाँके समयमें लुधियानेमें नानासाहब, खान बहादुर खाँ या मौलवी अहमदशाह जैसा कोई नेता होता तो किसीभी दशामें लुधियानेको कब्जेमें रखा होता। किन्तु, अब वहाँसे दिल्ली जानेके बिना कोई दूसरा चारा न था। इसीसे, यह नारा लगाते हुए, कि 'स्वाधीन या पराधीन'? इस प्रश्नका उत्तर अब दिल्लीकी किलाबंदी देगी वे दिल्लीको चल पडे। अंग्रेजोंके तो हाथ पाँव फूल गये थे। सिपाही दिनदहाडे दिल्लीका मार्ग तय कर रहे थे, फिर भी उनका पीछा करनेकी सूचना करनेकी हिम्मत भी किसीने न दिखायी।

मेरठके बलवेके बाद लगभग तीन सप्ताह तक क्रांतिदलमें जो शिथि

लता, अवश होनेसे, आ गया थी उससे पूरा लाभ पंजाबके अंग्रेजोंने उठाया। क्यों कि उस समय पजाबमे अंग्रेजोंकी प्रबल सेना होनेसे सिपाहियोंसे हथियार डलवाना या कठिन स्थल-काल-स्थितिमें विद्रोह करनेको मजबूर करना अंग्रेजोंके लिए आसान हो गया। यह देखकर, कि सिक्ख नरेश तथा उनकी रियाया क्रातिकारियोका साथ न देकर अपनी सहायता कर रही है, पजाबके सभी भारतीयोंको सीमाप्रान्तसे अंग्रेजोने भगा दिया और उस दिशामे क्रांतिका बीज व्यर्थ कर डाला। इस समय, न केवल सिपाहियोंको, बल्कि देहातियों, हजारो सभ्य तथा प्रतिष्ठित भारत-वासियोंको मात्र अफसरोंकी सनकपर ही सीमापार किया गया। इस प्रकार सब पंजाब निरापद हो गया तब दिल्ली की दिशामें गोरी सेनाको बडी मात्रामे भेजा जाने लगा। पजाब अग्रेजके अधीन क्यों रहा? इसके दो कारण है। एक सिक्खोने उनकी अनमोल सहायता की। सिक्ख यदि तटस्थ रहते तो अग्रेज एक दिनके लिए भी पजाबको अपने हाथमें न रख पाते! ऐसे तो क्रातिकारियोंनें भी सिक्खोको अपनी ओर कर लेनेके लिए अनथक जतन किये थे। दिल्लीके स्वतत्र होते ही सम्राटके एक विश्वासपात्र सेवकने पजाबके उस समयकी गतिविधिका चित्र खडा कर देनेवाला बडा लम्बा, ब्योरेवार तथा आकर्षक पत्र भेजा था। इस पत्रमे यह विश्वासी ताजुद्दीन लिखता है "पजाबके सभी सिक्ख सरदार आलसू तथा कायर होनेसे क्रातिदलमे उनका आ जाना असम्भव-सा है। वे फिरगीके इशारोंपर नाचते हैं। मैंने स्वय उनसे अलग अलग बातचीत की और मेरा दिल निकालकर उनके सामने रखा। मैंने स्पष्ट पूछा 'तुम लोग फिरगीके पक्षमें होकर स्वराज्य और स्वदेशके द्रोही क्यों बनते हो' क्या, तुम स्वराज्यमें अधिक सुखचैनसे न रहोगे? और तो और, तुम्हारे स्वार्थके लिए ही सही तुम्हें दिल्लीके सम्राट्के पक्षमें रहना चाहिये।" उन्होंने कहा 'देखोजी हम मौका देख रहे है।' सम्राटसे आज्ञा पातेही हम एक दिनमें इन फिरगियों का सफाया कर देंगे। मेरी रायमें ये सभी लोग भरौसा करनेको सर्वथा अपात्र है।" और हुआ भी वैसा ही। जब सिक्ख नरेशोके पास बादशाही खरीता लेकर सवार पहुँचे तो उन्होंने सीधे उन्हें कत्ल कर डाला और इस तरह अंग्रेजोको पजाब अपने पजेमें रखना इतना आसान

क्यो हुआ इसका यही पहला तथा महत्त्वपूर्ण कारण है। फिर भी हम कह सकते है कि सिक्खोंके इस विरोधका मुकाबला कर अंग्रेजोंको पजाबसे निकालना असम्भव न था। मई महीनेमें अंग्रेजोंमे जो भी ढीलापन, क्रातिके अचानक धडाकेसे घबरा जानेके कारण, आ गया था, उससे लाभ उठाकर तथा निश्चित कार्यक्रमके अनुसार, एकही समयमें, सब ओर से बलवे की आग पजाबमे भडक उठती तो सिक्खोंको भी उस धाकसे क्रातिदलमें शामिल होना पडता; कमसे कम उनमें फूट तो न पडती तथा हजारों सिपाहियोंको अलग अलग गॉठ कर उन्हे कुचलनेका अवसर अंग्रेजोंके हाथ न लगता। यह कथन, कि पजाबमे स्वराज्य की लगन न थी, बिलकुल टिक नहीं सकता। थानेसर के विद्वान् ब्राह्मण, लुधियानेके मौलवी, फीरोज-पुरके दूकानदार एव पेशावरके पठान सभी हर गॉवमे जाकर स्वधर्म और स्वराज्यके लिए लडे जानेवाले इस पवित्र युद्धका प्रचार करते थे। उपर्युक्त ताजुद्दीन लिखता है, "यदि सम्राट्की ओरसे कोई सेनापति सेनामे आ जाय तो पजाब एक दिनमें स्वतत्र हो जायगा। हर स्थानके सिपाही बलवा कर सम्राट्के झण्डेके नीचे खडे हो जायँगे और अंग्रेजो को जी बचाना भारी हो जायगा। मुझे विश्वास है कि हिंदु और मुसलमान दोनों आपके सिहासनको वदना करेंगे। और क्रातिका उत्थान जूनमें होगा तो और अच्छा रहेगा। क्यो कि जेठकी, चिलचिलाती धूपमें लडनेमे तो अंग्रेज सोजरोंकी नानी मर जाती है। तलवार की चोटके पहले जलते सूरजकी प्रखर किरणों ही से वे तुरन्त मर जायँगे। इस पत्रको देखते ही एक सरदारके मातहत कुछ सेना भेजियेगा।" इस तरह पजाबी जनता का मन दिल्लीकी ओर होते हुए भी क्रातिकारी उससे लाभ उठा न सके। इसका एक मात्र कारण है, दिल्ली स्वतंत्र होनेके बाद तीन सप्ताह तक क्रातिकी लहरही रोकी गई थी। यदि निश्चित कार्यक्रमके अनुसार सब जगह एक साथ विद्रोह होता तो अंग्रेज इधर उधर कुछ न कर सकते। पजाबमें अकेली पडी निर्बल पलटनोंसे कभी हथियार न डलवा सकते; क्रातिकी लहर और ऊँची उठती और हिचकिचाते तथा किनारा कसते सिक्खों जैसे लोग उस सैलाबमें बह जाते; क्रातिके ऐसे वैभवशाली और यशस्वी प्रारंभसे चौंधिया कर अबतक, क्रांतिसे सहानुभूति रखने परभी

जो लोग अपनी जान लडाकर उसमें शामिल नहीं हुए थे उन्हें भी क्रांति युद्धमें हाथ बँटाने की हिम्मत हो जाती ओर भारत स्वतंत्र बन गया होता ! !

मतलब, सिक्खोंके देशद्रोह तथा मेरठके अचानक विद्रोहसे पंजाबमें क्रांतिकी जडें खोखली हो गयीं ! और पंजाब तो दिल्लीकी रीढसा होनेसे क्रांतिकारियोंकी हिम्मत पस्त हो गयी !

अबतक हम क्रांतिकारी सैनिकों तथा अंग्रेजोंकी पंजाब तथा दिल्लीकी गतिविधिका तीन सप्ताहोंका वर्णन कर चुके हैं। इन सप्ताहोंमें जो भी हो सके, सिद्धता करनेपर अंग्रेज तुले हुए थे। इसीके अनुसार कलकत्तेसे इलाहाबादकी ओर सहायक गोरी पलटनोंका तॉता बंध गया था। बहुत बारीकीसे जॉच हो रही थी कि बम्बई, मद्रास, राजपूताना तथा सिंधमें क्रांतिदलके विद्रोहको सहानुभूति रखनेवाला कोई है या नहीं! और पंजाबके समान ठीक समयपर ही उन सहानुभूति रखनेवालोंका सिर कुचल देनेका प्रबंध हो गया था। क्रांतिकी सूचना पहलेसें मिल गयी इसके लिए ईसाको धन्यवाद देते हुए अंग्रेजोंका यह विश्वास था कि कई स्थानोंमें क्रांतिकी ज्वालाको बुझानेमें उन्हें सफलता मिली है। इस प्रकार इन तीन सप्ताहोंमें अंग्रेज अपना संगठन कर रहे थे। जहॉ क्रांतिकारियोंकी तरफ इधर उधरकी मामूली हलचलको छोड ऊपरसे शेष सब ठंढा मामला था। ३० मईको दोनों पक्षोंकी यही हालत थी; किन्तु अब ? परिस्थितिने करवट बदली और अंग्रेजोंका आत्मविश्वास चूर चूर कैसे हो गया तथा तीन सप्ताह तक असीम अत्याचार तथा हानिको सहकर भी क्रांतिकी ज्वालाऍ फिरसे कैसे भडक उठीं इस आगामी इतिहासकी ओर अब ध्यान देना चाहिये। **निश्चित नियमोंसे किसीभी क्रांतिका नियमन आज तक नहीं हुआ है।** क्रांति कोई अचूक चलनेवाली घडी थोडे ही है ? उसकी गतिविधिकी रीति कुछ और ही होती है। हॉ, एक मोटे सिद्धान्तसे क्रांतिका नियमन होता है, बस ! छोटे मोटे नियम तो उसके एक धमाकेसे तितर बितर हो जाते हैं। क्रांतिको सूचित करनेवाला एक ही नारा होता है; 'रुकना तेरा काम नहीं, चलना तेरी शान !' कभी तो एकदम अनोखी तथा अनपेक्षित घटनाऍ

क्रातिके ज्वारमें भी हो सकती है, फिर भी 'आगे बढे कदम' उस अनपेक्षित स्थितिपर सवार हो, लगातार कदम कदम बढाये जाओ। क्राति एक अजीब पछी है। जिस स्थानमें वह लम्बे अरसेसे बद रहा हो, वहाँसे छूट जानेपर अपने मुकाम पर पहुँचनेके पहले, कुछ समयतक आकाशमे चक्कर काटना उसके लिए आवश्यक होता है। इस पछीके परोंपर बैठकर जिसे अपना मन्तव्य पूरा करना हो असे अपना आसन इस पछी की पीठपर पक्का जमा लेनेकी सावधानी रखनी चाहिये। क्यो कि पहला मुक्त चक्कर काटनेपर जब उसकी पॉखे अपनी स्वाभाविक गतिपर स्थिर हो जाती है तब वही उनकी गतिका नियत्रण कर सकता है, जिसने अपना आसन दृढ जमा रखा हो। मेरठवालोंने भलेही इसे समयसे पहले पिजडेसे मुक्त कर दिया था किन्तु इससे क्रातिके प्रणेता जरा भी डिगे नहीं थे। हॉ, तो इतिहास–देवता! तुमही बताओ कि नानासाहब, लखनऊ का मौलवी, झॉसीवाली तथा अन्य महान् वीर योद्धा इस गरुडपक्षी की पीठपर इतना दृढ आसन असाधारण जीवटके साथ कैसे जमा सके? और इतिहासदेवता, यह भी बताते न भूलना कि इन वीरोंके समान अन्य भारतीय लोगोने इस पछीको कसकर न पकडनेसे वह छटक कर कैसे आकाशमे चला गया! पूर्वार्धमे हमारे साथ रहो और उनके उज्ज्वल यशके गीत गाओः इसी तरह उत्तरार्ध मे भी आओ और हमारे साथ, इतिहास–देवता, तुम भी ऑसू बहाओ!!
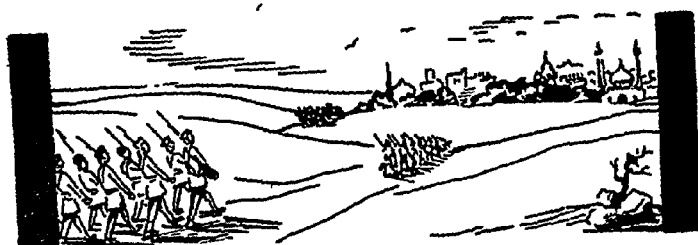
अध्याय ५ वॉ

अलीगढ तथा नसीराबाद

उत्तर-पश्चिमी प्रात, अंबाला, पजाबके अन्यस्थान जिस तरह क्रांतिके प्रचड घमाकेसे थर्रा उठे थे, उसी तरह दिल्लीके दक्षिणका भी एक प्रात इस धमाकेसे उत्पन्न लहरियोंसे हिल रहा था। दिल्लीके दक्षिणमे अलीगढ ९वीं हिंदी पैदल पलटनकी छावनी थी। इस पलटनकी कुछ कपनियॉं मैनपुरी, इटावा तथा बोलदमे थीं। अंग्रेजोंको इन कपनियोंपर पूरेपूर भरोसा था। भारतभरके सिपाहियोंके विद्रोह करनेपर भी इन कंपनियोंके सैनिक बलवा नहीं करेगे यह वे दावेसे कहते थे। यद्यपि बोलदके बाजारमे गुप्त क्रातिकारी सस्थाओंका दौरदौरा होनेकी खबरें सैनिक अधिकारियोंको मिल जातीं, फिर भी ९ वीं पलटन की राजनिष्ठापर पूरा भरोसा रखकर," उस भ्रममें वे बेखबर सोते रहे।

मई महीनेके प्रारंभमें, बोलदके आसपासके गॉवोने एक वंदनीय, सत्यप्रिय तथा स्वातंत्र्यभक्त ब्राह्मणको चुनकर उसे बोलदकी ओर भेजा। लम्बे डग भरते हुए यह ब्राह्मण जा रहा था किन्तु बोलदकी छावनीमें होनेवाली सफलताको सदेहके हिंदोलेपर चढी हुई देखता, तो कभी उसे आशाके पांखोंपर बैठ स्वतंत्र सैर करती देखता, इन परस्परविरोधी भावोंसे उसका हृदय बोझल हुआ था। जहॉं अंग्रेजोंको बोलदके सैनिकोंपर अनहद विश्वास था, वहाँ मातृभूमि इन्ही सैनिकोंसे बहुत कुछ आशा करती थी। "ये सैनिक मेरे देशबधु है, मातृभूमिको उबारने और स्वधर्मकी रक्षा

करनेके लिए उठनेकी मेरी बातपर कान नहीं धरेंगे? स्वराज्यके स्वर्गीय वातावरणमें विहार करनेकी क्षमता वाले इनके विचारोंकी पांखे पुख्ता है? भविष्यकी मेरी आशाको ठुकराकर क्या ये फिरसे उस गदे काले भीषण पराधीनताके नशेमें चूर आलोटने रहेंगे? आगामी वैभवशाली दृश्यको इनके सामने खोलने मैं जा रहा हूँ, किन्तु कहीं ये सैनिक, उनके नशाको तोड देनेके अपराधमें, मुझे दण्ड देनेके लिए अपनेही देशबन्धुओंपर हथियार तो नहीं उठाऍंगे?" इस प्रकारकी विषण्ण भावनाएँ अंतःकरणमें उमड पडती थीं तो भी जिसके मुखपर शान्तिका अनोखा तेज लहरा रहा था, वह ब्राह्मण क्रातिके महान सदेशको लेकर छावनीमे चला गया। वहॉं उसकी अच्छी आवभगत हुई, उसका दिव्य क्राति-सदेश सुननेमें बडी आस्था प्रकट हुई। बलवे का कार्यक्रम बताते हुए ब्राह्मणने कहा, किसी ब्याहकी धूमधामका मौका देखकर बलवा किया जाय; वहॉंके अंग्रेजो को कत्ल कर सीधे दिल्लीका मार्ग लिया जाय। अंग्रेजी शासनका अन्त करनेके बारेमें सबकी एक राय होते हुए भी प्रस्तावित कार्यक्रमको अमलमें लानेके विषय-पर चर्चा छिडी। दुर्भाग्यवश, उसी समय कपनीके तीन सिपाहियो द्वारा यह बात मालूम हो जानेसे उस ब्राह्मणको बंदी बनाया गया और उसे बोलटकी पलटनके केन्द्रमें-याने अलीगढको भेज दिया गया। वहॉं उसे सैनिकों के समक्ष फॉसीकी सजा सुनाई गई। इधर बोलटके तीन राजनिष्ठ इमानदार सिपाहियोंकी मिट्टी पलीत कर गालियॉं देकर निकाल बाहर कर दिया गया। और बोलटके सभी सैनिक, अपने मुख्याधिकारीसे आज्ञा न लेते हुए, असलमें उन्हें लाखो गालियॉं गिनते हुए, उस क्राति-सदेश-दाता ब्राह्मणके यहॉं, अलीगढको, आ धमके। २० मई सायकलको ब्राह्मण फॉसी-पर लटकनेवाला था। अंग्रेजों की आज्ञा थी, कि सभी सैनिकोंको वहॉं उपस्थित रहना चाहिये। अब इसका क्या इलाज किया जाय? ३१ मईतक यदि सिपाही चुप बैठते है तो यहॉं ब्राह्मण फॉसीके रास्ते स्वर्ग सिधार जायगा। इस उधेडबुनमें ही सिपाही रह गये और उधर ऊपर उस ब्राह्मणकी आत्मा स्वर्गके मार्गपर चलती हुई दिखायी पडी। और नीचे वधमंचपर उसका जड शरीर, प्रतिशोध का भयकर तथा वक्तृतापूर्ण सदेश देते हुए, लटक रहा था। क्या ही ओजपूर्ण वक्तृता थी! वह धारावाही शब्दके सोतेके बदले वहॉं

लहूकी बिंदुओंकी धारा बह रही थी। ध्वनि मुँहसे निकलती नहीं थी। ऐसी प्रभावी वक्तृता, वधमंचपर मरे हुए ब्राह्मणके मुखसे उसके जीते जी कभी न निकली होगी। क्यों कि, एक क्षणमें उन सैनिकोंसे एक सिपाही आगे आया और अपनी तलवारसे उस कलेवरको चीन्हते हुए बोला " मित्रो। देखते हो यह हुतात्मा खूनसे कैसा नहाया है! " इस शूर सिपाही के मुँहसे निकला यह शब्द-तीर उपस्थित हजारों सैनिकोंके अंतस्तलमें गहरा घुसा। बारूदके अंबारपर पडी चिनगारीसे प्रस्फोट होनेकी क्रिया भी इसके सामने कुछ मंद-सी मालूम होती थी। और उन्होंने अपनी तलवारें उठायीं, क्रोधसे वे पागल हो उठे; और उस धुनमें चिल्ला उठे ' फिरंगी राज का अन्त करो '।

इस भयंकर ताण्डवको देख अंग्रेज अधिकारियोंका कलेजा मुँहमें आ गया हो तो क्या आश्चर्य? ९वीं पलटनके सबसे अधिक राजनिष्ठ सैनिक केवल उठेही न थे, वे साफ साफ कह रहे थे, कि " यदि अंग्रेज अपनी जानसे हाथ धोना न चाहते हों तो वे तुरन्त अलीगढ छोडकर चले जायँ "। इस उदारतासे लाभ उठाकर सब अंग्रेज अफसर, उनके परिवार तथा सपरिवार अन्य गोरे तथा श्रीमती औट्रम भी चुपचाप अलीगढसे रवाना हुए। आधी रातमें अलीगढमें अंग्रेजी सत्ताका कोई चिन्ह न रहा।

२२ मईकी शामको अलीगढ स्वतंत्र होनेकी खबर मैनपुरी पहुँची। हम कह चुके हैं कि ९ वीं पलटनकी एक कंपनी वहाँ भी थी। अलीगढके बनावसे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मैनपुरीके उन्हींके भाइयोंमें क्या विचार काम कर रहे थे। मैनपुरीके अंग्रेज अधिकारियोंको खबर मिली कि कोई राजनाथ सिंग, जो अंग्रेजोंके विरुद्ध मेरठमें लडा था, जीवती गाँवमें पहुँचा है। इसलिए उन्होंने कुछ सिपाहियोंको उसे गिरफ्तार करने भेजा। किन्तु इन सिपाहियोंने उसे पकडनेके बदले उसे जीवतीसे सुरक्षित बाहर भेज दिया और ' साबको रपट दी ' कि उस नाम का कोई आदमी वहाँ नहीं रहता। रामदीनसिंग नामक सिपाहीको अंग्रेजोंने अनुशासनभंगके अपराधमें, सशस्त्र सैनिकोंके कब्जेमें अलीगढ भेजा था। जब आधे रास्तेपर पहुँचे तो पहरेदारोंने उसकी बेडियाँ तोड

जनता की
स्वराज्य निष्ठाने

अिन क्रांतिवीरों को
पैदा किया !

दी और उसे जाने देकर चुपचाप मैनपुरी लौट पडे। यह ऊँचे दर्जेके देशभक्त सैनिक केवल निश्चित इशारेकी राह देख रहे थे। किन्तु इसकी खबर अंग्रेजोको पहुँचकर कहीं वे एकसाथ विद्रोह करनेके पहले उन्हें अपाहिज न बना डालें, इसलिए बाहरसे वे इतने शान्त थे कि भारतभरमें सबसे अधिक राजनिष्ठ होनेका प्रमाणपत्र अंग्रेजोंने उन्हें दे दिया था। किन्तु उस ब्राह्मणके दौरेसे केवल सिपाही ही नहीं अलीगढ तहसील की प्रजा भी क्रोधसे भडक उठी थी। इस कपनीको तहसीलकी बढती अशान्ति दबा देनेके लिये ही मैनपुरी भेजा गया था। जब वह अलीगढ लौटी तब वहाँके कसाई और खानाबदोश भी बाजारमें सैनिकोंसे पूछते "फिरगीका फैसला कब करोगे? स्वाधीनताके लिए कब बलवा करोगे?" जिसे कसाई और गुडे भी करनेको उतावले हो रहे हो उस कामको स्थगित रखना कैसे हो सकता था?

अलीगढ स्वतत्र हो जानेकी खबर पाते ही मैनपुरी भी उसी दिन उठा। वहाँके क्रातिकारियो ने भी उनके हाथ लगे अंग्रेजोंको प्राणदान देकर अनगिनत गोला-बारूद और शस्त्र हथिया कर ऊँटपर लाद दिये और २३ मईको दिल्ली चल पडे।

इसी समय इटावेके किलेमें भी उसी तरह की हलचल हो रही थी। इटावेका कलेक्टर तथा प्रमुख मॅजिस्ट्रेट ॲलन् ओ ह्यूमको मेरठ का सवाद मिला, तब उसने अपने मातहत सहायक मॅजिस्ट्रेट डॅनियल की सहायतासे इटावेके इर्दगिर्दके मार्गोंकी सुरक्षा साधनेके लिए चुनिदे लोगोका एक दल बनाया। १९ मईको मेरठसे आये मुठ्ठीभर सैनिकोसे इस दलकी मुठभेड हुई। ठीक ही था, कि मेरठके सिपाही घेरे गये; उन्हे हथियार डाल देनेकी आज्ञा हुई। इस आज्ञापर अमल करने का नाटक उन्होंने बडी खूबीसे किया और एक साथ हथियार उठा कर उन्हे घेरनेवालोंके टुकडे टुकडे कर डाले। यह सवाद सब जगह फैल जाय, इसके पहले मेरठवाले सिपाही अपने शस्त्रास्त्रोंके सहित एक हिंदु मदिरमे जा छिपे। इटावेके कलेक्टर ह्यूमको जब पता चला तब डॅनियलके साथ कुछ हिंदी सैनिकोंको लेकर उस मदिरपर हमला करनेको वह चल पडा। ह्यूमको विश्वास था कि छोटी सैनिक टुकडीके साथ वहाँ पहुँचनेके पहलेही गाँववालोंने उन मुठ्ठीभर सैनिकोंका कचूमर निकाला होगा। किन्तु मदिरके

पास पहुँचनेपर देखता क्या है, कि गाँववाले उन्हें मार डालनेके बदले उनकी बहादरीकी प्रशसाके पुल बांध रहे हैं और उन्हे रसद पहुँचा रहे हैं ! गॉववालोंने यह निमकहरामी की; पर्वाह नहीं हमारे सिपाही और पुलीस तो अब कटिबद्ध होंगे—डॅनियलने सोचा। उसने उन्हें जोरदार हमला उस मदिरपर करनेकी आज्ञा दी और स्वय आगे बढा। किन्तु उसके पृष्ठपोषक कौन है? हॉ, एक-मात्र एक-सिपाही उसकी आज्ञा मानकर चला ! इस गोरे अफसर तथा उसके 'काले' दासको मदिरके सैनिकोंकी बदूकोंने कबका भुन डाला और गरजते हुए आये ह्यूमसाब मदिरवाले सिपाहियोंको वहीं छोड सिरपर पैर रख कर भाग गये।

मई १९ को, इटावेकी सेनाके विद्रोहकी एक जोरदार अफवाह उठी थी। किन्तु क्रातिदलका प्रमुख केन्द्र अलीगढ होनेके कारण वहॉसे सूचना मिलनेतक इटावेके सैनिक चुप रहे! ओर मई ३१ तक इसे वह निबाहते भी; किन्तु उस ब्राह्मण हुतात्माके लहूने क्रांतिकी ज्योति अचानक जला दी। २२ मईको अलीगढके बलवा करनेका सवाद पहुँचते ही इटावेमें विद्रोह हुआ। इस भीषण स्थितिमें अंग्रेज अपने बालबच्चोंके साथ जहॉ रास्ता मिले वहॉ भागे। स्वयं ह्यूम महाशय भी, केवल सिपाहियोंकी हिंदी उदारतासे हिंदी महिलाके वेशमें भाग सके। * जब ह्यूम के भागनेकी खबर मिली तब इटावा स्वतत्र होनेका समाचार ढिढोरा पीटकर घोषित किया गया और उसके बाद वहॉके सब सैनिक दिल्लीको जानेवाली अपनी पलटनमें मिल जानेके लिए मार्गस्थ हुए।

इस तरह सारी पलटन एकसाथ उठी। अलीगढ, बोलद, मैनपुरी, इटावा आदि बिलकुल दूरके स्थानोंमें भी खजाना लूटना, स्वातत्र्यकी घोषणा करना, शरणमें आये अग्रेजोंको प्राणदान देना और गोलाबारूद, शस्त्रास्त्र तथा अन्य रसदको जमाकर दिल्लीकी ओर चले जाना आदि कार्यक्रम अत्यत अनुशासनपूर्वक तथा पूरी तरह सपन्न किया गया। अग्रेज जिन पलटनोंको सबके अन्तमें विद्रोही बननेकी सम्भावना मानते थे वेही सबसे पहले बलवा कर मुक्त हो गयीं! सो किसी, भी परिस्थितिमें अग्रेजोंको शान्ति का विश्वास न रहा।

* रेड पॅम्फलेट खण्ड २, पृ. ७०

अजमेरसे १२ मैलपर नसीराबाद एक गॉव है। वहॉ एक गोरी पलटन, ३० वीं हिंदी पैदल सेना तथा तोपखाना इतना सेनासंभार था। इसी गॉवमें मेरठसे अभी अभी लायी हुई बम्बईके भालाबरदारोंकी पहली पल्टन तथा १५ वीं पल्टन भी वहॉ थीं। इस आखरी पल्टनमें अंग्रेजो का द्वेष तथा उन्हे भारतसे बाहर भगा देनेकी भावना बहुत गहरे होते जा रहे थे। मेरठके हजारो राजनैतिक प्रचारकोंने मेरठकी क्रांतिसंस्थाके सभी प्रस्ताव नसीराबादके सिपाहियोंको स्वय आकर समझा देनेका अवसर खो दिया होता तो वह एक अचरजकी बात होती। बम्बईके भालाबरदारों को छोड अन्य सभी सैनिकोंकी एक राय थी। सभी ठीक मौकेकी ताकमें थे। उन्हें २८ मईको यह अवसर मिला। क्यों कि, उसी दिन तोपखानेके सैनिकविभागमें काफी ढिलाई उन्हें दीख पडी। इस लिए इशारा पातेही मेरठकी १५ वीं पल्टनने बलवाकर तोपखानेपर कब्जा जमा लिया। उसको वापस लेनेके लिए गोरे अफसर और बम्बई भालाबरदारोंमें से कुछ सैनिक टूट पडे; किन्तु थोडेही समयमें भालाबरदार समझदारीसे लौट पडे और अंग्रेज अधिकारी वहीं ढेर हुए। न्यूबरीकी तो धज्जियॉ उडीं। कर्नल पेनी और कॅ. स्पाटिस्वुड दोनों मारे गये। जब गॉव हाथमे रहनेका सदेह हुआ तो अंग्रेज लोग बियासको भाग गये। क्रांतिकारियोंने खजानोंपर दखल किया और सर्वसम्मतिसे चुने सेनापतिने सम्राटके नामसे सैनिकोंको वीर–पारितोषिक बॉट दिये। अंग्रेजोंके घरबार जलाये गये। फिर हजारों सिपाहियोंकी सेना रणगीतोंको तालपर गाते और अपने शस्त्रास्त्र उछालते दिल्लीकी ओर चल पडे।

अध्याय ६ वाँ

रुहेलखण्ड

बरेली रुहेलखण्डकी राजधानी थी। अंग्रेजोंने यह प्रांत उसके पुराने शासकों—रुहेले पठानों—से हड़प लिया था। इस प्रांतमें शूर, बलवान और आनपर जान देनेवाले मुसलमानोंकी बस्ती थी। ये सब अपने अपमानका बदला लेनेके अवसरकी ताक ही में थे। सं. १८५७ के लगभग जिन स्थानोंसे अंग्रेजी शासनके विरुद्ध राजनैतिक क्रांतिका प्रचार जोरोंसे किया जाता था उनमें रुहेलखंड और खासकर उसकी राजधानीका महत्त्वपूर्ण स्थान था। इस समय बरेलीमें ८ वाँ अनियमित (इरेग्युलर) रिसाला, पैदल सेनाका १८ वाँ तथा ६८ वाँ विभाग और हिंदी तोपखानेकी एक टुकड़ी छावनीमें थी। इनका नेतृत्व ब्रिगेडियर सिब्बाल्ड कर रहा था। अप्रैलमें कुछ सैनिकोंने काडतूसोंके बारेमें अपना संदेह प्रकट किया था, किन्तु सरकारने इसपर ध्यान न देकर सबको उन्हें बरतनेको मजबूर किया था। बीचमें एक दो बार खलबली मची और सैनिक भी उत्तेजितसे होने लगे, फिर भी आगामी संकटको वहाँके अफसर भाँप न सके।

मेरठके बलवेकी खबर १४ मईको बरेली पहुँची। तब अंग्रेजोंने अपने परिवारोंको नैनिताल भेजकर रिसाले को होशियार रहनेकी आज्ञा दी। यद्यपि रिसालेके सैनिक हिंदी थे, तो भी अंग्रेजोंको उनपर पूरा भरोसा था। रिसालेके साथ सभी सैनिकोंको १५ मई को संचलन के लिए बुलाया गया। संचलनके समय वहाँके अंग्रेज मुख्याधिकारीने 'राजनिष्ठा तथा अच्छे बरताव' पर एक लम्बाचौडा भाषण दिया। उसने कहा, 'आजसे

नये काडतूस बरतना बंद किया जाता है; और उन पुराने काडतूसोंको तुम्हे दिया जायगा, जिनके बारेमें किसीको कोई आपत्ति नही है।" साथ साथ उसने स्पष्ट जताया, "यदि ऐसे नये काडतूस कहीं मिल जायँ तो उन्हें पहलेही मिट्टीमें गाड देंगे।" उसने इस नाटकीय भाषणसे सैनिकोंके संदेहको साफ करनेका जतन किया। असलमें काडतूसोंके बारेमें अब कुछ कहना व्यर्थ था। क्यों कि, स्वातंत्र्यका झण्डा गगनमें ऊँचा फहराते रखनेके लिए रुहेलखण्डकी जनताको दिल्लीके स्वदेशी सिंहासनसे त्वर्य (अर्जंट) निमन्त्रण अभी आ पहुँचा था। तो ऐसे शाही निमन्त्रणको बहानेबाजीसे थोडेही टाला जा सकता? निमन्त्रण पत्र यों थाः—

दिल्लीके सिपहसालारके बरेलीके सेनापतिको अंतःकरणपूर्वक प्रेमालिंगन। भाईसाहब, दिल्लीमें अंग्रेजोंके साथ युद्ध जारी है। परमात्माकी कृपासे पहली चोटमें हमने अंग्रेजोंको हार दी, जिससे बादमें दस बार हरानेपर भी न होते, उतने पस्त-हिम्मत हम उन्हें कर सके हैं। दिल्लीको स्वदेश और स्वाधीनताके लिए झूझनेवाले राष्ट्रवीरोंका तो तॉता बँध गया है! ऐसे बॉके समयमें आप यदि वहाँ खाना खाते हो, तो हाथ धोनेको यहाँ पहुँचिये। दिल्लीके शाहेनशाह सम्राट आपका स्वागत कर आपकी सेवाकी पूरी कद्र करेंगे। आपकी तोपोंके धडाके सुननेको हमारे कान तथा आपके दर्शनको हमारे नयन बहुत प्यासे हैं। चलिये, रवाना हो जाइये! क्यों कि, भाईसाहब, बसंत आने तक गुलाबका पौधा क्योंकर फूल फेकेगा? बिना दूधके बच्चा कैसे जीएगा!"

ऐसा निमन्त्रण क्योंकर टाला जा सकता है? जब यह निमन्त्रण मार्ग तय कर रहा था, तब यहाँ हाफिज रहमतके वंशके रुहेलोंका अन्तिम स्वतंत्र नेता खान बहादुर खाँ गुप्त क्रांतिकारी संस्थाका जाल बुननेमें मगन था। चूं कि, खाँ साहब हाफिजके कुलके थे और अंग्रेजी न्याय-विभागमें मॅजिस्ट्रेट रहे थे, अब अंग्रेजोंसे पेन्शन पाते थे। समूचे रुहेलखंडमें उन्हें अंग्रेजोंके कृपापात्रकी हैसियतसे लोग जानते थे; किन्तु बरेलीमें सभी गुप्त क्रांतिसंस्थाओंके तो वे प्राणरूप थे। हाँ, उपर्युक्त निमन्त्रणपर ३१ मई तक, जैसा कि पहलेसे निश्चित था, अमल स्थगित करनेकी सलाह हुई। यहाँके सभी सिपाही किसी तरह आज्ञाभंग न करते हुए अंग्रेजोंके हुक्मकी तामील

करते थे; अपने काम ठीक तरह सपन्न करते थे। कुछ दिन पहले मेरठ-वाले क्रातिकरियोंसे लगभग सौ सिपाही गुप्तरूपसे इस छावनीमें आ बसे, और मेरठका सब किस्सा ब्योरेवार बता कर तथा सैनिकोंमें क्रांतिभावको उभाडकर चल दिये। फिरभी ऊपरसे सैनिकोंने सपूर्ण शान्तिका पालन किया था। यहाँतक कि कुछ सूबेदारोंने तो अपना टव्यर ले आनेकी अनुज्ञा अंग्रेज अफसरोंसे माँगी। किन्तु इस प्रार्थनाका निर्णय होनेके पहलेही मई २९ को अफवाह उडी कि "नदीपर नहाते समय सवेरे सिपाहियोंने यह शपथ की है कि दो बजनेके पहले अंग्रेजोंको काट डालेंगे।" अंग्रेजोंने तुरन्त अपने राजनिष्ठ रिसालेको सिद्ध किया। रिसालेके सिपाहियोंने रचभी आनाकानी न की। दिन डूबने आया फिर भी विद्रोहका कोई चिन्ह दिखायी न पडा; तब अंग्रेज अफसर शान्तिसे सोनेको घर लौटे। हाँ, अफवाह भलेही झूठी निकली, रिसाला तो दगा करेगा नहीं, उन्होंने जाते जाते कहा। ठीक इसी समय अत्यत प्रामाणिक समाचार उनके पास पहुँचा कि "अपने भाइयोंके विरुद्ध हथियार उठाएँगे नहीं और अग्रेजोंकी सहायता करेंगे नहीं' इस प्रकारकी सौगध रिसालेके सैनिक ले चुके है। अब अंग्रेजोंके काटो तो खून नहीं! किसका विश्वास करें? इस दशामें दिनांक २९के साथ ३० मई भी शान्तिसे गुजर गया। और खासकर ३० के दिन तो सिपाहियोंका बर्ताव इतना अच्छा, अरे, इतना 'राजनिष्ठ' था, जिससे मुल्की तथा सैनिक गोरोंने मनही मन ठान ली कि न अब किसी प्रकार धोखा होगा, न डरका कोई कारण है!

३१ मईको सवेरा हुआ। सवेरे सवेरे कॅप्टन ब्राउनलो का बगला जला। फिरभी अंग्रेज मानते रहे कि कोई डरावनी बात नहीं हुई। इस दिन इतवार था। साप्ताहिक सैनिक सचलन बेखटके पूरा हुआ। और हिंदी अफसरोंने बाकायदा अपनी 'रपटे' (रिपोर्टस्) पेश कीं। उस दिन तो सिपाही अधिक अनुशासनपूर्वक तथा शान्तिसे काम करते हुए अंग्रेज अधिकारियोंने देखा। गिरजाघरमें जाकर गोरोंने अपनी प्रार्थनाएँ भी पूरी कीं। मतलब, सूरजदेवके सामने किसी प्रकारका कोई उत्पात न हुआ।

घडीने रातके ११बजाये और छावनीसे तोपोंकी गडगडाहट सुनायी दी। उसके वातावरणमें विलीन होनेके पहले ही राइफलों तथा संगीनोंकी खन-

खनाहट तथा कानके परदे फाडनेवाले पुकारसे आकाश गूँज उठा। बरेलीका बलवा इतनी बारीकीसे रचा गया था, जिसमे यह भी मुकर्रर था कौन किस गोरेको चलता करे। ११बजे ६८वी कपनी छावनीके अंग्रेजोंपर टूट पडी। ब्रिगेडियर सिबाल्ड पहलीही टगलमे हना गया। कॅ. किर्बी, ले. फ्रेजर, सार्जंट वॉल्टन, कर्नल ट्रूप, कॅ. रॉबर्टसन तथा इनके साथ क्रांतिकारियोंके हाथ लगे गोरे मार डाले गये। हॉ, ३२ गोरे इस हत्याकाण्डसे बचकर नैनिताल पहुँच पाये। इस तरह केवल छ घटोंमें बरेलीसे अंग्रेजोका राज उठ गया।

यूनियन जॅकको नीचे खींचकर स्वातन्त्र्यका झण्डा जब बरेलीमें चढाया गया तब तोपखानेके सूबेदार बख्तखॉने सेनाका आधिपत्य स्वीकार किया। दिल्लीके घेरेके समय इस बख्तखॉका बारबार जिक्र करना पडेगाही। उसने सिपाहियोंके जमघटके सामने इस विषयपर अत्यत उत्साहवर्धक भाषण किया, कि स्वाधीनता प्राप्त होनेके बाद सिपाहियोको कैसा बरताव रखना चाहिये तथा स्वराज्य प्रस्थापित करनेकें बाद उसे बनाय रखनेके लिए किन दायित्वपूर्ण कर्तव्योका भार उठाना पडता है।* इसके बाद यह स्वदेशी ब्रिगेडियर गोरे ब्रिगेडियरकी गाडीमें सवार हो कर शहरभरमे घूमा। उसके पीछे उसके मातहत नये नियुक्त हिंदी अधिकारी, उन उन श्रेणिके अंग्रेज अफसरोंकी गाडियोंमें बैठे जा रहे थे। सम्राट्के प्रतिनिधिके रूपमे सारे रुहेलखण्डके अधिपतिके नाते खानबहादुर खॉ का गौरव जनताने जयध्वनिसे किया। बरेलीके गोरोंके घरबार पहलेही जलाये जा चुके थे। खान बहादुरने उन अग्रेजोंको अपने सामने पेश करनेकी आज्ञा दी, जों बदी बनाये गये थे। खान पहले अग्रेजी शासनकालमें न्यायाध्यक्षका काम कर चुका था, जिससे अंग्रेजोके दण्डविधान (पीनलकोड) से वह अच्छी तरह परिचित था। इसीसे इन अग्रेज अभियुक्तोके मुकदमेमें पचायत (जूरी) बुलायी गयी। अभियुक्तोमे उत्तर-पश्चिम सीमाप्रांतके लेफ्टनेंट गवर्नरका दामाद एक डॉक्टर, बरेलीके सरकारी महाविद्यालय (कॉलेज) का प्राचार्य (प्रिन्सिपल) तथा बरेलीका सबसे बडा न्याया-

* चार्लस बॉल कृत इडियन म्यूटिनी खण्ड १.

ध्यक्ष इतने लोग थे। अभी कलही राजनिष्ठ खान बहादुर खाँ एक माननीय मित्रकी हैसियत अभियुक्तोंकी कुर्सीसे कुर्सी सटाकर बैठा था; आज वह सिंहासनपर अधिष्ठित है तो दूसरे अपराधी बंदीके कटघरेमें खडे थे! पचोंने शपथें लीं और, सदाके जैसे, फैसला देनेको बैठ गये। अभियुक्तोंको राजद्रोहसे संबंधित कई अपराधोंके लिए दोषी ठहराया गया और सबको फाँसी का दण्ड दिया गया। इनमेंसे छः अपराधियोंको तो वहीं फाँसीपर लटकाया गया। रुहेलखण्डका कमिश्नर अपनी जान बचानेके लिए भाग गया था; उसे मरा या जीवित पकडनेके लिए एक सहस्र मुहरोंका पारितोषिक खान बहादुर खाँने घोषित किया। इस तरह, अंग्रेजी खूनसे अपना सिंहासन पक्काकर रुहेलखण्ड स्वतंत्र हो जाने का संदेश लेकर शामके पहले दिल्लीके राजदूत चल पडे।

रुहेलखण्डके स्वतंत्र होनेकी घोषणा कोई योंही डींग नहीं मारी गयी थी। बरेलीके तोपची जिस समय अंग्रेजी शासनका कब्रबर निकाल रहे थे उसी समय शहाजहाँपुरमें भी अंग्रेजी लहू सींचा जा रहा था। निश्चित कार्यक्रमके अनुसार ३१ मई के सूरजको साक्षी कर शहाजहाँपुर स्वतंत्र हो गया था।

बरेलीके उत्तर-पश्चिममें ४८ मीलोंके फासलेपर मुरादाबाद है। यहाँ २९ वीं पैदल पलटन तथा देशी तोपखानेकी आधी पलटन छावनीमें थी! मेरठकी खबर मिलनेपर प्रथम बार यहाँके सैनिकोंकी 'राजनिष्ठा'की कसौटीका समय आया था। १८ मईको, मेरठके कुछ सिपाही मुरादाबादके पास आ रहनेका समाचार गोरे अफसरोंको मिला। तब, २९ वीं पलटनको आज्ञा हुई कि मेरठवालोंपर हमला किया जाय। आज्ञाके अनुसार जंगलोंमें सोये मेरठवाले क्रांतिकारियोंपर ये सिपाही टूट पडे। किन्तु इस जोरदार हमलेकी पर्वाह न करते हुए सबके सब वहाँसे छटक गये। रात तो कालेकलूटे अंधकारसे व्याप्त थी; तब अंग्रेज अफसरोंने भी माना कि सब ओरसे घेरे जानेपर भी केवल रातके अंधेरेके कारणही क्रांतिकारी छटक सके। किन्तु बादमें पता चला कि हमला करनेका केवल अभिनय किया गया था और सबसे विशेष बात तो यह थी कि मेरठवाले क्रांतिकारी असलमें मुरादाबादकी छावनीहीमें चुपचाप सोये हुए थे। हाँ, २९ वीं पलटनने पूर्ण राजनिष्ठासे

हमलेका काम किया और अंग्रेजोंने उनके प्रति विश्वास प्रकट किया। मईके अन्ततक इसको डॉवाडोल करनेवाली कोई घटना न हुई।

३१ मईको सवेरे सब सैनिक संचलनभूमिपर जमा होते नजर आये। विना हुक्मके वे क्यों कर वहाँ आये, इसका जवाब तलब करनेको जब गोरे अफसर आ पहुँचे तो उन्हें उत्तर मिला "कपनी सरकारका कारोबार अब समाप्त हो चुका है। अब तुम अपना बोरिया-बिस्तरा उठाकर इस देशसे तुरन्त चलते बनो। न मानोगे तो तुम्हे जानसे हाथ धोना पडेगा। ध्यान रहे, दो घटोंमें तुम यहाँसे रवाना हो जाओ और मुरादाबादसे अपना मुँह काला करो।" मुरादाबादके पुलीस दलने भी घोषणा की कि अबसे अंग्रेजोंकी आज्ञा वे नहीं मानेंगे; नागरिकोंने इसका अनुमोदन किया। इस तरह ताबडतोड इन तीन चेतावनियोंको पातेही मुरादाबादके सभी न्यायाधीश, कलेक्टर, शस्त्रवैद्य तथा अन्य गोरे लोग अपने बालबच्चोंके साथ, निश्चित समयके पहले चुपचाप भाग गये। और जो गोरे दो घटोंके बाद भी वहीं टालमटूल करते रहे मिले, उन्हें क्रातिकारियोंने खतम कर डाला। कमिशनर पॉवेलने अन्य कुछ गोरोंके साथ, इस्लामको कुबूलकर अपनी जान बचायी। सैनिकोंने सरकारी सपत्ति हथिया ली और सूरज भगवान अस्ताचल पहुँचनेके पहले मुरादाबादपर क्रातिकारियोंका स्वाधीनताका झण्डा लहराने लगा। *

बरेली और शहाजहाँपुरके बीचमे बदायूँ पडता है। यहाँका कलेक्टर और मजिस्ट्रेट कोई एडवर्डस् था। रुहेलखण्डमे अंग्रेजी राज शुरू होतेही वहाँके पुराने जमींदार बेशुमार करोंके बोझ तथा अन्य डॉट डपटसे ऊब उठे थे। बडे बडे रईस और उनकी असामियोंमे परस्पर असतोष फैल रहा था। बदायूँमें लगान इतना अधिक था कि उससे चिढकर बदायूँकी जनता संगठित होकर अंग्रेजी सत्ताका खात्मा करनेका मौका ही ढूँढ रही थी। एडवर्डस् भी इसे जानता था और इसीसे उसने बरेलीसे सैनिक सहायता भी माँगी थी। किन्तु बरेलीकी स्थिति, जैसा कि हम बता चुके है, पहले ही बिगड गयी थी। वहाँसे सहायता मिलना दूभर था। तो भी बरेलीसे

* चार्ल्स् बॉल कृत इडियन म्यूटिनी

संदेश मिला, "१ जूनको गोरे अधिकारियोंके नेतृत्वमे एक पलटन रवाना होगी"। इस आश्वासनसे एडवर्डसको धीरज बधाया और १ जून को तो बरेलीके मार्गपर आँखें बिछाये वह बैठा था! इतनेमें एक सरकारी आदमी बदायूँकी दिशासे दौडता हुआ दीख पडा। इधर आनेवाली सहायक सेनाका अग्रदूत समझकर एडवर्डसने उसे रोका और पूछताछ की। बात करनेके बदले उसने यह स्यापा सुनाया कि बरेलीसे अंग्रेजी राजही उठ गया है। बदायूँमे सरकारी कोषकी सुरक्षाके लिए कुछ सैनिक थे। उनके कमांडरसे एडवर्डसने पूछा "बरेली स्वतंत्र हो गया; अब बदायूँका क्या होगा?' उत्तर मिला, चिंताका कोई कारण नहीं है उसके मातहत सभी सिपाही राजनिष्ठ है! किन्तु शामकोही बदायूँमें बलवा शुरू हुआ। खजानेके रक्षक पुलीस और अन्य नागरिक नेताओंने ढोल पीटकर ढिंढोरा पीटा, "अंग्रेजी शासन समाप्त है।" इसतरह अपनी इच्छासे सारा जिला खान बहादुरखाँके अधीन हो गया। खजाना बटोरकर सैनिक दिल्ली को चल पडे। बदायूँके गोरे अफसर रातमे प्राण बचानेके लिए जंगलकी ओर भागे। कई सप्ताह भूखों मरते, कभी किसानोंके बाडेमे तो कभी उजाड घरोंमे छिपते, अंग्रेज कलेक्टर, मॅजिस्ट्रेट तथा स्त्रीपुरुष अपने प्राण बचानेके लिए मारे मारे फिर रहे थे। उनमें से कुछ मारे गये, कुछ मरे और कुछ एक 'काले' आदमीकी शरण पाकर बच गये।

इस प्रकार एकही दिनमे सारा रुहेलखण्ड उठा! बरेली, शहाजहाँपुर, मुरादाबाद, बदायूँ तथा अन्य गाँवोमे सैनिक, पुलिस, तथा नागरिकोंने मिलकर घोषणापत्र बनाकर कुछही घटोमे अंग्रेजी शासनको गलबाही देकर निकाल दिया। अंग्रेजी शासनको पटककर उसकी जगह स्वदेशी सिंहासन रचे गये। ब्रिटिश झण्डोको उतार कर टुकडे टुकडे कर दिया गया। न्यायालय, थानों तथा अन्य कार्यालयोंपर क्रांतिध्वज चढाये गये! अब शासकका स्थान हिंदुस्थानने ले लिया था और अभियुक्तके कटघरेमे इंग्लैंडको खडा किया था। यह अनोखी क्रांति सारे प्रांतमें कुछ घंटोंमे ही हुई! और अचरजकी बात है कि स्वदेशी रक्तकी एक बूँद भी न गिरी और रुहेलखण्ड स्वतंत्र हो गया।

बरेलीके तोपखानेके मुख्याधिकारी बख्तखाँके मातहत सब सैनिक

दिल्ली को रवाना हुए। तब प्रांत तथा राजधानीमें सुप्रबंध रखनेके लिए खान बहादुरने नये लोगोंका दल बनाया। अब तो हर एक नागरिक सैनिक बना था। मुल्की महकमोंको सुधारकर लगभग पुराने कर्मचारियोंको ही रख लिया गया। ऊँचे पदोंपर, जो पहले अंग्रेजों ने अटका रखे थे, हिंदी लोगोंको नियुक्त किया गया। लगान अब दिल्ली सम्राटके नाम जमा होने लगा। न्यायालय तथा कचहरीका प्रबंध वैसाही रहा जैसा पुराने समयसे चल रहा था। मतलब, क्रांतिके कारण किसी भी कामकाजमें न गडबडी पडी, न किसी महकमेको बंद करना पडा। भेद यही था कि अंग्रेज अधिकारियोंके स्थानपर देशी लोग दिखायी पडे। खान बहादुरखाँने अपने प्रांतके बनावोंका विवरण सम्राटके पास भेज कर समूचे रुहेलखण्डमें प्रसिद्ध करनेके लिए एक घोषणापत्र भी बनाया। वह यों थाः—" भारतीयो! तुम जिसकी प्रतीक्षा आतुरतासे करते थे वह स्वराज्यका मंगल क्षण अब समीप आ पहुँचा है! क्या, तुम इसका स्वागत करोगे या उसे गवाएँगे? इस अपूर्व अवसरसे तुम लाभ उठाओगे या उससे हाथ धो बैठोगे? हिंदु तथा मुस्लिम भाइयो! अच्छी तरह जान लो कि अंग्रेजोंको भारतमें टिकने दोगे तो निश्चित, वे तुम्हारा कत्लेआम कर तुम्हारे धर्मको नष्ट भ्रष्ट कर देंगे। अंग्रेजोंने बहुत पहलेसे ही भारतवासियों को खूब धोखा दिया है, जिससे हम अपनीही तलवारसे एक दूसरे की गर्दन रेत रहे हैं। इसलिए, हमको चाहिये कि हम इस स्वदेशद्रोहको रोकें और इस पापका प्रायश्चित्त करें। आज भी उसी धोखेबाजीकी कुटिल नीतिसे अंग्रेज हमसे पेश आयेंगे। हिंदूको मुसलमानके खिलाफ भडका देनेको कभी न चूकेंगे। दत्तक पुत्रके गद्दीपर बैठनेका अधिकार क्या उन्होंने नहीं ठुकराया है? हमारे राज तथा प्रदेश उन्होंने हडप लिया है कि नहीं? हमारे नागपुरका राज किसने छीना? अवधका राज कौन हडप गया? हिंदु और मुसलमान दोनोंको पैरोंतले किसने कुचला? मुसलमानो! यदि तुम्हें अपने कुरानपर गर्व हो, और, हिंदुओ! यदि तुम्हें गोमाता पूजनीय हो, तो आपसके छोटेमोटे भेदोंको भूलकर इस पवित्र धर्मयुद्धमें एक होकर लडो! एकही झण्डेके नीचे लडनेके लिए समरांगणमें कूद पडो और खूनकी नहरें बहाकर उनमें अंग्रेजोंका नाम तक इस भारतभूसे धो डालो।

यदि इस युद्धमें हिंदु-मुसलमानोंमें सहयोग हो और स्वदेश और स्वाधीनताके लिए शत्रुको रोके तो उनकी देशभक्तिके गौरवके हेतु गोवधकी मनाही कर दी जायगी। इस पवित्र धर्मयुद्धमे जो स्वयं लडेगा, तथा जो लडनेवालेकी सहायता पैसेसे करेगा उसे इस देशमें स्वातन्त्र्य और परलोकमें मोक्ष प्राप्त होगा! किन्तु, यदि कोई स्वदेशी युद्धका विरोध करेगा तो वह अपनेही पॉवपर कुल्हाडी मारेगा और आत्महत्याके पापसे नर्कमें जायगा।"

नये प्राप्त स्वराज्यका अनुशासनयुक्त प्रबंध कर उसकी रक्षा करनेके लिए रुहेलखण्डको अवसर देकर अब हम काशी और प्रयागकी ओर ध्यान देंगे।
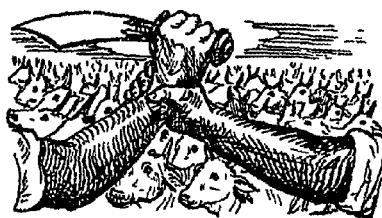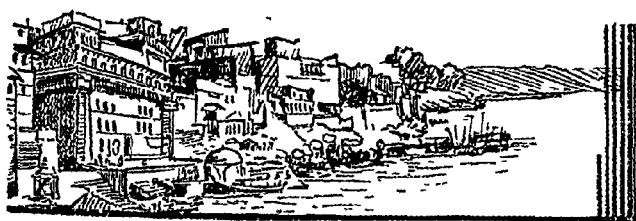
अध्याय ७ वॉ

काशी और प्रयाग

कलकत्तेसे ४५० मीलोपर परमपावन भागीरथीके तटपर अपने ऐतिहासिक वैभवसे पूर्ण काशीकी पुरातन पुण्यनगरी बसी हुई है। पुण्य-सलिला गगामैय्याके किनारे बसी हुई सभी नगरियोंमें काशी सचमुच सम्राज्ञीके समान सर्वश्रेष्ठ लगती है। गगाकिनारेसे दृष्टिपथमे आनेवाले एकसे एक ऊँचे भव्य प्रासाद, गगनमें दमकते हुए मदिरोंके ऊँचे ऊँचे सुवर्ण कलश,' गर्वसे गगनको छूने जानेवाली घनी वृक्षराजी, मदिर मदिरसे निनादित अनगिनत घटोंकी एक सम्मिलित प्रचड ध्वनि और इन सबसे बढकर सुदर बाबा विश्वनाथका परमपावन भव्य मदिर–काशी नगरीकी अपूर्व शोभा देखतेही बनती है। इस नगरीमे, सुख–विलासके लिए छैलो, पूजाप्रार्थनाके लिए भक्तो, ध्यानधारणाके लिए योगी–मुनियो, तथा मुक्तिसुखके लिए परमहसों का तॉता सदाही लगा रहता है। इस तरह हर कोई इस पुण्यनगरीमें अपने मनोरथोको पूरा कर लेते है। क्यो कि, ऐहिक सुख–भोगोसे आकण्ठ तृप्त होनेसे जिन्हें अरुचि हुई हों उनके लिए यह नगरी सात्त्विक आरामकुटीके समान शान्त मालूम होती है; जहॉ जिनकी आशा आकाक्षाऍ, ससारके दुष्ट घातकियोंके तीव्र द्वेष या छलपूर्ण असूयासे भग्न हुई हों, उन अभागे जनोको काशी नगरी तथा गगाके अमृततुल्य शीतल तुषार स्वर्गसुखका अधिराज्य अर्पण करते है।

सचमुच, अंग्रेजोको धन्यवाद देने चाहिए कि, १८५७ में भी इस स्वर्गतुल्य शातिनगरीमें अपनी बची हुई कष्टमय आयुको बितानेके लिए आनेवाले अभागोंकी कमी न रही। दिल्लीके राजाप्रसादो तथा भव्य भवनों

से जुदा हुए कई दीन-दरिद्र हिंदु-मुसलमान सरदार और मराठों तथा सिक्खोंके लुटे हुए राजपरिवार काशीके हर मंदिर तथा मस्जिद-दर्गाहमें अपनी आप बीती सुनाते बैठे नजर आते हैं। इसमें क्या आश्चर्य, कि ऐसी धर्मनगरीमें स्वधर्मकी अवनति तथा स्वराज्यके अस्तके विषयमें हिंदु-मुसलमानोंमें गहरी बहस छिडती होगी ? इस प्रांतका प्रमुख सैनिक-केन्द्र प्रयागके पास सिरकोलीमें था। यहाँ ३७ वीं पैदल सेना, लुधियाने-वाली सिक्ख कंपनी तथा रिसालेकी एक पलटन थी। हाँ, तोपखाना मात्र गोरोंके अधीन था। स्वधर्म और स्वराज्यके लिए उत्थानकी चेतावनी सैनिकोंको भिन्न भिन्न तरीकोंसे दी गई थी। १८५७ के प्रारंभमें काशी की आम जनतामें भी कुछ विशेष अशान्ति धुधवाती होनेके लक्षण दीख पडने लगे। काशीका मुख्य कमिशनर टकर, न्यायाधीश गब्रिन्स, मॅजिस्ट्रेट तथा अन्य नागरी अधिकारी और कॅ. ऑल्फर्टस्, कर्नल गॉर्डन तथा अन्य सैनिक अधिकारीगण पहलेही से काशीके अंग्रेजोंकी सुरक्षामें दत्तचित्त थे। क्यों कि, कई बार नागरिकोंकी अशान्ति प्रकट रूपसे उमड पडती और कभी कभी तो उसे काबूमें रखना कठिन हो जाता। पुरबिए तो प्रकट रूपसे और जोरसे यह प्रार्थना मंदिरोंमें करते कि "हे भगवान्! हमें इस फिरंगी राजके चुंगलसे छुडाओ।"* अन्य स्थानोंमें क्या हो रहा है इसे जाननेके लिए काशीमें गुप्त दलोंका संगठन भी हुआ था। जब मई महीना आ लगा, तब छावनीमें प्रचार करनेमें कई मुसलमान लग गये। नगरकी दीवारोंपर तथा चौराहोंमें लोगोंको उत्तेजित करनेके लिए विज्ञापन भी चिपकाए जाते थे।+ आगे चलकर तो हिंदु धर्मोपदेशक अंग्रेजोंके सत्या-नाशके लिए तथा स्वराज्यकी सिद्धिके लिए मंदिरोंमें सामूहिक प्रार्थनाएँ भी करने लगे। इन्हीं दिनों अनाजकी दरें भी बहुत चढी और जब अंग्रेज अधिकारी आकर लोगोंको जतलाते कि, "राजनैतिक अर्थशास्त्रके हिसाबसे अब यदि अनाजके भाव बढेंगे तो जथाबद गल्लेके व्यापारी पहले म[र] जायँगे" तो लोग उनके मुँहपर साफ कहते, "इस मँहगाई का ए[क]

---

* रिपोर्ट ऑफ दि जॉइंट मॅजिस्ट्रेट श्री. टेलर।

+ रेड पॅम्फलेट

मात्र कारण तुम्हीं हो और ऊपरसे हमें पढाने आये हो ? " जनक्षोभ का इस तरह ज्वलन्त प्रमाण मिलनेपर अंग्रेजों के दिलोंमें ऐसा डर समाया कि बलवा होनेके पहले ही बनारस छोड जानेका आग्रह कॅ. आल्फर्डस् और कॅ. वॅटसन् गोरोंसे करने लगे। तब गबिनस्ने गिडगिडाकर कहा " मैं तुम्हारे पाँव पडता हूँ ; किंतु कृपया इस समय बनारस छोडेने की बात न सोचो । " तिसपर काशी छोडने का विचार कुछ समयके लिए स्थगित रहा । और हाँ, अब नगरमें रहनेमेंभी क्या भय था ? क्यों कि, सिक्खोंने अंग्रेजों की रक्षा का भार उठानेके लिए स्वयंहि एक स्वयंसैनिकदल जो संगठित किया था ! और जिनको वॉरन हेस्टिंग्ज्ने टोकरोंसे उडाया था उसी चेत-सिंगके वंशज ही तो अंग्रेजोंकी ढाल बने हैं न ? अबतक भी इस तरह ' राजनिष्ठा 'में उफान आता था, तब भला बनारस को छोड जाने की अंग्रेजोंको क्या आवश्यकता थी ?

आजमगढ बनारससे ६० मीलकी दूरीपर है। वहाँ १७वीं हिंदी पलटन थी। मई ३१ से इसमें भीषण गर्जनाएँ उठ रही थीं।

आजमगढमें ३ जूनको, रातका अंधकार चुपकीसे आक्रमण कर रहा था। हिंदी पलटनके गोरे अधिकारी, सब मिलकर क्लबमें खाना खा रहे थे, उनके बालबच्चे आसपास खेल कूदमें मगन थे। सहसा भयंकर गडबडीकी आवाज उनके कानपर पडी। जूनके पहले सप्ताहसे ऐसी गडबडीकी आवाजका मतलब अच्छीतरह उन्हें परिचित था। उनके नाचरंग, खानेपीनेके मनोरंजनके कार्यक्रमके लिए इकठे हुओंमें एकाएक सन्नाटा छा गया। आपसमें कानाफूसी हुई ' कहीं सिपाही तो नहीं उठे हैं ? " इसी समय ढोल तथा तुरहियोंकी भयसूचक गंभीर ध्वनि सुनायी दी। मेरठके प्रसंगको याद कर हर एक गोरा अपनी जान बचानेके लिए इधर उधर दौडने लगा। अफसर, औरतें तथा बच्चे तो अपने प्राणोंकी आशाही छोड बैठे; किन्तु जमराजको प्रत्यक्ष देखकर भी न होनेवाली तिलमिलाहट उन अभागोंमें देखकर सिपाहियोंने प्रतिशोधका खयाल अपने मनसे निकाल दिया। और कोई अनकटोटा उन्हे आकर न सताये इस लिए उन्हे आश्वासन देकर आजमगढसे चले जानेको कहा। किन्तु अब उन अति उत्साही क्रांतिवीरोंको कैसे समझाएँ, जिन्होंने अंग्रेजी खून

चढानेकी सौगंध उसी दिन ली थी ? हाँ, ले. हचिन्सन और क्वार्टर सार्जंट लुइसके दो शरीर तो हमारी गोलियोंके निशाने अवश्य बनने चाहिये। बस ! अब दूसरे सब यहाँसे भलेही भाग जायँ। यदि भागनेमें उनके पाँव भारी हो जाते हों तो गाडियोंमें भी जा सकते हैं। किन्तु अफसर और मेमें कुडबुडाने लगीं कि अब उन्हें गाडियाँ कौन देने लगा है ? हिंदी सिपाहियोंने अपनी उदारताके ज्वारमें कहा, "चिंता न करो, हम तुम्हें सवारियोंका प्रबंध कर देते हैं।" और सचमुच गाडियाँ आयीं और अंग्रेजोंकी हथकडियाँ निकालकर उन्हें गाडियोंमें बिठा दिया और रक्षाके लिए साथ कुछ घुडसवार भी कर दिये। इस तरह अपने झण्डे तथा सत्ताके सब मानचिन्ह साथ लेकर यह टोली बनारसको चली। इधर सात लाखका कोष, गोलाबारूदका अंबार, ब्रिटिश शासनकी शान दिखानेवाला जेल, कार्यालय, सडकें, बारिकें, सबके सब सिपाहियोंके हाथ लगे।

दूसरे दिनके उदयपर सूरज भगवानने जब आँखें खोलीं तो अपनी एक रातकी अनुपस्थितिमें, शासनमें इतनी बडी शुभ क्रांति देख, आनंदमें, आजमगढपर गर्वसे लहरानेवाले क्रांतिके नूतन झण्डेपर अपनी सुनहली किरणें उडेल दीं। जो आजतक अपने मनमंदिरमें फहराता था, वह क्रांतिका झण्डा आज अभिमानसे अपने मस्तकपर प्रत्यक्ष लहराता देख, विजयानंद के जोशमें सिपाहियोंने एक बहुत बडा जुलूस निकाला और रणसंगीतके सुरोंपर क्रांतिध्वजके चौफेर नाचते हुए वे फैजाबादको चले।

आजमगढ स्वतंत्र होनेके समाचार बनारस पहुँचे; किन्तु वहाँके अंग्रेजोंको आशा थी कि वहाँ वैसा धोखा कुछ न होगा। मेरठके बलवेकी खबर पातेही पंजाबसे सर जॉन लॉरेन्सने तथा कलकत्तेसे लॉर्ड कॅनिंगने क्रांतिके प्रमुख केन्द्रोंको अधिकसे अधिक गोरी पलटनें भेजनेकी तनतोड चेष्टा की। दिल्लीके मुहासरेमें उत्तरकी सब सेना अटक पडी थी, जिससे दिल्लीके दक्षिण विभागकी बडी दयनीय दशा थी। उसीसे वहाँके अंग्रेज अफसर गिडगिडाकर प्रार्थना करते थे "कृपया हमारी सहायताके लिए कुछ गोरे लोगोंको भेजो।" हम पहले बता चुके हैं, कि तब तक लॉर्ड कॅनिंगने बम्बई, मद्रास तथा रंगूनकी गोरी पलटनोंको कैसे मंगवाया था तथा चीनकी चढाई की सेनाको भारतहीमें कैसे रोक रखा था। इसी

सिलसिलेमें मद्रास फ्युजिलियर्सकी पलटनको लेकर जनरल नील इन्हीं दिनों बनारस पहुँच गया था। सहायताके लिए गोरी पलटन पहुँच जानेसे और विशेषतः नील जैसा धीर, समर्थ तथा करारा सेनापति उन पलटनोंको प्राप्त होनेसे बनारसके अंग्रेजोंको धीरज बधाया। इसी समय दानापुरसे गोरी सेना बनारस आ पहुँची। जब काशीमें असीम असंतोष फैला हुआ था और क्रांतिका प्रचार करनेमें सिपाहियोंके हाथ बँटानेका प्रत्यक्ष प्रमाण अंग्रेजोंके हाथ लगा, तब उनका विचार हुआ कि क्रांतिको उसके गर्भमें ही कुचल देना चाहिये। वे मानते थे कि नीलकी पलटनों, सिक्खों तथा तोपखानेकी संयुक्त चेष्टासे यह काम आसान होगा। आजमगढकी खबर ४ जूनको बनारस पहुँची, उसपर काफी बहस होनेके बाद बलवेके पहलेही सिपाहियोंको निःशस्त्र करनेका निर्णय पक्का हुआ। उसके अनुसार उसी दिन दो पहरको सामूहिक सचलन होनेकी आज्ञा जारी हुई।

तुरन्त सिपाहियोंको अपनी मौतका भान हुआ। उनको पहलेही पता लगा कि गोरोंने तोपखानेको खूब तय्यार रखा है। सचलनके मैदानमें अंग्रेज अधिकारियोंने हथियार डाल देनेकी आज्ञा दी तो उन्हें पूरा भान हुआ कि निःशस्त्र कर देनेपर उन्हें तोपोंसे उडा दिया जायगा। इसीसे हथियार डालनेके बदले उन्होंने शस्त्रागारपर हमला किया और भीषण रणगर्जनके साथ वे अफसरोंपर टूट पडे। तुरन्त इन सिपाहियोंको घबरानेके लिये सिक्खोंकी एक कंपनी आगे आयी। इस समय अंग्रेजोंके साथ राज-निष्ठ होनेका भाव प्रकट करनेका ज्वार सिक्खोंमें इतना बढ गया था कि कुछ समयके लिए क्यों न हो, क्रांतिकारियोंसे भिडनेका मौका देनेके लिए वे अंग्रेजोंसे प्रार्थना कर रहे थे। एक हिंदू सिपाहीने गाईस नामक कमा-डरपर हमला कर उसको तत्काल धराशायी कर दिया। ब्रिगेडियर डॉज्यान् अपने स्थानपर पहुँचा नहीं कि एक सिक्ख सिपाहीने उसे गोलीसे उडा दिया नहीं। किन्तु उस महान अपराधको सहन न करनेसे अन्य सिक्ख सैनिकोंने उस सिक्खके टुकडे उडा दिये। अपनी राजनिष्ठाका अब अवश्य पारितोषिक मिलेगा इस आशासे राह देखनेवाले सब सिपाहियोंको तोप-खानेने भुन डाला। हिंदु और सिक्ख सैनिकोंमें पडी इस गडबडीसे

अंग्रेजोंको भय हुआ कि कहीं सिक्ख तो क्रांतिकारियोंसे मिल नहीं गये! और इसी अपसमझ (गलतफहमी) के कारण गोरोंने तोपखानेसे सबको भुन डाला। इस प्रसगमें अभागे सिक्खोंको क्रांतिकारियोंसे मिलनेके बिना कोई चारा ही न था। तब सब मिल गये और उन्होंने तीन बार तोपचियोंपर धावा बोला। १८५७में यही एक अवसर था जब हिंदू, मुसलमान तथा सिक्ख सब मिलकर अंग्रेजोंपर टूट पडे थे। किन्तु इसी समय इस पापका प्रायश्चित्त करनेका अनथक जतन सिक्खोंद्वारा हो रहा था। अंग्रेजोंके साथ क्रांतिकारियोंकी यह लडाई बारिकोंके पासही हो रही थी, तब गाँववालेभी उठनेका भय था। इस डरसे अंग्रेज अफसर तथा उनके बालबच्चे इधर उधर भाग रहे थे। तब सरदार सुरतसिंग उनकी रक्षाके लिए दौड पडा। बनारसके खजानेमें लाखों रुपयोंके साथ साथ अंग्रेजोंसे लुटे हुए सिक्खोंकी रानीके कीमती अलकार भी थे; और इस खजानेकी रक्षा अंग्रेजोंके लिए, सिक्खही कर रहे थे। भूलसे भी यह विचार सिक्ख सैनिकोंके मस्तिष्कमें आनेकी सम्भावना न थी कि अपनी निर्वासित रानीके अलकार, खजानेपर दखलकर, लौटा लिए जायँ! राजनिष्ठ सूरतसिंगने खजानेको आँच न पहुँचानेका उपदेश अपने धर्मबंधुओंको दिया और फिर सिक्खोंकी जगह गोरे सैनिक तैनात हुए। इस समय कोई पडित गोकुलचंद अंग्रेजोंका पक्षपाती बना था। इस विप्लवमें काशीके राजाने अपना प्रभाव, सपत्ति तथा सत्ता सब कुछ अपने प्रभुके–काशी विश्वनाथके नहीं, अंग्रेजोंके–चरणोंमें चढा दिया था। केवल क्रातिकारी सैनिक अकेले तोपखाने की आगकी पर्वाह न करते हुए लडते रहे और लडते लडते ही हटकर प्रांतभरमें फैल गये।

बनारसकी सिक्ख पलटनके जो सैनिक जौनपुर में थे वे तो तुरन्त क्रांतिकारियोंके साथ हुए और नगरभरमें क्रातिकी ज्योति फैल गयी। यह देख जॉइंट मॅजिस्ट्रेट कपेज लोगोंको भाषण देने खडा हो गया, तो श्रोताओंसे–उसकी वक्तृताकी कद्र थी वह!–एक गोली सनसन करती आयी और मॅजिस्ट्रेट साहब वहीं ढेर हो पडे। कमांडर ले. मारा भी दूसरी गोलीका शिकार बना! इसके बाद क्रातिकारियोंने खजानेपर धावा बोला और अंग्रेजोंको जौनपुरसे 'चले जाओ' की आज्ञा दी। इतनेमें बनारससे रिसालाभी वहाँ पहुँच गया। उसने तो हर गोरे को मार डालनेकी प्रतिज्ञा

ही की थी। एक बूढा डेप्युटी कलेक्टर रास्तेमें दीख पडा। सवारोंने उसका पीछा किया तब जौनपुरके कुछ लोगोंने बिचवाई कर कहा 'जाने दो उसे; हमारा बडा उपकार किया है इसने।" किन्तु सिपाहियोंने कहा "चाहे जो हो वह अंग्रेज है, उसे मरनाही चाहिये।"*

गहरा द्वेष इतना ऊधम मचा रहा था तो भी जिन अंग्रेजोंने शरण माँगी और अपने शस्त्र रख दिये उनको जीवित जाने दिया गया। इस सहूलियतसे लाभ उठाकर बहुतेरे अंग्रेज थोडेसे समयमें जौनपुर छोड भाग गये। बनारस पहुँचनेके लिए गंगापार होनेके लिए कुछ किश्तियाँ भी किरायेसे लीं। किन्तु मझधारमें मल्लाहोंने उन्हें लूटा और बालूपर ला छोड दिया। सारा जौनपुर क्रांतिके नारे लगाते हुए जमा हुआ और गोरोंके घरबार लूट तथा जलाकर अंग्रेजी हुकूमतके सभी चिन्ह मिटा दिये। सैनिक, जितना साथ लिया जा सके उतना खजाना लेकर, अयोध्याको चल पडे और बचा हुआ खजाना उन गरीब बुढियों तथा भिखमंगोंको सौंपा गया, जिन्होंने आयुभरमें कभी रुपया नहीं देखा था। उन्होंने जीवन भर मजेमें गुजारा कर दिल्लीके सम्राट तथा स्वराज्यको अंतःकरणपूर्वक धन्यवाद दिये।

सो, जून ३ को आजमगढ, ४ को बनारस तथा ५ को जौनपुरमें बलवा हुआ। प्रांतका प्रमुख नगरही शत्रुके हाथ लगे तो प्रांतभरमें क्रांतिका जोर ठंढा पड जाता है, यह नियम है! किन्तु क्रांतिकालमें सारे प्रांतको राजधानीपर अवलंबित रहना, क्रांतिशास्त्रकी दृष्टीसे बडी भारी भूल तथा धोखा है! इटलीके क्रांतिशास्त्रके प्रणेता मॅजीनी कहते हैं "जहाँ हमारा झण्डा फहरे, वहीं हमारी राजधानी है!" राजधानी क्रांतिके पीछे चले, क्रांति उसके पीछे नहीं! विद्रोहकी रूपरेखा शुरूमें चाहे जितनी चतुरता तथा सूक्ष्मतासे बनायी गयी हो, प्रत्यक्षमें सब कार्यक्रम निश्चित सिलसिलेसे नहीं चलता। इससे, राजधानीमें भलेही क्रांतिकी जीत न हुई हो, प्रांतके अन्य स्थानोंमें उसका दबाव जरा भी ढीला न होने देना चाहिये। सचमुच, इस सिद्धान्तका सुंदर उदाहरण बनारसने दिखा दिया

* चार्लस् बॉल कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १ पृ. २४५

है। क्यों कि, प्रातकी प्रधान नगरी, काशी, अंग्रेजोंके हाथ रही; फिरभी प्रांतभरमें क्रांतिके बवडरने सारा वातावरण व्याप्त कर दिया। जमीदार, किसान, सैनिक हर कोई अंग्रेजी शासनको गोमासके समान अपवित्र मानने लगा! छोटेसे गॉवको पता लग जाता कि कोई अंग्रेज गॉवकी सीमासे गुजर रहा है तो गॉववाले उसे पीटकर भगा देते।* जब ४ जूनका बनारसका यत्न असफल हुआ और वहॉ गिरफ्तारीका दौरा शुरू हुआ तब एक महत्वपूर्ण बात पहले पहल खुल गयी।+ ऐसेही कुछ प्रसगोंसे क्रातिके सगठनका यत्र कैसे चालू किया जाता था इसकी पर्याप्त पहचान हो जाती है। काशीके करोडपति सर्राफ तथा तीन महान् आदोलक गिरफ्तार हुए। जब उनके घरोंकी तलाशी हुई तो साकेतिक भाषामें लिखे कुछ भयकर पत्र, जो क्राति–केन्द्र–कार्यालयसे आये थे, बरामद हुए। उनमेंसे एक पत्र, जो 'नेताका' लिखा हुआ था, यों था "अब बनारसवालोंको एक साथ विद्रोह कर देना चाहिये। गब्बिन्स, लिंड तथा अन्य गोरोंको पहले मार डालो। इस काममें खर्च हो तो सर्राफ उसे पूरा कर देगा।" इस सर्राफ का घर जब जब्त किया गया तो वहॉ दो सौ तलवारें और कुछ बदूकें मिली।

यह है थोडेमे बनारसका वृत्तान्त। यहॉ मेरठ या दिल्लीके समान अंग्रे-

* स २७ "सिपाहियोंके बलवेकी बढती अवस्थामे, गहरा और चारों ओर फैला हुआ द्वेष और तथाकथित अन्यायके प्रतिशोधका कभी शान्त न होनेवाला भाव बढता गया, यह बात स्पष्ट दीख पडती है। लूटखसोट की इच्छा तो उस द्वेष तथा प्रतिशोधके भावकी उपज थी, जिससे भिन्न भिन्न स्थानोंके अंग्रेजोंपर बडी बिपत्तियॉ आ गिरी।–चार्लस् बॉल कृत इडियन म्यूटिनी खण्ड पृ. २४५

+ स. २८ बनारसमें विद्रोह होनेकी बात जिलोंमे फैली नहीं कि सारा प्रात एक साथ उठा। आसपासके स्थानोंसे यातायातके मार्ग तोड दिये गये, (तार तोडे गये, रेले उखाडी गयीं)। मालूम होता था कि सिपाहियोंसे जो काम पूरा न हो सका, उसे सफल कर दिखानेकी चेष्टा जनता और जमींदार (मिलकर) कर रहे थे।"–रेडपॅम्फलेट पृ. ९१

जोंकी हत्या बिलकुल न हुई। प्रांतभरमें एकभी मेमको नहीं मारा गया। जनताके हृदयमें धधकती राष्ट्रीय क्रोधकी ज्वाला जब 'बदला, प्रतिशोध' की ध्वनिके साथ फट पडती तब भी अंग्रेजोंको गाँव बाहर कर, लोग सुजनतासे पेश आते; कभी कभी तो उनके गाडीमें बैल या घोडे जोत देनेमें सहायता देते। यह चित्र देखो और अब आनेवाला वह चित्र भी देखो!

हम इस की चाह नहीं करते कि स्वराज्यप्राप्तिके लिए बनारसके लोगोंने जो जतन किये उससे अंग्रेजोंको सहानुभूति होनी चाहिये। किन्तु इस बातको हम जोर देकर बार बार बताएँगे कि बनारस प्रान्तमें किये अंग्रेजोंके अत्याचारोंका मडन किसी दशामें किया नहीं जा सकता। क्यों कि, सिपाही और जनताने जिस मात्रामें कुछ किया और उससे भडक कर अंग्रेजोंने जो भयकर अत्याचार किये इनमें किसी प्रकार का समपरिमाण मिलना असम्भव-सा है। क्रांतिकारियोंने–अर्थात् हिंदी जनताने–जो 'क्रूर' काम किये उनके विषयमें अत्यत नीच तथा झूठे अभियोग लगानेमें अंग्रेजोंने कोई कमी न रहने दी। सभ्य तथा सुधरी हुई जाती की डींग हाकनेवाले एक अंग्रेज अफसरने बनारसके लोगोंसे किस तरहका बर्ताव किया इसका वर्णन देंगे और ध्यान रहे, अंग्रेजोंने स्वयं लिखे हुए सत्य बातोंके सबूतके साथ देंगे तब उसकी आलोचना अनावश्यक होगी–व्यर्थ भी। ससार स्वयही उसका निर्णय करे।

बनारसके विद्रोहके बाद आसपासके देहातोंमें शान्ति रखनेके लिए जनरल नीलने अंग्रेजों और सिक्खोंको मिलाकर एक सेनाविभाग बनाया। इन सैनिकोंकी टोलियाँ असहाय तथा निहत्थे देहातोंमें घुसतीं और जो भी मिले उसे या तो तलवारके घाट उतारा जाता; या फाँसीपर लटका दिया जाता। इन फाँसी जानेवाले अभागोंकी सख्या इतनी अधिक बढी, कि रातदिन चालू रहनेपर भी एक वधस्तभसे काम पूरा न होता था। तब फाँसीके स्तभोंकी एक पाँतिही खडी कर दी गयी। इनपर से अधमरों ही को पटककर फेंक दिया जाता; फिरभी मरनेवालोंकी सख्या घटतीही न थी। पेड काटकर उससे वधस्तभ बनानेकी बेवकूफीकी कल्पनाको बेकार मान कर, अंग्रेजोंने पेडोंकोही वधस्तभ बना डाला। अरे, हाँ, एक पेडमें एकही आदमीको लटकाया जाय तो फिर करतारने पेडोंमें डालें क्यों कर पैदा

कीं ! तब डालडालको रस्सेसे गर्दनें कसे हुए 'काले' आदमियोंकी लाशें हर पेडमें लटकती दीख पडती थीं। यह सैनिक कर्तव्य तथा 'ईसाई शान्तिधर्मके प्रचारका कार्य' दिनरात चालूही रहता था; आश्चर्य नहीं, अंग्रेज बहादुरभी उससे तंग आ गये! इससे इस उदात्त और धार्मिक कर्तव्यके लिए आवश्यक गंभीरताके साथ, कुछ मनोविनोदका सामान भी वाछनीय था! किसी किसानको पकड़कर उसे पेडमें लटकाना तो अनाडी ढंग है; उसमें कुछ कलात्मकता चाहिये। सो, लोगोंको पहले हाथीपर चढाया जाता, फिर हाथियोंको डालोंके नीचे खडाकर लोगोंकी गर्दनें डालोंसे कसकर बांधी जातीं और फिर हाथीको भगाया जाता। * जब अनगिनत लाशें पेडके डाल डालमें बेढब लटकती रह जातीं; और इस एकही ढंगका दृश्य अंग्रेज राहियोंको अच्छा न लगता था; वे ऊब जाते थे! तब तरकीब सोची गयी कि 'नेटिवों' को खडे फॉसी देनेके बदले उनके शरीरकी कुछ चित्राकृतियाँ बनाकर लटकाया जाय। अंग्रेजी 8 और 9 की आकृतियाँ बनाकर पेडोंमें लटकाया जाने लगा! × (सं. २९)

किन्तु स्थान स्थानपर होनेवाले इस हत्याकाण्डकी पर्वाह न करते हुए सैकडो हजारों 'काले' आदमी अब तक जीवित ही रहे। अब इतनोंको फॉसी चढानेके लिए रस्सी भी नही मिलेगी! अत्यंत सभ्य और ईसामसीहके दया धर्मकी अनुयायी इंग्लैंड इस अडचनके कारण बडी जिचमें पड गया! अहा! ईसाकी परम कृपासे इंग्लैंडको नयी सूझ प्राप्त हुई और इसका प्रथम प्रयोग इतना यशस्वी ठहरा, कि तबसे इस नूतन तथा वैज्ञानिक ढंगको अपनाकर फॉसीके पुराने ढंगको त्याज्य माना गया! इस नये आविष्कारने गॉवके

---

* मिलिटरी नॅरेटिव्ह पृ. ६९

× फॉसी देनेवाली स्वयंसेवक टोलियाँ जिलोंमें जाती, जहाँ शौकीन जल्लादोंकी कमी न होती थी। एक महाशय शेखी बघारते, थे, कि उन्होंने जितनोंको लटकाया 'सब कलात्मक ढंगसे' था—आमके पेडको टिकटी और हाथीको पटरी बनाकर! इस जंगली न्यायके शिकारोंको, दिलबहलावके लिए, आठके अंक (8) के आकारमें टांगा जाता" के ॲन्ड मॅलिसन कृत हिस्टरी ऑफ दि इंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. १७७

गाँव तहसनहस कर दिये गये। आगकी पेचदार लपटोंसे किसानोंकी गर्दनें जकडकर, ऊपरसे तोपखानेको तय्यार रखनेसे, क्या मजाल, कि कोई चूँ तक करे। 'काले' नेटिवोंको भस्म कर डालनेमें क्या देरी? समूचे गाँवको आग लगाकर उसमें सभी जीवोंको एक साथ जला देनेका कार्यक्रम कई अंग्रेजोंको इतना मनोरंजक मालूम होता, कि वे इसके विनोदपूर्ण वर्णन लिखकर इंग्लैंडके अपने नातेदारोंको भेजते। इस सर्वदहनका काम इतनी सफाईसे तथा झटपट होता, कि देहातियोंको उससे बाहर पडनेका कोई अवसरही न मिलने पाता! गरीब किसान, विद्वान् ब्राह्मण, दीन मुसलमान, पाठशालाके लडके, नन्हे मुन्नोंको अंचल देती हुई स्त्रियाँ, मासूम लडकियाँ, बूढे, अंधे, लूले, गोरू जानवर सभी एकसाथ आगकी बलि बनते। बुढापेके कारण एक डग भरना जिन्हें दूभर था, वे स्त्री पुरुष बिस्तरेहीमें जलकर खाक हो जाते * और इस सर्वदाहसे भी भागनेमें कुछ सफलता कोई प्राप्त करे तो? तो– एक अंग्रेज अपने पत्रमें लिखता है:—"हम आदमियोंसे भरे बडे गाँवको जला देते; चारों ओरसे गाँवको घेरे हुए हम बैठ जाते और जब कोई देहाती चीखता–चिल्लाता आगकी लपटसे बाहर आता तो उसे हम गोलियोंसे छलनी बना देते!" *

यह शायद, इस तरह सुना हुआ, एकाध गाँव होगा? प्रांतके भिन्न भिन्न हिस्सोंमें गाँव जला देनेको कई टोलियोंको भेजा गया था। इन टोलियोंके कई अफसरोंसे एक अधिकारी, कई गाँवोंको जलानेके दौरोंमेंसे एक दौरेके बारेमें लिखता है "आपको संतोष होगा, कि हमने कुल बीस देहातोंको जलाकर भस्म कर दिया है।"

ध्यान रहे, उपर्युक्त विवरण उन इतिहासकारोंके ग्रंथोंमें इधर उधर छूट गये उल्लेखोंका संक्षिप्त रूप है, जो स्पष्टरूपसे कहते हैं, 'जनरल नीलने जो बदला लिया उसके बारेमें कुछ न लिखना ही अच्छा है!'

बस! अपनी ओरसे एकाध शब्द इसमें जोडना तो अंग्रेजोंके इस अमानुष, असभ्य क्रूरताके नंगे चित्रको बिगाडना होगा! और इसलिए

---

* चार्लस् बॉल कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १, पृ. २४३-४४

हे भयाकुल नेत्रो। इधर, अब, जान्हवी और कालिंदीके प्रीति-सगमकी प्रेम लहरोंकी ओर देखो! प्रयाग नगरी त्रिवेणी–संगमके सुशांत, सुभव्य सलिलसे सुस्नात होती है। त्रिवेणीका पुण्यपावन तीर्थक्षेत्र तथा अकबरके समयमें बना वहॉंका दुर्ग प्रयागकी शोभा औरही बढाते है। कॅलकत्तेसे पंजाबको जानेवाले सभी प्रमुख मार्गोका यह नाका है। प्रातकी सभी हलचलोंपर नजर रखने योग्य ऊँचा, दृढ और भव्य है प्रयागका किला! १८५७ मे यह दशा थी कि, जिसके हाथमे यह किला हो, उसके हाथ सारे प्रातकी बागडोर रहती। इससे दोनो ओरसे इस महत्त्वपूर्ण किलेको हथियाने या अधिकारमें बनाय रखनेकी चेष्टाओंकी पराकाष्ठा की जा रही थी। क्रातिदलका आयोजन था, कि प्रयागके सैनिक तथा नागरिक एक साथ उठे। इस समय हिंदू मुसलमान दोनो स्वदेश की स्वाधीनताको प्राप्त करनेके प्रयत्न इतनी तीव्रतासे चला रहे थे कि सरकारी नौकर बने न्यायाधीश तथा मुन्सिफ भी गुप्तरूपसे क्रांतिदलके सदस्य थे।*

इलाहाबादके अग्रेज अधिकारी अपने सभी सैनिकोंको राजनिष्ठाकी प्रत्यक्ष मूर्तिही मानते थे। विशेषमे, ६ वीं पलटन तो राजनिष्ठोंकी प्रथम श्रेणी थी। एक दिन दिल्लीके समाचार सुनकर उन सैनिकोंने अपने अफसरोंसे प्रार्थना की, "साब, दिल्ली जाकर इन बागियोंका सिर कुचलनेकी हमे आज्ञा दीजिये। हम इसके लिए बेचैन हो उठे है।" राजनिष्ठाकी बलिहारी! आज्ञा हुई, कि गवर्नर जनरलकी ओरसे, ६वीं पलटनको इस अजोड निष्ठा तथा विश्वासके लिए धन्यवाद दिये जायॅ। किन्तु इसी समय किसी चुगलखोरने बताया कि यह ६ वीं पलटन तो क्रातिकारियोंके साथ घनिष्ठ मित्रता रखती है। तब ६वीं पलटनके सिपाहियोंने दो क्रातिकारियोंको पकडकर अग्रेजोंको सुपुर्द कर दिया। अब किसी तरह सदेहको स्थानही कहॉं? तिसपर भी सरकार हमारी राजनिष्ठा पर शका करती हो, तो हमारे हृदयोंको टटोलकर उसकी शुद्धताकी निश्चिति क्यों न की जाय! ६ जूनको बडे अंग्रेज अधिकारी स्वय आ पहुँचे। देखते क्या है, कि वहॉं तो राजनिष्ठाका महासागर लहरे मार रहा था· यहॉंतक, कि कुछ सिपाहियोंने

* चार्लस् बॉल कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १. पृ. २८८

दौडकर बडे प्रेमसे अंग्रेज अफसरोंको गले लगाया और दोनों गालोंके बोसे लिये। *

और उसी रातको ६वीं पलटनके सब सिपाही तलवारें उछालते और 'मारो फिरंगीको' नारा लगाते बाहर आते हुए दीख पडे।

इधर क्रांतिकारी सैनिक इस लिए आकाश पाताल एक कर रहे थे, कि उनकी योजनाओंका पता शत्रुको लगकर बनारसके सैनिकोंके समान उन्हें निःशस्त्र न होना पडे; उधर अंग्रेज, सिक्ख सैनिकों तथा रिसालेकी सुरक्षामें अपने अपने परिवारोंको किलेमें पहुँचा रहे थे। ५ जूनको बनारसके समाचार इलाहाबाद पहुँचे। उस दिन नगरमें इतनी चहल पहल थी कि अंग्रेजोंने बनारसके मार्गमें पडनेवाले पुलपर अपनी तोपें ताककर किलेके द्वार भी बंद कर लिये थे। उस रातको सिपाहियोंने अंग्रेज अफसरोंको क्रोडमें छिपाकर बोसे लिए थे; वे जब भोजनके लिए मेसमें जमा हुए तब कुछ दूरीपर तुरहीकी डरावनी आवाजें आने लगीं! मानो यह सूचित किया जा रहा था, कि ६ वीं 'राजनिष्ठ' पलटनही अब विद्रोह कर रही है।

उस शामको, आज्ञा हुई कि बनारसके पुलपर रोकी हुई तोपोंको किलेके अंदर ले जाया जाय। किन्तु अंग्रेजोंकी हर आज्ञाको सिर आँखोंपर रखनेकी प्रथा आज एकाएक टूट-सी गयी दीख पडती थी। क्यों कि, सैनिकोंने आज्ञा जारी की कि तोपें किलेमें नहीं, बाहर छावनीमें रखी जायँ। गोरे अफसरोंने सैनिकोंको इस उद्धताईका दण्ड देनेकी अवधके रिसालेको आज्ञा दी। ले. अलक्सांदर ओर ले. हारवर्ड इन दोनों नौजवानोंने रिसाला ठीक कर सैनिकोंपर हमला किया। इस समय पौ फट चुकी थी। इन बागी सिपाहियोंके सामने पहुँचकर वे दोनों युवक अंग्रेज आगे इस आशा पर घुस पडे, कि उनका इशारा पातेही रिसाला दौडकर जोरसे हमला करेगा और इन मुट्ठीभर सैनिकोंका कचूमर निकालेगा। किन्तु महान् आश्चर्य! स्वदेश-बधुओंके विरुद्ध हथियार न उठानेके निश्चयसे, जैसे थे वहीं सवार डटे रहे! बागियोंने उनकी प्रशंसामें नारे लगाये। ले. अल-

* मिलिटरी नॅरेटिव्ह

-क्सादरकी छातीपर वार हुआ और वह नीचे गिरकर मर गया। तब सिपाहियोंने एक दूसरेको गले लगाया और सब मिलकर छावनीको चल पडे। दो सवार पहले दौड गये थे, जिन्होंने छावनीमे सिपाहियोको सब किस्सा सुनाया। इस समय सचलन भूमिपर जो दृश्य था, वह अवर्णनीय था। अग्रेज अफसरोंके मुँहसे आज्ञाका शब्द निकलतेही सॉय सॉय करती गोलियॉ चली आती। ॲडज्युटट स्टयुअर्ड प्लॅकेट, क्वार्टर मास्टर प्रिगल, मनरो, बर्च, ले. इनीज सबके सब ढेर हो गये! अब संचलन--भूमिसे उत्तेजित सिपाही अंग्रेजोंके घर जलाते घूमने लगे। जब उन्हे पता चला कि कुछ गोरे मेसमे छिपे बैठे है तो वहॉ जाकर सबके सब गोरोका काम तमाम कर दिया! हम पहले बता चुके है, कि इलाहाबादके किलेपर कब्जा रखना महत्त्वपूर्ण चाल थी। इसी किलेमे अंग्रेजोंके परिवार थे तथा गोला बारूद का भडारा भरा पडा था। इन सबकी रक्षा का भार सिक्खोंको सौपा गया था। सब सिपाही अब तोपके धडाके के इशारेकी राह देख रहे थे। क्यो कि, वहॉके सिक्ख तथा अन्य सिपाहियोंने यह निश्चय किया था, कि बलवा कर अंग्रेजोको किलेके बाहर कर देने की खबर तोपोके धडाकोंसे दी जायगी।

किन्तु किलेके सिक्खोंने ऐन मौकेपर विश्वासघात किया। अंग्रेजी यूनियन जॅकको किलेसे हटानेसे इनकार करही दिया; साथ साथ अभी आये सैनिकोंको निःशस्त्र कर निकाल बाहर कर देनेमे अंग्रेजोकी सहायता की। आजभी अंग्रेजोंको इस बातपर अचभा होता है, कि ऐसे वॉके समयमे क्रातिकारियोंको धोखा देनेपर सिक्ख क्योंकर उतारू हुए? यदि धोखा न होता तो केवल आध घटेमें इलाहाबादका यह प्रचड किला क्रांतिकारियोंके कब्जेमें आ जाता। याने, घडीभरमें अंग्रेजी शासनकी रीढही टूट जाती। किन्तु, हाय, यह अनमोल आध घटा अपने देशबन्धुओ और अपनी मातृभूमिको रौंध डालनेमें सिक्खोने बिताया। किलेके विद्रोहियोंने बार बार बलवा किया किन्तु सिक्खोंने अंग्रेजोका ही साथ दिया और अपने देशभाइयोंके हथियार छिनकर उन्हे अंग्रेजोंकी आज्ञासे किलेके बाहर कर दिया। इस तरह किला फिरसे अंग्रेजोंके आधिपत्यमे रहा।

किन्तु, सौभाग्यसे ये चारसौ देशद्रोही सिक्खही कोई सारा प्रयाग न

था। ब्रलवेका निश्चित समय आ पहुँचनेपर सारा प्रयाग उठा। सचलन भूमिके भयानक नारोंसे सारा नगर गूँज रहा था। पहले गोरोके बगलोमें आग लगायी गयी। फिर सिपाहियो और नागरिकोने मिलकर जेलोको तोड दिया। उनमे बद पडे सैकडो बदियोंसे अधिक गोरोंके प्रति कट्टर द्वेष दूसरे किसी मानवमे शायदही सुलगा होगा! इससे मुक्त होतेही भीषण गर्जन करते हुए वे सबसे पहले गोरोके निवासोको चल पडे। तार और रेलपर क्रातिकारियोंकी तीव्र नजर रहती। रेलके कार्यालय, पटरियाँ, तारके खम्भे, तार, इंजन सब चकनाचूर कर दिये जाते। गोरोंने बहुत कुछ सावधानी रखनेपर भी कुछ गोरे क्रातिकारियोके हाथ लगे ही, जिनका तुरन्त सफाया कर दिया गया। उसके बाद शामत आयी उन करंटोंकी—धर्मभ्रष्ट फिरंगियोंकी—जो अग्रेजोंके बूतेपर कूदते और हिंदी लोगोंसे अति उद्धताईसे पेश आते। क्रातिविरोधी देशद्रोहियोंके घरोंपर हमला हुआ। केवल उनको जीवित रखा गया, जिन्होने 'दिल्लीके सम्राटसे राजनिष्ठ रहेंगे और अग्रेजोंसे लडेंगे' की सौगद ली। दिनाक १७ के सबेरे क्रांतिकारियोने लगभग ३० लाख रुपयोका खजाना हथिया लिया। और फिर दो पहर, नगरभरमे क्रांतिके झण्डे का जुलूस घूमा और पुलीस थानेपर उसे गाडा गया। इस तरह सारा नगर और किला दोनों क्रातिकी लपटोमे ढँक जानेके बाद नागरिको तथा सिपाहियोंने उस क्राति-ध्वजकी सामूहिक वदना की।

लगभग एकही समयमे समूचा इलाहाबाद प्रात एक प्राण होकर भडक उठा। हर स्थानमे एकाएक इतना बदल हो गया था कि कुछ समय के बाद वहाँ अग्रेजी राज कभी था इस बातपर शायदही लोगों को विश्वास होता। हर गाँवमें चढा हुआ क्रातिध्वज लहरा रहा था; भूले भटके कोइ गोरा हाथ आता, तो देहाती उसे मार भगाते या जानसे मार डालते। क्या ही आश्चर्य है, कि पराधीनता की जडें कइ सदियोंतक गहरी रुझानेकी चेष्टा करनेपर भी कितनी छिछली होती हैं! हाँ, पराधीनताके अप्राकृतिक बीजमें जडें पैदा होना ही तो अचरज है। संसार, तुझे अबभी यह पाठ सीखनाही बाकी है!

इलाहाबाद प्रांत के सब ताल्लुकदार मुसलमान थे और उनकी रियाया

हिंदू। अंग्रेज मानते न थे कि ये दो समाज एकमन होकर विद्रोह करेंगे। किन्तु, जून १८५७ के उस सस्मरणीय प्रथम सप्ताहमें कई असभव बातें प्रत्यक्ष होकर दिखाई पडीं। प्रयागके बलवेका समाचार मिलनेकी राह न देखते हुए, प्रातभरके देहात उठे और वहभी एक साथ; और उन्होंने अपनी स्वतत्रता घोषित की। एकही माताके जाये हिंदू और मुसलमान एक साथ उठे और अंग्रेजी सत्तापर टूट पडे। हट्टेकट्टे सैनिकही नहीं, बूढे सैनिक बंदी भी राष्ट्रीय स्वयसेवक बनकर आगे आनेमें होड करने लगे। अपनी पकी मूछोंमें बल देते हुए सैनिक-दलोंका सगठन करने लगे। जो स्वय रणमैदानमें बुढापेके कारण या दुबलेपनके कारण जा न सकेते थे, वे नौजवानोंको युद्धके दॉवपेचोंकी जानकारी देते थे और युद्धशास्त्रकी खूबियोंको खोलकर बताते थे। फिर क्या आश्चर्य, कि स्वधर्म और स्वराज्यके ऊँचे ध्येयकी लगनके कारण बूढे सैनिकोंमें भी जवानीका जोश उमडा पडा हो, उस ध्येयसे सब जातियो तथा श्रेणियोंके लोगोंके मनको भी छा दिया हो!*

मारवाडी बनिये भी इस प्रचड आदोलनमें हाथ बॅटते थे और वह भी इतना महत्त्वपूर्ण था, कि जनरल नीलने भी अपने विवरणमें गोरोंके विरुद्ध द्वेषभावनाका जानबूझकर जिक्र किया है। "बहुतेरे प्रमुख व्यापारियों तथा अन्य लोगोंने हमसे कट्टर शत्रुभाव प्रकट किया और उनमें से कुछ लोगोंने तो हमारे विरुद्ध लडे जानेवाले युद्धमे भाग भी लिया"। फिर भी अंग्रेजोंको घमण्ड था कि कमसेकम किसान तो हमारे पक्षमें होंगे। किन्तु इस भ्रमकी कलाइ खोलकर इलाहाबादने खासी ठोकर लगायी। १८५७ के क्रांति युद्धमें इसके पहिले किसीभी राजनैतिक आदोलनमें किंचित् भी भाग न लेनेवाले किसान पहली हरावलमें थे। पुराने-अग्रेजोंको नियुक्तोंके पहलेके-तालुकदारोंके झण्डेके

---

* (स. ३०) कल हमारे हाथ चाटनेवाले सिपाही आज उन पेन्शन पानेवाले बूढोंके साथ, जो मैदानमें जानेके योग्य न रहे थे, अन्य लोगोंको कायरता तथा क्रूरताके कार्य करनेमें बढावा बडी लगनसे दे रहे थे।—केकृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड २ पृ. १९३. रेडपेम्फलेट भी देखो।

नीचे अपने हलोंको खेतोंमें छोड उनकी किसान रियाया स्वातन्त्र्य युद्धमें शामिल होनेके लिए बिजलीकी गतिसे दौड पडी। उन्होंने चालू अग्रेजी राजनीतिका पुराने स्वामियोंकी राजनीतिसे मिलानकर देखा, तब उन्हे निश्चय हुआ कि इस धोखेबाज फिरगी शासनसे अपने स्वराजका कारोबारही हजार गुना अच्छा था। जब सब घटनाएँ पराकाष्ठाको पहुँच गयी तब गत कई दशकोंके अकथनीय दुष्कर्मोंका बदला लेनेकी सिद्धता करने लगे। हर स्थानमे स्वराजकी जय जोरोंसे तथा आनदसे पुकारी जाती और नन्हे बच्चेभी मार्गमे पराधीनता पर थूकने लगे! यह अक्षर अक्षर सत्य है, कि १२–१४ सालके बालक क्रातिका झण्डा फहराकर मार्ग मार्गमे जुलूस निकालते। ऐसेही एक जुलूसपर हमलाकर अंग्रेजोंने उन बच्चोंको देहान्तका, दण्ड दिया। यह समाचार सुनकर एक अंग्रेज अफसर लज्जासे अपने अंदर बहुत गड गया, वह सेनापतिके पास पहुँचा; उसकी ऑखोंमें ऑसू छलक रहे थे; बालकोंको मुक्त करने उसने प्रार्थना की। हॉ, वह प्रार्थना किसी काम की न थी। जिन बालकोंने स्वातन्त्र्यध्वजको ऊँचा करनेका अपराध (!) किया था उन सबको सबके सामने फॉसीपर लटकाया गया! देवदूतके समान निष्पाप बालकोंकी हत्या, कौन कह सकता है, करनेवालोंके ही सिरपर फिर और जोरसे न आ गिरे? सारा प्रांत क्रोधसे थर्रा गया! किसान, तालुकदार, बूढा, जवान, स्त्री, पुरुष सभी दासताकी शृखलाको तोड देनेको 'हर हर महादेव' के नारे लगाते हुए उठे। "केवल गगापार नही, गगा और जमुनाके दोआबके सभी प्रातके देहाती उठे और ऐसा एकभी मानव, दोनों धर्मोंमें, न बचा जो हमपर वार करना न चाहता हो।" *

भारतीय इतिहासमे इतनी उत्तेजक, वेगवती तथा सर्वव्यापी दूसरी क्राति मिलना सर्वथा असम्भव है। भारतीय इतिहासमें यह तो आजतक न बनी हुई घटना थी, कि स्वदेश और स्वातन्त्र्य के लिए जागरित जन शक्तिका उत्थान हुआ और जिस तरह गडगडानेवाले मेघोंसे जलधारा बह निकलती है, उसी तरह शत्रुके रक्तकी नदियॉ बहने लगी! इससे बढ-

* के कृत इडियन म्यूटिनी खण्ड २ पृ. १९५

कर वह दृश्य अत्यंत उदात्त तथा स्फूर्तिप्रद था, कि अपने सच्चे कल्याणको पहचान, बधुभावसे प्रेरित हिंदू और मुसल्मान कधेसे कधा मिलाकर लड रहे थे। इस प्रकार प्रचड और अनोखा बवंडर पैदा करनेके बाद हिंदुस्थान उसे अपने काबूमें न रख सका, यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। अचरजकी बात हो तो वह है, इस प्रकार प्रलयकर प्रभंजनको भारत किस तरह पैदा कर सका! ऐसे तो कोई भी राष्ट्र क्रातिके बहावको एकाएक नियत्रित नही कर पाया है। फ्रेंच राज्यक्रांतिसे यदि १८५७के विप्लवका मिलान किया जाय तो मालूम होगा कि अराजक, अत्याचार, गोलमाल, स्वार्थपरकता, तथा लूटखसोट आदि क्रातिकालमें अनिवार्य रूपसे होनेवाली बातें भारतमें फ्रान्स की अपेक्षा बहुत कम मात्रामें हुई। जमींदारोंका परपरागत आपसी वैर, राजनैतिक पराधीनताका आवश्यक परिणाम बीस बिसवा दारिद्य, हिंदुमुसलमानोका सदियोंका पुराना द्वेषभाव और दूर करनेकी सभी चेष्टाओंके बावजूद बीचबीचमें उमडनेवाले अपसमझ (गलतफहमियाँ) इन सब बातोंके कारण क्रांतिका पहला प्रचड धमाका हो जानेके बाद अराजक (अनार्की) न होनेकी आशा पूरी न हो सकी! उत्पत्तिके बाद तुरन्त जलप्रलय होता है; करतारभी इसे नहीं रोक सकता। क्रातिके सवारको जहाँ भी अडचन आय, उसका सामना करनेकी सिद्धता रखना अनिवार्य है। अस्तु।

लूटखसोट और आगके दौरेका प्रथम सप्ताह समाप्त हुआ, तब अराजकका सकट और भय टल गया और इलाहाबादमें क्रांतिकार्यका रूप सुघटित–सा हो गया। जहाँ भी जनताके असतोषका विस्फोट होकर विप्लव होता है वहाँ पहले झटकेमे सुयोग्य नेता पाना दूभर होता है। किन्तु प्रयागमें यह अडचन तुरन्त दूर हो गयी। एक कट्टर स्वातंत्र्यप्रेमी सज्जन मौलवी लियाकत अली आगे आये और नेता बने। इनकी जानकरी हमे इतनीही मिलती है, कि ये जुलाहोंमें धर्मप्रचार करते थे; और एक मदरसेमें पढाते थे। उनके पवित्र चरित्रके कारण लोग उनका बडा आदर करते थे। इलाहाबाद स्वतत्र हो जानेपर चोबीस परगनेके जमींदारोंने उन्हे इलाहाबादका मुखिया तथा सम्राटका प्रतिनिधि मानकर सम्मानित किया। मौलवीने खुश्रूबागके सुरक्षित आहातेमें अपना डेरा डाला और वहाँसे समूचे प्रातके

क्रांतिकार्यका संचालन करने लगे। थोडेही दिनोंमें राज्यप्रबंध को ठीक कर दिया! सम्राटके सूबेदारके नाते प्रांतमें होनेवाली हर घटनाका विवरण सम्राट्के पास पहुँचानेकी प्रथा चालू की।

सबसे पहले आवश्यकता थी प्रयागके किलेपर दखल करना। जनरल नीलके बनारस से प्रयागकी ओर चल देनेकी खबर पातेही मौलवी लियाकत अलीने सेनाको सुसंगठित कर किलेपर धावा बोल देनेकी सिद्धता की। इस समय भी यदि किलेके अंदर होनेवाले चार सौ सिक्खोंकी अक्ल ठिकाने आती, तब भी बिना एक गोली चलाये तोपों और गोलाबारूदके समेत किला क्रांतिकारियोंके हाथ आता। जनरल नीलको दिनरात इस भयने अभिभूत किया था, जिससे वह गोरी पलटनोंको साथ लिये प्रयागको दौड पडा था; वह ११ जूनको वहा पहुँचा। घमासान लडाईके बाद १८ जूनको अपने राजनिष्ठ सिक्ख पिठ्ठुओं समेत वह इलाहाबादमें पैठ पाया।

बनारसके समान लडाईके बाद इलाहाबाद अंग्रेजोंके हाथमें चला गया, फिरभी क्रांतिकारी पस्तहिम्मत न हुए। किलेमें शत्रुने उसका आसन जमा लिया देख, प्रातकी जनता औरही भडक उठी। हर देहातने प्रतिकारकी सिद्धता कर अपनी रक्षाका प्रबंध कर लिया। इस तरह चिढे हुए लोगोंको रिश्वत देकर वश करनेका समय कबका समाप्त हो चुका था। यह लडाई एक सिद्धातके लिए लडी जा रही थी। नीलने छोटेसे छोटे नेताको भी पकडा देनेके लिए हजारोंका इनाम घोषित किया, किन्तु दरिद्र खेतीहर भी उससे न ललचाये! एक अंग्रेज अफसरने, केवल सिद्धान्तके लिए लडी जानेवाली गहरी लडाईकी इस उदात्ततापर, आश्चर्य प्रकट किया है। "मॅजिस्ट्रेटने किसानोंकी जानमे होनेवाले एक मशहूर नेताका सिर ला देनेके लिए एक हजार रुपयोंका इनाम घोषित किया। किन्तु हमसे (गोरोंसे) उन्हें इतना कट्टर द्वेष था कि एक भी जीव उसे पकडा देनेको आगे न बढा! -*

अपने नेताको पकडा देनेका हीन काम तो दूर, पैसे लेकर भी गोरोंको कुछ सौदा देना बडा पाप माना जाता। और कहीं लालचमें आकर ऐसा

* चार्लस बॉल कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १

पाप करे तो उसके जातवाले उसे कठोर दण्ड देते। "एक पाउँ रोटी-वालेने हमें गोरोंको पाउँरोटी भेजी, तब उसके हाथोंके साथ उसकी नाकभी कटी दीख पडी;" यह समाचार २३ जूनका है। केवल रोटी बेचनेके अपराधमें किसानोंने यह दण्ड दिया था। जब इस तरह सशस्त्र बहिष्कार पुकारा गया तो फिर अंग्रेजोंकी बुरी दशाका क्या वर्णन करें? गोरोंने इलाहाबादका किला लिया सही; किन्तु उन्हे इधरसे उधर हिलना असम्भव-सा हो गया। उन्हे सवारी, गाडी, बैल, दवा दारूभी मिलना दूभर हो गया। बीमार सैनिकोंके लिए डोली तथा उसे उठानेवाले कहार न मिलते थे। कई जगहोंमे बीमार पडे हुए थे, उनकी आर्त चिल्लाहट इतनी भयावनी थी कि कुछ अंग्रेज स्त्रियाँ उन्हे सुनकरही मर गयीं। गरमी तो सायँ सायँ कर रही थी। अब कहीं अंग्रेजोंके मस्तिष्कमें क्रांतिकारियोंका यह दाँव आया कि जूनमें विद्रोह करनेसे मात्र गरमीहीसे गोरे मर जायँगे। अपना सिर ठंढे पानीमें डूबो रखनेमें हर गोरा सैनिक व्यस्त था। ऊपरसे अनाजदानेकी कमी थी ही। उन्हें अनाजका एक कण भी बेचनेवाला देशद्रोही न मिलता था। "ठेठ आजतक हमें बिलकुल थोडे अनाजपर गुजारा करना पडा; कलके मेरे कलेवेसे एक कुत्ताभी अपना पेट न भर सकता।" इलाहाबादके एक अंग्रेज अफसरका यह कथन है! इस तह गरमी और भूखके कारण अंग्रेजोंके डेरेमें हैजा फूट पडा। इस दुःखसे छुटकारा पानेको अंग्रेज सोजीर हर दिन शराब पीकर बेहोश होने लगे। तब अनुशासन ढीला पड गया। ये पीक्कड सैनिक जब नीलकी आज्ञा भी ठुकराने लगे तब नीलने कॅनिंगको लिखा 'इनमेंसे कुछ को मै फाँसी देने जा रहा हूँ,' यह दशा थी इलाहाबादमें पडी गोरी सेनाकी। कानपुरको सहायता भेजनेके लिए लगातार त्वरित (अर्जंट) संदेश जा रहे थे, फिर भी नील जैसे सक्षम सेनापति को भी दिनांक १ जोलाई-तक प्रयागहीमें सडना पडा।

ध्यान रहे, नील तथा उसके मातहत फ्युजीलियर्सकी पलटनको मद्रासले खास बुलाया गया था। उस समय मद्रासमें क्रांतिकी एक छोटी लहर भी उठती तो अंग्रेज उसका दबाव एक दिन भी सह न सकते। किन्तु, इलाहाबादके कट्टर हिंदी सैनिकोंने अंग्रेजोंको किलेमें बंद रखनेका, चाहे
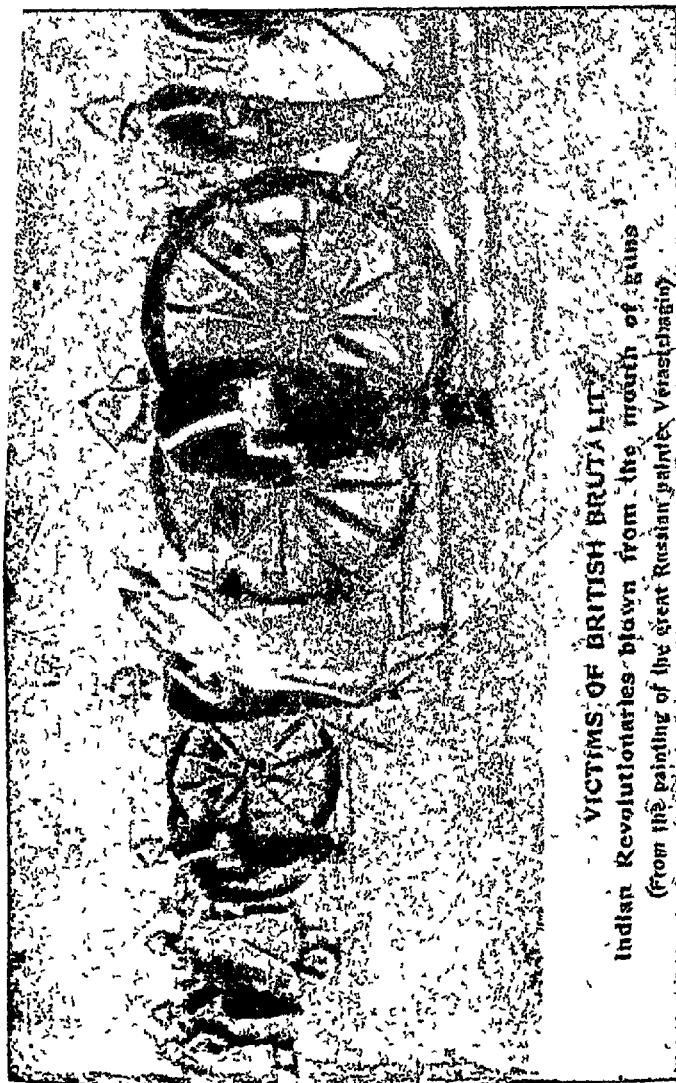
VICTIMS OF BRITISH BRUTALITY

Indian Revolutionaries blown from the mouth of guns

(From the painting of the great Russian painter Verastchagin)

जितनी चतुरतासे, सुदर आयोजन किया हो, अग्रेजोका दिल उससे बैठ जानेका कोई कारण नहीं था। क्यो कि, मद्रास, बम्बई, राजपूताना, नेपाल तथा अन्य प्रदेश अबभी प्रेतकी तरह ठढे थे और इस तरह इस राष्ट्रीय आदोलनके गलेमें अपने निकम्मेपनका भारी अडगोडा अटकाकर रुकावटें पैदा कर रहे थे!

सचमुच, अंग्रेजोंकी गुलामीके विरुद्ध विप्लव करनेके अपराधमे इन देशभक्तोंको बहुत कुछ भुगतना पड रहा था। बनारस और इलाहाबाद प्रातोंमें नीलकी पैशाचिक क्रूरताने जो कुहराम मचाया था उसका सानी जगली जातियोंके इतिहासमें भी मिलना असम्भव है! यह हमारा कथन अलकारिक भाषाका नमूना नहीं है; जो चाहे अपनी निश्चिति कर ले सकता है कि हम केवल सत्यही बता रहे है! बनारसके अमानुष अत्याचारोंका विवरण हम दे चुके है। अब यहाँ एक बहादुर ब्रिटिशने, इलाहाबादके अपने कारनामोका जो वर्णन गर्वके साथ, किया है उस पत्रका उद्धरण यहाँ देते हैं:– हाँ, यह मुहीम तो मुझे बहुत पसंद आयी। जब सिक्ख सिपाहियोंके साथ फ्युजिलियर्स सैनिक नगरपर धावा बोलने गये तो हम बंदूकोंके साथ एक जहाजमें चढे। उसके चलते चलते हम दाऍं बाऍं किनारों पर गोलियों की बौछार करते आते थे। जब हम खराब जगहमें आ गये तो हम गोलियाँ चलाते हुए किनारेपर उतरे। मेरी दु.ाली बदूकके शिकार कई 'काले' आदमी (निगर्स) बन रहे थे; मै तो बदला लेनेको पागलसा हो गया था . न! दाऍं बाऍं पासेपर .ब हम लोगोंने आग बरसायी तो पवनसे भडक उठीं ज्वालाऍं आकाशको चूमने लगीं। तब राजद्रोही दुष्टोंका पूरा बदला लिया जा रहा है, यह देख कर हम आनदसे बौखला गये। प्रतिदिन बागी देहातोंको जलानेके लिए हमारे दौरे निकलते तब हम पूरेपूर बदला लेते थे। जिन बदमाशोंने सरकार तथा अफसरोंके अपराध किये, उनकी तहकिकात के लिए जो समिति नियुक्त थी उसका मै प्रधान था। हर दिन हम आठ दस आदमियोको अवश्य फँसाते! लोगोंके प्राण हमारे चगुलमे थे, मै दावेसे कहता हूँ कि हमने किसीके साथ जराभी रियायत न की। पैरवीका

काम तो मामूली था। दण्डित अपराधीको गलेमें फंदा डालकर, एक गाडी-पर खडा कर, पेडसे बॉध दिया जाता, गाडी को आगे धकेला कि वह लटक गया!" * नीलने न देखा बूडा; न अधेड, न जवान; न बालक, न बच्चा; अरे, मॉ के ऑचलमें दूध पीते नन्हे तकको जीवित न छोडा! के महाशय ने स्पष्ट शब्दोंमें माना है कि इलाहाबाद प्रातमें कमसे कम छः हजार हिंदी लोगोंको कत्ल किया गया। सैंकडो स्त्रियों, कोमल बालिकाओं, माताओं, लडकियोंकी गिनति भी न करते हुए उन्हें जीवित जला डाला! हम परमात्मा तथा सारी मानवजातिको स्मरण कर उपर्युक्त कथन लिख रहे है और हम आव्हान करते हैं कि इसके विरुद्ध किसीके पास कोई प्रमाण हो तो परमात्मा और ससारके न्यायासनके सामने एक क्षण तो खडा रहनेका साहस करे!

और ये सब अत्याचार सचमुच किस अपराधके बदले किए गये? यही अपराध, कि सब लोक स्वदेशकी स्वाधीनताके लिए सब कुछ सहन करनेको सिद्ध थे!

और कानपुरका हत्याकाण्ड? किन्तु कहना चाहिये कि नीलके इस अमानुष पैशाचिक क्रूरताके परिणाम और प्रतिशोधस्वरूप वह हत्याकाण्ड था।

समूचे क्रातिकालमें हिंदुस्थानभरमे जितनी अंग्रेज औरते और बच्चे मर गये, उनसे अधिक संख्यामें अकेले नीलने इलाहाबादके एकही नगरमे हत्याऍ कीं। और ऐसे कई नील, भारतभरमे सैकडों स्थानोपर ऐसे कई हत्याकाण्ड करते घूम रहे थे। एक अग्रेज जीवके बदलेमें पूरा देहात जला दिया जाता था। प्रभु ऐसे करतूतोंको कैसे भूल सकता है? और हम? इसे कभी नहीं भूलेंगे!

और इन सब हत्याकाण्डोंके विषयमें अंग्रेज इतिहासकार क्या कहते हैं? प्रायः ऐसी घटनाओं का जिक्र वे करतेही नहीं; और वह भी आडम्बरी ढगके साथ! कहीं कभी विशेष विवरण दिया भी गया, तो वह नील की वीरताकी प्रशंसा करनेके हेतु। ठीक समयपर अपनायी इस क्रूरता (!)

* चार्लस् बॉल्स् इंडियन म्यूटिनी खण्ड १.

से बढकर दयालुता कौनसी हो सकती है ? कुछ इतिहासकार तो कहते है "नीलकी क्रूरतासे उसके अंतस्तलमें भरा हुआ मानवताका प्रगाढ प्रेमही अधिक चमक उठता है।" 'के' महाशय निःसंदेह जानते थे कि कानपुरका हत्याकाण्ड इसी क्रूर करतूतोंकी प्रतिक्रिया थी, फिर भी वह गंभीरताका ढोंग रचकर कहता है, "काले आदमियोने हमपर हाथ उठानेकी जो धृष्टता दिखायी उससे ब्रिटिशोंके प्राकृतिक, सिहको शोभा देनेवाले, शौर्य गुणका प्रभाव प्रकट होना स्वाभाविक था। नीलकी खूँखार प्रवृत्तिके बारेमे 'के' ने एक अक्षर न लिखा, ऐसे प्रश्नोपर मानव विवाद करे यह बात वह पसद नही करता; उसने इसका विचार करना आकाशस्थ पिता को सौंप दिया है। हॉ, नानासाहबके बारेमें लिखते समय के महाशयकी लेखनी कीचड उछालती इतनी निर्लज्जतासे दौडती है, कि कुछ न पूछो। चार्लस् बॉल तो मुँह फाडकर नीलकी प्रशसामें पुल बॉधता है। किन्तु स्वय नील अपने बारेमें क्या कहता है ?:—

प्रभुको सिरपर रखकर कहता हूँ, मैने जो कुछ किया, न्यायबुद्धिसे किया। हॉ, मै मानता हूँ कि मैंने कुछ अधिक क्रूरता दिखायी; किन्तु सब बातोंको एक साथ सोचनेपर वह क्षमाके योग्यही है। मैंने जो भी किया इग्लैंडके—मेरे स्वदेशके—कल्याणके हेतु किया, हमारी साम्राज्यसत्ताका आतक तथा स्थैर्य फिरसे प्रस्थापित करनेके लिए किया, न भूला जाय कि उस जगली अमानुष विप्लवका नाश करनेके लिए किया।" देशभक्तिकी यह अग्रेजकी परिभाषा सचमुच असाधारण है !!

दूसरे एक इतिहासकार होम्स साहब कहते हैं "बूढे व्यक्तियोंने हमें जरा भी न सताया था। असहाय अबलाओं तथा उनके आचलमें छिपे अर्भकोंको इस बदलेकी लपटोंने उतनीही प्रखरतासे चाटा, जितनी कि नीचतम अपराधीको ! किन्तु उस महामना नीलके बारेमें यह स्मरण रखना चाहिये कि ऐसी कडीसे कडी सजा देनेमें उसको जराभी आनद न आता था; वह तो केवल अपने कठोर कर्तव्यको निबाह रहा था।" *

* होम्स कृत सिपॉय वॉर पृ. २२९–२३०

हमें दृढ विश्वास है, कि उपर्युक्त उद्धरणोंका मर्म जानकर तथा सच्चे प्रभुको—नीलके प्रभुको नहीं—स्मरण कर निष्पक्ष इतिहास, अंग्रेजोंके किये इस आम तथा वेदर्द कत्लकी अपेक्षा, क्रांतिकारियोंको करनी पडी कुछ थोडी हत्याओं को निःसदेह कुछ सहानुकम्पा तथा क्षमाशील दृष्टिसे देखेगा। स्वदेशके लिए की हुइ हत्याएँ न्यायपूर्ण होती है क्या? "इस प्रश्नको परमात्मापर छोड देंगे; मैंने जो भी किया, मुझे उसके लिए परमात्मा क्षमा करे; मैंने अपने राष्ट्रका हित करनेके लिए ही सब कुछ किया।" ऐसे वाक्य नीलकी अपेक्षा नानासाहबके मुँहमें हों तो अधिक शोभा देंगे। "स्वदेशके लिए लडने" का प्रण तो क्रांतिकारियोंनेही किया था, नीलने नहीं। और हत्याएँ करनेसे जिन किन्हीने अपना कर्तव्य पूरा किया हो, वे थे स्वधर्म और स्वराजके लिए झूझने की आकांक्षासे पागल तथा अपनी मातृभूमिपर सौ सालोंतक होनेवाले लगातर जुल्मोंका प्रतिशोध लेनेको सचमुच तडपनेवाले क्रांतिकारी, यह त्रिवार सत्य है।

खैर; इस सादे ज्ञान का अब क्या उपयोग? क्रूरता और वहशतका बीज नीलने इलाहाबादमें अच्छीतरह बो रखा था और उसकी अच्छी फसल अब कानपुरके खेतमें लहरा रही थी। तो फिर चलो फसली मौसममें वहाँकी शोभा देखने कानपुर चलें।
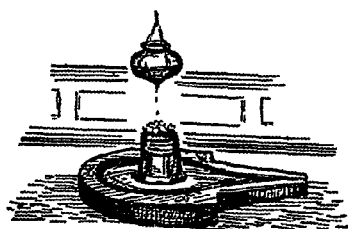
अध्याय ८ वाँ

कानपुर और झाँसी

पराधीनताके अतल पातालमें सडनेवाले अपने पुरखाओंका उद्धार करनेके पवित्र ध्येयसे प्रेरित होकर, भारत उत्तरके प्रदेशमें असीम वेगसे बहनेवाली क्रांतिगंगाके रक्तप्रवाहको कुछ समय आँखकी ओट कर, 'हरद्वार'की घटनाओंकी आहटको सुनना आवश्यक है। मेरठके बलवेके समय लखनऊके राजमहलमें, या बरेलीके सूबेमें या दिल्लीके दिवान-ई खासमे जितने क्रांतिनेता जमा हुए हों, उनसे बढकर नेतागण उस समय नानासाहबके राजप्रासादमें जमा थे। १८५७ की क्रांतिका बीज-धारण सबसे पहले ब्रह्मावर्तके राजप्रसादही में हुआ था। और वही क्रांतिका गर्भपिंड बढकर उसे निश्चित आकार भी प्राप्त हुआ था! और, सचमुच, बिठूरके इस राजप्रसादमें ही क्रांतिबालकका जन्म होता, तो निःसंदेह वह अल्पायु न होता। किन्तु गर्भके पूरे दिन भरनेके पहलेही मेरठके धडाके से क्रांतिका अधकचरा बालकही दुर्भाग्यसे जन्म पाया। हाँ, फिरभी उसे अपने भाग्यपर न छोडा गया। उलटे, प्रतिकूल परिस्थितिमें भी उसे पालपोस कर पुष्ट करनेकी सिद्धता तथा जतन ब्रह्मावर्तमें किया जा रहा था।

स्वातंत्र्यके प्रत्यक्ष देवदूतके समान फबनेवाले नानासाहबकी धीर वीर मूर्ति उच्चासनपर बिराजमान थी। पासही मे अपने नेताकी महान् साधना की पूर्तिके लिए अपना जीवित, धन, स्वास्थ्यका होम करनेपर उतारू उनके भाई बालासाहब और भतीजे रावसाहब भी बैठे हुए थे। उनके पडोसमें

पिता ब्रह्मावर्तमे धर्मादाय विभागके प्रमुख थे। वहीके ओसारेमें नाना-साहब, लक्ष्मीबाई तथा तात्या टोपे बचपनमे क्रीडा करते थे। नानासाहब और तात्या टोपे बचपनही से अभिन्न मित्र थे। बडे होनेपर जिन महान् प्रसगोंके वे प्रमुख वीर थे, उस वीर कार्यको पुष्ट करनेवाली शिक्षा प्रकृति की, बचपनहीमे, देन थी। दोनोने एक साथ भारत रामायण पढा था। उन प्राचीन हिदु वीरोकी वीरगाथायें सुन उन कोमल दोनों बच्चोकी भुजाएँ एक साथ फडकती थीं। ऐसी पाठशालाएँ हर शतीमे खुलती नहीं, जहॉ नाना, तात्या; राव और लक्ष्मीके जैसे विद्यार्थि एक साथ पढते हो। और यहभी बात नहीं, कि ऐसे असाधारण बच्चे एकही समयमे समरागणपर अपने वीर चरित्रका लेखन करें, ऐसी लिखित परीक्षा भी प्रत्येक देशमें ली जाती हो! इस तरहके अद्वितीय विद्यालय तथा असाधारण कसौटियों का सम्मान और सौभाग्य उस समय केवल ब्रह्मावर्तके भाग्यमें बदा था।

अप्रैलके अन्तमें नानासाहब तथा अजीमुल्ला, गुप्त सस्थाओके कार्यमे सगठनपरक एकता पैदा करनेके लिए, उत्तर भारतके प्रमुख नगरोंकी यात्रा कर आये थे। अब वे निश्चित महूरतकी राह देख रहे थे। सहसा मई १५ को मेरठके बलवे और उसके पश्चात् दिल्लीके छुटकारेका समाचार कानपुरमे पहुँच गया। इस आकस्मिक बलवेके कारण ब्रह्मावर्तमे जरा भी गडबडी मचने के चिन्ह न दिखायी दिये। क्रांतिके यत्रमे अनगिनत कलपुर्जे होते है। उनमेंसे कुछ अत्यत वेगसे, तो कुछ अत्यत मद गतिसे, घूमते है। यह स्थिति प्राकृतिक है! कुछ पुर्जे निश्चित समयपर ही, तो कुछ सहसा घर-घराहटके साथ चलेगे, यह भी निश्चित होता है। बिठूरवासी नेताओंने तुरन्त सारी स्थितिको भॉपकर मेरठके विस्फोटसे योग्य लाभ उठाना तय किया। हॉ, किन्तु इसका तरीका क्या होगा? तुरन्त दिल्लीको चल दिया जाय, या जैसे कि पहले निश्चित हो चुका है, जूनके प्रथम सप्ताहतक रुका जाय? इन दोनोसे दूसरा तरीका ही अधिक पसद हुआ और अदर ही अंदर क्रातियंत्र घूमने लगा।

कई वर्षोतक कानपुर अग्रेजोंकी एक महत्त्वपूर्ण छावनी बन बैठी थी। वहॉ १ ली, ५३ वीं तथा ५८ वी हिंदी पैदल सैनिकोकी पलटनें तथा

एक रिसाला–विभाग था; कुल मिलाकर ३००० हिंदी सिपाही थे। रिसाला पूरी तरह अंग्रेजोंके कब्जेमें था और साथ १०० गोरे सैनिक भी। इनका सबका कमाडर बडा जनप्रिय था। सिक्ख युद्ध तथा अफगान युद्धमें इस रिसालेने बहुत सराहनीय काम किया था। सरकारको दृढ विश्वास था, कि सब सिपाही इस कमाडरकी आज्ञापर आकाशके तारे तोड लाएँगे। तब किसीको भी यह सदेह न हुआ कि कानपुरकी छावनीमें कोई गुप्त क्राति-संस्था काम करती होगी।

१५ मई को समूचे कानपुरमें एक विशेष खलबलीके लक्षण दिखायी दे रहे थे। मेरठवाले सिपाहियोंकी करतूतोंकी कहानी सुननेसे कानपुरके सैनिक भाईबद अपनी सदाकी अलसेठ झाडकर जागरितसे दीख पडे। किन्तु अंग्रेज अफसरोंको यह समाचार १८ मईको माल्म पडा। दिल्लीके साथ तारका सबध कट जानेसे, लोगोंमें फैले असतोषकी मात्राको ऑकनेके लिए उन्होंने गुप्त दूतोंको रवाना किया। उनको दिल्लीसे आते हुए एक सैनिक मिला; किन्तु उसने साफ कह दिया कि फिरंगियोंको किसी प्रकार की खबर नहीं दी जायगी! अंग्रेजोंको अभी तक यह बात एक पहेलीही बनी रही है, कि तारके उत्तम प्रबधके होते हुए भी जो समाचार अंग्रेजोंके पास न पहुँच सकते थे, वे इतनी दूरीपर क्रातिकारियोंको ठीक ठीक और तुरन्त कैसे माल्म पडते होंगे। * मेरठके बलवेके बारेमें सिपाहियोंको कुछ जाननेका न बचा था; क्यों कि; प्रत्यक्ष घटना घटित होनेके पहले दिन, मानवी तारयन्त्र–द्वारा हरएक छोटी मोटी बात उनके पास पहुँच जाती। इधर अंग्रेजोंको मेरठके विस्फोटकी खबर मिलनेपर कानपुरके सिपाहियोंमें धुँधुवाते असतोषके बारेमें विशेष गभीरतासे सोचनेकी बारी आयी। किन्तु सर ह्यू रोजको अब भी विश्वास था कि यह सभी खलबली

* (स. ३१) सचमुच इस विद्रोह की एक अत्यत रमणीय बात यह है कि अतिशय निश्चिती तथा वेगसे दूरदूरके स्थानोंके महत्त्वपूर्ण सभी समाचार हिंदी लोगोंके पास पहुँच जाते थे। प्रायः इसका प्रबंध हरकारों द्वारा होता था, जो सवेग पहुँचानेका काम अत्यधिक फुर्तीसे करते और एक स्थानसे दूसरे स्थानको उन्हें पहुँचाते "–मिलिटरी नॅरेटिव्ह पृ–२३

मेरठकी अजीब खबरका परिणाम है, और समय जाते सब कुछ शान्त हो जायगा। किन्तु कानपुरकी छावनी तथा नगरमें अंग्रेजी राजके पैर उखड जानेके चिन्ह स्पष्ट दीख पडने लगे। हिंदुमुसलमानोंकी विराट सभाएँ होतीं, जहाँ सैनिकभी गुप्त बैठकोंमें जमा होते। शिक्षक तथा विद्यार्थि बलवेकी चर्चा करते; हर हाटमें बाजारभरमें, विद्रोहकी योजनाओंकी खुली चर्चा हो रही थी। जनक्षोभकी अब तक दबी पडी आग अब .प्रकट होने लगी थी। ब्रिटिशोंको भगा देनेकी बातें लोग आपसमें खुलकर कर रहे थे, और सिपाही स्वदेशी ऊँचे अफसरोंके बिना और किसीकी भी आज्ञा ठुकराने लगे। * एक अंग्रेज औरत अपनी सटाकी ऐंठनमें जब हाटमें सामान खरीदने चली थी तब एक बटोहीने उसे रोककर, तेवर बदलकर, कहा 'अरी; अब यह ऐंठन छोड दे! अब तुझे तो भारतके बाजारसे निकाल बाहर कर दिया जायगा, समझी!" जनजागरणका यह कुछ खुर्दुरासा अनुभव (असभ्य कभी नहीं!) अंग्रेजोंको पहले पहल हुआ। इस दशामें जानबूझकर चुप रहना निरी मूर्खता होती; इस लिए सर व्हीलर आत्मरक्षा की सिद्धता करने लगा।

उसे सबसे प्रथम चिंता थी, संकट पैदा हो जाय तो किस सुरक्षित स्थानका आसरा लिया जाय। एक स्थानपर उसकी नजर पडी, जो गंगा की दक्खिन की ओर, छावनीके पास ही था। उस स्थानके इर्दगिर्द खाइयाँ खोदकर बंदूकें चलानेके मोर्चे बांधकर, अनाज आदि सब सामग्रीकी सिद्धता कर रखनेकी उसने आज्ञा दी। किन्तु, कहा जाता है कि, ठेकेदारने सर व्हीलरको सुराग न लगने दिया, कि वहाँ बहुतही थोडी सामग्री भर दी है। इधर सर व्हीलर तथा अन्य अंग्रेज अधिकारी प्रसन्न थे, कि कहीं सिपाही विद्रोह कर भी बैठें, तो बिना किसी हानिके वह स्थान उनकी पुरी रक्षा करेगा। क्यों कि, सिपाही अपने अन्यस्थानीय सैनिक भाइयोंके पदचिन्हों पर चलकर दिल्ली चले जायँ तो फिर अनायास गंगापार होकर इलाहाबादकी सेनामें मिल जानेका योंही अवसर मिल जायगा। सो बात नहीं, कि केवल विद्रोह की हालतमें अंग्रेजोंको इस सुरक्षित जगहमें रखनेकी सिद्धता कर सर व्हीलर चुप रहा। तो लखनऊसे

---

* नानकचंदकी डायरी

सहायक सेना भेजनेकी सूचना सर लॉरेन्सको भी दे रखी थी। किन्तु लखनऊमें क्रांतिप्रचारका सैलाव इतने वेगसे बह रहा था, कि सर लॉरेन्स तो अपनेही लिए अधिक सेना मॉगनेसे बेजार था। तिसपर भी उसने ८४ सोजीर, अंग्रेज तोपखाना और कुछ सवार ले. ॲशके नेतृत्वमें कानपुरको भेज दिये। अंग्रेजोंकी सुरक्षाके लिए उसने कोइ विशेष योजनाएँ नहीं घडी थी। हॉ, अंग्रेजी शासनकी हस्तीपर आनेवाले संकटको टालनेके लिए जो एक खास आयोजन किया था, वह तो सचमुच अजीब था। किन्तु ऐसी अजीब योजनाको भी तोडनेका इलाज करनेवाली उस समयकी क्रांतिकारी संस्थाकी चतुरता हैरान कर देती है। इस प्रकारकी घटना अन्यत्र इतिहासमें पाना कठिन है। सर व्हीलरने ब्रह्मावर्तके 'राजा'से कानपुरकी रक्षा करनेको चले आनेकी प्रार्थना की थी। मेरठवाले समाचारसे सैनिकों तथा जनतामें भयकर खलबली मची हुई थी, फिर भी ब्रह्मावर्तमें सब प्रकारसे पहलेके समान शान्ति तथा मौन था। अंदर धुँधुवाते असतोषकी एक भी लहर उसकी सतहपर दिखायी देना असम्भव था। कानपुरके सैनिकोंकी मची खलबलीसे सर व्हीलारकी ऑखे तो खुल गयी थीं; किन्तु ब्रह्मावर्तके 'राजा' कभी विरोधी होनेकी आशका तक उसके मनमे न थी। कुछही समय पहले जिसका राजमुकुट अंग्रेजोके पैरोंतले रौंदा गया था और जिस नागके फनपर पॉव देकर छेडा था, उसीसे अपनी संकटग्रस्त स्थितिमे आज वही अंग्रेज सहायता मॉग रहा था! और इसमें उसने कोई भारी भूल न की थी। नानासाहब एक 'सुसभ्य' हिंदु था, कीना रखनेवाला 'सॉप' तो बिलकुल न था, क्यों कि अंग्रेजोंके बूटकी एडीसे कुचले जानेपर भी किसी प्रकार प्रतिशोधकी न सोचते हुए नम्रतासे पेश आनेवाले कायर 'हिंदु' हिंदुस्थानमें कई थे ही न? इस सरल किन्तु भ्रमपूर्ण मनोगतिके नापसे नानासाहबको तोलकर सर व्हीलरने असलमें, काले नागके दीमक ही में, हाथ डाला! और बिठूर के राजाको इससे बढकर कौनसा अच्छा अवसर था? दिनांक २२को दो तोपों, तीन सौ अपने अंगरक्षक सैनिको, कुछ पैदल सिपाहियों तथा रिसालेको लेकर नानासाहबने कानपुरमें प्रवेश किया। कानपुरमें नागरी तथा सैनिकी अधिकारी काफी सख्यामें थे। उनकी अंग्रेजी बस्तीही में

उन्होंने अपना डेरा डाला। अब कानपुरमें बलवा होगा तो खजाना लूटा जायगा यह तो स्पष्ट था; तो फिर उसकी रक्षा सर्वोत्तम पद्धतिसे कैसे हो? हॉ, नानासाहबके सैनिकोंपर इसका दायित्व क्यों न सौंपा जाय? नानासाहबके दो सौ सिपाही खजानेकी रक्षाके लिए तैनात हुए! कलेक्टर हिल्संडेनने नानासाहब तथा तात्या टोपेको बहुत धन्यवाद दिये; साथ यह भी तय हुआ कि बुरा समय आनेपर गोरे स्त्रीपुरुषोंको नानासाहबके बिठूरके राजमहलमें आसरा दिया जाय।

हॉ, यही थी राजनीति! अंग्रेजोंके बुलावेपर अपनी सेना के साथ कानपुरकी रक्षाके लिए नानासाहब चले जायँ और स्वाधीनताके लिए उठे अपने देशबधुओंसे लडे। अंग्रेजोंकी छावनी ही में डेरा डाले रहें! लाखों रुपयोंवाला खजाना अधिक सावधानीसे रक्षण करनेके हेतु अपने तावेमें ले और ऊपरसे अंग्रेज उनकी इस सहायताके लिए उन को धन्यवाद दें। इसीमे राजनीतिका अनोखा दॉव था। नानासाहबने चालको बढिया चालसे तोडा। शठं प्रति शाठ्य—ठगके साथ महाठग बनो—के न्यायको नानासाहबने चरितार्थ किया और यह सब उस महान विस्फोटके पहले मात्र एक सप्ताह! इससे यह सिद्ध हो गया '१८५७ में अंग्रेज अंधेरेमे टटोल रहे थे और उन्हींके बनाये करारेसे ही हडहडाकर वे गिर पडे'। स्वाधीनता ही एकमात्र ध्येय और सशस्त्र युद्धही उसका एकमात्र प्रभावपूर्ण साधन, उस समयकी जनताके अंतस्तलमे यह बात अच्छी तरह भिद गई थी। किन्तु क्रांतिके नेता, विद्रोहका दिनांक, प्रमुख केंद्र, आदि सभी बातें इतनी गुप्त रखी गयी थीं, कि अंग्रेज तो क्या, क्रांतिसंस्थाओंके सदस्यभी इस विषयमें कुछभी न जानते थे। केवल इस कार्यके सर्व प्रमुख और उनके विश्वासपात्र सहायकही इन बातोंको जानते थे! हम पहले बता चुके है, कि हर पलटनमें एक गुप्त—समिति रहती थी; इसका मर्म अब पाठकोंके ध्यानमे आ गया होगा। बनारसमें अंग्रेजोंके हाथ जो पत्र लगा था उसके नीचे केवल इतनाही लिखा था—"एक बडे नेताकी ओरसे"। ऊँचे दायित्त्वपूर्ण सब अधिकारी गुप्त कार्यके योग्यही बरताव करते थे। बलवेके अगले दिन तक भी अंग्रेजोंको, बहादुरशाह, नानासाहब तथा लक्ष्मीबाईकी गतिविधिका, जरा भी सुराग न मिल सका था।

और ब्रह्मावर्तने तो असीम गुप्तताका पालन किया था। 'के' साहबका कथन है; "मराठी साम्राज्यका निर्माण करनेवाले श्री शिवाजीका इतिहास नानासाहबने यो ही नहीं पढा था।"

क्रांतिकारियों की बैठकका मुख्य सांकेतिक स्थान था सूबेदार टिक्कासिंग का घर। गुप्त सस्थाओंकी सभाका और एक स्थान था सिपाहियोंके नेता शमसुद्दीन खॉं का मकान। इन सभाओंमें नानासाहबके ब्रह्मावर्तके राज-महलसे दो प्रतिनिधि—ज्वालाप्रसाद और महम्मद अली—उपस्थित रहते थे। सूबेदार टिक्कासिंग और ज्वालाप्रसाद दोनों शूर, स्वातन्त्र्य-प्रेमी तथा बडी लगनवाले देशभक्त होनेसे सभीपर उन्होंने अपनी छाप तुरन्त जमा ली और सारी सेना उनकी आज्ञा सिर ऑंखोंपर रखनेको शपथबद्ध हो गई। यह सकेत बन गया, कि टिक्कासिंग का मतही सेनाके प्रत्येक व्यक्ति का मत हो। अब इन अगुआओसे नानासाहब का मशविरा होना आवश्यक था। पहलेही मेरठवाले बलवेने सब कार्यक्रम अस्तव्यस्त कर दिया था: जिससे और ही गडबडी मच गई थी। अब बदली परिस्थितिके अनुसार कार्यक्रममे बदल करना अनिवार्य होनेसे टिक्कासिंह और नानासाहबका साक्षात् निश्चित हुआ।* प्रथम भेटमे खूबही चर्चा हुई। सूबेदार टिक्कासिंहने नानासाहबको जॅंचा दिया कि स्वधर्म और स्वराज्यके लिए हिंदु मुसलमान एक-मनसे उठनेको सिद्ध हैं और मात्र नानासाहब की आज्ञाकी राह देख रहे है। और कुछ नाजुक बातोंपर विचार करनेके लिए इससे भी गुप्त तथा काफी समय चलनेवाली बैठकका निश्चय कर टिक्कासिंग चला गया। १ जूनकी सध्याको भाई बालासाहब तथा मन्त्री अजीमुल्लाखॉंको लेकर नानासाहब गगामैय्याके पवित्र कूलपर आ पहुॅंचे। वहॉं टिक्कासिंग तथा गुप्त सस्थाओंके कुछ प्रमुख नेता उनकी प्रतीक्षा कर ही रहे थे। सब एक किश्तीमें, चढे। गगाकी परमपवित्र धारामें जानेपर हर एकने गगाजल हाथमें लिया और स्वदेश तथा स्वाधीनताके लिए लडे जानेवाले रक्तयुद्धमें कूद पडनेकी शपथ ली। फिर दो घटोतक

* फॉरेस्टकृत 'स्टेट पेपर्स' तथा ट्रेव्हेलियानकृत 'कानपुर'

चर्चा होकर आगामी कार्यक्रमकी रूपरेखा निश्चित की गयी और सब लौट आये। उनकी गुप्त बातें एक गंगामाई ही जानें; और सचमुच उसीके पास वे सुरक्षित रह सकती हैं! किन्तु एक बात प्रसिद्ध है, कि दूसरे ही दिन शमसुद्दीन अपनी माशुका अजीजानके घर गया और उसे यह खबर सुनायी कि केवल दो दिनोंमें फिरंगियोंका खात्मा कर हिंदुस्थान स्वतंत्र हो जायगा। शमसुद्दीनने यह कुछ शेखी नहीं बघारी थी; क्यों कि, हिंदुस्थानकी स्वाधीनताके लिए इस वीर प्यारेके हृदयमें टीस थी; उसी तरह उस रूपसुंदरी प्यारीका भी हृदय मचलता था। अजीजान एक नर्तकी थी, सैनिकोंकी चहेती थी। अपने प्रेमको बाजारू चीज बना कर टकासेर बेचनेवाली वह औरत न थी; स्वदेशप्रेमके पारितोषिकके रूपमें स्वाधीनताके लिए अपना प्रेम समर्पण करती थी। हम अभी बताएँगे, कि अजीजानके मुखके हास्यकी एक रेखा लडाके वीरोंकी देहमें उत्साहकी उमंगे उठाती थीं, तो उसकी काली भौहोंके सिकुडनेसे घृणाका एक तीर छूटनेपर समरांगणसे भाग खडे होनेवाले कायर भी फिरसे घनघोर युद्धमें जुट जाते!

क्रांतिकारियोंकी योजना जब पूरी होनेको थी, तब अंग्रेजोंकी छावनीमें घबराहटकी धूम मच गयी थी। लखनऊसे जब सहायक सेना पहुँच गयी तब कहीं सर व्हीलरने छुटकारेकी साँस ली; खजाना और गोलाबारूद जब नानासाहबकी रक्षामें कर दिया तब कहीं उसका कलेजा अपनी जगहपर आ गया। फिर भी अंग्रेजोंका दिल तो बैठही गया था। २४ मई को बडी ईदका दिन था। हर अंग्रेज मानता था कि ईदहीको बलवा होगा। किन्तु १८५७ के स्वातन्त्र्यसमरके नेता, सहजमें ताडे जानेवाले दिनको बलवा करने योग्य महान् मूर्ख न थे। जिस दिन निश्चितरूपसे विद्रोह होनेकी आशंका शत्रुको हो, उसी दिन जानबूझकर शांति रखे और शत्रु जिस दिन निश्चितरूपसे विद्रोहकी सम्भावना न मानता हो, ठीक उसी दिन बलवेका धडाका उडाया जाय, यह तो क्रांतिकी यशस्विताका मर्म है। कानपुरमें भी ईदके त्योहारको कुछभी दंगा न हुआ। उस दिन अंग्रेजोंके तो छक्के छूट गये थे; सर व्हीलरने तो लखनऊको तार भी दे दिया कि 'आज अवश्य कुछ ऊधम होगा'। किन्तु उस दिन

शामको जब मुसलमान सदाके अनुसार मिलने, गले लगाने लगे; तब कहीं सर व्हीलरको कुछ शान्ति हुई! विक्टोरिया महारानीकी वर्षगांठके उपलक्ष्यमें हमेशा तोपें दागी जाती थीं, किन्तु सिपाही बिगड जाएँगे यह मानकर इस वर्ष उसे मनाही कर दी गयी। महारानीकी वर्षगांठ हो और तोपें न दागी जायँ? यह सुनकर कुछ अंग्रेज अफसर बहुत सिटपिटाये, पर बेचारे क्या कर सकते थे? यदि उस जगहपर ध्यान दिया जाय, जो अंग्रेजोंने किलाबंदी कर अपनी सुरक्षाके लिए बनायी थी, जिसका जिक्र हम पहले कर चुके हैं, तो पता चलेगा, कि अंग्रेजोंकी इतनी दुबली दशा क्यों हुई थी। ईसाप की उस कहानीके अनुसार (लोमडी और गडरियेका लडका) कोई योंही यह गप उडाता कि 'सिपाही उठे' और गोरोंके झुंडके झुंड सिरपर पाँव रखकर मार्गमें दौडने लगते। एक अंग्रेज अफसर लिखता है, "मैं जब वहाँ था तब देखा, कि बग्घियों, गाडियों, डोलियों आदि सवारियोंकी धूम मच जाती और उनमेंसे लेखक, व्यापारी, औरतें छातीसे लगे बच्चोंकी माताएँ, बच्चे, आयाएँ तथा अफसर आदि सबको वहाँ पहुँचाया जाता। मतलब, यदि बलवा कहीं हो जाता, या अब होता, तो हमसे और कोई हमारा अभिनंदन करनेकी सम्भावना न थी। क्यों कि उपर्युक्त दृश्यसे हम भारतीयोंको बता रहे थे कि हम कितने बुजदिल हैं और हमारी कितनी दयनीय दशा है!" इस अफसरका कहना ठीक था; जनताने अंग्रेजोंकी कायरताका नंगा रूप देख लिया था। जब वह किलाबंदीवाली गढी बनायी, तब क्या अजीमुल्लाने हंसते हंसते एक लेफ्टनंटका मखौल नहीं उडाया था? सदाकी मीठी भाषामें अजीमुल्लाने पूछा "क्यों साहब, आपकी बनायी इस गढीका नाम क्या रखा है जी?" लेफ्टनंटने जवाब दिया "मैंने अब तक सोचा नहीं।" तिसपर वह चाणाक्ष अजीमुल्ला आँखे मटकाते, धीरेसे बोला, "अजी साहब, इसका नाम 'फजीहत-गढी' क्यों न रखा जाय?"

एक दिन शामको एक नौजवान गोरेने शराबके नशेमें एक सिपाहीपर गोली चलायी। निशाना तो चूक गया; किन्तु सिपाहीने उस अपराधीके विरुद्ध फरियाद की। सदा की पद्धतिसे अपराधीको बेगुनाह साबित कर रिहा कर दिया गया! कारण बताया गया, गोरा शराबके नशेमें था, जिससे

उसकी बदूक अपने आप चल गयी ! यह ढकोसला सदासे ऐसाही चलता था; किन्तु अब उसके दिन लद् गये थे। *

इस अपमानसे सारी सेनामें कानाफूसी होने लगी, "अच्छा, ध्यान रहे हमारीभी बदूकें आपसे आप दग जायेंगी।" और हर सिपाहीके मुँहसे यही सुनाई देने लगा। जब सैनिक एक दूसरेसे मिलते तब कहते, "अच्छा, हमारी भी बदूके अपने आप चलेंगी, है न ? और सारी सेनामें एक दूसरेसे मिलनेपर यही व्यग 'नमस्ते' के बदले रूढ हो गया। फिर भी कुछ समयतक अपने क्रोध को काबूमें रखनेका निश्चय कर कानपुर-वालोंने मेरठवालोंके समान उतावली न करनेकी ठानी।

आगमे घी उँडेलनेके लिए अंग्रेज स्त्रीपुरुषोंकी दो लाशें गगाकी धारामें बहकर कानपुरके किनारे लगीं। कानपुरके ऊपर कहीं बलवा होनेका यह प्रमाण मिल जानेसे कानपुरमें इस प्रकार भयकर बातें सुनायी पडने लगीं "गगामैय्या ! सागरके अतल तलमें पहुँचानेके लिए तुझे पापके कितने गठ्ठर अपनी पीठपर ढोने पडते होंगे ?" अब तक 'भेडिया, 'भेडिया आया' वाली मिसाल होकर कई बार अग्रेजोंकी फजीहत हो चुकी थी। और जब; सचमुच, भेडिया आ जाता तब ये गडरियेके बच्चे बेखबर सोये पडे मिलते। १ जूनको सर व्हीलरने कॅनिगको लिखा, "अशान्तिका भय अब टल गया है; अब कानपुरमें कोई खतरा नहीं ! यहाँ तक, कि अब मै लखनऊको भी यहाँसे सहायतार्थ सैनिक भेज सकूँगा!" और सच, प्रयागसे आयी गोरी कपनियाँ अब लखनऊकी ओर चल भी पडीं ! और ३ जूनको क्या ही आश्चर्य ! जिस क्रातिमें तीन हजार सिपाही, नर्तकियाँ, और सारी कानपुरकी जनता सभी सहयोगी बने उस

---

* (स. ३२) ट्रेव्हेलियन कहता है, "हलके युरोपियनोंकी क्रूरता तथा सैनिक अधिकारियोंके न्यायकी छीछालेदरसे सिपाही परिचित थे। अन्य समय पर इस अत्याचार तथा उसके निर्णयपर शायद ही उन्हें आश्चर्य होता। किन्तु अब उनका खून उबल रहा था, उनका आत्माभिमान जागरित हो चुका था, जिससे किसी अँग्लो-सॅक्सन वशीयके हक तथा सैनिक न्यायालय की दानाईको तरजीह देनेके लिए वे सिद्ध न थे।"—कानपुर पृ. ९३

क्रांतिकी आहट तक अंग्रेजो तथा उनके नानकचद जैसे सहायक कुत्तोंको न मिले!

निदान जून ४ की रातमें सब कुछ भडक उठा। निश्चित कार्यक्रमके अनुसार रातको अंधेरेमें तीन 'फायर' हुए; और चीन्ही हुई इमारतोंमें आग लगायी गयी। रक्तपात, सहार, मौतका समय आ लगनेके ये चिन्ह थे। पहले पहल टिक्कासिंहने अपना घोडा दौडाया और पीछेसे हजारों घोडे उसके पीछे पुरजोशमें दौडने लगे। कुछ एकने अंग्रेजोंके घर जलाये; अस्तबलोंमें आग सुलगायी; कुछ सवार दूसरी टुकडियोंको गाँठने गये, जहाँ और कुछ सैनिक ध्वज पताका आदि सम्मान चिन्होंको छीनने दौड पडे। एक हिंदी सूबेदार मेजर इस सम्मान–चिन्होंका रक्षक था; जब वह क्रातिकारियोंसे विवाद करने लगा; तब, तलवारके एकही झटकेसे उसका सिर तनसे अलग होकर, लाश धूलमें लोटने लगी!

"पहली पैदल पलटनके सूबेदारसाहबको टिक्कासिंगका रामराम! अब फिरगियोंके विरुद्ध सारा रिसाला उठा हो, तब पैदल सेना क्योकर देरी कर रही है?" दो दौडते सवारोंने यह सदेशा पहुँचाया और समूची पहली पैदल पलटन स्वदेश–स्वातत्र्यकी जय पुकारती हुई बाहर निकली। यह देखकर प्रमुख कर्नल एवर्टने फटकारा, "मेरे बच्चों, यह तुम क्या कर रहे हो? अरे, तुम अपनी राजनिष्ठामें कालिख जो पोत रहे हो! ठहरो, भाईयो, ठहरो! किन्तु यह बकवाद सुनने किसे अवकाश था? एक क्षणमें रिसालेको मिलनेके लिए सभी पैदल सैनिक अनुशासन-पूर्वक चलने लगे और फिर सारा सेना–सभार नवाबगजकी नानासाहबकी छावनीकी ओर रणगीतोंके तालपर सचलन करता हुआ कूच करने लगा। नानासाहबके अपने सैनिक नवाबगजके राजकोषपर सिद्ध थे। अपने भाइयोसे वे गले मिले और गोलाबारूदका सारा भडार क्रांतिकारियोंके सुपुर्द किया गया। नवाबगजमे यह बनाव बन रहा था, तब दो टुकडियाँ कानपुरही में थी। उनको तो अपने काबूमें रखा जाय इस हेतु अंग्रेजोंने उन्हे सचलन–भूमिपर जमा होनेकी आज्ञा दी। अंग्रेजोंके हाथमें तोपखाना था, जिससे अपने मुख्याधिकारियोंके साथ ये दोनों टुकडियाँ, अपने शस्त्रो समेत संचलन–भूमिमें रातभर राह देखती रहीं। पौ फटनेपर अंग्रेजोंको

विश्वास हुआ, कि कमसे कम ये लोग तो बागी नहीं हैं। उन्हे अपनी बारिकोंमें जानेकी आज्ञा देकर गोरे भी जाते रहे। सैनिकोने देखा यह अच्छा अवसर है। उनके दो अधिकारी, एक ओर हटकर, कुछ कुड-बुडाये और उनमेंसे एक दौडते आकर चिल्लाया, "प्रभु सत्यका सहारा है, भाइयो! चलो, उठो!" इस आदेशके साथ चारों ओरसे तलवारें चमकने लगीं; और बाँका समय देखकर अंग्रेजी तोपोंके धमाके सुनायी पडे। किन्तु सभी सैनिक उनके निशानेके बाहर चल चुके थे। ऐसे समयमें अपने सभी अफसरोंको मार डालनेका काम सिपाहियोंके लिए बायें हाथका खेल था; किन्तु इसमें समय गँवानेकी अपेक्षा अपने सैनिक भाइयोंमें जा मिलना अधिक योग्य जानकर वे तुरन्त वहाँसे चल पडे। इस प्रकार जून ५को नानासाहबके डेरेके पासही तीन हजार सिपाहियोंने अपना पडाव डाला। सर व्हीलर इसीमें प्रसन्न था, कि एक भी गोरा नही मारा गया। वह मनके मोदक खा रहा था, कि अन्य स्थानोंके समान ये सैनिक भी दिल्लीकी ओर चले जायेंगे और कानपुर यों ही संकट-मुक्त हो जायगा! हाँ, और यदि कानपुरमें कुशल नेताओंकी कमी होती तो व्हीलरका खयाल ठीक निकलता और अन्य स्थानोंके समान यहाँके सैनिक भी दिल्लीको चल पडते! किन्तु उस समय नवाबगंजमें कट्टर और सुयोग्य नेताओंकी रत्ती भी कमी न थी। वहाँ नानासाहब थे; उनके भाई बालासाहब, बाबासाहब और रावसाहब भी थे, तात्या टोपे थे; और सबसे बढकर अजीमुल्ला खाँ थे। इस तरह तेजस्वी और बुद्धिसागर नेता वहाँ होनेपर अन्य अगुआ ढूँढनेको दिल्ली जानेकी सिपाहियोंको क्या पडी थी? सबकी सब शक्ति दिल्लीमें बंद कर रखनेसे प्रभावपरक काम कर दिखाना असम्भवसा था। अंग्रेजोंको स्थान स्थानपर सतानेका काम ही सफल योजना थी। और महत्त्वपूर्ण बात तो यह थी, कि कानपुर दिल्ली, पंजाब और कल-कत्तेकी यातायातका लगभग केन्द्रबिन्दु होनेसे उसपर जोरदार हमला कर उसे हथियाना आवश्यक था। जब सूबेदारों तथा नानासाहबके विश्वासी कर्मचारियोंने सिपाहियोंको इस परिस्थितिको ठीक तरह समझा

दिया, तब सिपाहियोंने भी एकस्वरसे कानपुर लौटनेका निश्चय किया। तीन हजार सैनिकोंने नानासाहबको अपना राजा घोषित किया और उनके दर्शनका हठ ले बैठे। नानासाहब जब उनके सामने आ खडे हुए तब बडी उमगसे उनकी जयकी गर्जनाएँ की गयीं और उन्हे राजसम्मानकी वदना (सॅल्यूट) दी गयी। नेताजीका उसकी अनुमतिसे इस तरह चुनाव होनेपर, सिपाहियोंने मुख्य अधिकारियोका निर्वाचन शुरू किया। कानपुरके क्राति–सगठन–केंद्रके प्राणस्वरूप सूबेदार टिकासिगको रिसालेका प्रमुख चुना गया और उसे 'सेनापति'की उपाधी दी गयी। सैनिक अनुशासनके नये नियम बनाये गये। जमादार दलगौजनसिग (५३ वीं पलटन) और सूबेदार गगादिनको (५६वीं पलटन) कर्नल बनाया गया। फिर हाथीपरसे स्वतत्रताके झण्डेका प्रचड जुलूस निकाला गया और डकेकी चोटसे घोषित किया गया, कि अब नानासाहबका राज प्रारंभ हो गया है।

'निर्वाचन, नियुक्ति आदिका यह कार्यक्रम सपन्न होनेपर नानासाहबने एक क्षणभी व्यर्थ न जाने दिया। अंग्रेजोंको जब पता चला, कि दिल्ली जानेके बदले सिपाही वहीं रहे है, तब वे अपनी नयी सुरक्षित गढीको चल दिये और अपने तोपखानेको प्रस्तुत किया। औरतें, बच्चे मिलकर लगभग एक हजार अंग्रेज वहाँ थे। इस सुरक्षित गढीको हथियाना सबसे पहले आवश्यक था; उसीसे उसपर हमला करनेकी आज्ञा नानासाहबने दी। अंग्रेजोंको विश्वास था कि क्रातिकारी उनपर हमला करनेकी हिम्मत नहीं करेंगे; किन्तु जून ६ को सवेरेही सर व्हीलरको एक खरीता मिला। नानासाहबके भेजे हुए इस पत्रका आशय यह था:–"हम अब चढ आ रहे है, आपको पहलेसे सूचित कर रहे है।" युद्धका यह निमत्रण था; सर व्हीलरने सब अधिकारियों, सैनिकों, तथा तोपखानेको प्रस्तुत कर युद्धकी आवश्यक सिद्धता की।

युद्ध प्रारभ करनेके पूर्व, किसी तरहकी आवश्यकता न होनेपर नानासाहबने अंग्रेजोंको अग्रिम सूचना दी, इस बातका बडा महत्त्व है। नानासाहबके स्थानपर अंग्रेज होते, तो निश्चय, इस तरहकी उदारता कभी न दिखलायी जाती। जो कोई नानासाहबकी बदनामी करनेकी ओछी चेष्टा समय–असमय करते हैं उन्हें नानासाहबके हृदयका यह प्राकृतिक औदार्य

का गुण देखकर लज्जासे अपनी गर्दन नवानी ही चाहिये। बलवेके प्रसंगमे अंग्रेजोंके प्राणोंकी रक्षा करना, और बारह घटे पहले उन्हें खतरेकी पूर्व-सूचना देना—इन दो बातोंको ध्यानमे रखकर यदि हम अब इन अन्तिम घटनाओंको जानेंगे तभी कानपुरकी स्थितिको ठीक तरह समझ पायेंगे।

अंग्रेजोंको युद्धकी पूर्वसूचना देकर सूबेदार (अब 'कर्नेल')टिक्कासिंग, सबेरेका सारा समय, गोलाबारूदके भडारमे जाकर अस्त्रशस्त्रोंका ठीक प्रबध करने तथा उन्हें मार्केके स्थानपर पहुँचानेमे मगन रहा। नदी तथा भूमिसे, अंग्रेजोंकी गढीकी दिशामे तोपोंके मोर्चे बाधे गये। यह योजना युद्धशास्त्रके अच्छे दॉवपेचोंकी थी। उस समय कानपुरमे बहुत गडबडी मची हुई थी। कोरी, जुलाहे, तलवारोंके कारीगर लुहार, हाटके लोग, मुसलमान और रोब-दाबवाले चादीके बेपारी सबके सब हाथ लगे हथियारसे लैस होकर अग्रेजोंकी राह देख रहे थे। न्यायालय, कचहरियॉ नये पुराने अग्रेजी कारोबारके खत-पत्र सब जला दिये। गढीमे जो जा न सके उन अंग्रेजोंको कत्ल किया गया। अब दोपहर हो चली थी। १ बजे अग्रेजोंकी गढीको घेरनेका प्रारभ हुआ और शामको तोपे चली, तब भिडन्त हो गयी।

अग्रेजोंके पास आठ तोपे थीं, किलेमे गाडी हुई गोलाबारूदकी अनगिनत निधि भी थी। क्रातिकारियोंने गोलाबारूदका भण्डार हथियाकर बडी बडी तोपेभी हथिया ली थीं, जिससे उनके पास सामग्रीकी कमी न थी। सेनापति टिक्कासिगने पहलेही से तोपखानेका प्रबध बढिया कर रखा था। इन तोपोंने गढीकी इमारतोंको चकनाचूर कर दिया। ७ जूनको क्रातिकारियोंके तोपखानेने जब कुहराम मचा दिया, तब आजतक ऐसी दुर्दशाका परिचय न होनेवाले अग्रेजोंके बालबच्चे भयत्रस्त होकर तितर बितर भागने लगे। किन्तु अभ्याससे, मौतका डर भी चला गया, सिरके ऊपरसे सरकनेवाले तोपके गोले गगनविहारी पछियोंके समान मामूलीसे मालूम होने लगे। चढाईके दो दिन बीते और गढीमें पानीकी कमी महसूस होने लगी। अदर केवल एकही कुऑ था। किन्तु अग्रेज सोजीरोंकी अपेक्षा क्रातिकारियोंका उसपर अधिक ध्यान था। घाम और ऊमस अति प्रखर थे, अग्रेजोंको धूपमें भुन जानेकी बारी आयी। सबके हृदय उस समय पत्थरसे कठोर बने थे।

स्त्री–पुरुष भेद भी भूला गया था· लज्जा लुप्त हो गयी ! दूध न मिलनेसे बच्चे मर गये और उस दुःखसे माताओंने भी शरीर छोडे ! मृतोंको दफनानेकी कौन कहे; कौन मरा, कौन बचा इसकी पूछताछ करना भी दूभर हो गया। जिंदोंकी सूचीमें लिखा हुआ नाम तुरन्त काटनेकी बारी आयी। उस प्रसंगका ठीक वर्णन करनेके लिए एक अनुभव लिपिबद्ध करनाही अच्छा है। कॅप्टन थॉमस आप–बीती सुनाता है, "जब आर्म-स्ट्रांग घायल होकर गिरा तो उसे देखने ले. प्रोल आया। उसके मुँहसे धीरज बँधानेकी दो बातें पूरी निकली भी न थीं, तभी एक सिपाहीकी गोळी उसकी रानमें आरपार गयी और प्रोल हडहडाकर नीचे गिर पडा। उसका हाथ मेरे कंधेपर रखकर और मेरा हाथ उसकी कमरमें लपेटकर सार्जंटके पास ले जानेको मैं उठानेही लगा था, कि सॉय सॉय करती एक गोली मेरे कंधेमें आ लगी जिससे मैं और प्रोल दोनो गिर पडे। यह देखकर गिल्बर्ट बकूस हमारी ओर दौड पडा; किन्तु शत्रुकी गोलीभी उसका पीछा करती आयी और उसकी देहसे आरपार निकल गयी, वह भी मौतकी राह देखता नीचे गिरा। एक घंटेका यह विवरण २१ दिनोंकी उस लडाईका भान करानेको काफी है! सर व्हीलरका लडका घायल हुआ। एक कमरेमें उसकी मॉं और दो बहनें उसे दवादारू दे रही थीं किन्तु दवा गलेके नीचे उतरनेके पहलेही एक भयंकर धडाका हुआ और उसका सिर तनसे अलग हो गया! मॅजिस्ट्रेट हिलर्सडेन अपनी पत्नीसे बरामदेमें बोल रहा था तब बीस पौंडवाला तोपका गोला उसके सिरपर ही आ फटा और साहबकी बोटी बोटी कट गयी; कुछ दिनोंके बाद उसकी बेवा जिस दिवारसे उटॅग कर खडी थी, वही हडहडाकर गिर पडी और वह उसके नीचे दबकर मर गयी। गढीके पासकी खाईमें सात औरतें थी; वहॉं एक बम फटा और उन सातोंके साथ एक गोरा सोजीरभी, वही जिसने बलवेके पहले एक सिपाहीको योंही गोली मार दी थी और बेगुनाह करार देकर बरी हुआ था, खतम हो गया। हॉं तो, इस तरह सिपाहियोंकी बंदूके अपने आप चल पडी!! और ऐसे धडाकेके साथ, कि अंग्रेज सोल्जरोंकी आगामी पीढी शराबके नशेमें भी उसे भूल न सके!!

इस भीषण घेरेकी घमासान लडाईमे भी कुछ अक्लके दुश्मन हिंदी लोगोंको अंग्रेजोंसे वफादार रहनेकी सूझी। केवल राजनिष्ठाके लिए वे मौतकी खाईमें खडे थे। अंग्रेजों की सेवा करनेवाली एक हिंदी सेविकाके दोनों हाथ बमके धडाकेसे कट गये। अपने मालिकको गरम गरम खाना पिरोसनेकी दौडधूपमें कई 'बॉय' तोपके गोलेके धमाकेसे ढेर हो जाते। अंग्रेजोंको पानी पिलानेके लिए हिंदी भिश्ती कईबार अपनी जान खतरेमें डालते। पानी इतना थोडा था कि बच्चे चमडेकी मशकोंकोही चूसते रहते! हैजा, अतिसार, दोषी ज्वर भी अंग्रेजोंका प्रतिशोध ले रहे थे। सर जार्ज पार्कर, कर्नल विलियम, और लै.रूनी बीमारीसे मर गये। तोपके गोलों तथा बीमारीसे जो बचे थे वे इस जीवित स्मशानका भीषण बीभत्स दृश्य देखकर ही पागल हो गये! इस तरह वहाँ कुहराम मच गया था। एक तरहसे, एक शतीके अन्याय्य क्रूर करतूतोंका बदला लेनेके लिए मानो प्रतिशोधका मूर्तिमान् देवताही अपने डरावने दाढोंके नीचे जो मिले उसे पीसते, इक्कीस दिनतक भीषण अट्टाहास करते हुए ऊधम मचा रहा था!

गढीमें यह दशा थी, किन्तु बाहरके मोर्चोंपर रखीं अंग्रेजी तोपोंने अवश्य अच्छा काम किया। ॲश, कॅ. मूर, कॅ. थॉमसन् और अन्य शूर योद्धा अतुल पराक्रमसे लडे। लखनऊ या इलाहाबादसे सहायता पानेकी अंग्रेजोंको बहुत आशा थी। क्रांतिकारियोंके खुफिया विभागकी कडी निगरानीके कारण चिठ्ठी-पत्रीका व्यवहार असम्भव हो गया था। ऐसी बिकट स्थितिमें भी किसी हिंदी दूतने, आधा लॅटिन, पाव फ्रान्सीसी और शेष अंग्रेजीमें लिखा व्हीलरका पत्र पखियोंके डैनोमें लपेटकर लखनऊ पहुँचाया, जिसमें लिखा था-" दौडो, सहायता दो नहीं तो हमारी आशा छोडो: हमें सहायता मिले तो हम आकर लखनऊकी रक्षा करेंगे " आदि। किन्तु क्रांतिकारियोंकी निगरानी सदासे इतनी कडी थी, कि शत्रुका एका-धही उलाकी लौट सकता। लाख लाख रुपयों तक की रिश्वत देनेकी छूट देकर क्रांतिकारियोंमें उसे लेनेवाले नीचको ढूँढनेके लिए अंग्रेज अपने पिठ्ठुओंको रवाना करते, किन्तु लौटकर खबर सुनानेवाला एक भी जीवित न बच पाता। इस बातकी पुष्टिके लिए ऐसेही एक पिठ्ठुका कथन हम यहाँ

देते हैं:- "जब शेफर्डसकी औरत और बेटी मर गयी तब क्रांतिकारियोंके पडावसे भेद जानकर कानपुरमें फूट डालनेका काम उठाया। देसी रसोइयाका भेष बनाकर वह चल पडा। कुछही अंतर जाने नहीं पाया था, कि उसे पकडकर नानासाहबके सामने खडा किया गया। अंग्रेजोंकी हालतके बारेमें जब उससे पूछा गया तो उसने, जैसा कि निश्चित था, झूठी और बे-सिरपैरकी बातें कहकर उडने लगा। किन्तु जब उसे पता चला, कि उसके पहलेही दो औरतोंको पकड लिया गया है, तब उसने सच्ची करुण कहानी कह सुनायी और वह शरमाया। उसे बंदी बनाया गया और १२ जुलायको न्यायासनके सामने खडाकर तीन सालकी कडी सजा दी गयी! इससे ज्ञात होगा कि लडाईके अंदाधुंदमें भी नानासाहब न्याय देनेपर कितना ध्यान देते थे। जहाँ अंग्रेज गुप्तचरोंकी इस तरह फजीहत होती, वहाँ क्रातिकारियोंके जासूस पूरी तरह सफलता पाते थे। एक बार एक भिस्ती अंग्रेजोंकी गढीके पास एक टीलेपर खडा होकर चिल्लाने लगा "मैं अंग्रेजोंका हितू हूँ, इससे जानपर खेल कर मैं तुम्हें एक खुशीकी खबर सुनानेको खडा हूँ! गोरी सेना, मय तोपखानेके, गंगाके परले कांठे आ खडी है। कलसे तुम्हारे छुटकारेका काम शुरू होगा। इस बनावसे कमीने बागियोंकी कमर टूट गयी है, हम 'राजनिष्ठ' लोग अभीके अभी अंग्रेजोंको मिलने तैयार हैं।" यह सुनकर अंग्रेजोंने यह अंदाजा लगाया कि, हो न हो, उनके जासूसोंने शत्रुके पडावमें फूट डाली है और लखनऊवाली गोरी सेना उनकी सहायताके लिए आ पहुँची है। दूसरे दिन वही भिस्ती आकर फिर चिल्लाने लगा, "अंग्रेजोंकी जय हो! गंगामें बाढ आनेसे गोरी सेनाको देरी हो गयी है; किन्तु अब कोई अडचन नहीं है; वे आ रहे हैं। सूरज, डूबनेके पहले हमारी सरकारकी विजय देखेगा!!" वह रात गयी, दूसरा भी दिन बीता। आँखे बिछाएँ अंग्रेजोंको वह सहायक सेना कहीं नजर न पडी, न वह भिस्ती भी दीख पडा। अंग्रेजोंकी गढीके सभी समाचार अजीमुल्लाको ज्ञात हो जानेसे 'भिश्ती' को अपनी जान खतरेमें डालनेकी आवश्यकता ही न रही। इस प्रकारकी कई धूर्त चालोंसे क्रातिकारी गुप्त-चर अंग्रेजोंको बरगलाते थे।

घेरा डालनेकी पूर्व सूचना अंग्रेजोंको ६ जूनको देनेके बाद नाना-साहबने अपना डेरा रणभूमिपर टिक्कासिंगके डेरेके पास ही लगवाया। कानपुरके स्वतंत्र होनेसे प्रांतभरमें क्रांतिकी भारी लहर उठी। हर दिन जमींदार और राजा महाराजा, अपने अपने अनुयाइयोंके साथ आकर नानासाहबके पक्षमें शामिल हो जाते। अब उनकी सेना चार सहस्र हुई। उनमें, तोपची तो अपने काममें मँजे हुए थे। इधर एक ओर क्रांतिध्वज लहरा रहा था और उसकी रक्षाके लिए नन्हे नवाब दिन-रात अपने खेमेमें बैठे रहे थे। जब बलवा हुआ तब उनका घरबार जब्त करनेकी आज्ञा हुई थी। किन्तु कुछ समझौता हुआ और स्वाधीनताके पवित्र युद्धमें उनका बहुत बोलबाला हुआ। नानासाहबके तोपची बूढे सेवानिवृत्त (पेन्शनर) सिपाही थे। गढीकी इमारतोंको जलानेकी चेष्टा क्रांतिकारी कर रहे थे, तब एक नौजवान सैनिकने एक नूतन स्फोटकास्त्र का आविष्कार किया। उसका उपयोग सबसे पहले उन बारिकोंपर किया गया, जो अंग्रेजोंके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण थी। प्रयोग अत्यंत सफल हुआ। बारिके तुरन्त भस्मसात् हुई। अग्निमालाओंको सुलगानेके लिए तरुण वीरोंकी सहायता करनेमें औरतों और बूढोंमें होड-सी लगी। ऊँचे आदर्श और उत्तेजनाके इस प्रसगमें लोगोंमे कितनी स्फूर्ति पैदा हुई थी इसका अंदाजा केवल एकही उद्धरणसे लग सकता है:— जब मुसलमानका भेष बनाकर मैं चटाईपर बैठा था तब मेरे सामनेसे, युद्धमें थके लोगोंको पानी पिलानेके लिए, लोग गुजरते थे। सहसा उनमेसे एक जन मेरेपास आकर कहने लगा "अरे भाई, अपने देशबंधु युद्धमें जुटे हुए हों और तुम ऐसे जवान यहाँ हाथपर हाथ धरे बैठे रहे? सचमुच तुम्हें इसपर लज्जा आनी चाहिये! चलो उठो, तोपखानेके काममें लग जाओ।" उसीने काने करीमअलीके बेटेकी, उस दिनकी, बहादुरीका बखान मेरे सामने किया। "उस लडकेने नया आविष्कार कर अंग्रेजोंकी इमारतें जला दी थीं और उस कामपर उसे एक शाल और नकद नब्बे रुपये पारितोषिकमें दिये गये थे।" स्वदेशकी सेवा न कर चुप बैठे रहना, उस समय, तरुणोंके समान युवतियोंको भी ओछापन लगता था; इसीसे परदोंको फेक कर कानपुरकी महिलाएँ रणमैदानकी ओर दौड पडीं। किन्तु इन सब शूर युवक युवतियोंको जिसकी लगन

और उत्साहके आगे लज्जासे सिर झुकाना पडता था वैसी एक रूप-सुंदरी थी। और वह थी, पहले बताई हुई, नर्तकी अजीजान! उसने वीरवेश चढाया था। नाजुक गुलाबी गालों और हसीड ओंठोंकी वह नर्तकी सशस्त्र, घोडेपर चढी, घूम रही थी और तोपखानेके सिपाही उसके दर्शनसे अपनी थकावटको भूल जाते। नानकचंद अपनी दैनदिनीमें (डायरीमें) लिखता है, "सशस्त्र अजीजान जा–च–जा लगातार विजलीके समान कौंध रही है। कई बार थके और घायल सिपाहियोंको मार्गमें मेवामिठाई तथा दूध देती हुई दीख पडती है।"

इधर घमासान युद्ध ठन गया था फिरभी, नानासाहब, साथ साथ, अंतर्गत शासनपरक छोटी मोटी बातोंको अनुशासनमें बाधनेके विचारमें मगन रहते। वस्तुतः क्रांतिकी अंदाधुंधमें, लगान और पुलीस इन दो महकमोंको ठीकसे चलाना अत्यत कठिन कार्य था। तो भी नानासाहबने सबसे पहले न्याय और सरक्षणका लाभ जनताको मिलनेका प्रबंध किया। कानपुरके लब्धप्रतिष्ठ नागरिकोंको निमंत्रित कर, उनसे श्री. हुलाससिंगको बहुमतिसे चुनकर प्रधान न्यायाध्यक्ष नियुक्त किया और उसे आज्ञा दी, कि उद्दंड सिपाहियों तथा गुंडे देहातियोंसे नागरिकोंकी रक्षा करे। सेनाको रसद पहुँचानेका काम मुल्ला नामक व्यक्तिको सौंपा। दीवानी और फौजदारी मुकदमोंके लिए एक न्यायसभा नियुक्त हुई। ज्वालाप्रसाद और अजीमुल्लाने न्यायाध्यक्षका काम उठाया और बाबासाबहको उसका प्रधानपद दिया। इस न्यायसभाके जो सलेख आज प्राप्त है; उनसे यही मालूम होता है, कि जुलम तथा फसाद करनेवालोंको कडीसे कडी सजा दी जाती थी; सुप्रबध और शान्तिको स्थिर रखनेपर सबसे अधिक ध्यान दिया जाता था। एक बुरी चोरीके मामलेमें अपराधीका दाहिना हाथ काटा गया था। गौहत्या करनेवाले एक मुसलमानको भी वही दण्ड दिया था। बेकार गुंडों तथा उचक्कोंको गधेपर चढाकर सडकोंसे घुमा, अपमानित कर, फिर दण्ड दिया जाता।* फ्रेंच राजक्रांतिमें स्थापित सार्वजनिक सुरक्षा–समितिके समान, यह न्यायसभा अन्य विभागोंके कार्य भी

* थॉमसनकृत 'कानपुर'

पूरा करवानेमें ध्यान देती। कमी होनेपर गोलाबारूद दिलवाना, सेनाको कपडे देना, अंग्रेज गुप्तचरोंकी टोहमें रहकर उन्हे पकडवाना, गुडे, चोर मवालियोंको दण्ड देना आदि कई काम इस न्यायसभाद्वारा होते थे। भगोडे अंग्रेजोंको पकडा देनेवालोको पारितोषिक देनेका काम भी किया जाता था!

अंग्रेजोंकी गढीपर १२ जूनको क्रांतिकारियोंने चढाई की। एक साथ चारों ओरसे हमला कर किलेपर दखल करनेकी अपेक्षा चारों ओरसे दिनरात तोपोंसे आग उगलते रहकर अंग्रेजोंकी नाकों दम कर उनको शरण माँगनेपर मजबूर करनाही क्रांतिकारियोंकी नीति थी। ऐसे तो बीचबीचमे हमले चढाये जाते ही थे, उसमें जब दोनो ओरके कुछ लोग खेत रहते तब चढाई रोकी जाती। तोपखानेकी तीव्रताकी बराबरी रिसाला या पैदल सेना न कर पायी। इस कमीका अनुभव आगे चलकर लखनऊ तथा दिल्लीके घेरोंमे होगा ही। किन्तु कानपुरके मुहासरेमे प्रत्यक्ष मुटभेडकी अपेक्षा तोपोंपर ही अधिक भरौसा था। इसका मतलब यह नही कि सिपाही मौतसे डरते थे। १८ जूनको गढीपर हुई चढाईमें सैनिकोंने जो पराक्रम प्रगट किया था वह निःसंदेह भूषणरूप बना रहेगा। उस दिन शत्रुकी तोपोंके आग उगलते रहनेपर भी शत्रुकी हरावलमें सैनिक तीरके समान घुस पडे और तटपर चढकर उन्होने शत्रुकी तोपोंपर दखलकर उनके मुंह घुमा दिये; और कुछ समयके लिए ऐसा मालूम होने लगा कि अब क्रांतिध्वजको कभी हटना न पडेगा। किन्तु इसी समय इन सूरमाओंकी सहायता करनेके बदले, योंही, जानबूझकर, सभी सेनाविभागोंमें गडबडी पैदा करनेका इरादा कुछ दुष्टोंने किया था, और इसी कमजोरीके कारण सारी सेनाको पीछे हटना पडा। अवधके सूरमाओंके समान कानपुरके विशाल हृदयो, मस्तकों तथा भुजाओंने भी, दूसरे क्या करते हैं इसपर ध्यान न देते हुए, अपना कर्तव्य वीरोंके समान निबाहा। एकबार चढाई करनेवाली टुकडी जब लौट रही थी तब एक सिपाही राहमें मरा'सा पडा रहा। जब शूर, पराक्रमी और साहसी योद्धा होनेकी नामवरी पैदा किया हुआ कॅप्टन जेंकिन्स वहाँसे निर्भीक गुजर रहा था तब उस सिपाहीने बाजके समान झपटकर उसकी गर्दनसे गोली पार कर दी और जेंकिन्स की लाश धूल चाटने लगी।

२३ जूनका सवेरा हुआ। उसी दिन ठीक सौ वर्ष पहले पलासीकी रणभूमिपर अंग्रेजोंने भारतमें अपनी हुकूमतकी नीव डाली थी। २३ जूनको अंग्रेजोंका भाग्यसूर्य आकाशमध्यको जा रहा था। उसी दिन भारतमाताकी स्वाधीनताका राजमुकुट टूट पडा और उसने करुण पुकार मचायी। उस काले अशुभ दिनके अपमानके शल्यकी कसक बहुत गहरी घुसकर हिंदुस्थानके अंतस्तलको छेद रही है। ऐसा भासता है, कि आज सौ वर्ष बीतनेपर भी वह पापी काला दिन और उसकी अशुभ स्मृतियाँ हर भारतीयके मनमे हरे है। उस दिन पराधीनताके गहरे और भयानक घाव आज सौ वर्ष बीतनेपर भी रुझे नही। उन घावोंको रुझानेवाला कोई मरहम अबतक प्राप्त नहीं हुआ है! अत्यंत शान्तिप्रेमी और क्षमाशील भारतके हृदयमे कितनी भीषण द्वेषभावना उबल रही है? पलासीका प्रतिशोध लेनेकी भारतभूमिकी तडपन सौ वर्षोंके बाद भी धीमी नही पडी है। मरनेवाली हर पीढीकी अन्तिम साँसमें और पैदा होनेवाली प्रत्येक पीढीके प्रथम निश्वासमे पलासीके प्रतिशोधकी एक फूँक आजतक भारतमाता मिलाती रही है। सौ वर्षोंतक यह काम चलता रहा और अब २३ जूनका दिन आया तो, निदान, आज मातृभूमिकी पराधीनताका पूरा बदला लिया जानेका आगम ज्योतिषियोंने कथन किया। नानासाहब! आगमका सच निकलना भलेही प्रभुके अधीन हो, अन्तिम साधनाकी दृष्टिसे तुम्हें अपना कर्तव्य निबाहना होगा।

और २३ जूनके परबको साधनेके लिए नाना साहबके पडावमें उस दिन बडी खलबली मच गयी थी। सबकी सब टुकडियाँ आज असाधारण वीरताके साथ चढाई करनेको सिद्ध दीख पडीं। तोपखाना, रिसाला, पैदल सेना सबके सब पलासीकी ऐतिहासिक स्मृतिसे उत्तेजित होकर रणमैदानमें उतरे थे। हिंदू सूरमाओंने गगाजल तथा मुसलमानोंने कुराणको सामने रखकर सौगद ली 'आज हम सब मिलकर स्वाधीनता प्राप्त करेंगे या शत्रुओंको मारते मारते मरेंगे।' रिसालेने अंग्रेजी तोपोंकी तमा न रखते हुए गढीके परकोटेतक चढाई की; अन्य दिशाओंसे पैदल सेना कपास लदे बोरोंकी आडमें, जिनको वे आगे धकेल रहे थे, गोलियोंकी बौछारें शुरू रखीं। आसपासके देहाती भी अपने भाइयोंकी सहायताके

लिए इकट्ठे हुए थे। गढीसे अंग्रेजभी अग्निवर्षा कर ही रहे थे। क्रांतिकारियोंके दबावको अंग्रेज रोक न सके, किन्तु गढीके अंदर न आने देनेमे वे सफल रहे। यथासमय रणोत्साह धीमा पड गया। पलासीका प्रतिशोध कुछ हिस्सेमें लिया गया।

किन्तु कानपुरकी अन्तिम चढाई व्यर्थ न हुई। उस दिनकी मुठभेडसे अंग्रेजोंके दिल बैठ गये, जयकी आशा छोड दी। उनको अनुभव हुआ कि नानासाहबकी शक्तिके आगे गढीको सुरक्षित रखना असम्भव है। २३ जूनको न सही, २५ जूनको अंग्रेजोंने गढीपर सफेद झण्डा लगा दिया। शरणके इस चिन्हको देखकर नानासाहबने लडाई स्थगित करनेकी आज्ञा दी और एक बदी औरतके हाथ सर व्हीलरको एक पत्र भेजा।* इस पत्रका मतलब था, "डलहौसीकी राजनीतिसे जिनका कोई संबंध न हो और जो शस्त्र डालकर शरणमे आनेको सिद्ध हो उन, महाराणी विक्टोरियाके प्रजाजनोंको इलाहाबाद पहुँचा दिया जायगा"। यह पत्र नानासाहबकी आज्ञासे अजीमुल्लाखाँने लिखा था।

पत्र पातेही उसपर अमल करनेका अधिकार जनरल व्हीलरने कॅप्टन मूर तथा व्हाइटिंगको सौंप दिया! उसके अनुसार शरणागति*की रीति निश्चित हुई। दूसरे दिन सवेरे किलाबंदीके बाहर नानासाहबके प्रतिनिधि ज्वालाप्रसाद और अजीमुल्लासे अंग्रेजोंकी ओरसे मूर, व्हाइटिंग और रोच मिले। बातचीतका प्रारंभ अंग्रेजीमें हुआ, किन्तु ज्वालाप्रसाद और अजीमुल्लाने अंग्रेजोंको हिंदीमें बातचीत करनेपर मजबूर किया। सधिकी शर्तें ये रहीं, कि अंग्रेज अपनी तोपें, शस्त्रास्त्र, गोलाबारूद और खजाना नानासाहबको सौंप दे और नानासाहब उन्हें इलाहाबादको पहुँचा देनेका प्रबंध करें। ये शर्तें एक कागजपर लिखकर अजीमुल्लाके साथ सब लोग नानासाहबके हस्ताक्षर करानेके लिए उनके पास पहुँचे। दोपहरमे, अंग्रेजोंको उसी रात या दूसरे दिन सवेरे रवाना करें इस विषयमें मतभेद हुआ।

---

* रेड पॅम्फ्लेट

तात्या टोपे अपने कथनमे कहते हैं:—अंग्रेज जनरलने शान्तिका झण्डा ऊँचा किया और लडाई बंद हुई।

बहस होनेपर तय हुआ कि उसी रातको गढी नानासाहबके सुपुर्द की जाय और पौ फटतेही अंग्रेजोंका पौरा वहाँसे निकल जाय। सधिकी शर्तं मान्य हुई और दोनोंके हस्ताक्षरवाली प्रति लेकर टॉड (जो पहले नानाका रीडर रह चुका था) आया। नानासाहबने उसकी कुशल पूछकर अच्छा स्वागत किया। उस शामको अंग्रेजोंने हथियार डाले और सब कुछ नाना-साहबके सुपुर्द कर दिया। तुरन्त दो अफसरों के साथ ब्रिगेडियर ज्वाला-प्रसादने गढीमें अपना अड्डा जमा लिया। उसी रातको कानपुरके मॅजिस्ट्रेट हुलाससिंग तथा तात्या टोपेने मल्लाहोंको ४० किश्तियाँ तैयार रखनेकी आज्ञा दी। किश्तियोंका प्रबंध देखने हाथीपर जो अंग्रेज आये थे उन्होंने किश्तियाँ बेडौल तथा आवश्यक सुविधाओंसे खाली होनेकी शिकायत की। तुरन्त सौ मजदूर लगाकर बाँसकी छतें और चन्दवे लगाकर बैठनेकी जगह ठीक कर दी गयी तथा आवश्यक खाद्य वस्तुओंसे भरपूर कर दी गयीं।

इस तरह कानपुरसे निकल जानेकी अंग्रेजोंके लिए सिद्धता पूरी हुई। किन्तु, उस ओरसे वे कौन लोग आ रहे हैं? जाने आनेवाले पर निग-रानी अवश्य रखी जाय, नहीं तो आगेकी घटनाओंका मर्म हम समझ नहीं पायेंगे। नानासाहबके कानपुरपर स्वाधीनताका झण्डा फहरानेके समाचार जब चारों ओर फैले, तो लडाके वीरोंका कानपुरकी ओर आनेमें एक ताँता-सा बँध गया! हर स्थानसे तरुण राष्ट्रीय स्वयसैनिक कानपुर आ रहे थे। जो गाँव जवानोंको न भेज सका उसने धन भेजा। किन्तु हाय! केवल स्वय-सैनिकोंके झुण्डही वहाँ नहीं आ रहे थे। जो लोग अपने यत्नोंमें असफल रहे और जो अंग्रेजी पराधीनतासे ऊब उठे थे उन असहाय लोगोंके झुण्डके झुण्ड भी कानपुरको आ रहे थे। गत सप्ताहहीमें काशी और प्रयागके हजारों सिपाही,अंग्रेजोंके उनके बालबच्चोंपर किये क्रूर अत्याचारोंके समाचार लेकर,आ पहुँचे थे। सैंकडों युवक—जिनके पिताओंको अंग्रेजोंने रोमन ८ और ९ के अंकोंकी आकृतियाँ बना कर फाँसी दिया था—वहाँ आ धमके थे। जिनकी औरतों तथा नन्हे मुन्नोंको भी नीलने जला डाला था, वे पति और पिता भी वहाँ आये थे। जिनकी लडकियोंके बालों तथा कपडोंमें आग लगाकर गोरे सोजीरोंने तालियाँ पीटी थीं, उनके जन्मदाता भी वहाँ आ पहुँचे

थे। जिनकी संपत्ति अंग्रेजोंने खाकमें मिला दी थी, जिनका धर्म पैरोतले कुचला था, जिनके राष्ट्रको दास बनाया था, वे सब क्रांतिध्वजके पास जमा होकर ' प्रतिशोध ! बदला ! ' की चिल्लाहटसे कानपुर गूँजा रहे थे ! और विजयका दिन जब समीप आ पहुँचा और जब नानासाहबने अंग्रेजोंको इलाहाबाद पहुँचा देना स्वीकार किया, तब सिपाहियोंकी प्रतिशोधकी सभी उमंगे धूलमें मिले जानेसे वे अपनी अप्रसन्नता प्रकट करने लगे। नावोंके प्रबंधका निरीक्षण करनेवाले अंग्रेजोंके कानमें, गंगाके घाटपर सिपाहियोंकी ' कत्ल ' की कानाफूसी की भनकार पड गयी थी। कहते हैं, कि राजदरबारके एक पण्डितने सिपाहियोंसे स्पष्ट कहा था, " अपने राष्ट्रका विश्वासघात कर उसे गुलाम बनानेवालोंके सिर उडा देनेमें धर्मकी दृष्टिसे कोई पाप नहीं है " *

ऐसी अशान्तिके साथ २७ जूनका दिन आया। सतीचौरा घाटसे अंग्रेजोंको रवाना करनेका निश्चय हुआ था। रिसाला और पैदल सेनाने घाटको घेर लिया था; तोपखाना भी तैयार था। कानपुरके हजारों नागरिक सवेरेसे अपनी कल्पनासे बनाये गंगाघाटके दृश्यको प्रत्यक्ष होते देखनेको जमा हुए थे। अजीमुल्ला, बालासाहब तथा सेनापति तात्या टोपे घाटके पास एक मंदिरके कोठेसे देख रहे थे। मंदिरका नाम भी उस प्रसंगके योग्य ही था। अंदर श्री ' हर ' की मूर्ति थी, मानो उस समय आसपास सब ओर उस रुद्र भैरव महादेवकी सत्ता स्थापित थी! अंग्रेजोंको गंगा-किनारे लानेको बढिया सवारियोंका प्रबंध नानासाहबने किया था। सर व्हीलरके लिए सुंदर सजाया गजराज नानासाहबके महावतके साथ गढीके द्वारपर खडा था। ऐसे अपमानास्पद प्रसंगमें हाथीपर चढना उसे ठीक न लगा, सो, वह पालकीमें चला। अंग्रेज औरतोंको भी पालकियाँ दी गयी थीं। गढीका अंग्रेजी झण्डा नीचे खींचकर उस स्थानपर स्वातंत्र्य तथा स्वधर्मका ध्वज फहराया गया। अंग्रेजोंकी प्रतिष्ठा धूलमें मिलनेसे होनेवाले अपमानसे अंग्रेजोंका हृदय दहलाया नहीं, उलटे बंदियोंने ' जान

* ट्रेव्हेलियनकृत ' कानपुर '

बची लाखों पाये ' कहकर आनद प्रकट किया !" पुनर्जन्म होनेसे आनंद विभोर होकर गढी छोडकर वेगसे वे चले। पर कहॉ ?

सचमुच अब इस प्रश्नकी चर्चा इस स्थानमें करना व्यर्थ है। गगा तो अब मील डेढ मील दूर है। यह टोली पूरा अतर तय कर गंगाके वालूमें पहुँची तब हारमें खडे सिपाहियोंने उन्हे घेर कर उनकी रक्षा की। हाथीसे या पालकीसे उतरकर नावोंमें चढानेके लिए आज किसीभी हिंदी मानवने अंग्रेजोंको सहारा न दिया ! हॉ, कुछ अपवाद अवश्य हुआ। एक दो बार उतरनेमें थोडीसी सहायता दी गयी, किन्तु सिपाहियोंके हाथ नहीं, तलवारे आगे बढी थीं। घायल कर्नल एवर्टको डोलीमें रखा था। एक सिपाहीने डोली रोककर पूछा " क्यों कर्नलसाब, यह परेड आपको कैसे पसद आयी ? और यह वर्दी कैसी है ?" कहकर उसे डोलीसे नीचे पटककर टुकडे टुकडे कर दिये गये। उसकी औरत पासही थी। कुछ लोगोंने कहा ' तू स्त्री है, इससे तुझे जीवित रखा जाता है "। किन्तु एक क्रूर तरुण भीड चीरते आगे घुसकर चिल्लाया ' हटो जी ; स्त्री है ? हॉ, नारी जाति है किन्तु है वह फिरंगी ! काट डालो उसे ;" उसके शब्द समाप्त होनेके पहले ही वह ढेर हो गयी थी !

अंग्रेजी न्याय-समितिने स्वय मान्य किया है, कि जो नावें गगामें सज्ज थीं उनमें विपुल अनाज आदि सामग्री भरी हुई थी ! अंग्रेज पानीमें चलकर नावोंमें बैठे ! सब और सन्नाटा था। बहुतेरी नावें भर गयी थीं। मल्लाह डांडे थामे तैयार थे। तात्या टोपेने अपना हाथ हिलाया। नावोंको छोडने का वह इशारा था। सहसा, उस भीषण सन्नाटेको चीरकर एक ओरसे ब्यूगल बजनेकी ध्वनि आयी। उस तुरहीकी कर्कश आवाज सुनतेही तोपों, बंदूकों, तलवारों, संगीनों एव कूकरियोंकी खनखनाहट एक साथ सुनायी दी। मल्लाह नावोंसे तटपर भाग आये और सिपाही पानीमे कूद पडे। ' मारो फिरंगीको ' इसके बिना कोई आवाज न सुनायी देती थी।

थोडेही समयमें नावोंमें आग लगायी गयी, जिससे औरतें, बच्चे, आदमी सब जलदीसे गगामें कूद पडे। कुछ तैरे, कुछ डूबे; कुछ जल मरे और कुछ तुरन्त या कुछ समयके बाद आयी बंदूककी बाढसे भुन गये। मासके टुकडे, कटे सिर, छॅटे बाल, कटे हाथ पैर और खूनके सोते !

सारी गगा लाल लाल हो गयी। पानीसे सिर ऊँचा होतेही कहींसे गोली आती! पानीमें डूबे रहें तो दम घुट जाता। श्री 'हर'का कोप इस रूपमें प्रकट हुआ! पलासीकी शतसवत्सरीका समारोह भी वैसाही भयकर था।

सवेरे १० बजे थे। कहते हैं, नानासाहब अपने महलमें विचारमग्न चुपचाप चहल-कदमी कर रहे थे। क्या ही आश्चर्य? उधर सौ वर्षोंके नीच कर्मोंका बदला लिया जा रहा था, इधर राजमहलमें नानासाहब अस्वस्थ मनसे विचार मग्न थे। ऐसे प्रसग इतिहासमें एक नये युगको लानेवाले होते हैं। ये प्रसग विशेष कालखण्ड की समाप्तिके निदर्शक अतिम आघात होते हैं। एक युगका सक्षेप साधनेवाले येही प्रसग! नानासाहब किस विचारमें मग्न थे यह तो राम जाने! हाँ, उन्हें अधिक समयतक सोचनेका अवकाश न मिला। क्यो कि, एक सवार दौडता आया; उसने सती-चौरा घाटपर सिपाहियोंके उपस्थित अविचारी हत्याकाण्ड समाचार दिये। नानासाहबने कहा, 'औरतो और बच्चोंको मत सताओ' और उसी सवारको इस सदेशके साथ भगाया, कि अग्रेज पुरुषोंकी बात दूसरी है, किन्तु औरतों और बच्चोंको रच भी कष्ट न होने पावे! सिपाहियोंको जताना कि यह मेरी आज्ञा है। *

ध्यान रहे, नानासाहबकी आज्ञाका दूसरा भाग नीलसाहबके ऐसेही प्रसगकी आज्ञामें बिलकुल नहीं मिलता। अस्तु। नानासाहबकी आज्ञाका सदेश लेकर सवार आया तब सिपाही सहारके काममे बेभान हो गये थे। कुछ गोरे, कलामडी खाती हुई जलती नावपर, जल मर रहे थे; कुछ तैर कर किनारा पकडनेका प्रयत्न कर रहे थे। क्रोधसे सतप्त सिपाहीभी गर्जना कर पानीमे कूद कर, शिकारी कुत्तेकी तरह उनका पीछा कर रहे थे। दातोंमे तलवार और हाथमे चक्र (रिवॉलवार) थामे सिपाही पानीमे आखेट खेल रहे थे। जनरल व्हीलर तो पहले झटकेमें मारा गया। हेंडरसान खत्म हुआ। अब मरे हुओंसे जीवितोंकी तालिका

---

* लगभग सभी इतिहासकारोंका एकमत है, कि नानासाहबको समाचार मिलतेही उन्होंने यह आज्ञा जारी की थी!—फॉरेस्टस् स्टेट पेपर्स के और मॅलेसन कृत 'म्यूटिनी' खण्ड २ पृ. २५८

बनाना आसान हो गया है न? नानासाहबकी आज्ञा पहुँचते ही हत्याकाण्ड एकदम बंद हो गया। और १२५ औरतों - बच्चोंको पानीसे निकालकर किनारे लाया गया और बंदी बनाकर सौदाकोठीमें भेज दिया गया। बचे अंग्रेज पुरुषोंको एक पक्तिमे खडाकर उनको देहान्त दण्डकी आज्ञा पढकर सुनायी गयी। उनमेंसे एकने प्रार्थना–पोथीसे कुछ भाग अपने बाँधवोंको, सजा मिलनेके पहले, सुनानेकी अनुज्ञा माँगी और वह उसे दी भी गयी।* प्रार्थना समाप्त होतेही सिपाहियोंने सबको कत्ल कर डाला।

४० नावोंमेंसे एक नाव क्रांतिकारियोंके हाथसे छटक गयी थी; उससे केवल तीन चार अंग्रेज बचे और वह भी जमींदार दुर्विजयसिंहकी दयासे! उसने इन नगेधडगे तथा मरणोन्मुख अंग्रेज पुरुषोंको एक महीनाभर रखकर फिर इलाहाबाद पहुँचा दिया।

साराश, कानपुरमें ७ जूनको जीवित एक सहस्र अंग्रेज स्त्रीपुरुषोंसे केवल ४०० पुरुष और १२५ स्त्रिया–बच्चे जून ३० को बचे पाये गये। बच्चे और स्त्रियाँ नानासाहबकी बदिशालामें थे और चार अधमुवे अंग्रेज दुर्विजयसिंगके मेहमान थे। स्त्रियों बच्चोंको जिस तरह नानासाहबने बंदी बना रखा था उसका भी थोडेमे वर्णन देना चाहिए। ऐसे तो इसकी आवश्यकता हम न मानते, किन्तु अंग्रेज लेखकोंने 'विश्वस्तसूत्रसे प्राप्त जानकारी' की पोथी पर पोथी रग डाली है। "स्त्रियोंपर अत्याचार हुए; आम सडकपर स्त्रियोंकी लाज लूटी गई; नानासाहबभी इसमे शामिल थे" ये निर्लज्जतापूर्ण अभियोग उन्होंने लगाये है, और ऐसे घृणित, अधम, सफेद झूठ कथनों पर विश्वास करनेको, अंग्रेजी राष्ट्रभी, अधा और नीच बना था, इससे हमें इसका विवरण मजबूरीसे देना पड रहा है। इस काण्डकी तहकिकात करनेके लिए अंग्रेजोंने ही एक विशेष समितिको नियुक्त किया था और उसीने निर्णय दिया था कि (उपर्युक्त) 'ये सभी अभियोग सरासर झूठ है'। ×

* के और मॅलेसनकृत इडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. २६३

× म्यूरकी रिपोर्ट तथा विलसनकी रिपोर्ट देखो; के और मॅलेसन कृत इडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ २०७

किन्तु इससे क्या होता है ? नानासाहब ने हत्याकाण्ड से स्त्रियो को बचा कर नील, रेनाल्ड और हॅवलॉक की गर्दनें लज्जासे झुका दी और ऊपर से १८५७ के भीषण प्रलय में जिन विश्वासघाती नीच शत्रुओ ने व्यक्ति, राष्ट्र और धर्म को मटियामेट कर डाला था उनके साथ नाना साहबने सौवॉ हिस्सा भी उग्रता या क्रूरता न दिखायी। समान परिस्थिति मे और ऐसे ही उत्तेजना से स्वय इग्लडने हिंदुस्थान, आस्ट्रिया ने इटली, स्पेन ने मूरों एव यूनान ने तुर्कों के साथ इस से सौ गुना क्रूरता का बरताव किया था, यह अंग्रेजोंके लिखे इतिहाससे ही सिद्ध होता है ?

कानपुर के हत्याकाण्ड के पहले झमले मे कुछ सवारोने चार अंग्रेज लुगाइयो तथा कुछ इसाइ बनी औरतोंको भगाया था; किन्तु इस की खबर पाते ही नानासाहब ने उन सिपाहियोंको पकड मगवाया और उन्हें खूप फटकारा। उन्हे कडी आज्ञा दी, कि भगायी औरतो को तुरन्त पेश करें।* बदियो को बार बार रोटियॉ और गोश्त दिया जाता + किसी काम के लिये उन्हें मजबूर न किया जाता, बच्चों को दूध पिलाया जाता। एक बेगम उन की निरीक्षिका थी। कारागार मे हैजा और अतिसार का प्रकोप हो जाने से शुद्ध वायुसेवन के लिए दिन में तीन बार घूमने दिया जाता।× इसी स्थान पर एक किस्सा यहॉ दर्ज करना अयोग्य न होगा, कि अंग्रेजोंका केवल नाम लेनेसे लोग कितने भंडक उठते थे। एक सवेरे एक ब्राह्मणने बदीगृहके दिवारसे झॉककर देखा, कि जो अंग्रेज मेमें, बिना पालकीके, पग न धरती थीं वे स्वय कपडे धो रही हैं। ब्राह्मणने कुछ दुखित होकर अपने साथीसे कहा, 'इनको कपडे धोनेको एक धोबी क्यों नही

---

* ट्रेव्हेलियन कृत कानपुर पृ. २२१

+ नॅरेटिव्ह पृ. ११३

× नील स्वय अपनी रिपोर्टमे लिखता है:–"शुरूमे उनको (बदियोंको) ठीक खाना नहीं मिलता था; किन्तु बादमें उन्हे अच्छा खाना, साफ कपडे और सेवाके लिए नौकर दिये गये।"

दिया जाता ? ' मानवताके असीम प्रदर्शनको समयपर ही रोकनेके लिए साथीने एक तमाचा ब्राह्मणके मुँहपर जमाया ! इनीगिनी स्त्रियाँ कारागारमें चक्की पीसतीं और इसके लिए हर एकको एक रोटीका आटा मुफ्त दिया जाता। हाँ, इस तरह जीनेके लिए क्या क्या कष्ट उठाने पडते हैं इसका पाठही उन्हें मिल जाता ! इस जेलका अन्त कब, कैसे और किस कारणसे हुआ इसका वर्णन योग्य स्थानपर किया जायगा। इन स्त्रियों और बच्चोंको जेलमें छोडकर अब हम अन्य महत्त्वपूर्ण विषयको देखेंगे।

अंग्रेजी शासनके सभी मानचिन्होंको कानपुरसे उखाड फेकनेके बाद २८ जूनके शामको ५ बजे नानासाहबने एक बडा दरबार लगाया। इस राजसभाके उपलक्ष्यमें वहाँ उपस्थित सैनिकोंका एक स्नेहसम्मेलन भी रखा गया था। इस समारोहके लिए छः पैदल पलटनें, रिसालेकी दो कंपनियाँ और स्वातंत्र्य-समरमें हाथ बँटानेके लिए स्थानस्थानसे आये हुए क्रांतिकारियोंके, अपने अपने झण्डे लिये, स्वयसैनिक दल आदि उपस्थित थे। जिसके बूतेपर कानपुर जीता गया था, उस तोपखानेको उसके पराक्रमके योग्य सम्मानका स्थान जानबूझकर दिया गया था। बालासाहब पहलेसे सेनामें बडे सर्वप्रिय थे, जिससे उनके आते ही सैनिकोंने सम्मानपूर्वक जयगर्जना की। कार्यवाही का प्रारंभ होनेके पहले दिल्ली सम्राटके सम्मानमें १०१ तोपोंकी वदना की गयी। इससे स्पष्ट है, कि हिंदुमुसलमान पूरी तरह एक हो चुके थे। जब नानासाहब सैनिक-शिबिरमें पधारे तब सैनिकोंने उनकी जयके नारोंसे आकाश गूँजा दिया और उनके सम्मानमें २१ तोपे दागीं: २१ दिनोंके घेरेके स्मरणार्थ यह संख्या होनेका अनुमान लगाया जाता है। नानासाहबने अपने इस सम्मानके लिए सबको धन्यवाद दिये और कहा, "इस विजयमें सबका हिस्सा है: हर एकके समान जशका जोड ही यह विजय है।" फिर पारितोषिकके रूपमें एक लाख रुपये सैनिकोंमें बाँटे जानेकी नानासाहबने घोषणा की। सचलनभूमिपर नानासाहब पधारे तब और एक बार २१ तोपोंकी बाढसे उनका सम्मान किया गया। फिर नानाके भतीजे रावसाहब तथा उनके भाई बालासाहब तथा बाबासाहबको १७ तोपोंका सम्मान दिया गया। ब्रिगेडियर ज्वालाप्रसाद और सेनापति तात्या टोपेको ११ तोपोंका सम्मान

मिला। इस तरह तोपोंकी गडगडाहट तथा स्वाधीनताके गीतोंकी गूँजको सुनते हुए सायकालमें सूर्य अस्ताचलकी ओटमें विश्राम करने गये और सब सेना छावनीको लौट पडी।

सैनिक सचलनका निरीक्षण करनेके बाद नानासाहब बालासाहबके साथ ब्रह्मावर्तके सुप्रसिद्ध तीर्थक्षेत्रको चल पडे। १ जुलैका दिन राज्याभिषेकके लिए निश्चित हुआ था। राजमहलकी शोभा देखतेही बनती थी। पेशवाका पुराना ऐतिहासिक सिंहासन समारोहके साथ सभाभवनमें रखा जानेपर, माथेपर मगल राजतिलक लगा, तोपोंकी गडगडाहट और हजारों प्रजाजनोंकी जयध्वनिकी गर्जनामें जनताकी अनुमतिसे और धर्मके आशीर्वादयुक्त स्वतत्र, स्वकष्टार्जित, सिंहासनपर नानासाहब बैठे। उस दिन कानपुरसे हजारों लोगोंने अनमोल बढिया उपहार भेंट किये थे।* हिंदू जनता प्रकटरूपसे कह रही थी—उस दिनसे, मानो, राजा रामचद्रजी विजयी होकर फिरसे रामराज्यका प्रारंभ हो गया है। लम्बे समयके बाद फिर एकबार स्वधर्म और स्वराज्यकी सुगधसे वातावरण भर गया। मराठोंका जो सिंहासन अंग्रेजोंने रायगढसे उठा दिया था वह फिर ब्रह्मावर्तमें अंग्रेजोंके रक्तपर ही प्रस्थापित किया गया!

स्मरण रहे, पाठकगण, दो साल पहले बिठूरके राजमहलके एक कमरेमें बोये हुए क्रातिके बीजका एक विशाल वृक्ष बनकर उसमें स्वाधीनताके फल भी लगने लगे थे। भला, इस समय नानासाहबके मनमें कौनसी भावनाएँ उछल रही होंगी?

किन्तु अपना छिना राजमुकुट फिरसे खींच लानेके लिए नानासाहब इधर अपने प्रयत्नोंकी पराकाष्ठा कर रहे थे, तब अश्वारोहण तथा गजारोहणके समय स्पर्धा करनेवाली वह उनकी बालसखी भी चुप न थी। जब नानासाहबने कानपुरमें पेशवापदकी प्रकट घोषणा की, तब लक्ष्मीबाई भी अपनेको 'झाँसीकी महारानी' घोषित करनेमें थोडेही पिछडनेवाली थीं? जब कानपुरके युद्धकी चौपडपर उसके भाईने स्वाधीनताका फाँसा फेका तब उसने

* ट्रेव्हेलियन कृत कानपुर पृ. २९२

भी झाँसीमें वहीं किया। बचपनके समान क्रांतिके इस खेलमें भी इस उनके जोडकी श्रेष्ठ तथा तुल्यबल हरीफ बन रही थी। क्रांतिके वह रक्तमेघोंसे कानपुरका आकाश ४ जूनको आरक्त हुआ; उसी दिन झाँसीकी महारानीकी बिजली कौंधकर रणसग्रामको सिद्ध हुई।

४ जूनको झाँसीमे बलवा हुआ। इसके पहले ब्रिटिश कमिशनरके हाथ कुछ पत्र लगे थे जिससे यह मतलब निकाला गया, कि रानीके सेवकोंसे लक्ष्मण-राव नामक कोई ब्राह्मण क्रांतिकार्यका सगठन कर रहा है; और पूर्वप्रयोग ('रिहर्सल) के रूपमे कुछ प्रमुख सैनिक अफसरोंका काम तमाम करनेका उसका इरादा था। किन्तु इधर अग्रेज अफसर बलवा हो जाय तो क्या प्रबध करना चाहिए, इसका मशविरा कर रहे थे, उधर उसी दिन क्रातिकारियोंने किलेपर कब्जा जमा लिया। तब अग्रेजोंने शहरके किलेमें आसरा पाने को भागना शुरू किया। किन्तु क्रातिकारी उनके पहले वहाँ पहुँच गये और उस परभी दखल कर लिया। ७जूनको रिसालदार कालेखान तथा झाँसीके तहसील-दार महमद हुसेनने अन्य शूर सैनिकोंके साथ चढाई कर झाँसीके किलेपर स्वाधी-नतका झण्डा लहराया। इधर अग्रेजोंने सफेत झण्डा ऊँचा कर शरणागतिकी याचना की। झाँसीके एक लब्धप्रतिष्ठ नागरिक साले मुहम्मदने यह आश्वासन दिया कि अंग्रेज बिनाशर्त शरण माँगे तो उन्हें प्राणदान दिया जायगा। अंग्रे-जोंने हथियार डाल दिये और तुरन्त किलेके द्वार खोल दिये गये। अंग्रेजोंके बाहर आतेही सिपाहियोंने 'मारो फिरंगीको' का हो हल्लामचाया। ८ जूनको एक बडा जुलूस शहरके सडकोंसे निकाला गया, जिसमे बदी अंग्रेजोंको चलाया गया। एक सप्ताह पहले जो अग्रेज झाँसीमें ऊँचेसे ऊँचे अधिकारपद पर थे, उन्हींको आज गाँवमे बदी की दशामे घुमाया गया। जोगनबागके पास पहुँचनेपर सिपाहियोंने अपने सरदारसे पूछा 'रिसालदारसाहब, अब क्या आज्ञा है?' रिसालदारने आज्ञा दी "जिन फिरंगियोंने रानीको पदच्युत करनेके राजद्रोह तथा हमारे देशपर कब्जा जमानेका अपराध किया है, उन्हें बिलकुल क्षमा न की जाय, इसलिये स्त्रियाँ, पुरुष और बच्चे-तीन पंक्तियोंमें अलग अलग खडे कर दिये जायँ; और जेलका दारोगा पुरुषोंकी-पाँतीमे-कमिशनरका सिर काट देगा, तब तुरन्त सभीको तलवारके घाट उतारा जाय।" थोडीही देरमे खूनकी नदी बहने

लगी। रानीके दत्तकपुत्रके अधिकारको मान्यता न देनेवाली क्रूर नीतिके कारण इन गोरोंकी हत्या हुई।

लगभग ७५ पुरुष, १२ स्त्रियाँ और २३ बच्चे क्रांतिकारियोंने काट डाले और अंग्रेजोंके उत्तराधिकारका दावा करनेवाली औरस या दत्तक संतान वहाँ न होनेसे क्रांतिकारियोंने अंग्रेजोंके झाँसीके राजपर दखल किया और राजकुमार दामोदरकी पालनकर्त्री राणी लक्ष्मीबाईके सुपुर्द कर दिया और घोषणा की:- ' खल्क खुदाका, मुल्क बादशाहका और राज राणी लक्ष्मीबाई का। "

अध्याय ९ वाँ

अवध

अवध प्रांतपर डलहौसीने दखल की और तबसे वहाँकी प्रजा दिनोदिन अधिकसे अधिक कष्ट पाती गयी। नवाबके राजमें आमदनी, सम्मान और अधिकारवाले सभी पदोंपर गोरोंकी नियुक्ति हुई; देसी भाइयोंको बेकार बनाया गया। नवाबकी सेना तोड दी गयी; उसके सरदार कंगाल कर दिये गये; नवाबके मन्त्री तथा बडे अधिकारियोंको उनके स्थानोंसे हटाकर कुली-कबारीकी श्रेणिमें बिठाया गया। इससे, जिस पराधीनताके कारण उनका स्वदेश वीराना हो गया और उन्हें ऐसी हीन दशा प्राप्त हुई, उस पराई सत्ताके बारेमें ज्वलन्त द्वेष उनके मनमें ओतप्रोत भर गया था। पराधीनताका यह कोडा मात्र राजधानी तथा राजकुलके कर्मचारियोंपर ही पडा हो, सो बात नहीं है। पीढी दर पीढीके राजा तथा जमींदारोंकी जागीरें भी अंग्रेजोंने हडप ली थीं। तब इन राजाओं और जमींदारोंको पता चला, कि सभ्यताके शिखरपर पहुँचे पराये दास्यकी अपेक्षा अच्छा बुरा, ऊबडखाबड स्वराज्य ही बहुत श्रेष्ठ, सम्मानित और सुखपूर्ण होता है। लगानमें वृद्धि होनेसे किसानोंमें अशान्ति फैल गयी। अंग्रेजी सेनाके बहुतेरे सैनिक अवध प्रांतसे भरती हुए थे। वे भी अपनी मातृभूमिकी पराधीनता और उसकी हीन दशा देखकर, अंग्रेजोंपर खार खाते थे। नवाब वाजिदअलीशाहको जिन्होंने दुष्ट विश्वासघात तथा कमीनी ठगबाजीसे मटियामेट कर दिया था; उन अंग्रेजोंकी याद आतेही हर व्यक्ति दाँत किटकिटाकर तलवारपर हाथ रखता। कुलाभिमान, शौर्य

उदारता, कृतज्ञता आदि गुणोंके आदर्श बने ये अवधके बडे बडे जमींदार राजपूत थे। अपने राजासे अंग्रेजोंने नीच बर्ताव किया है इसका पता लगनेपर उनका राजपूती खून खौलने लगा। अवधपर दखल करनेके बाद अंग्रेजोंने इन जमींदारोंको नयी राजसत्ताकी सेवा करनेके लिए निमन्त्रित किया। इन सैकडों स्वातंत्र्यप्रेमी तथा तेजस्वी लोगोंने उत्तरमें कहा था, 'हमने स्वराज्यका निमक खाया है! परायोंके दिये टुकडे चबानेको हम कभी न जायँगे।'

इस नये अवध प्रांतपर सर हेन्री लॉरेन्सको नियुक्त किया गया। क्रांतिका बीज पंजाबमें दृढमूल होनेके पहलेही, जिसकी कूट-नीतिज्ञता तथा सावधानीसे, विफल कर दिया गया, उस जॉन लॉरेन्सका यह बडा भाई था। जिसतरह पंजाबके प्रधान कमिशनरने उस प्रांतकी रक्षा की, उसी तरह, उन्ही उपायोंद्वारा अवधकी रक्षा उसका भाई करने लगा। हिंदुस्थानमें ब्रिटिशोंकी सत्ता गहरी नींवपर खडी करनेमें लॉरेन्स परिवारने सबसे अधिक, निःसंदेह, हाथ बँटाया था। अवधमें पग धरतेही सर हेन्री लॉरेन्सने वहाँकी स्थितिका तुरन्त और पूरा आकलन किया; और दूसरे किसी भी अंग्रेजके पहले क्रांतिकी सम्भावनाका डर प्रथम प्रकट किया। सर हेन्रीने अवधकी राजधानी लखनऊहीमें अपना डेरा डाला। प्रारंभमें असंतुष्ट जमींदारोंको मीठे वचनोंसे पुचकारकर वशमें करनेकी नीति जारी की। लखनऊमें एक दरबार लगाया, उसमें मान-सम्मान, उपाधियाँ तथा पारितोषिक वितरण कर लोगोंको अपने लुप्त स्वराज्यको भुलानेके लिए उसने अनथक चेष्टाएँ की। हाँ, अशान्तिको दबानेके लिए इन शान्तिमय उपायोंपर अवलंबित न रह कर, साथ साथ उन योजनाओंको बनाना जारी रखा जो जनताके विद्रोहके फूट पडतेही उसे दबानेमें सफल हों। क्यों कि, सर हेन्री लॉरेन्स उसके भूतपूर्व अधिकारियोंसे कुछ अच्छा भलेही दिखाई पडता, अवधके प्रजाजन अंग्रेजोंके अच्छे तथा बुरे शासनसे पूरी तरह ऊब उठे थे। अब उनको तभी चैन होगी जब स्वराज्य प्राप्तकर वाजिदअलीशाहको अवधके सिंहासनपर फिरसे विराजमान देखें। अंग्रेजी पराधीनताकी शृंखलाओंको तोडकर भारतको स्वतंत्र करनेकी ही लगन लगी थी। आजतक उनका धर्म सिंहासनपर अधिष्ठित था; क्यों कि,

राजा और राज्यका वह धर्म था। अब धर्मकी अप्रतिष्ठा हो रही थी। येही असंतोषके कारण थे। और इसका इलाज अंग्रेजी हुकूमतका सुप्रबंध कभी नहीं था; अंग्रेजोंका आधिपत्य नष्ट करना ही उसका एकमात्र उपाय था। मानसिंहके समान महापराक्रमी हिंदु नरेश तथा मौलवी अहमदशाह जैसे प्रभावी मुसलमान नेताने हिंदुमुसलमानोंके धर्मके लिए अर्थात् स्वाधीनताके लिए लडे जानेवाले पवित्र युद्धमें अपने सर्वस्वकी बलि चढा-नेका निश्चय किया था। प्रकट या गुप्त रूपसे, सुविधानुसार, हजारों पंडित और मौलवी समूचे प्रांतमें दौरा कर, इस पवित्र धर्मयुद्धका प्रचार करने लगे। सैनिक शपथबद्ध हुए; पुलिसने शपथ की; जमींदार प्रतिज्ञाबद्ध हुए। मतलब, सारी जनता अंग्रेजोंके विरुद्ध होनेवाले युद्धके षडयंत्रमें शामिल थी। और देशभरमें असंतोषकी आग भडक उठी। मौलवी अहमदशाहको गिरफ्तदार कर राजद्रोह तथा जनताको बहकानेके अपराधमें फाँसीकी सजा सुनायी गयी। किन्तु उसपर अमल करनाही असम्भव हो गया। ७ वीं पलटनको निःशस्त्र किया गया। १२ मईको एक बडा दर-बार लगाकर सैनिकोंको काबूमें रखनेकी सर हेन्री लॉरेन्सने चेष्टा की। उस दरबारमें जनताकी भाषामें एक लम्बा भाषण दिया, जिसमें राजनिष्ठाके महत्त्वका बखान किया, रणजीतसिंहने मुसलमानोंके तथा औरंगजेबने हिंदुओंके धर्मका कैसे अपमान किया और अंग्रेजोंने हिंदु-मुसल्मान दोनोंको सहायता देकर इन अत्याचारोंसे कैसे बचाया, इसीका वर्णन रसभीनी भाषामें किया; फिर जो सैनिक अंग्रेजोंको वफादार रहे थे, उन्हें अपने हाथों तलवारें, शालें, पगडियों तथा अन्य वस्तुओंको भेंटमें दिया। इधर ७ वीं पलटनके सैनिकोंसे हथियार डलवाकर, पलटनहीको तोड दिया गया। किन्तु भावीके गर्भमें कैसी विचित्र घटनाएँ समाई थीं! थोडेही समय पहले वफादारीके कारण सम्मानित किया गया था, उन्हींको, क्रांतिकारि-योंसे सॉठ गॉठ करनेके अपराधमें, फॉसी लटकाया जानेवाला था।

राजनिष्ठाका दरबार १२ मईको सपन्न हुआ; १३ मईको मेरठके बल-वेका समाचार आया और १४ मईको दिल्लीपर क्रांतिकारियोंने कब्जा जमा लेने तथा भारतके स्वाधीन होनेकी घोषणाका हर्षपूर्ण समाचार लोगोंने सुना!

सुरक्षाकी दृष्टिसे, सर हेन्रीने लखनऊके पास माचीभवन और रेसिडेन्सी इन दो स्थानोंको चुना और वहाँ किलाबंदी करनेके काममें वह लग गया। अंग्रेज औरतों और बच्चोंको वहाँ ले जाया गया और अंग्रेज पुरुष, क्लर्क, मुल्की अधिकारी, व्यापारी, सभीको सैनिक अनुशासन, सामूहिक संचलन तथा राइफल चलानेकी शिक्षा दी गयी। मेरठमें भी बलवेके बाद सब नागरी गोरोंको उसी तरह सैनिक शिक्षा देकर दस दिनोंके अंदर युद्ध-भूमिमें टिकनेके योग्य बना दिया गया था। सर लॉरेन्स अब प्रांतका प्रधान सेनापति बना था! अवधसे नेपाल पास होनेसे सर हेन्रीने वहाँ एक शिष्टमंडल भेजकर सहायताकी याचना की। सूचना यह थी, कि जंगबहादूर अपनी सेनाको अवध भेजे। इस तरह सब प्रकारसे सावधानी रखी जानेपर भी हरदिन सर हेन्रीको 'विश्वासयोग्य' संवाद मिलता, कि 'आज बलवा होगा,' वह भी अपनी शक्तिभर इस 'प्रामाणिक' समाचारके आधारपर, सतर्क रहता, दिन डूब जाता किन्तु बलवेका कोई चिन्ह न दीख पडता। कई बार इस तरह धोखा हुआ। ३० मईको भी एक अफसरने सर हेन्रीके कानमें डाला कि 'आज रातको ९ बजे बलवा होनेवाला है।'

३० मई को सूरज डूब गया। अपने अधिकारियोंके साथ खाना खानेमें सर लॉरेन्स जुटा हुआ था। नौ की तोप दगी। तब जिसने वह संवाद सुनाया था और इसके पहले भी एकबार जो झूटा साबित हुआ था, उसकी ओर झुककर सर हेन्री व्यंग करते हुए बोला, क्यों जी; तुम्हारे मित्र समयके पक्के नहीं मालूम देते।

"समयके पक्के नहीं" ये शब्द पूरे कहे न गये थे, तभी ७१ वीं पलटनकी बंदूकोंकी बाढकी गडगडाहट सुनायी पडी। निश्चित निर्णयके अनुसार नौ की तोपके साथ इस पलटनके कुछ लोगोंने अंग्रेजोंके बंगलोंपर धावा बोल दिया। ७१ वीं पलटनके भोजनगृहमें आग लगा दी गयी और वहाँके गोरोंपर गोलियाँ चलाई गयीं। भगोडा ले. ग्रँट किसीकी सहायतासे एक गद्दीमें जा छिपा; किन्तु किसी दूसरेके बतानेपर वह पकडा गया; तब उसे घसीट लाकर कत्ल किया गया। ले. हार्डिन्ज अपने सवारोंके साथ मार्गमें गश्तपर घूम रहा था। उसे भी तलवारका एक वार लगा। छावनियोंमें आग

लगा दी गयी। ब्रिगेडियर हँड्स्कौंब भी मारा गया। अंग्रेजी झण्डेके वफादार गोरे सोजीर और कुछ सिपाही रातभर खडे, बलवेको काबूमें रखनेकी शक्तिभर चेष्टा कर रहे थे। ३१ मई को सबेरे, सर लॉरेन्स कुछ गोरे सैनिकों तथा अब भी राजनिष्ठ हिंदी सिपाहियोंके साथ, क्रांतिकारियोंपर हमला करने चला। किन्तु कुछ दूर जानेपर उसके साथवाली ७ वीं रिसालेकी टुकडीने बलवा किया; उसे क्रांतिकारियोंसे जा मिलनेको छोडकर वह लौट पडा। तोपखानेके साथ अंग्रेजोंके पास ३२ वीं पलटन लखनऊके अड्डेपर थी; किन्तु सूर्यास्तके पहले ४८ वीं तथा ७१ वीं पैदल, ७ वीं रीसाला पलटनों तथा अन्य अस्थायी टुकडियोंने स्वतंत्रताका झण्डा पहराया।

लखनऊसे ५१ मीलोंपर सीतापुर है: वहाँ ४१ वी पैदल पलटन तथा ९वीं और १०वीं अस्थायी पलटनें थीं। सीतापुर कमश्नरीका थाना था, जिससे और भी कुछ बडे अफसर वहाँ रहते थे। २७ मईको कुछ अंग्रेजोंके घरोंमें आग लगी थी। किन्तु वहाँके गोरोंको पता न था, कि ये आगे आगामी अंधेडकी पूर्वसूचना देनेकी सैन थी। इसीसे उन्होंने विशेष ध्यान नहीं दिया, और तो और, स्वयं सिपाहियोंने इन आगोंको बुझानेकी अनथक चेष्टा की। इस आगसे दो काम हुए। एक, गुप्त संस्थाके सदस्योंको सूचना मिली कि 'समय समीप है,' और अंग्रेजोंके आत्मविश्वास तथा भोलेपनकी कसौटी हुई। २री जूनको एक असाधारण घटना घटी। सिपाहियोंने यह शिकायत की, कि उन्हें दी जानेवाली आटेकी थैलियोंमें हड्डियोंका आटा भरा हुआ मिला और उसे लेनेसे इनकार किया; तथा यह हट पकडा कि उन थैलियोंको गंगामें फेंक दिया जाय। अंग्रेजोंने चुपचाप वैसाही किया। उसी दिन दो पहरमें, सहसा, सिपाही अंग्रेजोंके बगीचोंमें घुसे और अपनी इच्छासे वहाँके फल तोडकर खाने लगे। गोरोंने उन्हें रोककर खूब फटकारा, किन्तु सिपाहियोंके कानोंपर जू तक न रेंगी और वे मजेमें फलोंपर हाथ साफ करते रहे। मीठे फलोंका नाश्ता पेटभर खा चुकनेपर सिपाहियोंने और एक अजीब तथा भयंकर ऊधम शुरू किया। जून ३ को सिपाहियोंकी एक टुकडीने हमला कर खजानेपर कब्जा जमाया, और अन्य सिपाहियोंने चीफ कमिशनरके घरपर हमला किया। मार्गमें मिले कर्नल बर्च तथा ले.

ग्रेव्हको नर्कमें भेज दिया गया। ९ वी अस्थायी पैदल टुकडीने भी अपने प्रधान अधिकारियोंको मार डाला। सब सैनिक, जो भी मिले उस अंग्रेजपर टूट पडते और ' फिरगी राजका खात्मा'के नारे लगाते। कमिशनर, उसकी पत्नी और बेटा नदीपार होनेकी धाधलीमे मारे गये। थॉर्नहिल उसकी लुगाईके साथ गोलीका शिकार हुआ। सिपाहियोंने प्रतिशोधके आवेशमें लगभग २४ गोरोंको काट डाला। कुछ गोरे रामकोट, मितावाली के जमीदारोंके पास भाग गये। वहाँ ८।१० महीनोंतक दावतें खिलाकर लखनऊको पहुँचा दिये गये। इसके बाद सीतापुरके सब सैनिक फरुखाबाद गये। वहाँके किलेमे अंग्रेज भागकर आये थे। घमासान मुठभेडके बाद सिपाहियोंने उसे जीत लिया और वहाँके सभी गोरोंको कत्ल कर डाला। नवाब तफ़ज़र हुसेन खाँको फिरसे, अंग्रेजोंसे छिने सिंहासनपर, बैठाया। उसने अपने संस्थानकी सीमामे मिलनेवाले हर अंग्रेजको खत्म कर डाला। इस तरह जुलाई १ तक फरुखाबादके टापूमे अंग्रेजोका नामलेवा एक भी न बचा। सीतापुरके उत्तर ४४ मीलो पर होनेवाले मालन गाँवके सिपाहियो तथा जनताने कुछ षडयन्त्र करनेकी भनक अंग्रेजोंके कानमें पडी। सीतापुर के बलवेकी खबर पातेही, मालनके अंग्रेज अधिकारीभी घोडोंपर चढकर भाग गये, और पूरा जिला अंग्रेजी रक्तकी एक बूँद भी न गिराते हुए स्वतंत्र हुआ। तीसरा जिला था महमदी। वहाँके गोरोंने अपने बालबच्चोंको मिथौलीके राजाके पास भेज दिया था। राजाने साफ बताया कि ' प्रकटरूपसे रह सको तो जगलमे रहो।' क्यो कि, अवधके सभी सैनिकोंने बलवा करनेकी सौगध ली थी। निदान, गोरी स्त्रियोंको राजासाहबके पास भेजकर महमदीके अंग्रेज अधिकारियोंने किलेका आसरा लिया। उसी दिन रुहेलखण्डके शहाजहाँपुर को भागे हुए गोरोंने, महमदीमें हर क्षण प्राणोंका भय होनेसे, सीतापुरके अधिकारियोंको इन गोरोकी रक्षाका प्रबध करनेको लिखा सीतापुर अबतक शान्त था; सो, महमदीके निराश्रितोंको लिवा लानेको कुछ गाडियोंके साथ सीतापुरके सिपाही रवाना हुए। किन्तु उनमे भी क्रांतिका कीडा घुस चुका था। सभी गोरोको गाडियोंमें बिठाकर सीतापुरका रास्ता आधा तय किया; और सबको नीचे उतारकर उनका काम तमाम कर डाला। आठ औरते, चार बच्चे, आठ, लेफ्टनेंट, चार कॅप्टन और कुछ

गोरे ढेर हुए। इस बातका पता लगतेही बचे हुए अंग्रेज अधिकारी महमदीसे भाग गये। और वह समूचा तहसील ४ जूनको ब्रिटिश सत्तासे मुक्त हो गया।

सीतापुरके पास और एक तहसील था बहराइच। यहाँका कमिशनर था विंगफील्ड। इस तहसीलमें सिकोरा, गोंडा, बहराइच और मेलापूर ये चार शासनकेन्द्र थे। सिकोरामे २ री पैदल पलटन तथा तोपखानेका एक विभाग था। वहाँ जब बलवेका भूत डराने लगा तब अंग्रेजोंने अपने परिवार लखनऊ भेज दिये। ९ जूनको सवेरे कई अंग्रेज अधिकारी स्वयं जाकर बलरामपुरके राजासे पनाह माँगने लगे। बस, एक बोनहॅम, तोफखानेका प्रधान अधिकारी, था जिसने सिपाहियो पर पक्का भरोसा होनेसे वहाँसे जाना अस्वीकार किया। किन्तु, शामको सिपाहियोंने उससे स्पष्ट कहा, महाशय, व्यक्तिके नाते हम आपको कष्ट नही देंगे; फिर भी हम अपने देशबंधुओंके विरुद्ध लडनेको बिलकुल सिद्ध नहीं है: क्यों कि, अब अंग्रेजी शासन टूट चुका है। तब बोनहॅमको वहाँसे हटना ही पडा। सिपाहियोंने उसे कुशलसे लखनऊ पहुँचने दिया। सिकोरा स्वतंत्र हो जानेका समाचार गोंडा पहुँचतेही वहाँभी बलवा हुआ। कमिशनर विंगफील्ड उस समय अन्य गोरोंके साथ बलरामपुर गया था। वहाँके राजाने २५ गोरोंको आसरा देकर, मौका पाकर, उन्हें अंग्रेजोंकी छावनीमें पहुँचा दिया।

सिकोरा और गोंडा स्वतत्र होनेकी खबर बहराइच पहुँच गयी। वहाँके अंग्रेजोंने बलवा होनेतक राह न देखकर बहराइच छोड दिया और १० जूनको लखनऊ भाग गये। किन्तु अवधभरमे क्रांतिकारियोंका जाल फैला हुआ था: तब हिंदी वेश बनाकर किश्तियोंद्वारा गोरोंने घाघरा नदीपार जानेका जतन किया; पहले किसीका ध्यान न गया; किन्तु मझधारमे पहुँचतेही 'फिरंगी; फिरंगी' की चिल्लाहट सुन पडी। मल्लाह नीचे कूद पडे और गोरोंको कत्ल किया गया। इसतरह बराइचसे अंग्रेजी शासन उठ गया।

मेलापुरमें कोई सैनिक अड्डा न था; फिर भी, वहाँकी जनताने अंग्रेज अधिकारियोंको वहाँसे भाग जानेको मजबूर किया। वहाँके जमींदारने भी

उनकी सहायता की। फिर भी, उनमे से कुछ क्रांतिकारियोंने काट डाले और कुछ जंगलके कष्टोंसे मर गये।

फैजाबाद अवधके पूर्वभागमें है। वहाँ गोल्डने कमिशनर था। फैजाबाद तहसीलमें सुलतानपुर, सलोनी, और फैजाबाद प्रमुख केन्द्र थे। फैजाबादमें २२ वीं पैदल पलटन, ६ वीं अस्थायी पैदल पलटन, रिसाले तथा तोपखानेके कुछ विभाग थे। इन सबका अधिपति कर्नल लेनॉक्स था। फैजाबाद जिलेमें अंग्रेजोंके अत्याचारोंने धूम मचायी थी। सर हेन्री लॉरेन्स स्वयं लिखता है, "तालुकदारोंपर, मैं मानता हूँ, बडी सख्ती बरती गयी थी। मैं समझता हूँ, कुछ तालुकदारोंके आधेसे अधिक गाँव छिन गये थे, जहाँ, कुछ तो बिलकुल बरबाद हो गये।"* मेरठके बलवेके बाद तुरन्त अंग्रेज अधिकारियोंको डर लगने लगा, ये तालुकदार कहीं अब प्रतिशोध न लें। इस डरसे वे बहुत बेचैन होकर अपनी रक्षाके उपाय ढूँढने लगे। क्रांतिकारियोंके सब मार्ग रोके रहनेपर वे अपने परिवार लखनऊ न भेज पाते थे; और फैजाबादकी सब सेना हिंदी होनेसे वहाँ भी प्रतिकारकी कोई योजना न बना सकते थे। इस जिचमें पडनेसे, निदान, अंग्रेज अधिकारी राजा मानसिंहकी शरणमें गये। राजासाहब अवधके हिंदुओंके माननीय मुखिया थे। नवाबके कार्यकालमें उनकी तलवार हिंदुधर्मकी रक्षाके लिए सदा सँवारी रहती थी। १८५७ की मईमें मालगुजरीके किसी झगडेमें मानी मानसिंहको अंग्रेजोंने गिरफ्तार किया था। किन्तु मेरठवाले बलवेसे अंग्रेजोंकी सत्ता ढीली हो जानेके कारण, मानसिंहको अपनी ओर कर प्रसन्न रखनेके लिए मुक्त कर दिया गया था।

बडी हिचकिचाहटके बाद राजासाहबने औरतों और बच्चोंको अपने किलेमें आसरा देना स्वीकार किया; तब भी वे कुडकुडाते थे, कि लोग इतना भी पसंद न करेंगे, उस बहाने किलेपर धावा बोल देनेसे भी बाज न आयेंगे! किसी तरह, १जून को अंग्रेजी परिवार राजा मानसिंहके शहागजके किलेमें रखे गये।

---

* के और मॅलेसन कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड ३, पृ. २६६

इधर, इसतरह, अंग्रेज अपनी रक्षाकी सावधानी रख रहे थे, उधर फैजाबादमें क्रांतिकी ज्वालाएँ अधिक तीव्रतासे भडक उठीं। भारतीय इतिहासमें अमर बने मौलवी अहमदशाह उन तालुकदारोंसे एक थे, जिनका सब कुछ अंग्रजोंने छीन लिया था। हिंदुस्थानके देशभक्तोंमें उनका नाम सदा चमकता रहेगा। उन्होंने अपनी तालुकदारी ही नहीं, भारतकी स्वाधीनता प्राप्त करनेकी सौगंध ली थी। स्वदेशके राजद्वारपर उन्होंने कई कष्टपूर्ण दिन और आँखोंमें रातें काटकर जागरित रहकर प्रहरीका काम किया था और अंदर घुसे हुए पराये शासनको निकाल बाहर कर देनेके लिए हथियार उठाया था। अवधका राज्य अंग्रेजोंने जबसे हडप लिया था, तबसे अहमदशाहने देश और धर्मकी सेवामें अपना सब कुछ लगा दिया था। वे मौलवी बने और क्रांतिधर्मका प्रचार करनेको हिंदुस्थान भरमें घूमने निकले। जहाँ जहाँ ये राष्ट्रीय संत पहुँचे, जनतामें जबरदस्त जागरण जाग उठा। क्रांतिदलके नेताओंसे वे मिले। उनका वचन अवधके राजघरानेमें ईश्वरका आदेश माना जाता। आगरेमें गुप्त संस्थाकी एक शाखा खोली गयी। लखनऊमें भी ब्रिटिश राजको उलट देनेका खुला प्रचार किया। अवधकी जनता उन्हें असीम प्यार करती थी। तन, मन, धन, बुद्धि, वाणी सब एकही आदर्शकी प्राप्तिमें लगाकर स्वाधीनताके प्रचार तथा क्रांतिके निर्दोष संगठित जालेको बुननेके लिए वे दिनरात लगे रहते थे। आगे चलकर वे लेखक बने और क्रांतिपत्रों को लिखने लगे, जो अवध प्रांतभर में वितरित होते थे। एक हाथमें हथियार, दूजेमें लेखनी; उनके असाधारण व्यक्तित्वकी दीप्तिसे स्वतंत्रताकी ज्योति और तेजसे दमक उठी। यह देखकर अंग्रेजोंने उन्हें पकडनेकी आज्ञा दी। किन्तु इस जनप्रिय नेताको छूने अवधकी पुलीसका हाथ आगे न बढा; तब एक खास सैनिक टुकडी इस कामपर तैनात हुई और राजद्रोहके अपराधमें फाँसीकी सजा सुनायी गयी। कुछ समयतक उन्हें फैजाबादके कारागारमें भी रखा था। * किन्तु अब अंग्रेज और मौलवीमें एक तरहसे यह चढाऊपरी शुरू हो गयी थी, कि कौन किसे फाँसी

* स. ३३–मॅलेसन–खण्ड ५ पृ. ३७९; तथा गबिन्स

लटकायगा। इधर वह अंग्रेजी शासनको उखाड फेकनेकी सिद्धता कर रहा था, उधर ब्रिटिश राज उसे फॉसी लटकानेके लिए टिकटिकी बनानेकी उतावली कर रहा था। किन्तु इस जल्दबाजीमें मौलवीको फैजाबादहीके कारागारमे बद रखा; अंग्रेजोंने अपना वधस्तंभ खडा किया! क्यों कि, मौलवीकी गिरफ्तारीकी चिनगारीसे ही क्रातिके गोलाबारूदके अबारमें भडाका हुआ। सेनासमेत सब नगर 'हर हर'की गर्जना कर उठा। जब सिपाहियोको साधनेके लिए अंग्रेज अधिकारी संचलन भूमिपर पहुँचे, तब सिपाहियोंने करारा शब्दोंमें बेधडक जताया 'अबसे हम देसी अधिकारियोकी ही आज्ञा मानेंगे, और हमारा नेता सूबेदार दिलीपसिह होगा'। इसपर दिलीप सिंहने अंग्रेज अधिकारियोंको बदी बनाया। इधर उस जनप्रिय वीरके पदरजसे पवित्र बने बदीगृहकी ओर सिपाही और नागरिक सभी उमड पडे। जनताके प्रेमपूर्ण उद्गारोंकी कलध्वनिमे कारागारका द्वार चरमराया ओर अभी तोडी हुई शृखलाओंको लतियाकर मौलवी अहमदशाह जनसमर्दके सामने आये। मौलवीका यह पुनर्जन्म था। जो अंग्रेज शासन मौलवीको फॉसी लटकानेको आतुर था उसीका गला आखिर मौलवीने कसकर पकडा। मौलवी मुक्त होतेही फैजाबादके क्रातिदलके नेता बने। और सबसे पहले उन्होंने कर्नल लेनॉक्सके पास, जो अब बदी था, धन्यवादका सदेसा भेजा इसलिए कि उसने मौलवीसाबको जेलमें हुक्का रखनेकी अनुज्ञा दी थी। देहान्तके दण्डका यह बदला था! *

और धन्यवादके बाद मोलवीने तुरन्त फैजाबादसे चले जानेकी अंग्रेजोंको चेतावनी दी। लूटफाट या ऊधम, जैसे कि अन्य स्थानोंमें हुआ था, न होने पावे, इस लिए सिपाहियोंके रक्षक दल भेजे गये थे। मॅगजीन तथा अन्य इमारतोंपर भी सैनिकोंका पहरा था। १५ वीं पलटनके सिपाहियोंने एक युद्धसमिति बनायी और उसके निर्णयके अनुसार अंग्रेज अधिकारियोंको कत्ल करना तय हुआ। किन्तु उनके प्रधानने यह फैसला किया कि, 'प्राण जाय पर वचन न जाय'—अंग्रेजोंको जीवित जाने दिया गया। अपने साथ व्यक्तिगत सामान ले जानेकी भी छूट दी गयी। हॉ, अवधके

* चार्लस बॉलकृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १, पृ. ३९४

स्वामित्वकी अर्थात् जनताके कामकी कोई वस्तु न ले जा सकेगे। फिर क्रांतिकारियोने स्वयं अंग्रेजोके लिए नावे सजायीं; उन्हें कुछ नकद पैसा भी दिया और अंग्रेजोंने सिपाहियोसे बिदा ली और घाघरा नदी पार कर गये। ९ जूनको सवेरे एक घोषणापत्र प्रकाशित हुआ, जिसके अनुसार कंपनीकी सत्ता समाप्त होकर फैजाबाद स्वतत्र हो गया और वाजिद-अलीशाहकी राजसत्ता फिरसे शुरू हुई।

अंग्रेज जब नदीपार हो रहे थे, तब १७ वीं पलटनके सिपाहियोंने उन्हे देखा। इन्हे फैजाबादसे इस मतलबका पत्र मिला था, 'इधरसे आनेवाले अंग्रेजोंको खत्म करो,' जिससे उन्होंने किश्तियोंपर हमला किया। चीफ कमिशनर गोल्डने, ले. थॉमस, रिची, मिल, एडवर्डस्, करी आदि गोरे मारे गये। मोहदाबा जो भागे थे उन्हे पुलीसने मार डाला। केवल एक किश्तीके लोग मल्लाहोंकी सहायतासे छटककर गोरोंकी छावनीतक पहुँच पाये। राजा मानसिंहके घरके लोग पहले ही अपने शरणमे आये अंग्रेज परिवारोंको सुरक्षित रखनेमें तंग आ गये थे· ऊपरसे और कुछ लोग पनाह माँगने आये। मानसिंग तब अयोध्यामे था। उन्होंने अपने घरवालोंको लिखित सूचना दी थी. 'किसी भी दशामें अंग्रेज पुरुषोंको आसरा न दिया जाय; उनके परिवारवालोंको भलेही रख लिया जाय और वह भी अपनी शर्तोंपर! उनके पालनमें जरा भी आनाकानी होनेका सदेह हो तो तुरन्त सबकी तलाशी ली जाय' इस प्रकारका इकरार क्रातिकारी तथा मानसिंहके बीच हुआ था तब उनके किलेसे अंग्रेज पुरुष घाघरापार जानेको निकले। मार्गमें उन्हे बहुत कष्टो तथा अडचनोका सामना करना पडा। उनसे जो बच पाये वे गोपालपुरा पहुँचे। वहाँके राजाने गोरोंको २९ दिनतक अच्छीतरह मेहमान बनाया और सकुशल अंग्रेजी अड्डेपर पहुँचा दिया। १८५७ के बवडरमें जो अंग्रेज बचे थे उन्होने अपने अनुभवोके ब्योरेवार और लम्बे चौडे वर्णन लिख रखे है। इनसे हम बहुत कुछ सीख सकते है; भारतके लोगोकी उदात्त मनोगतिके ये परिचायक, जीवीत स्मारक है। अवधमें अंग्रेजोके विषयमे असीम द्वेषभावना भडकी थी, फिरभी क्रातिकारियोंकी सहायता करनेवाले राजा महाराजाओकी शरणमे जो अंग्रेज गये उन्हे आसरा देकर उनका अच्छा आतिथ्य किया गया।

अवध का युवराज

और ऐसे उदाहरण कुछ कम नहीं है। बुशर लिखता है:—अन्तमें, मैं अकेला बचा। भागते भागते रास्तेमें एक देहात मिला। पहले आदमीसे भेट हुई वह ब्राह्मण था; उससे मैंने पीनेको पानी माँगा, मेरी बुरी दशा देखकर उसे दया आयी, उसने बताया कि उस देहातमें ब्राह्मण अधिक है तब मेरे लिए कोई भय नहीं...बलीसिंग मेरा पीछा करते वहाँ पहुँचा। तब मैं भाग कर एक गलीमें घुसा; एक बुढियाने मेरे पास आकर एक झोपडेमें घुसने का इशारा किया और घासमें जा छिपा। थोडेही समयमें बलीसिंग और उनके साथी वहाँ आये और अपनी तलवारोंकी नोकोंसे हर स्थानमें घोपकर देखने लगे। उन्होंने जल्दही मुझे खोज निकाला और बालोंको पकडकर घसीटते बाहर खींचा। तब देहातके लोग इकट्ठा हुए और फिरंगियोंको अनगिनत गालियाँ देने लगे। फिर देहातियोंके कोलाहलमें बलीसिंग मुझे दूसरी जगह ले गया। मेरे मरणका दिन हररोज आगे बढाया जाता। मैं पाँव पडकर दयाकी याचना करता जाता। निदान, बलीसिंग मुझे अपने घर ले गया और अन्तमें मुझे हमारी छावनीमें पहुँचाया गया। कर्नल लेनॉक्स कहता है:— हम भाग रहे थे तब नजीम हुसेनखाँके लोगोंने हमें पकडा। उनमेंसे एक ने चक्र (रिवालवर) तान कर, दात पीसकर, कहा कि फिरंगीको गोलीसे उडा देनेको उसके हाथमें कमकमहट हो रही है। उसने कहा, किन्तु उससे ऐसा कोई काम न हुआ। फिर हमें नजीमके सामने खडा किया गया। वह दरबारमें एक गावतकियासे टेक लगाकर पडा था। उसने हमें शरबत पिलाया और निर्भय रहो कहकर धीरज बँधाया। हमें कहाँ टिकाया जाय इसपर विचार हो रहा था तब एक क्रोध भरे नौकरने घोडोंके अस्तबल सूचित किये, तो नवाबने उसे फटकारा। किन्तु दूसरा आगे होकर बोला, इसमें इतना सोचनेकी क्या पडी है ! इन सब फिरंगी कुत्तोंको मैं अभी खत्म किये देता हूँ, बस! नजीमने सबको डाँटा, और हमें प्राणदान देनेका आश्वासन दुहराया। क्रांतिकारियोंके डरसे हम जनानखानेके पासही छिपे रहे थे। हमें कपडे, खाना सब कुछ ठीक मिलता।" इसके बाद एक दिन नजीबने उन्हें हिंदी वेश पहनाकर अंग्रेजोंकी छावनीमें पहुँचा दिया।

फैजाबादसे अंग्रेज अफसरोंके भाग जानेके समाचार मिलतेही अवधके अन्य तहसील भी स्वतंत्र हुए और स्वाधीनताका झण्डा फहराया गया। उसी दिन अर्थात् ९ जूनको सुलतानपुर उठा, दूसरे दिन सलोनीमें बलवा हुआ, तब वहाँके अधिकारी जानकी खैर मनाने तितर बितर भागे। उनमेंसे कुछ सरदार रुस्तुमशाह तथा कुछ राजा हनूमतसिंहको शरणमें गये। अवधके वीर तथा उदार राजा शरणमें आये हुओंको केवल प्राणदानही नहीं देते थे; वरच इन अंग्रेजोंकी अच्छी तरह खातिर करते थे! वास्तवमें इन सभी जमींदारोंको अंग्रेजोंने बहुत अपमानित और बरबाद किया था। हाँ, वे कभी न भूले, कि उनका धर्म ठुकराया गया और उनके स्वराज्यका सत्यानाश कर दिया गया था। अपने सिपाहियोंको लेकर वे स्वातंत्र्य-समरमें हाथ बँटाते थे। और इनमेंसे कुछ तो यह प्रण कर चुके थे, कि अंग्रेजोंको भारतसे निकाल बाहर करेंगे तब कहीं आराम करेंगे। और इस वीरतायुक्त देशभक्ति और स्वाधीनताके प्रेमके साथ साथ मनकी महानता भी उनके पास थी। बहुसंख्य जनता जब बदले तथा तेहेके जोशमें अंग्रेजोंको गाजरमूलीकी तरह काट रही थी, तब अंग्रेजी परिवारोंपर दया कर, उनका आतिथ्य तथा संरक्षण ही नहीं किया गया, वरंच जिन अधिकारियोंने बहुत सताया था उन्हे भी, शरण आनेपर, प्राणदान दिया। जनताने बारबार प्रार्थना की, कि 'इन अधिकारियोंको जीवित रखनेमें अपनी भलाई नहीं है, क्यो कि, ये फिरसे लडाईकी सिद्धता करेंगे—और १८५७के उत्तरार्धमें ठीक वही हुआ भी— तो भी जमींदारोंने उनके साथ उदारतासे ही बरताव किया। इस तरहकी उदारता तथा दानाई, जनताके क्रोधका कारण होनेपरभी, बरती जानेका उदाहरण भारतको छोड किस राष्ट्रमें, और वह भी विप्लवके विस्फोटमें, पाया जायगा?

कालाके जमींदार राजा हनुमतसिंग राष्ट्रसेवाके लिए लडनेकी लगनमें रंचभी किसीसे कम न होनेपर भी, केवल उनकी महान् उदारताने शत्रुको यों कहनेपर मजबूर किया:—" ब्रिटिशोंने मालगुजारीकी नयी पद्धति शुरू की, जिससे इस राजपूत सूरमाकी आमदानीका बहुत बडा हिस्सा छिना गया था। इस जुल्म तथा अपमानका शल्य यद्यपि उनके अंतस्तलमें

गहरा घाव कर चुका था, तो भी जिस राष्ट्रने उसे लगभग बरबाद किया था, उस राष्ट्रके शरणार्थी अधिकारियोंको, केवल विपत्तिमे फँसे लाचार जीव की उदार दृष्टिके बिना, अन्य किसी भी दृष्टिकोणसे देखनेको उनका महान् मन न मानता था! उस सकट–समयमें उन अंग्रेजोंकी सहायता भी की और उन्हे उनके सुरक्षित स्थान तक भी पहुँचा दिया। किन्तु बिदाईके समय कॅप्टन बरोने बगावतको दबानेमे राजासाहबकी सहायताकी इच्छा प्रकट की, तब वे तडाकसे खडे रहे और कहा, "महाशय, तुम्हारे भाई इस देशमें आये और उन्होंने हमारे राजाको हटा दिया। उनके मौरूसी हकोंको जॉचनेके लिए तुमने अपने अधिकारियोंको तहसीलोंमे भेजा। कलमके शोरेसे मेरे वशके तावेमे अनादि कालसे रहे गॉवोंको तथा आमदनीको तुम हडप गये! मैं लाचार चुप रहा, किन्तु अब तुम्हारे भाग्यने एकाएक पलटा खाया! जिस मुझे लूटकर बरबाद कर डाला उसीके द्वार खटखटाने की बारी तुम्हे आयी, फिरभी मैंने तुम्हारी रक्षा की। बस, अब मैं अपनी प्रजाका नेतृत्व करने लखनऊ जाकर तुम लोगोंको भारतवर्षसे भगा देनेके कार्यमे अपना जीवन लगा दूँगा।"*

अवध प्रातके लोगोंने जो उदारता ऐसे समयमे दिखलायी वह किसी दुर्बलताके कारण न थी। ३१ मईसे जूनके पहले सप्ताहके अन्ततक समूचा अवध प्रात किसी प्रचड यत्रके समान सहसा जागरित हुआ था। अवधके सब जमींदार तथा राजा, ब्रिटिश पैदल सेना, रिसाले तथा तोपखानेके सहस्रों सैनिक, नागरी महकमोंके सभी सेवक, किसान, व्यापारी, विद्यार्थि हिंदु, मुसलमान सब देशको स्वतत्र करनेके लिए एक प्राण होकर उठे। व्यक्तिगत बैर, वर्ण–जाति–धर्मके भेद सब कुछ एक देशप्रेममें गल गये! हरएकको यह श्रद्धा थी, कि वह धर्म तथा न्यायके युद्धमे कूद पडा है। केवल १० दिनोंमें जनताने वाजिद अलीशाहको फिरसे सिंहासनपर बिठाया। 'जनताके कल्याणके हेतु वाजिद अलीको हमने पदच्युत किया

---

* मॅलेसन कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड ३ पृ. २७३–पाद टीका (फुट नोट)

है '–डलहौसीके इस ढकोसलेका कैसा मुँहतोड और मार्मिक उत्तर जनताने दिया! जुलाईके प्रथम सप्ताहके अन्तमें समूचे अवधप्रांतमें एक भी गाँव ऐसा न था, कि जहाँ युनियन जॅकके टुकडे टुकडे कर डलहौसीको इसी तरहका मार्मिक उत्तर न दिया गया हो।

इस तरह सब स्थितिका सत्य विवरण देनेके पश्चात् श्री. फॉरेस्ट भूमिकामें लिखता है :–' इस प्रकार केवल दस दिनोंमें अवधका अंग्रेजी शासन किसी सपनेकी तरह बिलाया और गया बीता हो गया! सेनाने बलवा किया, प्रजाने राजभक्तिको ठुकरा दिया; न उसमें प्रतिशोध न क्रूरताकी भावना थी! शूर तथा चिढी हुई जनताने शासक–वर्गके निराश्रित शरणार्थियोंको–अंग्रेजोंको–लगभग सभी स्थानोंमें, विशेष दयाबुद्धिसे रखा। जिन शासकोंने अपनी चले तबतक परोपकारके नामपर बहुसख्य जनतापर असीम कष्ट ढाये थे, उन हारे हुए शासकोंसे– अंग्रेजोंसे–अवधकी जनता जिस उदारता तथा शिष्टतासे पेश आयी वह तो कभी नहीं भुलाया जा सकता। * सुयोग्य तथा अनुभवी अंग्रेज अफसरोंको अवधके वीरोंके योग्य उदारतापूर्ण लोगोंने जीवित न छोडा होता, तो नौसिखिये अंग्रेजोंके लिए फिरसे अवध जीतना असम्भव हो जाता!

लगभग १० जून तक सारा अवध प्रांत स्वतंत्र होकर सब सैनिक तथा स्वयंसेवक लखनऊको चल पडे, जहाँ प्रभावशील अंग्रेज नेता सर हेन्री लॉरेन्स अब–तब हुई अंग्रेजी राजसत्ताको होशमें लानेकी पराकाष्ठाकी चेष्टा कर रहा था। सारा प्रांत हाथसे निकल जानेपर भी राजधानीका स्थान अबतक उसने तावेमें रख छोडा था। क्रांतिका अंदाज पहले लगाकर उसने मांचीभवन तथा रेसिडेन्सीमें संरक्षक किलाबंदीका प्रबंध कर रखा था। ३१ मईको बलवा कर जब सिपाही चले गये, तब उसने सिक्खोंकी एक तथा 'अत्यंत राजनिष्ठ' हिंदुस्थानियोंकी एक–दो मकम पलटनें खडी कीं। रहे सहे पुराने सिपाहियोंने १२ जूनके पहले विद्रोह किया; सर हेन्रीको इसपर आनंदही हुआ। क्यों कि, उस समय उसके पास

* फॉरेस्टस् स्टेटपेपर्स खण्ड २ पृ. ३७

चुनिदे गोरे सैनिकोंकी एक पलटन, तोपखाना, तथा कडीसे कडी कसौटीपर जिनकी राजनिष्ठा (!) खरी उतरी थी ऐसे सिक्ख तथा हिंदुस्थानियोंकी दो पलटनें थीं। इस लिए वह तो लडाईका मौका ढूंढ ही रहा था।

सैनिक तथा अवधके नौजवान स्वयंसैनिक लखनऊके आसपास जमा हो रहे थे। दोनों दल जानते थे, कि इस मुठभेडके पूर्व इसके बाद फिरसे टकराना पडेगा। कानपुरके घेरेकी लडाई अब टोंचपर पहुँच चुकी थी। ऐसे समयमें कानपुरके समाचारके बिना, अंग्रेज या क्रांतिकारी चढाई करनेको राजी नहीं थे। २३ जूनको सर हेन्रीने लॉर्ड कॅनिंगको लिखा, "कानपुर यदि टिका रहे तो लखनऊ शायदही घेरा जायगा।" २८ जूनको लखनऊमें समाचार पहुँचा कि कानपुरमें एक भी अंग्रेज जीवित न रखा गया, इस संवादसे उत्साहित होकर क्रांतिकारियोंने अंग्रेजोंपर धावा बोलनेके लिए चिनहटकी राह ली।

कानपुरकी करारी तथा भयंकर हारसे अंग्रेजोंके रोबको हर जगह बडा धक्का पहुँचा। इससे सर हेन्रीने अपने मनमें ठान ली थी, कि इससे दुगनी करारी हार जब तक क्रांतिकारियोंको न दी जाय, तब तक लखनऊकी रेसीडेन्सी तो क्या, कलकत्तेका फोर्ट विलियम भी असुरक्षित रहेगा! कानपुरका अपमान क्रांतिरियोंके खूनसे धो डालनेका निश्चय कर २९ जूनको अंग्रेजी सेना लोहा-पुलके पास जमा हो गई। ४०० गोरे सैनिक, ४०० भारतद्रोही सिपाही और १० तोपोंके साथ सर हेन्री लखनऊसे चल पडा। शत्रुकी हलचल कहीं नजर न आनेसे वह दूरतक चलता ही गया। निदान, वह क्रांतिकारियोंकी हरावलके सामने आ खडा हुआ। सर हेन्रीने अपने दाहिने पासेके एक महत्त्वपूर्ण देहातपर दखल करनेकी सिपाहियों को आज्ञा दी और उसके अनुसार वह गाँव हाथ आया, इधर गोरे सैनिकोंने बाएँ पासे के इस्माइलगंजपर दखल कर लिया। तोपखानेके हिंदी और अंग्रेज तोपचियोंने क्रांतिकारियोंपर गोलोंकी बौछार इतनी जोरोंसे की, कि उनका तोपखाना बंद पडा। उस दिन चिनहटमें गोरोंका पल्ला लगभग भारी रहा। किन्तु एकाएक क्रान्तिकारियोंने बाएँ पासेके एक गाँवपर छुपा हमला करनेकी खबर आयी; अचानक अंग्रेजोंपर

धावा बोल, उन्हें भगा दिया और गॉव जीत लिया। क्रांतिकारियोंने अंग्रेजोंकी पिछाडी तथा बीचके विभागपर एकसाथ चढाई की! ज्योंही गोरे हटने लगे त्योंही क्रांतिकारियोंने अपना दबाव बढाया! अंग्रेजी सेनामें गडबडी पडी! और अब लडनेका अर्थ सारी सेनाका सत्यानाश करना है, यह ताडकर सर हेन्रीने पीछेहटकी आज्ञा दी। इस पीछेहटमें भी गोरोंको बडी यन्त्रणाएँ सहनी पडीं। क्यों कि, चिनहटमें अंग्रेजोंको हराकर ही क्रांतिकारियोंने दम न लिया, उन्होंने ताबडतोड गोरोंको खदेडना शुरू किया, जिससे अनुशासन टूट गया और गोरे तितर-बितर हो गये और जान बचाते हुए भाग खडे हुए। हारी हुए अंग्रेज सेना लखनऊ की ओर भाग रही थी। ४०० गोरोंसे १५० चिनहटमें मारे गये। हिंदुस्थानी राजनिष्ठोंकी गिनतीसे क्या लाभ? दो बडी तोपें तथा एक हाविट्झर खेतमें छोड अंग्रेज भागे, और साथ कानपुरके प्रतिशोधका विचार वहीं छोड देना पडा। सर हेन्री, यह मार पडनेपर, रेसिडेन्सीमें लौट आया; फिरभी क्रांतिकारी उसका पीछा कर रहे थे। चिनहटकी लडाई तभी समाप्त हुई, जब बचे हुए अंग्रेज, सिक्ख और 'राजनिष्ठ' सिपाही रेसिडेन्सीकी तोपोंकी छायामें दम लेने लगे। हॉं, किन्तु उस लडाईका प्रभाव कहॉं समाप्त हुआ था? क्रांतिकारियोंने माचीभवन और रेसिडेन्सी दोनोंको घेर लिया। तब एकही स्थानका प्रतिकार पूरा बलवान करनेके हेतु सर हेन्रीने माचीभवन खाली करना तय किया। अनगिनत गोलाबारूदसे भरे वहॉंके कोठारमें आग लगाकर सब गोरे रेसिडेन्सीमें आ गये! इस स्थानमें अनाज, शस्त्रास्त्र, गोलाबारूद आदि सामग्री घेरेके समयमें आवश्यकतासे अधिक थी। अब रेसिडेन्सीमें लगभग एक सहस्र गोरे सैनिक तथा ८०० हिंदी सिपाही थे। बाहर क्रांतिकारियोंकी असीम सेना खडी थी; उससे भिडनेकी सिद्धता अंग्रेजोंने की। चिनहटकी लडाईके बाद भी रेसिडेन्सी झुझानेका अंग्रेज सेनापतिका निश्चय देखकर क्रांतिकारियोंको भी तैश आ गया। विदेशी तानाशाही तथा पराधीनताका सदाके लिये अन्त कर देनेके विचारसे वे क्रोधसे मनमें जलने लगे!

इस तरह भडके हुए अवधने अंग्रेजी शासनको कुचलते, पीटते और पीछा करते हुए लखनऊकी छोटीसी रेसिडेन्सीमे बंदी बना दिया।*

* स. ३४। रेड पॅम्फ्लेटका सुप्रसिद्ध लेखक लिखता है:—" समूचा अवध प्रांत हमारे विरुद्ध हथियार सॅवार उठा था। केवल स्थायी सेनाके सैनिक ही नहीं, भूतपूर्व नवाबके ६० सहस्र सिपाही, जमींदार तथा उनके सिपाही और २५० किले, जिनमें बहुतेरे बडी तोपोंसे लैस थे, हमारे विरूद्ध थे। ईस्ट इंडिया कंपनीके राजके साथ लोगोंने अपने पुराने राजाओं के शासनसे मिलाया और, लगभग एकमत होकर, अपनेवालोंको अच्छा घोषित किया। सेनासे पेनशन लिए हुए निवृत्त सैनिक प्रकट रूपसे हमारी निंदा कर बलवेमे शामिल हो गये है। "

अध्याय १० वाँ

उपसंहार

दिल्ली, कानपुर, लखनऊ, बरेलीके मरे हुए या अत्र-तत्र करते हुए राजसिंहासनोंमें फिरसे प्राण फूँककर जिस स्वातन्त्र्य-लालसाने उन्हे जीवित किया, उसीसे कुछ कुछ धुकधुकी लिए हुए अन्य संस्थानोंपर वस्तुतः क्या प्रभाव पडा था?

१८५७ मे सर्वसाधारणको यह विश्वास था, कि विदेशियोंका जुआटा जबतक भारतकी गर्दनपर चढा हुआ है, तबतक ये संस्थान केवल चेतनाहीन कलेवरोंके समान ऐसेही सडते रहेंगे! १८५७के मानवी महासागरमें किसी राजा महाराजा या उनके उत्तराधिकारियोंके लिए थोंडेही तूफान आया था? वह तो स्वाधीनताके परम पवित्र ध्येयसे प्रक्षुब्ध हो उठा था। राजा या रंक, हर कोई मानव मरनेवाला है; किन्तु राष्ट्र कभी न मरना चाहिये, उसे मरने नहीं देना चाहिये। पराधीनताकी भीषण शृंखलाओंको तोडकर स्वदेशको स्वाधीन रखनाही उस समयका ध्येय था। और इसीसे उस साधनाका मार्ग राजप्रासाद या घर-झोंपडोंको स्मशान बनाते हुए बढनेवाला होनेपर भी, उस साधनाकी पूर्तिके लिए सार्वदेशिक युद्धकी तुरही फूँकी गयी। अन्य राजा तो मृतकके समान ही थे।

ग्वालियर, इंदौर, राजपूताना, तथा भरतपुर आदि रियासतोंकी जनताभी इस स्वातन्त्र्य-समरके आवेशमें, ब्रिटिशोंने जिन्हे दास बनाया था उनके समान ही, प्रक्षुब्ध हो उठी थी। 'अपनी रियासत तो सुरक्षित है, फिर क्यों इस व्यर्थके झगडेको मोल लें' यह क्षुद्र विचार किसीके मनमें

भूलसे भी न आया। उसी तरह 'हमारा संस्थान भलेही हथेली जितना हो, वह एक स्वतंत्र राष्ट्र है; या ब्रिटिश प्रांतोंकी जनतासे हमें कोई सरोकार नहीं, वे स्वशासित तथा पूर्णतया अलग देशविभाग है' इस प्रकारकी संकीर्ण भावना भी किसीके मनमें न थी। एकही मातृभूमिकी संतान और एक दूसरेसे परायोंके समान दूर? छिः नहीं: कदापि नहीं! अब १८५७ है; सारा भारत अब एकप्राण, अखण्ड, एकही भाविकी रस्सीमें पिरोया हुआ दीख पडता है।

इस लिए, ओ ग्वालियरके शिंदे! अंग्रेजोंके साथ भिडनेकी हमें अनुज्ञा दो; हाँ, केवल छूट नहीं, तुम हमारे नेता बन हमारे साथ रहो! 'स्वदेश' और 'स्वधर्म' के महामंत्रको जप कर, श्री महादजीका अधूरा कार्य पूरा करनेको अपनी सेनाके साथ रणमैदानमें चलो। सारा देश श्री जयाजी शिंदेके नामपर आस लगाये बैठा है। लगाओ! युद्धका नारा लगाओ। तब आगरा तुरन्त शरण माँगेगा, दिल्ली स्वतंत्र होगा, दक्खन गरज उठेगा, विदेशियोंको निकाल बाहर कर दिया जायगा, स्वदेश पराधीनताके पापसे मुक्त होगा और तुम? तुम इस देशकी स्वाधीनताका वरदान देनेवाले नरश्रेष्ठ बनोगे। बीस करोड मानवोंका जीवित अब एक व्यक्तिकी हाँ या ना पर डाँवाडोल है। इतिहासने ऐसा प्रसंग कभी नहीं देखा!

हाय, किन्तु वह एक शब्द बोलनेको शिंदेकी जीभ चिपक गयी और जब वह खुली, तब 'युद्ध' के बदले 'मित्रता' के बखान करने लगी। शिंदेने भारतसे नहीं, अंग्रेजोंसे मित्रता निबाहनेका निश्चय किया। यह मालूम पडतेही जनता क्रोधसे भडक उठी। शिंदे युद्धसे दूर रहना चाहते हों तो हम लडेंगे। मातृभूमिको मुक्त करने तुम न आना चाहो, तो तुम्हारे बिना, और ऐसाही समय आ जाय, तो तुम्हारे विरोधमें भी हम यह काम करेंगे। आजतक हम शिंदेके आ मिलनेकी राह देखते रहे, खैर, आजके सूरजके अस्ततक हम समय देते हैं। सूरज गर्क होगा और फिर 'हर, हर, महादेव'! वह उधर गाडीमें कौन जा रहा है? श्री. कूपलंड और उनकी पत्नी? और उनके स्वागतके लिए कौन आगे बढ रहा है? १४, जून १८५७के बाद फिरंगीको नमस्ते? अरे, वह देखो वहाँ ब्रिगेडियर आ

रहा है; न किसीने उसे वंदना करनेको हाथ ऊँचा किया, न गर्दन झुकायी। ठीक है, वह ब्रिगेडियर साब है। अरे भई, किसने उसे ब्रिगेडियर बनाया? फिरंगियोंने न? प्रासाद–शिखरपर बैठ जानेसे क्या कौआ गरूड बन जाता है? हाँ तो, ब्रिगेडियरके सामनेसे गुजर जाना; उसकी ओर झाँकना तक नहीं! ग्वालियरकी सेनाके सिपाहियोंने ब्रिगेडियरको माना न ध्यान दिया, सीधे चल पडे। * फिर भी शामतक सब शान्त रहा और तब एक बगलेमें आग लगी दिखायी पडी। हाँ, बलवेका महूरत आ लगा है शायद? तोपखानेवाले! उठो। पैदल पलटनवाले। एक हाथमें जलती मशाल, दूसरेमे चमकती करवाल लेकर, सिंहगर्जना करते हुए दश दिशाओंको गूँजा दो। भारतीय को गले लगाओ; गोरेका गला घोंटो। मारो फिरंगीको! तुम घरमे छिपते हो? अच्छा, तो उस बरहीको जला दो। आगसे बचनेको बगलेसे कौन भागा? गोरा है! उडा दो उसका सिर! खबरदार, मत मारो, रुक जाए; हम औरतोंपर हाथ नहीं उठाते! +

रातभर इसीतरह वह पैशाचिक नृत्य जारी रहा। ग्वालियर नगरहीमे केवल नही, शिंदेके राजमहलमें भी अंग्रेजोंका नामलेवा न रहना चाहिये। सभी गोरोंको शिंदेके प्रदेशसे ठेट आगरे तक भगा दिया गया। गोरी मेमोंको बदी बनाया गया। परायी स्त्रीसे बोलना अच्छा नहीं! किन्तु वह देखो; एक मेम उधर धूपमें जल रही है! पूछें तो! ‘ क्यों मेम साहब! यहाँकी धूप कैसी है? बहुत कडी है न? और इस समय तो आप उसे औरही कडी महसूस करती होंगी? आप अपने ठढे देशमें रहतीं तो ऐसी विपत्तिमें क्यों कर फँसतीं?” इस ‘ शैतानी ’ सलाहको देते हुए सुनकर, वह दूसरा आदमी क्या कह रहा है? “ अजी, आपको आगरे पहुँचाना है क्या? ओ हो। तुम्हारे आदमी तो कबके मारे गये है! मैने कहा, आगरा अब दिल्लीके सम्राटकी छत्रछायामें है? क्या, फिरभी आप वहाँ जाना चाहती है?” और हास्यकी एक लहर उठी! शिंदे तो मूर्तिके समान जम गया था! ग्वालियरकी सेनाने विद्रोह किया; सिपाहियोंने गोरे अधि-

* श्रीमती कूपलंड कृत ‘ नॅरेटिव्ह ’
+ श्रीमती कूपलंड कृत ‘ नॅरेटिव्ह ’

कारियोंका काम तमाम कर डाला। अंग्रेजी स्त्रीपुरुष, उनके ध्वज और सत्ता सब कुछ ग्वालियरकी सीमाके पार खदेडकर ग्वालियर स्वतंत्र कर दिया गया! इसके बाद क्रांतिकारियोंने शिंदेसे अपना नेतृत्व करनेको कहा। बताया गया, कि अपनी सारी सेनाके साथ आगरा, कानपुर और दिल्लीके टापूमें भारतीय स्वातंत्र्य-समरमें हाथ बँटाने शिंदे आ जायें। किन्तु शिंदे वादे करता गया (और तोडता भी!) और सिपाहियोंको रोकता गया। मालूम होता है, स्वयं तात्या टोपे गुप्तरूपसे वहॉ पहुँचने तक ग्वालियरकी सेना वहीं हाथपर हाथ धरे बैठी रहेगी। *

और तभी तो आगरेके अंग्रेजोंको अबभी आशा बँधी हुई है। आगरेमें रहनेवाला उत्तर पश्चिम सीमाप्रांतका ले. गवर्नर कोलविन तो मौतके डरसे हर समय कॉपता रहता है। मेरठवाले बलवेके संवादसे बिगडे हुए सैनिकोंके सामने इसीने 'वफ़ादारी' पर एक वक्तृता झाडी थी। क्षमाकी घोषणा भी इसीने की थी, किन्तु क्षमायाचना करनेवाला एक भी कायर सिपाही आगे तो न आया; उलटे, इस क्षमाकी घोषणाके प्रत्युत्तर स्वरूप सिपाहियोंने ५ जुलायी को आगरेही पर चढाई की! नीमच तथा नसीराबादके विद्रोही भी आगरे पर चढ आये। तब बितौली और भरतपुरके नरेशोंकी 'राजभक्त' सेनाको उनका मुकाबला करने रवाना किया गया। इन सैनिकोंने साफ बता दिया, कि "अंग्रेजोंके विरुद्ध उठनेका हमारा विचार कभी

* स ३५—शिन्देके लिए अपने राजको फिरसे स्वतंत्र करनेका बहुत बढिया मौका था। वह केवल बागियोंके प्रस्तावको स्वीकार कर लेता तो अंग्रेजोंसे बदला ले सकता। यदि वह बागियोंका नेता बनकर अपने मँजे हुए मराठा सैनिकोंके साथ रणमैदानमें चल पडता, तो हम अंग्रेजोंके लिए इसका परिणाम अत्यंत हानिकर सिद्ध होता। इसके साथ कमसे कम २० सहस्र सैनिक, जिसमें आधे अंग्रेजोंसे पूरी सैनिक शिक्षा पाये हुए होंगे, हमारे कच्चे मोर्चोंपर टूट पडते। आगरा और लखनऊ एकदम ले लिए जाते। हॅवलॉक इलाहाबादके किलेमें बंद हो जाता और या तो वह किला घेरा जाता, या उसे अलग रखकर, विद्रोही बनारसके रास्ते कलकत्तेपर जा पहुँचते।—रेड पॅम्फलेट पृ. १४१

न होगा, किन्तु हमारे देशबंधुओंपर हम कभी शस्त्र न उठायेंगे।" अंग्रेजोंके मुँहपर यह चपत पडी और वे निराश हो गये। हिंदी नरेश अंग्रेजोंसे वफादार थे, किन्तु उनकी प्रजा और सेना 'अपने देशबंधुओंपर हथियार उठानेको कभी सिद्ध न थी।' इससे, केवल गोरी सेना लेकर ब्रिगेडियर पॉलव्हिल आगरेपर चढ आनेवाले विद्रोहियोंका सामना करने चल पडा। दोनोंकी मुठभेड सास्सिह को हुई। दिनभर लडाई चालू रही। किन्तु क्रांतिकारियोंके सामने पैर जमाना दूभर होनेसे अंग्रेज हट गये। विजयसे उत्तेजित क्रांतिकारियोंने भेडियेके समान अंग्रेजोंका पीछा किया। जब गोरी सेना आगरे पहुँची, तो उनके पीठपर विजयकी पुकार करते हुए क्रांतिकारी भी दौड आये। वह सुअवसर, जिसकी ताकमें जनता थी, आज उनके हाथ लगा। यह ६ जुलाईका दिन था। पुलिसके नेतृत्वमें सारा आगरा नगर उठा! पुलीसके अधिकारी क्रांतिकारियोंसे अच्छीतरह सधे हुए थे। हिंदु-मुसलमान धर्माचार्योंका एक बडा जुलूस निकला। आगे कोटवाल तथा अन्य पुलीस अधिकारी थे। 'स्वधर्म, और स्वराज्यकी जय हो' के नारे लगाये गये और यह घोषित किया गया, कि अबसे अंग्रेजी सत्ताका अन्त होकर दिल्लीके सम्राटकी सत्ता चालू हो चुकी है।

इस तरह आगराके स्वतंत्र हो जानेपर पराजय के अपमान से लज्जित, भावीकी चिंतासे त्रस्त कोलव्हिनने किलेका आसरा लिया। उसे यही कुरेद पडी थी कि शिंदे क्या करवट लेता है? शिंदे क्रांतिकारियोंमें मिला—केवल इतने समाचारहीसे कोलव्हिन शरण जाता; किन्तु शिंदेकी 'वफादारी' के पत्रोंसे और उसकी सहायतासे यह स्पष्ट था कि शिंदे अंग्रेजोंके विरुद्ध खडा न होगा और मालूम होता है इसीसे आगरेपर अंग्रेजोंका झण्डा टिक सका। किन्तु उसे बनाए रखनेकी चिंताके बोझसे, हिंदुस्थानकी अंग्रेजी सत्ताको अत्यंत दुःखित दशामें छोडकर ९ सितंबर १८५७ को कोलव्हिन मर गया।

ग्वालियरकी जनता तथा सैनिकोंमें जो क्रांतिकारी मनोगति दीख पडी थी, उसके दर्शन इंदौरमें भी भयानक रूपमें हुए। मऊकी अंग्रेजी छावनीसे होलकरकी सेनाने गुप्त संबंध प्रस्थापित कर लिया था और तय हुआ था कि दोनों मिलकर बलवा करें। १ जुलाईको इंदौर दरबारके

सआदत खॉ नामक प्रतिष्ठित सरदारने रेसिडेन्सीकी गोरी सेनापर धावा बोलनेकी आज्ञा दी। उसने बताया कि महाराजा होलकरने उसे यह सूचना दी है। पर हिंदी सेनाको इस अनुरोधकी आवश्यकता ही न थी। उन्होने स्वाधीनताका झण्डा फहराया और तुरन्त रेसिडेन्सीपर धावा बोल दिया। वहॉके हिंदी सैनिकोंने अंग्रेजोंके लिए अपने भाइयोंपर बंदूके ताननेसे साफ इनकार किया, जिससे अंग्रेजोंके छक्के छूटे और वे इदौरको भाग गये। रेसिडेन्सीवाले हिंदी सैनिकोने गोरोको जीवित रखना मान्य किया था और अन्ततक वे उनकी रक्षा करते रहे। अंग्रेज ग्रथकार हमेशा बडी छानबीन करते रहे है कि 'महाराजा होलकरका झुकाव अंग्रेजोंकी ओर था, या क्रांतिकारियोंकी ओर'? किन्तु १८५७के इतिहास तथा उस समयकी स्थितिका बारीकीसे परीक्षण करनेवालेको पता चलेगा, कि बहुतेरे नरेशोंने इस ढुलमुल नीतिका अवलंबन किया था। मानवमात्रमें स्वाधीनताकी इच्छा जन्मसे होती है। क्रांतिकी हार न चाहनेसे उन्होंने अंग्रेजोंकी सहायता न की, जहॉ उनके इस डरसे, कि कहीं कभी अंग्रेज क्रांतिको दबानेमें सफल हो जाय तो इनके राज या जागीरें जब्त करनेका एक बहाना मिल जायगा। उन्होंने क्रांतिकारियोंकी कुछ विशेष सहायता न की। बहुतेरे नरेश, क्रांतिकी सफलताकी स्पष्ट सम्भावना दीख पडते ही, स्वाधीनताका झण्डा फहराना चाहते थे।

इस प्रकार उन्होंने अंग्रेजोंकी विजयका रास्ता साफ कर दिया! उनकी अक्ल मारी गयी थी, वे इतना न समझ पाये, कि यदि वे क्रांतिकारियोंके पक्षमें जाते तो अंग्रेजोको सफल होनेकी रच भी आशा न रह पाती, और यदि वे तटस्थ रहते तो, क्रांति की सफलतामें सदेह पैदा हो जाता था। उस कठिन समयमें बहुतेरे हिंदी नरेशोंकी ढुलमुल नीति का यही सच्चा विश्लेषण है। जनता और सैनिक अंग्रेजोंको रेसिडेन्सीसे निकल बाहर करते हों, तो भले करें! इसका मतलब केवल इतनाही होगा कि संस्थान स्वतंत्र है! फिर भी, कहीं अंग्रेज विजयी हो तो जो कुछ अपना है उसपर ऑच न आय इसलिए अंग्रेजोंसे मित्रताका राग वे सदा अलापते रहे। यही रुझान, कच्छ, ग्वालियर, इंदौर, बुंदेलखण्ड, राजपूताना, आदि स्थानोंके नरेशोंने लिया था।

और हिंदी रियासतियोंके स्वामियोंने इस स्वार्थपरक मनोगतिके कारणही क्रांतिका गला घोंट दिया। दोनोंमें पॉव न रखकर यदि हिम्मत और एकही निश्चयसे---स्वाधीनता या मौत---वे आगे बढते तो अवश्य वे स्वतंत्र हो जाते। किन्तु स्वार्थसे अंधे बने और 'दुविधामें दोनों गये, माया मिली न राम' वाली गतिको पहुँचे। उनके मनमें भलाई की मात्रा बहुत कम और नीच स्वार्थकी मात्रा बहुत अधिक होनेसे उनकी भलाई बेकार गयी; हॉ, हीन वृत्ति समारके सामने प्रकट हुई। पटियाला तथा अन्य कुछ नरेशोंके समान वे खुल्लम खुल्ला देशके दुश्मन न थे; फिरभी अप्रत्यक्षरूपसे उन्होंने विश्वासघात का काम किया। स्वतंत्र होनेकी उच्च आकांक्षा होते हुए हेय स्वार्थको उसपर हावी होने दिया और इसीसे उस पापके लिए उनकी घोर निंदा हुई। अब इस पातकका प्रायश्चित्त वे कब करेंगे ? कब इस काले धव्वेको धो डालेंगे ?

किन्तु जहॉ हीन स्वार्थपरक मनोगतिने हिंदी नरेशोंको इस हीन दशाको पहुँचाया, वह नीच स्वार्थ उनकी प्रजाके मनमें क्षणभर भी न जम सका। और मात्र इसी जनताकी शक्तिके प्रचंड, आक्रमक विद्रोहसे सारे भारतको लगे पराधीनताके शापको भस्म करनेको पेशावरसे कलकत्तेतक विप्लवकी आग भडकी और खूनकी नदियॉ बहीं! जनताहीके आपसी एके तथा बलके प्रभावसे और निःस्वार्थ लडाईसे कुछ समय तक सही, अंग्रेजी शासन एक बार उखाड कर उसे धूल चाटनी पडी।*

* स. ३६। जहॉभी हिन्दी नरेशोंने क्रांतिमें शामिल होनेमें ननु-नच किया, उनकी प्रजा बेकाबू हो जाती, अपने राजाका जुवाडमी फेंक देने को सिद्ध हो जाती, यदि वह राष्ट्रीय युद्धमें न आय। प्रजाकी यह अनोखी मनोगति देखकर मॅलेसन कहता है :- "ग्वालियर, इन्दौरकी तरह यहॉ भी यह स्पष्ट दीख पडा, कि जब पूरबके लोगोंकी धर्मभावना पूरीतरह उभाडी जाय, तो उनका स्वामी, उनका राजा भी जिसे वे अपने पिताके समान मानते हैं, प्रभुका अंश मानते हैं, उनकी श्रद्धा के विरुद्ध उन्हे झुका नहीं सकता"

(पृ. २५५ पर चालू)

इस प्रलयंकारी भूकंपका अदाजा कलकत्ता और इग्लैंड भी ठीक तरहसे न लगा सके ! वहाँकी सरकारके विचारमे तो मेरठवाले बलवेके पहले देशभरमें शान्तिका वातावरण था। मेरठके उठनेपर तथा दिल्लीसे स्वतन्त्रताकी प्रकट घोषणा होनेपर भी इस भडाकेका अर्थ ही कलकत्तेवाले अग्रेजोंकी समझके बाहर रहा। १० मई से ३१ मई तक बलवेकी छोटी लहर भी न देखकर कलकत्तेके उस मतकी—भारतमें विशेष अशान्ति नहीं है—पुष्टीही हुई। २५ मईको गृहमंत्रीने प्रकट रूपसे कहा, 'कलकत्तेके केंद्रसे ३०० मीलोंके व्यासार्द्धमें पूर्ण शान्ति बनी रही है। बीचमे क्षणिक तथा कहीं कहीं खत-रेका रूप दीख पडता था वह अब नष्ट हो गया है। हमें दृढ विश्वास है, कि अब थोडेही समयमें पूर्ण शान्ति और सुरक्षाका साम्राज्य हो जायगा'।

वह थोडाही समय कब का लद गया था। ३१ मई की पहली किरणोंने भूमिको स्पर्श किया तब 'शान्ति और सुरक्षाका साम्राज्य' सबदूर स्थापित हो चुका था। लखनऊकी रेसिडेन्सीके चौफेर, कानपुरके मैदानमे, झाँसीके जोगनबागमें, इलाहाबादके बाजारमे, बनारसके घाटोंपर, सबठौर, "शान्ति और सुरक्षा' हीका साम्राज्य फैला हुआ था। तार टूटे हुए थे, पुल उडा दिये गये थे, रक्तकी नहरोंमें गोरोंकी लाशें बह चली थीं, फिरभी सर्वत्र शान्ति और सुरक्षाका राज था !

हाँ, तो तब जाकर कहीं कलकत्तेवालोंकी आँखे खुली! १२ जूनको अंग्रेज नागरिक स्वयंसेवक दल खडे करने लगे। गोरे व्यापारी सौदागर, क्लर्क, लेखक, नागरी अधिकारी—मतलब हर एक गोरा बडी फुर्तीसे सेनामें अपना नाम लिखवाने लगे। इन सबको तुरन्त सामूहिक सचलन और रायफल चलाना सिखाया गया। यह काम इतनी फुर्ती तथा उत्साहसे पूरा किया गया, कि तीन सप्ताहोंमें इन नौसिखिये स्वयसेवकोंकी एक स्वतंत्र पलटन बनी। इसमें रिसाला, पैदलसेना एव तोपखाना भी था। कलकत्तेकी रक्षाके लिए यह सेना पर्याप्त होनेका विश्वास हुआ, तब उसेही यह दायित्व

" जयपुर तथा जोधपुर नरेशोंके सिपाहियोंने अपने राष्ट्रके लिए झुझनेवाले अपने भाइयोंपर हाथ उठानेसे साफ इनकार कर दिया, स्वयं अपने राजाके कहनेपर भी ! मॅलेसन कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड ३, पृ. १७२.

सौंपा गया; और पेशावर तथा मँजे हुए सैनिकोंको उस स्थानमें भेजनेका अंग्रेजोंको अवकाश मिला, जहाँ क्रांतिका जोर बढा था।

१३ जूनको लेजिस्लेटिव्ह कौन्सिलकी एक बैठक बुलाकर लॉर्ड कॅनिगने समाचारपत्रोंके विरुद्ध एक निर्बंध (ॲक्ट) सम्मत करा लिया। क्यों कि, क्रांतिका श्रीगणेशा होतेही बंगालके सभी हिंदी समाचारपत्र क्रांतिकारियोंमें सहानुभूति बताकर उन्हें प्रोत्साहित करनेवाले लेख लिखने लगे थे।

रविवार दिनांक १४ जूनको ' शान्ति और सुरक्षाका ' एक खासा हंगामा कलकत्तेमें भी जारी था। उस दिनके सभी दृश्य हम एक अंग्रेज लेखककी लेखनीद्वारा अच्छीतरह पाठकोंको दिखाना चाहते हैं। " सर्वत्र गडबडी, हो हल्ला, अशान्ति मची हुई थी। भयंकर समाचार तो लगातार आ ही रहे थे। ' बारिकपुरकी सेना कलकत्तेपर आ रही है! उपनगरोंकी जनता पहलेही बलवा कर चुकी है! अवधके नवाब अपनी सेनाद्वारा ' गार्डन-रीच'को लुटवा रहा है। ऐसी बातोंपर तो हर किसीका विश्वास हो गया था। बडे अधिकारियोंहीने जनतामें घबराहट फैलाना प्रारंभ किया था। उनमें कौन्सिलके सदस्योंके पास जाकर दौड धूप करनेवाले तथा अपनी पिस्तौलें 'भर'कर, दरवाजोंके सामने ओटें बनाकर, सोफेपर सोनेवाले स्वयं ' गवर्नमेंट सेक्रेटरी ' थे। उसी तरह घरबार छोडकर बालबच्चोंके साथ जहाजपर आसरा लेनेवाले कौन्सिलके सदस्य इनमें थे। उनसे नीची श्रेणीके कर्मचारी झुंडके झुंड, अपने ' बडों 'की करतूतसे आवश्यक सीख लेकर किलेकी तोपोंकी छायामें निर्भय बैठे रहनेके लिए अपनी घरकी सभी चीजें जमाकर, किलेके रास्ते चल पडे थे। भयकी कल्पनासे निर्मित क्रूर कसाइयोंकी कक्षासे दूर पहुँचानेके लिए इन कायरोंके लिए घोडे, गाडियाँ पालकियाँ, और अन्य सब प्रकारकी सवारियाँ मँगवायी गयी थीं। उपनिवेशोंमें तो ईसाई बस्तीका लगभग हर एक घर खाली हुआ था। पांच छः आदमी, जान हथेलीपर लेकर जो आ जाते, तो लगभग पौना शहर जलाकर भस्म कर दे सकते— — —!" *

अंग्रेजोंकी राजधानीमें केवल अफवाहोंका बाजार गर्म होते ही इतनी

* रेड पॅम्पलेट पृ. १०५

'शान्ति और सुरक्षा' बनी रही थी। सो, इस सारे हंगामेकी जड़ बारक-पुरके सिपाहियों तथा अवधके नवाबको नष्ट करनेका इरादा 'सरकार' ने किया। बारकपुरके सिपाही १४ जूनको उठनेवाले हैं, यह संवाद देनेवाला व्यक्ति, उन्हीं सिपाहियोंमें, गोरोंको मिला। तब गोरोंने पहलेही तोपोंका भय दिखाकर, उन्हें पकड़कर उनसे शस्त्र रखवा लिये गये और १५ जूनको 'राजकी सुरक्षाके हेतु' नवाबको उसके मंत्रीके साथ गिरफ्तार किया गया; तथा जनानेके साथ सारे निवासस्थानकी तलाशी ली गयी। तलाशी में आपत्तिजनक कुछ भी न मिला, तो भी नवाबको और उसके वज़ीर को कलकत्तेके किलेमें बंद कर दिया गया। इस तरह ठीक चिनगारी पड़ने के ऐन मौकेपर कलकत्तेमें रखा हुआ ज्वालाग्राही कोठार धीरे धीरे खाली कर दिया गया।

कलकत्तेके एक बगीचेके मामूली घरमें रहनेवाले वज़ीर अली नकीखाँ ने अपने नवाबको अवधके सिंहासनपर फिरसे प्रस्थापित करनेके उद्देशसे सब सिपाहियों तथा बंगालभरमें क्रांतिकारी संस्थाओंका संगठन किया था। किन्तु उसीके पकड़े जानेसे, मानो, क्रांतिका मस्तिष्क ही चूर पड़ा। किलेमें बंद रहते हुए, एकबार क्रांतिकारियोंको भद्दी गालियाँ देनेवाले अंग्रेजोंको उसने खरी सुनायीं—'भारतभरमें भड़की हुई यह घनघोर क्रांति मेरे विचारमें पूरी तरह न्यायपूर्ण है! अवध हड़प जानेका यह ठीक प्रतिशोध है। सत्य और न्यायके सीधे रास्ते चलनेके बदले तुम जानबूझकर स्वार्थ तथा झूठकी कंटकपूर्ण पगडण्डी पर चले, फिर जब उन्हीं काँटोंसे तुम्हारे पाँव लहूलुहान हो जायँ, तो इसमें अचरज क्या है? प्रतिशोधके बीज बोते समय तुम हँसते थे, फिर जब उन्हीं बीजोंमें, मौसम आतेही, कड़ुए फल लगे तो दूसरोंको कोसते और गालियाँ क्यों देते हो?'*

हाँ तो, १८५७ के विप्लवके विस्तारके बारेमें स्वयं कलकत्तेमें इस

* रेड पॅम्फ्लेट।

प्रकारकी अस्पष्ट तथा भ्रमपूर्ण कल्पना थी। फिर, जब इग्लैंडको भारतसे मिलनेवाले पत्रोंके समाचारोंपर निर्भर रहना पडता था, तब इग्लैंड प्रारंभही से अज्ञानकी घोर निद्रामें लम्बी ताने सोता होगा और जागने पर भी घबराहटके कारण सिरफिरेके समान किस तरह पागल बनके काम करता होगा इसकी कल्पना, पाठक, तुम सहजमें कर सकते हो। बारकपुर, बहरामपुर, डमडम तथा अन्य स्थानोंके सवाद जब इंग्लैंड पहुँचे, तब वहाँ सबके कान खडे हो गये और आँखे भारतकी ओर लगीं। किन्तु अल्प समयमें सब शान्त हुआ और मामला ठढा पड गया। ११ जूनको हाऊस ऑफ कॉमन्समें बोर्ड ऑफ ट्रेड (व्यापार समिति) के अध्यक्षने एक प्रश्नके उत्तरमें कहा :"बगालमें अबतक प्रकट हुए अशान्तिसे इतना डर जानेका कोई कारण नही है, क्यों कि मेरे सम्माननीय मित्र लॉर्ड कॅनिंगकी अडिग नीति, ताबडतोड इलाज तथा जीवटके कारण सेनामें फैलायी गयी अशान्तिको जडसे उखाड दिया गया है।" ११ जूनको पार्लियामेंटने यह शेखी सुनी और उसी दिन भारतमे ११ रिसालेके विभाग, ५ तोफखानेके दल और ५० पैदल विभाग तथा छप्पर मैनाके सभी कामगार खुल्लमखुल्ला विद्रोही बने थे! सारा अवध प्रात क्रातिकारियोंने हथिया लिया था; कानपुर, लखनऊ घेरे गये थे; सरकारी खजानेसे क्रातिकारियोंने लगभग एक करोड रुपये उडाये थे! और यह सब किस समय? जब कि "कॅनिंगकी अडिग नीति, ताबडतोड इलाज और जीवटसे सेनामें बोयी हुई अशान्तिको जडसे उखाडा गया था" तब!!

किन्तु क्रांतिके बीजके असाधारण तथा आकस्मिक रूपसे फूट निकलनेके संवादसे फिर जल्दही इंग्लडकी नींद खराब हुई। कानपुरके हत्याकाण्ड का सवाद किसी तरह इंग्लैंड पहुँचा! तब १४ अगस्त १८५७को भयसे बेचैन, अभागे, बौखलाये अंग्रेजोंने हाउस लॉर्ड्समें यह प्रश्न पुछवाया— "क्या कानपुरके समाचार सही है?" अर्ल ग्रेनव्हिलने उत्तर दिया— "मुझे जनरल पॅट्रिक ग्रॅटसे व्यक्तिगत पत्र मिला, जिसके अनुसार कानपुरके हत्याकाण्डका संवाद एकदम बेबुनियाद तथा निश्चित बनावटी है। यह अफवाह किसी सिपाहीने उडा दी है। उसके इस कमीने उधमकी पोल खोलकरही अंग्रेज चुप न रहे, वरंच उस

सिपाहीको फॉसीपर भी लटकाया गया।"* कानपुरकी इस 'अफवाह' की चर्चा जब लॉर्डस्में हो रही थी, तब उसका 'सत्य' रक्तकी लाल स्याहीसे, भयानक अक्षरोंमें लिखा जाकर एक महीना बीत चुका था! कानपुरकी 'गप' हॉकनेवाले सिपाहीको फॉसीपर लटकाकर इग्लैंडके राजनीतिज्ञ अभी आराम ही कर रहे थे, कि मूर्तिमान् सत्यही इग्लैडके किनारेपर उतरा! अंग्रेजी प्रतिष्ठापर पडे इस जोरदार चपतसे क्रोध, आवेग तथा बदलेके भावोंसे सारा इग्लैंड पागलपनके दौरेसे चकराने लगा। हडकाये कुत्तेके समान समूचा इग्लैंड मार्गमें कुहराम मचाने लगा! और यह पागलपनका दौरा आजतक जारी है। आज भी अंग्रेजी इतिहासकार हर पंक्तिमे लिखते आये है, कि क्रातिकारियोंने जो हत्याऍ की, वह निस्सदेह पैशाचिक क्रूरता थी तथा मानवताके पवित्र नाममें उससे कालिख लगी है।

और इस अंग्रेजी चिल्लाहट तथा कोलाहलसे सारे ससारके कान बधिर हो गये। १८५७ का केवल स्मरणही हर एकके रोऍ खडे कर देता है और लज्जासे अपनी गर्दन झुकानी पडती है! सत्तावनके क्रातिवीरोंके नामोका उल्लेख भी, न केवल शत्रुओंके, दुनियाके अन्य लोगोंके, बल्कि इन हुतात्माओंने अपना रक्त जिनके लिए बहाया उन भारतीयोंके, मनमें भी घृणा और अनादर पैदा करता है। उन वीरोंके शत्रु तो उन्हे राक्षस, पिशाच, खूँखार, नारकीय कीडे आदि विशेषण लगाते है। तटस्थ लोग उन्हे जगली, अमानुष, क्रूर, असभ्य कहते हैं, जहॉ भारतीय लोग उन वीरोंको स्वकीय कहते भी शरमाते है। और १८५७ के समय ही नहीं, आज भी वही स्थिति, वही पुकार जारी है। और इस अखण्ड आक्रोशसे ससारके कान इतने बधिर कर दिये हैं, कि सत्य की आवाज उनके कानोंमें जा ही नहीं सकती! क्रातिकारी "शैतान!," नरपिशाच!' स्त्री-बाल घातक!' 'खूँखार नारकीय कीडे!' हायरे ससार! यह भ्रम तेरे मनसे कब दूर होगा? सत्य तू कब समझेगा?

और यह सब क्यों! ये गालियॉ किस लिए? जानते हो? स्वदेश और

---

* चार्लस् बॉल कृत इडियन म्यूटिनी

स्वधर्मके लिए अंग्रेजोंके विरुद्ध उठकर, 'प्रतिशोध' के नारे लगाते हुए, कुछ क्रांतिकारियोंने कुछ अंग्रेजोंकी निर्दयतासे हत्या की, इस लिए !

> अविवेकी हत्या सदाही घृणित पाप है। जिस समय सारी मानव जाति आत्यंतिक न्याय तथा परमानन्दके विश्वात्मक आदर्शको पँहुच पायगी, जिस समय ईश्वरीय विभूतियों, पैगंबरों तथा धर्मोपदेशकों से वर्णित रामराज्य इस भूलोकपर हर एकके अनुभवकी बात बन जायगी, जब ईसामसीहके उस देववाणीसे दिया उदात्त उपदेश— "जो कोई तेरे एक गालपर चाँटा मारे उसके आगे दूसरा गाल कर दे"—पर, इस आत्मसमर्पणके उपदेशपर, उस समय पहले गालपर मारनेवाला ही न रहनेके कारण, अमल करना असम्भव होगा तभी—उस सत्ययुगमे—यदि कोई विद्रोह करेगा, रक्त की एक बूँद गिरायगा, यहाँ तक, 'प्रतिशोध' शब्द तक उच्चारण करेगा, तो उस पापीको उस क्रूरताके केवल उच्चारणहीके लिए अनत कालतक रौरव नरकमें डुबोनाही ठीक होगा।

हर एक हृदयमे जब सत्यधर्मका उदय होगा, तब 'विद्रोह' की प्रवृत्ति भी बहुत दुष्ट पाप मानना योग्य होगा। न्यायनीतिके सूरजकी किरणें जब हर आत्माको उज्ज्वल बनायेंगीं तब 'प्रतिशोध' का उच्चारण भी सचमुच पातक माना जायगा, जाना भी चाहिये ! सत्यधर्मके उस निरपवाद न्याय-पूर्ण युगमें 'बदला' के पापी शब्द बोलनेवाले पातकीको दण्ड देना, निस्संदेह, अदूषणीय माना जाय !

किन्तु जबतक वह सत्ययुग इस भूलोकपर उतरा नहीं है, जबतक वह परमानन्दका आदर्श शुभ काल, संतमहन्त तथा प्रभुके प्यारे पुत्रके भविष्य-कथनही में गूँथा पडा है, जबतक वह निरपवाद न्याय हमारे अनुभव की बात बनानेके लिए मानवी मन अपनी पापी और आक्रमक प्रवृत्तिको नष्ट करनेमे सफल नहीं हुआ है, तबतक विद्रोह, रक्तपात और प्रतिशोधकी गिनती नितात पातकोंमें कभी न होनी चाहिये। जबतक 'शासन' शब्दका उपयोग 'अधिकार' न्याय्य और अन्याय्य दोनों अर्थमें किया जाता हो, तबतक उसका प्रतियोगी शब्द 'विद्रोह' भी न्याय्य और अन्याय्य दोनों

अर्थमे उपयुक्त हो सकेगा। इसीसे, गत इतिहास या क्राति, रक्तपात, प्रतिशोध के कारण बने व्यक्तिके बारेमे किसी प्रकारका बयान करनेके पहले, उन वर्गोंके बनावकी जडमें होनेवाली परिस्थितिकी बहुत बारीकीसे तथा सब पहलुओंसे जॉच करना आवश्यक है। क्राति, रक्तपात, बदला, अन्यायको जडसे उखाडकर सत्यधर्मका प्रारभ करनेके लिए प्रकृतिके बक्षे हुए साधन हैं। और अपने उद्धारके लिए इस प्रकारके भयानक साधन प्रत्यक्ष न्यायदेवता ही जब बरतता हो, तब उसका दोष न्यायदेवतापर नहीं, वैसी परिस्थितिकी जडमे होनेवाले अन्यायपर ही लागू होता है। अन्यायके पीछे होनेवाली पीडक शक्ति तथा उद्दण्डता ही इन साधनोंके उपयोगको निमत्रण देती है। मृत्युदण्ड देनेवाले न्यायासनको कभी कोई खून बहानेका दोषी नहीं ठहराता! उलटे, फॉसीके फंदेमें लटकनेवाला अन्याय ही इस दोषका एकमेव स्वामी होता है। और इसी लिए ब्रूटसकी तलवार पवित्र! इसीसे शिवाजीका बिछुवा वदनीय! इसी लिए इटलीकी क्रांतिमे बहा खून भी परम मगल! इसी लिए विलियम टेलका तीर दैवी! इसी लिए चार्लस् (१ म)का कत्ल न्यायपूर्ण कार्य! साराशमे, पैशाचिक क्रूरताके पापका भार उन्हींके सिर रहेगा जिन्होंने अन्याय कर उस क्रूरताको छेडा।

और, ससारमें क्राति, रक्तपात तथा प्रतिशोधका भय न होता तो बेरोक लूट खसोट तथा अत्याचारोंकी पाशविक धूमके नीचे यह पृथिवी दबोच जाती। आज या कल, जल्द या देरीसे, अन्यायका प्रतिशोध लेनेवाला शासक प्रकृतिही पैदा करेगी यह डर यदि अत्याचारी अन्यायको न होता, तो इस भूमण्डलपर जार जैसे तानाशाही और खूनी डाकुओंका दौरदौरा हो जाता! किन्तु हर हिरण्यकश्यपूको नरसिह, हर दुःशासनको उसका भीम, हर अत्याचारीको उसका शासक, हर सेरको सवासेर मिलता है, जिससे ससारको कुछ आशा है, कि अन्याय और अत्याचार सदा बने रह नहीं पायेंगे। इससे, प्रतिशोधका मतलब है, अन्यायको हटानेके लिए होनेवाली प्राकृतिक प्रतिक्रिया। और, तब, प्रतिशोधकी क्रूरताका पातक, मूल अन्यायी दुराचारीके सिर अवश्य उलट पडता है।

इसी उदात्त प्रतिशोधका अंगार १८५७में भारतके हर सपूतके हृदयमें धधक रहा था। उनके सिंहासन चूर कर दिये गये थे; उनके राजमुकुट टुकडे टुकडे कर दिये गये थे; उनकी जागीरे जब्त कर ली गयी थी; उनकी सत्ता कौडी कीमतकी कर दी गयी थी; केवल तोडनेके लिए दिये हुए वचनोंसे उन्हे धोखा दिया गया था; और अपमानो और खुले अत्याचारोंमें तो तूफान आ गया था। लज्जास्पद मानखण्डनाकी गहरी गर्तामें लोग मुँहतक डूबे हुए थे। उन्हे अपने जीवनमें किसी प्रकारका कोई रस न था। जिस तरह याचनाओका कोई उपयोग न था, उसी तरह अर्जियों, प्राथनाओं, शिकायतों, विलापों या आक्रोशोका रत्तीभर उपयोग न था! ऐसे प्रसंगमें प्राकृतिक प्रतिक्रियासे 'बदले' की कुलबुलाहट सुनायी पडने लगी। इतने अनगिनत पैशाचिक तथा जबरदस्तीके अन्यायोंके बोझसे हिंदुस्थान इतना दबोच गया था, कि हर अन्यायका 'बदला' लेना भी न्याय्य होता। इतनेपर भी भारतमें क्राति न होती तो फिर कहना पडता 'भारत मर चुका है'। किन्तु क्रोधसे जलकर समूचा राष्ट्रही जब उठा, तब उस प्रकारके अविवेकी हत्याकाण्ड हिंदुस्थानके हर स्थानोंमें होनेके बदले एक दो स्थानोंमें सीमित क्यों रहे, इसपर अचरज होता है। क्यों कि, इन हत्याकाण्डोंके कर्ताओंका प्रक्षुब्ध तर्कशास्त्र खडा सवाल करने लगा "अन्यायपूर्ण दानवी शक्तिके दमनको उग्र शक्ति-प्रदर्शनही की आवश्यकता है।" काली नदीकी लडाईमें बंदी सिपाहियोंको फॉसीपर लटकानेके पहले, पूछा गया था, कि अंग्रेज औरतों और बच्चोंको उन्होंने क्योंकर मारा। फटसे सीधा जवाब मिला 'सापको मारकर उनके पिल्लोंको कौन खुला छोड देगा? कानपुरवाले सिपाही तो सदा कहते, कि अंगार कजलानेपर चिनगारीको चमकने देना, या साप मारकर उसके बच्चोंको छोड देना कहॉकी बुद्धिमानी है?"

कालीके सिपाहियोंके सीधे प्रश्नका उत्तर 'साहब' क्या देता? और मुँहतोड सवाल—जैसा कि अंग्रेज शिष्टताका दम भरकर कहते हैं—केवल भारतके प्रक्षुब्ध लोगोंने या एशियाई लोगोंने ही किया था, सो बात नहीं है। जहॉ जहॉ भी राष्ट्र-व्यापी युद्धका प्रारभ होता है, वहॉ राष्ट्रीय अपमानका बदला, हमेशा शत्रुराष्ट्रका खून बहाकर ही लिया जाता है। स्पेनवालोंने मूरोंसे जब अपनी स्वतन्त्रता

फिरसे प्राप्त की तब मूरोंकी उन्होंने क्या गत की ? स्पेनवाले न हिंदी है, न एशियाई ! फिर जो मूर स्पेनमें लगभग पाच सदियोंसे अधिक समय टिके थे उनपर टूटकर, स्पेनवालोंने इनके स्त्री-पुरुष-बचोंकी निर्दयतासे तथा अमानुष हत्या की, वह क्या केवल इसी लिए की मूर अन्य वशके थे ? १८२१में इक्कीस सहस्त्र स्त्री-पुरुष-बालकोंकी हत्या भी यूनानने क्यो कर की ? युरोपवाले जिसे वद्य मानते हैं वह हेटेरिया नामक गुप्त सस्था इस हत्याका मण्डन कैसे करेगी ? यही कहेगी न ? कि यूनानमें तुर्कियोंकी जन-सख्या देशमें रहे तो थोडी, किन्तु निकाल बाहर करनेमें प्रचड होनेसे लाचार होकर उन्हें कत्ल करनाही उस समय बुद्धिमानीकी तथा आवश्यक नीति थी ! और भारतके लोगोने भी तो यही उत्तर दिया था न ?, ‘ सापको मार उसके पिल्लोकों छोड देना हो तो फिर सॉपको मारनेसे क्या लाभ ? ’ यही विचार यूनानियोंके मनमे आकर उन्होंने अपनी प्राकृतिक दया भावनाही को दबा दिया था। मतलब, सॉपको कुचलनेके सभी उपायोंका दोष, अन्तमें सॉप के अपने प्राणघातक विष पर आ पडता है।

और, सचमुच, अपनेपर होनेवाले भयकर जुल्मी अन्यायोका बदला लेनेकी प्राकृतिक प्रवृत्ति यदि मानवके हृदयमें सदा जागरित न रहती, तो सभी मानवी व्यवहारोंमे मानवके अंदरके ‘ पशु ’ ही को महान् स्थान प्राप्त हो जाता। अपराधको दण्ड देना, क्या, दण्ड विधानका एक महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं होता है ? *

इतिहासकी साख है, कि जब जब पराकाष्ठाको पहुँचे जुल्मों और अन्यायोके परिणाम स्वरूप मानवके अंतस्तलमे आत्यंतिक प्रतिशोधका भाव प्रचण्ड आवेगसे बेकाबू होकर भडक उठता है, तब तब राष्ट्रके जीवन विकासमें, अन्य. प्रसगोंमें अक्षम्य ठहरनेवाली आम हत्याएँ तथा अमानुष अत्याचार हो जाना, अनिवार्य होता है। इसीसे १८५७के भारतीय क्रातियुद्धमें चारपाच स्थानोंमें हुए हत्याकाण्डोंकी क्रूरतासे दॉतोंतले उँगली दबानेकी आवश्यकता नही है;

---

* स. ३७। सर वि. रसेल-लदन टाइम्सके सवाददाता-की डायरी पृ. १६४.

उलटे, अचरजकी बात यह है, कि ऐसे क्रूर हत्याकाण्ड इतनी थोडी मात्रामें हुए, और इस भयकर प्रतिशोध–भावनाकी लपट देशभरमें स्थान स्थानपर सभीको अपने फैलावमें भस्म करती हुई क्योंकर न बढी? अंग्रेजी बनियोंके पाशविक जुल्मोंसे सारा हिंदुस्थान अंजरपजर होनेतक घेरा गया था। अर्थात् यह दशा जब पराकाष्ठाको पहुँची, तब भारतीय जनशक्तिने भी उस अन्याय और जुल्मको कसकर थप्पड मारी। उस प्रसगमें जो कत्लें हिसाब चुकानेके रूपमें हुई वे हदसे अधिक तो थीं ही नहीं; उलटे यह दीख पडेगा, कि किसी भी राष्ट्रमे राष्ट्रीय अपराधोंके लिए जो दण्ड उस राष्ट्रसे, आक्रमक तथा पीडक राष्ट्रको, दिया जाता है उससे बहुतही कम मात्रामें हुई थीं। क्रॉमवेलके कार्यकालमे हुए आयर्लंडके हत्याकाण्डमें जिस क्रूर पातकोंका दायित्व समूचे इग्लिश राष्ट्रपर था, उतना प्रतिशोध, उतना रक्तपात और उतना उग्र दंड, हिंदुस्थानने अपनेपर किये गये अत्याचारों तथा अन्यायोंका न्यायपूर्ण प्रतिकार करनेके लिए १८५७ में, नहीं किया इस बातको मानना ही पडेगा। आयरिश लोगोंके करारे देशाभिमानसे क्रॉम्वेलके तनबदनमें कैसी आग लगती थी, उस अभागे देशमे उसने लहूकी नदियाँ कैसे बहाईं, अंचलमे पीनेवाले नन्होंके साथ असहाय औरतोंकी निष्ठुर हत्या कर उन्हें खूनके खातमें ही कैसे छोडा जाता था, राष्ट्रके लिए लडनेवालोंही को नहीं, बेकसूर गरीब जनताको भी मूली गाजरकी तरह कैसे काटा गया और इस तरह देश जीतनेके पापी हेतुसे भयकर बदला, और उससे भी भयकर खून खराबी आदिसे क्रॉम्वेलके हाथ कैसे रंगे हुए थे, क्या, इसका विवरण इतिहास हीने दिया नहीं है? दूसरी ओर १८५७ में हिंदुस्थानमे नानासाहब, अवधकी बेगम, बहादुरशाह तथा लक्ष्मीबाईने प्रतिशोधके भयकर आवेगसे भान भूले सिपाहियोंके हथियारोंसे अंग्रेजोंकी औरतों तथा उनके बच्चोंकी रक्षा करनेका उदात्त जतन अन्ततक किया। किन्तु कानपुरमें अपने पिता, भाई, बच्चे, पति आदिके प्राण बचानेवाले नानासाहबको उन्ही अंग्रेज औरतोंने क्या पारितोषिक दिया? यही, कि उन्हींका विश्वासघात कर खुफियाका काम किया! और जिन अंग्रेज अफसरोंके प्राण हिंदी लोगोंने बचाये थे, उन्हीं अंग्रेज अधिकारियोंने अपने उपकारकर्ताके उपकार कैसे चुकाये?

इतिहासभी बडी लज्जाके साथ साख भरता है, कि इन अंग्रेज अधिकारियोंने गोरे सैनिकोंके कान, बदले की झूठी और भडकानेवाली बातें गढकर भर दिये, उनका नेतृत्व कर क्रांतिकारियोंपर हमले किये, विद्रोही सिपाहियोंके यौद्धिक दॉवपेंचोंका गुप्त रहस्य गोरे सैनिकोंको बता दिया और जिस भोली देहाती जनताने उनके प्राण बचाये थे उन्हींकी क्रूर हत्या की-इस तरह उपकारका बदला चुकाया! यह अचरज नहीं, सचमुच, अचरजकी चरम सीमा है, कि इस भयकर् कृतघ्नताके प्रदर्शनसेभी हिंदी लोगोंने अपने मनकी अभिजात उदारताको रंच भी डिगने न दिया! पीछा किये जानेवाले तथा जान बचाने के लिए सिरपर पॉव रखकर भागनेवाले कई गोरोंके प्राण किसानोंकी झोपडियोंने सुरक्षित रखे थे, और देहाती औरतोंने अनगिनत गोरे बच्चों और गोरी स्त्रियोंको अपने हाथों काले रगमें रगाकर तथा हिंदी वेश पहनाकर दयाभावसे अपने घरमें छिपा रखा था। दिनरात भागनेके कष्टसे विकल, मार्गके छोरपर पडे कई नौसिखिए कम उम्र अंग्रेज अधिकारियों, तथा मामूली सोल्जरोंकोभी, ब्राह्मणोंने बारबार अपने हाथों दूध पिलाकर पुनर्जन्म प्राप्त कर दिया। श्री. फॉरेस्ट लिखित स्टेट पेपर्स पढनेसे मालूम होगा कि, अंग्रेजोंकी खूनी कटार जिस अवधकी छातीमें गहरी घोप दी गयी थी, उसी अवधके बाशिंदे, हैरान होकर तितर-बितर भागनेवाले अंग्रेजोंसे असाधारण उदारतासे, पेश आये! बारबार और जगह जगह ऐसे घोषणापत्र प्रकट कर,-कि 'औरतों और बच्चोंकी हत्यासे अपने पवित्र कार्यमें बाधा पडेगी तथा अपजश मिलेगा'- क्रांतिनेताओंने अपने अनुयायियोंको जताया था या नहीं? नीमच और नसीराबादके विद्रोहियोंने तो गोरोंको जीवित जाने दिया। एक बार कुछ गोरे जान बचानेको भाग रहे थे, देहाती उन्हें देखकर चिल्लाने लगे 'मारो फिरंगीको, मारो फिरंगीको'। वहॉ एक परिवारने यह कहकर उनकी रक्षा की-ये निर्दयी नीच अवश्य हैं, किन्तु अभी उन्होंने एक राजपूतका अन्न खाया है, अब उन्हें मार नहीं सकते। *

जो भारतीय मानव स्वभावसे इतना दयालु तथा उदारमना होता है,

---

* चार्ल्स् बॉल कृत इंडियन म्यूटिनी खण्ड १

जिसके देहातमें अभीतक मानवता, प्रेम, आदर तथा निरीह जानवरों और मानवोंके बारेमें दयाबुद्धिका वातावरण पूर्णरूपसे बना हुआ पाया जाता है, वह गरीब हिंदी मानव देहाती तथा उसके गाँवने १८५७के हत्या-काण्डमें हाथ बँटाया हो, तो भारतीय राष्ट्रकी भलमनसाहत पर जराभी आँच नहीं आती; वरन्च जिस नीच अत्याचारका अन्त कर देनेका प्रण उन्होंने किया था, उस अत्याचार तथा अन्याय ही का हीनतम रूप उससे नंगा हो जाता है! मेकॉलेकी सुप्रसिद्ध व्याख्याका प्रमाण यहाँ ठीक मिल जाता है:—' अत्याचार जितना भीषण हो, उसकी प्रतिक्रिया उतनीही भीषण होना अटल है। "

हाँ, और जिन अपराधोंको भारतके सिर मढा जाता है; उन अपराधोंकी छानबीन कर निर्णय देनेको कौन बैठेगा? तो गोरे! क्रांतिकारियोंके कृत्योंके लिए उन्हें दोषी ठहरानेका अधिकार, इस विस्तीर्ण वसुधरामें, यदि किसीको सबसे अखीर पहुँचता हो तो-अंग्रेजोंको। भारतको एक दो हत्याकाण्डोंके लिए अपराधी बतानेवाला इंग्लैंड होता है कौन? वह, जिसने ' नील 'को पैदा किया? या, वह, जिसने निष्पाप बालबच्चोंसे भरे गाँव के गाँव तलवारसे उजाड तथा आगमें भुनाकर बीरान बना डाले? या भारतके लिए लडे और मंगल पाडेकी वीर वृत्तीसे अभिभूत सूरमाओंको फाँसी देनेकी सजा अधूरी सी मानकर उन्हें शूलीके साथ बाँधकर जला दिया, वह इंग्लंड? या, वह जिसने निरीह देहातियोंको पकडकर टिकटीपर फाँसी दे, सगीनोंसे उनके शरीरकी छलनी कर, शिव, शिव! जिसके केवल उच्चारणसे जीभ अपवित्र करनेकी अपेक्षा गाँववालोंने फाँसी चढना या जीवीत जलना खुशीसे मान लिया होता वह दण्ड—खून चूता हुआ गोमांस सगीनकी नोकसे उन गाँववालोंके मुँहमें ठूँसा, वह इंग्लैंड? या, फर्रुखाबादके नवाबके बदनमें, फाँसीके तख्तेपर खडा करनेके पहले, सूअरकी चरबी चोपडनेकी निर्लज्ज आज्ञा, सिपहसालारके हुक्मके बावजूद जिस इंग्लैडने दी वह?* या इस्लामके बदेको कत्ल करनेके पहले उसे

* फोर्बस् मिचेल कृत ' रेमिनिसेन्सिस '

सुअरकी खालमे डालकर दम घुटानेका खेल खेलनेवाला 'इग्लैड ?* या, ऐसे अन्य अक्षम्य अपराध तथा अत्याचार, बागियोके न्याय्य 'प्रतिशोध' के नामपर सराहनेकी निर्लज्जता जिसने दिखायी वह इग्लैड ? कहते हैं 'न्याय्य प्रतिशोध'! प्रतिशोध ? किसका ? सौ सालोंतक अन्यायपूर्ण शोषणकी चक्कीमे पिसकर अपने देशका सर्वनाश होनेसे प्रक्षुब्ध बने 'प्रतिशोधकी प्रतिज्ञा करनेवाले 'पाडें' लोगोका ? या जिन्होने इस भीषण चक्कीमें गति दी उन फिरगियोका ?

स्वदेशकी यत्रणाओंको देख एकाध व्यक्ति या एकाध विशेष वर्गको तीव्र विषाद महसूस हो रहा था, सो बात नहीं है। हिंदु मुसलमान, ब्राह्मण शूद्र, क्षत्रिय वैश्य, राजा रक, स्त्रीपुरुष, पण्डित मौलवी, सैनिक, पुलीस—इन भिन्न भिन्न धर्म, भिन्न भिन्न पथ और कई भिन्न व्यवसायोंके, लोगोंनें स्वदेशका बुरा हाल सहते रहना असम्भव हो जानेसे सब मिलकर, अकल्पनीय थोडे अवसर में, भयानक प्रतिशोधका बवडर खडा किया। इतना राष्ट्रव्यापी था वह आदोलन! इस एकही बातसे मालूम होगा, कि जिस पराकाष्ठाको जुल्म पहुँच गया था, उसी पराकाष्ठाको अपने प्रतिकारको पहुँचानेका जतन किया गया था। विदेशी शासन की छॉवमें व्यक्तिगत रूपसे मोटा ताजा बना सरकारी कर्मचारियो का वर्ग भी उस समय शासकों की ओर न रहा था! एक अंग्रेज लेखक लिखता है:-सरकारी नौकरोंमे होनेवाले फतूरियों की तालिका बनाने बैठे तो शायद विद्रोही प्रातोंके सभी कर्मचारियोंके नाम दर्ज करने पडेंगे। इसतरह क्रातिकी आग चहुँ ओर फैली थी! उस समय यदि किसीको गाली देनी हो तो उसे 'राजभक्त,' या 'राजनिष्ठा' के आधार पर जो नौकरी पाते थे उन्हे 'स्वधर्म द्रोही' 'स्वदेश द्रोही' माना जाता था! जो सरकारी नौकरीमें टिके रहते उन्हें जातिसे बाहर कर दिया जाता। उनसे 'रोटीबेटी' व्यवहार कोई न करता। ब्राह्मण उनके घर पूजापाठ करनेसे इनकार करते। यहॉतक कि उनका चितामें अग्निसस्कार करनेसे भी इनकार किया जाता। विदेशियों—फिरगियों—की सेवा करना मातृहत्यासे

* रसेलकी डायरी

अधिक पाप माना जाता। इसतरह समाजके हर स्तरमें बवडर आ गया था; प्रचंड खलबली मच गई थी! जुल्म और अन्यायकी पराकाष्ठा ही का यह चिन्ह नहीं था? *

इस प्रकार, ऊपरसे शान्त दीखनेवाला यह ज्वालामुखी पेटमें खौलकर घडाका होनेकी विदुतक आ पहुँचा था। क्राति का सदेसा पहुँचानेवाली चपातियाँ आकाशमार्गसे सञ्चार कर, थोडेही समयमे शुरू होनेवाले महा-समारोहमे क्रियात्मक सहायता देनेके लिए हर एक को निमत्रण दे रही थीं। और इस आवाहनका सम्मान कर परम पवित्र साधनाकी सिद्धि के लिए दशोंदिशाओंसे युद्धदेवताओं का झुण्ड वेगसे भारतमें आ रहा था। इस महा-समारोह के लिए आवश्यक सभी बाजे, मारूबाजे, युद्धघोष, वीरगर्जना सब कुछ मडपमे व्यवस्थासे सुशोभित था। ज्वालामुखीकी सतह पर जुल्म और अन्याय निर्भीक गर्व के साथ अकडते हुए घूम रहे है। पहाडकी सतह मुलायम हरियालीसे ढँकी हुई होनेसे कितनी भी शान्त और मनोहारी मालूम होती हो, उसके उदरमे क्या ही प्रचण्ड खलबली-उथलपुथल-हो रही है! सावधान! वह शुभ महूरत अब आ लगा है। एक क्षण की देर है-फिर बिजलीकी कडक तथा ज्वालाओंकी लपटों एवं उल्कापात से सारा वायुमडल कौध उठेगा। देखो, देखो, आगके स्तभ के स्तंभ ऊपर उफान रहे है। रक्तधाराकी मूसलाधार वर्षा पृथ्वीपर हो रही है! आर्त चीत्कारोंकी ध्वनिमे तलवारोंकी खनखनाहट मिली हुई है! भूत-प्रेत नाच रहे हैं! वीर सिंहनाद कर रहे है! ठढी हरियालीसे ढँकी

---

* (सं. ३८) विद्रोहके परिणामस्वरूप लगभग हर एक का व्यक्तिगत स्वार्थ और पहले स्वामीके लिए प्रेम साफ बह गया था। ऐसी हालतमें सरकारसे वफादार रहना कैसे कोई सह सके? सब जानते हैं कि हमारी नौकरीमे जो कुछ थोडे सिपाही रहे उन्हे जातिसे बहिष्कृत माना जाता-केवल भाईबदोंद्वारा नहीं, उनकी सारी जातिसे। वे कहते है कि वे अपने घर जानेकी हिम्मत नहीं कर पाते, क्यों कि उनकी निंदा ही नहीं होगी तथा भाईचाराही नहीं रहेगा; बल्कि उन्हे जानका खतरा रहेगा -रेवरड केनेडी पृ. ४३

ज्वालामुखीकी सतह अब फट रही है ! अब वह सौ जगह फटेगी ! अं है ! यह क्या ! अब तो उसमें हजारो दराजें फटी है ! और अब तो, शायद, प्रलयही होनेवाला है !

काठियावाड मे कुछ स्थानोंमे एक अजीब जलप्रवाह होता है, जिसे ' विदारू ' कहते है ! इस सोतेकी सतह खुर्दुरी भूमिके समान दीख पडती है, जिससे अनजान आदमी बेखटके उस भूमिपरसे चलने लगता है। किन्तु एक दो डग बढते ही वह खुर्दुरी सतह हिलने लगती है, चलनेवाला अपने को सम्हालने के लिए अपना पैर मक्कम रखनेकी चेष्टा करता है। पर, तब भूमि गायब होती है, और बिचारा यात्री पानीकी धारामे डूबने लगता है ! क्रांति का सोता भी भारतभर में इसी ' विदारू ' के समान गुप्तरूपसे फैला हुआ था। जुल्म और अन्याय, सतहके काले रंगसे, निश्चयसे मानते थे, कि बिना चूंचा किए अन्याय सहनेवाला यह वही हमेशा का भूपृष्ठ है। जुल्मी अन्याय ने उसपर पॉव रखा नहीं, और काला भूपृष्ठ थर्राने लगा नहीं। तब जुल्मी अन्याय ने अपनी सत्ता के मदमें इस मायावी भूपृष्ठपर बलपूर्वक कदम रखा ! किन्तु सावधान ! भूपृष्ठ गायब होकर वहॉ फेनिल, खौलता हुआ, तथा लहरें मारता हुआ खून का अथाह दह फैला पडा है। अभागे जुल्म और अन्याय ! चाहे जहॉ पॉव धर, कडा भूपृष्ठ तुझे कहीं महसूस न होगा। कमसे कम इतना तो अच्छी तरह तुझे जॅचना चाहिये, कि इस काली सतह के नीचे लालीलाल खूनकी धारा बह रही है ! और अब भी, हिम्मत हो तो, कान फाड देनेवाले ज्वालामुखीके विस्फोटका वह धडाका कान खोलकर सुन ले !

खण्ड दूसरा समाप्त

वीर सावरकरजी

अग्नि प्रलय

" १८५७ में भारतमाता, सचमुच, क्रोधाग्नि से जल अुठी और सारे संसार के कानफाड़नेवाला भयानक धमाका हुआ! जिस तरह अग्निबाण आकाश में फेंका जाता है; अुस का विस्फोट हो जाता है; अुस से रंगबिरंगी तेजाकृतियाँ बाहर फेंकी जाती हैं; अुसी तरह क्रांति के अिस अग्निबाण से तप्त लहू, शस्त्रास्त्र और भिडन्तें बाहर अुडीं। कितना विशाल यह अग्निबाण! मेरठ से विंध्याचल तक लम्बा और पेशावर से डमडम तक चौडा! देखो अुसे सुलगा कर छोडा गया! आग की लपटों ने समस्त दिशाअें व्याप्त कर दीं। हजारों वीर झूझते हैं; गिरते हैं; शान्त हो जाते हैं। हर स्थान में युद्ध और प्रलय! सचमुच ज्वालामुखी का भयंकर प्रलय!!"

"--और बाबा गंगादास की झोपडी के पास धधकती झाँसीवाली लक्ष्मी की वह चिता! १८५७ के स्वातंत्र्यसमर के ज्वालामुखी के प्रलय की यह अन्तिम ज्वाला!!

खण्ड तीसरा

अग्निप्रलय

अध्याय १ ला

दिल्ली का संग्राम

दिनांक ११ मअी को दिल्लीने स्वाधीन होने की घोषणा की; और अिस साहसपूर्ण चाल से जो प्रचण्ड तूफान अुठा अुसे सँवार कर सुगठित क्रांति का रूप देने में वह अुलझी रही। मुगलों के पुराने सिंहासन पर बादशाह को बिठा कर, जनता ने अैसा बलवान केन्द्र निर्माण किया जिस की अुज्ज्वल अैतिहासिक परंपरा के कारण ही स्वाधीनता का आंदोलन तूल पकड सकता था। किन्तु, बूढे बहादुरशाह को सिंहासनपर बिठाने का रहस्य न भूलना चाहिये। बहादुरशाह को बादशाह बनाने का मतलब यह नहीं था, कि मुगलों की पुरानी सत्ता, पुरानी प्रतिष्ठा, पुरानी परंपरा का अुसे अुत्तराधिकारी बनाया गया।

नहीं, बहादुरशाह को भारत का सम्राट बनाया गया—मुगल सम्राट नहीं। क्यों कि मुगल शासकों को जनताने—भारतीय जनताने—अपनी अिच्छा से नहीं चुना था। मुगल राज भारत पर केवल बलपूर्वक बिठाया गया था, उसे विजय के नाम से सम्मानित किया गया, और विदेशी साहसिकों

की प्रबल टोलीने तथा यहाँ के अपना अुल्लू सीधा करनेवाले लोगोंने अुसे बनाये रखा था।

अैसे सिंहासनपर थोडे ही बहादुरशाह को बिठाया गया था? छि. असम्भव! **क्यों कि, अैसे सिंहासन जीते जाते हैं, यों ही दान में नहीं मिलते।** और फिर से मुगल-राज प्रस्थापित करना तो आत्मघात का काम होता। क्यों कि, तीन चार सदियों में जिन सैंकडों हिंदु हुतात्माओं तथा अन्य वीरों का रक्त बहा, वह फिर बेकार सिद्ध हो जाता। अिस्लाम की अुद्योन्मुख शक्ति अरब देश के रेगिस्तान से बाहर चली तब से अुसे और कहीं भी प्रतिकार न हुआ, पूरब और पश्चिम में बेरोक देश पर देश जीतती चली जाती थी। अनेक देश तथा जनसंघों ने अिस्लाम की अिस आक्रमक शक्ति के पाँव पकडे और शरण माँगा। किन्तु अबतक बेरोकटोक बढनेवाली अिस्लामी लहर को जीवट, आग्रह तथा निर्भीक धीरज से सबसे पहले भारत ही में प्रतिबंध हुआ, अिसका जोड अन्य देशों के अितिहास में नहीं है! यह झगडा पाच सदियोंसे अधिक चलता रहा। अपने प्राकृतिक अधिकारों पर हुअे विदेशी आक्रमण के विरोध में पाच सदियों तक हिंदु सभ्यतानें प्रतिकारका झगडा किया। पृथ्वीराज की मृत्यु से ठेठ औरंगजेब की मौत तक यह लडाअी अविराम जारी रही। अिस प्रकार यह रक्तलांछित लडाअी लगा तार चल रही थी। तब भारत के पश्चिमी पहाडों से अिस हिंदु जाति के गौरव के लिअे खेत रहे अनगिनत वीरोंकी साधना की पूर्ति के लिअे एक हिंदुशक्ति खडी हुअी। पुणें नगर से हिंदु पेशवा श्री सदाशिवराव भाअू प्रबल सेना के साथ चल पडे और अुन्होंने दिल्ली के मुगली तख्त की धज्जियाँ अुडाकर हिंदु सभ्यता की श्रेष्ठता प्रस्थापित की और आज तक के अन्याय का बदला लिया। विजेता ही को जीतने से हिंदुस्थान फिर से स्वतंत्र हुआ और गुलामी तथा हार के गहरे गढे काँटे को अुखाडने से हिंदुस्थान हिंदुओं का बन गया।

और अिसी से भारतीय सिंहासन पर बहादुरशाह को बिठाने में मुगल सत्ता की फिर से स्थापना न थी। हिंदु-मुसलमानों का वह कदीमी झगडा

अब नष्ट हो चुका था। जनता की अिच्छा—आकांक्षा को ठुकरा कर—और अिसीसे अन्यायपूर्ण—चलनेवाला राज समाप्त हो चुका था। और राष्ट्र की जनता को पूरा अधिकार था कि अपनी अिच्छासे अपना सम्राट चुनें। यही बहादुरशाह के सम्राट् पद का रहस्य था। क्यों कि, हिंदु और मुसलमानों, नागरिकों तथा सैनिकों ने—सारी जनता ने—अपनी अिच्छा से बहादुरशाह को स्वातन्त्र्य—समर के नेता तथा सम्राट चुना था। अिस से ११ मअी को सिंहासन पर विराजमान आदरणीय बूढा बहादुरशाह कोअी अकबर या औरंगजेब के पुराने परंपरागत सिंहासन पर चढा मुगल न था; वह तो विदेशी आक्रमणकारियों के विरुद्ध स्वाधीनता के लिअे झूझनेवाली जनता का अपनी अिच्छा से चुना सम्राट् था। और अिसी लिअे भारत के प्रमुख नगरों, अनेक सेना—विभागों और राजा-महाराजाओं से दिल्ली के सम्राट् पर अभिनन्दनों की बौछार हुअी। विप्लवकारी पंजाब, अवध, नीमच, रुहेलखण्ड तथा अन्य स्थान के सैनिक विभागों ने अपने ध्वज आदि चिन्हों के साथ आ कर सब से सम्मानित क्रांति नेता बहादुरशाह के सिंहासन के चरणों में अपनी नम्र सेवा अर्पित की। कितनी ही पलटनों ने, दिल्ली के मार्ग पर चलते हुअे, लूटा हुआ अंग्रेजी खजाने का धन, अिमानदारी से, दिल्ली के सम्राट् के कोष में भर दिया। अुसी समय, यह घोषणा की गयी है, कि फिरंगी सत्ता का अन्त होकर सारा देश दास्यमुक्त, स्वाधीन बना है। अिसी घोषणा मे यह चेतावनी भी दी गयी थी 'प्रारभ ही से असाधारण यश को प्राप्त करनेवाले अिस क्रांति का अन्त यशपूर्ण बनाने के लिअे हरअेक को चाहिये कि वह मानवता के योग्य प्रतिकार करने को सिद्ध रहे।' साथ साथ यह भी जताया गया था, कि 'अिस स्वाधीनता संग्राम में लडना हरअेक का पवित्रतम कर्तव्य है और जनता उसमें करारी धर्मनिष्ठा तथा कठोर निश्चय के साथ हाथ बँटावे। हम अेक मात्र लालच दे सकते हैं और वह है धर्म! जिस किसी को परमात्माने मनौधैर्य तथा अिच्छा दी है, वह जीवन तथा संपत्ति को त्याग कर अपने पवित्र धर्म की रक्षा के काम में हमारे साथ आवे! जनमंगल के लिअे जनता अपने व्यक्तिगत स्वार्थ पर पानी छोड दे, तो अंग्रेज तुरन्त अिस देश से निकाल बाहर कर दिये जा सकते हैं।

ध्यान रहे, मौत का काल आनेतक कोअी नहीं मरता; और जब वह काल आ जाता है तो, चाहे जो करो, अुस से कोई नहीं बचता। सहस्रों, लाखों आदमी है जो, महामारी या अन्य कअी बीमारियों के शिकार होते हैं, किन्तु धर्मयुद्ध में मृत्यु आना तो अनोखी हुतात्मता—अपूर्व भाग्य की बात—है। अिस से भारत से फिरंगियों को भगाना या मार डालना हर भारतीय का कर्तव्य है।"

यह अुद्धरण भिन्न भिन्न समय में प्रकट हुअे अवध तथा दिल्ली के घोषणा—पत्र के समान और अेक घोषणा—पत्र से लिया गया है। अिसी प्रकार का अेक नया घोषणा—पत्र दिल्ली ही के सिंहासन से घोषित किया गया था और भारतभर में प्रचारित हुआ था। सुदूर दक्षिण के प्रदेश में भी बाजार में तथा सेना में अिस घोषणा—पत्र की प्रतियाँ बहुतेरों के हाथ में दीख पडती थीं। वह घोषणा- पत्र यों था:—' समस्त हिंदु—मुसलमान बांधव गण ! केवल धार्मिक कर्तव्य जान कर हम जनता के साथ हैं। अिस समय जो कोअी कायरता दिखायगा और पाजी अंग्रेजों के वचनों पर भोलेपन से विश्वास करेगा अुसे तुरन्त दण्ड दिया जायगा; और अंग्रेजों का विश्वास करने से लखनअू के राजाओं की जो गत हुअी वही अुस की होगी। और अेक बात लोगों को अवश्य करनी चाहिये; वह महत्त्वपूर्ण है। सब हिंदु—मुसलमान मिलकर, किसी अेक आदरणीय नेता की आज्ञा का पूरी तरह पालन कर, अैसा बर्ताव करें, जिससे सब कुछ व्यवस्थापूर्वक चले और गरीब प्रजा सुखी हो कर अुन्नति करे। हर अेक को चाहिये कि अिस घोषणा—पत्र की अधिकसे अधिक प्रतियाँ बनावे और चुपचाप, अक्ल से काम ले कर, चौराहों में चिपका दे; और अिनका प्रसार होने के पहले तलवार का अुपयोग करे!"

अंग्रेजी शासन के विरुद्ध युद्ध—घोषणा करते ही, दिल्ली के क्रांतिकारी आवश्यक शस्त्रास्त्र तथा गोलबारूद बनाने के काम में लगे। तोपों, बंदूकों और अन्य छोटे मोटे हथियारों को बनाने के लिअे अेक विशाल अुद्योगालय शुरू कर दिया गया। अुसकी निगरानी के लिअे कुछ फ्रान्सीसियों को नियुक्त किया गया। गोलाबारूद के दो तीन बडे कोठार खोले गये। रातदिन खपने-

वाले लोक कभी मन स्फोटक बारूद हर दिन बनाते। देशभर के लिअे गौकशी को बद करने की आज्ञा जारी हुआी। अेक बार कुछ सिरफिरे मुसलमानोंने जिहाद पुकार कर हिंदुओं को अपमानित करना शुरू किया। तब, सब दरबारियों को साथ लेकर बादशहा हाथी परसे सारे शहरभर में घूमे और साफ शब्दों में लोगों को समझाया, 'जिहाद केवल फिरंगियों के विरुद्ध है'। यह भी घोषित किया गया कि गोवध करते कोअी मिल जाय, तो अुसे तोपसे अुडा दिया जाय, या अुसके हाथ पाँव काट दिये जायँ। कुछ युरोपवाले भी अंग्रेजों के खिलाफ, क्रांतिकारियों से मिल कर, लड रहे थे।

बुंदेल-की-सराय की लढाअी के बाद, अंग्रेजों ने जिस युद्धक्षेत्र को चुन कर पैर जमाया था, वह यौद्धिक हलचलों की दृष्टि से बहुत सुयोग्य था। दिल्ली के परकोटे के अेक छोर के पास से जमुना नदी से चार मील दूरी तक फैली पहाडी (अंग्रेज अिसे 'रिज' कहते थे) अुस की प्राकृतिक अूंचाअी के कारण युद्ध के लिअे बडी काम की थी। आसपास के प्रदेश की सतह से यह पहाडी ५०—६० फीट अूची थी, जिस से तोपों की लगातार मार चालू रखने को अच्छी जगह थी; और दूसरे, अिस पहाडी की पिछली ओर जमुना की चौडी नहर थी। अिधर सालभरमें जोरों की वर्षा होनेसे जून में भी अुस नहर में गहरा पानी था। पिछली ओर होने-से अुस ओर से शत्रु का भय न था। हाँ, दिल्ली के क्रांतिकारी जिस प्रकार आगे से झूझ रहे थे अुन के साथ साथ पंजाबवाले यदि पिछेसे हमला करते तो अंग्रेजों की नाक में दम हो जाता; किन्तु दुर्भाग्य से पंजाबने ब्रिटिशों के साथ होने की घोषणा की थी। नाभा, जींद और पटियाला के नरेशोंने पंजाब के सब महत्त्व-पूर्ण मार्गों की रक्षा कर, पंजाब से अंग्रेजों को रसद तथा कुमक पहुँचना आसान बना दिया। भारत के दुर्भाग्य से यह संजोग अंग्रेजों के लाभ में था, जिस से अुन की अनुकूलता अधिक बढती गयी। छोटी मोटी पहाडी शृंखला, पीछे शत्रु की तोपों की पकड में न आनेवाला सेना का शिबिर बनाने योग्य विशाल पठार, साथ साथ शत्रु के गुप्तचरों के अुपद्रव से दूर जगह, बिलकुल पास बहनेवाला विपुल पानी, पंजाब के वफादार नरेशोंने अपने खर्च से दिनरात

पहरा दे कर सुरक्षित रखे पंजाब के यातायात के महत्त्वपूर्ण मार्ग, आदि सब प्रकारसे अनुकूल स्थिति से जिस का आत्मविश्वास फूला था वह ब्रिटिश सेनापति बर्नार्ड, अपने अन्य सहयोगियों के साथ कहने लगा 'बस, अब दिल्ली क्या है; अेक दिन में लेंगे।'

और सचमुच जब दिल्लीपर दखल करना अेक दिन का काम है, तब दो दिन क्यों लगाये जायें! तो फिर अिस पापी और राजद्रोही दिल्ली को मटियामेट करने के लिअे अिसी क्षण अिन अंग्रेज सैनिकों को धावा बोल देने की आज्ञा हम क्यों न दें? पंजाब तो हमारी सेना की रीढ है, वह जब दृढ है तब दीर्घकाल तक घेरा डालकर दिल्ली जीतने की दुबली नीति का अवलंबन हम क्यों करें? अिस नीच दिल्ली नगरीपर सहसा टूट कर, अेक ही धडाके में अुसे तहस नहस कर डालना, क्या, अधिक अच्छा न होगा? चलो, अपनी सेना के दो भाग करें! अेक हिस्से के सैनिक लाहौरी दरवाजे को तोड दें और दूसरा विभाग काबुली दरवाजा अुडा देगा; फिर दोनों विभाग अिकठा होकर नगर के मार्गों में घुस पडें और अेक अेक मोर्चा हथियाते हुअे झट से सीधे किलेपर टूट पडे! विल्बरफोर्स, ग्रेटहेड और हडसन जैसे वीर अैसी साहसिक और धडाकेबंद चढाअी के लिये बहुत बेचैन हो अुठे है और अिस मुहीम को सफल बनाने का बिडा भी अुन्होंने अुठाया है। फिर देरी काहे की? और, सचमुच, १२ जून को जनरल बर्नार्डने चढाअी की आज्ञा गुप्तरूपसे दी! कौन कहा अिकठे हों, रात के अंधेरे में कौनसे दस्ते आगे बढें, दाअें बाअें पासों का नेतृत्व कौन करें आदि सब प्रबंध पहलेसे निश्चित हो चुका था। अिस तरह पूरी सिद्धता होनेपर रात को दो बजे निश्चित स्थान पर, याने संचलन भूमिपर, गोरी सेना आ खडी हो गयी। कल दिल्ली के शाही महलही में रातको आराम करने की निश्चिति हर सैनिक को थी, जिस से आज की नींद के कुछ घंटे खराब हों तो अुसकी शिकायत मूरख हो वही करेगा। किन्तु, हाय, अिस समय भी अंग्रेजों के दुर्भाग्य का पला भारी रहा। क्यों कि, अैन मौकेपर, सेना का कुछ हिस्सा गायब हुआ मालूम पडा। ब्रिगेडिअर ग्रेव्हज् को अिस तरह दिल्लीपर चढाअी करना अुतावलेपन सा

मालूम पड़ा और दूसरोंने तो यहॉं तक संदेह प्रकट किया कि अिस तरह की योजना भारतभर के अंग्रजों को हानि तो नहीं पहुँचायगी ? मतलब, सीधी चढाअी और तुरन्त विजय के जो सपने गोरे सैनिक देख रहे थे, वे दिल्लीके शाहीमहल में सच निकलने के बदले, अुस रातको शिविर के खाटोंपर छट-पटाने तक ही सीमित रहे।

दूसरे दिन सबेरे विल्बरफोर्स और ग्रेटहेड ने फिरसे हमले की योजना बनायी और सेनापति बर्नार्ड के आगे पेश की। बर्नार्ड क्रिमिया के युद्ध में नामवरी-प्राप्त प्रसिद्ध योद्धा था; फिर भी हमें सदेह होता है कि वह ढुलमुल नीति तथा हिचकिचाहट का आदी होगा। अुसने १४ जून को मुख्य मुख्य अधिकारियों की युद्धसमिति की बैठक बुलायी और वहॉं चढाअी की योजना पेश की। ग्रेटहेड ने आवेशपूर्ण समर्थन किया किन्तु समिति को जीत की आशा न दिखायी दी; बल्कि समितिने यह हठ पकडा की योजना के अनुसार चढाअी कर जश मिला भी, फिर भी प्रत्यक्ष हार जितनी बल तथा प्रतिष्ठा की हानि होगी। और, हॉं, सीधी चढाअी से दिल्लीपर दखल हो जाय, तो फिर आगे क्या ? अुसे अपने हाथ में बनाय कैसे रखें ? मार्ग मार्ग में, घर घर से भडकनेवाली क्रातिकारियों की तोपों के सामने गोरे सैनिक कहॉं जीवित रहेंगे ? बर्नार्ड अिसका निश्चित अुत्तर दे न सकता था। अिस सारी चर्चा के बाद चढाअी के बारे में भिन्न भिन्न रायें होने ही में सब सहमत हुअे। और अिस तरह १५ जून की रात के 'सपनो' के समान सारी योजना केवल विचार ही में बद रख कर १६ जून को फिर एक अेक बार समिति की बैठक बुलाअी गयी और फिर अेक बार भिन्न मत तथा हिचकिचाहट का प्रदर्शन हो कर बैठक बद हुअी। अिधर अग्रेज जोरदार और साहसपूर्ण चढा-अियॉं करने के मनसूबे गढ रहे थे, अुधर दिल्ली में भी नया खून, नये हृदय, नया सैनिकबल—सब का सैलाब सनसना रहा था; और क्रातिकारियोंने भी अबतक की बचाव की नीति तज कर, चढाअी का प्रारभ कर, भिन्न भिन्न पासों से ब्रिटिश सेना पर सफल हमले जारी किये थे। भारतभर में विद्रोही बने सैनिक दस्ते अपने साथ शस्त्रास्त्र, गोलाबारूद और खजाना लेकर दिल्ली

को ताँता बाँध कर आ रहे थे; जिस से युद्ध-सामग्री तथा सैनिक संख्या की चिंता करनेका क्रांतिकारियों को कोअी कारण न था। अिस दशा में क्रांतिकारक सेना चढाअी की नीतिपर चलकर, अंग्रेजी सेना को अेक कदम भी आगे बढने से रोक कर अुसे अुसकी जगह पर बद् कर सकती थी। कभी जोरदार हमला कर, कभी घमासान मुठभेड कर, कभी मामूली चढाअी कर, अपनी किसी तरह विशेष हानी न होने दे कर, क्रांतिकारी दस्ते फिर शहर में लौट आते। अिस सतानेवाले युद्धतंत्र से अंग्रेजों में डर समा गया जिस से किसी प्रकार से आक्रमण की हिम्मत वे न कर सकते। १२ जून को, क्रांतिकारी दिल्ली नगर से बाहर निकले और झाडझखाड़ तथा नीची भूमिके गढों से होकर छिपे छिपे अंग्रेजों के शिबिर से लगभग ५० फीट पर जा पहुँचे और अंग्रेजों के आहट पाने के पहले अुन पर हमला कर बैठे। अंग्रेजों के कअी तोपची अिस कशमकश में काम आये। श्री. नॉक्स को तो एक सिपाहीने पहली ही गोली से अुडा दिया। अिसी समय दूसरे क्रातिकारी दस्तेने अंग्रजों की पिछाडी पर धावा बोल दिया और वहाँ भी घमासान लडाअी हुअी। अंग्रेजों के दाहिने पासे पर भी 'हिंदुराव की कोठी' पर सिपाहियोंने जोरदार हमला किया। "अिस बार वह हिंदी अस्थायी टुकडी, जिस की वफादारी पर हमे बेहद भरोंसा था, क्रांतिकारियों पर चढ गयी। किन्तु अुन बदमाशों का अिरादा जब हमें मालूम हुआ तब हमारी तोपों के मुँह अुनकी ओर घूमे और यह देख कर वे असीम अुतावली से हट गये और तोपों की मार से बचे।"* यहाँ का कमांडर मेजर रीड कहता है, "ये पैदल सैनिक अिस तरह आगे घुसे, मानों बडा जोरदार हमला कर रहे हों, किन्तु देखता क्या हूँ, कि ये दुश्मनों से मिल रहे है; मेरा तो कलेजा मुँह में आ गया। परन्तु मैने अुनपर तोपें दागने की आज्ञा दी; किन्तु ये बदमाश कब के दूर भाग गये थे; अुनसे शायद पांच छः भी न मारे गये हों।"

अिस प्रसंग के बाद हर सबेरे क्रांतिकारी सेना बाहर जा कर हमला करती और शाम को कुशल से लौट आती। दिल्ली में बाहर से आये हुअे

* के कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. ४११.

दस्तों को, आने के दूसरे दिन हमले के लिअे भेजा जाता। १२ जून को फिर से 'हिंदुराव की कोठी' पर धावा किया गया। १२ जून को क्रांतिकारियों में मिले ६० वी पलटन के दस्ते अिसमें खास अग्रसर थे। मेजर रीड कहता है "ग्रँडट्रॅक रोड से सीधे अुन सैनिकों के दस्ते चढ आये। अिस चढाअी का नेतृत्व सरदार बहादुरसिंग को दिया गया था। वह बाअें को घूमने की सोच रहा था, अिससे वह अपने आदमियों को दूरी पर रहने को कह रहा था। अिस लडाअी में अुसने बहुत वीरता दिखायी। सरदार बहादुर को अुस के अर्दली लालसिंग ने गोली से अुडा दिया; मने अुसकी छातीसे "स्टार ऑफ अिंडिया" अुतार ली और मेरी स्त्री को भेज दी।" १७ जून को क्रांतिकारियों ने अीदगाह की कोठी पर तोपों के मोर्चे बनाये, जिस से 'रिज' पर तोपों से सख्त बौछार की जा सकती थी। यह देख कर हेन्री टॉम्बस और मेजर रीडने क्रांतिकारियों के दोनों पासों पर बहुत जोरदार हमले किये और काफी दबाव डाला; किन्तु अुस कोठी में अटके मुठ्ठीभर क्रातिकारी हार का नाम न लेते थे। जब वे गोलियाँ न चला सके तब अुन्होंने बदूकें फेंक दीं और तलवारें सँवार कर अंग्रेजों पर बडे आवेश से टूट पडे। अुनमें से हर एक अपने अपने स्थान पर लडते लडते मारा गया, किन्तू तब तक दुश्मन अीद-गाह में पाँव न धर सका।

१८ जून को नसिराबाद के विद्रोही आ पहुँचे; आते ही सारा खजाना अुन्होंने नेताओं को सौंप दिया। स्वयं सम्राट् ने अुन के प्रतिनिधिओं को अपने राजमहल में निमन्त्रित कर अुन से मिला। दरबार में अिन प्रतिनिधियों ने २० जून को अंग्रेजों पर चढ जाने की सौगंध ली। अुस के अनुसार २० जून को सबेरे चढाअी करने के लिअे क्रातिकारी सेनाअें दिल्ली के बाहर जाती दिखायी पडीं। अंग्रेजों की पिछाडी पर हमला करने के अिरादे से सब्जी मण्डी हो कर सैनिक छिपे छिपे गये; और अंग्रेजों को अिसकी कानोकान खबर तक न मिली। अुन्हों ने गोलियों की झडियाँ लगा दीं और अंग्रेजों पर जोरदार हमला किया। स्कॉट, मनी, टॉम्बस् और अन्य अंग्रेज अधिकारियों ने तोपों से आग अुगल कर चढाअी रोकने की चेष्टा की। किन्तु भारतीय सैनिक अितने

जीवट से चढाओी कर रहे थे, कि अुन्हें अटकाना दूभर था। नसिराबाद का तोपखाना तो अैसी संहारक आग अुगलते आगे बढा, कि बहादुर टॉम्बस भी रुवासा होकर चिल्लाया "डली! दौडो, जलदी दौडो, नहीं तो मेरी तोपें अब दुश्मन के हाथ लगीं समझो!" पंजाबवाली हिंदी सेना के साथ डली अुस की सहायता करने दौडा; किन्तु थोडेही समय में अेक क्रांतिकारी की गोली अुस के कंधे में घुसी और अुसे लौटना पडा! सायंकाल का समय हुआ; सिपाही निश्चितरूप से विजयी रहे। फिर से अुन्हों ने हमला किया और लगभग ब्रिटिश तोपें हथिया लीं। ९ वी लान्सर पलटन तथा देशद्रोही पंजाबी पलटन के दस्ते क्रांतिकारकों पर बार बार चढ आते किन्तु हर बार मुँह की खा कर झट पीछे हट जाते। रात हुअी तोभी भीषण रण जारी था। अंग्रेज भी डट कर लडे और मुश्किल से अपनी तोपें बचा पाये। लॉर्ड रावर्टस् का कहना है, 'बागियों ने हमारे पॉव अुखाड दिये थे।' होप ग्रॅट की सवारी का घोडा ढेर हो गया; ग्रॅट स्वयं घायल था और अुसको अेक मुसलमान सवार न अुठाता तो वह भी मारा जाता। आधी रात तक यह लडाअी जारी रही। फिर भी क्रांतिकारियों को रोकना दूभर होने से अंग्रेज रणभूमि से हट गये। और ब्रिटिश शिबिर की पिछाडी में अेक महत्त्वपूर्ण मोर्चा विजयी क्रांतिकारियों के कब्जे में पूरी तरह आ गया।

अुस रातमें, ब्रिटिश कमांडर को चिंतासे नींद हराम हो गयी; क्यों कि, अितनी बहादुरी से जीता हुआ मोर्चा यदि क्रांतिकारी रख सके तो ब्रिटिशों का पंजाबसे यातायात का मार्ग पूरी तरह तोड देंगे। अिस संकट को टालने के लिअे तडके से ही विजयी शत्रु का मुकाबला करने की सिद्धता अंग्रेज कर रहे थे। किन्तु अिधर गोलाबारूद तथा सैनिकों की कमी से क्रांतिकारी दिल्ली लौट गये थे और खाली जगह अंग्रेजों ने जीत ली। अिधर अपनी जीत तथा सैनिकों के डट कर पीछा करने के संवादों से अुत्साहित दिल्ली के नागरिकोंने, नगर के परकोटे पर अेक बडी लम्बे पहुँच की तोप चढाकर अंग्रेजों की छावनी पर लगा तार गोले फेंकना जारी रखा। दिल्ली के सैनिकों के अिन हमलों से अंग्रेज किसी तरह की आक्रमक हलचल कर नहीं पाये; बचाव करने ही में लगे रहे।

जिस भूमि को अुस समय अुन्हों ने सँम्हाला था अुसे बनाये रखने में अुन की नाकों दम था। पंजाब से नयी कुमुक मिलने तक आक्रमक चढाअी करना असम्भव बन गया था और, मानो, अिन विपात्तियों को पूर्ण करने को–आज २३ जून १८५७ का दिन निकला।

२३ जून १८५७ पलासी की शतसंवत्सरी का दिन! सौ वर्ष पहले, अिसी दिन, साम्राज्य के जुअे में, पलासी के रणमैदान पर, हिंदुस्थान का पासा अुलटा पडा था। पहले के अपमान तथा लज्जा में हरसाल नयी बढोतरी होते होते सौ साल बीत गये। सौ वर्षों की गुलामी का हिसाब चुकाना, और रक्त की नदियाँ बहाकर सारे राष्ट्रीय अपमानों अेवं दासताकी कालिख को धो डालना यही विचार–यही अेक मात्र भीषण लालसा–दिल्ली के सिपाहियों की आँखों में अुस दिन चमक रही थी। पवन के हर झोंके, सूरज की हर किरण, तोप की प्रत्येक गडगडाहट, तलवार की प्रत्येक झनकार में 'पलासी! पलासी का प्रतिशोध' यही गंभीर थरथराहट सुनायी देती थी। पलासी के दुर्भागी रणसंग्राम की शतसंवत्सरी का आगमन प्रभातकाल ने सूचित करते ही, क्रांतिकारी सेना के दस्ते अेक अेक कर के लाहौरी दरवाजे पर पहुँचने लगे। अंग्रेज भी जानते थे कि आज अुन्हे खूब रगडा जायगा, वे भी सिद्ध थे, सूर्योदय के पहले ही व्यूह–रचना पूरी की थी। साथ साथ अिस विपत्ति के स्मरणसे पंजाब से भी सहायता मँगवा चुके थे और अंग्रेजों के सौभाग्य से अगली ही रात को कुछ सेना आ भी पहुँची थी। पजाबी सेना के आगमन से अंग्रेजों में आत्मविश्वास फूल गया। किन्तु शत्रुको कुमक पहुँची है अिस समाचार से, या अंग्रेजों की पिछाडी को पहुँचानेवाले सभी पुल उन्हों ने अुडा दिये देखकर, क्रांति–कारियों का अुत्साह रंच भी कम होने की सम्भावना न थी। सब्जी मण्डी से होकर अुन्होंने अंग्रेजों पर गोलियाँ बरसाना शुरू किया। ब्रिटिश पैदल सैनिकों ने बार बार हमले किये, किन्तु हरबार क्रांतिकारी उन्हे पीटकर भगा देते। परकोटे की तोपें खूब आग अुगल रही थीं। 'हिंदुराव की कोठी' पर भी क्रांतिकारियों का पूरा ध्यान था। दोपहर १२ बजे लडाअी घोर घमासान हो रही थी। पजाबी, गोरखा और गोरे सैनिकों पर क्रांतिकारी हमलेपर हमले कर

रहे थे। मेजर रीड बताता है, " बागियों ने बारा बजे हमारे व्याप्त युद्धक्षेत्रपर करारा हमला किया। मैं नहीं जानता कि अुस दिन की वीरता की अपेक्षा अधिक वीरता कभी किसीने दिखलायी हो। उन्हों ने मेरी राअिफली पटलन पर तथा गाअिडदस्तों पर ताबडतोड अैसा जोरों से हमला किया, जिससे अेकबार मैं मानने लगा कि, अब हमारी बन आयी है। *

प्रत्यक्ष अुस रणमैदान में लडनेवाले अेक शूर अंग्रेज अधिकारीका यह कथन बताता है कि क्रांतिकारियों की चढाअियाँ कितनी जोरदार तथा भयकर होंगी। यह बहुत अच्छा सबूत है। किन्तु दुर्भाग्यवश यह बिखरी पडी आग तथा शक्ति को संगठित कर काम में लानेवाला कोअी नेता क्रांतिकारियों को न मिला। स्वदेश की स्वतंत्रताको फिर से प्राप्त करने की प्रबल आकांक्षा और पलासी के राष्ट्रीय अपमान की सदा कुरेदनेवाली स्मृति—केवल अिन दो बंधनों ने अुन्हें अेक जगह बांध रखा था। अंग्रेजी तोपखाना भी क्रांतिकारियों के हाथ लगने का डर पैदा हुआ और अन्त में कर्नल वेल्शमन, अपने सैनिकों की पूँछ मरोडने की कोशिश में स्वय गोली का शिकार हुआ। सारे दिनभर अंग्रेजों का हर सैनिक भी जी-जानसे लड रहा था; फिर भी अब अुनका डटा रहना असम्भवसा हो रहा था। किन्तु ब्रिटिश सेनापति को अब भी निराशा होने का कारण नहीं है। क्यों कि, आज ही सबेरे आ पहुँची वफादार पजाबी पलटन अपना कौशल दिखाने को अुत्सुक थी! अुसे 'आगे बढो' का हुक्म दिया गया। यह सेना नयी आयी थी; क्रांतिकारी दिनभर के अनथक लडाअी से थके हुअे थे। पंजाबी सेना के जोरदार हमले के बराबर का जवाब वे दे न सके। अैसी दशा में भी राततक वे झूझते रहे। और अन्त में दोनों सेनाअें अपना अधिकार विजय पर बताती हुअीं लौट गयी। अिसी तरह किसी की हार जीत न होते हुअे पलासी की शत सवत्सरी का दिन पूरा हुआ। और अेक दूसरे की वीरता तथा हिम्मत की कद्र करते हुअे सैनिकों ने अपने २ शिबिरों में प्रवेश किया।

---

* मेजर रीडकृत 'सीज ऑफ दिल्ली'

हर दिन दोनों ओर नये सैनिकों की बढोतरी होती रहती थी। पंजाबसे लगातार कुमक आनेसे अंग्रेजों की ओर ७ हजार सैनिक हुअे। अिधर क्रांतिकारियों के पक्ष में रुहेलखण्ड के विप्लवकारी सैनिक बख्तखाँ के नेतृत्वमें अभी दिल्ली में आ पहुँचे थे। लॉर्ड रॉबर्टस् कहता है, "रुहेलखण्डवाली सेना नावों का पुल लाघकर कलकतिया द्वारसे दिल्ली में आयी। हाथ के रगबिरगे ध्वजो को हवामें फेंकते हुअे, रणगीतों के तालपर अत्यंत अनुशासनपूर्वक चलनेवाले ये हजारों सिपाही जब दिल्ली में प्रवेश कर रहे थे तो हमे वह दृश्य 'रिज' से स्पष्ट दिख पडता था।" अिन सभी भिन्न भिन्न दस्तों को दिल्ली में अिकट्ठा कर कुछ संगठन पैदा करनेवाली अेकमेव शक्ति थी—सिद्धांत का प्रेम। बिना अिस के भिन्न भिन्न जाति तथा पथवाले और तबतक अेक दूसरे का मुँहतक न देखे हुअे, अेक तूफान के कारण भाग्य से अेकत्रित हुअे अिन हजारों सिपाहियों में जो थोडासा संगठन रहा वह न रह पाता। सम्राट् तथा दरबारियों के, दिल्ली में लूटमार तथा अराजक रोकनेका, तनतोड जतन करने पर भी चोरी, लूटमार आदि होने तथा अुनमें सिपाहियों का हाथ होने की शिकायतें हर दिन आया करतीं। अैसी दशा में, अिन परस्पर विरोधी कअी भिन्नभिन्न शक्तियों को अेकसूत्र में पिरोनेवाले किसी चतुर नेता की अत्यंत आवश्यकता थी। क्रांति की धूमधाम में कुछ लोगों की दुष्ट प्रवृत्ति तथा अुच्छृंखलता, दिल्ली में अुमड आना स्वाभाविक था, किन्तु अैसी दशा में भी अंग्रेजी सेनापर लगातार हमले हो सकते थे; कमसे, कम, अंग्रेजों की प्रगति को रोक अुन्हे डरा देने का काम तो अवश्य हुआ था। यह कैसे सम्भव हुआ? अिस का अेकमात्र कारण है, नागरिकों तथा सैनिकों में, विदेशी शत्रु को भारत के बाहर भगा देने की, प्रबल अुमगें लहरें मार रही थीं। किन्तु अन्तिम सफलता की निश्चिती की दृष्टिसे अमूर्त सिद्धान्तपर जनता की यह निष्ठा तथा प्रेम किसी महान् मूर्त व्यक्ति में नेता के रूप में प्रत्यक्ष होना अत्यंत अनिवार्य था। अिस दशा में देव की देन के समान रुहेलखण्ड से बख्तखाँ अपनी सेना तथा खज़ाने के साथ दिल्ली में आ पहुँचा। बख्तखाँ के पहुँचने के समय दिल्ली की जनता की क्या मनोगति थी अिस का बढिया वर्णन अुस समय के दिल्ली के

अेक निवासी की दैनंदिनी में (डायरी में) मिलता है। 'जमना का पुल ठीक कर दिया गया था; क्यों कि रुहेलखण्ड से सेना आ जाने की बात अपेक्षित थी। बहुत दूरी पर होते हुअे भी सम्राट् दूरबीन से अुस को देख रहा था। २ जुलाअी को नवाब अहमद कुलीखान, अन्य सरदार तथा नागरिकों को साथ लेकर सम्राट् रुहेलखण्डवालों की अगवानी करने गया। आ पहुँचनेपर रुहेलखण्ड की सेना के प्रमुख मुहम्मद बख्तखॉने अपनी सेवा को स्वीकार करने की सम्राट्से प्रार्थना की। बादशाह की मनशा जानने का जब बख्तखॉने विशेष हठ किया तब बादशाह बोला, 'मेरी अेकमात्र तीव्र अिच्छा है कि जनता के जीवित तथा वित्त की ठीक तरह से रक्षा हो, अुन्हें किसी प्रकार का भय न रहे और फिरंगी दुश्मन भारत से पूरी तरह निकाल बाहर कर दिया जाय और यह सब मैं अपनी ऑखों से देखूँ।" फिर बख्तखॉने सम्राट् से प्रार्थना की, 'यदि सम्राट् चाहें तो वह सारे क्रांतिकारी दलों का आधिपत्य करेगा।' तब सम्राट्ने, कृपापूर्वक, सेनापति से हाथ मिलाया। फिर भिन्न भिन्न सेनादलों के प्रमुखों को बुलाकर बख्तखॉ के आधिपत्य के बारेमें अुनका मत पूछा गया। अेक साथ सबने तुरन्त संमति देकर सेनापति की आज्ञा का पालन करने की सौगंध ली। अिस के बाद सम्राट्ने सेनापति से अकेलेमें भेंट की। बख्तखॉ को सेनाधिपति नियुक्त करने की घोषणा डंके की चोटसे नगरमें कर दी। अुसे ढाल, तलवार तथा जनरल की अुपाधि बख्शी गयी। शाहजादा मिर्झा मुगल को अड्ज्युटंट-जनरल बनाया गया। बख्तखॉं ने प्रार्थना की 'कोअी राजवंशी भी नगरमें अुपद्रव या लूटमार करे तो अुसे भी पकड कर मैं नाक और कान काट डालने से न हिचकिचाअूंगा'। बादशाहने फर्माया "तुम्हें सब अधिकार सुपुर्द किये हैं; तुम जो चाहो करने को स्वतंत्र हो; जो ठीक मालूम होगा, करो।" बख्तखॉं ने कोटवाल को भी बताया कि अुसके ढीलेपन से नगरमें लूटमार या अन्य अुपद्रव होगा तो अुसे फॉसी होगी। बख्तखॉ ने बताया कि वह अपने साथ, चार पैदल पलटनें, सातसौ घुडसवार, छः घुडचढी तोपें, तीन बडी तोपें आदि, लाया है। बख्तखॉ ने अपनी सेना को छः महीनों को वेतन पेशगी दे रखा था और अुसके पास चार लाख रोकडे

बचे थे, अिस से सम्राट् को अुनके वेतन या पैसे की चिंता जरा भी न रही। क्यों कि, उसे बताया गया कि जो भी धन और प्राप्त होगा, सम्राट् के चरणोंमें धर दिया जायगा। बख्तखाँ के सम्मान में चार सहस्र रुपयों की मिठाअी सम्राट् की आज्ञा से सेनामें बाँटी गयी। आगरेवाले, नसीराबादवाले तथा जालंदरवाले सभी सैनिक बख्तखाँ के आधिपत्यमें थे। यह आज्ञा जारी की गयी कि हरअेक नागरिक को अपने पास शस्त्र रखना चाहिये; जिन के पास कोअी हथियार न हों वे थानेपर जाकर विनामूल्य शस्त्र ले जायँ। शहर में लूटखसोट करते हुअे कोअी सिपाही मिल जाय तो अुसके हाथ तोड दिये जाते थे। बख्तखाँने शस्त्रागार के सभी शस्त्रों तथा गोलाबारूद को अनुशासनपूर्वक रखवाया। रात को आठ बजे सेनापति राजमहल में गये। सम्राट् बहादुरशाह, अुनकी बेगम जीनत महल, हकीम हसनुल्लाखान अेवं अहमद् कुलीखान—सबने मिलकर परिस्थितिपर चर्चा की। ३ जुलाअी के सामूहिक संचलन के समय करीब बीस सहस्र सैनिक उपस्थित थे।*

अिधर बख्तखाँ के आगमन से दिल्ली के क्रांतिकारियों में अनुशासन और सगंठन का दौरदौरा शुरू हो गया था; अुधर अंग्रेजों की ओर नया उत्साह तथा साहसवाले सैनिक पजाबसे पहुँच रहे थे। पजाब से अभी आये हुअे ब्रिगेडियर जनरल चेम्बरलेन से बढकर अुत्साही और कर्मठ अधिकारी अंग्रेजों के पास अिनेगिने ही थे। सुप्रसिद्ध सैनिकी स्थापत्य विशारद (मिलिटरी अेन्जिनियर) बेअर्ड स्मिथ भी पंजाब से आ पहुँचा था। सर जॉन लॉरेन्सने पंजाबसे अुन सभी व्यक्तियों को अंग्रेजी सेना की सहायता को भेजा, जिन्होंने सिक्ख-युद्ध में विशेष पराक्रम दिखाया था। अब जनरल बर्नार्डने फिरसे जोरदार तथा साहसिक चढाअी का प्रयोग करने की ठानी। अैसे प्रयोग वह पहले भी दिल्ली पर आजमा चुका था और वे सब असफल होनेसे छोड देने पडे थे। अब आज की चढाअी का आयोजन भी पहले के समान अच्छे ढग से किया गया था। अबतक हमले के लिअे तरसनेवाली अंग्रेजी सेना

* मेटकाफकृत नेटिव्ह नॅरेटिव्ह पृ. ६०.

निदान ३ जुलाओी को तैयार हो गयी। अरे हाँ, कोअी सवाद लाया है, कि दिल्लीपर चढाअी करने के झझटसे जनरल बख्तखॉ ने अुन्हे बचाया है। क्यों कि, वह स्वयं अंग्रेजोंपर चला आ रहा है। ४ जुलाअी को बख्तखाँ ने फिरसे हमला किया और पीछे की ओर से खदेडते हुअे अंग्रेजों को ठेठ अलीपुर तक धकेल दिया।

अंग्रेज दिल्लीपर कब्जा जमाने को अितने अुतावले हुअे थे, और अपनी सामर्थ्य का अुन्हें अितना असीम आत्मविश्वास था कि जून की समाप्ति के पहलेही, दिल्लीके पतन की अफवाहें बम्बअी, मद्रास तथा कलकत्तेमें अुड रही थीं। और सदाके समान अिन अफवाहों के बेबुनियादी होने का अनुभव हो जाता, तो भारतभर गोरे अेक दूसरेसे पूछते, "वहॉ दिल्लीमें अंग्रेजी सेना क्या झख मार रही है?" अैसी अपकीर्ति तथा चिंता से बर्नार्ड को नींद हराम हो गयी थी। क्रांतिकारियों की अविरत चढाअियों से अुसे क्षण की भी फुरसद न थी, जिस से दिल्लीपर जोरदार आक्रमण करने की अुस की आकांक्षा दिनोदिन ढीली पडती जाती थी। निदान, यह ब्रिटिश सेनानी बर्नार्ड असीम निराशा तथा चिंता से पिचककर। ५ जुलाअी को हैजे का शिकार होकर मरा। अंग्रेजों पर अिस संवाद से वज्राघात हुआ। दिल्ली में प्रवेश करने को बेचैन, आखिर कब्र में प्रवेश करनेवाला ब्रिटिशों का यह दूसरा सेनापति! अब जनरल रीड सेनापति बना। यही वह अंग्रेजों का ३ रा सेनापति!

जहॉ चढाअी की योजनाअें गढने ही में अंग्रेज सेनाधिकारी व्यस्त थे, वहाँ अुस चढाअी को प्रत्यक्ष कर दिखाने में दिल्ली के क्रांतिकारी सफल हुअे थे। सभी हमलों का वर्णन तो नहीं दिया जा सकता; किन्तु, हॉ, ९ जुलाअी तथा १४ जुलाअी के हमलों का वर्णन करना चाहिये। क्यों कि अंग्रेज तथा क्रांतिकारियों का जीवट तथा पराक्रम की स्फूर्तिप्रद पराकाष्ठा अुन दिनों दीख पडी। ९ जुलाअी को अंग्रेजी रिसाला तितर-बितर हो कर भाग खडा हुआ; अुन की तोपों का मुँह भी बंद कर दिया गया। अेक सूरमाने श्री. हिल को अुस के घोडे के साथ धराशायी कर दिया। हिलने अपनी तलवार सँवारी त्यों ही तीन सिपाही अुसपर टूट पडे। हिलने दो बार अपनी पिस्तौल से गोली चलाने

का जतन किया किन्तु निशाना चूका, अुल्टे अेक सिपाहीने अुस की तलवार ही छीन ली। दोनो की भिडन्त हुअी। सिपाहीने हिलको चारो खाने चित्त मारा और अुस की छाती पर पॉव रख अुस सिपाहीने अपनी तलवार उठायी। मेजर टॉम्बसूने ३० फीट की दूरीसे, यह दृश्य देख, बंदूक का निशाना ताका और अुस सिपाही को गोली से अुडा दिया; फिर अुसने हिलको अुठाया और ज्योंही दोनों चलने को थे, दूसरा सिपाही, हिल की पडी पिस्तौल को अुठा, अुन का पीछा करते दीख पडा। मुठभेड में अुस सिपाहीने अेक अंग्रेज को तलवार से घायल किया; दूसरे का काम तमाम किया और तीसरे अंग्रेज की तलवार के घावसे स्वय कट गया। टॉम्बस् और हिल को अिस बहादुरी के लिअे 'विक्टोरिया मेडल' मिला और सर जॉन के के कथनानुसार अुस सिपाही को वास्तव में 'बहादुरशाह–पदक' मिलना चाहिये था–अिस स्वाधीनता–संग्राम में कितने ही सिपाहियों को पराक्रमी बलिदान के अुपलक्ष में 'बहादुरशाह पदक' मिलना चाहिये था! हॉ, यहभी सच है, कि जो सच्चे **सूरमा आत्मबलिदान में पिछे न हटनेवाले होते हैं, उन्हे 'बहादुर शाह–पदक' भलेही न मिले, उस से भी महत्तम हुतात्मा तथा कर्तव्यनिष्ठा का पदक प्रत्यक्ष मृत्यु के हाथों उन्हे समर्पित होता** है। उस दिन अंग्रेजों को बहुत बुरी मार पडी। अिसका बदला क्रांति-क्रांतिकारियों से लेना असम्भव था तब ये गोरे 'सूरमा' अपने शिबिरमें लौटे और गरीब भिश्तियों तथा अन्य हिंदी नौकरों को ही बेधडक काट डाला।* और, येही वे भले भिश्ती और नौकर थे जिन्हों ने ब्रिटिश

---

* सं. २९ : "बताया जाता है, कि प्रत्यक्ष शत्रुओं के न होनेपर कुछ गोरे सैनिकों ने बेचारे निरपराध कर्मियों, नौकरों तथा अन्य लोगों को कत्ल किया, जो अीसाअी–स्मशान के पास भयभीत हो कर जमा हो रहे थे! कितनी भी निष्ठा ? कितनी भी वफादार और कष्ट अुठाकर की हुअी भी सेवा क्यों न करें, पूरब की मैली- वर्दी पहने हरअेक मानव से हमारे गोरे-

सोल्जरों को लडने की हालत में रखा था! १४ जुलाओी की लडाओी में तो अंग्रेजों के बुरे हाल हुओ; क्यों कि प्रसिद्ध योद्धा चेम्बरलेन अेक क्रांतिकारी की गोली से स्वर्ग सिधारा। "हमारे दल का महान् और अतिविख्यात योद्धा चेम्बरलेन! सचमुच, वह दिन बडा असगुनी था, जिस दिन अिस वीर को प्राणघालक चोट लगने से छावनी में अुठाकर ले जाना पडा" अिस भाषा में अंग्रेज अितिहासकार अपनी अुस राष्ट्रीय हानि का करूणापूर्ण वर्णन करते हैं।

हाँ, तो १५ जुलाओी बीत गयी फिर भी दिल्ली के बुर्ज, सूरज की किरणों में नहा कर, अुज्ज्वलित ध्वजों को अूँचे कर संसार कोगरज कर कह रहे थे, 'दिल्ली आज स्वतंत्रता का निवास बना हुआ है।' अन्त में रीडने त्यागपत्र दिया। दो सेनापति तो पहले ही मर चुके थे, अब तीसरा नौकरी से छूट कर बचेगा तो जीअेगा। फिर भी अब तक दिल्ली का पतन नहीं होता! अुलटे, क्रांतिकारियों के लगातार तथा भारी चोट करनेवाले हमलों से जान बचाना अंग्रेजों के लिअे दूभर होता जाता था। अब तो क्रांतिकारियों की संख्या २० हजार हो गयी थी। अिनसे कितने भी लोग काम आ जाय, अंग्रेज़ों का अिससे कोओी लाभ न था। किन्तु अुनके थोडे भी लोग खेत रहे तो अंग्रेजों की संख्यापर निश्चित परिणाम होता। अिस से, अंग्रेजों ने मात्र बचाव की नीतिपर चलना तय किया। अेकाध हमले में क्रांतिकारिया को हरा भी दिया जाय, तो अुनकी कोओी खास हानि न होती, न अुनके हमले बंद पडते। अुलटे अधिक निश्चय से तथा निर्भीक बनकर शेखी बघारते– "देखो अंग्रेजों को पराजय के जितनी ही विजय काफी महँगी पडती है।" अिस से भारत के अन्य विभागों के अंग्रेज भी समाचारपत्रों में शिकायत करने लगे कि 'ये घेरा डालनेवाले ही बेचारे घेरे गये हैं'। अैसी बाँकी दशामें जब

सोल्जर जो द्वेष रखते हैं, वह कभी कम नहीं हो सकता।–के और मॅलेसनकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. ४३८.

तीसरा सेनापति निवृत्त हुआ तब ग्रेटहेड, चेंबरलेन और रॉटन जैसे महाशय भी दिल्लीपर आक्रमण करने के विषय में निराश-से हो गये। और अंग्रेजी छावनी ही में अब घेरा अुठा लेने के बारे में चर्चाअें छिडने लगीं। तीसरा सेनापति रीड गया और अुस के स्थान पर जनरल विल्सन आया तब अिस प्रकार की परिस्थिति थी।
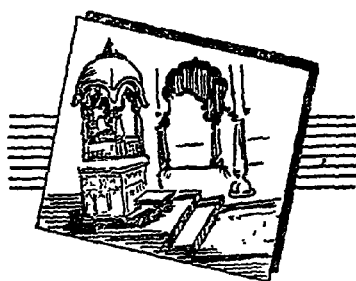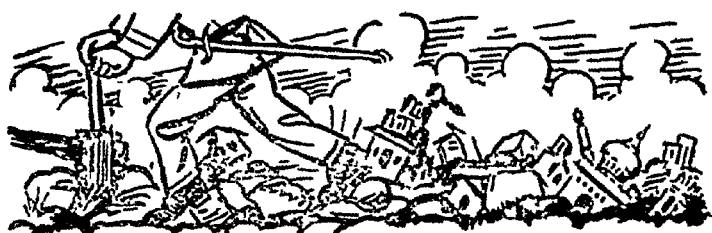
अध्याय २ रा

हॅवलॉक

अिलाहाबाद का किला सिक्ख सिपाहियों ने जब अंग्रेजों को—अपने भाअी क्रांतिकारियों को नहीं—जिता दिया, तब वहाँ पर अंग्रेजों ने अपना प्रमुख अड्डा बनाया, जो आसपास के सैनिक यातायात के लिये सुविधाजनक था। अबतक कलकत्ते जैसी दूरी के स्थान से अुत्तर भारत के सेनापरक तथा राजव्यवहारपरक कार्यों का संचालन करने में जो खतरा था वह अिस से नष्ट हो गया। लॉर्ड कॅनिंग ने, क्रांति को जडमूल से अुखाडनेतक, राजधानी कलकत्ते से अिलाहाबाद् ले जानेकी ठानी; अुस के अनुसार वह अिलाहाबादमें रहने लगा। किन्तु बीचमें कानपुर की अंग्रेजों के सिर पडी विपत्तियों के समाचार तथा सहायता के लिये अुनकी आर्त पुकार अिलाहाबाद् तक पहुँच चुके थे। तब जनरल नील ने प्रयाग की रक्षा के लिअे कुछ सेना रखकर, शेष सभी सेना को, कानपुर का मुहासरा तोडने के लिअे, मेजर रेनाड के आधिपत्य में भेज दी। यह सेना मार्गमें मिले सब देहातों को जलाते हुअे आगे बढ रही थी। अिसी समय कानपुर की सेना के सेनापति—पदपर, नील के स्थानपर, हॅवलॉक की नियुक्ति हुअी। वह जून के अन्तमें अिलाहाबाद् आ पहुँचा। वह काफी लब्धप्रतिष्ठ और मँजा हुआ अधिकारी था। अंग्रेजों के सौभाग्य से अिधर विप्लव का प्रारंभ हुआ, अुधर अीराण के साथ युद्ध समाप्त हुआ, और हॅवलॉक जैसे सुयोग्य सेनापतिके नेतृत्वमें सारी गोरी सेना, ठीक मौके समय में,

सीधी भारत आ पहुँची। अपने स्थानपर हॅवलॉक को प्रयाग के प्रमुख अधिकारी-पद पर नियुक्त किया और अुसे अुसके मातहत काम करना पडेगा यह जानकर नील को गुस्सा आ गया; फिर भी अुसने अपने व्यक्तिगत कीने को राष्ट्र कार्य के आडे-भारतकी अंग्रेजी पकड के आडे-कभी न आने दिया। सेना को संगठित करनेके जोरदार जतन अुसने जारी रखे। हॅवलॉक के नेतृत्व में जानेवाली सेना को सब प्रकारकी पूरी सहायता दी और हॅवलॉक के पहुँचने पर आज्ञाकारी बनकर सब सत्ता अुसको चुपचाप सौंप दी। अब कानपुरके गोरों की सहायता के लिअे यह सेना हरतरहसे लैस थी। हॅवलॉक अब कूच करनेही वाला था कि खबर आयी-" सर व्हीलर की हार होकर अुसने शरण ली है और अुसके समेत सभी गोरों को गंगा घाटपर कत्ल कर दिया गया '!

अपने भाअियों की हत्या का बदला लेने के लिअे अिलाहाबाद से हॅवलॉक कानपुर को शीघ्र चला। साथ में बदले की भावना से बौखलाये अेक हजार चुनिंदे गोरे पैदल सैनिक, १५० सिक्ख, अेक मॅजी हुअी रिसाले की पलटन और ६ तोपें थीं। अिन के साथ कुछ नागरिक तथा सैनिक अधिकारी भी थे। ये वेही थे जिन्हें क्रांतिकारियों ने दयाभावसे जीवित छोड दिया था किन्तु अिस अुपकार का बदला चुकाने, याने अुन्हीं सिपाहियों से लोहा लेने, अुन से भयंकर बदला लेने और नवागत अधिकारियों को कानपुर के विविध स्थानों की भौगोलिक जानकारी देने के लिअे अिस सेना के साथ चले। सिपाहियों के केवल अिशारे मात्र से जो जमलोक कि नरक में पहुँच जाते और केवल सिपाहियों की सभ्यता के कारण जिन्हे जीवित रहने का मौका मिला था, वे सभी शूर (!) अंग्रेज अधिकारी अब अिकठा हो कर बेरोकटोक सभी गाँवों को जलाते आगे बढ रहे थे।

मेजर रेनाड के नेतृत्व में फतहपुर पर कुछ दस्ते चढ आने के समाचार कानपुर पहुँचते ही, नानासाहबने अपनी सेना को अुधर भेज दिया। रेनाड की सेना को चुटकी में कुचल देने के अिरादे गढते हुअे ज्वालाप्रसाद तथा टिकासिंह की सेना फतहपुर पहुँची। किन्तु अुस समय तक हॅवलॉक की सेना

रेनाड की सेना से मिली और अिस सम्मिलित सेनाने क्रांतिकारी सेनापर तोपें दागीं। क्रांतिकारियों का अेक दस्ता रेनाड को रगडने के लिअे अुस की सेना पर टूट पडा; किन्तु अुन्हें पता चला कि हॅवलॉक का तोपखाने तथा अुस की सुसज्ज सेना से पाला पडा है। यह १२ जुलाअी की घटना है। अिस हालत में भी क्रांतिकारी डटकर लडे किन्तु अुन्हें अपनी तोपें मैदान में छोड कर हट जाना पडा। हॉं, अंग्रेज अुनका पीछा करने की हिम्मत न कर सके, तब अंग्रेजी सेना फतहपुर में घुसी। फतहपुर के क्रांतिकारियों का नेतृत्व अंग्रेजों के नौकरी में रहे डेप्युटी मॅजिस्ट्रेट हिकमतुल्लाने किया। फतहपुर में कअी अंग्रेज अफसर मारे गये थे। आज अंग्रेजी बदला अुस शहर को चखाया जायगा। भूतपूर्व मॅजिस्ट्रेट शेरेर–जिसे पहले क्रातिकारियोंने तरस खाकर जीवित छोडा था,— फिर से अपनी मॅजिस्ट्रेटी चलाने को सेना के साथ आया। पहले अुसने आज्ञा दी कि सारा शहर सैनिक लूटें। जब निश्चय हुआ कि लूटने योग्य कोअी चीज शहर में नहीं बची, तब शहर में आग लगा देनेकी आज्ञा हुअी। और अिस आज्ञापर अमल करने का सम्मान सिक्खों को दिया गया। अंग्रेज सेना चली गयी और सिक्खोंने अपने हिस्से का गॉंव जलानेका कर्तव्य पूरा कर अपना रास्ता पकडा।

अिस प्रकार अंग्रेजोंने सारा फतहपुर जीवित जला दिया; वहॉं की आग की ज्वालाअें दूरतक फैलीं और आखिर कानपुर तक पहुँच गयीं। क्रांतिकारी दस्तों की हार तथा हॅवलॉक और रेनाड के फतहपुर गॉंव जलाने का ब्योरेवार समाचार नानासाहब के पास पहुँचा तब कानपुर के सभी नेता क्रोध से जलने लगे। कानपुर पर चढ आनेवाली अंग्रेजी सेना रोकने के लिअे स्वयं नानासाहब के आधिपत्य में पांडू नदीपर सामना करने का निश्चय हुआ। अितने में खबर मिली कि अंग्रेजों से मिले कुछ देशद्रोहियों को पकडा गया है।* तब

---

* सं. ४०. फतहपुर में नानासाहब के क्रांतिकारी दस्तों की हार होने के बाद कुछ नामी गुप्तचरों को नानासाहब के सामने पेश किया गया। बंदी-गृह में पडी असहाय स्त्रियों ने दूर दूर के स्थानों को लिखे पत्र अुन जासूसों के

अुनकी तलाशी में मालूम हुआ कि बीबी की कोठी में बंदी स्त्रियों के पत्र अुन्होंने अिलाहाबाद के अंग्रेजों को पहुँचाये थे। जिन स्त्रियों को कत्ल से बचा कर नानासाहब ने जीवित रखा, अुन्होंनें जब फिरसे अंग्रेजों के साथ पत्रव्यवहार करनेका विश्वासघात करने की खबर मिली, तब अुनके बारे में क्या करना चाहिये यह प्रश्न पैदा हुआ। जब कि, अंग्रेजोंने फतहपुर जला दिया है; तब अुसका प्रतिशोध बीबी की कोठी जला कर क्यों न लिया जाय?

अिस बंदीगृहको 'बीबीगढ' कहते थे, फिरभी नानासाहब की बिचवाअीसे कुछ पुरुषोंको भी अिस बीबीगढ में आसरा दिया गया था। अुस रात की बैठक में सर्व सम्मति से यह निश्चय हुआ कि अिन सभी बंदियों को, अुनके नीच, विश्वासघाती जासूसों के साथ, मार डाला जाय। दूसरे दिन अुन जासूसों तथा स्त्री-पुरुष बंदियों को बाहर घसीट लाया गया और अेक पाँती मे खडा कर दिया गया। पहले नानासाहब के सामने अुन विश्वासघाती जासूसों का सिर तलवारसे अुडा दिया गया। अंग्रेज पुरुषों को गोली से अुडा दिया गया। फिर नानासाहब बीबी की कोठी से बाहर हो गये। तब बाहर से जनताने आकर अुन लाशों का मखौल अडाया कि 'यह मद्रास का गवर्नर। यह बम्बअी का सूबा, वह बंगालका।'

लोग यह क्रूर हँसी अुडा रहे थे तब सिपाहियों को आज्ञा मिली, कि बीबीगढ के सभी बंदियों को कत्ल कर दिया जाय। वहाँ का बंदिपाल अिस काम में हिचकिचाने लगा; तब किसी अधिक क्रूर आदमी की खोज हुअी।

पांस होनेका अभियोग अुनपर लगाया गया। अुन पत्रों के बारें में कुछ महाराजा तथा शहर के 'बाबू' लोगों का हाथ होने की आशंका थी। तब निश्चय हुआ, कि अुन जासूसों, स्त्रियों, बच्चों, तथा जिन थोडे अंग्रेज पुरुषों की जान बचायी गयी थी अन को मार डाला जाय।"—नॅरेटिव्ह ऑफ दि रिव्होल्ट; पृ. ११६.

नानासाहब का अेक अीसाअी बंदी यहीं वृत्तान्त कहता है; और अेक आया भी यह सब सच होने की गवाही देती है।

बीबी की कोठी की प्रमुख बंदिपालिका बेगमसाहेबाने कानपुर के कसाअियोंको बुलाने कहार को भेजा। शाम को, कुछ वधिक हाथमें पैनी नंगी तलवारें तथा बडे बडे छुरे लेकर क्रूर मुद्रासे बीबीघरमें आये। शाम के झुटपुटे में वे आये और पूर्ण अंधेरा छा जाने के पहले बहर निकल गये। किन्तु अितने थोडे अरसेमें भी लाल लाल खूनका सैलाब-सा दीख पडा। कसाअी अंदर आये और अुन्होंने छुरों और तलवारोंसे लगभग डेढ सौ स्त्रियों तथा बच्चों का सफाया कर डाला। सारा कमरा अेक रक्त-पोखर बना गया था, जिसमें मानवी मॉस की बोटीयॉं अुतरा रही थीं। आते समय वधिक भूमिपर चलते आये किन्तु जाते समय खून के सोतेमें पॉंव भिगोकर अुन्हे चलना पडा। अधमरों की चीखोंसे, मरने को होनेवालों की भीषण कराहों से, और केवल अपने नन्हे आकार के कारण अिस कत्ले आमसे बचे बच्चों के दयनीय आक्रदनोंसे अुस दिन की रात आर्त विलाप कर रही थी। तडके, अुन सब अभागे जीवों को बाहर ले जा कर पास के कुअेंमें धकेल दिया गया। अबतक लाशों के ढेर के नीचे दबे दो बच्चे, ढेर के हिलतेही, रेंगते हुअे बाहर आकर भागने लगे; किन्तु अेक ही वार से अुन्हे अुस ढेर में मिला दिया गया। आजतक लोग कुअें का पानी पीते आये थे; किन्तु आज वह कुऑं मानव रक्त को पी रहा था। फतहपुर के 'हिंदी' बालबच्चों की चीखें जिस तरह अंग्रेजों ने आकाश को पहुँचायीं, अुसी तरह प्रतिशोध और क्रोध से खौलते 'पांडे' लोगोंने गोरे बालबच्चों के शव ठेठ पाताल में गहरे गाड दिये। अिस तरह, दो वर्शोंमें सौ सालों तक जो पावना लेना था अुसे पूरी तरह अदा कर दिया। हिसाब चुकते। * कभी

---

* सं. ४१. क्रूरता की कमाल, अनिर्वचनीय लज्जा आदि विशेषणोंसे यह पाशविक हत्याकाण्ड वर्णित है; किन्तु ये सब बहकी हुअी कल्पनाशक्ति की गढी बातें थीं, जिनपर बिना परख विश्वास किया गया; (परिणामों का रंच भी) खयाल न करते हुअे वे फैलायीं गयीं। किसी का अंगच्छेद न हुआ; किसी की बेअिज्जती न हुअी। सरकारी कर्मचारियोंने साफ साफ शब्दोंमें

बंगाल की खाडी भी, कभी युगों के बाद सही, पट जायगी; किन्तु मुँह बाये पडा यह कुऑं अितना खून पी जानेपर भी संसार की समाप्तितक सूखा और तृषित रहेगा।

अिसी समय पांडु नदीपर भेजी हुअी नानासाहब की सेना को हरा कर हॅवलॉक आगे बढ रहा था। अिस मुठभेड में नानासाहब के भाअी सेनापति बालासाहब पेशवा के कधे में गोली लगी, जिस से अुन्हें कानपुर लौटना पडा। तुरन्त युद्धसमिति की बैठक बुलायी गयी; नानासाहब ने, आनेवाली स्थिति का सामना कैसे किया जाय अिस बारेमे सभी सदस्यों से, चर्चा की। दो प्रस्ताव रखे गये। बिना लढे कानपुर खाली कर दिया जाय; या अिस आक्रमण का तीखा प्रतिकार करें। काफी चर्चा होनेपर दूसरा प्रस्ताव सर्वसम्मति से मान्य हुआ। १० जुलाअी को अंग्रेजी सेना कानपुर के पास आ खडी हुअी। अबतक अुन्हें कानपुर के कुअें की बात मालूम न हुअी थी। व्हीलर का किला तो हाथसे निकल गया था, बीबीगढ को मुक्त करने का प्रण अुन्होंने कर लिया था। और अिसी धुनमें धूप, कष्ट या झगडे की पर्वाह न की और जरा भी आराम न किया। जब कानपुर के बुर्ज दिखायी पडे, तब हॅवलॉक में, अुसकी मनशा पूरी होनेकी सम्भावना से, नूतन अुत्साह का संचार हुआ। अुसने 'पांडे' की सेना की बातें जानने के लिअे जासूसी टोलियाँ भेजीं। क्रांतिकारियोंने अपनी व्यूह रचना बहुत चतुरता से की थी। सारी अुम्र रणमैदानमें गँवानेवाले अिस अंग्रेज योद्धा को मालूम हुआ कि क्रांतिकारियों में भी असाधारण युद्ध-तंत्र-विशारद हैं। अुसने अपने सभी सहायकों को बुलाया और अुसकी अपनी व्यूह रचना की रूपरेखा अपनी तलवारसे भूमिपर अंकित कर दिखायी। जब वह अपने लोगों को समझा रहा था, कि क्रांतिकारियों पर पीछेसे हमला करने की अपेक्षा आगे से चढाअी करनाही अच्छा है, तभी सफेद घोडेपर चढे नानासाहब

यह हामी भरी है; क्यों कि, अुन्होंने जून और जुलाअी में हुअी कत्लों से संबंधित हर बातकी खूब खोजपूर्ण तहकिकात की थी।"—के और मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड, २ पृ. २८७.

चतुरता से रचे हुअे अपने रणव्युह की सैनिकों की पाँतीमें प्रवेश कर रहे थे। अंग्रेजों को भी अपनी जगहसे नानासाहब की मूर्ति स्पष्ट दिखायी पडती थी, जो सैनिकों की हर पाँती में जाकर अुन्हे प्रोत्साहित कर घोडा आगे दौडती घूम रही थी। दोपहर में नानासाहब के बाअें पासेपर अंग्रेजों की मुकर्रर चढाअी शुरू हुअी। अिस आकस्मिक और जोरदार आक्रमण को रोकने के लिअे क्रांतिकारियों की तोपें आग अुगलने लगीं। अंग्रेजी तोपें काम में आने में कुछ देरी हुअी, तबतक नानासाहब की तोपों ने धूम मचा दी। किन्तु क्रांतिकारियों की अिस बिजयसे चिढकर असाधारण जोश से हॅवलॉक आगे घुस पडा और हायलडर सैनिक, बेधडक सीधे तोपों पर टूट पडे; रंच भी पीछे हटने का नाम नहीं। 'विजय या मृत्यू' का नारा बुलंद करते हुअे जंगली सुअर की तरह दबाते ही गये, तब अिस संगठित और ढगदार आक्रमण के आगे क्रांतिकारियों की अेक न चली और अपनी तोपें मैदान में छोडकर अुन्हे हटना पडा। अिस तरह बायाँ पासा टूट रहा था, तभी अंग्रेजी तोपों ने दाहिने पासे पर गोलों की बौछार शुरू की। अंग्रेजी सेना की जीत देखकर क्रांतिकारी सेना कानपुर के मार्ग से पीछे हटने लगी। किन्तु निराशा के धैर्य से नानासाहब ने फिर से सब को सम्हाला और बची तोपों के साथ युद्ध जारी रखा। अिस बार सिपाहियों को धीरज बधा कर, अुन्हे अुत्साहित कर अुनका नेतृत्व करने में नानासाहब को बहुत कष्ट अुठाने पडे। "अिस तरह कानपूर की लडाअी लडी गयी। क्रातिकारियोंने असाधारण वीरता दिखायी। तलवार से तलवार टकरायी, किन्तु पीठ किसीने भी न दिखलायी। दृढतापूर्वक अपनी तोपों की रक्षा की। वे निशाना भी अचूक मारते थे"।* फिर अेकबार अंग्रेजोंने जोरदार हमला किया; अिधर क्रांतिकारियोंने भी प्राणपन से टक्कर ली, किन्तु अुनकी हार हुअी और वे ब्रम्हावर्त की ओर पीछे हटे।

१७ जुलाअी को हॅवलॉक की विजयी सेना ने कानपुर में प्रवेश किया। जिस हॅवलॉक ने अपनी सेना द्वारा विजय की पहली लहर कानपुर तक पहुँचा दी तथा अंग्रेजों की डूबी प्रतिष्ठा को फिर से अूपर अुठाया, अुसे और अुसकी

* रेड पॅम्फ्लेट.

सेना को भारत में तथा अिंग्लंड में भी अंग्रेजोंने धन्यवाद दिये। अिंग्लंड में हर चौराहेमें, दुकानों की तख्तियोंपर तथा सार्वजनिक अिमारतों की दिवालोंपर हॅवलॉक का नाम लिखा गया था।

जब कानपुर लूटने की आज्ञा दी गयी तब घायल सिंहपर टूट पडनेवाले गिद्ध की तरह सैंकडों अंग्रेज अधिकारी, गोरे सैनिक तथा सिक्ख सिपाही कानपुर पर टूट पडे। बीबीगढ में भूमिपर खूनके पपडे बने थे। अर्थात् वह रक्त अंग्रेजों का होने की आशंका अंग्रेज अधिकारियों को हुअी। तब कानपुर के बहुत ब्राम्हणोंको पकड मंगवाया गया, और क्रांतिकारियोंसे संबंध होने का संदेह जिनके बारे में हुआ अुन्हें फॉसी लटकाया गया। किन्तु, हॉ, फॉसी लगाने के पहले अुन्हे वे खून के पपडे चाटनेपर मजबूर किया गया और फिर वे खून के दाग झाडू से साफ धो डालने का काम अुनसे करवाया गया। अैसा अनोखा दण्ड अुन्हे क्यों कर दिया गया? यह पूछनेपर अेक अंग्रेज अधिकारीने यों जवाब दिया "मैं जानता हूँ, कि फिरंगी के खून को छूने, या अुस के दागों को झाडू लेकर धो डालने से अुच्चवर्ण के स्पृश्य हिंदु धर्म की दृष्टिसे पतित होते हैं। हॉ, केवल अिसके ही लिअे हमने अैसा नहीं किया, तो फाँसीपर टांगने के पहले अुन की सभी धार्मिक भावनाओं को पैरोंतले कुचलकर जबतक मरनेके पहले अन्हे अितनी भी बात संतोष के लिअे न रहे कि वह हिंदुधर्म में ही मर रहे है, जबतक हम अुस की छटपट न देखें तब तक हमें संतोष न होगा कि हमने पूरा पूरा बदला लिया है।" क्रांतिकारियोंने जो कत्लें कीं अुनमें किसी तरह किसी की धार्मिक भावना को दुभाना तो दूर, अुलटे अंग्रेजोंने जब चाहा तब मरनेके पहले अुन्हे बाअिबल पढने का भी अवकाश दिया जाता था। किन्तु दिल्ली और कानपुर में कत्ल हुअे क्रांतिकारियों को अंग्रेजोंनें रंच भी धार्मिक संतोष न मिलने दिया। फिर भी कितने ही सूरमा सिद्धान्त और धर्म के लिअे, अैसी दुष्टता के होते हुअे भी हँसते हँसते बलि चढकर अुन्होंने फॉसी को पवित्र किया। चार्लस बॉल कहता है जनरल हॅवलॉकने सर व्हीलर की मृत्युका भयंकर बदला लेने की ठानी। हिंदी लोगों के झुंड के झुंड फॉसी चढाये जाते। मरते समय कुछ क्रांतिकारियोंने जिस

मनःशांति और कुलीनता का परिचय दिया, वह सिद्धान्त पर मर मिटनेवाले हुतात्मा के योग्य और निस्संदेह सराहनीय था। अुनमें अेक कानपुर का मॅजिस्ट्रेट था, जो नानासाहब के शासन में नियुक्त हुआ था; अुसे पकडकर अुसपर मुकद्दमा चलाया जा रहा था। किन्तु अुसने न्यायालय की कार्रवाअी में कोअी हिस्सा न लिया, मानों यह सब किसी दूसरे के लिअे चल रहा हो अुसे मृत्युदण्ड सुनाया गया तब वह अुठा और न्यायाधीश की ओर ध्यान न देकर, घूमकर, धैर्यपूर्वक डग भरते हुअे अुसके लिअे बनायी टिकडी पर ज्या खडा हुआ। जल्लाद जब आखरी कार्रवाअी की सिद्धतामें मगन थे तब, जैसा कि कुछ हुआ ही नहीं; शान्त दृष्टिसे देख रहा था। योगी जिसतरह समाधि में प्रवेश करता है अुस शान्तभावसे अपनी गर्दन अपने हाथों फाँसी में फँसायी; अपनी आनपर अडिग श्रद्धा होने से, अुस निर्भीकमना को मौत तो, हिन्दुधर्म द्वेष्टा फिरंगियों के पापी सपर्क से मुक्त होकर स्वर्ग के नदनवन में पहुँचने का, महूरत था। *

जब अंग्रेजी सेना कानपुर में बदले के नाम पर अत्याचार की धूम मचा रही थी, तब इतने निश्चय, अनुशासन तथा कंधेसे कधा भिडाकर लडे हुअे अंग्रेज तथा सिक्ख सैनिकों की हॅवलॉक ने बडी प्रशंसा की। थोडे ही दिनों बाद, अिलाहाबाद में अच्छी तरह सैनिक प्रबंध कर, जनरल नील कानपुर आया। दोनों समान श्रेणी के अफसर थे; तब स्वाभाविक था कि हर अेक सेना का आधिपत्य अपने हाथ रखने को चाहे! किन्तु स्पर्धा से पहले ही ढीले अनुशासन की अंग्रेजी सेना में और ही गडबडी मच जाती। यह सोचकर जनरल नील के आते ही हॅवलॉक ने अुसे साफ कह दिया, "जनरल नील, हम एक दूसरे को अच्छी तरह समझें। मैं जब तक यहाँ हूं तब तक अन्तिम सत्ता मेरे हाथ में रहेगी और आप मेरी सेना को कोअी हुक्म नहीं दे पायेंगे।" दो अफसरों के आपसी

* चार्लस बॉलकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड १, पृ २८८

मत्सर के कारण अंग्रेजों के कार्य में किसी तरह की बाधा न पडे, अिस लिअे कानपुर की रक्षा के लिअे नील वहॉं रहा; और लखनअू की सहायता के लिअे जानेवाली सेना का नेतृत्व स्वीकार कर हॅवलॉक अवध को चल दिया। कान-पुर की सुरक्षा की नील ने नयी योजना बनायी। अछूतों की एक पलटन बना कर कानपुर की रक्षा का भार अुन्हें सौंप दिया। अछूतों को स्पृश्यों के विरुद्ध उभाडने की यह चाल बडी कामयाब रही। हिंदु-मुसल-मानों का धार्मिक वैर अब नष्ट हो चुका था तब छूत-अछूतों का यह नया झगडा खडा कर दिया गया। कानपुर की हार के बाद नाना-साहब पेशवा ब्रह्मावर्त छोडे अपनी सेना और खजाने के साथ गंगापार हुअे फतहगढ में पहले जा सके। हॅवलॉक की नेतृत्व में जानेवाली अंग्रेज सेना को नानासाहब की गतिविधि का सूराग न मिलने से वह सीधी लखनअू गयी। जून के अन्त तक सारा अवध प्रांत तो क्रांतिकारी भीडों का छत्ता बन गया था। अिस दशा में हेन्री लॉरेन्स को राहत दे कर लखनअू का घेरा अुठाना अति कठिण काम था। फिर भी विजय की अुन्माद की धुन में हॅव-लॉक मानता था कि गंगापार हो कर लखनअू की मुक्तता करना अुसके बांअें हाथ का खेल है। जिस तरह पंजाबवाली सेना मानती थी 'बस, दिल्ली पर हमारी नजर पडी और दिल्ली जीती;' अुसी तरह हॅवलॉक की सेना भी अिस मस्ती में थी, कि 'गंगापार होने ही लखनअू का काम तमाम करेंगे' कानपुर से लखनौ कुछ दूर नहीं है। और अिलाहाबाद से कानपुर चढ आते समय हॅवलॉक ने जो फुर्ती और टेक दिखाअी थी अुस हिसाबसे अितना महान् साहस दिखाने की प्रेरणा अुसे हो आना ठीक ही था। किन्तु अवध प्रांत में अेक चप्पा भूमि अैसी न थी, जहॉं राष्ट्रीय क्रांति की ज्वाला भडक न अुठी हो। भारत में पहले पहल विद्रोह करनेवाले पुरबियो का, अवध तो झूला होने से अुनके मॉंबाप, बालबच्चे, नातेदार सबके सब अपनी झोंपडियों या मकानोंमें क्रांतिभाव से भर गये थे। फिर भी विजय से अुन्मत्त बने अिस अंग्रेज सेनापति को वह अेक नगण्य बात थी। अुसे घमण्ड था, 'बस, वहॉं

पहुँचे नहीं और लखनअू लिया नहीं, फिर दिल्ली पर जा कर अुसे भी जीत कर, आगरा चलेंगे। अिस आत्मविश्वास से साथ में दो हजार गोरे सैनिक तथा १० तोपे ले कर २५ जुलाअी को हॅवलॉक गंगापार हुआ। जनरल नील कानपुर में रहा और हॅवलॉक लखनअू पर चढा गया। अिस तरह १८५७ के जुलाअी के अन्त में अंग्रेजी सेना की स्थिति थी।

अध्याय ३ रा

बिहार
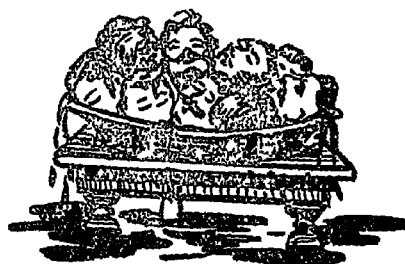
अुत्तर पश्चिमी सीमा प्रान्त, प्रयाग, आगरा, बंगाल आदि प्रांतों को अपने सैलाब में बहा ले आनेवाली क्रांति की लहर से बिहार प्रान्त या अुसकी

राजधानी पटना क्यों कर अछूते रह सकते हैं। बिहार में महत्त्वपूर्ण स्थान थे गया, आगरा, छपरा, मोतिहारी और मुजफ्फरपूर। अिस प्रान्त की प्रमुख छावनी दानापुर में थी। यहाँ ७ वीं, ८ वीं तथा ४० वीं हिंदी पलटनें, अुन पर दबाव डालने के लिअे अेक गोरी पलटन तथा युरोपियन तोपखाना, अितनी सेना मेजर जनरल लॉअिड के आधिपत्य में थी। पास ही सिगवाली में मेजर होम्स के आधिपत्य में १२ वीं हिंदी रिसाला पलटन रखी गयी थी।

अुस समय अितिहास-प्रसिद्ध नगर पटना में वहाबियों का गढ था। कमिशनर टेलर मानता था कि ५७ की क्रांति में पटना अवश्य हाथ बॅटाअेगा, जिस से अुस ने वहाबियों के नेताओं पर खास निगरानी रखी थी। अंग्रेजी पराधीनता का पूरी तरह द्वेष करनेवाले पटना में, पहले १८५२ में अंग्रेजी राज को उलट देने के हेतु अेक गुप्त क्रांतिकारी संस्था स्थापित हुअी थी। अिस संस्था में प्रतिष्ठित तथा धनी नगर सेठ, पेढीवाले, शाहुकार तथा जमींदार थे, जिस से क्रांतिकारी को आवश्यक धन की कमी न थी। अिस संस्था के पदाधिकारी प्रसिद्ध मौलवी होने से संस्था का कार्य बहुत बडे पैमाने पर

चलता था। लखनअू की गुप्त क्रांतिकारी संस्थाओं तथा दानापुर के सिपाहीयो से गुप्त संबंध जोड कर पत्र-व्यवहार भी शुरू कर दिया गया था। वरिष्ठ पुलीस के अधिकारी से लेकर ठेठ साधारण ग्रंथ-विक्रेता तक हर अेक पटना-निवासी अंग्रेजी सत्ता पर वार करने के ' अुस क्षण ' की अुत्कट अुत्सुकता से राह देख रहा था।

अिन सभी गुप्त संघों का प्रमुख कार्यालय पटनाही था। अुस के सदस्यों में जनता के सभी वर्गों के प्रतिनिधि थे। सारी जनता को 'फिरंगी' शब्दसे बडी घृणा थी। स्वयं पुलीस के आदमी क्रांतिकारियोंसे मिले होने से रातमें गुप्त बैठकों का काम बेखटके चलता था। क्रांतिकारी सदस्यों ने कअी बहानोंसे सेंकडों क्रांतिकारियों को नौकर की हैसियत से अपने पास रखा था; अर्थात् मुख्य संस्था से वे वेतन पाते थे। अिस तरह फिरंगी राज के द्वेष से जलनेवाले पटने से प्रांतभर में अुस की लपटें जनता को गुप्त प्रेरणा दे रही थीं दानापुर के सिपाही रात के अंधेरेमें पेडों के नीचे अिकट्ठे हो कर भिन्न भिन्न योजनाअें बनाते थे और कहीं किसी गश्ती अंग्रेज के ध्यान में यह बात आ जाय तो अुसे अकेले में मार डालते थे। अिस तरह सारी जनता, अपनी शक्ति संगठित कर क्रांति के लिअे सिद्ध हुअी तब दिल्ली और लखनअू की गुप्त संस्थाओं से अुन्हो ने बातचीत शुरू की।

विद्रोह का समय निश्चित करने के अन्तिम निर्णय की चर्चा शुरू हुअी थी, कि गोरे कमिशनर टेलर को मेरठवाले बलवे के समाचार मिले। साथ साथ खबर मिली कि दानापुरवाल सिपाहियों में भी अशान्ति है। कमिशनर टेलर बडा धूर्त था। समूचा भारत बलवा करे तो भी सिक्ख अबतक देश-द्रोही ही बने रहे थे। अिसी से पटना की रक्षा के लिअे श्री. रॅट्रे के नेतृत्व में २०० सिक्खों को टेलरने तुरन्त भेज दिया। पटना जाते समय लगातार हर स्थान में घृणा और गालियों से अुनका स्वागत होता था। लोग अुन्हें राष्ट्र-द्रोही, निमकहराम कहते थे; और गाववाले व्यंग से अुन्हें पूछते थे, " तुम गुरु नानक के सिक्ख हो या धर्मभ्रष्ट फिरंगी ? " अुन्हें साफ साफ या गुप्त अुपदेश भी दिया जाता कि ठीक समय आनेपर ' तुम देश की ओर से खड़

हो जाओ।' जब वे पटना पहुँचे तो जनता का गुस्सा मर्यादासे बाहर हो गया। अुस गरम दलके नगर का हर नागरिक अुन्हें छूने से तथा अुनकी छाया से भी दूर भागता था। और तो और; अुस स्वातंत्र्यप्रेमी नगर के सिक्ख गुरुद्वारे में वहाँ के सिक्ख ग्रंथियों ने अिन देशद्रोहियों को अंदर पग धरने की भी मनाही की। क्यों कि, ये सिक्ख सैनिक, वे मानते थे, गुरु गोविन्दसिंग के सच्चे सिक्ख नहीं हो सकते। अिन घटनाओंसे स्पष्ट है, कि स्वधर्म और स्वराज्य के सिद्धान्त को पटनेमें अेक ही माना जाता था; जिस का यही प्रमाण था।*

जब ये सिक्ख सैनिक पटना पहुँचे तब प्रांतभर के क्रांतिकारी आंदोलन को जड से अुखाडने के जतन टेलर ने शुरू किये। तिरहुत के जमादार वारिसअली का बर्ताव संदेहप्रद मालूम हुआ तब अफसरोंने अुसके घर को घेर कर अुसे पकड रखा। अुस समय अंग्रेजों का नौकर यह जमादार, गया के अली करीम नामक क्रांतिनेता को पत्र लिख रहा था। क्रातिकारियों के पत्र-व्यवहार का प्रत्यक्ष प्रमाण ही प्राप्त होनेसे अुसे अेकदम फाँसी का दण्ड दिया गया। जब अुसे फाँसी की टिकटिकी की ओर ले जाया जा रहा था, तब वह चिल्लाया 'कोअी स्वराज्य का भगत यहाँ मौजूद हो तो वह मुझे छुडावे।" किन्तु अुस की पुकार किसी स्वतंत्रता के पुजारी के कान में पडने के पहले ही अुस की मृत देह लटक रही थी।

अली करीम को पकडने की आज्ञा देकर अेक गोरे दस्ते को गया भेज दिया गया। जब अुस दस्ते का कमांडर श्री. लुअिस अली करीम के पास पहुँचा तब वह हाथी पर चढकर भागा; दोनों में अच्छी होड लगी। किन्तु दर्शकोंने निष्पक्ष होकर यह तमाशा देखने के बदले मर्यादा तोड दी। आसपास

*(सं.४२) पटनामें सिक्खों के पग धरते ही अेक पागल फकीर रास्ते में दौडा और। अशिष्ट धमकियाँ देकर, मुट्ठी बांधकर अुन्हे देशद्रोही, विश्वासघाती आदि गालियाँ बकने लगा।—टेलरकृत 'पटना क्राअिसिस'

के देहातियों ने जब देखा कि अपने भाअियों का पीछा फिरंगी कर रहा है, तो अुसे खूब हैरान करने लगे। कोअी अुसे अुलटा ही रास्ता बताता, तो अपना टट्टुआ बीचमें दौड़ा कर मार्ग में रुकावट पैदा करता। अिस परेशानी तथा निराशा से अूबकर अुस अंग्रेज अधिकारीने बेतहाशा भागनेवाले अली करीम का पीछा करने का काम अपने हिंदी नौकर को सौंपा और वह स्वयं खाली हाथ लौट आया। वह नौकर भी गोरोंका कट्टर द्वेष करनेवाला होनेसे पीछा करने के बदले अपनासा मुँह बनाकर अपने 'स्वामी' के पास चला आया।

प्रान्त में अिस तरह गिरफ्तारियों का हंगामा जारी था; अिधर शहर के कअी प्रमुख नेताओं के नाम टेलर के पास पहुँच गये। अुसने सब को अेक साथ सहसा पकडने का दाँव रचा! गुप्त समितिओं की बैठकें अिन्हीं नेताओं के घर पर होती थीं। टेलर को अिस की पूरी कल्पना न थी, कि और कौन कौन अिन नेताओं के साथी थे तथा अुन की क्या योजनाअें थीं; फिर भी तीन मुल्लाओं के बारे में अुस की निश्चिती हो गयी थी, कि वे अवश्य षड-यंत्रकारी थे और अुन्हे गिरफ्तार करना अत्यंत आवश्यक था। प्रकटरूप से अुन्हें पकडने से शायद वही असंतोष फूट पडेगा, जिसे दबाने का अिलाज वह कर रहा था। अिस डर से अुस ओमानदार (!) अफसर ने अेक अनोखी योजना बनायी। अेक दिन कुछ महत्त्व के राजनैतिक प्रश्नों पर परामर्ष करने के लिअे टेलरने शहर से कुछ चुने हुअे लोगों को बुला भेजा। जब सब निमंत्रित आ पहुँचे तब अुसने सिक्ख सैनिकों को वहाँ तैयार रखा; और बैठक समाप्त होनेपर जब निमंत्रित घर जानेवाले ही थे, तब टेलरने तीन मौलवियों को रोककर हँसते हँसते कहा, 'अैसी अशान्ति के दिनों में आप को खुला छोडना खतरनाक है' और अुन्हे गिरफ्तार किया। अर्थात् टेलरने यह काम अंग्रेजों के कल्याण के लिअे किया था; तब अिस फुर्तीले अुपाय पर, टेलर को हर तरफसे सराहा गया।

अिस तरह खून की अेक बूँद भी न गिराते हुअे प्रमुख हिंदी क्रांतिकारियों को गिरफ्तार करने के बाद, पटना में भी गिरफ्तारियाँ करने का निश्चय किया। अुस की योजना यह थी, कि ये गिरफ्तारियाँ अितनी अचानक हों कि

पटने के लोग अिस हंगामे से अशान्त होने के पहले सब काम पूरा हो जाय। अुसने दो आज्ञाअें जारी कीं (१) पटने के लोगों के सभी हथिहार छिन लिअे जायँ और (२) रात के नौ बजे के बाद् कोअी घर से बाहर न निकले। दूसरी आज्ञा से गुप्त समितियों के काम में बाधा पडने लगी; और शस्त्रास्त्रों का संग्रह करना कठिन हो गया। अबतक पटने के षडयंत्रकारी दानापुर से बलवे की सूचना पाने की राह देख रहे थे। किन्तु क्रांति को खोद् डालने का यह दमनचक्र जब शुरू हुआ, तब, अिस प्रकार रौंधे जाने की अपेक्षा तुरन्त जोरदार बलवा करनाही अुन्हों ने तय किया। ३ जुलाअी को पीर अली नामक नेता के घर सब लोग अिकट्ठे हुअे और अुन्हों ने बलवे की योजनाअें पक्की की। फिर क्रांतिके झण्डे हाथ में लेकर क्रांति के नारे लगाते सब लोग बाहर आये। लगभग २०० क्रांतिवीर शहर से जुलूस से गुजरे और गिरजाघर पर चढाअी की। कुछ सैनिकों के साथ लायल नामक अेक गोरा अुन को रोकने जब आगे बढा तब पीर अलीने अुसे गोलीसे अुडा दिया। और अन्य साथियों ने अुस गोरे की लाश की अितनी धज्जियाँ अुडायीं, कि अुस का हुलिया ही नष्ट हो गया। तब 'राजनिष्ठ' सिक्खों के साथ रैट्टे चढ आया। अुसने क्रांतिकारियों पर बडा जोरदार हमला किया। जब सिक्खोंने अपनी मातृभूमि के पेट में अपनी तलवारें घोंपी और अुस के रक्त से वे नहाये, तब शस्त्रास्त्र तथा अनुशासन में श्रेष्ठ अिस सेना के सामने बेचारे मुठ्ठीभर क्रांतिकारी क्या टिक सकते? अंग्रेजोंने अेक के बाद् अेक सभी नेताओं को पकड लिया। लायल का घातक पीर अली भी अुन में था।

पीर अली लखनवी था, किन्तु गत कअी वर्षों से पुस्तक विक्रेता का धंदा कर पटने में अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुका था। जितनी पुस्तकें वह बेचता अुन सब को पहले पढता, जिस से क्रांतिकारी विचारधारा को पूर्णतया पी गया था। परावलंबित्व तथा पराधीनता से वह अूब अुठा था। दिल्ली तथा लखनअू के क्रांतिकारियों से अुसका पत्रव्यवहार हमेशा होता रहता था। वह अपने जाज्वल्य देशाभिमान की दीक्षा दूसरों को दिया करता। धधे से पुस्तक विक्रेता होनेपर भी पटना के क्रांति नेताओं में अुसकी बडी प्रतिष्ठा थी। गुप्त

संस्था के धनी सदस्यों से धन प्राप्त कर अुसने काफी लोग सशस्त्र बनाये थे और अुन सबको ब्रिटिश शासन के विरुद्ध निश्चित समय पर अुठने के लिये शपथबद्ध कर लिया था। कमिशनर टेलरने पटना में ज़ुल्म करना और सताना शुरू किया तब अुसका खून खौलने लगा, जिसने पीर अली को शान्त रहने न दिया। वह स्वभाव से कडा, साहसी और शूर था। अपने भाअियों की यन्त्रणाअें वह देख न सका; और, जैसा कि अुसने स्वयं कहा—'समय से पूर्व अुठा'। पीर अली को फाँसी का दण्ड दिया गया। उस के हाथ भारी बेडियों से बाँध दिये गये थे। बेडियाँ अितना कस कसकर दबायी जाती थीं कि मांस में गढने से कलाअियों से लहू टपकने लगा। वधमंच पर जब वह खडा हुआ तब उसके मुखपर वीरोचित हास्य लहरा रहा था; वह अपनी मौत का सामना हँस कर रहा था। हाँ, जब अुसने अपने प्यारे पुत्र का नाम लिया तब अुसका गला भर आया। अिस भावावेग का मौका देख अंग्रेज अफसर बोला, 'देखो पीर अली। अब भी समय रहते अपने साथी नेताओं के नाम बता दो और अपनी जान बचाओ।' झट फिरंगि से मुखातिब हो कर निर्भीक और खरे शब्दों में अुसने कहा, 'देखोजी!

आयु में अैसे कुछ प्रसंग होते है जब प्राण बचाना आवश्यक ही होता है, किन्तु दूसरे अैसे भी प्रसंग होते है जब आत्मबलिदान ही महत्त्वपूर्ण साबित होता है। अभी दूसरे प्रकार का प्रसंग है, अिस समय मौत को गले लगाने से अमरत्व प्राप्त होगा।'

अिस के बाद अंग्रेजों के कअी अत्याचारों को स्पष्ट शब्दों में वर्णन कर पीर अली बोला.

तुम मेरी हत्या करोगे या मुझ जैसे कअिको तुम फाँसी से लटकाओगे किन्तु हमारी साधना को तुम कभी न मार सकोगे। मेरे मरने पर लहू की हर बूँद से हजारों वीर उठ खडे होंगे और तुम्हारा राज नष्ट कर देंगे।"*

---

* स. ४२ कमिशनर टेलर स्वयं कहता है पीर अली स्वयं साहसी और

अिस प्रकार की भविष्यवाणी का अुच्चारण कर; भारतभूमि की शानमें रंचभी दाग न लगाते हुअे पीर अली मौत के द्वार से प्रातःस्मरणीय महान् देशभक्तों के समुदाय में ना पहुँचा।

"मेरे लहू से हजारो वीर अुठ खडे होंगे!" अुस वीर हुतात्मा की भविष्यवाणी झूठी नहीं हो सकती थी; न हुअी। अुस के फाँसी जाने का समाचार सुन कर दानापुर की अत्यंत 'राजनिष्ठ' पलटन २५ जुलाअी को अुठी! अंग्रेजी तोपखाने की पर्वाह न करते हुअे तीन हिंदी पलटनों ने कंपनी सरकार की वर्दी चीर फाड कर सोन नदीपार चल दिया। मुख्याधिकारी मेजर जनरल लॉअिड के बुढापे से तथा अुस में समाये सिपाहियों के डर से गोरी सेना अुन का पीछा न कर सकी। मेजर जनरल अपने बुढापे के कारण भलेही कुछ कर न सके, अुधर, क्रांतिकारी पलटनें जिस ओर रुख कर जा रही थीं, जगदीशपुर के राजमहल में, ढलती अुम्र मे भी भुजाओं तथा तलवार में तरुणों सा तेज दमकता था, और अपनी मूछों में शान से बल देता था, वह वृद्ध वीर श्रेष्ठ, वहाँ खडा था। अिस वीरनेता के झण्डे के नीचे सब सिपाही जमा हो रहे थे।

स्वतंत्रताप्रेमी जनता तथा सिपाहियों के सभी जतन लगभग हर समय विफल कर देनेवाला अेक महान दोष दीख पडता था और वह था सुयोग्य नेता की कमी! शाहबाद जिले में कम से कम जगदीशपूरने तो अिस कमी को पूर दिया था और अिसीसे सिपाही सोन पार हो कर सीधे वहीं गये। वहाँ अुन्हे स्वाधीनता का युद्ध चलानेवाला सुयोग्य नेता मिलानेवाला था। वीरतासे छलकता, अद्वितीय परा-

---

दृढमति (धर्म) हठीला था। बेढंगा रूप, क्रूर तथा कठोर चेहरा होते हुअे भी वह शान्त, संयमी था। बोली तथा चालचलन सम्मानशील थे, अिस तरह के लोग, अुन की अजेय टेक के कारण, खतरनाक दुश्मन होते हैं और अुनकी कठोर आन के कारण, कुछ हद तक, आदर और प्रशंसा के पात्र होते है।"

क्रमशील तथा प्राचीन नामी राजपूत कुल का सपूत यह स्वराज का नेता अपने कुँवरसिंह नामसे अुस कुलकी कीर्ति बढा रहा था। शाहाबाद के विस्तृत भू प्रदेशपर अिस वंश का प्रभुत्व युग युगसे अखण्ड चल रहा था, जिससे जनतामें अिस पुरातन राजवंश के लिअे स्वाभाविक ही अपनौवा तथा प्रेम था। बडे बडे साम्राज्य के बवडर भारतमें अुठे और शान्त हुअे; किन्तु अिस हेरफेर में भी यह प्रदेश परोपकारी, दानी राजपूत राजाओं के छत्रतले स्वातंत्र्य और स्वराज में सुखी था। सैंकडों अराजों के झंझाओं में कुँवरसिंह के राजवंश का बरगद धूप, पवन, ठंढ के आघातों को अपनी चोटीपर सह करभी, अपने पत्तों तथा शाखाओं में घोंसले बनाकर रहनेवाले निरीह पंछिओं की रक्षा तथा पोषण करते हुअे अटल खडा था। यह राजवंश अपनी प्रजा को पुत्र के समान प्यार करता था और अुनकी प्रजाभी अपने राजा को प्रभु का प्रतिनिधि मान कर पूजती थी। किन्तु विदेशी अत्याचारी सत्ताधीशों की आँखों में, ये आपसी प्रेम तथा पूज्यभाव के संबंध, कॉंटे के समान खटकते थे; अिसी से अुन्हों ने अिस राजवंश को मटिया मेट करने की ठानी। सहसा स्वराज का छत्र फट गया और सारा प्रदेश असहाय हो गया। बरगद पर ही निर्दयी गाज गिरने से आसरा टूटे पंछी चीखते हुअे अिधर अुधर घूमने लगे। और अिस अपने राजवंश तथा भारतपर हुअे अन्यायों का बदला लेने के विचारमें जगदीशपूर के अपने राजमहाल की बारहदारीमें यह बूढा युवक कुँवरसिंह अपनी मूँछों में बल देते हुअे खडा था।

बूढा युवक! हाँ, सचमुच ही आयु से बूढा होनेपर भी नौजवान-सा दीख पडता था। लगभग अस्सी धूपकाल अुसके सिर से गुजर चुके थे, फिर भी अुस के हृदय की वीराग्नि ज्यों कि त्यों प्रज्वलित थी; अुस की भुजाओं के स्नायुओं में अब भी नररुंडों की माला गूँथने की सामर्थ्य फडक रही थी! ८० वर्ष का कुँवर और फिर सिंह! अंग्रेज अिस देश को लूटते जायँ और यह देखता रहे? असम्भव! अवध का राज डलहौसी के हडप जानेपर स्थान स्थानपर खोदकर तथा टीलों को तोडकर भारतभर को समथल करनेके काम में अंग्रेज लगे हुअे थे। और अिस धंधे में कुँवरसिंह का राज भी पिसा गया। जिस

तलवार के बूतेपर अंग्रेजोंने अैसे अक्षम्य, निर्दय तथा अन्याय्य ढंग से सारे भारत तथा स्वराज का सत्यानाश किया था अुस तलवार के टुकडे टुकडे कर देने की प्रतिज्ञा कुँवरसिंहने की थी। और तुरन्त अुसने नानासाहब से सहयोग शुरू किया।

अेकाअेक भीषण रणगीत के सुर सुनायी देने लगे। कुँवरसिंह क्रांति की योजनाअें बना रहा है, अुसने भारतभर के क्रांतिसंस्थाओं से संबंध स्थापित किया है और पटना के सैकडों सिपाही गुप्तरूप से अुस के वश में हैं, अिस मतलब के कअी समाचार बहुत दिनों से कमिशनर टेलर के कानों में पड रहे थे। किन्तु ८० साल का यह बूढा पलंगपर पडे शांन्तिसे मृत्यु की राह देखने के बदले समरांगण में कूदने के लिअे बेचैन है, यह बात अुसे सत्य और सम्भव न लगती थी। और कुँवरसिंह से 'राजभक्ति' के पत्र अबतक जो आया करते थे! फिर भी अंग्रेजों की हमेशा की अुदारतासे टेलरने. वह अपवाद-नथा कुँवरसिंहको लिखा, 'अब आप बहुत वृद्ध हो गये है और आपका स्वास्थ्य भी अितना अच्छा नहीं है। आपकी शेष आयुके काल में आप के सहवास में रहने की मुझे कुरेद पड गयी है। सो, आप, कृपया, यहाँ आकर मेरी सेवा को स्वीकार कर सम्मानित करेंगे तो आप के बडे अुपकार होंगे। मेरे अिस निमन्त्रण को न टाला जाय, अैसी आशा करने वाला भवदीय--टेलर "। किसी समय अफ़ज़ल-खाँने अिसी तरह का निमंत्रण शिवाजी के पास भेजा था। जगदीशपुर के चतुर राजपूतने भी अुसका मन्तव्य जान लिया कि, अितने प्रेम और आदर के साथ दिया निमंत्रण, चुपचाप बंदिशाला में ठूँस देने का दूसरा नाम है। अुसने अुत्तर लिखा; 'श्रीमान् जी, मै अत्यंत आभारी हूँ। आपने ठीक ही लिखा है कि मेरा स्वास्थ्य अच्छा नहीं है, जिस से मैं पटने, शायद, नहीं आ सकूँगा। मेरे स्वास्थ्य में कुछ सुधार हो जाते ही मै तुरन्त आप की सेवा में अुपस्थित हूँगा'। कुँवरसिंहजी! सचमुच, तुम्हारा मनःस्वास्थ्य तथा शरीर-स्वास्थ्य, ठीक नहीं है! और हाँ, फिरंगी का कुछ खून बहा कर कुछ स्वास्थ्य

सुधर जाने पर तुम पटना जाओगे यह भी सत्य है ! किन्तु किस की सेवा में ? सो बात दूसरी है।

अिसी समय दानापुर के विद्रोही कुँवरसाहब को चंगा करने के लिअे औषधि ले आये। कुँवरसिंहजी ! अब काहे की देरी ? "हम मातृभूमि की सौगंध लेते हैं; हमारे धर्म की शपथ; आप की शपथ ! अब म्यान फेंक दीजिये; स्वराज्य के लिअे तलवार सँवारिये। आप ही हमारे राजा, नेता, सेनापति ! आप राजपूत–कुल–भूषण ! अब आप रणमैदान में चलिये। अुन स्वातन्त्र्य–प्रेमी सिपाहियोंने अिस तरह हों–हल्ला मचाया। कुँवरसिंह के ब्राह्मण पुरोहितने भी वही मति दी; और शत्रु को चीरने के लिअे तड़पती अुस की तलवारने भी अुसके पास यही कानाकानी की। *तब हाथी पर से पटने जाने की भी जिसे शक्ति न थी, वह ८० वर्ष का बूढा वीर अपनी रुग्ण-शय्या से फुर्ती से अुठा और ठेठ समरांगणमें जा डटा।

अिस के बाद विद्रोही सैनिक जगदीशपुर से शाहाबाद जिले के प्रमुख नगर आरा को आये। वहाँ का खजाना लूट कर अंग्रेजों के बंदिगृह, कार्यालयों तथा ध्वजों को तोड़फोड़ डाला। अन्त में अेक छोटे किले की ओर मुड़े। चतुर अंग्रेजों ने बुरे समय में रक्षा का स्थान बना कर वहाँ शस्त्रास्त्र, गोला-बारूद, अनाज तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का संग्रह कर रखा था। अिन मुट्ठीभर अंग्रेजों के लिअे पटने से पचास सिक्खों का अेक दस्ता भी भेजा गया था ! कुल ७५ आदमी पूरी सिद्धता के साथ जिस बुरे समय की चिंता कर रहे थे वह आखिर आ पहुँचा। क्रांतिकारियों ने किले को घेर लिया।

जब ये २५ गोरे अपने ५० सिक्ख रक्षकों के साथ बड़ी टेक से प्रतिकार कर रहे थे, तब क्रांतिकारियों ने कोअी चढाअी न की; बस, घेरा दृढ कर के रह गये। शायद अुन्हें लगा होगा कि किला सहज में हाथ आयगा,

---

* "दि ब्राह्मणस् हॅव अिनसाअिटेड हिम टु म्यूटिनी ॲण्ड रिबेलियन।" मेजर आयर्स 'ऑफिशिअल डिस्पॅच, (अर्थात् ब्राह्मणोंने कुँवरसिंह को विप्लव तथा बलवे के लिअे भड़काया)

चढाओी कर आदमी तथा समय गँवाने की आवश्यकता ही नहीं है। शायद् आसपास के प्रदेशपर तथा अंग्रेज छावनियोंपर नजर रखनाही अधिक महत्त्वपूर्ण मालूम हुआ होगा। कुछ अिन कारणों से और कुछ अिस कारण से, कि किले की तोपें जोरदार मार कर रही थीं, हमला करने के बदले सिपाहियों ने भी तोपों की मार शुरू की। अेक दो जगह सुरंग अुडाये गये। थोडे ही दिनों में किले के पानी का खजाना खूटा। तब शूर सिक्ख अंग्रेजों की छटपटाहट देख न सके। २४ घंटों में अुन्हों ने किले में अेक कुआँ खोद डाला और साथ साथ वे राक्षसों के समान लड भी रहे थे। कानपुर के गोरों की क्या दशा हुआी थी अिस की पूरी जानकारी होने से किले के गोरे, शर्ती शरणागति के लिअे सिद्ध न थे। जब, अिन गोरों के साथ किलेमें सिक्ख सैनिक भी लडने की बात क्रांतिकारियों को मालूम हुआी, तब वे क्रोध से पागल हो गये क्यों कि, फिरंगीयों को हिंदी सैनिकों के घेरने की बात न रही, वह तो कुँवरसिंह के गुरु गोविंदसिंग के चेलो को घेरे में पकडने की बात हुअी सिक्ख असाधारण शूर किन्तु नीच, देशद्रोही, थे। हर शामको अुन्हें हर तरह से अुनके कर्तव्य का भान कराने की कोशिशें की जाती थीं। क्रांतिकारी दूत खम्भे की ओट खडे होकर चिल्लाकर अुपदेश देते, " ओ वाह गुरुदे सिक्खो ! फिरंगी की सहायता कर तुम किस नरक की कमाअी कर रहे हो ? जिन्होंने अपना स्वराज नष्ट किया, जिन्होंने अपनी मातृभूमि की विडंबना की और जिन्होंने अपने धर्म को अनाथ कर दिया अुनकी ओरसे लडकर, प्यारो ! तुम किस नरक की सामग्री जोड रहे हो ? " अुन सिक्खों को क्रांतिकारी धर्म, देश तथा स्वाधीनता की शपथ देते। अंतःकरण को पिघलानेवाली प्रार्थनाअें करते और फिरंगी का साथ छोडने का आग्रह करते। अन्त में अुन्हें धमकी भी दी जाती कि यदि अत्याचारी फिरंगियों की सहायता करने से तथा देशद्रोह करने से वे बाज न आयें तो अुन सब को कत्ल कर दिया जायगा। किन्तु अिन सभी अुपायों का सिक्खोंपर कोअी असर न होता; वरंच अिस के अुत्तर में वे क्रांतिकारियोंपर गोलियों की वर्षा करते; और अंग्रेज अुन्हे ' शाबाश, शाबाश ' कह कर तालियाँ पीटते।

अिस तरह घेरा तीन दिन चालू था। तीसरे दिन २९ जुलाअी को सुदूर से अंग्रेजों को तोपों की गडगडाहट के सुनाअी देनेपर वे चौंके। अुन की बाछें खिल गयीं। क्रांतिकारियों को मार कर घेरा तोडने के लिअेही यह अंग्रेजों की सेना आ रही थी न? हाँ,—थी वह अंग्रेजी सेना। दानापुर की अिंग्लिश पलटन से लगभग २७० गोरे सैनिक और डन्बार के नेतृत्व में १०० सिक्ख अिस घेरे को तोडने क लिअे सोन के तट पर आ पहुँचे। अंग्रेजी सेना अितनी आनंदपूर्ण और विजयाशापूर्ण अिसके पहले कभी किसीने न देखी थी। सोन को पार कर आरा की सीमापर यह सेना शामतक पहुँच गयी। अुजले पाख का चॉंद भी अुन की विजय में हिस्सा लेने अुन के साथ दौड रहा था। कॅप्टन डनबार! चॉंदनी के रहते तुम अपनी सेना की व्यूहरचना कर लो, क्यों कि, अभी अंधेरा होनेवाला है। अिस व्यूह में पहली हरावल में सिक्ख सैनिकों का रखनाही अुचित होगा। और सिक्ख भी, मानो, अुन की वीरता का गौरव मान कर कदम बढाने आगे आये। आरा के घनघोर अरण्य में से रास्ता दिखानेवाला वह काला अगुआ है न? अुसे आगे रखो और, हे वीरवर! चांदनी में चमकनेवाली अपनी पैनी तलवारें लेकर आगे बढो! पेड पीछे चले गये, मील के बाद मील पीछे छोडे गये, रास्ता खतम; और आरा का पुल भी पास आ गया। अैं! यह क्या? शत्रु कहाँ है? अेक भी क्रांतिकारी कहीं भी क्यों नहीं दिखायी देता? कायर कहीं के! भाग गये होंगे। बस, डनबार आ रहा है, सुनकरही भागे? सिकंदर भी अपने शत्रुओं को अितना घबराया न सका होगा। चॉंद! इतने समय तक शीत तथा समीर के झोंकों में घनघोर युद्ध देखने के लिअे तुम ठहरे; किन्तु तुम केवल क्रान्तिवीरों की चातुर्यपूर्ण पीछेहट देख सके हो। अच्छा, अब जाओ! अधिक निराशा होनेतक तुम क्यों कर यहाँ ठहरते हो? रात की तमोमय शाल अिस संसारपर अुढाकर अपने आरामगाहमें सुख से जाओ। चॉंद भले लौट आय किन्तु डनबार, देखो, तुम न कभी पीछे हटना। यह देखो यहाँ अँबराअी है, और पॉंडे मिल जाने की आशा तज दो। हैं! यह काहेकी आवाज? शायद पवन से आमके पत्ते तो नहीं सरसराते? सॉंय; सॉंय; अंग्रेजो, सावधान!

दसों दिशाओं से गोलियों की बौछारें होने लगीं। अबराअी की डाली डाली से बंदूकें तनी हुअी थीं और वे भी फिरंगीपर निशाना ताक रही थीं ! कहीं कुँवरसिंह तो नहीं आया ? अंग्रेज आये तो लडने, पर किस के साथ ? शत्रु का अेक भी मानव दीख नहीं पडता। अँबराअीमें, रात के भीषण अंधकार में गढहों में, टीलोंपर, चहूँ ओर कुँवरसिंह के सैनिक छिपे हुअे थे, किन्तु अेकभी दीख न पडता था। आकाशमें तारका और भूमिपर पेंड, बस, और कुछ भी नजर नहीं आता; और अिन दोनोंपर बंदूके दागनेसे विजय की सम्भावना थी नहीं ! वायुदेवता का प्रकोप; और कहीं से सॉय सॉय करती गोलियों की गरम बौछार हुअी। अंग्रेजों के गणवेश (युनिफॉर्म) सफेद होने से तुरन्त दीख पडते, किन्तु कुँवरसिंह के सैनिक 'काले', अुनकी वर्दियाँ कालीं और अंधेरा भी काला ! अिस तरह सब 'कालों' ने षडयंत्र करनेपर अंग्रेज अपने सफेद पैर कैसे जमा सकेंगे ? गोरे भागने लगे, साथमें अुनके सिक्ख पिठ्ठू भी भागने लगे। कमांडर डनबार तो पहले ही ढेर हो गया। जी बचाने के लिअे भागते हुअे गोरे अेक खाअी के पास पहुँचे, जहाँ अुन्होंने कुछ समय तक टिकनेका जतन किया। किन्तु सबेरे तक केवल मृतों ही को नहीं, घायलों को भी खेत में छोडकर, भूखे प्यासे, लहूलुहान, लज्जासे मुँह लटकाये अंग्रेज सैनिक सोन की दिशामें भाग खडे हुअे।

किन्तु कुँवरसिंह के चंगुलसे छूट जाना अितनी सरल बात न थी। पग पगपर खून सींचा गया। भाले के घोंपनेसे लहूलुहान जंगली सुअर हैरान हो कर मार्गपर लहू टपकाता हुआ आखिर में भागता है, ठीक वही दशा सोनतक पहुँचते पहुँचते अंग्रेजों की हुअी। किन्तु सोनपर तो अुनकी दुर्दशा की हद हो गयी। पहले अुनकी किश्तियाँ ही गायब। खोज करने पर पता चला कि वे बालू में फँसी हैं; और जो खुली थीं अुनमें 'पांडे' वालोंने आग लगा दी थी। निदान, दो नावें मिलीं। सोनके परले किनारे दानापुर के गोरे, महान् विजय प्राप्त कर आरा के मुक्त किये गोरों को साथ लिअे, रणगीतों को गाते अपने सैनिक लौट आयेंगे अिस आशा,

आँख बिछाये खडे थे। नावें दीख पडीं; किन्तु हाय! आनंद की अेक भी पुकार या नारा न सुनायी दिया। न झण्डा, न रणगीत, सब मुँह लटकाये। अिधर किनारेवालों की बेचैनी बढी; हृदय धक्‌धक् करने लगे, मेरा बेटा, मेरा भाअी, मेरे स्वामी, मेरे बाबूजी- हाय अैसी बुरी कल्पना, प्रभु करे, न आय—कलही तो विजय की बडी आशा बाँध कर गये थे—किन्तु यह प्रार्थना आकाशस्थ पिता के पास पहुँच न पायी थी कि दानापुर के अभागे सैनिकों ने घाटपर पाँव रखा और तुरन्त बिजली के समान समाचार फैला "४५० गये थे; केवल ५० कुँवरसिंह के चंगुल से बचकर यहाँ पहुँच पाये थे।" अेक अंग्रेज लिखता है:-अुस दिन, हृदय दहलानेवाला अंग्रेज स्त्रियों का करुण विलाप जिस ने सुना है, जीवनभर अुसे वह भूल न पायगा। कुछ अेक आर्त आक्रोश कर अपनी छाती पीठ रही थीं, कुछ अेक ढारें मारकर रोतीं और अपने बाल नोंचती थीं। अिन अभागिनियों के सामने अुस समय, अिस सत्यानाश का अुत्तरदायी, जनरल लॉअिड होता तो, निस्संदेह वे सब अुस को कत्ल कर देतीं।"

अिधर दानापुर की गोरी मेमों के आक्रोश से कुहराम मचा हुआ था, अुधर मेजर आयर अंग्रेजों की हार तथा हानि का बदला लेने के लिअे आरा पर जा रहा था। डनबार की बुरी हार की खबर अुसे अबतक न मिली थी; घेरे हुअे अंग्रेजों को छुडाने वह वेग से चल पडा था। कुँवरसिंह के सैनिक २९ तथा ३० जुलाअी को डनबार को हराकर लौट रहे थे, तब आयर के आरे पर चढ आने की खबर मिली। अेक क्षण भी न गँवाते हुअे अुस वृद्ध सेनापति ने अपनी सेना की व्यूह-रचना की। मार्ग के सभी नाकों के मोर्चे बाँध कर २ अगस्त को बीबीगंज के पास आखरी लढाअी हुअी। हर अेक दल पास के घन-घोर जंगल का आसरा पाने का जतन कर रहा था। बुढापे और तरुणाअी के अिस मुठभेड में बुढापे ने ही विजय पायी, आयर के मनसूबे चूर चूर हो गये; तब अुसने तोपों का धडाका शुरू किया। अुस के पास तीन बढिया तोपें थीं जिन के बूतेपर अुसने कुँवरसिंह को पीछे धकेलना शुरु किया। क्रांतिकारियोंने

तीन बार अिन तोपों पर हमला किया; तीनों बार वे आग उगलतीं तोपों के बिलकुल नजदीक पहुँच गये थे, किन्तु अंग्रेजी तोपें धडधडाती रहीं। तब कॅप्टन हेस्टिंग्ज हॉफता हुआ आकर सेनापति आयर को बोला 'देखो हमारी गोरी पैदल सेना भी पीछे धकेली जा रही है; मालूम होता है हमारे हाथों से विजय छटका जा रहा है"। यही कचवावध और आध घंटे तक जारी रहता तो कुँवरसिंह पूरी जय पाते। किन्तु विजय की सम्भावना दूर दूर जाती दीख पडनेपर, पीछे हट जाने के पहले अेक बार, निराशा के आवग से, जोरदार धावा बोल देने की अंग्रेजोंने ठानी। आयरने संगीनोंका हमला करने की आज्ञा दी। तात्काल गोरे सैनिक क्रातिकारियों की हरावल पर तीर की तरह टूट पडे। तोपों के मुँह में चढ जानेवाले क्रातिकारी संगीनों के हमले क सामने क्यों न ठहर सके अिसका कारण यद्यपि बताना कठिन है; किन्तु बात ठीक है। आयरने अुन्हें जंगल में भगा दिया और वह सीधे आरे के किले की ओर चला। वहॉ पहुँच कर अुसने घेरे गये गोरों की मुक्तता की। आरा फिर से अंग्रेजों के हाथ में आया।

आरा का घेरा कुल आठ दिन रहा। अिन आठ दिनों में घेरा दृढ रख कर और दो लडाअियॉ, अुस बूढे राजपूत वीर को, लडनी पडीं। अुस के जैसी फुर्ती, साहस और वीरता अुस के अनुयायियों में न होने से, आयरके हरा देनेपर कुँवरसिंह को जगदीशपुर तक पीछे हटना पडा। किन्तु, घेरे से मुक्त सैनिकों से पुष्ट अंग्रेजी सेना से भिडने के लिअे जगदीशपुर के सभी लडने योग्य लोगों को भरती करना शुरू किया। अंग्रेजों को कुँवरसिंह की क्षमता का कुछ कम परिचय न हुआ था। भय था, कि वह आरापर चढ आयेगा सो, अुसके पहले आयर जगदीशपुर पर गया। अिस अनुशासन--पूर्ण विजयी अंग्रेजी सैनिकों के साथ अपनी राजधानी की सीमा पर, पहले से दिल बैठे अनुयायियों के बलपर सीधे टकराना असम्भवसा दीखने पर कुँवरसिंह को कुछ चिंता हुअी। अैसी दशा में वृकयुद्ध (गेरिले युद्ध) का अवलंबन कर, दो कडी मुठभेडों के बाद वह जगदीशपुर से बाहर हो गया। निदान, १४ अगस्त को आयरने

जगदीशपुर के राजमहल में अपना डेरा डाला। अंग्रेजों ने राजमहल, हिंदु मंदिर तथा अन्य निवासों को ध्वंस भले ही कर दिया; किन्तु अिन सब की पवित्र मूर्ति कुँवरसिंह तो अितनी लडाअियों के बाद भी अजिंक्य ही रहा। अपनी राजधानी की दशा देखकर कोअी दूसरा राजा होता तो वह दाँत में तिनका दबाये कभी का शरण में आया होता, किन्तु जगदीशपुर नरेश अिस मिट्टी का न बना था। जहाँ नरेश वहाँ जगदीशपुर यह थी अुस की आन। तब नरेशको छोड जगदीशपुर के अीट पत्थरों को लेकर क्या करें? क्यों कि, जगदीशपुर अुसका घर न हो कर समरांगण ही अुसका महल बना था।

अध्याय ४ था

दिल्ली का पतन

जब अंग्रेजों का तीसरा सेनापति भी दिल्ली जीतने की आशा छोड त्यागपत्र देकर चला गया, तब ब्रिगेडिअर जनरल विलसन ने अुस का स्थान लिया। अुस समय, क्रांतिकारियों के जोरदार हमलों से पागलसे बने अंग्रेज सैनिक निराश होकर अत्यंत गंभीर चर्चा कर रहे थे, 'अब घेरा अुठा लिया जाय तो कैसे?' यदि अुस समय घेरा अुठा लेने का निर्णय अंग्रेज कर लेते, तो यह कहना कठिन है कि १८५७ की क्रांतिका क्या रुझान होता। यही वह क्षण था, जब कि क्रांतिकारियों से किये अनेक पराभवों से अधिक हानि अंग्रेजों को अुठानी पडती। क्रांतिकारी सेना अेक ही स्थान में अटक पडनेसे दिल्ली को घेरा डालने में अंग्रेजों को आक्रमण तथा बचाव के लिअे सुविधाजनक स्थान अनायास प्राप्त हुआ था। यदि यह सेना अेक ही स्थान में अटकी रहने के बदले प्रांतभर में फैल कर वृकयुद्ध शुरू करती तो थोडे ही समय में अंग्रेजी सेना को क्रांतिकारियों के आगे आत्मसमर्पण करना पडता; किन्तु दिल्ली के घेरेसे रणक्षेत्र संकीर्ण बन गया। अबतक अंग्रेजोंपर अनहद दबाव नहीं पडा था; अुलटे क्रांतिकारियों के अेक ही स्थान में सडते रहने से अुन्हींपर हमले करना अंग्रेजों को सुविधापरक हो गया था। अैसे समय में घेरा अुठा लेना तो क्रांतिकारियों को, बाँध तोडकर सारे प्रदेश में सैलाब

की तरह, फैलने का मौका ही देना था। दिल्ली जीती जाती, तब भी सिपाही बाहर फैल जाते! किन्तु हार कर बैठे दिल से दिल्ली के बाहर हो जाने में और घेरा अुठ जाने से कुछ बौखला कर अंग्रेजों पर टूट पडने में बडा अंतर था। अंग्रेज सेनापति अिस रहस्य को अच्छी तरह जानता था; किन्तु निराशा, निरुत्साह तथा विद्रोहियों के भयंकर हमलों के भय से, अुसे लगने लगा था, कि घेरा अुठा लिया जाय। अंग्रेजी सत्ता का सत्यानाश होने का समय पासही आया था। किन्तु, सचमुच, अंग्रेजों के सौभाग्य से ठीक अुस समय बेर्डस्मिथ जैसा साहसी तथा प्राणों की चिंता न करनेवाला, धीरज से संकटों का सामना करनेवाला अधिकारी वहाँ आ पहुँचा। जहाँ अन्य सभी अधिकारी पीछेहट की भाषा बोल रहे थे, बेर्डस्मिथने धडल्ले से कहा, कि 'अेक चप्पा भी दिल्ली की पकड ढीली न होनी पावे! जमराज के पाश के समान अुस के गले में जो फंदा फँसाया है वह वैसाही कसा हुआ रहना चाहिअे! दिल्ली का घेरा अुठाया जाय, तो पंजाब गँवाअेंगे, हिंदुस्थान गँवा बैठेंगे और साम्राज्य हमेशा के लिअे डूब जायगा।"

अिन शब्दों से कुछ अुत्तेजित हो कर ब्रिगेडिअर विल्सनने निश्चय किया, कि दिल्ली जीतने तक घेरा नहीं अुठायेंगे। अिधर क्रांतिकारी भी असाधारण जीवट से घेरा तोडने की चेष्टा करते थे। छोटी छोटी टोलियाँ बनाकर वे अचानक अंग्रेजों के दाहिने पासे पर हमले करते और अंग्रेज अुनका सामना करे अिस के पहले शत्रु के, हो सके अुतने, लोगों को कत्लकर लौट भी आते। पीछा करनेपर मजबूर कर दिशा भुलाने भुलाते अपने घेरे में फँसे अंग्रेज सैनिकों पर विद्रोहियों की तोपें अग्निवर्षा करतीं। क्रांतिकारियों ने अिस चाल से, अितने गोरों को मार डाला कि अुस संख्या को गिनकर विल्सनने विशेष आज्ञा दी, कि किसी दशा में सिपाहियों का पीछा न किया जाय। अिस तरह अंग्रजों की सेना, क्रांतिकारियों की धोखे की चालसे घट रही थी, तब पंजाब से आनेवाले घेरे के लिअे आवश्यक तोपखाने की ओर सेनापति की आँखें लगीं। अुत्तर भारत के तारघर, अगिनगाडी तथा डाक जैसे यातायात के साधनों का, क्रांतिकारियों ने, पूरा फैसला कर डाला था, जिस से अुन के

युवराज जवानबख्त, दिल्ली
ले. हाडसन की नीचता का शिकार.

समान अंग्रेजी सेना भी घिरी हुअी थी। अिस से दिल्ली की दक्षिण में क्या हो रहा है, कलकत्ते से भेजी हुअी सेना अबतक आ पहुँची या नहीं, लखनअू, कानपूर, बनारस का क्या हाल है अिस का कोअी पता अंग्रेजों को न था। सर व्हीलर तो मारा गया था। अुस के अेक महीने बाद अंग्रेजों को 'विश्वस्तसूत्र' से पता चला कि व्हीलर अुन की सहायता के लिअे बडे वेग के साथ आ रहा है। कलकत्ते से किसी प्रकार की सहायता पाने का लच्छन न दिखता था, जिस से सारा जोर पंजाब पर ही था। किन्तु सब संकटों के बीच गोरे तथा सिक्ख सैनिकों के दस्ते सर जॉन लॉरेन्स भेजता ही रहता था। अिस बार भी, घेरे के काम में उपयुक्त दस्तों तथा अन्य दस्तों को भेज देने की नयी प्रार्थना को न टाल कर अुसने निकल्सन् के आधिपत्य में दो सहस्र सैनिकों को रवाना किया। अुन के दिल्ली पहुँचतेही हर अेक मुख आनंद, आशा, और अुत्साह से चमकने लगे। सैनिकों की संख्या से, सेनापति निकल्सन का आना अधिक उत्साहवर्धक था। सेनापति निकल्सन हजारों सैनिकों के बराबर था। निराशा से गडे हुअे अंग्रेजों के सैनिकों में हर अेक यही कहता, 'बस, अब निकल्सन आया; अब विजय निश्चित है!'

अंग्रेजों को सुयोग्य सेनानी मिल जाने से विजय के बारे में सभी संदेह समाप्त हो गये। अिस के ठीक अुलटे, क्रांतिकारी सेना को कोअी सुयोग्य नेता ही न मिलने से विजय की आशा दिनोंदिन गलती जाती थी। सम्राट बहादुरशाह को, जनता ने पुराने सिंहासन पर बिठाया था; शान्तिकाल में सराहनीय दया, क्षमा आदि गुण अुसमें अवश्य थे। किन्तु युद्ध के बारे में अुसे कोअी अनुभव न था, सेनापति के स्थान के लिअे वह योग्य न था। दिल्ली में शूर सैनिकों की कमी न थी। अंग्रेजों की नौकरीमें रहते जिन्हों ने गोरे के भी कान वीरता में काटे थे, जिन की सैनिक शिक्षा तथा अनुशासन अंग्रेज अफसरों की ही निगरानी में पूर्ण हुअे थे, जिन की वीरता के कारण ही अंग्रेज अफगानिस्तान

तक अपनी सीमा बढा पाये थे, अैसे ५० हजार सैनिक अुस समय दिल्ली शहर में थे। किन्तु अिन सूरमाओं का नेतृत्व कर विजय प्राप्त करनेवाला अेक भी नेता होता तो अच्छा होता। जो लडे और लडते लडते पराजित हुअे अुन ५० सशस्त्र वीरों की जितनी भी प्रशंसा की जाय, थोडी है। समर्थ नेता के न रहते भी अितने दिनों तक वे कैसे टिक सके यही आश्चर्य है। जिस सम्राट को अुन्हो ने सिंहासन पर विराजमान किया था, अुसे भी अिन स्वयं-नेताओं को अेक सुयोग्य सेनापति देने की चिंता बेचैन कर रही थी। अुसने काफी ढूंढा पर कुछ न पाया। बख्तखाँ को सब सत्ता अुसने सौंप दी ही थी। और तीन सेनापतियों की नियुक्ति सेना के सुप्रबंध के लिअे की थी। फिर अुसने तीन सैनिक तथा तीन नागरिकों की अेक समिति बनाकर अुसे सेना की सुखसुविधा का काम सौंपा था। किन्तु ये प्रतिनिधि किसी तरह के सुधार करने की क्षमता न रखते थे। अिस स्वदेशप्रेमी सम्राट् को संदेह हुआ कि कहीं अुस के ही दोष से या सर्व-सत्ता-प्रमुख होने से अच्छे अच्छे लोग अुस का पक्ष छोड जायेंगे और क्रांतिकार्य का सर्वनाश करेंगे। अिस से अुसने यह प्रकट घोषणा की, कि वह सम्राटपद का त्याग करने को सिद्ध है। भारत फिर से अंग्रेजी शासन का देश होने, विदेशी महराते गिद्धों के, लम्बे समय तक विपन्न दशा में पडे हिंदुस्थान की, आँतों को नोच खाने, सदा के लिअे गुलामी की गर्ता में सडने की अपेक्षा, अिस बूढे मुगल ने घोषित किया:- "मेरे शासन के बदले जो कोअी सज्जन स्वराज्य और स्वाधीनता की प्राप्ति भारत को करा दे अुसके हाथ मैं सम्राट्पद सौंप देने को तैयार हूँ।" जयपुर, जोधपुर, बिकानेर, अलवार आदि संस्थानों के महाराजाओं को अुसने अपने हाथ से यों पत्र लिखे थे-

"मेरी यह तीव्र अिच्छा है कि चाहे जो मूल्य दे कर, हर अुपाय से, हिंदुस्थान से फिरंगी को भगा दिया हुआ देखूं। मेरी यह तीव्र अिच्छा है कि समस्त भारत स्वतंत्र हो जाय। **किन्तु स्वाधीनता के लिअे लडे जाने-वाले अिस क्रांतियुद्ध को विजयमाला तभी पहनायी जायगी** जब, कोअी अैसा व्यक्ति, जो राष्ट्र की भिन्न भिन्न शक्तियों को

संगठित कर अेक ओर लगा सके, जो सारे आंदोलन का दायित्व तथा संचालन सम्हाल सके, जो समूचे राष्ट्रका सर्वमान्य प्रतिनिधित्व कर सके, मैदान में आकर अिस क्रान्ति का नेतृत्व करे। अंग्रेजों के निकाल दिये जाने के बाद अपने निजी लाभ के लिअे भारतपर शासन करने की मेरे में तनिक भी अिच्छा नहीं है। यदि आप राजा लोग शत्रु को भगा देने के लिअे अपनी तलवारें अुठा कर आगे आने को तैयार हों तो मैं अपने तमाम शाही अख्तियार आप के किसी अैसे संघ के हाथ में सौंप दूँगा जिसे अिस काम के लिअे चुना जाय। "*

यह पत्र हिंदी मुसलमानों के अेक नेताने–दिल्ली के सम्राट्ने–हिंदुस्थान के हिंदू नरेशों के नाम लिखा है। अिस अनूठे अद्वितीय पत्र से स्पष्ट होगा कि १८५७ में भारत में स्वाधीनता, स्वराज्य, स्वधर्म ये शब्द जनता के रोम रोममें किस तरह भरे हुअे थे। हिंदु मुसलमानों की धर्मभावना अिस प्रकार राष्ट्रभक्ति से अेकरूप हुअी देख चार्लस् बॉल कहता है, "अिस तरह का अनपेक्षित, आश्चर्यकारी तथा असाधारण परिवर्तन सारे संसार के अितिहास मे शायद ही कहीं मिलेगा।"

किन्तु यह असाधारण परिवर्तन हिंदुस्थान के विशाल भूभाग के केवल अेकही प्रांत में पूरी तरह सफल होने से सम्राट की अिस घोषणा को अपेक्षित जश न मिला। दुःख की बात है, कि दिल्ली की किलाबंदी के सामने स्वाधीनता तथा पराधीनता का जिस प्रकार झगडा चल रहा था, वैसा कडा झगडा हिंदुस्थान के अन्य किसी स्थान में लडा नहीं जा रहा था। 'दिल्ली के मुहासरे का अितिहास, अिस प्रसिद्ध ग्रंथ का लेखक कहता है "तोपखाने में गोरों के चौगुने हिंदी सिपाही थे। हर अंग्रेज सवार के पीछे दो सवार हिंदी थे। अिस प्रकार, बिना हिंदी लोगों की सहायता के, अंग्रेज अेक डग भी भर न सकते थे।" हिंदुस्थान के

* दि ऑटोग्राफ लेटर–नेटिव्ह नॅरेटिव्ह, मेटकाफ कृत, पृ. २२६ (सम्राट् का असली पत्र)

अेक हिस्से में अुमडा आंदोलन, दूसरे हिस्से की आलस्य-निद्रा से अपने आप मारा गया । अैसी स्थिति का सामना करते हुअे अगस्त के अन्ततक अंग्रेजों को आक्रमण करने का कोअी मौका न देकर गोरी सेनापर लगातार हमले जारी रखे। क्या कोअी कह सकता है, कि यह स्वराजनिष्ठा का बिलकुल मामूली प्रमाण है ?

जब सुयोग्य नेता के अभाव में क्रांतिकारियों की यह सारी वीरता तथा निष्ठा प्रभावी न हो सकी, तब अंग्रेजों के पक्ष में निकलसन जैसे सेनापति का नेतृत्व प्राप्त था । दिल्ली में आज पहलेपहल निराशा का वायुमण्डल पैदा हो गया था। नीमचवाले तथा बरेलीवाले अेक दूसरे को अिस स्थिति के लिअे दोषी ठहराना चाहते थे। बागी सिपाही समय पर वेतन पाकर भी, अधिक वेतन माँगने लगे और माँग पूरी न होने पर दिल्ली के धनी लोगों को लूटने की धमकियाँ देने लगे। तब सम्राट् की आज्ञा से बख्तखाँने सिपाहियों के अगुवाओं, सिपाहियों और दिल्ली के प्रतिष्ठित नागरिकों को परामर्ष के लिअे अेक सभा में बुलाया और सब से पूछा 'रण या शरण' ? सारी सभाने 'शरण नहीं; रण-रण-रण' की गर्जना से गगन गूँजा दिया। अितना प्रचंड अुत्साह देखकर सब ओर आशा का वायुमण्डल बन गया। क्रांतिकारी सेनाने नीमच और बरेलीवालों समेत नजफगढ पर चढाअी कर अंग्रेजों की तोपें छीनने का निश्चय किया। वहाँ पहुँचने पर नीमचवाली पलटन ने बरेलीवाली पलटन के पास डेरा डालना स्वीकार न किया। दोनों ने बख्तखाँ की, सब मिल कर चढाअी करने की, आज्ञा न मानी और नीमचवालों ने अेक पडोसी गाँव में डेरा डाला। अंग्रेजों को अिस का पता लगते ही निकल्सन आवश्यक चुनिंदे सैनिक लेकर नजफगढ पर फुर्तीसे चढ आया। अचानक अुसने अलग डेरा डाले-बख्तखाँ की आज्ञा ठुकरा कर-नीमचवालों पर धावा बोल दिया। क्रांतिकारी सेना बिखरी हुअी, असावधान तथा अव्यवस्थित, जहाँ निकल्सन की सेना अनुशासित, चौकन्नी तथा शस्त्रास्त्रों से लैस ! तब और क्या हो सकता था ? नीमचवाली पलटन का सफाया हो गया। अुस पलटन के सैनिक असाधारण वीरता से लडे। शत्रुने भी अुनकी वीरता को सराहा। किन्तु

वह वीरता, वह पराक्रम व्यर्थ हुआ। बुंदेल-की-सराय के बाद ऐसी हार क्रांतिकारियों को कभी न खानी पडी थी। नीमच की सारी पल्टन अुस दिन खेत रही। अपने ही मत से चुने अपने ही सेनापति की आज्ञा अहंकार से ठुकराने का यह परिणाम था। **बिना अनुशासन की वीरता कायरता के समान ही व्यर्थ होती है।**

२५ अगस्त की अिस विजय से अंग्रेजों के हृदयाकाश में जमे निराशा के मेघ साफ छॅट गये। जून से लेकर आज तक यह अुनकी पहली ही विजय थी। दिल्ली पर टूट पडने के लिअे हर अेक अब आतुर था। विलसन ने दिल्ली के आखरी हमले की योजना बनाने का काम बेर्डस्मिथ को सौंपा। जिस के आग्रह से घेरा अुठा जाने की सोचनेवाली गोरी सेना दिल्ली में टिकी रह सकी, अुसी बेर्डस्मिथ ने सिपह सालार की आज्ञा के अनुसार आखरी चढाअी की रूपरेखा बनायी। पंजाब से खास आयी सेना तथा तोपखाना अंग्रेजी पडाव में सुरक्षित पहुँच गये थे। अंग्रेज सेनापति ने सब सैनिकों को आवेशपूर्ण आदेश यों दिया :—"आज तीन महिने, तीन सेनापतियों की सैनिक चतुरता की दाल न गली और दिल्ली स्वतंत्र बनी रह पायी। आज दिल्ली की अींट से अींट बजाकर तुम अपने जतन को जश का मुकुट पहना कर ही रहोगे यह स्पष्ट दीख पडता है।"

वहाँ की अंग्रेजी सेना में ३५०० गोरे, ५००० पंजाबी सिक्ख तथा २५०० कश्मीरी सैनिक थे। अिन ११००० सैनिकों की दिल्ली जीतने के काम में सहायता देनेके लिअे अपने सैकडो सैनिकों को लेकर जींद नरेश स्वयं अुपस्थित रहा। सितबर के पूर्वार्ध में अंग्रेज सेनापतिने चढाअी की नीतिपर चल कर मोर्चेबन्दी का काम जारी किया। अिस से दिल्ली के सैनिकों में घबडाहट पैदा हुअी। दिल्ली के परकोटे के परे अंग्रेज सेना धीरज से तथा अनुशासन-पूर्वक चढाअी कर रही थी, जहाँ हिंदी सेना में अव्यवस्था, अराजक, तथा आज्ञाभग का दौरदौरा था। अंग्रेजी सेना के हिंदी सैनिक मोर्चे बाँधने का काम जीवट तथा अुत्साह से कर रहे थे; दिल्ली के तोपखाने की पर्वाह

बिलकुल न करते थे। फॉरेस्ट लिखता है, "हमारी सेना के हिंदी जवानों ने अतुल शौर्य तथा दृढता दिखा कर, सब से बढ गये। अेक के बाद अेक लाशें फडकतीं फिर भी अुन्हों ने अपना काम बन्द न किया। अपने से कोअी आदमी बम से मर जाय तो अेकाध क्षण वे काम रोकते, मृतक के लिअे अेकाध ऑसू बहाते, लाश को पास के लाशों के ढेर में सरका देते और, बस, अुस भयंकर स्थान में काम में लग जाते।

"अंग्रेजों के मातहत हिंदी सैनिक अितने अनुशासन पूर्वक काम करते थे और दिल्ली के हिंदी सैनिक—अपने ही अधिकारी के मातहत—किनारा कसते थे!

अिस भेद से हमें क्या ही महत्त्वपूर्ण पाठ मिलता है! अपने आधिकारियों को योग्य सम्मान देकर अुन की आज्ञा के हर अक्षर पर अमल करना ही अनुशासन का मुख्य सूत्र है। ठीक अिसी सिद्धान्त को पैरोंतले कुचला जाता था। बहुत सारा दोष अक्षम अधिकारियों के सिर और रहा सहा अनुशासन न पालनेवाले सिपाहियों पर आ पडता है। और, हद हो गयी मन तोडनेवाली निराशा के कारण! १४ सितम्बर की पहली किरणें पडीं। अंग्रेजी सेना के चार हिस्से किये गये, जिसमें से तीन विभाग निकलसन के मातहत बाअें पासेपर तथा अेक मेजर रीड के मातहत दाहिने पासे पर रखकर काबुल दरवाजा तोडकर दिल्ली में प्रवेश करने की सिद्धता हुअी।

सूरज अुगते ही, दिनरात आग अुगलनेवाला अंग्रेजी तोपखाना अेकाअेक शान्त हो गया। तब अंग्रेजी सेना में अेकाअेक थोडे समय तक सन्नाटा छा गया और तुरन्त ही क्षणार्ध में निकलसन की सेनाने किले के परकोटे पर धावा बोल दिया। कश्मीर बुर्ज में पडे छेद से पहला सेनाविभाग अंदर घुसने लगा। क्रांतिकारियों की तोपें धडधडाने लगीं। अुस समय खाअियों में अंग्रेजों की लाशों का ढेर लग गया; फिर भी कुछ सैनिक कोट तक आ ही पहुँचे। नसेनी लगाकर सैनिक अूपर चढने लगे। क्रांतिकारी भी जान हथेलीमें लिअे लड रहे थे; अंग्रेजी सेना के सैकडों सैनिकों को गोलियों से अुडा दिया किन्तु

अिस प्रचंड संहार की भी परवाह न करते हुअे अंग्रेज सेना आगे बढ ही रही थी। निदान, छेद बहुत चौडा बनाकर वे अंदर घुसने में सफल हुअे। दिल्ली के कोट का प्रतिकार खत्म हो गया और अंग्रेजों ने विजय की तुरही बजायी।

अिसी तरह पानी बुर्ज के पास पडी दरार में भी कचवाधव जारी रहा और अंग्रेजी सेना के दूसरे विभाग ने चप्पा चप्पा भूमिपर लडकर मारते और मरते हुअे दरार को लाँघ कर दिल्ली के अंदर प्रवेश किया।

तीसरा सेनाविभाग कश्मीरी दरवाजेपर चढ गया था। जब ले. होम तथा सॉकेल्ड वहाँ पहुँच कर सुरंग से उडा देने के यत्न में थें, तब कोट से, खिडकियों से, हर जगह से गोलियों की वर्षा हुअी। कश्मीरी दरवाने के पास की खाअी पर जो लकडी पुलिया थी, उडा दी गयी थी। केवल अेक तख्त वहाँ दीख पडता है। ठीक है; अेक अेक कर के चलो, बढो। अरे, यह सार्जेंट मर गया; यह महादू गिरा–चिंता नहीं! वह देखो होम आगे बढा–वह बढा और दरवाजे के पास डाअिनामाअिट रख आया। अुसे के पीछे अुस सुलगाने लोग आगे घुसे। ले. सॉकेल्ड गोली खा कर गिर पडा! पडने दो! कॅ. बर्जेस क्या देखते हो? आगे बढो। है; तुम भी गोलीसे गिरे? चिंता नहीं; गिरते गिरते तुमने सुरंग तो सुलगा दी है। क्या ही भीषण धमाका! सारा कश्मीरी–दरवाजा उड गया। किन्तु लडाअी के हंगामे में सेनापति के कान में यह धमाका न पडा; वह कश्मीरी–दरवाजा खुलने की राह देख रहा था। अब क्या करें, आगे घुस पडे या नहीं? अुसने विजयी तुरही की ध्वनि न भी सुनी हो, अुसे आगे गये वीरवरों की यशस्विता में पूरा विश्वास था। कॅपबेलने चढाअी की आज्ञा दी। खाअी में गिरे किन्तु अमर विजयी सैनिक देख अंग्रेज कश्मीर–दरवाजे के खंडहर से दिल्ली में घुस गये।

मेजर रीड के नेतृत्व में चौथा विभाग दाहिनी ओर से काबुली–दरवाजे पर चढ गया था। जब ये सैनिक सब्जीमण्डी तक जा पहुँचे, तब अुन के प्रतिकार के लिअे दिल्ली से आगे बढनेवाले सैनिकों से अुनकी मुठभेड हुअी। मेजर रीड खेत रहा; जिस से अंग्रेजी चढाअी रुकी और सब गडबडी मच

गयी। क्रांतिकारी भी फूल गये और भय था कि अंग्रेज अब भाग खडे होंगे। किन्तु होपने ग्रँट अपने रिसाले को आगे बढाया और दोनों पक्ष समबल हुअे। अंग्रेजी तोपखानेने किशनगंज के हर घर और बगीचे से आग की बारिश बरसायी थी, तो क्रांतिकारियोंने भी गोलियों की मूसलाधार वर्षा से खून के पोखर बना डाले थे, जिससे अंग्रेजी रिसाले के लिअे आगे बढना दूभर हो गया; किन्तु पीछे हटना भी, क्रांतिकारी तोपों पर दखल कर लेंगे अिस भय से, कठिन था। तब अंग्रेजी रिसाला डर कर मौत का सामना करने लगा। केवल मरनेपर ही अपनी जगह से कोअी डिगा! अंग्रेजों के मातहत हिंदी सैनिकों के अिस जौहर तथा अनुशासन के बारे में सेनापति होप ग्रँट कहता है:—"हिंदी रिसाला डट कर अपनी जगह खडा था। अुन्होंने सचमुच असाधारण पराक्रम का परिचय दिया। जब मैं अुन्हें बढावा देने लगा तब वे बोले—'चिंता न कीजिअे। आप जब तक चाहें, हम अिस तोपों की अग्निवर्षा को सहते रहेंगे!'"

अिधर स्वदेश और स्वाधीनता के प्रेमियोंने भी अुतने ही पराक्रम का परिचय दिया। अुत्तेजित क्रांतिकारियों ने चप्पा चप्पा भूमिके के लिअे अीदगढ के पास हठीली लडाअी की। हमले पर हमले हो रहे थे। अीदगढ हथियाने के बारे में अंग्रेजी सेना जब हिचकिचा रही थी, तब क्रांतिकारियों ने और अेक भीषण हमला किया। अंग्रेजों को हटना पडा। क्रांतिकारी दबाते रहे और तोपखाने तथा रिसाले पर चढाअी कर अुन्हें पीछे धकेला। अबतक सम्हाले हुअे मोर्चे को छोड कर अब अंग्रेजी सेना मैदान से भागने लगी। क्रांतिवीरों! धन्य हो! आज तुमने सचमुच कमाल कर दी। तुम्हारी सारी सेना यदि अितनी ही वीरता से लडती तो...।

अिस प्रकार चौथा सेनाविभाग निकम्मा होगया। अिधर दिल्ली के अंदर घुसे अन्य तीनों विभाग कुछ समय तक कश्मीरी दरवाजे पर रुके और फिर तुरन्त दिल्ली शहर पर हमला करने को बढे। कँवेल, जोन्स और निकलसन तीनों प्रमुख अफसर अपनी सेना के साथ काबुली दरवाजे से अंदर घुसने के लिअे झूझने लगे। जो मिलीं, सब तोपें हथिया लीं। हर खम्भेपर तथा घुमटीपर

अंग्रेजी झण्डे लहराये गये। सब सेना लडते हुअे बर्न बुर्जतक पहुँची। हाँ, अिस के बाद असुरक्षित तोपें, निर्जन टीले और वीरान खेतों के बदले 'मारो फिरंगी को' के भीषण नारे सुनायी पडे। यहाँ क्रातिकारियों ने गोलियों की बाढ पर बाढ चलायी। पग पगपर भूमिपर रक्तपात और मृत्यु के चिन्ह मिलते थे। जो अंग्रेज सैनिक विजय के अुन्माद में अंदर घुस आये थे वे फिरसे पीटे जानेपर पीछे हटने लगे। अंग्रेजी सेना पर पडी भार को देख निकलसन शेर-सा आगे बढा। अुस का प्रण ही था, 'शूर वीर के लिअे ससारमें कुछ भी असम्भव नही'। अुत्तेजित निकल्सन जब वॉटर बॅस्टियन से निकल कर गली में घुसा, तब फिर अेकबार घमासान युद्ध होने लगा। गली की अिस दो सौ गज की जगह में पानिपत का छोटा सस्करण दिखायी पडा। गोरा देखा नहीं, और क्रांतिकारी सूरमा ने अुसे गोली से अुडाया नहीं। छज्जों, छाजनों, खिडकियों, बरामदों, ओसारों से यह हठीली स्वाधीनता-प्रेमी गली अपने अनगिनत मुखों से आग अुगल रही थी। निकल्सन को भी अुसने पीछे हटने पर मजबूर किया। शूर जॅकोब भी मारा गया। निकल्सन; अब तुम जरा आजमा देखो। तुम्हे छोड अन्य सभी अफसरों को यह गली निगल गयी है। स्वातंत्र्य देवता का मंदिर बनी ओ गली! वीरता का घर बनी ओ पवित्र गली देखो अब निकलसन स्वयं चढ आ रहा है। अब ठीक सामना होगा। प्राणों की बाजियाँ खेली जाने लगीं। अेकाअेक मानों आकाश से गाज गिरी और अंग्रेजी सेना में कुहराम मच गया। निकलसन! हाय, निकलसन, कहाँ हो? किसी क्रांतिकारीने घात लगाकर अुसपर वार किया और निकलसन भूमिपर लोटने लगा। अंग्रेजी सेनामें 'हटो, हटो' की ध्वनि अुठी, जहाँ क्रांतिकारी सेनों मे 'काटो, काटो' की ध्वनि गूँज अुठी। कैसी मृत्युमुखी गली है! अुसकी लम्बाअी का चप्पा चप्पा अंग्रेजी लाशों से पट गया था।

अिस विजयी गली से पीछे हट कर अंग्रेजी सेनाविभाग काश्मीरी दरवाजे के पास पहुँच ही पाया था, कि जुम्मा मसजिद की ओर गये दूसरे विभाग ने पीछे हट की तुर ही बजायी। मसजिद तक पहुँचते हुअे अुन्हे

कोअी रोक थाम न दिखायी दी थी। हॉ, वहाँ पहुँचते ही क्रांति क वीरयोधोंने आकाश भर दिया और फिर वहाँ जो भिडन्त हुअी अुसमें कॅम्बेल स्वयं घायल हुआ।

अिस तरह दिल्ली के आक्रमण का पहला दिन समाप्त हुआ। अैसा भीषण दिन देखने का दुर्भाग्य अंग्रेजी सेना के भाग में कभी न बदा था चार सेना-विभागों से तीन के सेनापति घायल हुअे; ६६ अफसर तथा ११०४ सैनिक मारे गये। अितना मूल्य दे कर क्या हाथ लगा अिसका हिसाब जब मुख्य सेनानी विलसन करने लगा, कि दिल्ली का चौथा हिस्सा हाथ आया है। भय, चिंता, तथा निराशा से जनरल विलसन का मस्तिष्क घूमने लगा और अब हर अेक सूचित करने लगा 'हट जाना ठीक रहेगा'। "अबतक दिल्ली पर दखल नहीं हुआ; अेक गली मेरे अितने वीर खा गयी; और सहस्रों क्रांतिकारी, जीवित रहे हुओं को युद्ध का आव्हान देही रहे है। अब सब की बलि चढाअी जाय या पराजय की अपकीर्ति सही जाय? लौट जाना ही अच्छा रहेगा;" यह था विलसन का विचार।

रुग्णालय में रखे गये निकलसन के कान में यह भनक पडी, तब वह तिलमिलाकर बोला, 'लौट जाना? परमात्मा की कृपासे अब भी मुझ में अितना बल है, कि लौट जानेवाले विलसन पर गोली चलाअूँगा'। अिस मृत्युशय्या पर पडे वीर के ये उद्गार सब जीवित बचे गोरों को जँच गये और १४ सितंबर की रात में जीती हुअी भूमिपर अंग्रेज डटे रहे।

अंग्रेजी युद्ध समितिने जनरल विलसन के पीछेहट का प्रस्ताव न माना। क्रांतिकारी सेनाकी छावनी में रातमें जो हलचलें हो रही थीं अुस से अंदाजा लगता है, कि अुस का सब बल समाप्त हो चुका है अुसमें अेक दल का विचार था, "दिल्ली छोडकर बाहर के प्रदेश में लडाअी की जाय," जहॉ दूसरे दल का आग्रह था, "हम में से हर अेक मारा जाय तो भी दिल्ली न छोडनी चाहिये।" अंग्रेजों की ओर विरोधी भिन्न मत चाहे जितने हों, बहुमति का निर्णय सिर आँखों पर रख कर सब मिल कॅर काम में लग जाने में सारे मतभेद विलीन हो जाते थे। यह गुण दुविधा में पडे क्रांतिकारी दस्तों

में न दिख पडता था। अुलटे, दोनों दल आपसी सहयोग से कुछ निश्चित योजना करने के बदले, अपनाही हठ पकडे रहते। कुछ सिपाही दिल्ली छोड भागे, जहाँ, कुछ, रंच भी न हटने का निश्चय कर, सिरपर कफन बाँधे रणमैदान में डट गये। ये सिपाही १५ से २४ सितंबर तक दिल्ली के लिअे झूझे, और वह भी पूरी दृढता तथा वीरता से। जब अेकाध अंग्रेजी दस्ता मसजिद या राजमहल में घुसने की चेष्टा करता तब पहरेदार सिपाही अंग्रेजों को आते देख बंदूक के घोडेपर हाथ रख, बंदूक ताने, अपने देश के नामपर अन्तिम गोली दाग देता और अिसतरह अपनी मातृभूमि की अन्तिम सेवा कर मौत को गले लगाता।

जब दिल्ली का तिहाअी हिस्सा गोरों के हाथ चला गया तब सेनापति बख्तखाँ ने बादशाह के चरणों में प्रार्थना की, "दिल्ली अब हमारे हाथसे निकली जा रही है, फिर भी यह मतलब नहीं कि विजय की पूरी आशा नष्ट हो गयी हो। अभी भी अेक ही सीमित स्थल की रक्षा न करते हुअे बाहर खुले प्रांत में शत्रु को सताने का अुद्योग किया जाय तो अन्तमें जीत हमारी होगी! अब जो वीर अिस स्वातंत्र्य-समर में अन्त तक अपनी तलवारें सँवार कर लडने को सिद्ध होंगे, अुन के साथ दिल्ली के बाहर निकल जाने के लिअे मै लडूंगा। शत्रु की शरण माँगने की अपेक्षा अिस तरह लडते लडते ही दिल्ली छोड जाना मैं अधिक अच्छा मानता हूँ। सम्राट! आप भी हमारे साथ चलिये। आप के झण्डे के नीचे हम स्वराज के लिअे आखरी दम तक लडेंगे।" वृद्ध मुगल बहादुरशाहमें बाबर, हुमायूँ या अकबर का सौ वाँ हिस्सा वीरता होती तो अिस बहादुरी के निमंत्रण को तुरन्त स्वीकार कर, बहादूर बख्तखाँ के साथ वह बाहर निकल जाता। अैसे ही मरना था तो कम से कम सम्राट के योग्य मरना था। किन्तु, बुढापा, अुससे अुत्पन्न मानासिक निराशा, लम्बे अरसेतक सुख-भोगों से प्राप्त सुस्ती, अेवं पराजय से टूटा दिल, अिन सभी कारणों से, बहादुरशाह अन्त तक अुधेडबुन में रहा, कोअी निर्णय कर न पाया। आखरी दिन तो वह हुमायूँ के मकबरे में छिप गया, बख्तखाँ के निमन्त्रण को टुकरा दिया और अिलाहीबख्श मिरजा के कहने पर अंग्रेजों

की शरण में जाने की सोचने लगा। यह अिलाहीबख्श हद् दर्जे का पाजी था। अुसने अंग्रेजों को सब वारदातों की खबर दी। कॅप्टन हडसन आ कर खडा हुआ। जान बचने का आश्वासन मिलने पर बादशाह शरण में आ गया; अंग्रेजों ने राजमहाल में बंदी कर रखा। तुरन्त अिलाहीबख्श और मुनशी रजबअली दो हरामखोर—दौडते हुअे आये और अंग्रेजों को बताने लगे, 'शाहजादे तो अब भी हुमायूँ के मकबरे में छिपे है।' कॅ. हाडसन फिर से दौडा; शाहजादे पकडे गये, शरण आनेपर अेक, गाडी में बिठाकर शहर में ले जाया जा रहा था। यह बारात जब शहर में आ पहुँची तब हाडसन गाडी के पास जाकर चिल्लाया 'अंग्रेज औरतों और बच्चों को कत्ल करनेवालों को मौत ही की सजा ठीक है।" राजपुत्रों के शरीर पर से सब आभूषण अुतार लिया गया और अुन्हे गाडी से बाहर घसीटा गया। फिर अुन अभागे राजपुत्रों को खडा किया गया। तुरन्त हाडसनने तीन गोलियाँ चलायीं और तीनों राजपुत्रों का काम तमाम कर दिया। तैमूर के वंश की अन्तिम कोंपलें अिस प्रकार हाडसन ने नष्ट कर डालीं। किन्तु अुन राजवंशीयों को मार कर अंग्रेजों का प्रतिशोध शान्त न हुआ। 'मरणान्तानि वैराणि—' मरजाने तक वैर—का विचार तो जगली लोग भी मानते हैं। किन्तु, हाँ, हाडसन भी अुस सिद्धान्त पर चलता, तो सभ्य अंग्रेजों के कीने की अमानुषता का परिचय कैसे मिलता? अिन राजपुत्रों के मृत शरीर थाने के सामने फेंक दिये गये। कुछ समय तक गिद्धों ने अुन की दावत खाने के बाद सडी गली लाशों को घसीट कर नदी में फेंक दी गयीं। हे काल देवता! तुम कैसे परिवर्तन करा देते हो! सम्राट् अकबर के राजवंशीयों का अन्तिम धार्मिक संस्कार करने के लिअे दिल्लीमें कोअी न मिला और अब सिक्खों को विश्वास हुआ कि अुन के ग्रंथों में वर्णित भविष्यवाणी सच्ची और प्रत्यक्ष हो गयी! किन्तु किस रूप में? किस अर्थ में और परिणाम क्या निकला?

अिस के बाद अकथनीय लूटमार और हत्याकाण्ड का प्रलय दिल्ली में शुरू हुआ। अुस का विवरण मिलने पर लॉर्ड अेलफिन्स्टन, सर जॉन लॉरेन्स को, लिखता है, "घेरा अुठा लेने के बाद हमारी सेनाने जो क्रूर अत्याचार

अध्याय ५ वाँ

लखनउ
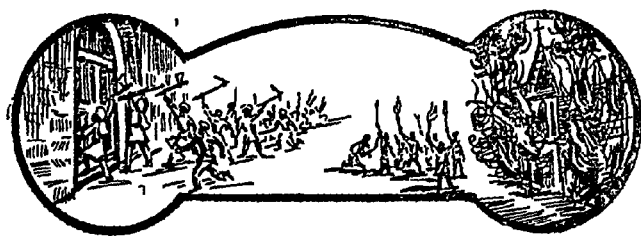
जिस दिन चिनहट की लडाअी में क्रांतिकारियों की जीत हुअी, अुसी दिन अवध की अंग्रेजी शासन का अन्त हुआ और बलवे का रूप खुली क्रांतिमें परिणत हुआ। सिपाहियों, नरेशों, जागीरदारों, जनता ने लखनअू के खाली पडे सिंहासनपर अपने चुनाव से राजा को गद्दीपर बिठाया और शासन शुरू करवाया। चिनहट की विजय के बाद अेक सप्ताह तक जो अंदाधुंध अराजक मच रहा था वह, आगामी युद्ध की किसी प्रकार की सिद्धता करने के पहले, दबा देने की आवश्यकता थी। अिस से भले ही अंग्रेजों को अेक सप्ताह का अवकाश अनायास मिला, क्रांतिकारियों ने पहले लखनअू का राज्यप्रबंध ठीक कर देनेपर ही जोर दिया। लखनअू के भूतपूर्व नवाब वाजिद-अली शाह कलकत्ते में अंग्रेजों के कैदी थे, जिससे लोगों ने अेकमत से अुन के बेटे बिरजिस कादिर को लखनअू के सिंहासन पर बिठाया और अुसके नाबालिग होने से शासन सूत्र, अुसकी माता हजरत महल को, सौंप दिया। दिल्ली के राजप्रासाद में बहादुरशाह के बुढापे के कारण राज का कारोबार जिस तरह बेगम जीनत महल ही चला रही थी, अुसी तरह नाबालिग बेटे के कारण बेगम हजरत महल को राज का बोझ अुठाना पडा। अवध की यह बेगम झाँसीवाली

लक्ष्मीबाओी के बराबर तो न थी, फिर भी वह साहसी, स्वतन्त्रताप्रेमी तथा संगठन की क्षमतावाली थी। दरबार के अेक सरदार महेबूबखाँ पर अुसे पूरा विश्वास था। न्याय, मालगुजारी, पुलीस तथा सैनिक विभागों में भिन्न भिन्न अधिकारियों की नियुक्ति की थी। हर दिन दरबार लगता था। वहाँ सभी राजनैतिक प्रश्नोंपर चर्चा होती। नवाब के स्थानपर बेगमसाहिबाही सभी निर्णयों का नेतृत्व करती। अवध प्रांत से अंग्रेजी शासन नष्ट होकर वहाँ अुसका कोअी चिन्ह शेष नहीं है, यह समाचार, बेगम की राजमुद्रासे अंकित कर तथा साथ बहुमूल्य अुपहार देकर, सम्राट के पास भेज दिया गया। आसपास के जमींदारों माण्डलिकों तथा जागीरदारों को अपने सशस्त्र सैनिकों के साथ लखनअू चल आने के लिये पत्र भेजे गये। नये नागरी अधिकारियों की नियुक्तियों, प्रतिदिन बैठकों, और अन्य कारणों से स्पष्ट होता था कि क्रांति का काम पूरा हो कर रचनात्मक राजशासन का प्रारंभ हो चुका। किन्तु, दुर्भाग्यसे जिन अधिकारियों की नियुक्तियों में क्रांतिकारियोंने अितना उत्साह दिखाया था, अुन्हीं अधिकारियों की आज्ञा और शासन को सिर आँखोंपर रखने की आतुरता तो न दिखलायी। **सभी क्रांतियों में यही भूल अिसी तरह की जाती है। और अिसीमें प्रारंभ से क्रांति के सर्वनाश के विष-बीज बोये जाते हैं।**

हर क्रांति का प्रारंभ विद्यमान शासन संस्था—के नियम निर्बंधों को बलपूर्वक तोडकर ही होता है। किन्तु अेक बार अवैध शासन—सत्ता के अन्याय्य नियम निर्बंधों को बलपूर्वक तोड देने की आदत पडी, कि अुस हुल्लडबाजीमें सभी अच्छे बुरे निर्बंधों को ठुकराने की हानिकर सनक दृढ होती जाती है। दुष्ट और क्रूर अन्यायी निर्बंधों को तलवार के बूतेपर भंग करने की आदत सभी नियमों, निर्बंधों, कानूनों को तोडने की आदी बन जाती है। विदेशी सत्ता को अुखाड फेंकने के लिअे जो वीर मैदान में आते हैं, अुन्हें हर प्रकार के शासन को खोद डालने की अिच्छा होती है। परायी सत्ता की बनायी मर्यादाओं को भंग करने के आवेग में अुन्हें न्यायपरक और सदा आवश्यक, हितकारी, शासनसंस्था

की मर्यादाअें भी नहीं अँचती। और अिस तरह क्रांति का रूप पलट कर अराजक मच जाता है। सद्गुण दुर्गण बन जाते हैं, जो वास्तव में जनता के मगल करनेवाला होने के बदले विनाश का कारण बन जाता है। व्यक्तिओं, समाजों तथा राज्यों का सहार जितना परायी सत्ता से होता है, अुतनाही अराजक (अनार्की) से होता है; अुसी तरह दुष्ट नियमों–निर्बंधा से अुन का जितना नाश होता है, ठीक अुतनाही किसी प्रकार के नियम–मर्यादाओं के न हाने से या होनेपर अुनका पालन न करने से भी होता है। किसी भी क्रांति में अिस समाजशास्त्र के सिद्धान्त की ओर ध्यान न दिया जाय, तो साधारणतया अुस क्रांति का स्वयं सर्वनाश होता है। जिस तरह बीमारी से मुक्त होने के अुद्देश्य से कोअी व्यक्ति शराब पीने लगता है वह रोग–मुक्त होनेपर भी नशा करना नहीं छोडता, ठीक अुसी तरह दुष्ट राजशासन से छुटकारा पाने के लिअे दुष्ट नियमों को तोडने की आदत पड जानेपर, अुद्देश्य पूरा होने के बाद भी वही आदत जारी रहती है और लोगों को वह निठल्ले और शासनद्वेषी बनाती है। अन्याय, अत्याचार को नष्ट करनेवाली क्राति सचमुच पवित्र है। किन्तु अेक तरह के अत्याचार–अन्याय को जड से अुखाडते हुअे यदि अुसी तरह के अत्याचार–अन्याय का पौधा, किसी क्राति में, लगाया जाता हो, तो तुरन्त वह क्राति पापी और अपवित्र बन जाती है; और अुसी पातक के गर्भ में बढनेवाले असख्य विषबीजों से अुस क्रांति का सर्वनाश हो जाता है।

अिसी से, परदास्य के रोग से मुक्त होने के लिअे क्रांति की मदिरा पीना चाहे, तो पहले से वह सावधान रहे कि अुसे घातकी आदत न बनने दे। परायी सत्ता के द्वेष के साथ साथ, अपनी देशी–सत्ता को सिर आँखोंपर मानने की शिक्षा भी अपने मन को प्रारंभ से देनी चाहिये। विदेशी जुल्मी सत्ता का उच्छेद करते समय, हर प्रयत्न से, आपसी झगडों को टालने की सावधानी रखनी चाहिये। परायी सत्ता को मटियामेट करते ही अुसी क्षण से आम

जनता की चुनी शासन-पद्धति का उपयोग, अराजकसे उत्पन्न विपत्तियों से देशकी रक्षा करने के हेतु, चालू कर देना चाहिये। और अेक बार वह ठीक तरह से चालू हो जाय, फिर तो हर अेक को उस सत्ता के आगे परम आदर के साथ सिर झुकानाही चाहिये। नये नियुक्त अधिकारियों की आज्ञा करें। पर पूरी तरह अमल हो और अनुशासन भी अच्छी तरह रहे। सर्वसाधारण के मंगलको ही लक्ष्य कर क अपनी व्यक्तिगत सनक को सयमित करे। शासन-पद्धति में कुछ भी सुधार चाहो, तो बहुमत के निर्णय ही से किया जाय। **थोडे में, बाहर क्रांति और अंदर वैध राज्यपद्धति; बाहर गोल-माल, कुप्रबन्ध, अंदर पूरा सहयोग, सुप्रबंध; बाहर तलवार अंदर न्याय—यही नियम बना लिया जाय।**

संसार की सभी राज्य-पद्धतियों के ये सिद्धान्त-क्रांति की सफलता के लिअे अवश्य जिन को ध्यान में रखना पडता है—विप्लव के प्रथमार्ध में ठीक ठीक निभाये गये थे। क्रांति का प्रारंभ होते ही दिल्ली, लखनअू, कानपूर तथा अन्य स्थानों में यथाशक्ति फुर्ती से शासन को दृढ बनाने पर विशेष ध्यान दिया गया था। अिन महत्त्वपूर्ण स्थानों में अपना ही उल्लू सीधा करने के हेतु या अपना रोब तथा प्रतिष्ठा बढाने के लिअे अेक भी ढोंगी महात्मा आगे न आया। भिन्न भिन्न गद्दियों पर मात्र सच्चे वारिसों और जनप्रिय राजवंशियों को बिठाया गया। अिन नरेशों ने अपना उल्लू सीधा कर अपनी सत्ता का क्षेत्र बढाने की अभिलाषा, क्रांति से लाभ उठाकर, भूल कर भी न दिखलायी। यहाँ तक कि, राष्ट्रीय स्वाधीनता मार्ग में स्वयं रुकावट हो जाने की सम्भावना हो तो अपना राज्याधिकार तज देने के लिअे सिद्ध होने की बात बहादुरशाहने कही, अिसका प्रत्यक्ष प्रमाण, उस समय के उपलब्ध असल खत-पत्रों में मिल जाता है। अिस तरह १८५७ में रचनात्मक राज-शासन का प्रथम भाग सराहनीय ऊँची सतह पर रखा जाने से संपूर्ण यशस्वी ही ठहरा। किन्तु सारी क्रांति में महत्त्वपूर्ण बहुसंख्य वर्ग साधारण सिपाहियों का ही होने से, परायी सत्ता की शृंखलाअें अेक बार तोड देनेपर, वे किसी का भी बंधन नहीं चाहते थे, जिस से अिस आडे समय में अनुशासन में ढीलापन

आ गया। स्वराज्य के ध्येय से प्रेरित पवित्र अुमंग से जिन को अपने श्रेष्ठ अधिकारी पद पर बिठाया, अुन्हीं का वे अपमान करने लगे, अुन की आज्ञा पर चलने को टालमटूल करने लगे और डर होने लगा कि कहीं क्रांति का परिवर्तन अराजक में न हो जाय। अैसे मौकेपर अमूर्त ध्येय के प्रेम से संगठित होने की क्षमता न रखनेवाले अनुयायियों के अंतःकरण अपनी अजेय वीरता तथा असाधारण व्यक्तित्व से आकर्षित करनेवाला कोअी महान् पुरुष आगे आता, तो वीरपूजा के नाते सब अुस के झण्डे तक्ले खडे हो जाते और क्रांति विजयिनी होती। अेक तो, अैसी क्षमतावाला अेक भी नेता न मिला और दूसरे, अनियंत्रित क्रांति का अन्त अराजक में होने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होने से अवध की सेना में शहीदों (हुतात्मा) के बदले पांचों वीरों में अपना नाम लिखवानेवाले ही अधिक थे। जो हुतात्मा थे, अुन्होंने निडरता से, अपराजित और अजेय निर्धार से—'करेंगे या मरेंगे'—तीन सालोंतक युद्ध किया। लखनअू में सर्वसाधारण सिपाहियों की सख्या, देशपर बलि चढनेवाले हुतात्माओं की अपेक्षा अधिक होने से हजरतमहल के नियुक्त अधिकारियों की आज्ञाओं का ठीक पालन शायदही कोअी करता था, जिस से सिपाही अुच्छृंखल, पीडक, अनुशासनशून्य तथा मनमौजी बनते गये!

तो भी उन्हीं से कुछ वीर श्रेष्ठोंने पराक्रम, अुदात्त साधना की धुन तथा स्वाभाविक अुच्च प्रवृत्तियों का विकास सिपाहियों में किया था। और अिन शूर व्यक्तियों ही ने आग्रह किया तब २० जुलाअी को रेसिडेन्सीपर जोरदार हमला चढाना तय हुआ।

२० जुलाअी को, अितने दिनों से आग अुगलनेवाला तोपखाना अेका अेक शान्त हो गया। लगभग सबेरे ८ बजे क्रांतिकारियों ने रेसिडेन्सी की फसील के नीचे सुरंग भर दिये। अुन का धडाका होते ही अुस भग्न-तट से सिपाही अंदर घुस पडे; साथ साथ तोपखाने ने भी अंग्रेजों को भुनना शुरू किया। क्रांतिकारी सेना हर तरफ से अंग्रेजों पर टूट पडी—रेदान की ओर, अिन्नेस के घरपर, कानपुर बॅटरी पर। अिस आखरी स्थान पर टूट पडे सैनिकों ने अंग्रेजी तोपों पर सीधा धावा बोल दिया। बारबार वे चढ जाते।

अुन का वीर नेता स्वराज का झण्डा अूँचा कर खाअी में कूदा; और जोरसे पुकार ने लगा 'आ जाओ, बहादुरो, आगे बढो'। खाअी पार कर वह अूपर चढा और अंग्रेजी तोपों पर स्वराज का झण्डा गाडने की चेष्टा करने लगा।* किन्तु वह नेता गोली खाकर गिर पडा। यह समय था, जब हजारों की संख्या में अुस की लाश पर से आगे बढ कर अुस हुतात्मा की मौत का बदला शत्रु के खून से, लिया जाना चाहिये था। किन्तु आगे घुस पडने के बदले सैनिक अनुचरोंने अुलटे मुँह घुमाये और हट गये। किन्तु, धन्य हो निसनीवालो! अुन पाँचवें वीरों की तरह तुम कायर न बने, आगे बढे, सच्चे मर्दों की तरह आगे बढे! खाअी में निसेनी लगाओ और अंग्रेजी तोपखाने के गोलों की परवाह न करते हुअे अूपर चढो। आगेवाली पाँति खेत रही—अच्छा, चिंता नहीं—दूसरे चलो आगे! अरे, किन्तु और लोग है कहाँ? विद्रोहियों और अंग्रेजों में यही तो भेद है। अपने भाअियों का रक्त अंग्रेज व्यर्थ में कभी बहने न देगा। अेक गिरा तो पीछे से दस आदमी अुस की जगह लेने दौड पडते। अस्तु। जो सिपाही पीछे हट कर भाग गये वे कहाँ गये होंगे अिस की हमें रंच भी क्षिति नहीं। किन्तु, हे वीरवर। हे हुतात्मा! तुम निश्चितरूप से स्वर्ग में पहुँचे हो। कायर, जीवित प्रेत के पापी स्पर्श से स्वराज का पवित्र झण्डा गंदा न हो जाय अिसी लिअे जिन्हों ने अुसे अुत्तोलित रखा, शत्रु की आग अुगलती तोपों पर अुसे फहराने के हेतु जो वहाँतक घुस गये, अुन के अुस पवित्र तथा गौरवपूर्ण रक्त से यह झण्डा सदा पवित्र रहेगा, हमेशा दैवी आभासे दमकता रहेगा। अैसे ही छिन्न और लहूलुहान हाथों में स्वराज का ध्वज फबता है। **जिन की कलाअियाँ क्रांतिकार्य में लहूलुहान नहीं हुअीं, वे अिस स्वाधीनता के पवित्र झण्डे को स्पर्श कर अुसे भ्रष्ट करने की चेष्टा न करें।**

पहली चढाअी रोक कर पीछे हटा देने के बाद, प्रतिदिन क्रांतिकारियों तथा अंग्रेजों की छोटी मोटी भिडाअियाँ हुआ करती थीं। रेसिडेन्सी के घर

---

* गबिन कृत म्यूटिनी; पृ. २१८.

अुडा देने में तो विद्रोहियों ने कमाल कर दी। अूपर से तोपों की भीषण मार और नीच से सुरंग के विस्फोट! अेक भी अंग्रेज नहीं जानता था, कि भूमि के नीचे से धडाका हो कर वह कब फट जायगी और अुस के पेट में वह कब समा जायगा। ब्रिगेडियर अिन्नेस का अंदाजा है कि कुल ३७ बार सुरगें अुडायी गयीं; साथ में क्रांतिकारी तोपखाना की लगा तार धडधडाता रहता था ही। हर पक्ष अेक दूसरे के अिरादों का पता लगाने अपने गुप्तचरों को भेजता और हमेशा अुनमें भयंकर भिडन्तें हुआ करतीं। कअी बार किले की दीवारों के कान लग जाते और अंदर और बाहरवालों की कानाफूसियाँ अेक दूसरे सुन लेते और सब अिरादे फक हो जाते। कअी बार अंग्रेजी झण्डेपर ठीक गोलियों का निशाना साध कर सिपाही अपना मनरंजन करते तथा रात होते ही अंग्रेज दूसरा झण्डा अुसी जगह खडा कर धोखा देते! अिस प्रकार भीषण लीलाअें करते हुअे लखनअू की रणभूमि अपना विकराल जबडा खोलकर मृत्यु का अट्टाहास करती! हाँ, अंग्रेजों का साथ देनेवाले हिंदी सिपाहियों का देशद्रोही बर्ताव देखकर समरांगण में फुदकनेवाले भूत-प्रेत भी रोते होंगे। हर रात में, किले में जहाँ सिक्ख या हिंदी लोगों का डेरा रहता वहाँ; छिप छिप कर पहुँचने पर क्रांतिकारी दूत आवाज करते, "क्यों देशसे निमकहरामी करते हो? और क्यों घोंपते हो अंग्रेजी तलवार अपने भाअियों की छाती में?" किसी रात में बार बार अिन प्रश्नों को सुननेपर देशद्रोही सिक्ख विद्रोही दूतों को, स्पष्ट सुनायी देने के बहाने, पास आने को कहते; और पास आ जाते ही, छुपे हुअे गोरे सैनिकों को अिशारा कर आगे बुलाते! सिक्खों की अिस नीचता को देख विद्रोही अुन्हें गंदी गालियाँ देते हुअे लौट जाते! यहाँ के क्रांतिकारियों में अेक अचूक निशानेबाज हबशी हिजडा था जो पहले नवाब की नौकरी करता था। अुसने रेसिडेन्सी के अंग्रेजों पर बडा आतंक जमा रखा था। अुसे वे 'ऑथेलो' के नाम से जानते थे।

सर हेन्री लॉरेन्स की मृत्यु के बाद अवध का चीफ कमिशनर बना मेजर बँक्स अेक क्रांतिकारी की गोली का शिकार हुआ। लखनअू के घेरेमें काम आया यह दूसरा चीफ कमिशनर था। किन्तु अंग्रेजी सेना के सुपर

तथा अनुशासनपरक संगठन से घेरे की अनिश्चित तथा डरावनी धूमधाम में अुन का मुख्य सेनापति मर जाने पर भी, अुस की क्षमता में, किसी साधारण सिपाही की मौत से अधिक कमी न दीख पडी। दूसरा कमिशनर भी मारा जानेपर ब्रिगेडियर अिंग्लिसने अुसका पद सम्हाला और बचाव का काम पहले के समान चालू रहा। अिस समय, कअी प्रकार की हानियों, सैनिकों की मृत्युसंख्या, अफसरों के तबादलों, अनाज की तंगी और क्रांतिकारियों की हलचलों से अंग्रेज निराश नहीं, तो हैरान बहुत हो गये थे।

अिसी अरसेमें अंगद कानपुर से लौट आया। यह अगद हिंदी था और पहले अंग्रेजी सेनामें रहा था; अब सेवानिवृत्त (पेन्शनर) था। लखनअू के घेरे के समय से अेक भी गोरा दूत बाहर छटक कर समाचार लेकर जीवित लौट आना असम्भवसा बन गया था। अंग्रेजों का गोरा चमडा, भूरे बाल और कँजी आँखें क्रांतिकारियों की तलवार को धोखा नहीं दे सकती थीं। अिसीसे अंग्रेजों को टहलुवे का काम करने के लिअे 'काले आदमी' को नियुक्त करना पडता था, और अिस काम के लिअे कअी 'राजनिष्ठ' टहलुवे भेज दिये गये थे। किन्तु अेक अंगदही जीवित लौट आया था। विद्रोहियों के डरसे वह अपने साथ कोअी पत्र या अन्य वस्तु न लाया था। हॉ, कानपुर से लखनअू की सहायता के लिअे सेना निकली—यह आँखों देखी खबर सेनापति अिंग्लिस को अुसने बता दी। अिस से अुत्साहित हो कर लिखित प्रत्युत्तर लाने के लिअे अुसे फिर भेजा गया। अगद २२ जुलाअी को लखनअू से चला और २५ की रात को ११ बजे लौट भी आया; साथ हॅवलॉक का यह पत्र लाया:– हर विपत्ती का सामना कर सके अितनी सेना के साथ हॅवलॉक आ रहा है; लखनअू का छुटकारा, बस, अब पाच छः दिनों का सवाल है।" अपने मुक्तिदाता हॅवलॉक को सब जानकारी देने के लिअे अंग्रेजोंने अंगद के साथ, सैनिक दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण खाके और मानचित्र देकर, फिर से हॅवलॉक के पास भेज दिया। यह अजीब टहलुवा फिरसे अुधर गया और सब सामान ठीक तरह से पहुँचा दिया। अब विद्रोहियों की लाशों को रौंधते हुअे हॅवलॉक का विजयी झण्डा जिस दिशासे आनेवाला था, अुस की ओर आँख बिछाये

लखनअू के अंग्रेज बैठे थे। दूरपर कुछ तोपों की गडगडाहट अुन्हें सुनायी दी। हॅवलॉक ही तो आ रहा होगा न?

अिस आशापूर्ण अुत्कंठा से राह देखनेवाले अंग्रेजों को थोडी ही देर में पता चला कि क्रांतिकारियों ने फिर से चढाअी शुरू की है। पहले कानपूर बॅटरी, जोहान के घर, बेगम कोठी तथा अन्य स्थानों पर क्रांतिकारियों ने तोपें दागनी जारी कीं। अुस दिन अुन की सुरगों ने बहुत बढिया काम किया। अंग्रेजों की किला बंदी में अेक बहुत बडा छेद पडा, जिस में से अुन का अेक दस्ता संचलन करते हुअे आसानी से जा सकता था। किन्तु अंदर घुसने-वाला दस्ता ही कहाँ था? क्रांतिकारियों की किलाबंदी में अितना बडा छेद यदि अंग्रेज कर पाते तो आधे घंटे में अुन्हों ने अुस स्थानपर दखल किया होता। क्रांतिकारियों के कुछ सूरमा दोपहर दो बजे तक झूझते रहे। हाँ, अंग्रेजों के मातहत हिंदी लोगों ने वीरता, अनुशासन तथा निडरता से सराहनीय पराकाष्ठा की। क्या दुर्भाग्य है! देशद्रोह में यह वीरता और देशभक्ति में यह कायरता! कैसा विरोध! अुठो, दौडो और अिस लांछन को कोअी धो डालो! अब पांच बजे है; चढाअी लगभग तोड दी गयी है; फिर भी कोअी दौडो! तुरन्त विजय खींच लाने के लिअे न सही; कम से कम अमर कीर्ति के लिअे ही सही! कॅ. सॉडर्स, सम्हालो! जानपर जान देनेवाले तथा क्रोधसे बौखलाये वीरों का हमला हो रहा है। देखो, वे आ गये, ये अंगार बने सूरमा सीधे घुस रहे हैं। अंग्रेजी परकोटे से अुन्हे रुकावट हो रही है, फिर भी टेक से आगे बढने का जतन कर रहे हैं वे! अिस बाँके समय में अंग्रेजों ने तोपें बंद कर संगीने सँवारी। क्रांति अमर रहे; स्वतन्त्रता देवी की जय; धन्य वीर, धन्य : खाली हाथों से शत्रू की संगीन छिन ली! अन्त में अंग्रेजी गोली ने अुसे सुला दिया। हाँ, किन्तु समरांगण में अपने राष्ट्र को अपमानित होते हुअे अुसने बचाया और शत्रु भी बखाने अैसी वीरता का परिचय देकर हुतात्मा के परमपावन रक्तस्रोत में, निदान, वह सो गया। अेक गिर; फिर दूसरा बढा; वह भी गिरा और तिसरा भी धन्य धन्य! तुम वीरता से लडे। अिस लडाअी की बराबरी यही लडाअी कर सकती थी। किलाबंदी के अंग्रेजों की संगीनों को छीनने के लिअे, शेर की

तरह झपटकर अन्तिम साँसतक झूझनेवाले अिन क्रांतिकारियों के छायाचित्र (फोटो) स्वयं अंग्रेजों ही ने अुतारे।

१८ अगस्त को और अेक बार क्रांतिकारियोंने अंग्रेजों पर हमला किया। अिस दिन भी सदा के समान सुरंग से किले में बडा छेद किया और क्रांतिकारी अंदर घुसे। मॅलेसन लिखता है, "अुन से अेक अच्छा अधिकारी अेक दम में छेद की चोट पर जा पहुँचा और अपनी तलवार के अिशारे से अपने अनुयायियों को बुलाना चाहा, किन्तु कोअी आय अुसके पहले ही अेक गोली लगकर नीचे गिर गया । तुरन्त अुसकी जगहपर दूसरा आ खडा हो गया; वह भी क्षणभर में ढेर हो गया; आदि।"

अुपर्युक्त तीन लोगों की जो वीरता फिरंगियोंने भी सराही वह निकलसन की दिल्ली की बहादुरी के जोड की थी । किन्तु क्रांतिकारियों का यह शौर्य अुन के कायर अनुयायियों के कारण विफल हुआ। अपने तीन बहादुर नेताओं को गिरते देख तेश आकर आगे दौडने के बदले, हजारों लोगों को पीछे हटनाही चतुरता जान पडी। अिस लज्जास्पद प्रसंग से हम क्या पाठ सीखें ?

हाँ, तो अिन सदा की मुठभेडों से ही सब कुछ समाप्त न होता था। क्यों कि, देशद्रोही हिंदियों की पूरी सहायता मिलने पर भी क्रांतिकारियों के दिन रात गोले फकनेवाली तोपों तथा बंदूकों के सामने टिके रहना असम्भवसा होने की बात अंग्रेजों को जॅच गयी थी। अंगद फिर लखनअू कुशल से पहुँच गया। अपना वचन पूरा करने के लिअे हॅवलॉक 'कहाँ तक बढ आया है' आदि जानकारी पूछने को अुत्सुक सेनापति के हाथ अंगदने हॅवलॉक का पत्र रखा, "कम से कम और २५ दिन तक मैं लखनअू नहीं पहुँच पाअूँगा।" पत्र समाप्त था। आँखें बिछाये किसी की राह देखी जाय और फिर ठीक निराशा पल्ले पडे अिससे बढकर यत्रणा देनेवाली और क्या बात हो सकती है? मौत की राह देखती घायल या अजर-पंजर बनी मेमें ही नहीं, बल्कि अंग्रेज सोजीर और अफसर भी घबराये, हताश और दुखी हुअे। समूची अंग्रेजी सेना पर काल की छाया फैली मालूम होती थी। खाद्य पदार्थों की भयंकर महँगी से सब का

आधा भोजन काटा गया। अितनी देरी क्यों कर हो रही है ? लखनअू के छुटकारे अैसे गभीर समय में हॅवलॉक जैसा शूर योद्धा तुरन्त क्यों नहीं आ सकता ?

' और, अेक क्षण की भी देरी न करते हुअे लखनअूवाले अपने बंधुओं को छुडाने, हॅवलॉक कानपूर से २९ जुलाअी तक गंगापार हुआ भी। अुस के साथ १५०० और १२ तोपें थीं; और ' ५—६ दिनों में स्वयं आकर मै तुम्हें छुडाता हूॅं ' अिस अर्थ के निश्चित आश्वासन का पत्र भी अुसने लखनअूवालों को भेजा था। किन्तु गंगापार होने पर अवध प्रांतमे पग धर ते ही ' यह काम तो मेरे बाअें हाथ का खेल है ' यह अुस का घमण्ड चूर चूर हो गया। अुस के सब मीठे सपने मेघों के समान छॅट गये। अवध की चप्पा चप्पा भूमि प्रतिकार के लिअे सिद्ध मिली। हर जमींदार ने सौ-पांचसौ लोग जमा कर स्वाधीनता की लडाअी छेडी थी। हर गाँव में स्वतंत्रता का झण्डा दिखाअी पडता था। यह भयानक दृश्य देख कर हॅवलॉक भी कुछ सकपकाया; किन्तु वह निराश न हुआ। वह आगे बढता रहा। अुन्नाव में क्रांतिकारियों ने अेक हलका हमला किया और पीछे हटे। अिस प्रसग के बाद हॅवलॉक ने खाना खाने जितनीही छुट्टी सैनिकों को देकर तुरन्त आगे बढने की आज्ञा दी। बशीरतगज में भी अेक भिडन्त हुअी। २९ से हॅवलॉक को दो हमलों का सामना करना पडा और दोनों में अुस की जीत हुअी।

किन्तु क्या यह विजय ठोस थी ? अेक ही दिन में अुसकी छोटी सेना का छठवॉ हिस्सा खेत रहा था। क्रांतिकारियों की कोअी हानि न हुअी थी। यह भी पता नहीं मिला, कि, सचमुच, अुनकी हार होनेसे वे भागे थे या अपनी थोडी भी हानि न हो कर शत्रु को सताने का वृकयुद्ध अुन्होंने बरता था। और अिसी समय दानापुर की विद्रोही सेना अुन्हें मिलने का संवाद पहुँचा। अिस तरह, सब ओर से चिंताजनक स्थिति प्राप्त होने से हॅवलॉक को अपनी चढाअी स्थगित करनी पडी और ३० जुलाअी के दिन मंगलवारे को अुसे पीछे हटना पडा।

कानपुर से हॅवलॉक की सेना हिलने का सवाद् पाते ही नानासाहब ने कानपुर के आसपास के प्रदेशमें अपनी हलचल शुरू की। हॅवलॉक जब कान-पुर छोड, गगापार होकर अवध में प्रवेश कर रहा था, तभी नानासाहब भी अवध छोड अुसी गगा के पार कानपुर में प्रवेश कर रहे थे। अिस शिकंजेमें कहीं फँस न जाय, अिस लिअे हॅवलॉक को मंगलवारे में ४ अगस्त तक डेरा डालकर रहनाही पडा। हॅवलॉकके अेक सप्ताह में क्रांतिकारियों को गोतमीतक पीछे खदेडने की बात तो दूर रही, हॅवलॉक स्वयं गगा किनारे अेक तरह से स्थान-बद्ध रहा। क्रांतिकारी सेना फिर बशीरतगज में अुससे भिडी। अिन लगातार हमलों से तग आकर अुसने लखनअू का रास्ता पकडा। फिर अेक बार बशीरत गजपर अुसने क्रांतिकारियों को भगा दिया। किन्तु वही प्रश्न रहा कि यह सच्ची जय है? क्यों कि, अिस भिडन्त में हॅवलॉक के ३०० सैनिक काम आये और बचे हुअे सब अितने थक हुअे थे कि अुसे लखनअू का रुख छोड कर गंगाकिनारे फिर हट जाना पडा। अुस दिन की गिनतीमें प्रारंभ के १५०० सैनिकों से केवल ८५० बचे पाये गय।

अगस्त ५ को मंगलवारे को हॅवलॉकके हट जाते ही क्रांतिकारियों ने बशीरतगज पर कब्जा जमा लिया और वहींपर डेरा डाला। अिस डेरे में बहुतेरे लोग सुखी जमींदार ही थे। 'कल जितने मारे गये, सब जमींदार थे।'* अपने देश, अपने स्वराज्य, अपने स्वातन्त्र्य के लिअे अिन धनीमानी सज्जनों ने अपनी सुकोमल शय्या को त्याग कर हर संकट और विपत्ति का सामना करने का व्रत लेकर समरागण में कूद पडने की ठानी थी। अिस वीरोत्साह को लक्ष्य कर अिन्नीज लिखता है:— "**कमसे कम अवध प्रांत की लडाअी को तो हमें स्वातंत्र्य-समर यही नाम देना पडेगा।**"×

हॅवलॉक की छावनी के अिर्दगिर्द क्रांतिकारी दस्ते जमराज के समान मंडरा रहे थे। ११ अगस्त को हॅवलॉक ने फिर तीसरी बार बशीरतगंज पर

---

* के और मॅलेसन्स अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २ पृ. ३४०

× सिपॉयीज् रिव्होल्ट.

चढाअी की और फिर हलकी मुठभेड के बाद क्रांतिकारी भाग गये। तीसरी बार हॅवलॉक ने अपने मन से पूछा–'यह जीत है या हार?'

नहीं; न वह जीत थी, न हार! तब फिर हॅवलॉक मंगलवारे को लौटा। अिसी बीच अिधर नानासाहब की सभी योजनाअें पक्की हो गयी थी। सागर तथा ग्वालियर के विद्रोही, तथा स्वयंसैनिकों के कअी दस्ते अुन्हें आ मिले थे। सब को साथ लेकर नानासाहब बिठूर की ओर चल पडे, जिस से कानपुर को खतरा पैदा हो गया। जनरल नील के पास नानासाहब पर टूट पडने के लिअे आवश्यक सेना न होने से, अुसने सब स्थिति हॅवलॉक को बता दी। अब तो लखनअू को दौड जाना और वहाँ के अंग्रेजों को छुडाना सौ टका असम्भव था। अिसीसे १२ अगस्त को हॅवलॉक को फिर से गंगापार होकर कानपुर को लौटना आवश्यक हुआ। अंग्रेजी मारू बाजे जब 'पीछे हट' के सुर निकालने लगे, तब, मानो, स्वतंत्रता का डंका ही पीटा जाता हो, यह मान कर, क्रांतिकारियों में चारों तरफ आनंद के नारे गूँजने लगे। अपनी टेकपर स्थिर रहे जमींदारो! अपना रक्त बहा कर और अवध से विदेशी सत्ता की गुलामी को भूमिमें गाड कर तुमने स्वदेश की अुत्तमोत्तम सेवा की है। श्री. अिन्नीज लिखता है "अवध से अंग्रेजों की अिस पीछे हट से, निस्सदेह बहुतही अजीब परिणाम निकला। अिस पीछे हट का अर्थ, अवध के सब तालुकदारोंने यही लगाया कि अब अवध से अंग्रेजी शासन अुठ गया है; और, तब, लखनअू की राजसभा ही को अुन्होंने अपनी अधिकृत केन्द्रीय सरकार माना। और आजतक जिस लखनअू राजसभा के पृष्ठपोषक बन कर अुस का बल बढने की बात को आज तक जो टालते रहे थे, वेही जमींदार, अब, अुसी राजसभा की आज्ञा पर अपनी सेना को झट समरांगण में भेज देने लगे। *

क्रांतिकारियों की यह सीधी जीत भलेही न हो, अप्रत्यक्ष रूप से वह विजय ही थी। अुपर्युक्त चार भिडन्तों के समान केवल हॅवलॉक की पिछाडीपर

---

* सिपॉयीज् रिहोल्ट. पृ. १७४

हमले कर अुसे पीछे हटने पर मजबूर करने की अपेक्षा, हॅवलॉक को हरा कर अुसे कानपुर को खदेडा जाता तो क्रांतिकारी सेना में अधिक आत्मविश्वास पैदा किया जा सकता था और अुसी मात्रा में अंग्रेजों का दिल भी टूट जाता। अंग्रेजोंने अिस का अर्थ यह लगाया कि वीरता की त्रुटी के कारण नहीं, संख्या बल की कमी के कारण कानपुर लौटना पडा, जिस से अिस अप्रत्यक्ष हार से अुन का आत्मविश्वास, जोश और अकड में रंच भी कमी न हुअी; अुलटे, पूरा सेनाबल जमा होतेही लखनअू पर चढाअी करने की दृढ श्रद्धा से हॅवलॉक कानपुर में पडा रहा।

अिसी अरसे में आपसी मत्सर के कारण हॅवलॉक और नीलमें गहरी ठनी थी; हॅवलॉक ने नीलपर लिखे अिस पत्र से अिसका प्रमाण मिलता है:— 'मैने तुम्हें खानगी तौरपर सब हाल बता दिया था। तुम मुझे जवाब में मेरी योजना की निंदा करते हुअे मुझे फटकारते हो; और आगेके लिअे सीख भी देते हो। मेरे मातहत किसी भी अफसर से, चाहे जितना वह अनुभवी क्यों न हो, मै कुछ नहीं सुनता चाहता; फिरसे कोअी सीख न दी जाय। अच्छी तरह यह बात ध्यान में रखो। अिस गभीर समय में सार्वजनिक सरकारी सेवा के कार्य में बाधा पैदा होगी अिसी से मै तुम्हें अिस से अधिक कडी सजा—गिरफ्तार करनेकी—नहीं देता। अिस वक्त तुम्हे गंभीर चेतावनी दी जाती है। आगे कोअी सीख देने से बाज आओ।* अिस पत्र का अेक वाक्य बडा महत्त्वपूर्ण है—अपने राष्ट्र के प्रति कर्तव्य—भावना अंग्रेजों के रोम रोम में किस तरह भरी है अिसका परिचय मिल जाता है—' सार्वजनिक सेवा के कार्य में बाधा पैदा होगी अिसी से' अपने व्यक्तिगत अपमान का बदला लेने से वह तात्काल रुक गया। अैसे गाढे समय में हॅवलॉक और नील अिन दोनों सेनापतियों में जो वैर था अुससे शत्रु लाभ न अुठाये अिसीसे केवल दोनों चुप न रहे, वरन्च अन्तिम साधना की दृष्टिसे अुन्हों ने अेक दूसरों की सहायता की। जिस

* अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. २३७ की टिपणी में मॅलेनने अुद्धृत किया है।

समाज में व्यक्तित्व के मदगल हाथी के गडस्थलपर सामाजिक मंगल की लगन का अंकुश सदाही लगाया होता है, अुसी समाजमें श्री और सरस्वति, कीर्ति और स्वाधीनता हमेशा बनी रहती है।

हॅवलॉक जब कानपुर पहुँचा तब पहलीबार अुसे मालूम हुआ कि नानासाहब ब्रह्मावर्त पर फिर से दखल कर चुके हैं। क्रांतिकारी सेना तथा नानासाहब अिस प्रकार कानपूर की सीमा पर ही भिड जाने से हॅवलॉक तात्काल अुनपर चढ गया। अुस दिन बिठूर की लडाअी में अंग्रेज सेना क्रांतिकारियों की हरावल से २० गज पर आ गयी; तब विद्रोही ४२ वीं पलटन ने संगीनों की मार शुरू की। अंग्रेज अबतक मानते आये थे कि, सब अुपाय थक जानेपर अन्त में संगीनों के हमले से क्रांतिकारियों को डरा दिया जा सकता है। किन्तु आज स्वाधीनता के शूर वीरों ने अुलटे अंग्रेजों पर ही संगीनों से हमला किया; साथ साथ अुनके रिसाले ने पीछे से अंग्रेजों की रसद मार दी। अिस तरह दोनों ओर से अंग्रेजों पर मार पडी। किन्तु यह सारी वीरता और रणकौशल्य अंग्रेजों के समान अनुशासन के साँचे में ढले हुअे न होने से, अिस पराक्रम और दृढता के बावजूद भी क्रांतिकारी हार कर पीछे हटने पर मजबूर हुअे। क्रांतिकारियों को हरा कर १७ अगस्त को हॅवलॉक जब कानपूर लौटा, तब अुसे पता चला कि नानासाहब की सेना केवल ब्रह्मावर्त ही में न होकर जमुना के किनारे कालपी में काफी सेना जमा हुअी है। कालपी, ब्रह्मावर्त, अवध तथा गंगा के दोनों पासों से हर तरफ से हैरान किये गये। विजयी हॅवलॉक ने राजधानी में कलकत्तेवालों को लिखा—'हम बडे भयंकर जिच में अिस समय पडे है; नयी कुमुक यदि जल्द न आ जाय तो लखनअू छोड अिलाहाबाद को हट जाने के बिना, भयंकर विपत्ति से अंग्रेजी सेना को बचाने का कोअी अुपाय न रहेगा।"

हॅवलॉक कलकत्ते के अुत्तर की राह देख रहा था। अुसे बडा विश्वास था, कि अुस की प्रार्थना के अनुसार नयी सेना आ जायगी और लखनअू की मुक्तता कर अब तक की सभी हार जीतों पर वह मुकुट चढायगा। किन्तु सहसा अुसे आज्ञा मिली कि लखनअू पर चढाअी करनेवाली सेना का आधिपत्य

अुससे छिन कर आअुटराम को सौंपा गया है। अंग्रेजों का दण्ड इतना कडा होता है। विजयी होने पर भी कानपुर पहुँचने में नील को देरी हुअी तब अुसे सेनापतित्व से वंचित कर वह पद हॅवलॉक को दे दिया गया। और हॅवलॉक के अबतक विजयी होनेपर भी अुसे लखनअू पहुँचने में अवश्यंभावी देरी होते ही अुस जैसे चतुर सेनानी को अुस के पद से हटाकर सर जेम्स आअुटराम को अुसका पद दिया गया। अिस समाचार से हॅवलॉक को बडा धक्का पहुँचा। जिस विजय की कामना से वह दिन रात प्राणपन से चेष्टा कर रहा था, लखनअू मुक्त करने का वह सौभाग्य ठीक मौकेपर दूसरे किसी को प्राप्त होगा। अिस अपमान से अुसके मनपर बडी चोट पडी। तब भी, मॅलेसन लिखता है—"हमारे अंग्रेज देशबंधुओं में यह बडा श्रेष्ठ गुण है कि चाहे जितनी तीव्र निराशा और अपमान सहना पडे, सार्वजनिक हित की रक्षा के कर्तव्य में इंच भी बाधा नहीं पडने देते। कर्तव्य का सदा भान और निष्ठा ही अंग्रेज की विशेषता है। अपने सभी व्यक्तिगत भावों की वह बलि चढाता है। अुस के अपमान का शल्य चाहे जितनी तीव्रतासे अुसके मन में सालता रहे, स्वदेश के विचार को अुस के अंतःकरण में सर्वप्रथम स्थान होता है। अपने देश की सेवा करने के तरीकों के बारे में अुसके अपने विचार भले हों, राष्ट्र के प्रतिनिधिरूप बनी शासन–संस्था यदि अुस से भिन्न विचार रखे तो शासनसंस्था की सभी आज्ञा का हृदय से पालन कर राष्ट्र को सुयश प्राप्त करा देने के काम में अपना सारा बल अंग्रेज लगा देता है। नील भी अुसी तरह चला और अब हॅवलॉकने वही किया। अपनी पदच्युति का भान होते हुअे भी, पहले अेक सेना का सर्वेसर्वा सेनापति होते हुअे जिस फुर्ती, साहस तथा निष्ठा से वह काम करता था, ठीक अुन्हीं गुणों के साथ अब भी अपने नियुक्त काम में व्यस्त दीख पडता।" *

जो यश दूसरे को भूषित करनेवाला था, अुसी जश की सिद्धता के लिअे जब हॅवलॉक दिन रात अेक करता था, तब १६ सितंबर को सर

* मॅलेसनकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ३, पृ. ३४६.

आअुटराम कानपुर पहुँचा। हॅवलॉक से आधिपत्य के पूर्ण अधिकारों को सौंप जाने के बाद सर्व प्रथम अुसने आज्ञा घोषित की-" लखनअू का मुहासरा तोडने के लिअे आज तक बडी वीरता और धैर्य से चेष्टा करनेवाले ही को अुस की जीत का श्रेय मिलना चाहिये। अिस लिअे लखनअू का घेरा अुठने तक, मुख्य सेनानी होते हुअे भी, मै वीर हॅवलॉक को मेरे पद का अधिकार सौंपता हूँ और मै अेक स्वयसेवक के समान अुस के अधीन काम करूँगा।"

अपने नये सेनापति के अिस पहली ही अुदारता से अंग्रेजी सेना को क्या हि नैतिक पाठ मिला होगा! व्यक्तित्व अपने राष्ट्र ` हित में कितना अेक रस हो गया होगा। अिस प्रथम घोषणासे हॅवलॉक को सेनाधिपत्व सौंप कर आअुटराम ने असाधारण आत्मत्याग, अुदारता और महामनत्व का परिचय दिया!

अिस प्रकार अुदात्त, सदाचारी सीख से प्रेरित और आयर, आअुटराम, कूपर जैसे वीरों के मातहत आ पहुँची अंग्रेजी सेना की सहायता से कानपुर की सेना दुगने अुत्साहसे लखनअू को छुडाने के लिअे २० अगस्त को गंगापार होने चल पडी। 'लखनअू क्या, बस, ५-६ दिनों में स्वतन्त्र कर देता हूँ' कहकर २५ जुलाअी को अुसपर दखल करने को अुतावला हॅवलॉक; अवध में पैर जमाना ही असम्भव हो जानेसे कानपुर को लौट जानेका दुर्भाग्य जिसे बदा वह १२ अगस्त का हॅवलॉक; और करारी आशा से गहराया हुआ २० सितबर का हॅवलॉक! तीन कितने भिन्न चित्र! अिस समय अुसके पास २५०० गोरे सैनिक, सिक्ख और अन्य मिलकर लगभग ३२५० सैनिक थे। चुनिन्दा रिसाला, अुत्तम तोपखाना, तथा नील, आयर, आअुटराम जैसे अफ़सर थे। अब वह अवध के क्रांतिकारियों की थोडे ही परवाह करता। फिरंगी के पापी स्पर्श से स्वदेश की रक्षा के लिअे आगे बढनेवाले जमींदार को कत्ल किया गया। मातृभूमिपर से फिरंगी सवारों के घोडे दौडते हुअे न देख सकने से जलते, लडने पर अुतारू हुअे हर आत्माभिमानी गॉव को भस्मसात् कर दिया गया। मार्ग में हर नदी, हर सडक, हर खेत स्वदेशी लहू से लथपथ कर दिया गया। अिस

तरह यह प्रबल अंग्रेजी सेना अत्याचार करती हुअी अवध में घुसती चली । कच्ची शिक्षावाले क्रांतिकारियों से भिडन्त करते और अुन्हें भगाते हुअे २२ सितंबर को हॅवलॉक आलमबाग के पास पहुँचा । यहाँ क्रांतिकारियों का अेक पडाव था । यहाँ दिनभर घमासान युद्ध होता रहा । क्रांतिकारियों की पाँच तोपें छिन ली गयीं, जिस से अेक फिर लौटानी पडी । रात होने पर भी दोनों दल मैदान में डटे रहे । किन्तु जब क्रांतिकारियोंने भाँप लिया कि कीचड और दलदल की भूमिपर ही रात में आराम करने की चेष्टा शत्रु कर रहा है, तब अुन्होंने आराम का खयाल छोड जोरदार हमला शुरू किया । अुस रात में मूसलाधार वर्षा हो रही थी । किन्तु बारिशोंसे बढकर अंग्रेजी सेना का उत्साह लहरा रहा था । क्यों कि, अुसी रातको दिल्ली का पतन होने के समाचारों ने सब को अुत्साहित कर दिया था । निदान, २५ सितंबर का उत्पात मचानेवाला दिन आ पहुँचा । लखनअू को जानेवाली सडकों के बदले आडे रास्ते से हॅवलॉक को रेसिडेन्सी की ओर बढते हुअे देख कर क्रांतिकारी तोपें आग बरसाने लगीं; किन्तु अिस भयकर मार को धीरज से सहते हुअे अंग्रेजी सेना आलम बाग से ठेठ चारबाग तक पहुँच गयी; यहाँ का पुल लाँघकर लखनअू में पग धरना था । अिस मोर्चेपर घमासान युद्ध शुरू हुआ । कॅ. मॉड गोलियों की बौछार से पुल पाटने लगा किन्तु बेकार ! न तोपें बंद हुअी, न रास्ता खुला । पीली कोठी के पास २१ गोरे मर चुके थे; यहाँ कुछ और काम आये । तो क्या अिस पुल के कारण सारी अंग्रेजी सेना अटक पडेगी ? पास खडे हॅवलॉक के युवक पुत्रसे मॉड ने कहा, कुछ अुपाय सुझाओ तो ! वह युवक नील के पास ,आकर कहने लगा 'तोपों से ये विद्रोही पुलसे न हटेंगे; अिनपर सीधा हमला करने की की आज्ञा दीजिये । हॅवलॉक की आज्ञा के बिना कुछ भी करने से नील ने अिनकार कर दिया । फिर क्या किया जाय ? तब युवक को अेक अुपाय सूझा । अुसने सहसा अपने घोडे को अेड-मारी और जनरल हॅवलॉक की दिशा में अुसे फेंका; सेनापतिसे मिलने का बहाना कर वह युवक फिर नील के पास आ पहुँचा और कहा 'हॅवलॉक साहब की आज्ञा है, पुलपर धावा बोल दिया जाय ।' बस, फिर क्या था ? जनरल

नील ने धावा बोलने का हुक्म दिया। पहले २५ के दस्ते का नेतृत्व युवक हॅवलॉक ने किया। तोपें गोले फेंक ही रही थी। अेक दो मिनिटों में कितने बचे ? किन्तु देखो, नवयुवक हॅवलॉक पुलपर कूद पडा। शाबाश वीर सिपाही वह डट कर सामने खडा रहा और अपनी बदूक का निशाना ताका। जरा सा चूका और हॅवलॉक के पुत्र के मत्थे के बदले गोली अुसके टोप में लगी; वह शान्तिसे दूसरी गोली दाग ही रहा था कि हॅवलॉक से वह मारा गया। स्वाधीनता के रण में काम आगया ! सारी गोरी सेना दौड पडी और वह पुल थरथराने लगा, क्रांतिकारी हटे। लखनअू का अेक रास्ता अंग्रेजों के तावे में आया, दूसरा मार्ग भी जीता गया, तीसरेपर दखल किया। अंग्रेजी सेना विजय के अुन्माद में आगे बढती चली गयी। दिनभर कशूम कश जारी रही और लहू की नहरें बहीं। तब आअुटरामने किलेके बाहर ही रात काटने की सोची। किन्तु नहीं, वीर हॅवलॉक आराम का नाम तक नहीं जानता। रेसिडेन्सीमें अुसके भाअी प्रत्यक्ष काल के खुले जबडे म पडे हैं, पता नहीं वह कब बंद होगा ? अेक रात अेक युगशके समान होगी। अिसलिअे अुसने ' आगे बढो ' की आज्ञा दी; किन्तु अुत्साह की अति में सेना किले का मार्ग चूक गयी और सीधे क्रातिकारी तोपों के टप्पे मे जा पहुँची। फिर भी नील आगे घुस ही रहा था। जब खास बाजार की तोरण के नीचे वह पहुँचा तब अुसने अपने घोडे को रोका; क्यों कि तोपखाना बहुत पिछड गया था। पीछे की ओर मुडकर देखा। क्या बढिया मौका है भारत के राष्ट्रीय बदले का; तोरण के वीर ! तुम मारे जाओगे तो भी चिंता नहीं किन्तु यह मौका न चूके। देखो। तोरण से अुस सिपाहीने ठीक निशाना मारा; गोली नील की गर्दन से आरपार निकल गयी; नील घोडेसे धडाम से नीचे गिर पडा। मानव जातिके सौभाग्य से या दुर्भाग्यसे सारी गोरी सेनामें अितना शूर किन्तु अैसा क्रूर, अितना ढीठ किन्तु अितना धीर, अैसा निडर किन्तु अैसा निर्दयी आदमी ढूँढकर भी मिलना दूभर है।

किन्तु अंग्रेजी सेना की यही विशेषता थी कि व्यक्ति के लिअे, चाहे फिर वह नील जैसा असाधारण भी क्यों न हो, अुस का काम कभी अटकता

न था। नील की मौत से वहाँ जरा भी गडबडी न पडी। आज्ञा के अनुसार अंग्रेजी सेना रेसिडेन्सी की ओर बढ रही थी। खास बाजार में अेक नील का ही रक्त क्या, गोरों के खून का सैलाब भी बहता, तो भी निश्चय के अनुसार अंग्रेजी सेना आगे बढी ही चली जाती। जब वह बाजार से गुजर रही थी तब रेसिडेन्सी से निकलती हुअी अभिनंदन की हर्षध्वनि की चिल्लाहट सुनायी पड रही थी और अिधर से अंग्रेज अुसका साथ देते थे। सचमुच, हॅवलॉक ने अपने देशबंधुओं को मौत के जबडे से बाहर खींच लिया था। अुस का विवरण अुस समय अुपस्थित कॅप्टन विल्सन की लेखनी से यों लिखा गया है. "—पग पग पर गिरनेवाले सैनिकों से अंग्रेजों की संख्या घट रही थी, तो भी अंग्रेजी सेना रेसिडेन्सी को जा पहुँची और अुसे देखते ही घेरे में पडे सब का संदेह और डर दूर हो गया। अपने छुटकारे के लिअे दौड आये हुओं पर अभिनंदनों तथा धन्यवादों की अुन्हों ने वर्षा की। बीमार और घायल रुग्णालय से रेंगते रेंगते बाहर आये और अुन के 'जय जय' चिल्लाने से सारा वायुमण्डल भर गया। अुस स्थिति का वर्णन करना बहुत कठिन है। अपने पति की मृत्युका समाचार जो पहले सुन कर दुखी हुअी थीं वेही स्त्रियाँ अपने जीवित पति की क्रोड में छिपी हुअी थीं और वे दंपति अेक दूसरे को सुखी कर रहे थे। और जो स्त्री अपने प्यारे को अपनी भुजाओं में कसने के सपने देख रही थी, अुसे पहली बार और अन्तिम बार मालूम हुआ कि अब अुसे प्यारे को देखने का आशातंतु भी मृत्युने तोड डाला है।"

लखनअू की रेसिडेन्सी में ८७ दिनतक की अविराम लडाअीमें ७०० आदमी मरे। लगभग ५०० गोरे और ४०० हिंदी घायल हुअे या बचे रहे। और अुनके मुक्तिदाता हॅवलॉक के ७२२ लोग, रेसिडेन्सी पहुँचने तक, खेत रहे थे। लखनअू की विजय के लिअे अितने सूरमाओं के प्राणों का मूल्य देना पडा था!

किन्तु दुष्ट निराशे! तुम सदाही अजेय रही हो। क्यों कि, हॅवलॉक ने क्रांतिकारियों की नाक में दम भले ही कर दिया, तुम अुसका पीछा नहीं

छोडती। रेसिडेन्सी में प्रवेश करनेपर, अुसने समझा कि अितनी विजयों, रक्त-पात, भिडन्तों के बाद क्रातिकारियों के चंगुलसे कमसे कम अंग्रेजी सत्ता को वह मुक्त कर सका है। किन्तु अब, परिस्थिति को आँखों देखकर, वही प्रश्न वह दुहराने लगा, जो गंगा किनारे अुसने अपने मन से पूछा था! "लखनअू के लिअे सचमुच मै क्या कर पाया हूँ? मैने केवल अुन्हें सहायता पहुँचायी है!" हॅवलॉक अपनी सेना के साथ रेसिडेन्सी में आया, जिस से घेरा अुठना तो दूर क्रांतिकारियों ने नयी और पुरानी दोनों सेनाओं को घेरा। तब हरअेक कहता—"हॅवलॉक हमारे लिअे क्या लाया, मुक्ति या मदद?"

हाँ, यह केवल मदद थी। 'पांडे' की पकड से लखनअू के गोरों को बचाने हॅवलॉक और आअुटराम जैसे सेनानियों के नेतृत्व में कअी लडाअियों के बाद आयी हुअी यह सेना घेरा अुठाने में अक्षम रही और जोरोंसे अंदर घुस पडते ही स्वय भी घेरे में बंद हुअी। अंग्रेज मानते थे कि हॅवलॉक के पहुँचते ही 'पांडे' की सेना भाग खडी होगी। किन्तु भारत ने देखा कि यह गोरों का सपना काफूर हो गया। 'पांडे' की सेनाने न लखनअू छोडा, न अंग्रेजोंसे समझौता करने की चेष्टा की; वरन् क्रांतियुद्ध की धधकती ज्वालाओं से और अुत्तेजित होकर हॅवलॉक के अंदर घुसते ही सब मोर्चोंपर दखल किया और घेरा पक्का कर दिया। रेसिडेन्सी में घुसने की गडबडीमें गोरों का अेक दस्ता आलमबाग के पास पीछे रह गया था; वह अपनी मुख्य सेनासे मिलने से वंचित रह गया था। अिस तरह, अुस दिन के घमासान युद्ध में मार्ग मार्ग में बने खूनके पोखर सूखने के पहले ही अंग्रेजी विजय तथा अपनी पराजय की परवाह रंच भी न कर, निराश या हतोत्साह न होते हुअे, अुस स्वातंत्र्यप्रेमी लखनअूने फिर अेक बार अवधकी अंग्रेजी सत्ता के शैतान को कर रखा; मानो, अेक बोतलमें बंद कर रखा।

अिस स्वातंत्र्य-समर में केवल लखनअू की अंग्रेज सेना ही को अिस तरह, अपनी दृढ और निश्चित नीति से, 'पांडे' वालों ने सकट में नहीं फँसाया था। दिल्ली का पतन हो चुका था; फिर भी घेरे में पडी हॅवलॉक की

सेना के कारण निष्प्राण बनी लखनअू की अंग्रेजी सत्ता को सहायता पहुँचाता खुली हुअी दिल्ली की सेना नहीं पहुँचा सकती थी। क्यों कि, दिल्ली प्रांत में अुठी आँधी को शान्त करने का कठिण काम अुसे पूरा करना था।

अंग्रेजी सेनापति सर कॉलिन कॅम्बेल १३ अगस्त को कलकत्ते में अुतरा। अुस दिन से २७ अक्तूबर तक क्रांतिकारियों से सारे भारत को मुक्त करने की अेक बहुत गहरी योजना बनाकर, अुसें सफल बनाने की सिद्धता में वह व्यस्त था। मद्रास, सिलोन तथा चीनसे आयी हुअी सेना को ठीक मात्रा में अुसने बाँट दिया। कासिमबाजार के शस्त्रालय में नयी तोपें ढलवाअी गयीं। शस्त्रास्त्र, गोलाबारूद, रसद, कपडा, यातायात आदि के बारे में बहुत बढिया प्रबंध कर दिया। अिस तरह अुस विराट सिद्धता को पूर्ण करने में वह दो महीने लगा रहा; अिस बीच अुसे खबर मिली कि हॅवलॉक और आअुटराम दोनों लखनअू की रेसिडेन्सी में अबतक बंद पडे हैं। तब, अेक बार पतन होनेपर फिरसे अुत्थान करनेवाले लखनअू की खबर लेने के लिअे कॅम्बेल २७ अक्तूबर स्वयं कलकत्ता से चल पडा।

साथ साथ अेक नौदल (आरमारी बेडा) कर्नल पॉवेल तथा विलियम पील के नेतृत्व में अिलाहाबाद के जलमार्ग से भेज दिया गया। कलकत्तेसे अिलाहाबाद और कानपूरतक सभी बडी बडी सडकोंपर अिन अंग्रेज नौसैनिकों को क्रांतिकारी दस्ते बार बार सताया करते। ये सब दस्ते अेक साथ कहीं मिल जाते तो अंग्रेज अुस की खूब खबर लेते। किन्तु कुँवरसिंह के ये चेले अंग्रेजी नौसैनिकों के आसपास मडराते रहते, सामने कभी न आते और हमले के बिना अुन की हस्ती का पता तक लगने न देते; अिस तरह वृकयुद्ध (गोरिले) की नीतिपर चलकर प्रांतभर में अंग्रेजों की नाक में दम कर देते। कजवा नदी के पास अिन क्रांतिकारी दस्तों का अिलाज करने के झगडे में कर्नल मारा गया। जिस दिन क्रांतिकारियों की तलवार ने पॉवेल के रक्त से अपनी प्यास बुझायी, अुसी दिन कॅम्बेल कानपुर पहुँचा! अंग्रेजी सेना को क्रांतिकारी छुपे दस्तों ने स्थान स्थानपर किस तरह हैरान किया होगा अिस का प्रत्यक्ष और भयंकर अनुभव स्वयं सेनापति कॅम्बेल को मिला।

१४ नवम्बर की प्रतीक्षा बड़ी आतुरता से की जा रही थी। योजना थी, कि हॅवलॉक और आअुटराम रेसिडेन्सीसे बाहर आकर क्रांतिकारियों पर धावा बोल दें और दूसरी ओरसे कॅम्बेल अुन्हें दबाय। अिधर अंग्रेजों की छावणी में १८५७ में नामवरी प्राप्त किये कअी सेनानी और योद्धा जमा थे। हॅवलॉक, आअुटराम, पील [नौदल का प्रमुख] ग्रेटहेड, दिल्ली से हाडसन, होपग्रँट, आयर और स्वय सेनापति कॅम्बेल वहाँ थे। अुनके साथ ताजादम हाअिलॅंडर सैनिक, घेरी हुअी रेसिडेन्सीसे मैदान में कूदने को अुत्सुक आअुटराम के गोरे सूरमा, देशद्रोही पंजाब–युवक और दिल्ली में मातृभूमि के खून से अबतक भीनी तलवारें सँवारे अुनसे भी अधिक 'वफादार' सिक्ख सिपाही थे।

यह सारा समूह १४ नवंबर को लखनअूपर चढ आया। दिनभर मुठभेडें हो रही थीं। शामतक अंग्रेजी सेना दिलखुश बागतक घुस गयी थीं। कॅम्बेल ने रातको वहीं पड़ाव डाला। क्रांतिकारियों ने रातभर हमले जारी रखे; किन्तु अंग्रेजी सेना वहीं टिकी रही। दूसरा दिन फिरसे व्यूहरचना करने में बिता कर १६ नवंबर को लखनअूकी चढाअी फिर शुरू की। तब तूफान की तरह आक्रमणकारी अंग्रेज सेना सिकंदर–बागपर टूट पडी। बागतक पहुँचने पर्यंत क्रांतिकारियों ने विशेष प्रतिकार न किया। किन्तु अुनके नेताने–वह चाहे जो हो–बहुत बाँके रणकौशल का परिचय दिया। जब अीवॉर्ड के हाअिलॅंडर तथा पॉवेल के सिक्ख भीषण गर्जना करते हुअे सिकंदर बाग पर चढआये तब मालूम होता था, अिस साहसी आक्रमण से क्रांतिकारियों का चकनाचूर हो जायगा। सूबेदार गोकुलसिंह अपनी तलवार हवामें फेंकते हुअे क्रांतिकारियों को पुकार रहा था, कि वे हाअिलंडर को किसी तरह आगे न बढने दें। अभागे लखनअू! अधिक से अधिक हिंदभू का खून कौन पीता है अिस की निर्दय होड में जोश में आकर सिक्ख तथा हाअिलेंडरों ने धूम मचायी थी। किन्तु सिकंदरबाग के गोल पत्थर टससे मस न हुअे। अुन्हें भी जैसे तैसे तोडकर देखा तो अुसके पीछे खडे सूरमा चप्पाभर भी पीछे न हटते थे। यहाँ तो सिक्ख और हाअिलेंडर पहले आगे बढने की स्पर्धा कर रहे थे। आखिर एक छेद से आगे घुसनेवाला सिक्ख ही निकला! अिस देशद्रोही की वीरता के अिनाम के रूप

में एक गोली सॉंय सॉंय करती आयी और अुस की छाती के छेद गयी।
अुसके गिरते ही कूपर अंदर घुसा और अुसके पीछे तुरन्त स्टीवार्ट, कॅ. लॅम्सडेन, सिक्ख, हाअिलंडर, सब घुस पडे। अितनी फुर्तीसे अिन्हें घुसते देख क्षणभर के लिअे सिपाही चौंक पडे। किन्तु जिस वीरवरने अुस दिन सिकंदर बाग की व्यूहरचना की थी वह पाँचवॉं वीर न था। पीछे हटने की कल्पना तक अुकसे मन में न आने पायी।

'जीतेंगे या मरेंगे! मर मिटेंगे या विजय पायेंगे! ये शब्द अुन्हीं के मुँह में फबते हैं जो स्वाधीनता के लिअे मैदान में कूदे हों। सबसे आगे कूपर था। अुस का खात्मा करने का काम लुधियाने के विद्रोहियों के नेता के बिना कौन कर सकता था। कूपरपर नजर ताक कर वह सीधे अुसपर झपटा। खन्, खन्, खन्, तलवार से तलवार टकरायी। गहरे वार हुअे और दोनों धराशायी हुअे। लंम्सडेन अपनी तलवार नचाते चिल्लाया; "देखते क्या हो, स्काटलंड की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिअे आगे बढो।" क्या गुस्ताखी! कहता है स्काटलंड की प्रतिष्ठा के लिअे! याने हिंदुस्थान की कोअी प्रतिष्ठा है ही नहीं! स्काटलंड की प्रतिष्ठा के नाम पर कोअी आगे बढे, अिस के पहले ही एक क्रांतिकारी आगे बढा और लंम्सडेन के मृत शरीर से खून का फव्वारा अुडने लगा। अिधर यह कचवाबध जारी था, अुधर दूसरी ओर परकोटा तोड कर अंग्रेज अंदर घुस पडे। बस, अब हमारी बाग के लिअे विजय की आशा न रही। सिकंदर बाग! क्या जीत न हो तब भी तुम झूझती रहोगी? अवश्य; लडो, लडो, विजय हाथसे गयी तो परवाह नहीं, प्रतिष्ठा न जाय। प्राण जाय पर आन न जाय। कीर्तिमें कालिख न लगे! कर्तव्य पर डट कर लडो। हर दरवाजे, हर चौराहे में तलवार से तलवार भिडी थी। रक्त के फव्वारे अुड रहे थे। मॅलिसन कहता है "सिकंदर बाग की लडाअी रक्तरंजित और घमासान थी। विद्रोही निराशा के तेहे से लड रहे थे। हमारे सैनिक अंदर घुस पडे, अिससे लडाअी बंद न हुअी अेक अेक कमरे, अेक अेक सीढी और बुर्ज के हर कोने के लिअे लडाअी हुअी और जब आक्रमकों ने बाग पर कब्जा कर लिया तब अुनके अिर्दगिर्द

२००० क्रांतिवीरों की लाशें फडक रहीं थीं; कहा जाता है कि वहाँ की रक्षा करनेवालों में से केवल चार बचे थे–जिसमें भी संदेह है। "*

सिकंदर बाग में स्वाधीनता के लिअे खेत रहे दो सहस्र हुतात्माओ! यह कृतज्ञ अितिहासरचना तुम्हारी वीरस्मृति को समर्पण! दो सहस्र देशभक्तों का लहू! यह अितिहास अुसी की मनुहार! स्वदेश के लिअे युद्ध करने को सिद्ध वीरो, तुम कहाँ के, कौन? तुम्हारे नाम? साधना की अुज्ज्वल ज्योति तुम्हारे हृदय में जाग अुठने पर तुम्हारा नेतृत्व करनेवाला कौन वीर था जिसने तुम्हें अिस भयंकर रण की प्रेरणा दी? क्या ही दुर्भाग्य की बात है, कि मानवता की सेवा करने की अिच्छा से अपने प्राणों की बलि चढानेवाले तुम्हारा नाम ठाम भी हम नहीं जानते! तो फिर, यह अितिहास–रचना तुम्हारी अनामिक स्मृति को समर्पण! विजय हाथ से भले ही निकल गयी, तुमने अपनी आन पर आँच न आने दी! तुम्हारे पराक्रम से अतीत की कीर्ति में चार चाँद लगे और भविष्यत् की प्रेरणा तथा चैतन्य की निधि बने!

हे स्वातंत्र्यवीरो! तुमने अपनी आन पर आँच न आने दी यह अच्छा ही किया, किन्तु सिकंदर बाग का यह आत्मार्पण तुम अिस से भी सुयोग्य समय पर करते तो विजय तुम्हारे चरणों में लोटती। अब तुम्हारे शत्रुओं की शक्ति अनतगुना बढ गयी है। हजारों नये सैनिक अुन की ओर से लडने आये हैं; दिल्ली के पतन से अुनपर से युद्ध का दबाव बहुत कुछ कम हो गया है। विजय से अुन का धैर्य बढ गया है, जहाँ हार से तुम्हारा दिल बैठ गया है। लखनऊ की यह भूमि अितनी वीराम और पथरीली है, कि दो सहस्र हुतात्माओं का रक्त सिंचने पर भी अुसके अुर्वरा बनने में संदेह है। दुर्बल रेसिडेन्सीपर पहले ही धडाके में यदि तुम 'विजय या मौत' के नारे लगाते हुअे जीवट से आगे बढते तो केवल दो घडियों में स्वाधीनता

---

* मॅलिसन् कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४ पृ. १३२

का मुकुट भारत के मस्तक पर विराजमान हो जाता। तुमने अपनी ओर से पूरा आत्मसमर्पण कर मौत को गले लगाया किन्तु वह ' दिव्य क्षण ' तो हाथ से निकल गया न ? वह समय, वह सोने का संजोग, हाथ से निकल गया सो निकलही गया ! **क्रांतियुद्ध में कभी कभी अेक क्षण की देरी से जो महान् हानि होती है, वह बाद में जुग जुग तक कष्ट उठाने से भी पूरी नहीं हो सकती।** अुस समय रक्त की अेक बूंद तुम्हें विजयमाला पहनाती—अब क्या, यह रक्तसिंधु, ये रक्त के फव्वारे तुम्हें अमर कीर्ति से विभूषित करेंगे किन्तु जश ?—अब आकाश के तारे बन गया है। **क्रांति की झंझा में अेक क्षण की ढिलाअी सब योजना के पैर उखाड देती है।** अेक डग पीछे पडा और विपत्ति के पहाड सिरपर गिर जाते हैं। जीनेकी क्षणिक आशा ही, निश्चितरूप से आदर्श को मृत्यु की गर्ता में गहरी दबा देती है !

सिकंदर बागही के समान अन्य स्थानों में भी असीम रक्तसिंचन हो रहा था। दिलखुशबाग, आलमबाग तथा शाह नजफ में दिन रात घमासान रण जारी था। अेकाअेक तडके लखनअू में घंटे घनघनाने लगे, मारू बाजों की दनदनाहट चली और फिर अेक बार घायल लखनअूने शत्रु से जोर की टक्कर ली। आज की मोतीमहल की लडाअी कल की शाह नजफ की लडाअी की तुलना में जरा भी कम न थी। किन्तु अन्तमें निश्चित रूपसे अंग्रेजों का जोर बढा और रेसिडेन्सी में बंद रहे अुनके देशबंधुओं को वे छुडा सके। १७ से २३ नवंबर तक लखनौ में समर की महा—लीला हुअी और घेरे में पडे हुओं को घेरा तोडनेवाले मिल पाये। अबतक मृत्यु की छाया से मलिन रेसिडन्सी सानंद हास्य से प्रफुल्लित बनी। फिर भी क्रांतिकारियों ने अंग्रेजी विजय का मूल्य कुछ न समझा। दोनों शत्रु सेनाअें अब मिल चुकी थीं और समूचा लखनअू रक्तसिंधु में नहा रहा था, तो भी अुन के मुख से शरण या पीछे हटने का अक्षर तक न निकला। अुनकी अिसी हठीलेपन और रणबाँकुरेपन हीसे युद्ध का अन्त अनिर्णीत था। अिससे सर कँम्बेलने फिर से व्यूहरचना शुरू की। रेसिडेन्सी के सब सैनिकों को अुसने दिलखुश बाग में भेजा। आलम बाग में अुसने चार हजार सैनिक

तथा २५ तोपें आअुटराम के मातहत रख दिये। अिस तरह आगामी लडाअी की पूरी सिद्धता की। और प्रधान सेनापतिने अंग्रेजों को यश देने में सहायक सभी सेना का शौर्य, अनुशासन, तथा आज्ञाकारित्व की दिल खोलकर प्रशंसा की। कहने की आवश्यकता नहीं की अिस प्रशंसा का बडा हिस्सा हॅवलॉक के पल्ले पडा था।

किन्तु, अिस प्रकार, सुनिश्चित तथा अपूर्व विजय के आनद में मगन अंग्रेजी सेना का प्यारा हॅवलॉक अचानक चल बसा। लखनअू की चिलचिलाती धूप, दिन रात की चिंता और निराशाने हॅवलॉक का स्वास्थ्य धीरे धीरे गिरही रहा था और ठीक विजयपूर्ति के क्षण ही वह चल बसा। २४ नवम्बर को अुस की मौत से अंग्रेजी आनंद में विष की डली घुल गयी! हॉ, फिर भी यह घडी मृतकपर आँसू बहाने की नही है, वरंच अधूरा काम पूरा करने की है। हॅवलॉक लखनअूपर कब्जा करने के काम मे मर गया है, तो अुसका सच्चा स्मरण, अुसकी सच्ची यादगार, तो लखनअू जीतने ही से हो सकती है।

किन्तु लखनअू हथियाने को चल पडने के पहलेही कानपुर के पास ये तोपों के धमाके कहाँ से जारी हो गये हैं? छिः अैसी छिछोरी बातपर कौन ध्यान देता है। जबतक युरोप के रणमैदान में कीर्तिप्राप्त विंडहॅम यहॉ मौजूद है, तबतक कॅम्बेल को तोपों की अिस गडगडाहट की चिता करने का बिलकुल कारण नहीं है। कौन होगा वह क्रातिकारी जो विंडहॅम जैसे अंग्रेज वीर से झूझने का साहस करेगा? हैं, ये टहलुवे तो तात्या टोपे के कानपुरपर चढ आनेका सवाद कह रहे हैं!

कानपुर और तात्या टोपे? अब सर कॅम्बेल के मस्तिष्क में अुन तोपों के धमाकों का अर्थ प्रकाशित हुआ। और तुरन्त लखनअू की चढाअी का काम आअुटराम को सौप कर, वह स्वयं कानपुर को तात्या टोपे की हलचल को देखने चला गया।

अध्याय ६ वाँ

तात्या टोपे

जुलाअी १६ को कानपुर में विद्रोहियों की हार होने पर श्रीमंत नाना-साहब ब्रह्मावर्त को चले गये थे। १५ जुलाअी की रात को बिठूर के राजमहल में आगामी योजनाओं पर चर्चा हुअी और दूसरे ही दिन सवेरे अपने साथ छोटे भाअी बालासाहब, भतीजा रावसाहब, आज्ञाकारी तात्या टोपे, राजपरिवार की स्त्रियाँ, खजाना, और कुछ अन्नसामग्री लेकर, नानासाहब गंगा किनारे अुन के लिअे सुसज्ज नावों की दिशा में चलते दिखायी दिये। फतहपुर जाने का अुन का अिरादा था। वहाँ पहुँचने पर नानासाहब के परम स्नेही चौधरी भूपालसिंह ने अुन का स्वागत कर अपने महल में खूब अच्छी तरह से रखा। हॅवलॉक जब कानपुर को घेरा डाल कर लखनअू पर चढ जाने की योजना बना रहा था, अुसी समय नानासाहब भी अपनी राजपरिषद् में हॅवलॉक का सफल सामना करने के अुपायों पर मशविरा कर रहे थे।

और अैसी कठिन स्थिति में ठीक अुपाय बताने की क्षमता रखनेवाला अेकही असाधारण बुद्धि का व्यक्ति अस राजपरिषद् में था। मानो अुस की सूक्ष्म बुद्धि अैसी ही कूट-समस्याओं का हल निकालने के घात ही मे रहती थी! अब तक तात्या टोपे ने मामूली मुनशी से अधिक काम नहीं किया था; अब तक नानासाहब के दरबार में दूसरा काम ही अुस के लिअे क्या था?

किन्तु स्वाधीनता के भाव जग अुठते ही नानासाहब के दरबार ने भी, रायगढ के अुस प्राचीन पवित्र दरबार के समान, अपना असाधारण बुद्धिवैभव, सावधानता तथा तेजस्विता प्रकट की थी ! सफलता प्राप्त करने के लिअे नूतन अकुरित साधना की आकांक्षाओं की चेष्टा शुरू हो गयी। अिस समय नये सिंहासन खडे करने थे, नयी सेनाअें संगठित करनी थीं और आये दिन समरांगण में डट कर मैदान मारना था। विजयप्राप्ति से अभी कहीं वह दरबार प्रफुल्लित हो गया था, जब कि कानपूर की हारसे विषण्णता की छाया वहाँ पडी थी। किन्तु वायुमण्डल में गंभीर सन्नाटा छा गया था, क्यों कि पिछले अपमानों के प्रतिशोध की योजना बन रही थी; अिस सन्नाटे का भंग केवल क्रांतिदल की योजना की ब्योरेवार चर्चाही से हुआ। और स्वाभाविक था, अब तक योग्य अवसर प्राप्त न होने से सोयी पडी तात्या टोपे की कर्तृत्व-शक्ति साहसपूर्ण हुकार से प्रकट हो जाय। जो चतुर योजनाअें अबतक अुस के मन में अुछल रही थीं, अुन्हें प्रत्यक्ष में परखने का अवसर अब आ लगा था। और, सचमुच, मानना ही पडेगा कि चतुरतापूर्ण मौलिक और सफल योजनाअें बनाने में तात्या टोपे का हाथ थामनेवाला कोअी व्यक्ति मिलना दूभर था।

तात्या का विचार था, कि कानपुर के पराभव से अव्यवस्थित बनी सेना को फिर से सुसंगठित की जाय। तात्या का मुँहतोड तर्क; मानवी मन के अत्यंत गूढ भावों के गुणदोषों का सूक्ष्म ज्ञान, और असाधारण व्यक्ति में होने-वाला साहस आदि सभी लोकोत्तर गुणों के सुंदर मिश्रण से, अुच्छृंखल सिपाही अेक मन से, अेक दिन में, अेक सुगठित सेना के रूप में, सिद्ध हो जाते। नये रंगरूटों की बात अुठी तब तात्या सीधे शिवराजपुर को गया और अभी अुठे ४२ वीं पलटन को अपने कार्य में जोड लिया। अिस बीच, हॅवलॉक गंगापार हो कर लखनअूपर चढ जाने के विचार में था। तब तात्याने भी अुसकी पिछाडीपर हमला कर अुसे सताने की ठानी। अिस के कारण अंग्रेज सेनापति को फिर कानपुर को कैसे लौटना पडा, लौटनेपर यह देखकर कि ब्रह्मावर्त के राजमहल में मराठों का राजा फिरसे बिराजमान है, अुसके अचरज का ठिकाना

कैसे न था, लखनअूही में फिर से लडाअी करनेपर अंग्रेज सैना कैसे मजबूर हुअी, और १६ अगस्त को क्रांतिकारियों की कैसे हार हुअी आदि घटनाओं का विवरण पिछले अध्याय में दे चुके हैं। हार के बाद अपनी सारी सेना के साथ तैरकर तात्या गंगापार हुआ और फतहपुर में नानासाहब को जा मिला। अब नयी सेना भरती करने का प्रश्न था। शिंदे की 'वफादारी' के कारण अुसकी सेना, अंग्रेजों से भिडने को अुत्सुक होते हुअे भी, हाथ मलती बैठी रही थी। तब किसी का गवालियर जाना अत्यत आवश्यक था। किन्तु किसी जादूगार की तरह अपने अनुयायियों को जिसने मंत्रमुग्ध कर रखा था; और अंग्रेजों के मातहत होनेवाली पूरी पलटन को विद्रोही बनाकर अपनी मुट्ठी में रखा था, अुस चतुर मराठा वीर के बिना दूसरा सुयोग्य व्यक्ति कहाँ मिलनेवाला था? तात्या टोपे गुप्त रूपसे गवालियर गया। थोडे ही समय में अुसने मुरार की छावनी के पैदल, रिसाले तथा तोपखाने को अपनी ओर कर लिया और अुनको साथ लेकर वह कालपीतक पहुँचा भी। सैनिकदृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान के रूपमें क्रांतिकारियों को कालपी बहुत अुपयुक्त होनेवाला था। कानपुर और कालपी के बीच बहनेवाली जमुना अंग्रेजों के लिअे प्राकृतिक प्रतिबंध था। कानपुर के बाद कालपी जितना दूसरा सुसंरक्षित स्थान पाना असम्भव होने की बात सोचकर तात्याने कालपी के किलेपर कब्जा जमा लिया। नानासाहब को यह समाचार मिला, तब कालपी को अपना केन्द्र बनाने की दृष्टि से अपना प्रतिनिधि बनाकर अुस किले की सुरक्षा का भार श्रीमंत बालासाहब को सौंप दिया। श्रीमंत को किले की रक्षा का काम सौंपकर अब तात्या अंग्रेजोंपर झपटने की योजना बनाने लगा।

अुस समय कानपुर की गोरी सेना का सेनानी सुप्रसिद्ध जनरल विंडहॅम था। अपनी सेना से कुछ हिस्सा कानपुर मे छोड सर कॅम्बेल लखनअू की ओर बढा। तात्याने ठीक अवसर भाँपा। लखनअू के क्रांतिकारी कॅम्बेल की विशाल वाहिनी से टकरा कर अुसे फँसा रखते थे। जनरल विंडहॅम को अन्य स्थान से सहायता पाना असम्भव था। अिसी समय अचानक हमला कर अुस को हराना ही तात्या टोपे का दाँव था। बालासाहबने अनुमति दी; और

कल का गरीब ब्राह्मण बाबू आज पेशवा की सेना का सेनापति बना। जमना पार कर खुले मैदानमें, तात्याने, अुम्रभर युरोप के समरांगण पर लडे, विंडहॅम को घेर लिया। और अिस साहस के समय तात्या के पास साधन—सामग्री क्या थी! तो अभी विद्रोही बने, असंगठित सिपाही और अुनके साथ आये हुअे अनाडी, गाँववाले किसान! सैनिक शिक्षा में परिपूर्ण और सैनिक अनुशासन से भरे अंग्रेजी सैनिकों से तात्या की सेना की मुठभेड हुअी। स्वाधीनता की लगन की ज्योति एक बार जग जाने से, प्रतिपक्षी के सर्वश्रेष्ठ सुविधाओं से टकराने का बल कैसे आ जाता है, और अंग्रेजी सेना की तरह शिक्षा अिन्हे मिली होती तो कितनी बडी विजय होती, अिस का यह सुंदर शिक्षाप्रद अुदाहरण है! गवालियर से सैनिकों को लेकर तात्या टोपे नवंबर ९ को कालपी आ पहुँचा। कानपुर से कालपी ४६ मील है। अंग्रेज सेना का ठीक स्थान देखकर, यमुना पार कर, तात्याने दोआब में अपने सैनिकों को रखा और अपना खजाना और अन्य सामुग्री जालने में छोड, कानपुर के कुछ गाँवोंपर दखल कर लिया। जमुना पार कर अेकाअेक कानपुर पर चढ न जाने में तात्या टोपे ने अेक बडा दाँव रचा था। लखनअू के क्रांतिकारियों से कॅम्बेल के अुलझ जाने की पक्की खबर मिलने तक विंडहॅम पर चढाअी न करने का अुसका निश्चय था। जब अुसे पक्की खबर मिली तब मार्ग के महत्त्वपूर्ण स्थानों को जीतकर वह शिवराजपुर पर चढ आया। १९ नवबर तक ब्रिटिश सेना की रसद मारने का दाँव वह पूरा करने को था। किन्तु कानपुर का सेनापति कुछ रोटियां थोडे ही सेंक रहा था? कलकत्ते से आनेवाली अंग्रेजी सेना को अुसने रास्ते ही में कानपुर रोक लिया, कुछ दस्तों के साथ कार्थ्यू को कालपी के मार्ग पर नाकाबदी करने को भेज दिया, और स्वय तात्या की हलचलों का शान्तिसे निरीक्षण करता रहा। क्या, तात्या अवधमें जा कर कॅम्बेल की सेना की पिछाडी काट देगा? या कानपुर पर चढ आयगा!

किन्तु, विंडहॅम से हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना असम्भव था। अुसकी साहसी तथा लडाकू प्रवृत्ति अुसे चुप न रहने देती थी। अुस का अिस वहम पर विश्वास था, कि 'अंग्रेजी सेना केवल हिंदियों से ही नहीं, अेशिया की

किसी भी सेना से श्रेष्ठ होती है; और अेशियाअी सेना को हराने का अिलाज है, बस, अेक जोरदार हमला किया जाय।'

"तुम चाहे जितने बलवान क्यों न हो, चढाअी करने में तुमसे रंच भी हिचकिचाहट या ढिलाअी हुअी तो ये अेशियाअी लोग झट अितराते हैं, अपने बल की आत्मविश्वासपूर्ण शेखी बघारते हैं और, अुलटे, चढाअी कर बैठते हैं। अिस लिअे तुम निर्बल क्यों न हो, साहस के साथ पहले जोरदार हमला करो, ये अेशियावाले हार की केवल आशंकासे दुम दबा कर भागेंगे और तितर-बितर हो जायँगे"—आज तक सभी अंग्रेज यही मानते आये थे। और अिसी विश्वास पर कअी बार अुन्हों ने चढाअियाँ कीं और बहुत बार वे विजयी भी हुअे। अब तो यह केवल विश्वास न हो कर अेक नियमही बना था। "तुम्हारा संख्याबल चाहे जो हो, किन्तु विजय चाहते हो तो अेक रामबाण अिलाज यही है कि अपने प्रतिपक्षी को घबरा दो और धोखा दो।" हाँ, तब तो अेशियाअी सैनिकों के विशाल जमघट पर मुठ्ठीभर अंग्रेजों को तीर की तरह टूट पड, विजय प्राप्त करनी ही चाहिये। भारत में आनेवाले हर गोरे से यह नियम कंठस्थ कराया जाता और हर अंग्रेज ग्रंथकार यही नियम अपने ग्रंथ में विशेषरूपसे बखानता। अिस प्रकार की रणनीति तथा विश्वास में पले होने से तात्या की हलचलों को चुपचाप देखते रहना विंडहॅम के लिअे असम्भव था। तुरन्त वह कानपुर से निकला और कालपी के पास की नहर के पुलसे हो कर आगे बढा।

अिधर तात्या श्रीखंडीसे २५ नवबर को चलकर, पांडू नदीपर आ पहुँचा। शत्रु अितना नजदीक आ गया तब २६ ही को अंग्रेजोंने अेशिया-अियों के साथ बरते जानेवाले रामबाण अुपाय को काम में लाने का निश्चय किया। विंडहॅमनें तीर की तरह चढाअी शुरू की। क्रांतिसेना जंगलमें छिपी बैठी थी, वहाँ से अुसने तोपें दागने का प्रारंभ किया। कडी कशमकश के बाद अंग्रेजोंने तात्या की तीन तोपें छीन लीं और विंडहॅम का विश्वास दृढ हुआ, कि जोरदार चढाअी से अेशियाअी हट जाता है। किन्तु, हाय, यह क्या हुआ?

अंग्रेजी सेना को पीछे हटना पडा। अेक क्षण में विजय गयी और हार खानी पडी। और तात्याके रिसाले ने कानपुर तक विंडहॅम को खदेडा। विंडहॅम की 'चढाअी और जीत' का सिद्धान्त धरा रहा और भारतीय तात्या टोपे ने स्वय चढाअी कर अंग्रेजी सेना से टक्कर ली।

मॅलेसन कहता है:—"विद्रोहियों की सेना का नेता मूरख नहीं था। विंडहॅम की जोरदार चढाअी से वह डर तो गया ही नहीं, अुलटे, अुस के मन में स्पष्ट हो गया, कि अंग्रेज सेनापति अिस समय घबराया है ... तात्या टोपे ने, छपी, खुली पुस्तक के समान, विंडहॅम की आवश्यकताओं को जान लिया और अेक मॅजे हुअे सेनापति की अंतःप्रेरणा से अुसने विंडहॅम की कमियों से लाभ अुठाना तय किया।"*

अंग्रेजी सेना से लगातार चोवीस घटों तक झूझनेवाले अपने सैनिकों को तात्याने फिरसे शत्रुपर टूट पडने की आज्ञा दी; किन्तु जबतक शेवोली और शिवराजपुर से आनेवाले क्रातिकारी दस्ते अंग्रेजों के दाहिने पासे पर तोपें दागना शुरू न कर दें, तबतक राह देखने को कहा। विंडहॅम ने भी अपनी सेना को सुव्यवस्थित किया। किन्तु सबेरे नौ बजे और फिर भी क्रातिकारियों की कोअी हलचल न दिखायी दी, तब कलेवा करने को अंग्रेज सैनिक लौट गये। फिर ग्यारह बजे वे आ कर डट गये। तात्या की चाल का अंदाजा लगाने में अपने मस्तिष्क को खपाते हुअे सब सचिंत थे।

तात्या के मन में क्या था वह थोडेही समय में स्पष्ट हो गया। क्यों कि, अब अंग्रेजों के दाहिने पासे पर तोपों के गोले आ गिरने लगे और अिधर तात्या ने भी अुनपर सामने से हमला किया। विंडहॅमने तुरंत छः तोपों के साथ कार्थ्यू को बिठूर के मार्ग की रक्षा के लिअे भेजा। अंग्रेजी तोपखाना अिन हमलों के सामने हटने लगा। तात्या ने अपनी सेना की रचना अर्धवृत्त में की थी; सामने से और पासों से अंग्रेजी सेना को कैंची में दबाने की अुसकी

---

* मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४, पृ. १५७.

चाल थी। विंडहॅम ने व्यूह तोडने की तनतोड चेष्टा की; किन्तु तात्या की तोपें लगातार आग अुगलती रहीं, जिस से विंडहॅम अेक डग भी आगे घुस न पाया। और अंग्रेजी सेना पीछे हटने के आसार दिखायी पडे। बाअें पासे की सेना अपनी तोपें मैदान में छोड कर पीछे हटी, यह देखते ही दाहिने पासे की सेना थोडी देर के बाद पीछे हट गयी। अंग्रेज पीछे हट रहे हैं यह देखकर सहसा क्रांतिकारियों का अर्धवृत्त पूरा घेरा बन गया। शाम के छः बजे तक अंग्रेजों का सफाया किया गया। हजारों तंबू तथा अन्य अुपयुक्त अनगिनत सामग्री क्रांतिकारियों के हाथ लगी। आधा कानपुर तात्या टोपे के ताबे में आ गया था। अिस तरह, अिस साहसी और शूर मराठा सेनानी के गले में यह दूसरी विजयमाला पडी। कल की लडाअी में अुसे अप्रत्यक्ष विजय मिली थी, किन्तु आज की विजय निश्चित,प्रत्यक्ष, अधिक ठोस थी। क्यों कि, शत्रु को पूरी तरह हरा, अुसे भगा कर फिर अेक बार कानपुर पर दखल किया गया था। अंग्रेज अितिहासकार भी मानते हैं कि तात्या की क्षमता को अुस के सैनिकों के अनुशासन का जोड मिल जाता तो शायद विंडहॅम को तात्या ने मटियामेट कर दिया होता।

और हॉं; अब तात्या की तोपों की धडधडाहट कॅम्बेल के कानों में पडी। तात्या मानता था, कि अुस के कानपुर पहुँचने के बाद लखनअू के क्रांतिकारी कम से कम अेक महिने तक कॅम्बेल को वहाँ फँसा पायेंगे। किन्तु अज्ञान कारणों से कॅम्बेल लखनवियों को अचानक हरा सका; यह समाचार पाते ही तात्याने स्पष्टतया ताड लिया, कि अब कॅम्बेल अुस पर चढ जायगा; और गंगा के दोनों किनारे से हैरान करेगा। तात्या कुछ चिंतित—सा हुआ। अब विंडहॅम ने अुत्तेजित हो कर गँवाया हुआ जश फिर से प्राप्त करने का निरधार किया। किन्तु अुस की सेना थकी हुअी थी; अिसलिअे रात में छापा मारने का अिरादा छोड, दूसरे दिन सबेरे चढाअी करने का कार्यक्रम निश्चित हुआ। दूसरे दिन सबेरे से मुठभेडें शुरू हुअीं; आज पीछे न हटते हुअे डट कर संगठित और जोरदार हमले कर क्रांतिकारियों पर वे टूट पडते थे।

तिसपर भी अुनका दाहिना पासा साफ लड़खडा गया । ब्रिगेडियर विल्सन मारा गया । कँ. मॉर्फी काम आया । मॉर्फी, मेजर स्टर्लिंग, ले. गिब्बन्स सब अुलट गये । अच्छा, तो अेशियायियों में अेक तात्या टोपे भी निकल आता है । तीसरे दिन तात्या को पूरी विजय मिली और अंधेरा होने तक लडते रहे गोरों का अुसने पूरा सफाया कर दिया । समूचा कानपुर तात्या के हाथ आया। विजयकी अिस तीसरी मालाने तात्या टोपे की तलवार को विभूषित किया।*

अंग्रेज जब अिस तरह तितरबितर भाग रहे थे तभी कॅम्बेल अंग्रेजी छावनी में आ पहुँचा । ब्रिटिश प्रतिष्ठा को तात्याने जो थप्पड दी थी अुसका पूरा चित्र कॅम्बेल के सामने खडा हो गया । क्रांतिकारियों के सामने दुम दबाकर भागनेवाले अपने गोरे सैनिकों को अुसने देखा और तात्याने कानपुर में जो भीषण संग्राम छेडा था अुसकी गभीरता का पूरा महत्त्व अुसे जँच गया ।

अिधर तात्या भी पूरी तरह पहचान गया था, कि कॅम्बेल यहाँ जो अितने गर्व से कानपुर की सेना की सहायता के लिअे आया था, अुसका यही कारण था कि लखनअू के क्रांतिकारियों की सामर्थ्य कम पडी थी, जिससे

---

* (स. ४४) अिस हार का बडा रोचक वर्णन अेक अंग्रेज अफसर ने यों लिखा है:—' आज की कशमकश का विवरण पढकर तुम्हें आश्चर्य होगा; क्यों कि, तुम्हें पता चलेगा, कि अपने सम्मान चिन्हों, बडी अुपाधियों, और अति प्रसिद्ध वीरता से विभूषित गोरे सैनिकों की हार हुअी और घृणित और तुच्छ हिंदियों ने अुनसे अुन के डेरे, सामान और प्रतिष्ठा को छिन लिया। हारे हुअे फिरंगी—और हमारे दुश्मन को अिस तरह हमें बुलाने का अब अधिकार है—अपनी छावनी को, अुलट गये तबुओं, फटे टूटे कपडों, सामानों, भगदड मचाये अूँटों, हाथियों, घोडों तथा नौकरों के साथ, भाग आये । यह सब किस्सा अत्यंत विषादपूर्ण तथा लज्जास्पद है । " चार्लस बॉलकृत अिंडिअन म्यूटिनी खण्ड २, पृ १९०.

अुनकी कुछ न चली थी। किन्तु अिस विचार से वह रंच भी पस्तहिम्मत न हुआ था। अयोध्या के पास गंगा का पुल अुडा कर अंग्रेजों को गंगापार जाना अुसने असम्भव कर रखा था और वहाँ तोपें भी तैयार रखी थीं। किन्तु शत्रु तात्या का दाँव ताड गया और तोपों की मार सहन करते हुअे भी २० नवंबर के पहले ही वह अयोध्यासे कानपुर आ गया। अुसी समय तात्या के ही शिबिर में नानासाहब और कुँवरसिंह का आगमन हुआ था। अिन माननीय नेताओंने यह निश्चय किया था, कि कानपुर छोड कर हट जाने की अपेक्षा अंग्रेजों के प्रधान सेनापति का युद्ध में मुकाबला करना ही विशेष मानार्ह है। और तात्या टोपे के समान स्वाभाविक कर्तृत्वशील वीर नेता प्राप्त होनेपर तो * अपनी योजना में किसी प्रकार का बदल करने का कोअी कारण न था।

तात्याने अपनी सेना का बायाँ पासा, कानपुर और गंगा के बीच के सुरक्षित टापू में, रखा था। अुस के सभी हलचलों का केन्द्र तो कानपुर ही रहा। अुसका दाहिना पासा गंगा की नहर के किनारे दूरतक फैला हुआ था और नहर के पुलपर काबू करता था। अिस समय सैनिक-शिक्षा-प्राप्त १० हजार सैनिक अुस के पास थे। अुन्हीं के बलपर अुसने १ और २ दिसंबर को कॅम्बेलसे मुकाबला किया। दिनांक २ को तो कॅम्बेल के डेरेपर ही तोपें चलायीं। अन्त में, दिनांक ६ को कॅम्बेल को क्रांतिकारियों का खुला आव्हान स्वीकार करना ही पडा; अिस लिअे अपने सात सहस्र सैनिकों की सराहनीय व्यूहरचना कर, अुसने अंग्रेज प्रधान सेनापति के सैनिक अड्डेपर हमला करने की गुस्ताखी करनेवाले बागियोंपर धावा बोल दिया। क्रांतिकारियों का दाहिना पासा सुरक्षा की दृष्टिसे ढीलासा मालूम होने से कॅम्बेल ने अुसी ओर पहला हमला किया।

और क्रांतिकारियों का ध्यान दूसरी ओर आकर्षित करने के लिये दिनांक ६ के सबेरे से ही अंग्रेजों ने अुनके बाँअें पासे पर तोपों की मार चालू

* मॅलेसन्स अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४, पृ. १८६.

की, जिस से क्रांतिकारी सेना ने अिसी ओर अपना बल केन्द्रित किया। कुछ समय के बाद ग्रेटहेडने क्रांतिकारियों के बीच में घुस कर अेक सेंतमेंत की भिडन्त की, जिससे क्रांतिकारी मानने लगे कि शत्रु का जोर बाअें पासे तथा मध्य पर ही है; अिसी से अिन्हीं पर अुन्हों ने अपना शक्तिसर्वस्व लगा दिया। अंग्रेजी तोपों की मार से अुसका बायाँ पासा जब तंग आ गया था, तब अेकाअेक अंग्रेज अपना रुख बदल कर दाहिने पासे पर झपटे। किन्तु दाहिने पासे पर नियुक्त गवालियर पलटन ने सिक्खों तथा अंग्रेजों पर भयकर अग्निवर्षा की। 'पांडे' सैनिकों की बदूकों की बाढें भी जारी थीं। किन्तु सिक्खों ने दुगने वेगसे चढाअी की और अुनके पीछे पील के नेतृत्व में गोरे सैनिकों के दस्ते भी आ धमके। अिस दोहरे मार के सामने टिकना असम्भव मालूम होने से, गवालियारवाले पीछे हटने की सोचने लगे। यह ताडकर अंग्रेजों ने दुगने वेगसे आग अुगलना शुरू किया और गवालियरवालों की हार हुअी। अुनकी सारी तोपें अंग्रेजों ने छीन लीं और कालपी के मार्ग में अनका गरम पीछा किया। अिस तरह क्रांतिकारियों के दाहिने पासे पर कॅम्बेल पूरी तरह सफल रहा। किन्तु वह अितने से सुस्तानेवाला न था। जिस प्रकार दाहिनी ओर कालपी के मार्ग पर रोक लगायी, अुसी तरह बायीं ओर बिठूर को जानेवाला मार्ग भी बंद कर, तात्या की सेना को घेर लेने का अुसका दाँव था। अिस लिअे अुसने ब्रह्मावर्त के मार्ग पर मॅन्सफील्ड को भेज दिया। अुस दिन अुपर्युक्त अेशियाअी लोगों की क्षमता का सिद्धान्त आधा सच और आधा झूठ निकला। सेनाके मध्य पर ग्रेटहेडने जो सेंतमेंत का हमला किया था वह अितना हलका था, कि यदि अुसका डट कर मुकाबला किया जाता तो अेक तरह से ग्रेट हेड पर अच्छी चपत पडती; अुसे वह आयुभर न भूलता और अुस दिन की विजय का रुझान ही बदल जाता। किन्तु अंग्रेजों के सीधे हमले के आगे क्रांतिकारी न टिक पाये, जिससे 'जोरदार धावा बोला और अेशियाअी दुम दबाकर भागा' वाला सिद्धान्त सेना के मध्य में खरा अुतरा। हाँ, बाअें पासे पर अिस सिद्धान्त के ठीक विरुद्ध अनुभव मिला। क्यों कि, छुपे छुपे मॅन्सफील्ड चक्कर काट कर आ रहा है और अुस के साथ भारी

सेना है यह देखकर भी अुसपर हमला कर अुसे खूब पीटा गया। अुस समय बाअें पासे का नेतृत्व स्वयं नानासाहब कर रहे थे। मॅन्सफील्ड की कूर्मगति (धीमिचाल) से अुन्हों ने अच्छा लाभ अुठाया। जब कॅम्बेल ने पूछा कि अबतक तात्या टोपे मॅन्सफील्डने घेर लिया या नहीं, तब अुसे यही समाचार मिले कि मॅन्सफील्ड की लचर चाल से अुस की सब आशाओं पर पानी फिर गया है। तात्या टोपे अुसके हाथ न लगा। कम्बेल को बडा दुख हुआ। क्यों कि मराठा सेनानीने मॅन्सफील्ड को धकेलते हुअे ठेठ ब्रह्मावर्त तक खदेडा। अंग्रेजी सेना के मोर्चा के जालों को तोडकर अपनी सेना और तोपों के साथ वह छटक गया था। अुस मराठा शेर को फँसाने के पहले अंग्रेजों को अैसे कअी जालों को बिछाना पडेगा।

अपने सभी सैनिकों तथा तोपों के साथ, अुस दिन, तात्या टोपे छटक गया, फिर भी होप ग्रँट अुसका डटकर पीछा कर रहा था। दिनाक ९ दिसंबर को शिवराजपुर के पास दोनों की दौडती भिडन्त हुअी और, यद्यपि तात्या अिस बार भी अंग्रेजों के हाथसे छटक गया, अुसे अपनी बहुतेरी तोपें छोड देनी पडीं। अिस तरह ६ से ९ दिसंबर तक कॅम्बेल ने विंढॅम की हार का बदला लिया, क्रांतिकारियों की ३२ तोपें छीन लीं, और अुनके संगठन को तोड कुछ कालपी को तथा कुछ अयोध्या को भगाये गये। अितनी बडी विजय के बाद छोटी विजयो को तो अुसने अपनी मुठ्ठी में माना। सो, वह ब्रह्मावर्त को गया, अुसे लूट लिया, नानासाहब के राजमहल को खंडहर बना दिया और अपनी विजयपर कलश चढाने के लिअे **अुस स्थान के सभी मंदिरों को तोड दिया**।

ब्रह्मावर्त का राजमहल! अिसी में भारतमाता के अत्यत तेजस्वी वीररत्न नानासाहब, तात्या टोपे, बालासाहब, रावसाहब और झाँसी की छबेली पले थे। यही वह राजमहल था जिसमें १८५७ के स्वातंत्र्य-समर की कल्पना का जन्म हुआ। ब्रह्मावर्त के मंदिरों ने अिस महान् साधना को आशीर्वाद दिया था। रायगढ का राजसिंहासन छिने जाने के बाद फिरसे जब वह अिसी राजमहल में

सजाया गया, जो फिरंगियों के रक्त के सैलाव से धोया गया था, वह राजमहल और वे मंदिर दीपमालाओं से जगमगाये थे।

जिस तेज ने अिन दीपों को जगमगाया था अुसी में आज वे जलकर खाक हो गये। पर अितिहास को अिस खाकपर अेक भी आँसू गिराने की आवश्यकता नहीं है, क्यों कि अपनी साधना को पूरी करने के बाद ही यह महल और ये मंदिर जल गये हैं। अैसी रचाअियों का सर्वनाश ही अुन सैंकडो खडी अिमारतों—जो गुलामी को सहती है—की अपेक्षा हजार गुना प्रेरक, हजार गुना प्राण फूँकनेवाला होता है। क्यों कि, अिन अिमारतोंने स्वाधीनता को जन्म देने की चेष्टा की और अुसी में वे मर गयीं। **स्वराज को प्रस्थापित करते हुअे मर जाना गुलामी में जीवित रहने की अपेक्षा कअी गुना लाभकारी है।** यज्ञवेदी में जलनेवाली समिधा चिता में धधकनेवाली लकडी से हजारगुना प्रेरक है।

अध्याय ७ वाँ

लखनअू का पतन

तांत्या टोपे की प्रगति की अुमड़ती बाढ को, अिस तरह, कानपुर में रोककर, कॅम्बेलने प्रांत के अन्य विद्रोही गाँवों को जीतने का काम शुरू किया। मार्ग में 'स्मशान-शान्ति' का निर्माण करते हुअे सीटन अलीगढ पहुँचा था। तब अलीगढ से कानपुरतक के प्रदेश में अुसी तरह की 'शान्ति' स्थापित करने को वॉलपोल को कालपी के मार्ग मे भेजा गया। वह कानपुर से अुत्तर जायगा और सीटन अलीगढ से दक्खिन। और मैनपुरी में वे मिलेंगे। अिस तरह जमुना के किनारे किनारे सारे दोआब पर फिरसे दखल कर लिया जायगा। साथ साथ कॅम्बेल कानपुर से फतहगढ जायगा। यही थी योजना की रूपरेखा। यह माना गया था कि अंग्रेजी सेना दोआब के क्रांतिकारियों को पीछे दबाती हुअी फतहगढ पहुँच जायगी। सो, निश्चय हुआ, कि अिस मुहीम की आखिरी लडाअी फतहगढ के पास लडी जाय, जहाँ वॉलपोल, सीटन, तथा कॅम्बेल-तीनों की सेनाअें अपना काम पूरा कर मिलनेवाली थीं।

अिस योजना के अनुसार १८ दिसंबर को, अपनी सब तोपों और सेना के साथ, वॉलपोल कानपुर से अूपर कालपी के मार्ग में चला। रास्ते में क्रांतिकारियों के फैले हुअे छापामार दस्तों से दो अेक मुठभेडें करते हुअे, क्रूर बदला लेते हुअे, (-वह सुप्रसिद्ध और अपनी रीति का फिरंगी बदला, न्याय अन्याय

की परवाह न करते हुअे हर मानवसे बदला—) 'पांडों' को आसरा देनेवाले या न देनेवाले गाँवों को जलाते हुअे, अुस प्रदेश को ब्रिटिशों की छत्रछाया में फिर से ले आने के लिअे, वॉलपोल अिटावे आ पहुँचा। वह और भी आगे बढता। यद्यपि अिटावे को क्रांतिकारियोंने खाली कर दिया था, फिर भी अपनी सारी सेना के साथ अुसे अुस नगरमें रहना था। अैसी क्या अजीब बात थी; असाधारण आवश्यकता आ पडी थी? अंग्रेजी सेना की प्रगति में यह रोक? क्रांतिकारियों की बडी सेनाने तो कहीं अुसपर अचानक हमला नहीं किया? या पैदल सेना थी? या रिसाला था? या कहीं तोपखाना तो जमराज का तांडव खेल रहा है?

नहीं, अिटावे में अिस में से कुछ भी न था। न पैदल, न रिसाला, न तोपें! अुस दूर की अिमारत से, बीस-पच्चीस हिंदी वीर कडा प्रतिकार कर रहे थे। अिस अिमारतका छप्पर पक्का है और अुसकी दिवारों में बंदूकें चलानेभर को छेद बने हैं। हृदय में देशप्रेम की ज्योति और हाथ में बंदूकें लेकर ये २०।२५ वीर सब तरह से लैस प्रबल अंग्रेजी सेना को अिटावे की चौखटपर रोक रहे थे। अंग्रेजी तोपों तथा शस्त्रास्त्रों को किसी गिनती में न मान कर अंग्रेजों को रोक रखा था। क्यों कि, अिटावे के नाम के योग्य कोअी बलि जो न दी गयी थी! और यह बलि कौन है? वही, अिटावे की अिच्छा के विरुद्ध जो भी कोअी वहाँ पग धरने की धृष्टता करे। अुसे आव्हान है 'पहले लडो'। अिन २५ वीर-वरों ने अपना जीवन बडा महँगा बेचना तय किया था, जो कि वे सस्ते में बच सकते थे! वे डटे रहे और अुन्होंने ललकारा 'युद्ध'! अिस अिमारत के छोटे से दायरे में और अिन मुट्ठीभर पागलों से क्या लडें? जरा ठहरना अच्छा है, तबतक ये पागल होशमें आ जायँगे और छटक जायँगे; रास्ता जो खुला है—अंग्रेज यही सोच रहे थे। वे काफी समयतक रुके किन्तु बागियों के होशमें आने की सम्भावना न दीख पडी। सो, हमला करना तय हुआ। तोपों की गडगडाहट अिन सिरफिरों को भगाने के लिअे पर्याप्त है। बस, फिर

क्या' था ? अंग्रेजों ने अपनी तोपों की शक्ति का प्रदर्शन, अुन बागियों को हराने के लिये, किया।

किन्तु, मृत्यु का डर केवल साधारण जीवों को सताता है। स्वाधीनता की साधना से दिवाने बने तथा स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिअे मौत को गले लगानेवालों को डर क्या करेगा ? विजय की आशा से लडनेवाला कभी जीवनाशासे डरेगा; कीर्ति के लिअे लडनेवाला भी शायद् डरेगा, किन्तु सिरपर कफन बांधे जो समरांगण में डटा हो अुसे डर क्या करेगा, खाक ? अैसों के मार्ग में क्या रुकावट आ सकती है ? आकाशसे गाज गिरे या वज्रपात हो, अुसे अपने मार्ग से कोअी बाधा विचलित नहीं कर सकती। क्यो कि, वह मौत ही का राही है, जिस से प्रकृति के कोपसे अुसका मन्तव्य तुरन्त पूरा होने मे सहायता मिलती है ! जो मृत्यु को मिलने चला हो अुसे निराशा कैसे निराश कर पायगी ? अपनी प्रियतमा को मिलने के लिअे आतुर प्रेमी की तरह मौत को आलिंगन देने को अुतावले बने अुन अिटावे के देशभक्तों को कौन डरा सकता है ?

और किसी से जान बचाने की पूरी सुविधा होने पर भी, अुस से लाभ न अुठाते हुअे, विजय की रंच भी आशा न होते हुअे, अुन्होंन अंग्रेजी प्रबल सेना के सामने ताल ठोका। जो अंग्रेजी सेना दिल्ली की किलाबंदी, कानपुर के परकोटे, एवं लखनअू के घेरे से न रुक सकी वह अब अिस मामूली घर के सामने अटक गयी।

मॅलेसन कहता है:—' गिनती में थोडे, हाथ में केवल बंदूकें थामे, निराश न हो कर भयंकर रणावेशसे चेते हुअे वे वीर अपने ध्येय की सिद्धि पर बलि चढने के लिअे निरधार से खडे थे। वॉलपोल ने अेक बार अुस स्थान का निरीक्षण किया। अेक सेना को रोकने की दृष्टिसे वह जगह बेकार थी। अुसे तोपों से अुडाया जा सकता था। किन्तु कम से कम हानि के विचार से पहले हाथबमों को फेंका गया। अंदरवालों को घबडाने के लिअे घास जला कर धुअें से आकाश भर दिया; किन्तु व्यर्थ ! क्रांतिकारियों ने तीन घंटों तक

बंदूकों से अैसे निशाने मारे को शत्रु को पास आने की गुंजाअिश न रखी। अन्त में, अिमारत को अुडा देने का निश्चय हुआ। 'अिंजीनिअर्स' से स्कॅचली को बुलाया गया; अुसने वोशीर की सहायता से राअिफली कारतूसों की सुरग की माला बनायी और जला दी। अिस सुरंग के स्फोट से वह स्थान लडानेवाले वीरों के मस्तक, वे जिसे चाहते थे अुस हुतात्मा के मुकुट से विभूषित हुअे और वे अुस अिमारत के मलबे के नीचे दब गये।" और तभी से अिटावे के वीरों का यह पावन समाधिस्थान, परम अुदात्त ध्येय के लिअे "कैसे मरें" अिस विषय पर अपनी मूक किन्तु महाभीषण वक्तृता दिनरात सुनाते हुअे, आज तक अुस स्थान पर खडा है।

वीर भूमि अिटावा! अजरामर-कीर्ति अिटावा! अिस से बढकर क्या पवित्र स्फूर्ति अुस थर्मापाली के दर्रे में, ब्रेरशा की किलाबंदी में या नेदर्लँडस् के द रूतर के कलेवर में होगी? अिटावा अमर रहे! अिटावे की जय!

जब वॉलपोल अिटावे पहुँचा तब सीटन भी अलीगढ, काशगंज और मैनपुरीसे क्रांतिकारी दस्तों से टक्कर देते हुअे बढ रहा था। ८ जनवरी १८५८ को दोनों सेनाअें मैनपुरी में मिलीं। निश्चित योजना के अनुसार दिल्ली तथा मेरठवाली अंग्रेजी सेना ने दोआब में जमुना किनारे अिलाहाबाद तक का प्रदेश फिर से आक्रमित किया था। बीच में कॅम्बेल गंगा कॉठ से अपनी प्रगति करही रहा था। फतहगढ के नवाब को हरा कर दोआब के क्रांतिकारियों को मिटाने के लिअे कानपुर जा रहा था। दोआब के सभी क्रांतिकारी अुस समय फतहगढ में जमा हुअे थे। फर्रुखाबाद के नवाब ने स्वतंत्र होने की घोषणा फतहगढ में की थी। ये सब लोग दिल्ली और कानपूर में हार कर भागे हुअे अनसाधे स्वयसैनिक थे, जो अंग्रेजों के सामने ठहरने की चेष्टा भी न करते हुअे भाग खडे होते थे, अपनी जान बचाने के लिअे। किन्तु क्या, अिस कायरता से वे अपने प्राण बचा सके? नहीं कदापि नहीं! अंग्रेजी सेना अुन का जोरों से पीछा करती और अेक अेक अवसरपर ६०० से ७०० लोगों को और कभी कभी तो सहस्र सहस्र लोगों को तलवार के घाट अुतार देती थी! अिटावे के अुन मृत्यु गले लगानेवालें वीरों तथा अिन कायरों में स्वर्ग-नरक का भेद था!

और फर्रुखाबाद के नवाब को अिन कायर सैनिकों के कारण जल्द ही बहुत हानि अुठानी पडी। अुस की राजधानी, अुस का किला और अुस की युद्ध-सामग्री कुंछ सब ब्रिटिशों के हाथ लगा और सब क्रांतिकारियों को गंगापार रुहेलखण्ड में हट जाना पडा। अिस गडबड में ब्रिटिशों का कट्टर शत्रु नादिरखॉ भी अुन के हाथ लगा। अिसी नादिरखॉ ने नानासाहब के झण्डे के नीचे कानपुर में कअी बार अंग्रेजों से सराहनीय सामना दिया था। अैसे भयंकर शत्रु को पकडते ही अुसे फॉसी दिया गया। अिस नादिरखॉ ने अन्तिम क्षण में सारे हिंदवासियों को शपथ दी—"सब अपनी तलवारें सँवार कर अंग्रेजों को जडमूल से अुखाडने के लिअे आगे बढो"—और दम तोड दिया।* अुस वंदनीय देशभक्त की अन्तिम सॉस के साथ बाहर पडा यह तेजस्वी महामन्त्र था।

४ जनवारी १८५८ को जब विजयी कॅम्बेलने फतहगढ में प्रवेश किया, तब सारा दुआब और बनारस से मेरठ तक का सब टापू ब्रिटिशों के हाथ पडा था। अब ब्रिटिश सेना के सामने समस्या थी, कि चढाअी का कौनसा कार्यक्रम बनाया जाय। अंग्रेजों का यह अनुमान, कि दोआब की क्रांति की ज्वाला बुझा दी जाय तो अन्य स्थानों के बलवे अपने आप शान्त हो जायेंगे, सौ टका झूठ निकला। दिल्ली का पतन होते ही केवल आठ दिनों में 'विद्रोह' ठंढा पड जायगा—कअी राजनिति-विज्ञोंने यह भविष्य कहा था; किन्तु दिल्ली के पतन के बाद क्रांति की बाढ हलकी न पडने से ये भी अनुमान और सब भविष्य झूठे साबित हुअे। क्यों कि, अब तक दिल्ली में बंद क्रांतिकारियों की असीम संख्या दिल्ली क पतन के बाद तूफान सैलाब की तरह देशभरमें हुरदंग मचाती फैल गयी। बख्तखॉं की रुहेलों की सेना, बीरसिंग की निमचवाली सेना, तथा भिन्न भिन्न नेताओं के मातहत होनेवाली सेनाअें देशभर में फैल गयीं और वहीं स्वाधीनता-संग्राम जारी रखा। अेक बार स्वयं दिल्ली में भी जनताने सिर अूँचा करने का जतन किया था। क्यों कि, लोगों में यह अफ-वाह फैल गयी थी कि कानपुर की विजय के बाद अंग्रेजों की कैद में पडे

---

* चार्लस बॉलकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. २३२.

बहादुरशाह को छुडाने स्वयं नानासाहब दिल्लीपर आ रहे है। अंग्रेजोंने अपने अफसरों को यह चेतावनी दे रखी थी, कि, यदि नानासाहब आ ही जाय तो बूढे बादशाह को खरगोश की तरह गोली से मार दिया जाय। * दिल्ली के पतन के बाद तो क्रांतिकारी और ही भडके। अब अुन्हें पराजय की परवाह न थी। अुनका शुरू शुरू का विजयोन्माद अब साफ ठंडा हो गया था। गहरी अुदासीनता का भूत अुनपर सवार था। अुनके सामने अब अेक विचार था—लडते रहो। अुन का निरधार था कि या तो फिरंगी या स्वयं को अिस आर्य भूमिसे मिटा कर ही चैन लेंगे और अिस मन्तव्य की पूर्ति तक वे लडते रहेंगे। वे आपस में झगडते; कुछ अैसे भी थे जो अपना अुल्लू सीधा करने के लिअे चाहे जो करने में हिचकिचाते न थे; फिर भी अिन में से अेक भी व्यक्ति अंग्रजों के विरुद्ध छेडे हुअे युद्ध को स्थगित करना पसंद न करता था। लडाअी में पकडे सिपाहियों से, फाँसी देने के पहले जब, पूछा जाता कि वे क्रांतियुद्ध में क्यों शामिल हुअे ' तब वे छाती ठोक कर कहते,' ' यह तो हमारे धर्म की आज्ञा है कि फिरंगी को मार डाला जाय ' ×

अिस तरह दिल्ली के पतन के बाद स्वतंत्रता के भाव मर जाने के बदले और ही वेग के साथ भडक अुठे। अिसी से दिल्ली की पराजय का बदला लेने के लिअे अुन्हों ने लखनअू और बरेली में झगडा चालू किया। जहाँ समूचा दोआब अंग्रेजों के हाथमें फिरसे आगया था, वहाँ अवध तथा रुहेलखण्ड प्रांत पूर्णतया क्रांतिकारियों के हाथ में ही न थे, बल्कि वहाँ सिंहासनों को फिरसे खडा कर स्वदेशी राजाओं का शासन भी जारी कर दिया गया था। अिसीसे कॅम्बेल के विचार में पहले रुहेलखड को जीत कर फिर लखनअू को जाया जाय। लॉर्ड कॅनिंग अिस बातपर जोर दे रहा था, कि अेकबार क्रांति के तने को—लखनअू को—तोड दिया जाय तो, आसपास के छोटे स्थान आसानी से

* चार्लस बॉल कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. १९४.

× सं. ४५८ चार्लस बॉलकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृष्ठ २४२.

झुकाये जा सकते हैं'। लॉर्ड कॅनिंग की आज्ञा पर अमल करने के लिअे कॅम्बेलने सब से पहले लखनअू की खबर लेने की ठानी। पूर्वनिश्चय के अनुसार सटिन, वाल पोल और प्रधान सेनापति कॅम्बेल ने फतहगढ में लगभग १० से ११ हजार सैनिक जमा किये थे। दो आब के सभी महात्वपूर्ण मोर्चों पर कुछ दस्ते, प्रांत में शांति रखने के हेतु, रखे गये। आगरा से भा आये हुअे सैनिको से सख्या में और वृद्धि हुअी। अितनी बडी सेना लेकर कॅम्बल फतहगढ चल पडा। अिस बडी सेना का विवरण अंग्रेज अितिहासकार यों देते हैं.–"अनाव तथा बुंदी के रेतीले प्रदेशोंने अिस तरह की प्रचंड सेना, घोडे, तोपखाना, पैदल सेना, रसद्से लदीं गाडियॉ, नौकर चाकर, छोटे बडे खेमे आदि शायद ही देखे होंगे। सारा प्रबंध सुंदर था। १५वीं गोरी तथा २ री हिंदी पैदल पलटनें; ४ थी गोरी और २४ वीं हिंदी रिसाला रेजिमेंट; ५४ वीं गरनाल और ८० वीं सादी तोपें–अितना सेनासंभार अिकट्ठा था।" अिस बडी सेना के साथ लखनअू को दण्ड देने के लिअे सर कॅम्बेल कानपुर से चलकर गंगापार हुआ।

गंगामाअी! अवध को खंडहर बनाने के लिअे चढ आनेवाली गोरी सेना को देख लो। मानी अवध! तुमपर ढहनेवाली अिस भीषण विपत्ति से दबकर, क्या तुम स्वयं नष्टभ्रष्ट हो जाओगे?

अंग्रेज गंगापार हो गये कि, बस, अवध की बन आयी–यही भय अवध में समाया था। अपने असख्य गॉवो को भस्मसात् करने और अपने मंदिर सुरंगसे अुडाने, मूर्तियों को नष्टभ्रष्ट करने के लिअे अंग्रेज आ रहे हैं अिस बात को अवध ने पहले ही भॉप लिया होगा। *

किन्तु सबसे अधिक दुख अुसे अिस बात का था कि जंगबहादुर अपने नैपाली दस्तों के साथ चढा आ रहा है। अिस अेक ही दुःखपूर्ण घटन से अुनकी ऑंखोंसे ऑंसू टपके, अुसका मुख पीला पड गया। अवध अैसा

* रसेल की डायरी पृ. २१८.

कायर नहीं था कि गोरी-सेना के आक्रमण से डर जाय यदि अैसा होता तो अंग्रेजी कंधावर को फेंक देने की चेष्टा ही क्यों करता ? जिस दिन अंग्रेजी सत्ता को अुसने अपने प्रदेश से भगा दिया, अुसी दिन से वह पूरी तरह जानता है कि ये गोरे फिरसे आक्रमण करेंगे ही। और तभी तो अवधने अपने हजार हाथोंसे मुकाबले के लिअे ताल ठोंका। किन्तु अुसे यह न मालूम था—खयाल तक न था—कि नैपाली गोरखों को लेकर जंगबहादुर अुसपर चढ आवेगा। शत्रु आकर अुसे चीरेगा यह तो वह अच्छी तरह जानता था; किन्तु अपना मित्र, अपने भाअी, आकर अुसपर क्रूरता की कुलहाडी चलाअेंगे वह तो अुस के सपने में भी नहीं आ सकता था। अंग्रेजों के साथ भिडने को वह हरदम सज्ज था, किन्तु भारत की स्वाधीनता के लिअे भारतही के अेक हिस्से के साथ अुसे झगडना पडेगा, अिस लज्जास्पद बात की कल्पनातक वह न कर सकता था। सो, अवध की फजीहत करने के लिअे जब जंगबहादुर गोरखों को लेकर बेचारे अवधपर चढ आया, तब अेक आँख अवधने नैपाल की दिशामें देखा और अुसकी आँखों से आँसुओं के सोते बहने लगे।

नैपाली दस्तों के साथ अपने अंग्रेज 'मित्रों' की सहायता के लिअे जंगबहादुर लखनअू पर चढ आ रहा था। अंग्रेज बने अुसके मित्र और भारत शत्रु! काडतूसों में गौ की चरबी चोपडनेवाले अुस के मित्र और अुन भ्रष्ट काडतूसों को दाँत से काटनेसे अिनकार करनेवाले अुस के बैरी! भारतीय अितिहास को कालिख पोतनेवाले अिस जंगबहादुर ने स्वातंत्र्य-समर का प्रारंभ सुन कर, फिरंगी से हस्तांदोलन कर, अपने तथा अपने कुल को कायम कलंकित किया। १८५७ के कुछ पहले वह अिंग्लैंड हो आया था; और, अंग्रेज अितिहासकार बडे गर्व से बताते हैं, अंग्रेजों की शान और सामर्थ्य को अुसने अपनी आँखों देखा था, जिस से अुन के विरुद्ध मैदान लेने की हिम्मत वह न कर सका। क्या सचमुच, अंग्रेजों की शान तथा सामर्थ्य अितनी आतंकपूर्ण थी? जंगबहादूर अिंग्लैंड गया था तो नानासाहब के अजीमुल्ला तथा सातारे के रंगो बापूजी भी तो अिंग्लैंड हो आये थे! अिंग्लैंड की यात्रा का अुनपर क्या प्रभाव पडा और अिंग्लैंड की सामर्थ्य की अेक अेक बात देख कर अुसी सामर्थ्य

की धज्जियाँ अुडाने का कठोर निश्चय अुन्होंने कैसे किया, अिसकी साख अिति- हास ही तो देता है ! अिंग्लैंड की यह सामर्थ्य भी जंगबहादुर की राष्ट्रद्रोही वृत्ति का मण्डन कैसे कर पायगा ? अंग्रेजों के बल के प्रभाव से अजीमुल्ला और रंगो बापूजी के स्वदेशभक्त अंतःकरण में, मातृभूमि के मत्थे पर स्वाधीनत का मंगल तिलक लगा कर अुसे स्वतन्त्र सम्राज्ञी-पद पर विराजमान करने की अुमंगें ही दुगने वेगसे अुमड आयीं; जहाँ अिधर अिंग्लैड के बल से अिस राष्ट्रद्रोही काले नाग की चार आँखें होते ही मदारीने तुम्बडी से हलकी ध्वनि फूँकी-तुम अपनी मातृभूमि को हमारी लौंडी बनाने में सहायता करोगे तो और दो घूँटे दूध तुम्हें पिलाया जायगा।

और अिस हीन स्वार्थ को साधने के लिअे मातृभूमि का नीलाम करने पर अुतारू अुस जंगबहादुरने अंग्रेजों की सहायता के लिअे गोरखा सैनिकों को भेजा। १८५७ के अगस्त के प्रारंभ में काठमांडू से ३००० गोरखे अवध की पूरब में अजीमगढ और, जौनपुर में अुतरे गोरखपुर के क्रातिकारी नेता महम्मद हुसेन अुन के मुकाबले को खडा था। जब अंग्रेज दोआब में लड रहे थे, तब बेनी माधव, महम्मद हुसन, और राजा नादिरखाँ ने अपने बलसे बनारस के आसपास का प्रदेश तथा अयोध्या की पूरब का टापू पूरी तरह फिर से हथिया लिया था। अंग्रेज अवध की ओर ध्यान देने का समय निकाले अिस के पहले ही, गोरखोंने क्रांतिकारियों को अवध की ओर पीछे धकेल दिया था। और कुछ दिनों में जंगबहादुर और ब्रिटिशों के बीच मशविरा हुआ और तीन सेनाअें अवध पर चढाअी करने को सुसज्ज थीं। २३ दिसंबर १८५७ को ९००० गोरखाओं क साथ जगबहादुर आगे बढा। जनरल फ्रॅंक्स तथा रोक्रॅफ्ट अेक अेक गोरी पलटन के साथ चढ आये। अिस तरह बनारस की अुत्तर में क्रांतिकारियों का सफाया करती हुअी ये तीनों सेनाअें अवध में घुसने लगीं। २५ फरवरी १८५८ के आसपास नैपाली तथा अंग्रेज घाघरा नदी पार कर अंबरपुर को चले। रास्ते में अेक जंगली अभेद्य दुर्ग था। अुसे छोड कर आगे बढना अंग्रेजों के लिअे खतरनाक था। तब गोरखों को अुस किले पर धावा बोलने की आज्ञा दी गयी। अैसी सुसज्ज सेना

से टकरा कर भी वह किला बना ही रहा। पाठक यह जानने को अुत्सुक होंगे, कि अिस किले में मानवबल कितना था। यहाँ केवल चौंतीस लोगों का अेक दस्ता था। किन्तु स्वाधीनता के स्फूर्तिदायक ध्येयसे अभिभूत होने के कारण ही वे अितनी बडी सजी सेना से झूझने खडे हो गये थे। गोरखे बहुत जीवट से लड, किन्तु अुन के प्रतिपक्षी अुन से भी सौगुना जीवट से डटे रहे। स्वदेश-भक्ति स्वदेशद्रोहियों से झूझ रही थी। अंबरपुरने अकथनीय भिडन्त में शत्रु के सात आदमी मार डाले और ४२ घायल किये। स्वयं अुन से ३३ लडते लडते मर गये और बचा अेक अन्ततक अपने स्थानपर डटा रहा और अुस की लाश पर से होकर ही शत्रु किले में पग धरने पाया। दिल्ली और लखनअू भी जिस चीमडपन का परिचय न दे सके; अम्बरपुर अुस चीमडपन और जीवट से लडा। *

अम्बरपुर ले कर आसपास का प्रदेश अुजाडते हुअे गोरखों और अंग्रेजों की संयुक्त सेना आगे बढ रही थी और अुस के पीछे पीछे जनरल फ्रॅंक्स भी सुलतानपुर के नजीम महम्मद हुसेन से तथा कमांडर बंदा हुसेन से सुलतानपुर, बदायूँ और अन्य स्थानों में मुठभेडें करते हुअे अूपर अवध की ओर बढ रहा था। अबतक की हारों से गयी साख को सॅवार ने तथा पूर्वअवध में पुराने कालसे बने राजकीय रुआब को बनाय रखने के लिअे, लखनअू दरबार ने, जनरल फ्रॅंक्स का सामना करने के लिअे वाजिदअली शाह के समय के तोपखाना-प्रमुख गफूर बेग को भेज दिया। किन्तु २ फरवरी को सुलतानपुर की लडाअी में जनरल फ्रॅंक्स ने अुसे हरा दिया था और अंग्रेजों का मार्ग निष्कंटक हुआ।

और अब यह सारा सेना-संभार कॅम्बेल की सहायता के लिअे लखनअू को जा रहा था। फ्रॅंक्सने दौरारे के किले पर चढाअी की किन्तु अपनी

* मॅलेसनकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४, पृ. ३२७.

तोपें खोकर भी वहाँ के रक्षकों ने अपने जौहर दिखाये और फ्रँक्स को हार मान कर हटना पडा। अबतक अुसने कअी लडाअियाँ लडीं और सफल भी कर दिखायीं और अब के अिस अनचाही हार से भी अुस की कुछ बडी हानि न थी। किन्तु अुस समय अंग्रेजों के पक्ष में अनुशासन और नेतृत्व के दायित्व के विषय में अितना कडा ध्यान दिया जाता था कि, फ्रँक्स की अबतक की सफलता के बावजूद सर कॅम्बेल ने नयी महत्त्वपूर्ण चढाअी की योजना में कमांडरों की तालिका से अुस का नाम हटा दिया !

अब लखनअू पर चढ आनेवाली ब्रिटिश सेना के भिन्न भिन्न विभाग अेक दूसरे के पास आ रहे थे। कॅम्बेल की विशाल सेना कानपुर से पश्चिम के रास्ते आ रही थी, जहाँ फ्रँक्स और जंगबहादुर की सेनाअें पूरब से बढ रही थीं। ११ मार्च के पहले ही दोनों सेनाअें मिलीं और अुस 'अपराधी' लखनअू की धज्जियाँ अुडाने को आगे बढीं।

'अपराधी'! हाँ, अपराधी, और अभागा भी! अपनी और परायों की तलवारों के वार होते हुअे भी अुस लखनअू ने क्या सिद्धता की थी? गत वर्ष के नवबर से--जब कॅम्बेल तात्या को हराने कानपुर दौड गया था--ठेठ मार्च तक हरअेक व्यक्ति प्राणपन से लखनअू के रक्षार्थ तथा शत्रुसंहार के लिअे कटिबद्ध हुआ था। लखनअूमें गर्व से लहरानेवाले स्वतंत्रता-झण्डे के नीचे राजा से रॅंक तक हर अेक, जान हथेली में लेकर लड रहा था। वहाँ कअी राजा और जमींदार अैसे थे, जिनकी, अंग्रेजी आक्रमण नीति के कारण व्यक्तिगत, कुछ खास हानि न हुअी थी। वरंच कुछ लोगों की तो पाँचों घी में थीं।

किन्तु, राष्ट्र के लिअे जो हानिकर होता है, वह अन्तमें व्यक्ति को कभी लाभकारी नहीं हो सकता, यह महान् सिद्धान्त; व्यक्तिगत स्वार्थ के लिअे स्वदेश के प्रति अपने कर्तव्य को भूल न जाने का दृढ निश्चय; जान जाय पर आनपर आँच न आयवाला राजपूती बाना, और बिना स्वतंत्रता के, आत्माभिमान, मनुष्यत्व, सभ्यता आदि महान् गुण

कभी नहीं टिक सकते, अिस त्रिकालाबाधित सत्य की प्रतीति-अिन सब भव्य और अुदात्त सिद्धान्तों का भान अुस समय के लखनअू के जमीं-दारों तथा धनिकों को हुआ था।

ये जमींदार केवल अंग्रेजों के लादे मालगुजारी-कर के कारण असंतुष्ट होने से नहीं भडक अुठे थे। स्वदेश को परायों का पापी स्पर्श होने ही से अुन का क्रोध भडक अुठा था। यह केवल हमारा ही मत नहीं, अुस समय के गवर्नर जनरल की भी यही सम्मति है; आगे का अुद्धरण अिस का प्रमाण है।

"तुम सोचते हो कि अवध के राजा और जमींदार केवल अिस लिअे बागी बने कि हमारी मालगुजारी की नयी पद्धति से अुन्हे व्यक्तिगत हानि अुठानी पडी। किन्तु गवर्नर जनरल का मत है, कि अिस बातपर गौर करना चाहिये। चांदा, बोअिंजा और गोंडा के राजाओंसे बढकर किसी ने कमाल का द्वेष न दिखाया होगा। चादा नरेश का अेक भी गॉव नहीं छीना गया था; अुलटे अुसके खिराज को कम कर दिया था। बोअिंजा के साथ भी अुदारता से बरताव किया गया था। गोंडा के ४०० गॉवों से केवल तीन जब्त किये गये थे और अुस के बदले में १० हजार रुपये कर कम कर दिया था।

अवध के नवाब के स्थान पर अंग्रेजों का शासन आनेसे नौपाडे के युवक राजा को तो सब से अधिक लाभ पहुँचा था। हमारे शासन सम्हालते ही अुसे सहस्र गॉव दिये गये और अन्य सब के हकों को मार कर अुसकी माता को अुसकी पालनकर्त्री बना दी गयी थी। किन्तु शुरू ही से अुसकी सेना लखनअू में हमारे साथ लड रही है। धूरा के राजा का भी हमारे शासन से काफी लाभ हुआ है, किन्तु अुसी के लोगों नें कॅप्टन हुजे पर हमला कर अुस की स्त्री को गिरफ्तार किया और लखनअू के जेल में बंदी बनाया।"

"अश्रफ बख्श खॉं-नवाबने अिस तालुकदार को बहुत सताया था-को तात्काल अुसके राज का संपूर्ण स्वामी बना दिया गया था। किन्तु विद्रोह के प्रारंभ से अुस को हमारे प्रति द्वेष अनहद था। अिन सब मामलों से स्पष्ट है

कि ये जमींदार और राजा हमारे विरुद्ध अुठने का कारण केवल अुनकी व्यक्तिगत हानि नहीं हो सकता। .×.

और अिसी से अितिहासकार होम्सने स्पष्टतया मान्य किया है, कि जिन राजाओं तथा जमींदारोंने अिस स्वातंत्र्य-समर को छेडा और निबाहा, वे व्यक्तिगत स्वार्थ की अपेक्षा अधिक अुदात्त सिद्धान्तों से अभिभूत थे। " अैसे कअी राजा और मामूली जमींदार थे, जो किसी ठोस शिकायत के बिना ही सरकार के नियंत्रण के विरुद्ध अुबल पडते थे, जिस की हस्ती ही अुन्हें याद दिलाती रहती कि वे अेक जित राष्ट्र के निवासी है ...... जो विदेशी सरकार अुन लाखों प्रजाजनों पर चढ बैठी थी अुसके लिअे तनिक भी निष्ठा अुनके मनमें न थी। विद्रोह के समय में हिंदी जनता के बरताव का मूल्य-मापन करनेमें अेक बात कभी न भूलनी चाहिये कि हमारे जैसे विदेशी शासकों के प्रति सहानुभूति होना मानवी स्वभाव के विरुद्ध होता। सच्ची निष्ठा तो देशभक्ति के साथ सम-जीवी हो सकती है। जो लोग हमारा शासन लाभकारी मानते थे वे, या तो, हमारी सहायता करते, या चुप रहते। किन्तु अुनमें भी अैसा अेक भी मानव न था जो, यदि अुसे विश्वास हो जानेपर कि अंग्रेजी शासन अुखाडा जा सकता है, हमारे विरुद्ध खडा न हो जाता। "*

विदेशी शासन के नाम से ही जिनका खून खौलने लगता था और अपने सर्वस्व को तिलांजलि दे कर जो स्वराज का झण्डा अूँचा रखने के लिये रण में कूद पडे थे, अुन राजा महाराजाओं, जमीदारों तथा तालुकदारों में अैसा अेक व्यक्ति था जो श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ होते हुअे भी लखनअू के पूजनीय सिंहासन की रक्षा के हेतु सब से पहले समरांगण में अुतरा था। यह असाधारण व्यक्ति बिजली के वेगसे गत चार महीनों से समरांगण में तथा कौन्सिल-हॉल में अेक सा सक्रिय चमक रहा था।

× सर जेम्स आअुटराम के पत्रके जवाबमें लॉर्ड कॅनिंग का पत्र.

* होम्स कृत सिपॉय वॉर.

पाठक; यह महान् व्यक्ति था, फैजाबाद का देशभक्त वीर मौलवी अहमदशाह । क्रांतियुद्ध की जलती मशाल हाथ में लेकर जब वह सारा प्रदेश प्रज्वलित कर रहा था, तब लखनअू के गोरोंने अुसे पकड कर अुसे फाँसी का दण्ड सुनाया था ।-अुसे फाँसी बारिक में फैजाबाद के जेल में रखा गया था। १८५७ के तूफान ने अुसे वहाँ से अुठाकर नेतृत्व के सिंहासन पर बिठा दिया ! वह राष्ट्रवीर मौलवी अहमदशाह स्वदेश और स्वधर्म की रक्षा के लिअे मैदान में अुतरा था। राजसभा की वक्तृता से वह अपने हजारों देशवासियों को मंत्रमुग्ध कर देता, जहाँ समरांगण में अुसकी वीरता की प्रशंसा अुसके मित्रों तथा शत्रुओं के भी मुख से निकलती थी।

जब कॅम्बेल तात्या को शासन करने के लिअे जा रहा था, तब अुसने ४००० सेना के साथ आअुटराम को आलमबाग में रखा था। तब से शत्रुसेना की दुर्बलता से लाभ अुठाने के लिअे दिनरात अहमदशाह चेष्टा कर रहा था। अिस के पहले कअी बार नानासाहब के मोड-फिराव तथा कूटनीति से लखनअू की रक्षा हुअी थी। लखनअू में पडी यह अंग्रेजी सेना पाडों के चंगुल मे फँस गयी थी। लखनअू पर चढाअी करने के लिअे अंग्रेजी सेना गंगापार हुअी थी, तब नानासाहब ने कानपुर पर चढाअी कर दोआबमें लौट आने पर अुसे मजबूर किया था। किन्तु अिस चाल से लखनअूने निश्चयपूर्वक लाभ न अुठाया। अिसबार तात्या टोपे की क्षमतासे प्राप्त अवसर से पूरा लाभ अुठाने की अहमदशाह ने ठानी। शासनसूत्र यद्यपि अवध की बेगम के हाथ में था, फिर भी क्रांतिकारियों, राजा महाराजाओं को संगठित करने में अुसके अच्छे प्रयत्नों से भी सफलता न मिली। आपसी चढाअूपरी तथा असावधानता के कारण मुट्ठीभर अंग्रेजोंपर जोरदार हमला कर अुनका सफाया करने के कअी अवसर हाथसे निकल गये थे। दिल्ली तथा कानपुर का पतन हुआ; फतहपुर की वही दशा हुअी और आसपास के प्रदेशों से हारे हुअे हजारों क्रांतिकारी लखनअू में जमा थे। किन्तु अवध में अुपयुक्त होने के बदले अपने अधिकारियों की आज्ञाओं का पालन करने में वे टालमटूल करते थे। और अब तो यह डर पैदा हुआ था, कि विजयोन्माद से फूले हुअे तथा नये आनेवाले

सैनिकों से पुष्ट बने गोरों की यह अन्तिम आक्रमण की लहर सब को डुबो देगी। किन्तु मौलवी ने निराशा के घटाटोप अंधःकार को चीर कर आशा की अूषा के दर्शन करवाये। अपनी अमोघ वक्तृता तथा प्रभावी व्यक्तित्व से अुसने अनगिनत हिंदी भाअियों के हृदय में देशभक्ति की लगन पैदा की। अुसने जनता को जँचा दिया कि अेक मन तथा दृढ निश्चय से डट कर, आक्रमण का जवाब आक्रमण से दें, तो अबभी अंग्रेजों के पिटने की पूरी सम्भावना है। सारे दोआब में अपने आत्मविश्वास को सेना में संचार कर अनुशासन तथा नियमबद्धता पैदा की; जिसमें अुसे कअी विपत्तियों का सामना करना पडा। दरबार में अहमदशाह की जो प्रतिष्ठा बढ रही थी अुसे देख न सकने से कुछ अकर्मण्य लोगों ने अुसे कारागार में बद कर दिया। किन्तु बेगम से मौलवी का प्रभाव सेनापर अधिक होने से तथा दिल्ली की सेना का अहमदशाह पर नितांत विश्वास होने से, बेगम को मौलवी को मुक्त करना पडा। जब अुससे युद्ध की स्थिति पर सम्मति पूछी गयी तब अुसने कहा—'बढिया अवसर हाथ से चला गया। सब ओर ढीलापन देख रहा हूँ; अब केवल अपना कर्तव्य पालन करने भर को लडना है ! "

कभी कभी मौलवी स्वयं सेना का नेतृत्व करता। जब देशी सेना आलमबागपर चढ जाती तब मौलवी सब के आगे चमकता दिखायी पडता ! दिसबर २२ को अुसने चकमा देकर अुन्हें आलमबाग में बद कर देने का अेक कुशल दाँव रचा था। अंग्रेजों को झाँसा दे कर वह अपनी सेना के साथ कानपुर के रास्ते चल पडा। निश्चय यह हुआ था, कि मौलवी अंग्रेजों की पिछाडीपर पहुँचते ही क्रांतिकारी आगे से आलमबागवालों पर हमला करें। यह दाँव अवश्य अेक महत्त्वपूर्ण सूझ थी और वह सफल हो भी जाता. किन्तु आलमबाग के सैनिकों में सहयोग न होने से सब बेकार हुआ। वहाँ का कमांडर अपने अनुयायियों में मामूली अनुशासन को रख न सका। हर अेक अपनी मर्जी से चलने लगा और पहले ही झटके में चढाअी करने के बदले पीठ दिखा कर सब भाग गये। मौलवी की तनतोड चेष्टा बेकार गयी। क्रांतिकारी हार गये।

तोभी अंग्रेजी सेना का पीछा मौलवीने नहीं छोडा। जनवरी १५ को, क्रांतिकारियों को पता चला, कि आलमबाग की सेना को रसद पहुँचाने को कानपुर से कुछ अंग्रेजी दस्ते चल पडे हैं। चर्चा शुरू हुअी कि अिस रसद को रास्ते ही में कैसे मारा जाय। किन्तु कोअी निर्णय न हो सका। निदान मौलवीने बीडा अुठाया, 'शत्रु की रसद लूटकर मैं ब्रिटिश सेना को चीर कर सीधा लखनअू पहुँच जाअूँगा।' दृढनिश्चय से वह चला; अपनी हलचलों की शत्रु को तनिक भी खबर न मिले अितनी गुप्तता से, कुछ लोगों के साथ वह कानपुर की ओर चला। किन्तु आअुटराम के हिंदी गुप्तचरोंने अिस बात का सुराग अुसे दे दिया; सो, अुसने कुछ दस्ते मौलवी की खबर लेने को भेज दिये। अपने साथियों को स्फूर्ति देने के लिअे अिन दस्तों से मुठभेड हुअी तब वह सब के आगे रहा और बडी वीरता से लडा। घमासान में अुस की पीठ में गोली लगी और वह लडखडा कर गिर पडा। बहुत दिनों से अंग्रेज अुसे पकडने की ताक में थे, किन्तु क्रांतिकारियों ने फुर्ती से अुसे डोली में रखा और लखनअू ले आये। अुस के घायल होने के समाचार से हर अेक का मुख सूख गया। फिर भी, मौलवी का शुरू किया हुआ काम पूरा करना ही अुस वीरके लिअे कृतज्ञता तथा आदर प्रकट करना है, यह जानकर पलभर भी न ठहरते हुअे जनवरी १७ को विद्रोही हनुमान नामक अेक ब्राह्मण वीरने अंग्रेजी सेना पर जोरदार हमला किया। सबेरे १० बजे से शाम के ६ बजे तक यह सूरमा हरावल में लडता रहा। किन्तु दुर्भाग्य से वह घायल होकर गिरफ्तार हुआ। विद्रोहियों में गडबडी पडी और वे भागने लगे। अिस हार से क्रांतिकारी सेना में आपसी मनमुटाव हुआ। नादान सिपाहियों ने लडने के पहले वेतन पाने का हठ किया। जिन को पेशगी वेतन दिया जा चुका था वे भी मैदान में जाने के पहले और पैसे माँगने लगे। फिर भी अुस दृढ, साहसी और सुयोग्य बेगम ने अिस सब अव्यवस्था में भी राजप्रबन्ध जारी रखा था। और यही था अुसके असाधारण मनोधैर्य का प्रमाण * खैर। अपयशों का अिस तरह ताँता लगा

* रसेल की डायरी का अुद्धरण अिस विषय में बडा रोचक है; संदर्भ ४६ पढिये।

था और अुसी में बेगम के अर्थ मंत्री राजा बालकृष्णसिंह चल बसे किन्तु अितनी बडी और असंख्य विपत्तियों से भी यह बेगम पस्ताहिम्मत न हुअी। क्यों कि, अंग्रेजों के वहाँ रहने से मौत को अधिक पसन्द करनेवाले सूरमाओं की अुसके पास कमी न थी;वे प्रतिदिन जमा होते और अंग्रेजों से बार बार टकराते। अिन्हीं वीरों में मौलवी अहमदशाह अेक था। अुसकी चोट पूरी तरह ठीक भी न हो पायी थी, कि १५ फरवरी में वह फिर मैदानमें कूद पडा। कम्बेल के कानपुर से पहुँचने के पहले आअुटराम का सफाया करनेपर वह तुला हुआ था। किन्तु विद्रोही सैनिकों में कायरता का रोग दिन दिन हदसे अधिक बढने लगा था; जिससे मौलवी का साहस अुस दिन भी व्यर्थ हुआ और क्रांतिकारियों की हार हुअी। फिर भी मौलवीने झगडा जारी रखा था। अिस वीर की शूरता से थकित होकर अितिहासकार होम्स अपने ग्रंथ में लिखता है, "यद्यपि बहुसंख्य क्रांतिकारी कायर थे, अुनका नेता अवश्य अपनी निष्ठा तथा कर्तृत्व से अपने ध्येय के लिअे अनथक चेष्टा करने और सेनानी का काम सम्हालने को सर्वथा सुयोग्य था। और यह नेता था अहमदशाह; फैजाबाद का मौलवी*। हार जीत की परवाह न करते हुअे अपने कर्तव्यपथ पर चलने के सिद्धान्त से अभिभूत सभी, वीरता के साथ लडते थे। ६० वीं पलटन के सूबेदारने आलम बागसे अंग्रेजों को आठ दिन के अंदर भगा देने की प्रतिज्ञा की और अपनी पूरी सामर्थ्य से वह झूझता रहा। अेक दिन बेगम स्वयं सब सेना के साथ मैदान में आ गयी थी। किन्तु, अभागे लखनअू के भाग में विजय न बदी थी। और हो भी कैसे ? **विजय, कुशलता और क्षमता की दासी है;** क्रांतिकारी यदि अुस क्षमता का परिचय देते, तो विजय अुन के चरणों में होती।

निदान कम्बेल आलमबागवाली सेना में जा पहुँचा। अंग्रेजोंने लखनअू जीतने के लिअे कोअी अुपाय अुठा न रखा था। किन्तु अुनके लगातार हमलों से बाज न आकर, स्वराज्य के झण्डे के नीचे लखनअू अब तक मानपूर्वक

* होम्सकृत सीपॉय वॉर.

खडा था। अंग्रेजों ने अपनी पूरी शक्ति वहाँ केन्द्रित की थी, जिस से क्रांतिकारियों को भी डट कर सामना करने का प्रबंध करना पडा। अवध के सभी सूरमा वहाँ जमा हुअे थे। देहातों तथा खेतों खलिहानों में स्वदेशाभिमानी किसान अिस कठोर निर्धार से खडे थे—'या फिरंगियों को मार भगाअेंगे या स्वयं अिस प्रयत्न में समाप्त हो जायेंगे।' चार्लस बॉल कहता है—" मधु-मक्खियों के झुण्डों के समान प्रांतभर से आवारों और स्वयंसेवकों के झुण्ड सशस्त्र होकर फिरंगियों से होनेवाली आखिरी कशमकश में झपट कर मरने के लिअे लखनअू आ रहे थे।+

अुस समय ३० सहस्र सिपाही और ५० सहस्र स्वयंसैनिक केवल लखनअू में जमा हुअे थे। जो क्रांतियुद्ध की शपथ से बँधे हुअे थे, जिन्हों ने 'चपाती' खाअी थी, जिन्हों ने 'रक्त कमल' की सुगध ली थी, सभी वे जो मिले अुन शस्त्रों से लैस होकर, अपने देश और राजा के लिअे प्राणपन से लडने को लखनअू में जमा थे। कम से कम ८०,००० स्वयंसैनिक वहाँ होंगे! * हर मार्ग, हर गली में खाअियाँ बनायीं गयीं, टाट्टियाँ खडी की गयीं। घर घर की तथा धुस की दीवारों में बंदूकों के छेद बनाये गये थे। दीवारों पर हर मोर्चेपर कट्टर क्रांतिकारियों के पहरे लगे थे। पूरब की ओर गौतमी नदी से नहरें खोदीं गयीं और अुनपर तोपों के पहरे लगाये गये। दिलखुश बाग से ठेठ केसरबाग तक तीन कतारों में धुसबन्दी

+ चार्लस बॉल कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. २४१.

* क्रांतिकारियों की संख्या के बारे में कल्पना शक्ति पर ही कैसे जोर दिया जाता था। अिस के नमूने देखिये। सर होप ग्रँट का कहना है—३० हजार सैनिक तथा ५० हजार स्वयंसैनिक थे। मॅलेसन अेक लाख २१ हजार गिनाता है और प्रधान सेनापति कॅम्बेल के साथ होनेवाला सिविल कमिशनर दो लाख की हामी भरता है—अिस गडबड-झाला को देख बेचारा होम्स चुप हो गया।

बनी थी। स्वयं राजप्रासाद भी सशस्त्र सैनिकों तथा बड़ी बड़ी तोपों से लैस था। मतलब, अुत्तर दिशा को छोड सभी ओर क्रांतिकारियों ने लखनअू की रक्षा की सराहनीय सिद्धता कर रखी थी।

कॅम्बेलने, उत्तर की असुरक्षितता भॉप कर ठीक अुसी ओर चढाअी शुरू की। अबतक हॅवलॉक, आअुटराम या कॅम्बेल किसीने अुत्तर से चढाअी न की थी, और वहाँ गौतमी नदी होने से क्रांतिकारियों ने भी विशेष प्रबन्ध न किया। संरक्षण-योजना की अिस कच्ची कडी से आअुटराम ने पूरेपूर लाभ लिया। सो, अुत्तर से हमला करने से और वहाँ प्रतिकार ढीला हो जाने से क्रातिकारियों को इर मोर्चेपर हार खानी पडी। ६ मार्च को ब्रिटिशोंने चढाअी का प्रारंभ किया। कॅम्बेल की सेना ३० हजार तक बढ गयी थी, जिस से अुत्तर और पूरब दोनों ओर वह चढाअी कर सका। कॅम्बेलने अपने व्यूह की रचना अैसी की थी, जिस से लखनअू से अेक भी क्रांतिकारी जीवित न जा सके। अनपेक्षित ओर से चढाअी होनेसे क्रांतिकारियों की सभी योजनाअें कट गयीं, तोभी ६ से १५ मार्च तक अुन्होंने डट कर युद्ध किया। अिस अभागे लखनअू में सालभर यह तीसरी बार रक्त की नदियॉ बही थी। दिलखुशबाग दम रसूल, शाहनजीफ, बेगम कोठी तथा अन्य स्थानोंपर, अेक के बाद अेक मले करते हुअे ब्रिटिश सैनिक आगे घुस रहे थे। दिनांक १० को क्रांतिकारियों की गोलीसे हडसन मारा गया-वही हडसन, जिसने शरण आये दिल्ली के निरपराध और निःशस्त्र राजपुत्रों को जानबूझ कर क्रूरता से कत्ल किया था। अिस पापी हत्यारे को मारकर लखनअूने दिल्ली का प्रतिशोध लिया। दि. १४ को अंग्रेज सेना ठेठ राजमहल में घुसी। मॅलेसन् अुनकी अिस विजय के विवरणमें यों कहता है:-अिस करारी तथा अपूर्व हार का यश तो खास कर सिक्खों तथा १०'वीं पैदल पलटन की ही करतूत है।"

किन्तु केसरबाग की अपूर्व विजय से फूल जाने पर भी कॅम्बेल को आअुटराम की ओर से जो समाचार मिले, अुन से बडा दुख हुआ। क्यों कि, भले ही लखनौ का पतन हुआ-किन्तु सहस्रावधि क्रांतिकारी न शरण आये, युद्ध भी अुन्होंने न रोका। किन्तु अुलटे, अपने राजा तथा अुपजाअू मस्तिष्क-

वाली बेगम के साथ घेरनेवाली अंग्रेज सेना का व्यूह तोड कर वे कब के छटक गये थे।

जब अंग्रेज ठढे दिल से लखनअू में लूटमार कर रहे थे, तब वह मानी मौलवी लखनअू में घुसा दिखायी पडा। लखनअू का पतन और अंग्रेजी संगीनों का ताण्डव होने की कल्पनाही अुसे विष के समान घृणित मालूम होती थी। सो, अुसने अपने शिबिर से लखनअू नगर में घुसने की चेष्टा शुरू की। अपने राजा के अपमान से चिढ कर, जान हथेली में लिअे, स्वदेशभक्ति से पागल यह मौलवी अहमदशाह शहादतगंज में डट गया। जिस से अितिहास को लिखना पडेगा—'लखनअू झूझते हुअे पडा।' शत्रुने सारे नगर पर कब्जा जमा लिया था। फिर भी मौलवी भी-मॅजिनी के रोम में चिपकने के समान-लखनअू में रहा; जब सब क्रांतिकारी सेना लखनअू से निकल गयी थी और जब अंग्रेज पलटनें वहाँ आतंक ढा रही थीं, तब निराशा के बल से झूझते हुअे यह अहमदशाह वहाँ डटा था।

मॅलेसन कहता है:—'शहर में भी कुछ काम बाकी था; वह अनहद हठीला विद्रोही-नेता मौलवी फिर लखनअू आया था; और ठीक अुस के मध्य में, शहादतगंज में, दो तोपें और पूरीतरह किलाबन्दी की हुअी अेक अिमारत लेकर अंग्रेजों को ललकारता हुआ वह खडा था। लखनअू की चढाअी के पहले ही दिन बेगमकोठी को जीतनेवाली पलटन के बचे लोगों के साथ लूगार्ड को, दि. २१ को, अुस मौलवी को भगाने के लिअे भेजा गया। अुस के साथ ९३ वीं हाअिलडर और चौथी पंजाबी राअिफल पलटनें थी। आज के समान चीमडपन और निर्धार का परिचय अिस के पहले बागियोंने कभी न दिया था। अुन्होंने बडी वीरता से मुकाबला किया और हमारे कअी लोगों को मारने तथा कअियों को घायल करने पर ही अुन की हार हुअी।" *

बस, येह लखनअू की अन्तिम लडाअी थी!

---

* के अॅन्ड मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४, पृ. ३८६.

क्यों कि, क्रांतिकारी अिस अिमारत से कब के चले गये थे। तब भी छः मीलों तक अंग्रेज अुनका पीछा करते रहे और तब भी मौलवी अुन्हे झाँसा देकर छटक गया।

अब लखनअू पूरी तरह अंग्रेजों के हाथ आ गया। अिस बार अंग्रेजों ने लखनअू पर प्रतिशोध की आग बरसायी; अुस का विवरण देने के लिये लेखक को अपनी लेखनी की लहू को स्याही में डूबो कर ही लिखना पडेगा! अंग्रेजों ने अिस नगर तथा राजमहल में कैसी लूटमार की, नागरिकों की सामूहिक हत्याअें कैसे कीं, लाशों का विडंबन कैसे किया, यह अेक लम्बा चौडा और शोकपूर्ण करुण किस्सा है। रसेल जैसे लोगों ने लिखे पैशाचिक अत्याचारों के वर्णन, वे अंग्रेजों के लिखे हुअे हैं यह किंचित् न भुलते हुअे भी, पढकर लखनअू से अंग्रेजों ने कैसा भयंकर बदला लिया होगा अिसका कुछ अंदाजा लग सकता है। क्रांतिकारियोंने अबतक और आगे भी, क्या सराहनीय संयम रखा था! हिंदी और अंग्रेजी प्रतिशोध में आकाश पाताल का कैसे अंतर होता है अिसकी प्रतीति पाठकों को, आगे दो अंग्रेज लेखों के अुद्धरण पढ कर, हो सकती है।

" लखनअूकी बंदिशाला में कअी अंग्रेज स्त्रियाँ तथा अधिकारी थे। छः महीनोंतक रहते हुअे भी अुनका बालतक बॉका न हुआ। किन्तु अिधर छोटा—बडा, सज्जन—दुर्जन किसी का खयाल न करते हुअे कॉलिन के गोरे दस्तोंने जब सामूहिक हत्याअें करते हुअे शहर में प्रवेश किया तब अुत्तेजित क्रांतिकारी राजमहल की ओर गये और बेगमसाहिबासे अनुज्ञा मॉगी कि कुछ गोरे बंदियोंसे बदला लिया जाय। श्री. ओर्र, सर माअुंट स्टुअर्ट और अन्य पांच छः गोरों को क्रांतिकारियों के सुपुर्द किया गया तब अुन्हें वहींपर गोलियों से खतम कर दिया गया; किन्तु स्त्री—बंदियों की मॉग जब की गयी, तब बेगम ने स्त्री जाति की प्रतिष्ठा के नामपर साफ अिनकार किया और सभी मेमों को अपने जनाने में ला रखकर अुनकी जानें बचायीं।" *

* चार्लस बॉल कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. १४.

अब अंग्रेजी प्रतिशोध के अेक दो अुदाहरण सभ्यता की मात्रा की तुलना के हेतु पाठकों के सम्मुख रखते हैं। " राजमहलमें जब हत्याकाण्डने तूल पकडा, तब अेक बालक अेक बूढे को ले जा रहा था। अुस बूढेने गोरे अफसर के पास जा कर जान बचाने की याचना की। अिस दीन याचना का जवाब क्या मिला? अुस अफसरने सीधे अपनी पिस्तौल अुठायी और अुस बूढे की कनपटीपर चला दी! फिर अेक बार निशाना ताका, किन्तु वह चूक गया। फिर अेक बार गोली चलायी, किन्तु अुस गोली ने अुस निष्पाप बालकीहत्या करने से मुँह मोड लिया! हाँ चौथी बार, अुस वीर को जश मिला और अुस के पाँव के पास खून से लथपथ वह बालक गिरकर मर गया।* ससार को यह प्रसंग अिस लिअे मालूम हुआ कि अुसे देखकर लिखनेवाला कोअी वहाँ मौजूद था। अैसे कअी प्रसंग हैं कि जिनको देखने और लिखनेवाला कोअी नहीं था। ये क्रूर अत्याचार अितने असंख्य हैं, कि ' क्रूर हत्या ' और ' दया पूर्ण हत्या ' की श्रेणी बनाने की बारी आयी थी। अुपर्युक्त हत्या बहुत कुछ ' दयापूर्ण ' थी। बूढे और बालक का निर्दय खून भी जिस भयंकर हत्या के सामने ' दयापूर्ण ' बन जाता है अुसका रूप साधारण तया यों था:—" अब भी कुछ सिपाही जीवित थे, अुनको मार डालने की दया दिखायी गयी! किन्तु अुनमें से अेक को घर के बाहर रेतीले मैदान में घसीट लाया गया। वहाँ गोरे अुसे जलाने के लिअे अींधन लाने गये थे। जब चिता तैयार हुअी तब अुस अधमरे सिपाही को अुसमें भुना गया। यह सब काम ' गोरे ' ही कर रहे थे; और अुनका अेक अधिकारी भी यह सब कुछ देख रहा था; किसीने अुन्हे रोका नहीं। खैर; जब वह अभागा, अधजला सिपाही चिता से बाहर लडखडाया तब अुस पैशाचिक क्रूरता ने कमाल कर दी। जब वह चिता से अलग हुआ तब भुने माँस की बोटियाँ खुली पडी हड्डी से लटक रही थीं; फिर भी वह कुछ दूरी पर भागा! तब

* रसेल की डायरी पृ. २४८.

अुसे संगीनों से अुठा कर चिता में डालकर अुसके सब अवशेष भुने गये।" *

दिल्ली जीता गया, लखनौ जीता गया, किन्तु क्रान्तियुद्ध का जोर धीमा न पडा। अिस अचिन्तित स्थिति को देख कर अंग्रेजों को विश्वास हुआ कि, यह विप्लव सिपाहियों ने किया और वह भी अेक दो असंतोष के कारण थे, अैसा मानने में वे बडी भारी भूल कर रहे थे। यह 'बलवा,' 'विद्रोह' नहीं था; स्वाधीनता के लिअे ठाना हुआ युद्ध था। अेकाध असंतोष के आधारपर यह अुत्थान न हुआ था; असीम दुखों को पैदा करनेवाली राजकीय पराधीनता ही अिसकी जड मे थी। अिस युद्ध की जड में क्षुद्र व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं था; स्वतंत्रता की पवित्र ज्योति, स्वदेश और स्वधर्म की महनीय ध्येय-भावनाही अुसकी जड में धधक रही थी। स्वाधीनता के पवित्र आदर्श ही को अपना स्वार्थ बनानेवाले सिपाही ही केवल अपना खून बहाने को अुत्सुक नहीं थे, वरंच मध्यम श्रेणी के लोग तथा देहाती जनता भी अिस अुत्थान में मुख्यतः शामिल हुअे थे। यदि अैसा न होता तो यह बल, यह निर्धार, यह निःस्वार्थता, यह साहस कभी प्रकट न होता। क्यों कि, अिसी समय, लॉर्ड कॅनिंगने ढिंढोरा पीटा था-"जो भी अब अिस विद्रोह में शामील होंगे अुनकी सब माल-मताअें तथा जमीनें जप्त की जायेंगी और जो शरण लेंगे अुन्हे मुआफ कर दिया जायगा।" अिस घोषणा के बाद भी क्रांतिकारियों ने हथियार नहीं डाले। लखनअू का पतन हुआ तो भी अवधने युद्ध जारी रखा था। सिपाही, बनिया; ब्राह्मण, मौलवी, राजा, जमींदार, तालुकदार, गाँववाले किसान अवध का हर सपूत अिसमें शामिल था। डॉ. डफ अिस प्रचण्ड अुत्थान के बारे में लिखता है:-यदि यह विद्रोह, बहुसंख्य जनता की सहानुभूति या सहयोग न होता और केवल सैनिकों का बलवा होता तो, पहली दो चार बडी विजयोंसे अुस बलवे को कुचल दिया जाता और मामला ठंडा हो जाता। परवात बिलकुल अुलटी बनी। विद्रोह धीमा पडने के बदले और ही भडक अुठा और अुस का क्षेत्र भी बढता दिखायी दिया। और अब तो अुस का रूप अुग्रता लिअे हुअे है।

* रसेल की डायरी पृ. २०२.

मालूम होता है, यह सैनिकों का मामूली बलवा नहीं, यह विप्लव है, क्रांति का अुत्थान है। यही कारण, है कि हमें अुसे दबाने में बहुत थोडा यश मिला है और, मालूम होता है, कि वह जल्द शांत नहीं होगा। आये दिन के अनुभव से
अब यह स्पष्ट होता जाता है कि यह 'बलवा' अेका अेक खडा नहीं हुआ है। दिनोंदिन अिस के और प्रमाण मिलते जाते हैं। यह 'बलवा' दीर्घकालिक तथा सोच समझ कर रचा हुआ है, जिस में हिंदु मुसलमानों का अस्वाभाविक मेल होकर वे कंधेसे कंधा भिडाकर शामिल हुअे हैं, अवध की सारी जनता ने जिसे खुल्लमखुल्ला अपनाया और पोसा है और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे आसपास के लगभग आधे से अधिक प्रांतोंने अपने आशीर्वाद दिये हैं और सहायता भी की है— अैसे 'बलवे' को, पूरेपूरी और सराहनीय कुछ विजयों से, जो बागी सिपाहियों पर मिली हों, दबाना असम्भव है।"

"प्रारंभ ही से यह बलवा धीरे धीरे विप्लव का रूप धारण करता जा रहा है—सैनिकों के अलावा सर्वसाधारण असंख्य जनता का यह विद्रोह अंग्रेजी सत्ता और शासन के विरुद्ध है। हमारी सच्ची लडाअी केवल बागी सिपाहियों से नहीं थी और अब तो लगभग नहीं के बराबर है। केवल सिपाही हमारे सामने शत्रु होते तो देश में कब की शान्ति हो गयी होती।'

'जहाँ जहाँ भिडन्ते हुअीं वहाँ वहाँ अपने शत्रुको तितर बितर कर और अुस की तोपें छीन कर ही भगाया है। किन्तु, बारबार पिटने पर भी वह फिर से संगठित हो कर सामने खडा हो ललकारता है। अिधर कोअी शहर जीता या मुक्त किया नहीं कि दूसरे नगर को खतरा खडा हो जाता है। गोरे सैनिकों की बढ़ीसे अेक जिला सुरक्षित होने की बात प्रकट करते हैं तो दूसरे जिले में अशान्ति और बलवा शुरू होता है। मोर्चे के स्थानोंमें यातायात प्रबन्ध होते ही फिर अुसे बन्द कर देना पडता है और कुछ समय के लिअे तो किसी तरह का सबध ही नहीं रहता, अेक बस्तीसे बागियों को भगाया नहीं, और दूसरी बस्तीमें दुगनी तिगनी संख्या में वे

जमा हुअे नहीं। हमारे गश्ती जत्थे शत्रुओं की सफों को चीर कर निकल जाते है, तो पीछे छोडा हुआ प्रदेश ये बागी कब्जा कर लेते है। शत्रु की सख्या की कमी तुरन्त पूर जाती दिखायी पडती है और कहीं भी हमने पूरा सफाया किया हुआ दिखायी नहीं पडता, न डर ही पैदा होता दीख पडता है।×

डॉ. डफ ने सच्ची स्थिति बतानेवाला जो सत्यकथन किया है, अुसका भान अंग्रेजों को लगभग अन्त में हुआ। किन्तु हर अेक 'पांडे' अपने ध्येय को आरंभ से पहचानता था। अपना राज और देश के लिअे जो खेत रहे वे तो अिन बातों को घोषित करते ही थे, अुन की स्त्रियों ने भी वैसा ही निर्धार बताया। कुछ 'शूर' अंग्रेजों ने लखनअू के जनानखानेपर धावा बोला तब कुछ स्त्रियाँ अुनके हाथ लगीं। दरवाजे तोड कर अंदर घुसने पर भी गोरे सैनिकों ने वहाँ बंदूकों की बाढ दागी, जिस से कुछ औरतें वहीं ढेर हो गयीं। बचीं अुन्हें बंदी बनाया गया। लखनअू को मटिया मेट किया गया। यह सब दृश्य देख कर अब क्रांतिकारी झट शरण आयेंगे अिस कल्पना से अंग्रेजों को बडा आनंद हुआ। अपने देशबंधुओं के अिस आनंदोन्माद में सहभागी बने कुछ अंग्रेज बंदिपाल भी अुन बंदी रानियों से पूछते 'क्यों, अब तो बलवा कुचल दिया गया है न?' झट अुत्तर मिलता 'कुचलने की बात तो बहुत दूर है; हाँ अन्त में तुम्हारी हड्डियाँ नरम की जायेंगी अवश्य।' *

× डॉ. डफ कृत अिंडियन रिबेलियन पृ. २४१–२४३.

* नॅरेटिव्ह ऑफ दि अिंडियन म्यूटिनी पृ. ३३८ रसेल की डायरी, पृ. ४००.

अध्याय ८ वाँ

कुँवरसिंह और अमरसिंह

जगदीशपुरकी दून से जनरल आयार को खदेडनेवाला शाहबाद प्रांत का यह बूढा किन्तु धीर वीर शेर कुँवरसिंह अिस समय तडपता हुआ घूम रहा था, स्वाधीनता को हडपनेवाले शत्रु का गला फोडकर अुष्ण रक्त पीने के लिअे। अुसके झण्डे के नीचे अुसका भाअी अमरसिंह, तथा दो जागीरदार निस्वारसिंग और जवानसिंह खडे हुअे थे। ठीक मौके की ताक में वे जंगल में पडे थे। अुनके साथ, केवल लडने की प्रतिज्ञा से आयीं, अुनकी रानियाँ भी थीं। ये नाजनियाँ अपने बालों को संवारने के लिअे रनवाससे अपने साथ रंगीन कघे न लायी थीं, पैने तीरों की नोकोंसे वे कघी का काम लेती थीं। कुसुम से कोमल करों में अुन्होंने अलनास से भी कठिन फौलादी पैनी तलवारें लीं थीं। खैर, शत्रुके रक्त की घूँट पीने के लिअे ये सब अुतावले हो रहे थे हाँ, शत्रु-रक्त की घूँट! हम फिर दुहराते हैं। बूढा कुँवरसिंह भी अुसके शत्रु के समान मानी अुद्दंड था, जिससे अुसकी अेकमेव अिच्छा शत्रु के गले का खून पीने की थी। भर्तृहरी का कथन है, कि भूख का मारा, बुढापे से सताया, अब-तब दशामें सब प्रकार से पीडित, राज्य से वंचित होने पर भी कुँवरसिंह अब भी वनराज था; और चाहे जो विपत्तियाँ आ पडनेपर भी पराधीनता की

सूखी घास वह कभी नहीं चबायगा; अुसकी अेकमेव आकांक्षा, अुसी सुभाषित के अनुसार, हाथी का गडस्थल फोडने की, शत्रुका अुष्ण रक्त पीने की थी।

अनादि काल से कुँवरसिंह के वंश में रहा प्रदेश शत्रु हडप चुका था। जगदीशपुर का राजमहल भी शत्रु ने अपवित्र कर छोडा था। अुस के मंदिर और अुन की मूर्तियाँ फिरंगी के पापी हाथों से भग्न और अपवित्र हो गयी थीं तिसपर भी कुँवरसिंहने काफी संयम रखा था। न अुसने जगदीशपुर से अपना मत्था फोडा, न शहाबाद प्रांत को अपने कब्जे में रखने की चेष्टा की। अुस की राजधानी के अिर्दगिर्द अंग्रेजों ने कडा पहरा रखा था। कुँवरसिंह के पास केवल १२०० सैनिक तथा ५०० नौसिखिये स्वयंसैनिक थे। अिसी से अपनी राजधानी को जीतने का हठ अुसने न किया। हाँ, स्वाधीनता का झण्डा लहराये रखने का अुस का पुरेपूर निर्धार था। जिस दिन अुसने हठीला प्रतिकार न करते हुअे जगदीशपुर छोडा था अुसी दिन अेक अनोखी युद्धपद्धति का अवलंबन करने की अुस न ठानी थी। यही अेक मात्र युद्ध पद्धति है जो यशप्राप्ति की निश्चिति की दृष्टि से अनमोल महत्त्व रखती है। अिस का नाम है वृकयुद्ध।

अिसी से अपनी राजधानी से वंचित कुँवरसिंहने अपनी सेना को शत्रुओं से न भिड़ाया। वह जानता था कि अंग्रेजी सेना के आक्रमक धक्के से अुस की मुठी भर सेना मक्खी-मच्छरों के समान चुटकी में पीसी जाती। अिसी से शत्रु के मर्मस्थान का सुराग लगाते हुअे सोन के किनारे हो कर पश्चिम बिहार के जंगल में आसरा लेकर बैठ गया। तब अुसे पता चला कि लखनअू की खबर लेने के लिअे आजमगढ से गोरखों तथा अंग्रेजों की सेनाअें भेजी गयी है। अुस शेर की तीक्ष्ण नाक में अपने शिकार की बराबर आ गयी; और तुरन्त जगदीशपुर का सिंह जंगल से बाहर हो झपटा। कुँवरसिंह वृक-युद्ध का पण्डित था। अवध के पूरबी विभाग में ब्रिटिशों का बल बहुत कम था। सो, अुन पर झपटने तथा अुस विभाग में फैले हुअे क्रांतिकारियों को सगठित कर फिर से आजमगढ पर छापा मारने के लिअे अुस तरफ बढा। अुस का विचार था, कि अिस चढायी में सफलता मिले तो बनारस या अिलाहाबाद पर

हमला कर जगदीशपुर का बदला लिया जाय। १८ मार्च १८५८ को चीवा के क्रांतिकारी भी अुसे आ मिले और संयुक्त सेनाने अतरौलिया के किले के पास डेरा डाला।

अतरौलिया से अजीमगढ २५ मील है। खबर पाते ही २०० पैदल सेना, कुछ रिसाला और दो तोपें साथ लेकर मिलमन अतरौलिया पर चढ आया। मार्च २२ को दोनों सेनाओं की मुठभेड हुअी। क्रांतिकारियों को अेक क्षण भी फुरसद न देते हुअे मिलमन टूट पडा। तब क्रांतिकारी अुस के सामने कहाँ तक टिक सकते! अिस धावे में अुनकी पूरी हार हुअी। तो कुँवरसिंह की सब शेखी धरी ही रही। अगली रातभर अितना फासला चलकर थकने पर-भी जिस अंग्रेज सेनाने अितना जोर दिखाया वह प्रशंसा के योग्य है।

ब्रिटिश सैनिको! अपना खून बहा कर तुमने यह विजय प्राप्त की है; अच्छा, तब अिस अंबराव की शीतल छाया में मजेसे नाश्ता करो। सब ओर सशस्त्र पहरे बिठा कर नाश्ते की तैयारियाँ हुअीं। भूके मुँह पहला ही कौर चबा रहे थे, शराब के जाम लबालब भरे थे--अितने में:--

धडाम! साँय साँय! क्या है यह गडगडाहट--? मुँह का कौर गिर पडा, मुँह लगा जाम खिसक गया, नाश्ते की तय्यारियाँ चूर चूर हो गयीं, 'हाय' कर अभी रखे हथियार अुठा कर सुसज्ज होना पडा! कहीं कुँवरसिंह तो नहीं आया? अरे हाँ, कुँवरसिंहही? मदोन्मत्त हाथी के गंडस्थल पर जिस तरह वनराज झपटता है अुसी तरह वह अंग्रेजों पर टूट पडा। मॅलेसन लिखता है--"सच्चे सेनानी को और क्या चाहिये था। सब कुछ मनचाहा अुसे मिल गया था। निश्चित विजय का मौका देख कुँवरसिंह झपटा। × मिलिमनने घेरे से छटक जाने के लिअे जोर से हमला करने का बहाना किया। किन्तु गन्ने के खेतों, आम के पेडों तथा मेडों से गोलियों की बौछारें सरसराती थीं। कुँवरसिंह के पास अिसबार मिलिमन से पाँच छः गुना सेना थी।

× मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४, पृ. ३१९.

मिलमन को चारों ओर से घेरे जाने का डर हुआ तब उसने अपनी चढ़ाओी समेट-सी ली। ब्रिटिश सेना अब, होश काफ़ूर होने से, पीछे हटने लगी। वृक युद्ध का मजा अब आया। फैले हुअे गोरों को गोली से उड़ाते हुअे तथा अंग्रेजी दस्तों पर हमले करते हुअे कुँवरसिंह के सैनिक मंडराना लगे। अिस तात्कालिक विजय से कुँवरसिंह बौखलाया नहीं। पीछे हटनेवाले शत्रुपर उसने सब मिल कर जोरदार हमला नहीं किया। क्यों कि, अपने अनुयायियों की सच्ची क्षमता वह जानता था। आमने सामने डटकर लड़ने में उनके टिके रहने में संदेह था। अिसी से उसने वृकयुद्ध ही अधिक पसंद किया; अिस प्रकार शत्रु-सेना को खदेड़ते हुअे अतरौलियासे कोसिला तक पहुँचा दिया।

किन्तु, कोसिला में अंग्रेजी सेना को सुरक्षित आसरा कहाँ मिलेगा? उसकी हार के समाचार उस के पहले पहुँच चुके थे। अिसी से वहाँ के हिंदी नौकर उनकी देखभाल में होनेवाले मवेशियों तथा अन्य सामग्री के साथ निकल गये थे। न कोअी नौकर, न रसद; भेड़िया सी पीछे पड़ी कुँवरसिंह की सेना! सब सोचकर मिलमनने चतुरता दिखायी और वह ठेठ आजमगढ़ तक पीछे हटा। यहाँ आकर उसे आशा बंधी, क्यों कि उस के स्वयं संदेश के अनुसार कर्नल डेम्स के मातहत गाजीपुर और बनारस से आये हुअे ताजादम ३५० सैनिकों की सहायता उसे मिली थी। तब आजमगढ़ के अड्डे से, उपर्युक्त सभी सजोगों को देख, अपने अपमान का बदला लेने का सब ने निश्चय किया।

उस के अनुसार कुँवरसिंह से बदला लेने २८ मार्च को, कर्नल डेम्स आजमगढ़ से आगे बढ़ा। किन्तु फिर अितिहास का पुनरावर्तन हुआ और नये सेनानी के आधिपत्य में बढ़े ताजा-दम सैनिकों के छक्के छूट गये और कर्नल साहब फिर वहीं पहुँचे जहाँसे आगे बढ़े थे। आजमगढ़ की घुसचन्दी का सहारा उन्हें लेना पड़ा। अब कुँवरसिंह पर चढ़ जाने की बात धरी रही। कुँवरसिंह ही ठेठ आजमगढ़ में घुसा, वहाँ गढ़ी में आसरा लिये अंग्रेजों को भूखों मरा कर सफाया करने का काम कुछ लोगों को सौंपकर वह विजयी वीर बनारसपर चढ़ गया।

अिस समय गवर्नर जनरल कॅनिंग अिलाहाबाद में था। कुँवरसिंह की क्षमता, धैर्य तथा युद्ध की कार्यवाही में समय का महत्त्व जानना, अिस बात से कॅनिंग अच्छी तरह जानकार था, जिस से आगामी संकट की आहट असने पहचानी। ×

आजमगढ़ में अभी अभी गोरी सेना को अस ने बंद कर रखा, थकित करनेवाली फुर्ती से ८१ मीलों का अंतर तय कर, अिलाहाबाद और कलकत्ते का सबंध तोड ने के लिअे कुँवरसिंहने बनारसपर हमला किया था। अिसी समय लखनअू के भगोडे क्रांतिकारी भी वहाँ अससे मिले। धीरज खोये परेशान अनुयायियों को फिरसे अुत्साहित कर, अुन्हें फिरसे अनुशासित संगठन में पिरोने की कुँवरसिंह की अद्भुत क्षमता को कॅनिंग पूरी तरह पहचानता था। क्रांति के पूर्वार्ध में कलकत्ते के आसपास के प्रदेश में क्रांति के फैलने के पहले ही अुसे कुचल दिया गया; अिस का अेकमेव कारण था, सिक्खों के बलपर बनारस और अिलाहाबादपर अंग्रेज़ों का दृढ कब्जा रखना। अुस गँवाये मौके को फिरसे हथियाने के लिअे बनारस और अिलाहाबाद पर कुँवरसिंहने आक्रमण किया। तब कॅनिंगने अुसके मुकाबले के लिअे लॉर्ड मार्क कर को आज्ञा दी।

क्रीमिया के युद्ध में प्रसिद्ध तथा भारतीय यौद्धिक तंत्रसे परिचित महान् योद्धा लॉर्ड कर, पांचसौ सैनिक तथा आठ तोपें लेकर आजमगढसे ८ मिलोंपर आ खडा हुआ। दिनांक ६ अप्रैल को सबेरे ६ बजे अुसने चढाअी का महूरत किया। अुसे पता लगा कि अुसकी गतिविधिपर कुँवरसिंह के लोगों की नजर है। किन्तु यह बात न जानने का बहाना कर अुसने अपनी सेना को 'होशियार' का हुकम दिया; और कुँवरसिंह के बाअें पासेपर हमला किया। अुसके सैनिकोंने भी डटकर मुकाबला किया। अुस घमासान युद्ध में अपने प्यारे सफेद घोडेपर सवार वह बूढा 'कुमार' दिख पडा। शत्रुको डरा देने की अपने सैनिकों की सख्या असीम बताने के लिअे नौकरों को भी अुसने भरती कर

× मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४, पृ. ३२१.

लिया था; किन्तु अपनी सेना की सच्ची शक्तिको पूरी तरह जान कर, कुँवर-सिंहने अपनी वीरता, धीरज, तथा चतुरता के बूतेपर ही झगडा चालू किया।

मार्क कर पर हमला करने के लिअे अपनी सेना को विभागों में बाँटा। शत्रुकी तोपें भीषण आग अुगल रही थीं किन्तु अुन्हें बंद करने के लिअे अुस के पास अेक भी तोप न थी; फिर भी मार्क कर की पिछाडी पर घूम जाने में वह सफल हुआ। कुँवरसिंह के अिस चालसे शत्रु के सभी अिरादे मिट्टी में मिल गये, क्यों कि फिर अुसे अपनी तोपें हटानी पडीं। अिससे क्रांतिकारियों को, मानों, चढाअी की सूचना मिली और विजय के नारे लगाते हुअे वे आगे बढे। अंग्रेजों की पिछाडी पर कुँवर-सिंहने अैसा दबाव डाला कि अुनके हाथी तितर बितर भागने लगे। जीवित रहने की आशा पूरी तरह नष्ट हो जानेसे अुन के महावत भी हाथियों के गले में चिपक गये और अन्य नाकर जिधर रास्ता मिला अुधर भाग खडे हुअे फिर भी मार्क कर कहता रहा 'ठहरो, अब भी विजय मिलेगी' क्रांतिका-रियों की अगाडी के कुछ घर जो अुसने हथिया लिये थे। किन्तु अुस की पिछाडी साफ टूट गयी थी।

अुधर कुँवरसिंहने आग लगाना शुरू कर दिया। अुसे देख कर मार्क कर आजमगढ की ओर पीछे हटने लगा। अुसने सोचा क्रांतिकारियों पर विजय न सही आजमगढ में बंद गोरों को सहाय पहुँचाने का काम तो करेगा। अुस की तोपोंने अिस बार अच्छा काम किया, क्यों कि कुँवरसिंह के पास अेक भी तोप न थी। आधी रात में, लॉर्ड कर अपनी सेना आजमगढ पहुँचा सका। यह लडाअी, अुस के लिअे चतुरता की चालें, कुँवरसिंह की भूलें और वे अडचनें जिस का सामना अुसे करना पडा—अिन सब बातों पर प्रकाश डालते हुअे मॅलेसन कहता है, "कुँवरसिंह व्यूहबाजी की अपेक्षा युद्ध-निपुणता में अधिक चतुर था। अुसने चढाअी की योजना की बडी सुंदर रचना की थी, किन्तु अुस पर अमल करते हुअे अुसने कअी बडी भूलें कीं। मिलमनने अुसे अनपेक्षित बडा अच्छा मौका दिया था। कुँवरसिंह जो चाहे अुसे कर सकता था। अंबराव में नाश्ता करने अतरौलिया के पास जब मिल-

मन की सेना ठहरी, तब अुन का आजमगढ से संबंध काट देना अुस के लिअे आसान था, किन्तु अुसने सामने से हमला करना पसंद किया और जब मिलमन पीछे हटने लगा तब अुसने जोरदार पीछा नहीं किया। अेक सुयोग्य सेनानी ने अुन्हें और खदेडा होता। आजमगढ में आसरा लिये मिलमन की नाकाबन्दी के लिअे थोडी सेना कुँवरसिंहने रखनी चाहिये थी, शेष सैनिकों के साथ बनारस की ओर बढना चाहिये था; और मोर्चा बांधता तो लॉर्ड कर से मुकाबला करने में और सुविधा होती। बादमें मालूम हुआ है, कि अुस के पास लगभग १२००० फौज थी और अिन के मुकाबले में लॉर्ड कर के मातहत कुछ लोगों के बिना और सेना न थी। अुस ने हाथ पॉव फैलाये होते तो सब कुछ अुसकी पहुँच में था; । हॉ, वह अवश्य सुयोग्य था; हो सकता है अुसने अिन सब मौकों को भॉपा भी होगा। किन्तु प्रसंग का परमेश्वर वह था नहीं। अुसके पास अपने दस्तों के साथ जो आता; वह हरअेक अपनी ही योजना पर हठ करता। परिणाम यह होता कि कुछ समझौता कर लेना पडता। "*

हॉ, तो लॉर्ड कर को केवल पूरी विजय से ही नहीं आजमगढ को सहायता पहुँचाने से भी हाथ धोना पडा। क्यों कि, अब तक आजमगढ क्रांतिकारियों ही के हाथ में था और आसपास के सब प्रदेश पर भी अुन का अच्छा प्रभाव था। कुँवरसिंह में सेनापतित्व के जो अुत्कृष्ट गुण थे; वैसे शायद ही किसी दूसरे में पाये जाते है। अपने सैनिकों के स्वभाव तथा क्षमता को पूरी तरह पहचाननेवाला ही सच्चा सेनापति होता है, कुँवरसिंह में यह गुण था। अपने शत्रु का संख्याबल तथा युद्धशक्ति को जहॉ वह बिलकुल ठीक ताड लेता; वहॉ अपने अनुयायियों के गुण–अवगुणों को भी ठीक तरह जान लेता था। यही कारण था कि अुसने अंग्रेजों को आसरा देनेवाले किले पर सीधा हमला न किया। अुसने सूक्ष्म निरीक्षणसे देखा था कि डर या आतंक, चाहे जिस कारण से हो, सिपाही किसी भी संकट का सामना करने को सिद्ध

---

* मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४, पृ २२६–२२७.

होते हुअे भी अंग्रेजी संगीन से डरते थे। आरा और लखनअू के घेरों में यह बात सिद्ध हो चुकी थी। अंग्रेज किले से बाहर जाने की सम्भावना न रहने देकर वह अपने मन में शत्रु का सत्यानाश करने की अेक अनोखी योजना बना रहा था। १८५७ की क्रांति में शामिल हुअे लोगों में दो प्रवृत्तियों के लोक स्पष्टतया दिखायी पडते थे। अेक वे, जो समरांगण में काल के गाल में कूदने को सिद्ध थे और जो पूरे अनुशासन पर चलते हुअे डट कर लडते थे, चाहे सामने तोप होया तलवार। दूसरे वे थे, जो देश पर बलि चढाने को अुत्सुक होते हुअे भी अपनी अिच्छा पर अमल करने का धीरज नहीं रखते थे, जिस से डट कर लडने के ठीक समय पर पीछे पग धरते और पराजित हो जाते। कुँवरसिंह ने पहले वर्ग के लोग चुनचुन कर अिकठ्ठे किये, जो रण में परख गये थे; अुनके अलग दस्ते बनाये थे। चाहे जिस बाँके प्रसंग में काम आनेवाले विश्वास योग्य चुनिन्दे लोगों के दस्ते बन जाने पर, कुँवरसिंह ने अपनी साहसी तथा अनोखी योजना पर अमल करना तय किया और अिन दस्तों को तानू नदी के पुल पर मोर्चा लेने की आज्ञा दी।

क्यों कि, अिसी छोटेसे पुलपर होकर, जनरल लुगार्ड आज आजमगढवालों को छुडाने के लिअे, जानेवाला था। लुगार्डने पहले तो यही माना, जो बिलकुल स्वाभाविक था, कि अिस पुलपर डटने का मतलब यही होगा कि आजमगढ शहरपर क्रांतिकारियों का कब्जा बना रहे। "किन्तु", मॅलेसन कहता है "अुस चतुर नेताने जो योजना बनायी थी अुसकी गहराअी का अंदाजा अुसके साथी भी न लगा सके।" यह गहरी चालभी, शत्रु के सामने यह दिखावा करने की, कि जानपर खेलकर आजमगढ की रक्षा की जा रही है। अिस तरह अंग्रेजों पूरा ध्यान अिस ओर आकर्षित होगा और अिसी में जब व्यस्त होंगे तब सीधे जगदीशपुर पर चढाअी करें। सैनिकविद्या के अनुसार यह योजना अद्वितीय चतुरतावाली थी—आजमगढसे गाजीपुर, वहाँसे गंगा को तैरकर पार होना, फिर जोरदार हमला कर जगदीशपुर फिरसे जीतना—और अुस संकट को जानकर कि लुगार्ड पीछा करेगा और धोखा दी हुअी आरा की अंग्रेज सेना सामनेसे हमला करेगी! अिसी महान साहसी योजना की पूर्ति के

लिअे ही अुसने अपने चुनिन्दे वीरवरों को पुलपर डट जाने को कहा था। आज्ञा यह थी, वे वीरवर तबतक पुलपर लुगार्ड को रोके जबतक कि अन्य सब सेना-विभाग आजमगढ छोडकर अंग्रेजों की दृष्टि बचाकर गाजीपुर के मार्गपर चल दें। गाजीपुर पहुँचकर गंगापार अेकबार हो जाय तो फिरसे यह शेर अपने जगदीशपुरके जंगलमें घुस जायगा और तब अंग्रेजोंको सब काम शुरूसे प्रारंभ करना होगा; क्यों कि, गत १२ महीनों में अुन्होंने जो कुछ कमाया वह सब नष्ट हो जायगा।

तानू नदीपर डटे हुअे वीर सैनिको! किन्तु, अिस सारी योजना की यशस्विता की कुंजी तुम्हारी वीरता है। शत्रुकी नजर से बाहर कुँवरसिंह सारी सेना के साथ, जबतक छटक न जाय तबतक लुगार्ड को पुलपर पग न धरने देना। तुम्हारे नेताने तुम्हे अिसी लिअे चुना है कि तुम किसी भी दशा में पीछे न हटोगे और अिस विश्वास को निबाहना तुम्हारी आन है! अेक भान, अेक ध्यान, अेक आन तुम्हारी हो—जबतक कुँवरसिंह अपनी सारी सेना के साथ शत्रु को झाँसा देकर निकल नहीं जाता तबतक पुल शत्रु के हाथ न जाय; तुममें से अन्तिम वीर जीवित हो तबतक अिस आनको निबाहना! अरे नहीं, वह आखरी सिपाही मारा जाय तो, अुसी क्षण, अपनी साधना को पूरी करने के लिअे वह फिरसे जनम लेकर वहीं झूझता रहे! लुगार्ड ने छोटेसे क्रांतिकारी दस्तेपर ताबडतोड हमले किये किन्तु वह अेक क्षण भी पुलपर जम न सका। हर बार डटकर मुठभेड होती और हर बार अंग्रेजों को रुकना पडता। कुँवरसिंह के आजमगढ पहुँचने और गाजीपुर के मार्गपर चलने में सफल होने का अिशारा मिलने तक वे 'मृत्यु-दल' के वीरवर चप्पा चप्पा भूमिके लिअे लडते रहे। कर्नल मॅलेसन कहता है:—" मँजे हुअे वीरों के समान अुन्होंने अिस नावों के पुल की रक्षा जीवट और निर्धार से की और अुनके साथी सुरक्षित स्थानमें पहुँचनेके लम्बे समय तक प्रतिकार कर वे हट गये। * " अिस तरह अिस 'मृत्यु—दल' ने अपना मन्तव्य पूर्ण

* मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४, पृ. ३२४.

किया, फिर अनुशासनपूर्वक वे हट गये और, जैसा कि निश्चय था, कुँवरसिंह के पास पहुँच गये ।

अेकाअेक पुलपर से प्रतिकार बंद हुआ देख लुगार्ड आगे घुस पडा; किन्तु देखता क्या है, कि वहाँ कोअी नहीं है; कुँवरसिंह की समूची सेना साफ निकल गयी है, मानों, सब जादूसे पैदा हुअी थी और अुसी के समान अब गायब ! अिस अदृश्य सेना की खोज के लिअे अुसने गोरे रिसाले तथा घोडे पर जानेवाली तोपों को भेज दिया । १२ मीलोंतक वे बेतहाशा दौडे; किन्तु व्यर्थ—और आगे बढे तब अुन्हे पता चला, कि कुँवरसिंह अैसी सुरक्षित जगह में पहुँच गया था, जिस के भागनेवाले तथा पीछा करनेवाले कौन है अिसमें संदेह हो । शत्रु को देख क्रांतिकारी नहीं डरे, अुलटे क्रांतिकारियों के दर्शन होते ही अंग्रेजी दस्तों का मस्तिष्क चकराने लगा । कुँवरसिंह की सेना अपनी नंगी तरवारें सँवारे और अपनी तोपों के मुँह शत्रु की ओर किये खडी मिली । अिस भिडन्त में होनेवाला अेक अंग्रेज अफसर कहता है "अितने भारी बल के सामने अपने आप को सम्हालने से अधिक हम क्या कर सकते थे ? हमारे रिसाले ने तुरन्त हमला किया किन्तु वे अेक चौकोर बनाकर हमें गालियाँ दे कर आगे बढने को बारबार ललकारते रह ।" और जब सचमुच अंग्रेजों ने आगे बढने की धृष्टता की तब अुनका अैसा तो गरम स्वागत हुआ कि सैनिक तो क्या अफसर भी वहीं ढेर हो गये । कुँवरसिंह के चौकोर अभेद्य रहे और अंग्रेज बचाव पर मजबूर हुअे । फिर कुँवरसिंह आगे बढता गया और गंगा के पास पहुँचने लगा ।

अंग्रेजों की फजीहत के समाचार आजमगढ पहुँचे । जनरल डगलस और पांच छः तोपें ले कर अुनकी सहायता के लिअे दौड पडा । डगलस कुँवरसिंह की तलवार की पैनी धार को चख चुका था, जिस से वह सतर्क होकर चक्कर काटकर नघअी गाँवतक पहुँच गया । अिधर कुँवरसिंह भी स्वागत के लिअे सिद्ध था । अपनी पहुँच में अंग्रेज आये देख अपने मृत्यु-दल के वीरों को अुनपर छोड दिया और शेषसेना के दो भाग कर दो भिन्न मार्गों से गंगा

किनारे भेज दिया। अिधर यह प्रबध चुपचाप हो रहा था, तबतक अुसके विशेष दल ने जोरदार चढाअी चालू रखी। अंग्रेजी तोपें अुन्हें घास की तरह जला रही थीं; अुनके पास तोपें न थीं। फिर भी वे विचलित न हुअे, अुन की हरावल भी न टूटी, न अुनके हमले का जोर कम हुआ। चार मील तक यह ज्वलन्त युद्ध जारी रहा। जब शत्रु के थक जाने के आसार दीख पडे, तब दो भिन्न मार्गोंसे जानेवाली सेना अें मिल गयीं और बेरोक आगे बढने लगीं; राजा कुँवरसिंह फिर गंगा की ओर आगे बढने लगा।

अतुस गाँव के पास १७ अप्रैल १८५८ को यह थका हुआ अंग्रेज दल रातमें रुका। सबेरे अुठ कर डगलसने सोचा कि क्रांतिकारियों के आगे वह निकल नहीं पाया है तब फिर आगे बढने चला—किन्तु कुँवरसिंह अुस के आगे १२ मील निकल जाने का पता चला। सारा ब्रिटिश रिसाला और तोपखाना कुँवरसिंह का पीछा कर रहा था; किन्तु पैदल सेना, थकावट के कारण, आगे बढने में असमर्थ थी, जिस से और अेक रात अुन्हें आराम दिया गया। कुँवरसिंह के गुप्तचर अंग्रजों की छोटी—मोटी हलचल तथा स्थान के बारे में संवाद लाने के काम में बेजोड थे। अुनके थकावट का संवाद देने वे न चूके। अुस बुढे अस्सीवर्ष के कुँवर ने अैसा मौका हाथ से न जाने देने के लिअे आधी रात को वह चल पडा; सिकंदरपुर को पहुँचा और घाघरा नदी पार हो कर गाजीपुर के प्रदेश में गया। ठेठ मनहर गाँवतक पहुँच कर अुस देशभक्त नेताने हर साहसी योजना को सफल बनाने में सहयोग देने को सदा सिद्ध रहनेवाले थके, भूखे अपने सैनिकों को आराम के लिअे ठहराया। कुँवरसिंह ने ताड लिया था, कि अुस समय अुसकी दशा दुबली थी, फिर भी वहाँ थकावट न अुतारना मानवी सहनशक्ति के परे था। डगलस को पता चलते ही वह दौडता हुआ मनहर तक पहुँच गया और अेकदम धावा बोल दिया। थके हुअे सैनिक अिस जोरदार हमले के आगे टिक न सके और वे हार गये, जिस से कुँवरसिंह के हाथी, गोलाबारूद और रसद सब शत्रु के हाथ चले गये। हाँ, अुसका अुत्साह पहले के समान अजिंक्य और अदम्य रहा। जब अुसने देखा कि पासा पलट रहा है, तब अुसने अपनी पुरानी रणनीति

पर चलना तय किया। अपनी सेना के छोटे छोटे दस्ते बनाये, मैदान से हटा लिअे और भिन्न भिन्न मार्गों से भेज दिये और अिस तरह शत्रु को पीछा करना असम्भव कर छोड़ा। हर दस्ते के नेता को निश्चित समय पर, निश्चित स्थान में पहुँच जाने का आदेश अुसने दे रखा था, जिस से फिर सब सेना अिकट्ठी हुअी और फिर से अपने निश्चित मार्ग पर चलने लगी। अैसे तो अंग्रेजों की जय हुअी, किन्तु शत्रु कहाँ गया और अुस का क्या हुआ अिस का कुछ भी पता न मिलने से मनहर ही में अुन्हे डेरा डालना पडा। अिधर कुँवरसिंह की सेना गंगा किनारे लगभग पहुँच गयी थी।

पास, और पास, गंगा के किनारे और नजदीक! अरे, अब तो कडी शर्त जीत कर गगा किनारे भी वह पहुँच गया। अंग्रेज सेना भी अुसका पीछा कर रही थी। कुँवरसिंह की सेना बहुत थोडी रही थी; अैसी दशा में शत्रु से भिडना लाभकारी न था, यह देखकर अुसने और ही दाँव रचा। प्रांत भर में अेक अैसी गप अुसने अुडा दी कि किश्तियों की कमी के कारण कुँवरसिंह बलिया के पास हाथियों पर से गंगा पार होनेवाला है। अंग्रेज दूतों ने सेनापति को यह संवाद दिया। अपने गुप्तचरों की कला पर प्रसन्न हो कर अुसने अुनकी प्रशंसा की। 'मेरे गुप्तचरोंने मेरा शत्रु-विद्रोहियों का महान् नेता-किस स्थान पर गंगा अुतर जायगा यह ठीक जानकारी मुझे दी है; अब देखता हूँ कैसे वह अपना अिरादा पूरा करता है;। मालूम होता है अुसके हाथियों तथा सेना के साथ वह गंगालाभ करने जा रहा है।' अैसी शेखी बघारते हुअे गोरे सैनिकों के साथ डगलस बलिया गया और कुँवरसिंह के भारी हाथियों पर टूट पडने के लिअे ओट बनाकर छिपा रहा। अंग्रेज बहादुरो! आगामी विजय के मोदक मनमें खाते हुअे तुम मजे करो; तुम्हारे शत्रु के पहुँचने तक बलिया के पास छिपे रहो! अरे-किन्तु वहाँसे ७ मील पर कुँवरसिंह गगा पार कर रहा है। बलिया और हाथी की कल्पित कहानी से कुँवरसिंह आवश्यक किश्तियाँ प्राप्त कर सका और रातही रातमें शिवापुर घाट से पवित्र भागीरथी से पार होने लगा। झाँसा दिये शत्रु को जब अिस बातका पता लगा तब वह आग बबूला हो कर बलिया से शिवापुर घाट को दौड पडा। और

कुँवरसिंह की कमसे कम अेक किश्ती पकडने में वह सफल रहा। कुँवरसिंह की वह अन्तिम नाव थी। लगभग सब सेना परले कॉठे पहुँच भी चुकी थी। और यह निश्चित कर कि सब कुछ ठीक हुआ है, कुँवरसिंह भी अब गंगापार हो गया होता। हाय! किन्तु जब वह राष्ट्रवीर, वह शूर और अुदारतापूर्ण मानी महाभाग, वह स्वाधीनता का पराक्रमी खड्ग कुँवरसिंह मझ धार में था तब शत्रु की अेक गोली सॉय सॉय करती आयी और अुसकी कलाअी में घुस गयी। अस्सी साल का बूढा होने पर भी अुसे अुसकी परवाह न थी; किन्तु जब सारा हाथ निकम्मा होनेका भय हुआ, तब अुसने अपने ही दूसरे हाथसे तलवार अुठाई और कुहनी तक घायल हातको तोडकर गगामें फेंक दिया और कहा 'गगामैया! तुम्हारे प्यारे पुत्र की यह अन्तिम बलि! माता अिसे स्वीकार करो।'

'गगामैया!' पुकारनेवाले अनगिनत जीव है; किन्तु कुँवरसिंह के समान असाधारण वीर पवित्र गंगा को माता कहकर अुस की कोख को सुफलित करने और चमकानेवाले होते हैं। आकाशमें अनगिनत तारे चमकते है; किन्तु अेक मात्र चॉद ही अुसकी शोभा बढा कर अुसे रमणीय बनाता है—अेकश्चन्द्रः स्तमो हन्ति, नच तारांगणोऽपिच।

गगामैया को अिस तरह भोग लगा कर यह कुलभूषण अंग्रेजी सेना से और किसी प्रकार कष्ट न पाते हुअे गगा पार हुआ। अुस शिकारी की तरह, जो अपने शिकार को ऑखों के सामने छटकते देखता है, छटपटाते, हाथ मलते अंग्रेज रह गये, अुनकी शेखी चूर चूर हो गयी थी; अुनका मन्तव्य अधूरा रह गया था। क्यों कि; गगा पार होनेकी हिम्मत अुनमें न थी। व्याध के ताने हुअे भाले की पहुँच से दूर और अुसके जाल को तोड छूटे हुअे शेर की तरह कुँवरसिंह भी शाहबांद के जंगल मे फॉद कर जगदीशपुर पहुँच गया; २२ अप्रैल को वह अपनी राजधानी में पहुँचा। अिसी राजधानी से अुसे आठ महीनों के पहले खदेडा गया था। फिर अब वीर राणा कुँवरसिंह अपने सिंहासनपर बिराजमान हुआ। स्वदेशाभिमानी किसानों का दल साथ लेकर कुँवरसिंह के पहले गंगा पार हुआ अुसका भाअी अमरसिंह भी वहाँ आ पहुँचा। अुस को, सेना का ठीक

विभाजन कर, राजधानी की रक्षा का भार सौंपा गया और पहले की तरह दृढ-निश्चय तथा निर्भीकता से अुसने फिरसे भीषण रण का प्रारंभ किया।

फिर संग्राम छिडा। जगदीशपुर में कुँवरसिंह विद्युत्वेग से तथा साहस के साथ घुसा था, जिस से जगदीशपुर पर कडी निगरानी रखने के लिअे ही आरा के पास खास कर डेरा डाले ब्रिटिश सैनिकों का ध्यान जाने के पहले ही वह आरापर चढ आया थो। शत्रु के अिस चकमे से आरा का कमांडर लेग्रांद् आग बबूला हो गया। पूरबी अवध में डेरा डाली हुअी अंग्रेज सेना को झाँसा देकर यह बागी राजा जगदीशपुर में जाता है, और अपने पूर्ववैभव से फिर राज भी करने लगता है! कैसी अुच्छृंखलता! और वह भी पास होनेवाली अेक ब्रिटिश सेनापति की छाती पर मूंग! दलते हुअे! क्या ढिठाअी! अभी आठ महीने भी नहीं हुअे जनरल आयरने अुसे अिस जंगल से भगा दिया था न? जो हो, आयर के समान ले ग्राँद् भी अिस बागी राणा का आखेट कर अुसे अवश्य भगा देगा। सो, २३ अप्रैल को ४०० गोरे सैनिक तथा २ तोपों के साथ ले ग्रॉद् ने अभागे जगदीशपुर पर हमला किया। अब कुँवरसिंह अिसका मुकाबला कैसे करे? गत कअी महीनों से यह बूढा वीरवर छिनभर भी आराम न करते हुअे मैदान में डटा हुआ था। अुस के सैनिकों को शांतिपूर्वक भोजन या सुख से नींद प्राप्त करने की फुरसद ही न मिली थी। पूरबी अवध में अभी, संहारक घमासान युद्ध से निपट कर, कल कुँवरसिंह यहाँ पहुँचा है और अुसकी सेना को पूरा अेक दिन का आराम भी नहीं मिला है। स्वयं अंग्रेजों के सरकारी विवरणों से मालूम होता है—'अुस की सेना, बिखरी हुअी बेतरतीब, शस्त्रास्त्र अपर्याप्त और बिना तोपखाने के पंगु बन गयी थी।' अधिक से अधिक अेक सहस्र सैनिक अुस के पास होंगे और अुन का सेनापति ८० वर्षोंका का बूढा कुँवरसिंह काटे हुअे हाथ के प्राणघातक प्रसंग से दुबला था। अैसी दशा में ले ग्रॉद् के नेतृत्व में ब्रिटिशों के ताजा-दम तथा अनुशासन मे मँजे हुअे दस्तों की चढाअी तोपों के साथ हो रही थी, जिस से लडाअी का परिणाम पहले से कूता जा सकता था। अिस पक्के विश्वास से शहर से डेढ मील पर होनेवाले जंगल में ब्रिटिश दस्ते घुस पडे! अुन की तोपें धडधडाने लगीं

किन्तु अुन के मुकाबले में क्रांतिकारियों के पास तोपें ही नहीं थीं । क्या पता है, अैसी दशा में भी अुस घनघोर अरण्य में चारो ओरसे क्रांतिकारियों की सेना हम पर हमला करने को, वह बूढा कुँवरसिंह, भेज दे ? डर है, हमारे घेरे जाने का ! तो फिर चलो शुरू करें वह साहसी संगीनों का हमला, जिस से अेशियाअी हिम्मत हारते हैं, डरसे कॉंपने लगते हैं । घुस पडी गोरी सेना, आज्ञा होते ही, बडे वेगसे । कुँवरसिंह के सैनिकों ने प्रतिकार किया । और भगवान जाने क्यों, तात्काल साहसी गोरे सैनिकों का दिल बैठ गया और 'पीछे हट' का हुक्म दिया गया ! कुँवरसिंह के सैनिकोंने गोरे सैनिकों को चारों ओरसे दबोचा था । पीछे हट की आज्ञा के सुर मारू बाजे बोल रहे थे, किन्तु पीछे हटना भी तो अब खतरे से खाली नहीं था । अिस से तो लडते हुअे मर जाना, बेहतर था । हे ब्रिटिश बहादुरो ! जब पिछेहट या डटकर लडना दोनों हानिकर हैं, तब आजतक तुमने जिस 'अटूट धैर्य गोरों की खासियत' होने की डींग मारी थी अुसका परिचय, डटकर लडकर, अब दे सकते हो। हाँ चाहे तुम अपनी शेखीको निबाहो या न निबाहो, यहाँ तो यःपलायति स जीवतिवाला मामला है! और सचमुच, व्याध के आगे कुलॉंच भरनेवाले हिरनके समान गोरे भागने लगे। जिधर पॉंव ले जाय वे जंगलसे भागते थे, क्रांतिकारी अुनका डटकर पीछा करते थे । सब गोरी सेना तितर बितर हो गयी । अिस हारी सेनामें स्वय अुपस्थित अेक व्यक्ति अपने अनुभव अेक पत्रमें यों कथन करता है:—'मै आगे जो कुछ लिखनेवाला हूँ अुसपर मैं स्वय लज्जित हूँ । समरांगणसे भाग, हम जंगलके बाहर तो किसी तरह आये, किन्तु शत्रु हमारा पीछा नहीं छोडता था। प्याससे छटपटाते हमारे लोग अेक गद्दा गढा देखकर अुधर दौडने लगे । ठीक अिसी समय कुँवरसिंह के घुडसवार हमारा सुराग लगाते आये । तब हमारी छीछालेदरकी सीमा न रही और हमारी पूरी दुर्दशा हुअी । लज्जाको सबने लात मारी और जिधर पॉंवले जायँ हम भागते गये । सैनिक आज्ञा, अनुशासन संगठण सब भाडमें गये थे । जिधर देखो अुधर, लम्बी सॉंसें, आहें, गालियॉं आर्त रुदन, और कराह—यही सब सुनायी पडता था । कुँवरसिंह हमारा वैद्यक विभाग भी हथिया चुका था, जिससे दवादारू भी क्या मॉंग ? कुछ ने तो वहीं

पैर फैला दिये, कुछ शत्रु के वारों के गाहक बने। डोलियों को मार्ग में ही त्याग कर कहार भाग गये। थोडे में सब दूर कुहराम मचा हुआ था। घायल सैनिकों के बोझ से लदे सोलह हाथी भी थक गये। सेनापति ले ग्रांद की छाती में गोली लगी और वह ढेर हो गया। पांच पांच, छः छः मील भागनेवाले सैनिकों में अपनी बंदूक अुठानेभर शक्ति न रही थी। धूप के आदी सिक्खों ने सब से पहले हाथियोंपर चढ कर पलायन किया था और अब गोरों का त्राता कोअी न रहा। अेक सौ नब्बे गोरों में से कुल ८० बच पाये। क्या ही क्रूर कत्ल! बूचडखाने के जानवरों की तरह, क्या, हे भगवान! हम अुस जंगल में लाये गये थे?।' ×

अिस तरह कुँवरसिंह की पूरी जीत हुअी। 'शत्रु की तोपों के मुकाबले में अेक भी तोप नहीं, और तिसपर भी शत्रु की यह हानि क्रांतिकारी कर सके। और तो और, अंग्रेजों की साथ लायीं तोपें भी अुन्हों ने छीन लीं।'* किन्तु अिस भगदड में अेक महत्त्वपूर्ण बात निखरती है, कि अुस दिन के मृतकों की संख्या में केवल नौही सिक्ख मारे गये दिखायी पडे। यह अुस सीख का प्रमाण है, जो कुँवरसिंह अपने अनुयायियों को सदा दिया करता—'जिस तरह विदेशी शत्रु को दया दिखाने की भूल कभी न की जाय, अुसी तरह अपने भूले भाअी शत्रुकी ओरसे लडते हों तो भी, अुन्हें जबतक बने, जानसे न मारो।' विद्रोह की पहली झपटमें अंग्रेजों का साथ देनेवाले कअी बंगाली बाबुओं को कुँवरसिंह के लोगोंने पकडा था। अुनको न केवल रिहा कर दिया गया, वरंच अुनकी अिच्छा के अनुसार अुन्हें हाथियोंपर चढा कर पटना पहुँचाया गया। अंग्रेजी भाषा में लिखे सरकारी खत-पत्रों में आग लगाने का हठ जब क्रांतिकारियोंने पकडा तब कुँवरसिंह ने अुन्हें कहककर रोका; कहा—'अंग्रेजों को भारतसे भगा देनेपर, अिन कागजों के आधारपरही

× चार्लस बॉल कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. २८८.

* अंग्रेजों को अिस प्रसग में बहुत बुरी और पूरी हार खानी पडी।' ह्वाअिट कृत हिस्टरी ऑफ दि म्यूटिनी.

लोगों के वंश-परंपरागत वारिसदारी के अधिकार तथा लोगों का आपसी पावने का सबूत ही हम नष्ट कर देंगे; अैसा कभी न करना चाहिये।×

अिस प्रकार, अपने शत्रुओं को पूरी तरह हरा कर, नयी विजयमाला को पहनकर और अपनी कीर्ति में चार चाँद लगा कर बूढे वीर राणा कुँवरसिंह का आगमन जगदीशपुर के राजमहलमें २२ अप्रैल का हुआ।

किन्तु अुस का यह अन्तिम आगमन है। अब कुँवरसिंह संसार के रंगमचपर फिरसे दिखाअी न देगा। अपने अेक हाथ से अुसने अपना दूसरा हाथ तोडा था; वह घातक सिद्ध हुआ और अिस नयी विजय से तीसरे दिन वह महान् राणा अपने राजमहल में स्वर्गवासी हुआ। स्वाधीनता का ध्वज शान से लहरा रहा था, तब स्वतंत्र और विजयी सिंहासन पर अुसने देह छोडी! अुस समय जगदीशपुर के राजमहल पर अंग्रेजों का 'युनियन जॅक' नहीं, स्वदेश और स्वधर्म का विजयचिन्ह बना स्वाधीन राष्ट्र का सुवर्णध्वज वहाँ लहरा रहा था। स्वातंत्र्य-ध्वज की शीतल छाया में अुसने अपनी लीला समाप्त की। कौनसा राजपूत अिस से बढ कर अुज्ज्वल मृत्यु की अपेक्षा करेगा? *

भारत और अुस पर हुअे अन्यायों का ठीक बदला वह ले चुका था। हाथ लगे छोटे मोटे साधनों के बल पर युद्ध में शत्रु की थूथरी ही अुसने कुचल दी थी। अपने देश और धर्म का द्रोही बन कर नीच कर्म न किया; अुलटे अेक मानव, शक्तिभर, जो चेष्टा कर सकता है वह पूरी तरह कर मातृभूमि की बेडियों को तोड कर अुसने स्वतंत्र किया और आज तो समरांगण में स्वयं विजय देवीने विजयमाला अुस के गले में पहनायी थी। हे राजपूत कुलावंतस!

× बगाल के राजपूत कान्त गुपानी कृत आर्यकीर्ति.

* अितिहासकार होम्स अपने 'हिस्टरी ऑफ दि सीपॉय वॉर' में कहता है:—'वह बूढा राजपूत, अितने सम्मानपूर्वक तथा वीरता से अंग्रेजों के लढ कर, २६ अप्रैल १८५८ को कालकवलित हो गया।'

तो अब वह पवित्र पर्व-आ चुका है । अब तुम आँखें बंद कर सकते हो। जरा से जर्जर हो कर नहीं, स्वातंत्र्यसमर में मातृभूमि के लिअे झगडते हुअे शरीर पर हुअे गहरे वारों से तुम्हारा जड शरीर अब निष्प्राण हो रहा है । पंचभूतों में विलीन हो कर संसार की मूल शक्ति में-मिल जाने का क्षण आ गया ! धन्य हो ! तुम्हारी मृत्यु भी तुम्हारी जीवनी के समान अुदात्त और अद्वितीय हो !

स्वतंत्र राष्ट्र के विजयी ध्वज के नीचे मृत्यु ! सच्चे देशभक्त को अिस से अधिक विलोभनीय और पवित्र क्या होगा ?

श्री कुँवरसिंह का व्यक्तित्व कअी पहलुओं से प्रभावपूर्ण है । साहसपूर्ण वीरता और अभिजात चरित्र से अुसकी सेनामें भी शौर्य तथा अनुशासन अपने आप पैदा हुअे थे । किसी राष्ट्र के पुनरुत्थान के झगडे के नेता का व्यक्तिगत जीवन अुस के सार्वजनीन कर्तृत्व के समान ही महान तथा विशुद्ध होना बहुत कम पाया जाता है । किन्तु कुंवरसिंह में महान् चरित्र तथा महान् कर्तृत्व का अपूर्व संगम दीख पडा । अुस के सैनिकों पर अुसका अितना प्रभाव था कि अुसके आदरयुक्त डर से अुसके सामने हुक्का पीने की हिम्मत कोअी भी न करता था। सत्तावन के क्रांतियुद्ध में रणनीति तथा युद्धकौशल में कुँवरसिंह के जोड का कोअी वीर न था। क्रांतियुद्ध में वृक-युद्ध (गोरिले वार फेअर) का महत्त्व सब से पहले अुसीने जाना। शिवाजी महाराज के वृक-युद्धतंत्र के दाँव पेंचों का पूर्णतया और समझकर अनुकरण करनेवाला वही अेक मात्रा वीर था। तात्या टोपे और कुँवरसिंह १८५७ के क्रांतियुद्ध में अग्रसर अिन दो सेनापतियों ने वृक-युद्ध-पंडित के नाते जो काम कर दिखाये हैं अुनका तुलनात्मक परीक्षण किया जाय तो कुँवरसिंह को प्रथम स्थान देना पडेगा। यह सही है कि वृक-युद्ध के विध्वंसक भाग में तात्या टोपे अपना सानी नहीं रखता था, किन्तु कुँवरसिंह विध्वंसक तथा विधायक दोनों भागों का अुपयोग करने में सिद्धहस्त था। अपनी सेना का पूरा सफाया करने या शत्रु को नयी सेना खडी करने का मौका रंच भी तात्या टोपे न देता था। किन्तु ये दोनों बातें शत्रु को न करने देकर भी कुँवरसिंह अूपर से पूरी तरह शत्रु को हराता था; और अुसी का सफाया करता था। वृकयुद्ध में अन्तिम

विजय की आकांक्षा रखनेवाले को चाहिये, कि अपने अनुयायियों की हिम्मत न हारने दें। हर बार मैदान से छटक जाना तथा प्रबल शत्रु को देख लडाअी से किनारा कसना, यह नीति अपने अनुयायियों के आत्मविश्वास को बढाने के बदले अुलटे डिगाती जाती है। नेता कुछ हेतु से जानबूझ कर हारे या किसी अुद्देश से मैदान से हटे, तो ऐसे समय ध्यान रखा जाय कि अपने अनुयायियों में अिस से किसी प्रकार की अुदासीनता तथा अविश्वास न पैदा होने पावे। बारबार लडाअी टाल कर मैदान से भाग जाना अच्छा नहीं। परिणाम यह होता है, कि अनुयायियों में लडाअी का डर पैदा हो जाता है। चतुरता से लडाअी टालना तथा परेशान हो कर मैदान से भागना–अिन में बडा अंतर है। अिसी से, डर कर मैदान से हट जाना वृक–युद्ध के तंत्र के संपूर्णतया विरुद्ध है। भिडन्त तय होते ही अितने वेगसे तथा त्वेष से लडना चाहिये, जिस से शत्रु का हृदय धडधडाने लगे और अपने अनुयायियों के अंतःकरण में असीम आत्मविश्वास बढ जाय। कुशलता अिस में है कि बेमेल भिडन्त करने को शत्रु बाध्य करे अैसे समय लडाअी न करें। किन्तु अेक बार ठन जाय तो कुँवरसिंह की तानू नदी की लडाअी की तरह जीवट से कडी होनी चाहिये। मतलब, अपना बल कम हो तो नेता को चाहिये, कि भिडने के फँदे में न फँसे। प्रतियोगी बराबर का हो तो मुठभेड हो जानी चाहिये; किन्तु अिच्छा से हो या अनिच्छा से, अेक बार रण में भिड जाय तो फिर डरसे या ढीले अनुशासन से पीछे पग कभी न धरना चाहिये, अुलटे; निश्चित अपयश या तात्काल मृत्यु का भय हो तो भी डट कर वीरता से लडाअी करें, जिस से विजय हाथ से निकल जाने पर भी कीर्ति तो किसी तरह न गँवायें। अैसी लडाअी करते रहे तो शत्रु काँप जाता है, अनुयायियों का धैर्य बना रहता है, सैनिक अनुशासन ढीला नहीं पडता, और हुतात्मता की कथाओं से स्फूर्ति में बाढ आती है। वीरता से वीरता दुगनी होती है और जश अवश्य मिलता है। वृक–युद्ध से लडनेवाली सेना या अुस के नेता के मन पर यह असर कभी न पडने की सावधानी रखनी चाहिये, कि शत्रु ने अुसकी वीरता से दबा कर अपने को डराया है। यही है कुंजी वृक–युद्ध के तंत्र की।

किन्तु वृक-युद्ध के अिस विधायक भाग भर तात्या टोपे ने ध्यान नहीं दिया। नर्मदापार करने के लिअे तात्याने तथा गंगापार होने में कुँवरसिंहने जो गतिविधियाँ चलायीं, अुनका अध्ययन बडा बोधप्रद होगा। केवल डरसे घबडाये अनुयायियों ही के कारण तात्या को कअी बार हारना पडा। किन्तु चढाअी के समय कुँवरसिंह अपनी हरावल अितनी जोरदार रखता था, कि जब कभी मौका मिलता, पीछा करनेवाले शत्रु को जोर की थप्पड दे सकता था। अिसीसे शत्रु को पीठपर रखकर भी वह जब पीछे हटता जाता तब भी अुसके अनुयायी प्रचंड आत्मविश्वास तथा स्फूर्ति से भरे रहते थे। हाँ, अेक बात न भूलनी चाहिये, कि पहली की हारसे सारी सेना का जी पहले ही बैठ गया था और युद्ध के पूर्वार्ध में बडे बडे वीराग्रणी मर या घायल होकर निकम्मे हुअे थे—अैसे कुसमय में तात्याको वृक-युद्ध का आसरा लेना पडा। अिसीसे अुसके वृक-युद्धमें विशेष निपुण तथा कुशल संयोजक होनेपर भी अधूरे साधनों के कारण, स्वाभाविक था, कि वह अपनी योजना को सफल कर न पाया। तात्या टोपे की हार का कारण था अुसके डरपोक और लचर अनुयायी! और अिसी से असफल रहनेपर भी अुसकी क्षमता पर रंच भी आँच नहीं आती। किन्तु शिवाजी महाराज के पदचिन्हों का अनुसरण करनेवाले कुँवरसिंहने अपने अनुयायियों का जी कभी न बैठने दिया, अुलटे अपने में और अुनमें अभिनव आत्मविश्वास फुलाने का जतन किया। अुसका पराक्रम, साहस तथा अनुशासन सराहनीय था। लडाअी करने तथा टालने—दोनों में अुसने असाधारण चतुरता का परिचय दिया, और, अिसीसे शत्रुको नष्टभ्रष्ट कर विजयमाला गले में पडी थी तब, स्वातंत्र्यध्वज की छत्रछायामे तथा स्वाधीन सिंहासनपर यह बूढा किन्तु असाधारण वीर भारतीय योद्धा पुण्यप्रद वीरगति को प्राप्त हुआ।

२६ अप्रैल १८५८ को कुँवरसिंह की मृत्यु हुअी। यह महान् व्यक्ति अितिहास के रगमंच से निकल जाने पर, अुस की जोड के शूर और स्वदेश-भक्त और अेक व्यक्तिने रंगमंच पर पदार्पण किया। यह व्यक्ति और कोअी न होकर अुसी का भाअी राजा अमरसिंह ही था। पूरे चार दिन का आराम भी न लेकर और लडाअी के सत्त्व को कम न होने देकर अमरसिंहने आरा पर

ही धावा बोल दिया। आरा के अंग्रेजों की हार के समाचार मिलने पर ब्रिगेडियर डगलस तथा जनरल लुगार्ड के नेतृत्व में गंगा के अिस ओर पडी सेना ने गंगा पार होकर, अमरसिंह से भिडन्त की। जब अंग्रेजोंने क्रांतिकारियों को घेरना शुरू किया तब अमरसिंहने भी औरही चाल चली। शत्रु की जीत होती देख कर, वह अपनी सेना को अलग अलग टोलियों में बाँट देता और अुन्हें फैला कर मैदान से हट जाता और अुन्हें निश्चित समय तथा स्थान पर मिलने की सूचना देता, जिस से शत्रु किसी तरह पीछा न कर सकता था। अंग्रेजों के सामने यह समस्या आ पडी कि अिस अदृश्य शत्रु से कैसे लडा जाय। ज्यों ही ब्रिटिश मानने लगते कि वे ही हर बार विजयी होते हैं, त्योंही अमरसिंह की सेना पहले के समान बलवान् तथा कार्यशील किसी और जगह दिखायी देती। जंगल के अेक छोर से खदेडी जाय तो वह दूसरे छोर पर अूधम मचाती और वहाँ से भगाने फिर पहली जगह पर कब्जा कर लेती। निदान, परेशान हो कर निराश तथा अपमानित ब्रिटिश सेनापति लुगार्ड जून १५ को सेवानिवृत्त हो कर आराम के लिअे अिंग्लैंड चला गया; अुस की सेना छावनी को लौट गयी।

और अिस से अिशारा पाकर अमरसिंह मैदान में विजयी सेनापति बन कर आ डटा। अिसी समय क्रांतियुद्ध में गया की पुलिस को शामिल कराने में नेताओं को सफलता मिली।

फिर अंग्रेजों को झूठा सुराग देकर अमरसिंह आरा पर चढ आया और शहर में प्रवेश कर गया। अिस से क्या होता है ? अब तो वह जगदीशपुर की राजधानी में प्रवेश कर रहा है। जुलाअी समाप्त, अगस्त बीत गया। सितंबर चुक गया; जगदीशपुर के बुर्जोंपर, संपूर्ण स्वाधीनता का अनुभव करनेवाली जनता का, विजयी ध्वज लहरा रहा था और प्रजाप्रिय राणा अमरसिंह सिंहासनपर विराजमान था। ब्रि. डगलस और अुस की ७ हजार सेनाने अमरसिंह को नष्ट करने का बीडा अुठाया था। यहाँ तक, कि किसी तरह राणा अमरसिंह का सिर लानेवाले को बडे बडे अिनाम घोषित किये गये। अब अुन्होंने जंगल तोडकर सडक बना ली थी। नाके नाके पर ब्रिटिश सेना

आगे बढ रही थी; कुँवरसिंह के स्थानपर आये भाअी अमरसिंह ने जरा भी चिंता न की। अुस की विविध गतिविधियों का विवरण देने को यहाँ स्थान नहीं है; किन्तु अितनाभर कहना काफी है कि अमरसिंह ने जिस जिवट और चतुरता से व्यूह रचे और लडाअी जारी रखी, अुस से लोग मानते थे कि कुँवरसिंह का देहावसान हुआ ही नहीं।

निदान, अंग्रेजों ने हर अुपाय से अिस लडाअी का अन्त लाना तय किया। सात दिशाओं से सात सेनाअें जगदीशपुर पर चढ आयीं। हर मार्ग रोका गया। राणा को मानो कटघारे में बंद किया जा रहा था। अन्त में, १७ अक्तूबर को अंग्रेजोंने जगदीशपुर को पूरी तरह घेर लिया। हाय, हाय! अिसी क्रूर कटघरे में वह स्वाधीनता-प्रेमी शेर बंद कर, मारा जायगा। निश्चित समय पर सब सेनाअें जगदीशपुर में घुस पडी और अुस असहाय सिंह को घेर कर प्रहार किया-किन्तु धन्य हो अमरसिंह, धन्य! अंग्रेजों ने प्रहार किया किन्तु कटघरे पर; खाली कटघरे पर; शेर तो कब का साफ बाहर हो गया था।

क्यों कि, ब्रिटिश व्यूह के निश्चय के अनुसार छः सेनाअें भिन्न भिन्न दिशाओं से नगर के भिन्न भिन्न भागोंपर चढ आयी थीं; सातवी सेना को आते पांच घंटे देरी हुअी। ठीक मौका ताडकर अिसी ओरसे अमरसिंह अपनी सेना के साथ साफ निकल गया।

बिहारी क्रांतिकारियों को पीस डालने का अिरादा फक् हो जाने से, छकटे हुअे क्रांतिकारियों का पीछा करने के लिअे रिसाला भेजा गया। हाथ धोकर पीछे पडे अिस रिसाले ने अमरसिंह को अेक क्षण का अवकाश न मिलने दिया। अिस समय अंग्रेजी सेना के पास नये किस्मकी राअिफलें थीं, जिन के सामने क्रांतिकारियों की तोडेदार बंदूकें बिलकुल निकम्मी साबित हुअीं, जिस से अंग्रेजी सवारों को टालना असम्भव हो गया-फिरभी अमरसिंह के मुख से शरण का शब्द नहीं निकला। १९ अक्तूबर को अंग्रेजी सेना ने नोनदी गाँव में क्रांतिकारी सेना को पूरी तरह घेर लिया; ४०० से ३०० तो

कट गये ! शेष रहे सौ क्रांतिकारी जान हथेली में लेकर खुले मैदान में शेर की तरह कूद पडे और नयी आयी गोरी सेना से भिडे। अन्त में अिनमेंसे तीन बच पाये, जिन में अेक राणा अमरसिंह था; अब तक अेक सैनिक बनकर लड रहा था। कितनी ही रक्तपाती लडाअियाँ 'पांडे' सेनाअें लडीं, कितनी खून की नहरें बहीं; किन्तु स्वाधीनता का ध्वज अबतक झुका नहीं। राणा अमर-सिंह तो अैसे बाँके संकटों से बचा था कि कहते ही बनता है; अेकबार तो शत्रु ने राणा के हाथी को पकड लिया, किन्तु राणा कूद पडा और गायब ! अिस तरह क्रांतिकारी चप्पा चप्पा भूमि के लिअे झूझते हुअे अपने प्रांत के बाहर खदेडे गये। अब वे कैमुर की पहाडियों में पहुँच गये। पीछा करनेवाले गोरों को अुस प्रांतवालोंने हमेशा तथा यथाक्रम धोखा देकर क्रांतिकारियोंकी रक्षा की। ×

शत्रुने अिन पहाडियों में भी क्रांतिकारियों का भीषण पीछा किया। हर टीला, हर अुपत्यका हर चट्टान पर क्रांतिकारी झगडते रहे। अेक भी क्रांतिकारी, पुरुष या स्त्री, शत्रु के हाथ न लगा; वह झूझते हुअे अपने देश और धर्म के लिअे खेत रहा। श्री कुँवरसिंह के रनवास की डेढ सौ स्त्रियों ने, अब कोअी चारा नहीं है यह देख कर, अपने हाथों अपने को तोपों के मुँह बाँध लिया और अपने हाथों अुन्हे डाग कर अुड गयीं—हुतात्मता के अनंतत्व में विलीन हो गयीं !

विदेशी शत्रुओंसे जन्मसिद्ध स्वाधीनता के लिअे बिहारने अैसा प्रखर तीखा झगडा किया !

और राणा अमरसिंह शत्रु के हाथ न लगा ! राज्यश्री ने अुसे छोड दिया, किन्तु अुस के अदम्य आत्मतेज ने अुसे कभी न छोडा। अमरसिंह का आगे क्या हुआ ? अपना शेष जीवन अुसने कहाँ बिताया—घबडाया हुआ अितिहास गूँजता है क—हाँ ऽ ऽ !

× मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४ पृ. ३४४

अध्याय ९ वाँ

मौलवी अहमदशाह

लखनअू के पतन से रुहेलखण्ड और अवध में क्रांतिकारियों का संगठन करने योग्य अेक भी संगठनकेन्द्र शेष न रहा। शत्रु के आक्रमक दबाव ने बिहार और दोआब के क्रांतिकारियों को दबाते हुअे अुन्हें रुहेलखण्ड और अवध के दिनोदिन संकीर्ण होनेवाले रणक्षेत्र में जमा कर दिया। सब ओर से अिस प्रकार दबोचे जाने तथा कोअी भी बलवान आश्रयस्थान न रहनेसे क्रांतिकारियों को अपना पुराना युद्धतंत्र–खुले मैदान में बहादुरी दिखाते हुअे घमासान लडाअियाँ–लडना छोडकर अब वृक-युद्ध का अवलंब करना पडा। यदि प्रारंभही से वृकयुद्ध से काम लिया जाता तो विजय के अनगिनत अवसर अुनके हाथ लगते। किन्तु, सबेरे का भूला शामको घर आ जाय तो भी अच्छा है। हाँ, विजय की आशा तो अब नहीं के बराबर थी, फिर भी अेक भी क्रांति–केन्द्र से पीछेहट की या शरण लेने की भनकार भर न सुनायी दी। अुलटे, वृकयुद्ध का अवलंबन कर झगडा जारी रखने के निर्धारसे अवध और रुहेलखण्ड के क्रांतिकारियोंने प्रांतभर में अेक घोषणापत्र प्रकट किया–'खुले मैदान में शैतानों की स्थायी सेनासे सामना मत करो, क्यों कि अनुशासन में वह तुम से श्रेष्ठ है और अुस के पास बडी तोपें हैं; किन्तु अुसकी गतिविधि पर निगरानी रखो, नदी के घाटों पर पहरा रखो,

शत्रु की डाक काटो, रसद रोको और चौकियाँ तोड दो; अुसके पडाव के आसपास मंडराते रहो; फिरंगी को चैन न लेने दो* '। मौलवी अहमदशाहने अिन्हीं सब अुपायों पर अमल किया। लखनअू होनेवाले ब्रिटिश सेनाविभाग के सुराग पर रह कर अुसने लखनअू से २९ मील के फासले पर बारी में अपना पडाव डाला। बेगम हजरतमहल छः हजार सैनिकों के साथ बोतौली में डेरे डाले थी। अिन दोनों दुश्मनों का सफाया करने के अुद्देश्य से ३००० सैनिक तथा प्रबल तोपखाना साथ लेकर होप ग्रँट पहले बारी की खबर लेने चल पडा। मौलवीने ब्रिटिश सेना का भेद जानने को अपने कुछ गुप्तचर भेजे थे। ये लोग अुसी रात को सीधे अंग्रेजों की छावनी में दाखिल हो गये। गोरे पहरेदारोंने रोका तब 'हम १२ लंबर पलटनवाले' का बहाना कर आगे बढे। और, यह सच था कि वे १२ वीं पलटन के सैनिक थे। अुसी पलटन ने गत जुलाअी में 'विद्रोह' कर अपने गोरे अधिकारियों को मार डाला था। ये लोग अिस १२ वीं पलटन के थे, यह गोरा पहरेदार क्या जाने! ये गुप्तचर शान्त और निर्भीक हो कर चल रहे थे। अुनका निश्चित अुत्तर और निडर बरताव देख पहरेदारों का सदेह दूर हुआ और अुन गुप्तचरों को आगे जाने दिया। सीधे छावनी के अदर जा, सब भेद जान, ये गुप्तचर अपने स्वामी के पास लौट गये। शत्रुकी योजना का पूरा पता मिल जाने पर मौलवीने आवश्यक प्रबंध किया और बारी से आगे चार मिलों पर होनेवाले अेक गाँवपर कब्जा कर लिया। योजना यह थी कि पैदल सिपाही अिस गाँव में रह कर शत्रुका सामना करें और रिसाला छुपे रास्ते शत्रुकी पिछाडी पर हमला करे। मौलवी को विश्वास था, ब्रिटिश सेनापति किसी आशंका के बिना, दूसरे दिन सबेरे अुसी देहातमें आ जायगा। मॅलेसन कहता है—'मौलवी की यह योजना बडी चतुरतापूर्ण थी। अुस की व्यूहरचना के ज्ञान का अिस से पता लग जाता है।'

---

* रसेल कहता है (डायरी पृ २७६). अिस घोषणापत्रने दूरंदाजी तथा चतुरता का परिचय दिया है और कितनी कठिनतम लडाअी हमें लडनी है अिसकी सूचना मिल जाती है।

अिस समय विजय प्राप्त करने के लिअे दो बातें विशेष आवश्यक थीं। अेक, अिस देहात की सेना को अत्यंत गुप्तता रखना चाहिये थी; और दूसरे, यह सेना सामने से शत्रु को पीटने तक पिछाडी रिसाला हमला न करे। जैसा कि निश्चित था, मौलवीने अपने घुडसवारों को गुप्त मार्ग से रवाना किया और स्वयं पैदल सेना के साथ अुस देहात में घात लगा कर बैठ गया। दूसरे दिन सबेरे अंग्रेज सेनानी नदी किनारे आ पहुँचा। अब केवल आध घंटे की देरी थी और अंग्रेज चक्की के दो पाटों में पिस कर रह जाते।

किन्तु यही आध घंटा मौलवी के लिअे घातक बन गया। अुसकी योजना के तीन तेरह हो गये; क्यों कि, अुस के घुडसवारों ने बेवकूफी की। अुन्हों ने गुप्तरूप से जा कर अंग्रेजों की पिछाडी पर अेक मोर्चे की जगह हथिया ली थी; और शत्रु पर टूट पडने का मौका देख रहे थे; यह सब ठीक हुआ। किन्तु, मौलवी की स्पष्ट आज्ञा को तोड कर सामने दिखनेवाली कुछ असंरक्षित तोपों पर कब्जा करने के लिअे अपने दस्ते को आगे बढने की आज्ञा अुस के अधिकारीने दी। क्रांतिकारियों ने कुछ तोपें हथिया लीं; किन्तु अिस से शत्रु को अुन का पता लग गया, अंग्रेजों ने अुन पर प्रतिचढाअी की और तोपें छीन लीं। किन्तु अिस घटना से मौलवी का किया कराया धूल में मिल गया। पिछाडी पर क्रांतिकारियों की गतिविधि देख अंग्रेज सावधान हो गये और दोनों ओर के प्रतिकार के लिअे सिद्ध हुअे। अपने घुडसवारों की अिस बेवकूफी से मौलवी को अुस देहात को छोड कर अन्य अुपाय सोचना पडा।

जब होप ग्रँट क्रांतिकारियों को अवध से बाहर खदेडने के लिअे बारी से मोतौली तक दबा रहा था, अुसी समय १५ अप्रैल को रुअियेके किले के पास कडा झगडा ठन गया था। पाठकों को स्मरण होगा कि अंग्रेजों ने दोआब में अपनी सेना को दो हिस्सों में बाँट कर अुन के द्वारा क्रांतिकारियों को फतहगढ तक पहुँचा दिया था; अिस का जिक्र हम कर चुके हैं। अिसी तरह से चारों ओर से चढाअियाँ कर क्रांतिकारियों को अवध के बाहर अुत्तरी सीमातक धकेल देने का काम शुरू हो गया था। १ अप्रैल १८५८ के आसपास गोरे

सैनिकों की संख्या ९६ हजार तक बढ गयी थी और साथ देशद्रोही सिक्खों का जोड भी था। पठान, पारिया (अछूत) तथा अन्य लोगों को भरती भी जल्दी से किया गया था; किन्तु आये दिन के युद्ध के अनुभवों से वे भी अब मँजे हुअे सैनिक बन गये थे। अूपर से देशी नरेशों की सेनाअें विदेशी अंग्रेजों की सहायता के लिअे संग्राम में हाथ बँटा रही थीं। अिस तरह अनगिनत चुने हुअे काले गोरे सैनिकों की पलटनें क्रांतिकारियों के हाथ से अवध छिनने के लिअे भरसक चेष्टा कर रही थीं। गत अध्याय में बताये के अनुसार लुगार्ड और डगलस को बिहार, होप ग्रँट को बारी ओर बोतौली तथा वॉलपोल को गंगा के किनारे पर चढाअी करने की आज्ञा हुअी थी। प्रधान सेनापति के नेतृत्व की पलटनें तथा अन्य सभी सेना क्रांतिकारियों को ठेठ रुहेलखण्ड में धकेलने के लिअे जोरदार हमले कर रही थी। अिस कार्यक्रम के अनुसार लखनअू से ५१ मीलोंपर होनेवाले रुअिया के किले पर चढाअी करने के लिअे जनरल वॉलपोल १५ अप्रैल को आया था।

रुअिया का किला भारी न था और किलेदार नरपतसिंह भी बलवान् न था। किन्तु अिस जमींदार ने अपना सर्वस्व स्वाधीनता की रणवेदी पर चढाने की प्रतिज्ञा कर राष्ट्र के पुनरुद्धार के लिअे आगे पग धरा था। वॉलपोलने समझा, केवल २५० सैनिकों के साथ दुर्ग की रक्षा करनेवाला नरपतसिंह, अद्यावत् (अपटुडेट) युद्ध—सामग्री से लैस अनगिनत अंग्रेज वाहिनी के सामने टिक न सकने के डर से, कब का नौ दो ग्यारह हो चुका होगा। किन्तु अुसी दिन रिहा किये हुअे अेक गोरे बंदी ने आ कर वॉलपोल को बताया—'नरपतसिंहने यह कठोर निश्चय किया है. कि अेक बारही सही, अंग्रेजों से खूँखार लडाअी लड कर, अुन्हें अेक हार खिलाकर अेवं अिस तरह प्रतिशोध लेने पर किला छोड दिया जाय।'

है! यह छिछोरा जमींदार हमें हरायगा? क्रोध से खौल कर वॉलपोल ने अपनी सेना को धावा बोल देने की आज्ञा दी। अंग्रेजों ने पहले से यह झूठी गप अुडायी थी कि नरपतसिंह के पास दो हजार आदमी है। क्यों कि, वॉलपोल को पुरा भरोसा था कि वह नरपतसिंह को नाकों चने चबायगा और

तब अपनी विजय का महत्त्व बढ चढ कर बताने के लिये शत्रु की संख्या फुला कर कहने के बिना कोअी चारा न था। वॉलपोल ने भी अिस गप में हाँ में हाँ मिला दी। बंदी मे रिहा गोरा कैदी यद्यपि दावे मे कह रहा था कि नरपतसिंह की सेना २५० से अधिक नहीं है, अुस की आँखों देखी बात है, तब अुसे विश्वासघाती बताने में अंग्रेज न हिचकिचाये। किले के कच्चे परकोटे की ओर से चढायी करने के बदले गर्व के मद में अंग्रेजों ने प्रबल तथा सुरक्षित किलाबंदी पर सामने से हमला किया। तुरन्त सामने की झाडी से किलेवालोंने गोलियों की बौछारें कीं। शत्रु जब खाअी के पास आया तब तो गोलियों की धुआँधार वर्षा होने लगी। आगे बढे १५० सैनिकों से ४६ गोरे तो अेक साथ मर गये। अिस तरह किले की प्रबल कक्षा से होनेवाले तीखे प्रतिकार को देख वॉलपोल ने किले की कच्ची ओर से चढाअी करना तय किया। ब्रिटिश तोपें धडधडाने लगीं। किन्तु दुर्भाग्य से अुन के गोले किले में पडने के बदले ठीक पास होनेवाली ब्रिटिश सेना ही में गिरने लगे। शत्रु के साथ लडनेवाले कअी वीर सेनानी अब तक हो चुके होंगे; किन्तु अेकही समय, शत्रु तथा मित्र के साथ समान कुशलतासे तथा वीरता से लडनेवाले अिस महान् सेनापति वॉलपोल का सानी कभी न हुआ होगा, न आगे होगा, अुसकी अैसी बहादुरी देख, जनरल होप अुस की सहायता के लिये दौड पडा किन्तु दुर्भाग्य ! बेचारा क्रांतिकारियों की धधकती, असहनीय रणाग्निमें जल कर खाक हो गया। तब ग्रोव्ह भी पीछेहट की भाषा बोलने लगा। गडबड, अव्यवस्था असीम बढ गयी और हार कर, हाथ मलते हुअे, चुपचाप अंग्रेजी सेना लौट पडी।

जनरल होप की मृत्युसे भारत में अंग्रेजों को बडा धक्का पहुँचा। लॉर्ड कॅनिंग तथा सर कॅम्बेल ही नहीं, सारा अिंग्लैंड शोक से पागल हो गया। अुस समय के साहसी और अति शूर अंग्रेज अफसरों में होनेवाले अेक जनरल होप ग्रँट की मृत्यु से समूचे ब्रिटिश राष्ट्र को जितना शोक हुआ, जितना सैंकडों सैनिकों के मारे जाने से भी न होता। रुअियावाले नरपतसिंह ने अपना वचन सत्य कर दिखाया। अेकबार अंग्रेजों को हार खिलाकर और 'प्रतिशोध' ले

कर, रहे सहे मुट्ठीभर सैनिकों को साथ लेकर तथा स्वराज का झण्डा अकलंकित ऊँचा रखकर लडते लडते नरपतसिंह किलेसे निकल गया।

भिन्न भिन्न सेनाविभागों ने अवध के क्रांतिकारियों को पहले अवध की अुत्तर में और फिर रुहेलखण्ड में खदेडने पर, स्वयं प्रधान सेनापतिने सब सेनाओं को मिलाकर रुहेलखण्ड पर चढाअी करने की सिद्धता की। अिस समय सब क्रांतिकारी नेता शाहजहाँपुर में जमा थे। कानपुरवाले नानासाहब तथा मौलवी अहमदशाह भी अुनमें थे। ब्रिटिश सेनापतिने अिन को पकडने की कअी चेष्टाअें विफल कर ये दोनों विजयी वीर पहले के समान निश्चिंत सब ओर घूम रहे थे। अब अिन सभी शत्रुओं को अेक साथ जाल में बाँधने-योग्य स्थानमें अुन्हें जमा हुअे देख, अपनी गतिविधि का तनिक भी सुराग कानो कान भी न देने के भरोसे, सर कॅम्बेलने समूचे शहर को सब ओरसे घेर लिया। दुर्भाग्य! पंछी कब के अुड गये थे। कॅम्बेल को अधिक दुःख अिस बात का था, कि भिन्न भिन्न सेनाओं से चारों ओरसे घिरे होने परभी ठीक अुसी की सेना की ओर से ये दोनों नेता छटक गये थे।

अिस तरह शाहजहाँपुर का पासा अुलटा पडा देख, कमसे कम बरेली को सीधा करने के लिअे कॅम्बेलने अुस ओर प्रयाण किया। चार तोपें और कुछ सैनिक शाहजहाँपुर में छोड, १४ मअी को निकल, बरेली से अेक दिन के मुकाम पर आ पहुँचा। खान बहादुर खाँ अब भी वहाँ विराजमान था। दिल्ली और लखनअू के पतन के बाद भी स्वाधीन अिस क्रांतिदल के नगर में झुण्ड के झुण्ड क्रांतिकारी प्रतिदिन आ पहुँचते थे। दिल्ली के शाहजादा मिर्जा फीरोजशाह, श्रीमंत नानासाहेब, मौलवी अहमदशाह, बेगम हजरत महल, श्रीमंत बालासाहेब, राजा तेजसिंह तथा अन्य नेता रुहेलखण्डकी राजधानी बरेली में आये हुअे थे। और आनंद की बात थी, कि स्वाधीनता का झण्डा वहाँ शान स लहरा रहा था। अिसी से बरेली को नष्ट करने का बीडा कॅम्बेल ने अुठाया था। किन्तु क्रांतिकारियों के अभी प्रसिद्ध हुअे घोषणा-पत्र के अनुसार वृक-युद्ध की नीति पर चलने का निश्चय होने से क्रांति-नेताओं ने यह निश्चय किया

कि बरेली में किसी तरह लडाअी न चलायी जाय। बरेलीसे निकलकर, प्रांतभर में फैल, जूझने का अुन का अिरादा था, बरेली खाली करने की पूरी सिद्धता हो चुकी थी; अब केवल चल पडने की आज्ञा की राह थी। किन्तु वहाँ के शूर रुहेलों ने हठ किया, कि जब नीच शत्रु फिरंगी बरेली के अितना नजदीक आ पहुँचा है, तब अुसके लहू का घूंट पीये बिना बरेली नहीं छोडेंगे। क्यों कि, वे सिद्ध कर देना चाहते थे, कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता के पवित्र ध्येय के लिअे खून बहाने को वे कितने अुत्सुक और सिद्ध थे।

बरेली को घेरने के अिरादे से आयी अंग्रेजी सेना बहुतही प्रबल थी। अुस के पास बढिया तोपखाना हो कर अच्छी तोपें भी काफी थीं। अुसका रिसाला तथा पैदल सेना दोनों बहुत मजे हुअे तथा शस्त्रास्त्रों से सुसज्ज थे। और अिस सेना का नेतृत्व स्वयं कॅम्बेल जैसा समर्थ सेनानी कर रहा था। अैसी सेना के आगे खान बहादुर खाँ की तोपों की अेक न चली। निदान, ५ मअी को क्रांतिकारियों ने अपनी तलवारें अुठायीं। ये तलवारें थीं अुन क्रांतिकारी हुतात्माओं की, जो विजय की आशा न होने की बात स्पष्ट जान कर—यहाँ तक कि, पराजय के लिअे तैयार हो कर—मैदान से न हटकर अपने परम पवित्र ध्येय पर दुर्दम्य तथा अटल निष्ठा रख कर, हँसते हँसते मौत को गले लगाने के लिअे अुठायी थीं। **पवित्र साधना के लिअे पतन ही स्वर्गद्वार खोलने की कुँजी है।** अुन की अटल श्रद्धा थी, स्वतंत्रता का ध्येय भी अुन अुदात्त ध्येयों में शामिल है जिनके लिअे मानव प्राणोंपर खेल जाय। अपनी तलवारें सँवार कर ये घासी अंग्रेजों पर टूट पडे। अितनी फुर्ती और निडरता से अुन्हों ने यह हमाला किया कि, अिस दबाव से ब्रिटिश सैनिक भी अेक बार विचलित हो कर गडबडाये। ४२ वीं हाअिलंडर पलटन ने प्रतिकार का प्रयत्न किया, किन्तु जमदूत के समान विकराल भासनेवाले घासियों ने जोरदार मारकाट की और अुनमें से कुछ ब्रिटिशों की पिछाडी तक पहुँच गये। अुन वीरोंसे अेक भी लौट नहीं आया; ब्रिटिश सेना की गाजर-मूली काटते हुअे वे काम आये थे। वे लडते लडते खेत रहे किन्तु भूलकर भी शरण या पीछेहट की कल्पना अुन्हें छू तक न गयी।

अेक ही वीर था जो अंग्रेजी संगीन का शिकार न हुआ। हैं ! यह कैसे ! ठहरो। स्वयं ब्रिटिशों का सेनानी यहाँ आ रहा है। देखो, अबतक लाशों के ढेर में मृतक का बहाना कर पडा वीरवर अुस सेनापतिका गला घोंटने को झपट पडा ! हाय, हाय !. पास खडे अेक 'राजनिष्ठ' सिक्ख ने अुसी समय अुस वीर पर वार किया और वह सचमुच मृतक बन गया ! *

संसार के अितिहास में अमर पराक्रम से अंकित हुतात्मता के जो अिने-गिने प्रसंग मिलते हैं अुनमें अैसा महान्, दिव्य और अुदात्त प्रसंग शायद ही पाया जायगा !!

सात मअी को, अुन्हें पूरी तरह घेरने के ब्रिटिशों के सभी प्रयत्नों को विफल बनाकर सभी क्रांतिकारी, अपने नेता खानबहादुरखाँ के समेत, बरेली से कुशल से छटक गये और खाली पडी रुहेलखण्ड की राजधानी पर अंग्रेज बहादुरों ने कब्जा जमा लिया।

खानबहादुरखाँ के सहीसलामत छटक जाने से विषण्ण—मन सेनापति कॅम्बेल, बरेलीपर दखल होने से खुश, अपने खेमेमें बैठा था; तभी अेकाअेक चिल्लाहट हुअी 'मौलवी, मौलवी !'

शाहजहाँपुर में मौलवी अेक बडी साहसी और अति अद्भुत योजना बना रहा था। मात्र लडाअी टालने के हेतु से नानासाहब और मौलवी अहमदशाह शाहजहाँपुर से यों ही कॅम्बेल को झाँसा देकर थोडे ही छटक गये थे ! शहर छोडने के पहले ही वहाँ के सरकारी कार्यालयों तथा अुद्यानों को अुजाडने की आज्ञा दे दी थी। अुन चतुर नेताओंने ठीक भाँप लिया था, कि शाहजहाँपुर में थोडे सैनिक रख कर कॅम्बेल बरेली को अवश्य जायगा। अिसी से यह योजना तय हुअी थी, कि कॅम्बेल के बरेली पहुँचते ही अुस के प्रति-शोध के लिअे मौलवी शाहजहाँपुर पर टूट पडे और वहाँ के सैनिकों का सफाया कर शहर लूटे। अंदाजा बिलकुल ठीक निकला। चार तोपें और कुछ

---

* रसेल की डायरी से

सैनिक वहाँ छोड कॅम्बेल बरेली चला गया था। सभी घुसबन्दी को पहले ही नानासाहब अुजाड चुके थे, जिस से अंग्रेजी सेना को खुली जगह में डेरा डालना पडा था। मअी ४ को अहमदशाह शाहजहाँपुर पर चढ गया। अुस का शत्रु अुस समय सुरक्षा के भ्रम में बेखबर पडा था। किन्तु आधी रात में किसी के मूर्ख हठ से मौलवी की सेना वहाँ से चार मील दूरीपर अटक गयी। और मौलवी की योजना टाँय टाँय फिस हो गयी। क्यों कि, अंग्रेजों के अेक हिंदी गुप्तचरने अिस गतिविधि पर पूरी नजर रख कर बडी चतुरता से सब समाचार शाहजहाँपुर के कर्नल हेलको सुना दिये। देशद्रोही हिंदी खुफिया से खबर मिलतेही ब्रिटिश सेनानीने अपने सैनिकों को नयी बनसी गढी में भेज दिया। अपना शिकार सावधान हो कर सुसंरक्षित ओट में पहुँच गया है यह देखकर भी मौलवीने चढाअी जारी रखी। शहर तथा किला हथिया कर वहाँ के लोगों से अपने खर्च के लिअे कर भी जमा किया। मॅलेसन भी मौलवी का अनुमोदन करते हुअे लिखता है:—

'मौलवी ने वही बरताव किया जो युरोप की युद्धनीति में किया जाता है।'

पर अिस से क्या होता है? **स्वातंत्र्य-समर म समचे राष्ट्र की पराधीनता आर अपमान को,अपने उष्ण रक्त को बहा कर धो डालने के लिअे जब कुछ अिने गिने महान् व्यक्ति आगे बढते हैं, तब तो अिन देशभक्त वीरों की सहायता स्वयंस्फूर्ति तथा स्वेच्छा से करने के लिअे आगे बढना जनता का कर्तव्य होता है।** शहर को हथियाने पर मौलवीने वहाँ आठ तोपें ला रखीं और अंग्रेजों की गढी पर दागीं।

७ मअी को यह खबर जब कॅम्बेल को मिली तब पहले तो वह चकित हुआ, किन्तु अैसे तो अुसे प्रसन्नताही हुअी। क्यों कि पहले मौलवी के छटक जाने से मौका हाथ से गँवाया था तभी से अुसके मन में कसक थी। अब मौलवी अपनी ही करतूत से अुसे वह मौका दे रहा था। तब पूरी तरह प्रबंध कर कॅम्बेल मौलवी को फाँसने चला। अब मौलवी के छटक जाने का कोअी चारा न रहा। मअी ११ से तीन दिनों तक घमासान और अविराम युद्ध मचा रहा। किसी तरह मौलवी का छुटकारा असम्भव बन गया। तब अिस अत्यंत जनप्रिय और महान् साहसी देशभक्त को बचाने

के लिअे क्रांतिकारी नेता चारों ओर से अपनी अपनी सेनाओं के साथ जमा हुअे। अवध की बेगम हजरत महल, महमदी नरेश मय्यनसाहब, दिल्ली के शाहजादा फीरोजशाह, कानपुर से नानासाहब—ये सब नेता १५ मअी के पहले शाहजहाँपुर में सकट में फँसे स्वाधीनता के झण्डे की रक्षा को दौड पडे। अिस प्रकार सहायता पाकर दिनरात शत्रुसे झूझते हुअे अुसे हैरान कर, कॅम्बेल का व्यूह तोड कर, शाहजहॉपुर से मौलवी निकल गया। अिधर क्रांतिकारियों का प्रतिकार टूट जाने की बात सुनकर, मौलवी को यों पकड लेंगे अिस विश्वास से, कॅम्बेल ने अपनी सेना को बॉट कर भिन्न भिन्न दिशाओं में पहले ही भेज दिया था। किन्तु अपने शत्रु की आशाओं तथा योजनाओं की धज्जियॉ अुडा कर यह मौलवी छटक गया; किन्तु कहॉ? वह अवध ही में घुसा। वही अवध! जहॉ सालभर की अनथक चेष्टा तथा रक्तपात, और अत्यंत कष्ट से अंग्रेज क्रांतिकारियों से मुक्त करने में सफल हुअे थे। कॅम्बेल ने अवध पर दखल किया था और मौलवीने रुहेलखण्ड पर! अब सर कॅम्बेल रुहेलखण्ड जीतता है तो यह मौलवी चक्कर काट कर फिर से अवध को हथियाता है!

अिस प्रकार दृढ तथा चीमडपन से प्रतिकार कर मौलवीने विदेशी शत्रु की नाकों दम कर दिया। और यह लडाअी, अपने करोडों भाअियों तथा राष्ट्र की शान के लिअे अुसने लडी।

मौलवी की अिस भयंकर गतिविधि को रोक अिस झगडे का अन्त कर देने के विषय में अंग्रेजी शासन निराश होने लगा। अिस दशा में है कोअी अुनकी सहायता करनेवाला? अिस क्रांतिनेता को काटने की हिम्मत किस की तलवार में है; जब कि कॅम्बेल की तलवार अुसके सामने भोथरी पड गयी है? अब अिस मौलवी को किस रामबाण अुपाय से मारा जाय?

रामबाण अुपाय? अंग्रेजो! तुम चिंता न करो। क्या आजतक कअी बार हिंदुस्थान की ब्रिटिश सत्ता के शत्रुओं को नष्ट करने में अंग्रेजी खड्ग

अिसी तरह लाचार और अयशस्वी नहीं हुआ है ? बस तो, कठिन तथा निराशा के प्रसंगों मे जो बचा सकते थे और जिन्हों ने बचाया वे ही अब अिंग्लैड को बचाने के लिअे आगे आ जायेंगे। हिंदुस्थान की अिस ध्येयमूर्ति को काट डालने के लिअे अंग्रेजों की तलवार मोथरी पडी है, वहाँ विश्वासघात के खंजर को काम सफल करने दो !

अवध में फिरसे आ जाने पर फिरंगी का अधिक से अधिक तथा हठीला प्रतिकार करने का मौलवी ने निश्चय किया। अुस ने सोचा, कि वह जो तूफान अब अवध में बरपानेवाला था, जिस से अंग्रेजों को निकाल बाहर कर सकेगा, यदि पोवेन नरेश अुसकी छोटीसी सेना मौलवी को सौंप देगा, तो अुसमें सफल होगा। अिस हेतुसे पोवेन नरेश के पास, बेगम की मुद्रा से अंकित, पत्र भेजा। यह मामूली राजा मोटा और स्थूल बदनवाला, काम में सुस्त और मंद, बुद्धिसे कुंद और बुद्धू, स्वातंत्र्य-समर और समरांगण का अुल्लेख पढते ही चौंक पडा। किन्तु जितना कायर अुतना ही कपटी होने से अुसने अुत्तर में लिखा कि वह मौलवी साहबसे स्वयं मिलना चाहता है। अिस निमंत्रण के अनुसार मौलवी अुसे मिलने चला। वहाँ पहुँचने पर अुस के आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब अुसने देखा कि गाँव के सब दरवाजे बंद है और परकोटे पर सशस्त्र सैनिक अुस की रक्षा कर रहे हैं; राजा जगन्नाथसिंह अुन के बीच खडा है और अुस का भाअी अुस के बगल में। यद्यपि मौलवी अिस का मतलब ताड गया, फिर भी निडरता से अुस ने राजासे चर्चा शुरू की। अुस निर्भीक हृदय की, जिस ने फिरंगी को देशनिकाला देनें या स्वयं शहीद का मुकुट पहने की प्रतिज्ञा की थी, वक्तृता का असर परकोटे पर खडे अुस नीच के मन पर क्यों कर होता ? जब यह स्पष्ट हो गया कि वह कमीना खुशी से दरवाजा नहीं खोलेगा तब मौलवीने अपने महावत को आज्ञा दी कि जिस हाथीपर वह बैठा था अुस की धडक से द्वार तुडवाया जाय। और अेक धडक, और द्वार टूटने को था। किन्तु राजा के भाअीने निशाना ताका और महान् मौलवी अहमदशाह अुस नीच कायर के हाथों मारा गया। वह स्थूल राजा और अुस का भाअी तुरन्त दरवाजे के बाहर

आये, मौलवी का सिर तोड लिया, अुसे अेक कपडे में लपेटा और १३ मीलों-पर होनेवाले शाहजहाँपुर की ब्रिटिश छावनी को दौड गया। वहाँ गोरे अधिकारी खाने के कमरे में खाना खा रहे थे। राजा अंदर गया, अुसने अपने बोझ को, जिसे वह तोहफा समझ रहा था, खोला और गोरे अफसरों के पाँवों के पास अुस सिर को, जिस से अब भी रक्त चू रहा था, फेंक दिया। दूसरे दिन अिन सभ्य अंग्रेजों ने, अुन के साथ, अन्ततक, वीरोचित पराक्रम से झूझने-वाले कट्टर शत्रु का सिर चौकी के द्वारपर लटका रखा और पोवेन नरेश को अिस घृणित राष्ट्रद्रोही करतूतपर ५० हजार रुपयों का पारितोषिक दिया।

मौलवी अहमदशाह की मृत्यु के समाचार अिंग्लैंड पहुँचे तब 'अुत्तर भारत का ब्रिटिशों का भयंकर शत्रु खतम हुआ' कह कर अंग्रेजों ने संतोष की साँस लीं। * मौलवी कद में अूँचा और अिकहरे बदन का होने पर भी मजबूत और गठा हुआ था। आँखें बडी और भेदक तथा भौंहें कालीं थीं, नाक नोंकदार तथा चेहरा भरा हुआ था। अिस वीर मुसलमान की जीवनीसे यही पाठ मिलता है, कि अिस्लाम के असूलों पर विश्वास तथा भारतभूमि पर गहरी अटल भक्ति दोनों में न बेमेल है, न वैर; अेक मुसलमान असाधारण धर्मप्रेम के रहते हुअे भी--नहीं बल्कि अुसी के कारण--साथ साथ भारत का लाडला अत्यंत श्रेष्ठ नेता हो सकता है, जो अपना सब कुछ अपनी मातृभूमि पर न्योछावर अिस लिअे करता है, कि संसार में अेक स्वतन्त्र और स्वाधीन राष्ट्र होने के नाते सम्मान प्राप्त करे। सच्चा अीमानदार मुसलमान अपनी मातृभूमि में पैदा होने और अुस के लिअे कट जाने में गर्व अनुभव करेगा।

क्रांतिकारी नेताओं के गुणों का वर्णन, अतिशयोक्तिसे तो असंभव किन्तु वास्तविक और ठीक तरह करने में भी टालमटूल करनेवाला अंग्रेज अितिहासकार मॅलेसन, भावना के बहाव में अंग्रेज होने की बात भूल कर, लिखता है--' मौलवी अहमदशाह अेक असाधारण व्यक्ति था। विद्रोह के काल में अुस के सैनिक नेतृत्व की योग्यता का परिचय कअी प्रसंगों में मिला है,

* होम्स कृत हिस्टरी ऑफ दि अिंडियन म्यूटिनी (पृ. ५३९.)

जिस में अिस अध्याय में वर्णित के जोड का अकाट्य प्रमाण दूसरा नहीं है। ...सर कॅम्बेल को रण मैदान में दो बार मुँह की खिलाने की शेखी मौलवी के बिना कोअी नहीं कर सकता...अिस तरह फैजाबादवाले मौलवी अहमद् अुल्ला की मृत्यु हुअी। अपनी मातृभूमि की स्वाधीनता अन्यायसे छिन जाने पर योजनापूर्वक स्वाधीनता के लिअे लडनेवाला—देशभक्त् की यह परिभाषा ठीक हो तो—मौलवी अहमद्शाह निस्संदेह सच्चा देशभक्त था। अुसने अपनी तलवार किसी की अकारण हत्यासे रंगने न दी थी; अुसने हत्यारे पर दया न की। वह वीरता से लडा; सभ्यता और जीवट से समरांगण में अुन विदेशियोंसे लडा, जिन्होंने अुस के देश को कब्जा कर लिया था। संसार के सभी राष्ट्र के सच्चे वीर अुसकी स्मृति का सम्मान करेंगे, अैसी अुस की योग्यता थी। *
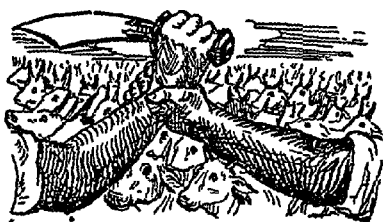
* मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ४, पृ. ३८१.

अध्याय १० वाँ

रानी लक्ष्मीबाअी

" क्या, मैं झाँसी छोड़ूँ ?—नहीं छोड़ूँगी ! किसी की हिम्मत हो तो आजमा ले; मेरा झाँसी नहीं दूँगी ! ! " 'झाँसी की समरलक्ष्मी के गलेसे अुस का स्वातंत्र्य-कौस्तुभ कौन छिनने की धृष्टता करेगा ? अिस लोक में अुद्दण्ड बने सारे राक्षस आ जायँ या मृत्यु की यन्त्रणाओं का समूचा संभार साथ लेकर साक्षात् जमराज सामने आ खडे हों, कोअी भी अुस स्वातंत्र्य-कौस्तुभ को छिन नहीं सकेगा। लक्ष्मी के शरीर में जब तक लहू का अेक बिंदु शेष हो तब तक स्वाधीनता की कौस्तुभमणि अुस से कभी अलग नहीं हो सकता !' और लहू की अन्तिम बूँद भी सूख जायगी या अुस के शरीर से चू पडेगी, तब भी स्वाधीनता की कौस्तुभमणि अुस के कंठ में पडी रहेगी और वह धधकी हुअी अग्निज्वालाओंपर आरूढ होकर परलोकको प्रयाण करेगी, अुस समय हे नराधमो ! अुस लपलपाती अग्निज्वाला में तुम खाक हो जाओगे। और फिर तुम महारानी लक्ष्मीबाअी को अुस के कौस्तुभ से—स्वाधीनता की मणि से—कैसे वंचित कर पाओगे ? जहाँ लक्ष्मी वहाँ स्वाधीनता ! हम फिर अेक बार स्पष्ट करते है, अिन दोनों को अेक दूसरे से वंचित कभी नहीं किया जा सकेगा। झाँसी, वहाँ का राजप्रासाद, जरीपटका (मराठी झण्डा), सिंहासन, अुस के स्त्री-धन का जेवर और स्वाधीनतामणि के साथ झाँसीवाली लक्ष्मीया

तो अपने सिंहासनपर स्वतंत्र ही रहेंगे या यज्ञाग्नि में जल कर भस्मसात् हो जायेंगे !

'नहीं; मेरा झाँसी नहीं दूंगी; जिस की हिम्मत हो वह आजमा ले ।' अिस आव्हान के साथ झाँसी की शूर राणी अंग्रेजों से लोहा लेने को सिद्ध हुआी। और समूचे बुंदेलखण्ड में आगामी क्रांतिके तूफान के लच्छन बहुत गहरे और भयंकर दिखायी दिये । सागर, नैगाँव, बाँदा, बानापुर, शाहगढ और कालपी में प्रतिशोध की फेनिल लहरें अेक दूसरी से होड लगा रही थीं । अब तक लक्ष्मी की स्वाधीनता-कौस्तुभने अुस की प्रजा को शान्त, सुखी, और सुव्यवस्थित रखा था। किन्तु डलहौसी जब से अुसे चुरा ले गया तब जनता का भावसागर तल से विलोडा गया । किन्तु बहुत जल्द लक्ष्मीने अपने बलसे चोर के हाथों से वह छीन लिया, लहरोंपर मात कर तूफान पर काबू किया और जनता के भावों की अुभाड को मर्यादा में रखा । स्वाधीनता का रत्न अुसने अपने हृदय के पास रखा और विजयभाव से राज कर रही थीं। युद्ध देवी रानी लक्ष्मी का वह भयंकर रूप अब और कुछ हो गया है; कमलासना लक्ष्मी की कोमलताने अुस का स्थान लिया है । अब तक के अुस के विकराल रूपसे आँखें चौंधिया जाती थीं, क्यों कि, वह सिर से पैरतक शस्त्रों से सुसज्जित थीं, अब फिर से कमल के रंग के कपडों से लैस छबेली मालूम पडती थी ।

फिर से जब वह झाँसी का पवित्र सिंहासन स्वाधीनता की सुदरता से विभूषित हुआी तब से प्रजा में व्यवस्था, शान्ति और आनन्द का बसेरा हो गया । अिस समय रानी लक्ष्मी का दैनंदिन कार्यक्रम यों बखाना गया है:-'रानी लक्ष्मीबाअी तडके पाँच बजे अुठ कर अित्र से सुगंधित जल से नहाती थी । वस्त्र पहनने के बाद-और साधारण तया वह सफेद चंदेरी साडी ही पसंद करती थी-पूजा पाठ के लिअे बैठ जाती । विधवा होने पर भी वपन न करने के लिअे वह प्रायश्चित्तार्घ्य देती; फिर तुलसी वृंदावनमें तुलसी की पूजा करती; अुस के बाद पार्थिव-पूजा होती । तब दरबारी संगीतज्ञ साम गायन करते । फिर कथावाचक कथा सुनाते । समाप्तिपर सरदार और माण्डलिक वंदना करते ।

प्रतिदिन सबेरे अुसके ७५० दरबारियों से अेकाध न दिखायी देता तो, स्मरण-शक्ति तीक्ष्ण होनेसे, दूसरे दिन अुस के अुपस्थित होनेपर पूछताछ करतीं। पूजापाठ और देवतार्चन समाप्त होनेपर कलेवा करतीं। विशेष त्वर्य कार्य न हो, तो नाश्ते के बाद अेक घण्टा आराम करतीं। फिर सबेरे भेंट में आयीं वस्तुअें चांदी की तश्तरियों में रेशमी वस्त्रों से ढँकी अुस के सामने रखीं जातीं। अुन में से पसंद चीजों को वे स्वीकार करतीं, जो अुन के नौकरों में वितरण करने के लिअे कोठीवाले को दी जातीं। दो पहर ३ बजे पुरुष-वेश में दरबार को जातीं। पायजामा, गहरे नीलेरग का कोट, अेक टोपी और अुसपर सुंदर पगडी बांधतीं, कमर में बूटे का काम किया हुआ दुप्पटा पतली कमर में बांधती, जिस में रत्नजडित तलवार लटकती थी। अिस वेश में वह गोरे रंग की महिला प्रत्यक्ष गौरी देवी सी दिखायी देती। कभी कभी स्त्रीवेश भी पहनतीं। पति की मृत्यु के बाद नथनी या कोअी सौभाग्य अलंकार वे नहीं पहनती थीं। कलाअी में हीरे की बंगडियाँ, गले में मोतियों का हार, और छोटी अुँगली में हीरे की अँगुठी रहती। बस, येही अुनके आभूषण थे। बालों का जूडा बाँधतीं। सफेद साडी और सादी सफेद अगी पहनतीं। अिस तरह कभी पुरुषवेश तथा कभी स्त्रीवेश में वे दरबार में बैठतीं। दरबारी लोक अुन्हे प्रत्यक्ष देख नहीं पाते थे; क्यों कि, अुनके बैठने का कमरा अलग हो कर अुस का द्वार दरबार में खुलता था। सोने के बेलबूटे से अंकित अुस द्वार पर कढा हुआ सोने के रंग का चिक पडा रहता। अुस कमरे में मुलायम गद्दीपर, मुलायम तकिये से अुठग कर वे बैठ जातीं। द्वार पर हमेशा सोने-चाँदी के मुलम्मे के सोटे थामे हुअे दो वेत्रधारी खडे रहते। लक्ष्मणराव दिवानजी अुस कमरे के सम्मुख महत्त्वपूर्ण कागजो को लेकर खडे रहते और अुन के पास दरबार का आमात्य बैठता था। बुद्धिवान् तथा समझदार होने के कारण हर बात के मर्म को वे जल्द जान लेतीं और अुन के निर्णय स्पष्ट और थोडें में किन्तु निश्चिन रहते। कभी कभी वे स्वय आज्ञाअें लिखतीं। न्यायदान के काम में वे बहुत सावधान रहतीं और मुलकी और फौजदारी कामों का निणय बडी योग्यता के साथ करतीं। रानीसाहब भक्तिभावसें

महालक्ष्मी के दर्शन को जातीं। यह मंदिर अेक तालाब के किनारे था, जिस में कमल खिले रहते। हर मंगल तथा शुक्रवार को रानी मंदिर को जातीं। अेक बार, मंदिर से लौटकर दक्षिण दरवाजे से रानी आ रही थीं तब देखा कि हजारों भिखारियों ने अेक रास्ता रोका है और गडबडी मचा रहे हैं। तब रानी ने मंत्री लक्ष्मणराव पांडे से अिस का कारण पूछा। अुसने पता लगा कर बताया कि 'ये लोग बहुत गरीब हैं और अति शीत के कारण दुःखी है; तथा रानी से प्रार्थना करते हैं।' दयालु रानी को बडा दुख हुआ; अुन्होंने आज्ञा दी कि चौथे दिन सब भिखारियों को अिकठा कर हर अेक को अेक मोटा कुर्ता, अेक टोपी और अेक कंबल दिया जाय। शहर के सारे दर्जी कुर्ता, टोपी बनाने के काम में लगे। निश्चित दिन को राजमहल के सामने, सब भिखारी—जिन में गरीबों को भी शामिल किया गया था—जमा हुअे। रानी ने अपने हाथों कपडे बाँट कर सब को संतोषित किया।...नत्थे खाँ के साथ की लडाअी में घायलों के घावों को धोने के समय रानी स्वयं अुपस्थित रहने का हठ करती। अपने सुख दुखों के विषय में अिस प्रकार रानी लक्ष्मीबाअी को ध्यान देते देखकर ही अुन के घाव अच्छे होते; अुन्हें अपने कर्तव्य-पालन का पूरा प्रतिदान मिल जाता।.........रानी लक्ष्मीबाअी जब महालक्ष्मी के मंदिर में जाने निकलती अुस समय की शोभा तो अवर्णनीय होती थी। कभी रानी पालकी में या कभी घोडे पर से जातीं; जब पुरुष वेश में होती थीं.........सुंदर साफे का छोर पीठ पर लहराता था, जो रानी को खूब फबता था। अुन के आगे राजध्वज, मारू बाजों के साथ, चलता। अिस ध्वज के पीछे दो सौ गोरे घुडसवार रहते। रानी के आगे पीछे सौ सौ सवार चलते थे।......कभी कभी सारी सेना जलूस में रानी के साथ निकलती ....रानी के निकलते ही झाँसी के किले का नगाडा और शहनाअी मधुर-ध्वनि से बजने लगतीं ....।*

* दत्तात्रय बलवंत पारसनीसकृत 'रानी लक्ष्मीबाअी का चरित्र' पृ. १४७-१५१.

अब स्वराज का नगाडा गंभीर घोष कर रहा था । गत ११ महीनों से अिस गमकनेवाले गभीर घोष ने सारे बुंदेलखण्ड का वातावरण, जो अब स्वाधीनता के तेज से दमक रहा था, भर दिया था, अिस नगाडे का साथ कालपी से तात्या टोपे की तोपें दे रही थीं । अिस तरह, विंध्य से जमनातक ब्रिटिश सत्ता का कोअी चिन्ह नहीं दीख पडता था—कोअी अुस का नाम नहीं लेता था । ब्राह्मण, मौलवी, सरदार, जागीरदार, सैनिक, पुलीस, राजा, राव, शाहुकार, दहार्ता लोग—हर किसी की बस, अेक ही माँग थी—स्वाधीनता ! और अिन हजारों आवाजों को अेक सुर में मिलाने के लिअे झाँसी की रानी लक्ष्मीबाअी ने अपने मीठे किन्तु दृढ स्वर में कहा—'मेरा झाँसी नहीं मिल सकता, जिस की हिम्मत हो आजमा ले ।'

संसार ने अैसे दृढ 'नहीं' को बहुत कम सुना है । अब तक अुदार और महामना भारत से बारंबार यही ध्वनि सुनायी पडती 'मैं दूँगा ।' किन्तु आज यह विलक्षण चमत्कार हुआ—दृढ ध्वनि तेजस्वी मुख से निकली 'मैं नहीं दूँगी ! मेरा झाँसी नहीं दूँगी ।'

हे भारतमाता ! काश; तुम्हारे रोम रोम से यह ध्वनि गूँजती ! अिस अनपेक्षित दृढता से फिरंगी चौंक पडा और ५००० सैनिकों तथा काफी तोपों के साथ अिस विद्रोह की गहराअी नापने और अुसे शान्त करने के लिअे सर ह्यू रोज चल पडा ।

१८५८ के प्रारंभ में, हिमालय से विंध्य तक के समूचे प्रदेश को क्रांतिकारियों के हाथों से फिर से जीतने की सैनिक योजना अंग्रेजों ने बनायी थी । यह प्रदेश दो हिस्सों में बाँटा गया और हर अेक पर दखल करने प्रचंड सेना भेजी गयी । सर कॅम्बेल अिलाहाबाद से गंगा जमना की अुत्तर की ओर अपनी बडी सेना के साथ बढा; दोआब जीता, गगापार कर लखनअू को नष्ट-भ्रष्ट किया; बिहार के विद्रोह को दबाया; बनारस के आसपास तथा अवध में बागियों को हराया; सब क्रांतिकारियों को रुहेलखण्ड में, जहाँ अन्तिम मुठभेडें हुअीं, भगाया और अुत्तर के प्रदेश को क्रांतिकारियों से मुक्त किया, आदि बातों का

अुल्लेख हम पिछले अध्यायों में कर चुके हैं। जहाँ कॅम्बेल जमना से अुत्तर में हिमालय की ओर बढ रहा था, वहाँ जमना के दक्षिण में विंध्य तक का प्रदेश जीतने को सर ह्यू रोज बढा। अुत्तर में सिक्खों, गोरखों तथा कुछ हिंदी सैनिकों और जमींदारों ने कॅम्बेल की सहायता की। 'अुसी तरह दक्षिण में ह्यू रोज को हैदराबाद, भोपाल आदि रियासतों की सहायता थी। और खास कर अुसे मद्रास, बम्बअी तथा हैदराबाद की पलटनों की महत्त्वपूर्ण सहायता थी। हिंदी सेना से कुछ विभाग ह्यू रोज को मिले थे अिस बात का अुल्लेख अनावश्यक है। क्यों कि, ह्यू रोज को विजय मिली यह कहने भर से स्पष्ट है कि हिंदी सैनिकों की सहायता से ही यह हो सका। **अकेले अंग्रेज अपने बल पर विजय पाने की बात**, संसार की अन्य अत्यंत असम्भव बातों के समान, **असम्भव है**। दक्षिण विभाग को जीतने के लिअे जमा की गयी देशद्रोहियों की हिंदी सेना को दो हिस्सों में बाँटा गया। अेक ब्रिगेडिअर विटलॉक के मातहत रखा गया, जो जबलपुर से बढे और रास्ते में सब प्रदेश को जीतते हुअे ह्यू रोज को आ मिले। दूसरा हिस्सा स्वयं रोज के मातहत था। जबलपुर से विटलॉक चलेगा, तभी रोज भी मअू से चलेगा और झाँसी और कालपी होते हुअे आगे बढेगा। निश्चित योजना के अनुसार ६ जनवरी १८५८ को ह्यू रोज मअू से निकला। अेक छोटी लडाअी के बाद अुसने रायगढ जीता। वहाँ से सागर गया, क्रांतिकारियों ने बंदी बनाये गोरों को मुक्त किया, और दक्षिण जा कर १० मार्च को बानापुर ले लिया और चंदेरी का प्रसिद्ध किला जीत लिया। २० मार्च को झाँसी से १४ मीलोंपर अिस विजयी अंग्रेज सेनाने डेरा डाला। अिन मुठभेडों के कारण नर्मदा से अुत्तर में देशभर में फैले क्रांतिकारी दस्तों की अब झाँसी में भीड थी और अिसी से क्रांतिकारियों के अिस गढ को नष्टभ्रष्ट करने के लिअे रोज फुर्तीसे झाँसी को चल पडा। किन्तु लॉर्ड कॅनिंग तथा कॅम्बेलने अुसे आज्ञा दी कि पहले वह चरखारी नरेश की सहायता करे, जो तात्या टोपे से घिरा था। अिस आज्ञापर वह अमल करता तो तो झाँसी को नष्टभ्रष्ट करने की अुस की योजना बेकार हो जाती। अब वह क्या करे? बडी दुविधा में पडा। अिस बाँकी परिस्थिति में

झाँसी पर चढाओी करने में अंग्रेजी राज का हित था; तब हिंदुस्थान के सबसे बड़े दो अधिकारियों की आज्ञा न मानने का पूरा दायित्व सर रॉबर्ट हॅमिल्टनने अपने सिर ले लिया और अपने राष्ट्र के अुच्च हित का काम करने से गर्वित ब्रिटिश सेना झाँसी की ओर बढी; अुसे विजय की आशा थी। किन्तु झाँसी की भूमि पर पग धरते ही अुसे बहुत कष्ट अुठाने पडे। क्यों कि, अचरज के साथ यह मालूम हुआ कि रानी की आज्ञा से झाँसी के आसपास का सभी प्रदेश अिस लिअे अुजाड दिया गया था, कि शत्रु को किसी प्रकार की रसद न मिले। खेत में अनाज का अेक भी भुट्टा नहीं, घास का तिनका नहीं, छाया के लिअे पेड भी नहीं! नेदर्लंड्स् के विलियम ऑफ ऑरेंज ने, स्पेनवाले शत्रु के हाथ में देश जाने की अपेक्षा, सागर के पानी को अंदर लेना पसंद किया था; अिधर झाँसीवाली रानीने अुसी नीति का सहारा लिया।

अब भी वही गर्जन रानी की ध्वनि में है, क्रोध से अुस की आँखों से चिनगारियाँ निकल रही है। बानापुर नरेश मर्दानसिंह, क्रोध भरा शाहगढ का राजा, जान हथेलीपर लिअे शूर ठाकुर, बुंदेलखण्ड के सरदार—देश की स्वाधीनता के लिअे डटे अुनके अनुयायी—यह सभी ज्वालाग्राही सामग्री झाँसी में क्रोध से जल रही थी। क्रोध की लपटें 'जरीपटका' (राजध्वज) तक अूँची अुठती है—और अिन सब में निखरती है वह तेज की मूर्ति! अुपर्युक्त सभी लोगों की शक्ति तथा किलाबंदियों, ज्वालाओं तथा जरीपटका का बल अुस अेक देवी में केन्द्रित है। वह सब की स्फूर्ति—देवता है। रानी में चेतनाओंने आसरा लिया है। वह स्वराज की तेजस्वी प्रत्यक्ष मूर्ति है, स्वाधीनता की केन्द्रकल्पना है; अुस का अवतार है।

सब भूमि अुजडी हुअी पडी है फिर भी अंग्रेज सेना झाँसी की ओर आगे बढी। बलिहारी है शिंदे तथा टेहरी नरेश की—जिन्हों ने 'अंग्रेज निष्ठा' के कारण सारी सेना को अिस लडाअी में घास, अींधन और फलमेवे पर्याप्ततासे अधिक दे कर, सहायता की।* जब की शिंदे

* मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ५; पृ. ११०.

और टिहरी नरेश फिरंगी की सहायता कर रहे है, विश्वासघात और उद्दण्डता का बाजार गर्म है; अपनों और परायों ने धोखा दिया है; अब तुम्हारे लिअे विजय की कोअी आशा नहीं। तो फिर अंग्रेजों की शरण लेकर सर्वनाश से क्यों नहीं बचतीं? क्या शरण? और झाँसीवाली रानी के लिअे? मंत्री लक्ष्मणराव, मोरोपंत तांबे, शूर ठाकुरो और सरदारो तुम सब स्वाधीनता के वीर हो; तुम शरण माँगो तो बच जाओगे; लडोगे तो मर जाओगे। क्या पसद करते हो? झाँसी ने सहस्त्रों मुखों से दृढता से गीता के शब्दों में अुत्तर दिया—'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः और सम्भावितस्य चाऽकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते—जो जन्म पाता है वह अवश्य मरता है, तो फिर व्यर्थ में कीर्ति को कलंकित क्यों किया जाय?

सो, देश की प्रतिष्ठा के लिअे अंग्रेजों से भिडना तय हुआ। तब झाँसी और झाँसी की 'लक्ष्मी' दिनरात युद्ध की सिद्धता में लगी रहीं। वीर अुस की सेना में काफी थे; युद्ध की शिक्षा पाये हुअे बहुत थोडे थे। अनुशासन का अभाव स्पष्ट दीख पडता था। फिर भी स्वयं रानी ने सब सेना का नेतृत्व किया। हर बुर्ज तथा द्वार पर, वह घूमती हुअी नजर आती। तोपों की कुर्सियाँ बनने और अुन्हें मोर्चेपर लगाने की जगह पर वह स्वयं अुपस्थित थीं। चतुर तोपचियों का चुनाव करने में वह मगन थी। और निराश हृदयों में भी वीरता के प्राण फूँकती हुअी वह हर जगह दिखायी देती थी। झाँसी के पण्डित देश की स्वाधीनता के लिअे प्रार्थनाअें चला रहे थे। वहाँ के मंदिरों ने रण में जानेवाले सैनिकों को आशीर्वाद दिये और घायल हो जाने पर अुन की शुश्रुषा की। वहाँ के कारीगर गोलाबारूद और युद्ध की अन्य आवश्यक चीजें बनाने में व्यस्त थे। झाँसीवालों ने तोपों के काम में आदमी दिये, बदूकें भरने का काम किया, और तलवारें पैनी कीं। वहाँ की स्त्रियों ने गोलाबारूद पहुँचायीं, तोपों की कुर्सियाँ बनायीं, रसद पहुँचायी।* २३ की

---

* स्त्रियाँ तोपखाने में तथा गोलाबारूद पहुँचाने आदि कामों में व्यस्त दिखायी दीं—सर ह्यू रोज.

रातको, शहरभर में युद्ध के नगाडे बजने लगे और किले से बीच में मशालें चमकतीं दिखायीं पडीं। प्रहरियों ने कुछ गोलियाँ भी चलायीं। २४ का सवेरा हुआ। अब तनिक भी देरी नहीं होनी चाहिये! 'घनगर्ज' तोप ने अपना काम शुरू किया। अुस की गर्जन बडी भयंकर थी।

झाँसी के घेरे की प्रारंभिक दशा का 'आँखों देखा' विवरण हम नीचे देते हैं।

२५ दिनाक से बराबर भिडन्त शुरू हुअी। अंग्रेजी तोपें दिन रात आग बरसाती थीं। रातमें किले और शहर में गोले पडने लगे। दृश्य भयंकर था। पचास या साठ पौंड का गोला टेनिस की गेंद की तरह, किन्तु अंगार के समान, दीख पडता था। दिनमें धूप के कारण ये गोले स्पष्ट न दिखते थे किन्तु रातमें वे खूब चमकते और रात को भयानक बना देते। २६ के दोपहर में दक्षिणद्वार की हमारी तोपें अंग्रेजों ने निकम्मी कर दीं और अेक भी व्यक्ति वहाँ न टिक पाता था। सब गलितधैर्य हो गये थे। तब पश्चिमद्वार के तोपचीने अुसी की तोप का मुँह घुमाया और अंग्रेजों पर गोले फेंकने लगा। तीसरे गोले से अंग्रेजों का बढिया तोपची मारा गया और तोप बेकार हुअी। अिस से रानी बहुत प्रसन्न हुअी और अपने अुस तोपची को चाँदी का कडा अिनाम में दे दिया। अुस का नाम था गुलाम गोशखान। पहले, नत्थे खाँ के साथ हुअे युद्ध में भी अुसने अैसाही काम किया था।"

"पाँचवें या छठवें दिन अुसी तरह युद्ध हुआ। चार पाँच घंटों तक रानी की तोपोंने अच्छा काम किया और अंग्रेजों की भारी हानि हुअी। अुन की बहुत तोपें भी कुछ समय के लिअे बंद हुअीं। फिर अंग्रेजी तोपों की मार भीषण हुअी और रानी की तोपें बंद पडने लगीं; लोगों का दिल बैठने लगा। सातवें दिन, सूर्यास्त के समय, बाअें की तोप निकम्मी हुअी। कोअी वहाँ खडा नहीं रह सकता था। अंग्रेजों के गोलों से मुंडेर ढह पडी। किन्तु रात में कंबलों में छिपकर ग्यारह राज वहाँ लाये गये और तडके के पहले से मुँडेर का काम पूरा हो गया। अंग्रेजोंने सबेरे दाँतों तले अुँगली दबायी, जब अुन्होंने देखा कि छेद ठीक

हो गया है और झाँसीवाली की तोप ठीक काम कर रही है। अिस बार अंग्रेज बेखबर–से थे; अुन को बहुत हानि अुठानी पडी और अुन की तोपें लम्बे अरसे तक निकम्मी हो गयीं।

"आठवें दिन सवेरे शंकर क़िलेपर अंग्रेजों ने हमला किया। अंग्रेजों के पास बडी मूल्यवान् तथा आधुनिक दूरबीनें थीं, जिन की सहायता से क़िले के जलाशय पर तोपों से आग बरसाने लगे। पानी के लिअे ६।७ आदमियों से चार मारे गये, बचे हुअे बरतन वहीं फेंक भागे। चार घंटे तक पानी न मिलने से बडा कष्ट हुआ। अब पश्चिम तथा दक्षिण द्वारों से गोलों की वर्षा कर शंकर किले पर निशाना मारनेवाली अंग्रेजी तोपों को बेकार कर दिया। तब जाकर कहीं नहाने पीने को पानी मिला। अिमली कुञ्ज में बारूद का कारखाना था। दो मन बारूद बन जाने पर वहाँ से अुठा कर तहखाने में भेज दी जाती। अुस कारखाने पर अेक तोप का गोला पडा और ३० आदमी और ८ औरतें समाप्त। अुस दिन घमासान युद्ध हुआ। वीरगर्जन का बडा शोर होता था; तोपों और बंदूकों की खडखडाहट जारी थी; तुरहियाँ और करनाल जोरोंसे हर जगह बजते थे। धूल और धुअें से आकाश भर गया था। बुर्जों के कअी तोपची तथा बहुत सैनिक मारे गये। अुन का स्थान दूसरों ने ले लिया। रानी स्वयं बहुत काम कर रहीं थीं। हर छोटी मोटी बात पर रानी का ध्यान था; आज्ञा झटपट देतीं और हर कच्चे स्थान की मरम्मत कर लेतीं। अिस से सैनिकों का हौंसला बढता और वे लगातार लडते। अिस कठोर प्रतिकार से, पर्याप्त बल होने पर भी ३१ मार्च १८५८ तक अंग्रेज किले में घुस न पाये।*

पग पग पर संकटों का सामना करने में व्यस्त होने पर भी रानी लक्ष्मी अेक विशेष दिशा में अितनी अुत्सुकता से क्यों कर देख रही हैं! देखो, रानी मुस्करायीं भी! सावधान! मान–वन्दना में तोपें दागो; विजय के ढोल गंभीर

* द. बा. पारसनीस 'रानी लक्ष्मीबाअी' का चरित्र पृ. १८७-१९३.

घोष करने लगे । रणगर्जना से आकाश गूँजा दो । क्यों कि, झाँसी की सहायता के लिओ तात्या टोपे सेना के आगे चल रहा है !

कानपुर को विंडहॅम को हरा कर, और कॅम्बेल से हार कर, गंगा पार कर, तात्या श्रीमंत नानासाहब की छावनी में आ पहुँचा। अुस के बाद, नानासाहब को छोड, कालपी के पास जमनापार हो गया। पेशवा के शुरू किये स्वाधीनता–युद्ध में हाथ बॅटाने से चरखारी–नरेश ने अिनकार करने पर सेनापति तात्या ने अुस की राजधानी पर धावा बोल दिया, अुस देशद्रोही को अच्छा दण्ड दिया, २४ तोपें छीन लीं आर तीन लाख का जुर्माना वसूल किया । फिर तात्या कालपी की ओर मूडा । वहाँ अुसे रानी लक्ष्मीबाओी का पत्र मिला, जिस में झाँसी के घेरे को तोडने में सहायता करने की प्रार्थना थी । तात्या ने प्रधानमंत्री रावसाहब के पास पत्र भेजा और अुन से आज्ञा पाते ही अंग्रेजों की पिछाडी पर वह टूट पडा । अिसीसे लक्ष्मीदेवी के मुँह पर स्मित की रेखाअें दौड गयीं । बचपन में तात्या और लक्ष्मी अेक साथ, बिना किसी का ध्यान पडे, ब्रह्मावर्त के राजमहल में खेले थे । आज भी वे दोनों खेल रहे है–रणमैदान मे । अेक झाँसी की बुसबन्दी पर आग की लपटों में खडी है, दूसरा २२ हजार सेना के साथ बेतवा के पास है । बचपनमें अुन के खेल पर कोओी खास ध्यान न देता था । आज सारा संसार अुन के खेल को रसपूर्वक देख रहा है ।

अितनी बडी सेना के साथ तात्या को आते देख अंग्रेज घबडा गये । अुस समय बहुत थोडे गोरे सैनिक होने से अुन्हे, सचमुच बडा. धोखा था । क्यों कि, सामने से रानी लक्ष्मीबाओी और पीछे से अपने बाओीस सहस्र पजों से झपटने पर अुतारू मराठा शेर तात्या । तो फिर ह्यू रोज पर झपट कर अुसे फाड क्यों नहीं खाता ? वह झपटने को था, तब अुस के बाओीस सहस्र पंजे लूले पडे मालूम हुअे । बिना पजों के शेर क्या करेगा ? हाय, हाय ! बेतवा के किनारे क्रातिकारी दस्तों ने कायरता का लज्जास्पद प्रदर्शन किया । झाँसी की सेना सामने से और तात्या की आगे से हमला करने की योजना सचमुच सराहनीय थी । किन्तु निराशा के तेहे से अंग्रेजों ने तात्या पर हमला किया

और झाँसी पर तोपोंसे आग बरसायी। अिस तरह दोनों ओर की चढाअियाँ ठंढी पड गयीं। शिवाजी के मावले वीरों या कुँवरसिंह के चुनन्दे सूरमाओं के समान अेक बार भी जोरदार चढाअी होती तो युनियन जैक तथा अुस के अनुयायियों की लाशों के ढेरों पर गिद्धों की दावत होती। किन्तु हाय! कायर कहीं के! आगे बढने में हिचकिचाते हैं! अिसे क्या कहें, नीच विश्वासघात या घृणित कायरता? तोपों से अेक भी गोला न चला। सेना और सेनापति को बुरी तरह हार कर भागना पडा। अिस गडबड में असीम युद्धसामग्री अंग्रेजों के हाथ लगी; तात्या की सभी तोपें धरी रहीं; और भगदड में पंधरह सौ मारे गये। अेक हजार पाँचसो भागते हुअे मरे! बुद्दू और पागल कहीं के! भागते हुअे कायर की मौत मरने की अपेक्षा तुम यदि ह्यू रोज पर हमला करते तो भी रोज का अुस की सेना के साथ सफाया हो जाता और तुम वीर हुतात्मा बन कर अजरामर कीर्ति के धनी होते! खैर, परमात्मा तुम्हे क्षमा करे! और न सही, हम तुम पर तरस खाते हैं। कमसे कम तुम

स्वाधीनता के काय में मारे गये हो। हमारे देशभाअियों को तुम्हारी मृत्युसे अितना तो पाठ अवश्य मिलेगा, कि जीने के लिअे जो भागते हैं वे मारे जाते हैं और मौत को गले लगाने के लिअे जो रणमैदान में झूझते हैं वे जीवित रहते हैं!

और मृत्यु को ललकारते हुअे रानी लक्ष्मीबाअी झूझ रही थी। तो फिर अिन सरदारों, ठाकुरों और सिपाहियों ने अेकाअेक क्यों कर लाचारी दिखायी! नौ दिन और नौ रातें आग बरसाती तोपों के सामने तुम डट कर खडे रहे; तुम्हे आशा थी कि तात्या-टोपे तुम्हारी सहायता को जल्द ही दौड पडेगा। जब वह आया तो तुमने आनद के नारे लगाये। १ अप्रैल को तात्या की हार हुअी और केवल तुम्हारा वह आनंद ही नहीं, विजय की आशा भी मिट गयी। जिस रसद को, विश्वासघाती शत्रु के हाथ से छीनने के लिअे हजारों सैनिकों का बलिदान देना पडा, वह रसद अनायास गोरों के हाथ लगी तात्या की तोपें और गोलाबारूद भी तो शत्रु के हाथ लगी है; यह सत्य है। फिर भी यह निराशा क्यों? विजयी होकर जीवित रहने, तुम्हारा शत्रु न दे,

किन्तु अमरकीर्ति की मृत्यु तुम से वह कदापि नहीं छीन सकता। वीरो, तो फिर काहे की निराशा! ठहरो! निश्चित, दृढ और वीरता की वाणी रानी लक्ष्मी के मुख से सुनोः—

'अब तक झाँसी पेशवा के बूते पर नहीं झूझ रहा था; आगे युद्ध जारी रखने के लिअे भी अुन की सहायता की खास आवश्यकता नहीं है। अब तक तुमने आत्माभिमान, साहस, दृढ निश्चय अेव वीरता का सराहनीय परिचय दिया है। अब भी तुम अुसी तरह से काम लो, और मै तुमसे आग्रहपूर्वक कहती हूँ कि धैर्यसे और प्राणपन से लडो।"

हाँ, प्राणपन से लडो! सावधान! मारू बाजे बजने दो; करनाल फूँके जायँ! वीर गर्जनासे आकाश गूँजने दो; बडी तोपों को धडधडाने दो! ३ अप्रैल की पहली किरणें पृथ्वी पर आ चुकी हैं और अंग्रेजों का आखरी हमला झाँसी पर हो चुका है। सब ओर से वे आ रहे हैं और दबाव बढ गया है। बस, तो फिर लडो; जोरसे, डटकर, प्राणपन से लडो। युद्धदेवीने कैसे तलवार सँवारी है देखो! और वीरताकी पराकाष्ठा कर दिखाने के लिअे वह शत्रु की हरावल को विचालित कर रही है। बिजली की तरह रानी घूम रही है; किसी को सोने के कडे, किसी को पोशाक बक्श रही है। किसी की पीठ ठोंकती है तो किसी को अपनी मुस्कान से अुत्साहित कर रही है। तब, गुलाम गोशखाँ और कुँवर खुदाबक्ष! तोपों से आग बरसाओ! शत्रु प्रमुख द्वार तोड रहा है; किलाबदी को तोड रहा है; आठ जगह निसेनियाँ लगायी गयी हैं। 'हरहर महादेव'! किले से, बुर्जों से, हर घर से गोलियों की बौछारें हुअीं; बाढों का ताँता बंध गया। तोपें लाल गोले अुगल रही है। 'मारो फिरंगी को' —क्या वह युद्धदेवता है या कालीमाता स्वयं खडी है, जो भीषण युद्ध कर रही है! 'हर हर महादेव!' ले. डिक और ले. मेयकले जोहान सीढियाँ चढ रहे हैं और अपने आदमियों को पीछे चढने को ललकार रहे हैं। धडाम, धडाम! साहसी अंग्रेज काले के गाल में चले गये! कोअी है अुन के पीछे

आनेवाला ! ले. बोनस और वीर ले. फॉक्स ! तुम मरना चाहते हो ? तुम्हारी मुराद पूरी होगी। मरो फिर ! बडी कठनाओी से चढे हुअे अिन चार वीरों को गिरते देख निसेनियॉं भी कॉंपने लगी। अंग्रेजी सैनिकों के भार से वे लडखडा कर टूट गयीं। अंग्रेजों ने पीछेहट की तुरही बजायी। सेना पीछे गयी; हर सिपाही हर चट्टान की ओट लेकर छिपते हुअे भागा। ×

प्रमुख द्वार पर अिस तरह डट कर प्रतिकार हुआ। किन्तु दक्षिण बुर्ज पर वह कौन कराह रहा है ! हो सकता है, नीच विश्वासघातने मोर्चा द्वार गँवाया होगा। हॉं, दुर्भाग्यसे सच है कि अंग्रेजों ने देशद्रोहियों के बल पर अुसे जीता है—अैसा कहा जाता है—और बुर्ज पर चढ कर फुर्ती से आगे बढ रहे हैं। अुस दिन सब के मन में अेक मात्र भाव था—मारेंगे या मरेंगे। अेक बार शहर में अंग्रेजों ने मार काट की धूम मचा दी। अेक के पीछे अेक मोर्चा कब्जे करते गये; कत्ल, आग, विध्वंस का बाजार गर्म रहा— वे ठेठ राजमहल तक पहुँचे। राजमहल पर दखल करने पर हजारों रुपये लूटे गये, प्रहरियों को मार डाला गया, अिमारतों की अींट से अींट बजा दी गयी। निदान, हाय, झॉंसी शत्रु के हाथ में चला गया।

परकोटे पर खडी रानी ने अेक बार झॉंसी पर दृष्टि डाली। दक्षिण दरवाजे के पास बने भीषण प्रसंग का घृणित चित्र अुस की ऑंखों में तर गया। शत्रु के स्पर्श से अुस का झॉंसी अपवित्र हो गया। अुस की ऑंखों से क्रोध की चिनगारियॉं अुड रही थी। क्रोध से रानी पागल हो अुठी। अुस ने अपनी तलवार सँवारी, अपनी हजार पंधरहसौ सैनिकों की सेना को साथ लिया और किले को चल पडी। अपने बच्चे को छेडनेवाले पर भी शेरनी अितनी फुर्ती से नहीं झपटती। दक्षिण द्वार के पास अुसने गोरों को देखा और वह अुन पर झपटी; फिर "तलवार से तलवार भिडी, दोनों शत्रु दल क्षणभर में अेक दूसरे में मिल गये, 'दे दनादन, शुरू हुआ; बहुत गोरे मारे गये; बचे

× सं. ४७ देखो लो कृत सेंट्रल अिंडिया. पृ. २५४.

हुओे शहर की ओर भागे और ओट से शिकार खेलने लगे। फिरंगी खून से अब अुस काली का क्रोध कुछ शान्त हुआ, अब अुस के ध्यान में आया कि किले से अितनी दूर अिस तरह अकेली का लड़ना बड़ी मूर्खता थी। किन्तु अिस असाधारण साहसी वीरता का प्रतिध्वनि अब शहर के हर रास्ते में मिलने लगा। जब कि सारा शहर और राजमहल भी अंग्रेजी तरवारों ने रक्तरंजित कर दिया था, राजमहल के घुडसाल के ५० नौकरोंने घुडसाल छोडने से अिनकार कर दिया। 'शरण' का शब्द अुन के शब्दकोष में था ही नहीं। अुन में से हर अेक ने अपनी शक्तिभर अधिक से अधिक गोरों का खात्मा किया; और अुन में से हर अेक कट जाने पर ही वह घुडसाल शत्रु के हाथ लगी। अंग्रेजों ने अभी तक शहर को खंडहर बना डाला था। अुन के हाथ में जो भी आता, चाहे पांच साल का बालक हो, चाहे ८० वर्ष का बूढा, अुसे कत्ल कर देते। शहर भर आग लगायी गयी। घायलों या मरनेवालों की कराहों तथा मारनेवालों की चिल्लाहट से आकाश गूँज अुठा। सर्वत्र कुहराम मच गया।

अंग्रेजों ने किले के परकोटे को, बहुत पक्का होने के कारण, अुडा देने का काम दूसरे दिन करना तय किया था। आज झाँसीवाली रानी परकोटे पर खडी अुस अत्यत करुणापूर्ण दृश्य को देख रही थी। अुसे अत्यंत दुख हुआ। अुन की आँखें डबडबायीं। रानी लक्ष्मीबाओी रोयीं। वे सुदर आँखें रोने से लाल हो गयीं। अुन का झाँसी और अुस की यह दशा! फिर अेक बार सिर अूँचा कर देखा कि झाँसी की किलाबन्दी पर फिरंगी का झण्डा—पराधीनता का दाग—गाडा गया है; बस, अेक विलक्षण तेज अुन रोनेवाली आँखों में चमक अुठा। धन्य वे आँखें, वह हृदय, वह धैर्य! अरे, यह दूत कौन बेतहाशा दौड कर अुस के पास आ रहा है? दूत ने कहा :—'रानी सरकार! किले के प्रमुख द्वाररक्षक, अतुल धैर्य, सरदार कुँवर खुदाबक्श और गुलाम गोशखाँ—तोपचियों का सरदार—दोनों को अंग्रेजों ने गोली से अुडा दिया है।' पहले ही दुखी हृदय पर यह कितना भयंकर आघात! कैसे सकंट पर संकट आ रहे हैं? रानी, अब आगे क्या विचार है? विचार—अेकमात्र निश्चय है—

स्वाधीनता की कौस्तुभमणि झाँसी की लक्ष्मी के गले से नहीं गिरना चाहिये। अुस दूत से, जो अेक बूढ़ा सरदार ही था, कहा :—देखो, मैं अिस किले के साथ, स्वयं अपने हाथों बारूद के भंडार में आग लगा कर अुड जाना चाहती हूँ।" अपने जरिपटके के साथ—स्वाधीनता के झण्डे के साथ—या तो वह सिंहासन पर होंगी या चिता पर!

यह सुन कर अुस बूढ़े सरदार ने शान्ति से कहा :—सरकार! यहाँ रहना अब खतरनाक है। शत्रु की छावनी को चीर कर आप को आज रात में किला छोड चले जाना चाहिये और पेशवा की सेना में पहुँचना चाहिये। और यदि मार्ग में मृत्यु आ जाय तो समरांगण-तीर्थ की पवित्र धारा में गोता लगा कर स्वर्ग के खुले द्वार से प्रवेश हो सकता है।"

'मै मैदान मे लडते लडते मरना अधिक पसंद करती हूँ' रानी ने कहा, "किन्तु मैं स्त्री हूँ; मेरे शरीर की कहीं विडंबना होगी तो?"

सब सरदारोंने अेक स्वर से कहा 'विडंबना?' हम में से अेक भी जीवित है, तबतक आप के शरीर को छूने का साहस करनेवाले शत्रु को हमारी तलवार टुकडे टुकडे कर देगी।"

अच्छा! रात हो गयी; रानी लक्ष्मी ने अपनी प्यारी प्रजा को बुला कर अन्तिम बार आशीर्वाद दिया। झाँसी छोड जाने का रानी का अिरादा जान सारी प्रजा की आँखें डबडबायीं। शायद फिर रानी कभी न आयें? रानीने चुनिन्दे घुडसवारों को अपने साथ लिया। जेवर से शृंगारित अेक हाथी अुन के बीच रखा गया और 'हर हर महादेव' की गर्जना कर वे किले से अुतरने लगीं। पुरुष-वेश बनाया था; फौलादी कवच ने शरीरकी रक्षा की थी। कमरबंद में अेक जमिया पडा था; और अेक पैनी तलवार लटक रही थी; अञ्चल में अेक पियाला बंधा था; और रेशमी धोती से, पीठ पर अुनका दत्तक पुत्र दामोदर, बंधा हुआ था। अेक श्वेत अश्वपर चढी, अिस तरह सजी, वह लक्ष्मी प्रत्यक्ष महादेवी लगती थी। अुत्तरी दरवाजे के पास पहुँचने पर टिहरी के देशद्रोही राजा के प्रहरीने टोका, 'कौन है?' 'टीहरी की सेना सर ह्यू रोज

की सहायता के लिअे कूच कर रही है '— अुत्तर मिला। पहरेदार ने जाने दिया। रानी आगे बढी। अेक गोरे प्रहरी का भी अिसी तरह टाला गया। अुन के शरीर-रक्षकों में अेक दासी, अेक बारगीर, और १०।१५ घुडसवार थे। अिस तरह यह ' सेना ' शत्रु की छावनी के बीच से हो कर काल्पी तक सुरक्षित पहुँच गयी। किन्तु अुन के अन्य घुडसवारों को सदेह में अंग्रेजों ने रोका और वहाँ खूब ठन गयी। मेरोपत तांबे, घायल होने पर भी, दतियातक निकल गये, किन्तु वहाँ के देशद्रोही दिवान ने अुन्हे गिरफ्तार कर लिया और अंग्रेजों को सौंप दिया। अंग्रेजों ने मेरोपंत तांबे को फॉसी दिया।

अच्छा तो, लक्ष्मीदेवी; अब तुम्हारे घोडे को अेडी दो। क्यों कि, ले. बॉकर, चुने हुअे घुडसवारों के साथ तुम्हें पकडने के हेतु, पीछे से घोडा अुछालता आ रहा है। और हे अश्व ! तुम्हारे पीठ पर होने वाले पवित्र निधि के कारण भाग्यवान् ! पूरा बल लगा कर दौडो ! भारत के मानव भले ही देश द्रोही बनें; भारत के जानवर, तुम तो अीमानदार रहोगे ! हे रात्रि ! रानी लक्ष्मी तथा अुन के शत्रुओं के बीच अंधकार का परदा खडा करो। देखो अश्व ! तुम वायु से भी अधिक वेग से दौड रहे हो, लक्ष्मीदेवी को फूल की तरह ले जाओ। मार्ग ! तुम किसी तरह की रुकावट घोडे को न होने दो। हे तारो ! शत्रु के लिअे प्रकाशित न हों। हॉ, अितना प्रकाश रहे कि तुम्हारी अमृत-वर्षिणी किरणों से यह कमल के समान सुकोमल सुदरी मार्ग तय करने में अुत्साहित हो। अब तो अुषा आ गयी, सो हे वीर लक्ष्मीदेवी ! वायु की पीखों पर रात भर तुम अुडती चली आ रही हो ! भाडेर गॉव के पास कुछ विश्राम करो ! वहॉ का लम्बरदार तुम्हारे प्यारे दामोदर को खिलायगा !

कलेवा कर के तुरन्त कालपी के मार्ग में रानी चल पडीं। किन्तु पीछे से यह गर्द कैसे अुड रही है ? देवीजी ! और तेज करो घोडे को, पीठ पर दामोदर को सॅम्हालो और आगे बढो। अपनी तलवार सॅवारो। देखो, बॉकर पास आ रहा है। ले नीच, पीछा कर ने का यह पारितोषिक ! बिजली सी तलवार अुठी; अेक लम्बी चोट और बॉकर लडखडता घोडे से गिर पडा। पीछा करने-

वाले अंग्रेज और रानी के १०।१५ सवारों में प्राणघातक भिडन्त हुआी। जो बचे वे लक्ष्मीदेवी की रक्षा के लिअे आगे बढे। घायल बॉकर तथा अुस के साथियों ने पीछा करने से मुँह मोड लिया। भारतमाता की तलवार विजयी और चमकती हुअी आगे बढी। आकाश में सूर्यदेव और पृथ्वी पर लक्ष्मी-देवी, दोनों आगे बढ रहे थे। दोपहरी हुअी; किन्तु रानी न रुकी। साँझ की छायाअें लम्बी होने लगीं। सूर्यदेव थक कर क्षितिज के पीछे छिपे, किन्तु रानी ? नहीं, वे बढती ही गयीं। तारे, झिलमिलाये। अुन्हों ने देवी को कल रात जैसी देखी थी वैसी पायी। आगे बढती हुअी, बेतहाशा घोडेको फेंकती हुअी। निदान, आधी रातमें, रानी लक्ष्मी कालपी पहुँची। १०२ मीलों का अंतर तय किया और वह भी बॉकर जैसे आदमी के साथ झूझकर, पीठ पर अेक बालक का बोझ सम्हाल कर ! वह घोडा रानी को कालपी में सुरक्षित पहुँचाने ही को प्राण धारण किये हुअे था। क्यों कि, अपनी अनमोल निधि को अुतार कर वह लडखडाया और स्वर्ग सिधारा। छः आदमियों को तुरन्त अुस की अन्त्यक्रिया में लगाया गया। वह घोडा रानी का बडा प्यारा था। जिस घोडेने अैसा पवित्र बोझ कितनी अीमानदारी से पहुँचा दिया, अुस का स्मरण अवश्य रहना चाहिये; अुस की स्मृति सदा के लिअे प्यारी रहेगी।

रानी ने सबेरे तक आराम किया। सबेरे रानी और रावसाहब पेशवा का हृदयवेधक साक्षात् हुआ। दोनों को अपने अुन पुरखाओं का स्मरण हुआ जिन्हों ने असम्भव को सम्भव बनाने के बडे काम किये और जिन के वंश में होने का सौभाग्य दोनों को प्राप्त था ! अुन्हे अिस बात से प्रेरणा मिलती थी कि मराठों का झण्डा अटक पर लहराने का कारण था—शिंदे, होळकर, गाय-कवाड, बुंदेले और पटवर्धन स्वराज्य के लिअे अपने प्राण न्योछावर करने को सिद्ध थे। अुसी झण्डे और अुसी स्वराज के लिअे, जिसके लिअे अुनके पुरखाओं ने खून बहाया था, शुरू हुअे युद्ध को अन्ततक निबाहने का दोनों ने प्रण किया। स्वदेश को भ्रष्ट करने की चेष्टा करनेवालोंसे वह युद्ध लडा जा रहा था।

सो, पूरा बल लगा कर वह युद्ध जारी रखने का दृढ संकल्प किया।

फिरसे लक्ष्मीबाओी तथा शूर तात्या टोपे ने घनघोर संग्राम की सिद्धता करना शुरू किया।

अिन दोनों को युद्ध की सिद्धता करने के लिअे छोड, हम अब ब्रिगेडियर विटलॉक की गतिविधि का सरसरी दृष्टिसे निरीक्षण करें, जिसे हम कुछ पहले छोड चुके हैं। नर्मदा तथा गंगा-जमना के बीच के प्रदेश को फिर से जीतने के लिअे दो सेनाअें चली थीं। अुन में से अेक ने, जो ह्यू रोज के नेतृत्व में बढी थी, झाँसी जीत लिया था, जिस का वर्णन हम पहले दे चुके हैं। झाँसी जीतने के बाद अराजक और गडबड वहाँ मची। लूट के काम में तो नादिरशाह की बराबरी की गयी। मंदिर और मूर्तियाँ भ्रष्ट कर दिये गये; भयंकर हत्याकाण्ड हुआ। अुस के बाद यह सेना मुहीम जारी रखने के लिअे कालपी बढनेवाली थी। अिस का अन्तिम भाग पूरा करने का कार्य ब्रिगेडियर विटलॉक को सौंपा गया था। वह १७ फरवरी को जबलपुर से चला; अुस के साथ गोरी पलटन और मद्रासवाली काली पलटन, गोरा और काला रिसाला और अुत्कृष्ट तोपखाना था। सागर में बडी शान से अुस ने प्रवेश किया जहाँ अंग्रेज-निष्ठ ओरछा का राजा अुसे मिला। फिर यह सेना बाँदा के नवाब को जीतने चली, जो अुस प्रान्त के मुख्य क्रांतिनेता थे। क्रांति की पहली लहर में झाँसी, सागर और अन्य स्थानों में क्रूर कत्लें हुअी थीं और वहाँ के गोरे जहाँ शरण मिली वहाँ जान बचाने को भाग गये। बादा के नवाब ने अुन्हें अपने राजमहलमें सुरक्षित रखा था और अुन की अच्छी तरह देखभाल की। किन्तु साथ साथ क्राति के धमाके से थर्रानेवाली ब्रिटिश सत्ता के कधावर को फेंक देने के काम में भी व्यस्त था। शुरू से अुसने परायी सत्ता के सभी चिन्ह मिटा दिये थे और वह स्वतंत्र नरेश की हैसियत से राज कर रहा था। जब अुस ने देखा कि अंग्रेजी सेना अुस का राज छीनने आ रही है, तब अपनी प्रजा के अनुरोध तथा सहायता से युद्ध की सिद्धता की। कअी मुठभेडों के बाद हार कर नवाब अपनी सेना के साथ कालपी चल पडा और १९ अप्रैल को विजयी विटलॉक ने बाँदा में प्रवेश किया। अब किरवी के राव पर चढाअी होनेवाली थी।

किरवी नरेश राव माधवराव की आयु १० वर्ष की थी और अंग्रेज अुस के रक्षक बने थे। किरवी के राव बाजीराव पेशवा का नजदीकी नातेदार था। १८२७ में अनन्तरावने (अुस समय के किरवी नरेश) काशी के मंदिरों में दान करने के लिअे अंग्रेज सरकार के पास दो लाख रुपये जमा कर दिये थे। अनन्तराव के मरते ही अंग्रेज यह सारी रकम हड़प गये। अिस से योग्य पाठ न सीखते हुअे अुन के पुत्र विनायक राव ने भी कअी, लाख रुपयों की थाती अंग्रेजों के पास रखने की मूर्खता की थी, वह रकम भी अन्याय से हड़प कर गये थे। विनायकराव के मरते ही यह घटना हुअी। विनायकराव का दत्तक पुत्र माधवराव नाबालिग था, रियासत का प्रबंध अंग्रेजों के हाथ में था, प्रधान कर्मचारी रामचंद्रराव अंग्रेजों से नियुक्त था; अिस दशा में अंग्रेजों को किरवी रियासत में किसी प्रकार के विद्रोह की आशा न थी। किन्तु १८५७ में अिन रावों और महारावों ने जो कुछ किया अुस से अुन की प्रजा सम्मत न होती थी। कभी अप्रत्यक्ष, कभी प्रत्यक्ष रूप से राष्ट्र की सच्ची शक्ति जनता का बल, सदियों तक कुचला जाने के बाद भी धीरे धीरे अपना प्रभाव जमाने की अनथक चेष्टा कर रहा था। किरवी के जमींदार, धर्मगुरु, व्यापारी, यहाँतक कि मामुली से मामूली आदमी भी स्वाधीनता के आदर्श से प्रभावित हुअे थे और अेक दिन दिल्ली स्वतंत्र होने के समाचार सुन कर आनंद से अुछल पड़े थे। दूसरे दिन लखनअू स्वतंत्र घोषित हुआ और तीसरे दिन झाँसी ने फिरंगी के झण्डे को अुखाड फेंकने के समाचार आये। अिन आशाप्रद घटनाओं से अुत्साहित हो कर लोगोंने किरवी स्वतंत्र होने की घोषणा की, और विदेशी कंधावर को, बिना राव की सम्मति या मंत्रियों की आज्ञा के, फेंक दिया। जब जनता से स्वतंत्रता की घोषणा डंके की चोट पर पुकारी जा रही थी तब किरवी के ९ या १० वर्ष के राजाने अंग्रेजों के विरुद्ध कुछ भी न किया था। अुलटे, जब अंग्रेजी सेना बुंदेलखण्ड में लौट आयी तब अुसने अुस का स्वागत कर अपने राज्य में आने का निमंत्रण दिया। निमंत्रण को स्वीकार कर अंग्रेजी सेना चुपचाप चली आयी; किन्तु आयी अुस नाबालिग राव को बंदी बनाने, अुसकी राजधानी को खंडहर

बनाने और अुस के राजमहल का विध्वंस करने और पैशाचिक लूट, संपूर्ण अग्निकाण्ड, तथा दुष्टता पूर्ण प्रतिशोध लेने।* रियासत खालसा में मिलायी गयी।

जीते हुअे प्रदेश में 'शान्ति' रखने के लिअे विटलॉक महोबे में छावनी डाले रहा था। वास्तव में अुसने अपनी मुहीम पूरी की थी। बुन्देलखण्ड का पूरबी हिस्सा अुसने जीत लिया था और अेक दो छोटी जगहों को 'शान्त' करने के लिअे कुछ दस्ते भेजे गये थे। सो, अब विटलॉक को छोड, फिर अेक बार, शूर झाँसीवाली रानी के पवित्र चरणों का अनुसरण करें।

अब आशापूर्ण रानी ने पेशवा की सेना के साथ कालपीसे ४२ मीलों पर होनेवाले कॅचगॉव को कूच किया। किन्तु, मालूम होता है, रानी की सूचना के अनुसार सेना की व्यूह–रचना रावसाहब ने न की थी। ध्यान रहे, रावसाहब या तात्या टोपे को पूरी तरह प्रबंध करना भी असम्भवसा था। यद्यपि अुन के पास बाँदा का नवाब, शाहगढ नरेश, बानापुर के राजा, ये सब अेक ही झण्डे के नीचे अिकठे हुअे थे; फिर भी एक विशाल सैनिक सगठन के अंतर्गत अनुशासित हो कर नहीं आये थे, जो संगठन अेक हृदय से संचालित हो, अेक निश्चित योजना और विधान के अनुसार चले और कडा सैनिक अनुशासन और आज्ञाकारित्व हो। हरअेक अपनी योजना बनाता, जिससे किसी की योजना पर पूरा अमल न होता, जहाँ शत्रुदल के नेताओं में कोअी झगडा न था; संगठन व्यवस्थित औ

---

* सं. ४८. राव के साथ कियें गये अिस अन्याय के विषय में, मॅले-सन को मानना पडता है, कि "विटलॉक के सैनिकों पर अेक भी गोली न चली; तो भी अुसने निश्चय कर लिया था कि अुस नाबालिग राव को बागी माना जाय। अिस नीचता का कारण यह था कि गोरे सैनिकों को अुन की कठिन लडाअियों तथा चिलचिलाती धूप में कष्ट अुठाने का पारितोषिक देने की सामग्री किरवी के खजाने में भी। वहाँ के तहखाने आदि में अनमोल चुने हुअे जेवर तथा हीरे पडे थे। अिस सपत्ति के लालच में यह अन्याय किया गया"–के और मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ५–पृ. १४०–१४१.

अच्छी तरह अनुशासित था। सर ह्यू रोज के सेनानी नियुक्त होने के पहले गरम चर्चाओं और मतभेदों का बाजार गर्म रहा। बस, किन्तु, अेक बार अुस की नियुक्ति हुअी कि अुस का मत ही सब का मत था। जो भी आज्ञा वह दे ठीक मानी जाती; और न भी हो तब भी अुसपर अमल होता। किसी साधारण सेनानी की गलत आज्ञा पर, यदि आज्ञाकारित्व और व्यवस्थात्मक वीरता के साथ, सैनिक अमल करें तो भी वे सफल होंगे। अिस के विपरीत सुयोग्य सेनानी की सुविचारपूर्ण आज्ञाअें भी विपत्ति और पराजय का कारण बनती हैं, यदि सैनिक अपनी सनक को अधिक महत्त्व दें, शासन में अेकता न हो और आज्ञाकारित्व न हो।

नहीं तो कँचगाँव में जो पराजय हुअी वह कभी न होती। झाँसी से सर ह्यू रोज के आते ही कँचगाँव में क्रांतिकारियों से मुठभेड हुअी। दोपहर की चिलचिलाती धूप गोरे सह नहीं सकते यह जान कर क्रांतिकारियों के अेक आज्ञापत्र में लिखा था:—"सबेरे १० बजे के पहले फिरंगी से कोअी मुठभेड न करे; सदा ही दस के बाद लडाअी हो।" अिस बडी चतुर आज्ञा पर अुस दिन अमल किया गया। जैसा कि अन्य स्थानों में हुआ था, दस बजने के बाद जहाँ लडाअी शुरू होती अंग्रेजों के छावनी में कुहराम मच जाता; आज अैसा ही हुआ। और तिसपरभी कँचगाँव में क्रांतिकारियों की हार हुअी और अुन्हें कालपी को हटना पडा। जिस सराहनीय ढंग से वे पीछे हटे, जिस संगठित रूप से वे मोर्चे छोडते गये, शत्रुने भी अुस की अत्यंत प्रशंसा की है।* किन्तु

सं. ४९ "फिर बागियोंने वह काम किया जिस की प्रशंसा अुन के शत्रुओं को भी करनी पडी। पीछे हटने का कार्यक्रम अुन्होंने जिस तरह पूरा किया अुस का जोड पाना असम्भव है। अंग्रेज अफसरोंने अुन्हे जो पाठ अच्छी तरह सिखलाये थे अुन को ठीक तरह ध्यान में रखा गया था। किसी प्रकार की जल्दबाजी, अव्यवस्था तनिक भी न थी; पीछे की ओर भागने का नाम नहीं। रणमैदान के संचलन की तरह सब कुछ व्यवस्थित था। दो मील

दुर्भाग्यसे वह सारा संगठन तथा अनुशासन पराजय के बाद अमल में आने के बदले पहले दिखायी देता तो अच्छा होता ! अिस के बाद क्रांतिकारी कालपी को पहुँचे। और फिर हार का दोष अेक दूसरे के सिर मँढने की होड लगी। पैदल सेनाने रिसाले को कोसा; रिसाले ने झाँसीवालों की निंदा की; और सब मिल कर तात्या टोपे की गलती बतायी।

किन्तु यह आपसी बखेडे को देखने तात्या कालपी आया ही न था; वह तो जालवण के पास चरखीं गाँव में अपने पितासे मिलने गया था। वह अुसके बाद कहाँ जायगा ? ध्यान रहे रास्ते में गवालियर पडता है। हम आशा करें कि अिस अनोखे पुत्र और अुसके पिता की भेट अत्यंत प्रेमपूर्वक तथा आनदसे हो और फिर क्रांतिके अिस महान् नेता को अपनी बडी बडी योजनाओं को सफल बनाने में तुरन्त जश मिले।

अिस मनचाही यात्रा में तात्या के चले जाने के बाद रानी लक्ष्मी पेशवा के शिविर में गयीं। कँचगाँव के पराभव से पेशवा को बडा रंज हुआ था। अपने स्फूर्तिमद् शब्दों से अुन की अुदासी को नष्ट कर, धीरज बंधाते हुअे शूर झाँसीवालीने कहा—' आप यदि सेना को फिर से संगठित करें तो शत्रु अुस पर कभी विजय नहीं पा सकता ' रानी के शब्दों से बांदा के नवाब को अुत्साह प्राप्त हुआ। स्फूर्तिमद् शब्दों में रचे घोषणा-पत्र फिर से क्रांति-सेना में वितरित हुअे। आज जमना के किनारे भीड जमा हो रही थी। तलवारें और तोपें चमकती हैं; मातृभूमि की स्वाधीनता की साधना को संतप्त सिपाही जमना मैया के आशीर्वाद माँग रहे है—अिस तरह का मेला जमना किनारे

लम्बी मुठभेड की हरावल होने पर भी किसी जगह घबराहट नहीं थी। सैनिक गोली चलाते, फिर पीछे की पाती के पीछे दौड जाते और अपनी बदूकें भरते। फिर आगेवाले गोलियाँ चलाते और पीछे अपनी जगहपर हट जाते। पीछा करनेवाले यदि बहुत जोर करते तो वे डट कर खडे हो जाते और घमासान लडाओी पर मजबूत करते।" मॅलेसनकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ५ पृ. १२४। शत्रु की अिस प्रशंसा से ' पांडे ' की सेना का श्रेष्ठत्व निखर पडता है।

पहले कभी किसी ने न देखा होगा। सब ओर मातृभूमि और धर्म की जय की पुकारें प्रतिध्वनित हो रही हैं। 'जय जमना मैया! तुम्हारा पवित्र जल हाथ में ले कर हम प्रतिज्ञा करते हैं, कि फिरंगी नष्ट होगा, स्वदेश स्वतंत्र होगा। स्वधर्म की पुनः स्थापना होगी। जय जमना! यह सब–होगा तभी हम जीवित रहेंगे; नहीं तो हम रणमैदान में सदा के लिअे सो जायेंगे। कालिंदी माता! हम त्रिवार प्रतिज्ञा करते हैं"

तीन बार शपथ किये वीरो! मैदान में बढो, वह रण–लक्ष्मी तुम्हें अुत्तर की ओर बुला रही है। रावसाहब सारी सेना का नेतृत्व करेंगे। ह्यू रोज के नेतृत्वमें होनेवाली २५ वीं पैदल पलटन को भगा दो। वे सब हिंदी हैं–अिन देशद्रोहियों को भगा दो। यह मेजर ऑर्र बढा क्या?–अुस की भी वही गत कर दो। कालपी के सामने के मैदान में हिलोरनेवाले हिस्से की सेना को सुरक्षित रखने पर हमारी स्थिति लगभग अजेय है। अरे, देखो! सेनामुख पीछे हट रहा है। वह बहुत अधिक आगे बढ गया था और पीछेसे पूरी सहायता न पानेसे पीछे हटना पडा है। दौडो, रानी लक्ष्मी, अुन की रक्षा के लिअे दौडो। तलवार हवा में फेंकते हुअे बिजली–सी वह दौड पडी अपनी सेना को बचाने! अंग्रेजों के दाहिने पासे पर लाल–गणवेशधारी सवारों के साथ टूट पडी। अेकदम अंग्रेज ठंढे पडे, अितना जोरदार हमला था वह! और लाचार हो पीछे हट गये। अिक्कीस साल की लडकी की यह बिजली सी झपट, अुस के घोडे का वायुवेग से दौडना, दायें–बायें गाजर मूलीकी तरह अुस का गोरों को काटना, अिस दृश्य को देख कौन होगा जो अुस के लिअे न लडेगा? किसे अिससे अुत्साह प्राप्त न होगा? रानी के रणकौशल से सभी क्रांतिकारियों में अुत्साह बढ गया। रक्ताक्त भीषण युद्ध शुरू हुआ! हलकी-तोपों के गोरे तोपची अेक अेक कर के मर गये। तब रानी अपने रिसाले के साथ आग अुगलती तोपों पर धावा बोल गयी। तोपची भागे। घोडों पर होनेवाला तोपखाना तितर बितर हो गया। क्रांतिवीर सब ओरसे आगे बढने लगे। आजतक हाथ में न आनेवाले फिरंगी को मटियामेट करने का मौका मिलने से वे आनंद से बौखला गये और अुन सब के आगे चमकती थीं रानी लक्ष्मी!

अिस अचानक घावे को देख ह्यू रोज चौंक पडा। वह अपने अिमदादी अूँटों को लेकर आगे बढा; किसी तरह अंग्रजोंने अूँटों के कारण अपनी जान बचाओी। अेक अंग्रेज लिखता है:—और पंधरह मिनिट हो बीत जाती तो क्रांतिकारियोंने हमारा सफाया कर दिया होता। अिमदादी १५० अूँटोंने अुस दिन हमें अुबारा। और अुस दिन से, सचमुच, म अूँट जानवर को प्यार की नजर से देखने लगा।" केवल अूँटदलने मओी २२ को पेशवा की सेना को कालपींतक पीछे हटने पर मजबूर किया। कुछ मुठभेडों के बाद २४ मओी को ह्यू रोज कालपी में घुस पडा। कालपी किले में तात्या टोपे तथा रावसाहब पेशवा की बडे कष्टमे जमा की हुओी युद्धसामग्री अनायास अंग्रेजों के हाथ लगी। साठ हजार रतल बारूद भूमि में गाडी हुओी पायी गयी। नयी बदूकें, अद्यावत् ढग के बने पीतल के तोप के गोले, अुन्हें बनाने के यत्र, सैनिक गणवेश के ढेर के ढेर, झण्डे, मारू बाजे, फ्रान्सीसी तुरहियॉ, युरोपमें बनी गरनाल तोपें और कओी तरह के शस्त्रास्त्र–अितनी अति अुपयुक्त निधि अंग्रेजों के हाथ लगी।

हाथ न लगे केवल शूर तथा सदा स्मरणीय क्रांतिनेता! क्यों कि, कालपी का सपूर्ण पतन होने के पहले अेक सप्ताह रावसाहब, बाँदा का नवाब, रानी लक्ष्मीबाओी और अन्य नेता वहॉसे गायब थे। और किसी अज्ञात स्थान को गये थे, किन्तु बिना सेना के, निःशस्त्र और निःसहाय अिन दुर्दैवी नेताओं को मारे मारे फिर कर, भूखों भटक कर या तो शत्रु के चंगुल में पकडा जाना या आत्महत्या करना और काल के गाल में प्रवेशित होना ही पडता और कोओी चारा न था।

अिस तरह, जमुना के अुत्तर कॉठे का प्रदेश फिर से हडप कर, विजयी कॅम्बेल हिमालय तक पहुँच गया। अिधर ह्यू रोज और विटलॉक ने नर्मदा से प्रारंभ कर यमुना के दक्षिण कॉठे के प्रदेश पर दखल किया। क्रांतिकारियों का पूरा सफाया करने पर अंग्रेजों को हक था कि वे अपना अभिनंदन करें। ह्यू रोज ने अपने सैनिकों का अभिनंदन अिन वक्तृतापूर्ण शब्दों में किया है:—वीर सैनिको! तुमने अेक हजार मील का प्रदेश रौंध कर शत्रु से सौ

तोपें छीन ली हैं। नदियों को तैरकर, पहाड टीले लांघ कर, जंगलों, दर्रों, अुपत्यकाओं में शत्रु का सफाया कर, असीम प्रदेश जीत कर अपने राष्ट्र की प्रतिष्ठा में चार चाँद लगाये हैं! तुम वीर तो हो ही, किन्तु अनुशासन का पालन भी तुमने बडी टेक से किया है। **क्यों कि, बिना अनुशासन के साहसी वीरता का कोअी मूल्य नहीं होता।** अत्यंत कठिन दशा में फुसलाव तथा यंत्रणाओं में तमने अपने प्रमुख अधिकारियों की आज्ञाओं का ज्यों का त्यों पालन किया और आज्ञाभंग या अुद्दण्डता का तनिक भी बरताव न किया। जमुनासे ठेठ नीचे नर्मदा तक तुमने अपने अद्वितीय सैनिक अनुशासन से प्रचंड विजय प्राप्त की है।"

यह वीरस्तुतिपूर्ण और प्रभावी वक्तृता को प्रसिद्ध कर सर ह्यू रोज स्वास्थ्य के कारण सैनिक सेवा से निवृत्त हुआ। और अुस की विजयी अंग्रेज सेना भी शत्रु की पूरी हार होने से अब छुटकारे की साँस भर कर आराम की अपेक्षा करने लगी।

किन्तु अितने ही में तुम आराम का खयाल कैसे कर सकते हो? तात्या टोपे और रानी लक्ष्मीबाई जो जीवित हैं! ब्रिटिश सैनिको, तबतक तुम्हे आराम कैसा? और यदि तुम अपनी अिच्छासे खडे न होंगे तो यह ग्वालियरवाली सेना तुम्हे मैदान में खदेडने के लिअे सिद्ध है! कालपीसे छटक कर सभी क्रांति-नेता आगामी योजना बनाने के लिअे गोपालपुर में जमा हो गये। वास्तव में अिस समय आशा के कोअी आसार थे नहीं। नर्मदा से जमनातक और जमना से हिमाचलतक सारा प्रदेश अंग्रेज फिरसे जीत चुके थे। क्रांतिकारियों के पास सेनाबल न था; न थे गढ किले। और बारबार हार होने से अुन्हें नयी सेना खडी करना भी असम्भव सा हो गया था। किन्तु तात्या टोपे जो जीवित था, बस, यही पर्याप्त है! रानी लक्ष्मी भी वहाँ थीं ही; तात्या गोपालपुर को लौट आया था। लोगों में खबर यह अुडी थी कि वह अपने पिता से मिल आया है। खैर, खबर झूठ हो या सच, किन्तु अितिहास अिस का कोअी प्रमाण नहीं देता। अब ह्यू रोजने अपना धूर्त दाँव,

कालपी में लडाया; ठीक तभी अेकाअेक तात्या को अपने पिता के दर्शन की सनक आ गयी; और आगे चल कर यह सनक, पितृदर्शन की धुन तो युद्ध की विस्मृति कराने लगी। और अिसतरह अपने पिता के दर्शन करने की अुमंग पर अंकुश न रखते हुअे वह सीधे चरखी चला भी गया। अिस सनक का भेद क्या होगा? होगा यही, कि कालपी का पतन होने पर क्रांतिकारियों के हाथ में, कोअी न कोअी सुरक्षित स्थान या किले का होना अत्यंत आवश्यक था; नयी सेना मिल जाय तो अच्छा ही था। और अिसी कारण से यह क्रांति का अग्रदूत कालपी से छटक कर गवालिअर में घुस पडा। देखो, अब क्रांति का वात्याचक फिरने लगा है। सेनाधिकारियों के शपथपूर्वक आश्वासन तात्या ने प्राप्त किये और दरबार के अुत्तरदायी व्यक्ति, सरदार तथा अन्य कअी लोगों से संबध प्रस्थापित कर क्रांतिके लिअे अुसने अेक स्वतंत्र सेना बना ली। अपनी शक्ति भर सब कुछ करने तथा देने के आश्वासन अिन लोगोंने दिये थे और अेक महीने के अंदर गवालियर की सारी सेना मानो तात्या की हथेली में आ गयी। फिर अुसने गवालियर के मर्मस्थानों को जान लिया और शिंदे के सिंहासन ही के नीचे सुरंग लगा कर तात्या टोपे रावसाहब के पास गोपालपुर में आया। अपने 'पिता के दर्शन' वह कर चुका था।

गवालियर की प्रजा को क्रांतिकार्य की ओर कर लेने में सफल हो तात्या आ पहुँचने के समाचार सुन कर रानी लक्ष्मी को बडा आनंद हुआ और अुसने पेशवा को सीधे गवालियर पर चढ जाने का आग्रह किया। २८ मअी को क्रांतिकारी अमीनमहल को पहुँचे। लंबरदार ने अुन्हे रोकने की चेष्टा की। अुत्तर मिला, "तुम कौन होते हो रोकनेवाले? हम पेशवा है और स्वराज्य और स्वधर्म के लिअे लड रहे हैं। सारे संसार को मालूम हो जाय कि हम पेशवा हैं और अितिहास भी कान खोल कर सुने हम स्वराज्य और स्वधर्म के लिअे लड रहे है।"

श्रीमत रावसाहब के अिन शब्दों से कायर चुप हो गये और वहाँ के हजारों देशभक्तोंने क्रांतिवीरों का हृदय से स्वागत किया। तब पेशवा सीधे

ग्वालियर राजधानी के दीवारों से आ टकराये। शिंदे को अुन्होंने लिखा, 'मात्र, मित्रत्व की भावना से हम आप के पास आ रहे हैं। हमारी पुराने संबंधों को स्मरण करो। हम आपकी सहायता चाहते हैं और अुसीसे हम दक्षिण पर चढाओी कर सकेंगे।' किन्तु कृतघ्न ग्वालियर नरेशने पुराने नाते को कब का तोड दिया था। यह बात! तब तो अुसे बताना होगा पुराना और अिस समय का नाता क्या है! "शिंदे के पुरखा हमारे सेवक थे; मामूली सेवक थे—यह पुराना नाता! और अिस समय? शिंदे की सारी सेना हमारा साथ देने को सिद्ध है। तात्या टोपे ने सेनाधिकारियों से मिलकर यह भेद जान लिया है।" किन्तु यह सब भूल कर शिंदे अपनी सेना और तोपों के साथ ग्वालियर के पास पेशवा की सेना पर चढाओी करने चला। श्रीमंत पेशवा ने सेनासंभार को देख कर यह माना कि शिंदे, पछता कर, स्वदेश के झण्डे की वंदना के लिअे अगवानी कर रहा है। किन्तु रानी लक्ष्मीने साफ बता दिया, कि ग्वालियर नरेश राष्ट्रीय झण्डे के आगे झुकने को नहीं, ठुकराने के लिअे आ रहा है। रानी अपने ३०० सैनिकों के साथ सीधे शिंदे के तोपखाने पर धावा बोल गयी। थोडे ही समय में जयाजी-राव शिंदे और अुसके शरीर-रक्षक 'भाले वाटी' वीर दीख पडे। छेडी हुअी नागन से भी अधिक क्रोध से अिस राष्ट्रद्रोही को देख लक्ष्मीबाओी अुबल पडी और तीर की तरह वह अुनपर टूट पडी। देख! महादजी शिंदे के शूर वंशज जयाजी! रनवास में पडी यही बाओीस वर्ष की अबला तुम्हारे तलवार को ललकार रही है। संसार देखे कि महान् देशभक्त महादजी का कितना अंश अिस फिरंगीभक्त जयाजी में अुतरा है; जरा अजमा तो लो! रानी के पहले ही हमलेसे अुस के मुसाहब बगलें झाँकने लगे और 'भालेवाटी' भाग खडे हुअे। किन्तु, कम से कम, अुस की विशालवाहिनी और भीषण तोपखाना अवश्य अपनी शक्ति दिखा देंगे। ग्वालियर की सेना ने तात्या टोपे को देखा और, बस, अपनी शपथ को स्मरण कर पेशवा के साथ लडने से साफ अिनकार किया; मुख्य सेनाधिकारियों के साथ सारी सेना पेशवा की ओर गयी; तोपखाना धरा रहा; और ग्वालियर के हर सैनिक ने स्वराज के झण्डे को

प्रणाम किया। अिस तरह क्रांतिनेता के अेक जादूअी स्पर्श से गवालियर नरेश का सिंहासन हडहडाकर गिर पडा !

और कायर जयाजी तथा अुस का मंत्री दिनकरराव दोनों मिलकर, केवल मैदान ही को नहीं, गवालियर को भी छोड आगरे भाग गये।

गवालियर की प्रजा के आनद का ठिकाना न रहा। श्रीमत के सम्मान में सेनाने तोपें दागीं। शिंदे के कोषाध्यक्ष अमरचंद भाटिया ने शिंदे के खजाने से सब कुछ पेशवा के चरणों में धर दिया। क्रांतिकार्य से सहानुभूति दिखानेवाले जिन देशभक्तों को बंदी बनाया गया था, अुन्हे जनता के जयघोष में मुक्त किया गया। अंग्रेजों का साथ देने की सलाह देनेवाले शिंदे के राष्ट्रद्रोही पिट्ठू जयाजी के साथ भाग गये थे; किन्तु अुन का नामोनिशान भी न रहे अिसलिअे अुन के घरों में आग लगायी गयी और अुन की सपत्ति जब्त की गयी। 'राजा और प्रजा का सच्चा नाता अेशियायी लोग बिलकुल नहीं समझ पाते' अिस घृणित व्यंग को गवालियर की प्रजा ने मुँहतोड अुत्तर दे कर अुसे झूठा प्रमाणित कर दिया है। क्यों कि, **वह राजा क्या है, जो स्वदेश और स्वधर्म का द्रोह करे?** पेशवा के सिंहासन से बाजीराव (२ य) को ठीक समय पर नीचे न खींचने के कारण ही तो १८१८ में मातृभूमिका द्रोह करने के पातक के कलंक का टीका पुणें के माथे लगा! गवालियरने यह पातक न किया, जिस से १८५७ की क्रांति आधुनिक भारत में नये से अंकुरित होनेवाली प्रजा की शक्ति के प्रथम अुदाहरण के रूप में, अितिहास में आंकित होगी। शिंदे यदि स्वदेश का साथ नहीं देता तो स्वदेश भी अुसे सहारा न देगा। तलवारें और तोपें, रिसाला तथा पैदल सेना, दरबार अेवं सरदार, मंदिर और मूर्ति—सब कुछ राष्ट्र के लिअे है और शिंदे ही केवल राष्ट्र के लिअे न हो तो घसीटो अुसे सिंहासन से; और निकाल बाहर कर दो अुसे राजमहल से, राजधानी से, ठेठ राज की सीमा से! अब 'राजा प्रकृति रंजनात्'—**राजा जनता के सुख के लिअे हैं—अिस रघुकुल**

रीति के अनुसार (रघुवंश स. ४ श्लो. १२) राजा वही बनेगा जो प्रजा को सुखी करने ही के लिअे राजपद को स्वीकार करेगा !

हाँ, ३ जून का शुभ दिन निकम्मे हो कर बिताना अच्छा नहीं! स्वराज्य को अभ्यंग स्नान से नहला कर स्वदेश के सिंहासन पर बिठाना आवश्यक है। अिस लिअे फुलबाग में अेक बडा समारोह मनाया गया। सरदार, राजनीतिज्ञ, सेनाधिकारी, जो भी क्रांतिकार्य में पेशवा का साथ देने को राजी थे, सब अपनी श्रेणी के अनुसार विराजमान थे। तात्या टोपे के नेतृत्व में अरब, रुहेला, पठान, राजपूत, रगड, परदेसी, हर प्रकार के वीर अपने सैनिक गणवेश में तलवार लगाये आये थे। श्रीमंत पेशवाने भी अपने पद के वस्त्र पहने थे; मस्तक पर सिरपेंच और कलगी तुर्रा, कानों में मोती के कुंडल, गले में मोतियों तथा हीरों के हार थे। पेशवा के समस्त सम्मान-चिन्हों के साथ, भालदार, चोपदारों के ललकारों में श्रीमंत दरबार में पधारे। सब ने झटक-पट वंदना की और आनंद के आँसुओं से डबडबायीं आँखों के साथ वे सिंहासन पर विराजमान हुअे। फिर अुन्होंने सब को वक्तृतापूर्ण शब्दों में धन्यवाद दे कर रामराव गोविंद को प्रधानमंत्री नियुक्त किया। तात्या टोपे सेनापति बने और रत्नजडित तलवार अुन को भेंट की गयी। अष्ट प्रधानों का चुनाव हुआ। सैनिकों में २० लाख रुपये बाँटे गये... (पारसनीसकृत रानी लक्ष्मीबाअी की जीवनी पृ. ३०९.)

नानासाहब पेशवा के प्रतिनिधि रावसाहेबने अिस तरह अेक नया सिंहासन जमा कर अेक नयी आशा, नया प्राण क्रांतिदल में प्रेरित किया और विशृंखल बने क्रांतिकारियों को अेक सूत्र में पिरोने के लिअे अेक नया केन्द्र, अेक अड्डा पैदा किया। युद्ध की धूम के बीच ही अिस प्रकार राज्यारोहण समारोह संपन्न करने और वंदनार्थ तोपों की बाढ दागाने में तात्या टोपे का पागलपन नहीं था। संसार ने क्रांति को मृतप्राय देखा था, जिसे अिसी अुपाय से तात्याने निराशा के गर्त से अुठाया था। संसार कुछ आनंद से, कुछ निराशासे चिल्लाया था!—' क्रांति अब मर गयी; अुस

में कोओी धुकधुकी नहीं, किन्तु यह कैसा जादू है! तात्याने गोपालपुर में मरी मिट्टी को अुठाया, यों अुसपर फूँक मारी और सारे संसारने थकित हो कर देखा, कि अुस मिट्टी से अेक सिंहासन अूपर अुठा, जिस के चरणों में लाखों रुपयों की झनझनाहट थी। महान् आश्चर्य! देखो, हजारों तलवारें बढ रही हैं। सुनो, तोपों की बाढें वंदना कर रही हैं। अेक नयी सेना खडी हुअी है। नयी तोपें तैयार है, तात्याने अेक नया राज जीता है। किन्तु संसार को अपने चमत्कारों से थकित करने के लिअे तात्याने अितनी चेष्टा थोडे ही की है? अुसे मालूम था, कि मराठा पेशवा के स्थापित होने की गर्जना अिन तोपों द्वारा सुन कर सब दूर फैले हुअे क्रांतिकारियों को केंद्रित होने की प्रेरणा होगी; तेज और आशा बढेंगे। वह जानता था कि गवालियर में राष्ट्रीय झण्डे को लहराता देखकर अुनमें असीम अुत्साह और साहस पैदा होगा। अुसने भॉप लिया था, कि नये संस्थापित सिंहासन के आदर से, कोअी आकर्षण केन्द्र न होनेसे, फैले हुअे अराजक का स्थान अनुशासन लेगा। तात्याने यह सब ताड लिया और अुस की कल्पना बिलकुल ठीक निकली। पांडेदल के शरीर में फिरसे जान आ गयी। जहॉ अेक ओर तात्याके देशवासियों में अुत्साह की लहर दौड गयी, वहॉ दूसरी ओर अभी सुस्ताये अंग्रेजी सैनिकों का दिल बैठ गया। अिसी हेतु से तात्या और अन्य नेताओंने राज्यारोहण की धूम मचायी थी। अुनका यह गहरा षडयंत्र सफल हुआ। क्यों कि, तात्याके तोपों की गडगडाहटसे ह्यू रोज की सुस्ताने की अिच्छा धूल में मिल गयी। जिस चतुरता और नीतिज्ञता का परिचय, गवालियर पर कब्जा करने में तात्या और लक्ष्मीबाओीने दिया अुस के बारे में मॅलिसन कहता है:—"असम्भव सम्भव कैसे बन गया वह बताया गया है...ह्यू रोज को यह भी मालूम हुआ, कि अब और देरी करनेका परिणाम क्या होगा! बागियों के हाथ से गवालियर यदि जल्द छीना न जाय तो क्या क्या भयंकर परिणाम होंगे अिसकी कल्पना करना कठिन था। समय मिल जाय तो गवालियर को दखल करने से जो असीम राजनैतिक तथा सैनिक शक्ति तात्याने प्राप्त की थी और मानव शक्ति, धन, और सामग्रीके जो साधन अुसे मिल गये थे, अुसके बलपर कालपीमें

तितर बितर हुआी सेनाके टुकडों को जोड, फिर वह नयी सेना खडी करेगा और भारत भर मराठों का अुत्थान होगा। अुस को प्रकृतिने जो अदम्य जीवट का गुण दिया था, अुसके बूतेपर वह दक्षिण महाराष्ट्र में फिरसे पेशवा का झण्डा लहराने में समर्थ होगा। अुस प्रदेशसे हमारी (अंग्रेजों) सेना निकाली गयी थी और कहीं मध्य भारतमें तात्या को विशेष विजय मिल जाय तो वहाँ के लोग फिरसे अुस साधना के पक्ष में जायेंगे, जिस को पुरी करने में अुनके पुरखाओंने अपना खून बहाया था।*

यहाँ तक सब ठीक हुआ। अेक बार तो ह्यू रोज को चौंका कर अुसे बेमन बना दिया। अब रानी लक्ष्मी की बातपर ध्यान न देनेवालों को धिक्कार है। अेक युद्ध को छोडकर अन्य सभी समारोह बंद कर दिये जायें। किन्तु, दुर्भाग्य! क्रांतिकारियों को जो मस्ती आ गयी थी अुस के नशेमें सेना को अद्ययावत् सज्ज रखने की ओर अुन्होंने ध्यान न दिया। अैशोआराम, अच्छी दावतें तथा घातक लीचडपन में सारे लोग मगन थे। शायद अुन्होंने समझा; बस, यह है स्वराज्य की सीमा!

वास्तव में वे स्वराज गँवा रहे थे। क्यों कि, चकित हुअे ह्यू रोज ने अपने सबसे अच्छे सैनिकों के साथ बडे वेगसे गवालियरपर हमला किया। अपने साथ वह देशद्रोही शिंदे को लाया था और घोषणा यह थी, कि केवल शिंदे के लिअे अंग्रेज लडेंगे। गवालियर की भोली प्रजा को धोखा देने की यह तरकीब थी। क्यों कि, अुसमें अंधी राजनिष्ठा का नीच और आत्मनाशक गुण था, जिससे वह प्रजा महाराजा शिंदे के विरुद्ध न लडेगी। हाँ, किन्तु यह पुराना संसार अब नये रूप में बदल गया था। अबतक क्रांतिकारियों को जमाने में सफल तात्या अंग्रेजों का मुकाबला करने आगे बढा। मुरार की छावनी के सैनिकों को अंग्रेजोंने, हराया था। अब, पराजय की छाया अुनपर पडनेसे, क्रांतिनेताओं में बडी सनसनी पैदा हुआी। रावसाहेब बाँदा के नवाब की कोठी की ओर जल्दी जाते दिखायी दिये और बाँदा के नवाब रावसाहेब के पास दौडे। अिस

---

* मॅलेसनकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ५ पृ. १४९-१५०

सारे गडबड में अेक मात्र रानी लक्ष्मी ठंडे दिलसे काम कर रही थी और सब प्रकार से सिद्ध थी। तलवार म्यानसे बाहर थी। अुन्हें क्या डर है? आशा और निराशा को अुन्होने कब का पैरोंतले कुचला था। अिस पृथ्वी की हर वस्तु के लिअे अुन्हें वैराग्य हो गया था। हाँ, अेक मात्र आकांक्षा रही थी,— रानी की अन्तिम साँस तक अुस की तलवार के आधारपर स्वाधीनता का झण्डा अूँचा रहे। दोनों को व्यर्थ की मृत्यु न आय, केवल खेतमें दोनों रहे तो चिंता नहीं। अिसी से रानी ने रावसाहब को धीरज बँधाया, अुससे बन सके अुस प्रकार अव्यवस्थित सेना की पुनर्रचना की और पूरबी द्वार की रक्षा का भार अपने सिर ले लिया। लक्ष्मीबाअीने अेक ही माँग की 'मैं प्राणों की बाजी लगाकर अपने कर्तव्य को पूरीतरह निभाअूँगी; तुम अपना कर्तव्य करो।'

रानी ने अपना सैनिकी गणवेश धारण किया; बढिया घोडे पर चढीं; रत्नजडित खड्ग को निष्कोषित किया; और सैनिकों को 'आगे बढो' की आज्ञा दी। कोटा की सराय के आसपास, जिस की रक्षाका भार अुनपर था, मोर्चाबंदी की। और जब सब ओर अंग्रेज सेना दिखायी पडी तब तुरहीं, करनाल और ढोल सब मारू बाजे अेक साथ पील पडे। काश, अुनके पास अुनके समान धैर्यशील और साहसपूर्ण सेना होती। रानी के नेतृत्व में अुद्दण्ड और डरपोक भी वीर बहादुर बन जाता; अुन के तथा अुन के अपने चुनिन्दे घुडसवारों के साथ रानीने अंग्रेजों पर कठिन हमला किया। लक्ष्मीबाअी की दो सखियाँ—मंदार और काशी—भी अुनके कंधे से कंधा भिडा कर लडीं। पुरुषवेश से विभूषित अिन दो सुंदर कन्याओं की स्मृति रणरागिणी रानी लक्ष्मीबाअी के साथ साथ, जब तक अितिहास जीवित हो तब तक, अमर रहे। स्मिथ जैसा अेक जनरल रानी की सेना को दबा रहा था; किन्तु रानी का साहस और शौर्य देखते ही बनता था। दिन भर बिजली के समान वह मैदान में घूम रही थी। अुसकी हरावल पर अंग्रेज जोरदार हमले करते किन्तु, हर बार वह अपनी पाँती को विचलित न होने देती थी। अुस की सेना कभी कभी उत्साह की उभाड में अंग्रेजी हरावल पर धावा बोल देती और कअी खरबुने काटे जाते। अन्त में स्मिथ को हटना पडा; अुसने चट्टान सी

खडी हरावल को तोडने का जतन छोड दिया और काले नाग के दीमक को छेडने के बदले वह दूसरी ओर गया।

अिस तरह आज का दिन समाप्त हुआ और १८ दिनांक का सवेरा यों हुआ। आज अंग्रेजों ने तनतोड हमले करने का निश्चय किया था। सभी दिशाओं से किले पर अुन्हों ने धावा बोला और प्रयत्नों की पराकाष्ठा की। कल जनरल स्मिथ को हटना पडा था; आज नयी कुमक के साथ अुसी झाँसीवाली सेना पर वह टूट पडा। ह्यू रोज को लगा, कि अुस का वहाँ होना नितान्त आवश्यक है; अिसी से झाँसीवालों पर चढाअी करनेवाले सैनिकों के साथ वह स्वयं रहा। रानी भी अपनी सेना के साथ सिद्ध थी। प्राणों की बाजी लगा कर वह अपने कर्तव्य पर डटी हैं। रानी ने अुस दिन कामदार चंदेरी पगडी लगायी थी; तमामी चोगा और पायजामा पहना था। मोतियों का अेक हार अुन के गले में पडा था। अुन का अपना घोडा अुस दिन कुछ थका हुआ सा मालूम पडा; सो, अेक नया घोडा लाया गया। रानी की वे दो सखियाँ जब शरबत पी रही थीं तब संवाद मिला कि अंग्रेजी सेना बढ रही है। रानी अेकदम अपने खेमे से दौड पडी—तीर भी अितनी फुर्ती से नहीं छूटता है, मेघों से बिजली भी अितने वेग से नहीं दमकती, सामने हाथी को आते देख अुस पर झपटनेवाली सिंहनी अपनी माँद से अितनी जोश से नहीं अुछलती। रानी ने घोडा दौडाया, तलवार अुठायी और शत्रु पर धावा बोल दिया। अेक अंग्रेज लिखता है 'तत्काल वह सुंदरी रानी मैदान में अुतरी और ह्यू रोज के व्यूह का डट कर प्रतिकार किया। अपनी सेना के आगे रह कर बार बार वह हमले और घनघोर मार काट करवाती। यद्यपि अुस की सफों को चीर कर अंग्रेज जाते और अुस की सेना की पाँतियाँ पतली हो रही थीं; फिर भी रानी पहली हरावल में दिखायी पडती थीं, जो अपनी टूटी पाँतियों को फिर से संगठित कर अतुल धैर्य का परिचय देती थी। किन्तु यह सब किस काम का था? ह्यू रोज ने स्वयं अपने अूँट-दल के जोर पर आखरी पंक्ति तोड ही दी और तो भी रानी अपने स्थान में डट कर खडी थी।"

किन्तु अितने असाधारण शौर्य से लडते हुअे अुसने देखा, कि अंग्रेजी सेना पिछाडी से आक्रमण रही है; क्यों कि, पिछाडी की रक्षा करने वाले क्रांतिकारियों की पॉतियों को अुसने तोड दिया था।

तोपें ठढी पडी थीं; मुख्य सेना तितर बितर हो गयी थी, विजयी अंग्लिश सेना रानी पर चारों ओर से आक्रमण कर रही थी और अुस के पास मात्र १५।२० सवार थे। रानी लक्ष्मीने अपनी दो सखियों के साथ घोडे को अेडी लगायी। शत्रु की पाँतियों को चीर कर वह परले सिरे पर होनेवाले लोगों से मिलना चाहती थीं। गोरे हुजार घुडसवारोंने रानी को न जानते हुअे भी गोलियों की बाढ बरसायीं और शिकारी कुत्तों के समान अुस का पीछा कर रहे थे। किन्तु रानी ने असाधारण वीरता से अपनी तलवार के बल पर मार्ग कर लिया और आगे बढी। सहसा चीख सुनायी पडी 'बाअीसाहब मरी, मैं मरी।' हाय यह किस की पुकार? रानी ने घूम कर देखा, अुस की अेक सखी मंदार को अेक गोरे सैनिक ने गोली मारी थी। वह मर गयी। बिजली की तरह वह क्रोधभरी लक्ष्मीं दौड आयीं और अेक ही झटके से अुस फिरंगी के दो टुकडे कर दिये। मंदार का प्रतिशोध अुन्होंने ले लिया। अब फिर घूम कर वह आगे बढीं। मार्ग में अेक नाला आया। बस, अेक कुदान और झाँसीवाली फिरंगी के चंगुल से मुक्त हो जाती। किन्तु अुनका वह नया घोडा हिचकिचाने लगा। काश, अुनका पुराना घोडा होता। जैसे कोअी जादूअी असर हो, वह घोडा गोल चक्कर काटने लगा, किन्तु कूदने से अिन-कार करता। अेक क्षण में गोरे सैनिक रानी के बिलकुल पास पहुँच गये। फिर भी न डर है, न झुकना। अकेली रानी की तलवार को अुन अनेकों तलवारों से टकराना था।—फिर भी रानी अुन पर टूट पडी। सब के साथ वह लड रही थीं। हाय, अेक गोरे ने पीछे से सिर पर वार किया और अुस के साथ, सिर का दाहिना हिस्सा कट कर रानी की दाहिनी आँख बाहर लटकने लगी—अुसी समय दूसरा वार छाती पर हुआ। लक्ष्मीदेवी! लक्ष्मी! तुम्हारे पवित्र रक्त की आखरी बूँद अब झरनेवाली है, तब लें यह अन्तिम बलि, माता! अुस पर वार करनेवाले फिरंगी को अैसी दशा में भी टुकडे टुकडे कर डाला और अब

रानी अन्तिम साँसे लेने लगी। रानी का विश्वासपात्र नौकर रामचंद्रराव देशमुख पास था। अुसने रानी को अुठाया और पास की अेक झोंपडी में अुसे ले गया। बाबा गंगादास ने रानी को ठंढा पानी पिलाया और बिछौने पर लिटा दिया। रक्त से लथपथ अुस देवीने अपना शरीर बिछौने पर लिटा दिया और शान्तिसे अुनकी आत्मा स्वर्ग सीधार गयी। रानी की अन्तिम साँस निकल जाने पर रामचंद्रराव ने, अपनी स्वामिनी की अन्तिम सूचना के अनुसार, शत्रु की आँख बचा कर, घास का ढेर लगा दिया; अुसी चिता पर लिटा दिया और पराधीनता के घृणित स्पर्श से अुन की लाश भी अपवित्र न हो अिस लिअे आग जला कर रानी का अग्निसंस्कार किया।

सिंहासनपर नहीं, चितापर सही। किन्तु लक्ष्मी के गले में प्यारी स्वतंत्रता की कौस्तुभमणि अब भी विराजमान है। रणमैदान म मरकर मृत्यू के द्वार रानी ने तोड दिये हैं और दूसरे लोक म स्वच्छंदता से संचार कर रही है। अब अुसका पीछा मानव क्या कर सकता है। और करे तो रानी की कोअी हानि न होगी। दुष्ट यदि पीछा करे तो अुसे धधकती नरकाग्निमें जाना पडेगा।

अिस प्रकार रानी लक्ष्मीबाअी लडीं। अपना मन्तव्य पूरा कर गयीं; आकाक्षा सफल हुअी, अपने निश्चय को निबाह सकीं। अेसा अेक जीवन सारे राष्ट्र का मुख अुज्वल करता है। सब सद्गुणोंका निचोड वह थीं। अेक महिला, अभी २३ धूपकाल भी जिसने न देखे हों; गुलाब के समान सुकोमल, मधुर बरताव, विशुद्ध चरित्र; पुरुषों में भी न पायी जानेवाली अपने लोगों को संगठित करने की शक्ति अुन में थी। रानी के हृदय में देशभक्ति की ज्योति सदा प्रकाशमान थी। भारत देश के लिअे अुन्हे गर्व था। और युद्ध में अद्वितीय थीं। संसार में शायद ही कोअी राष्ट्र, अैसे दैवी गुणोंसे युक्त व्यक्ति को, अपनी कन्या और रानी कहलाने का अधिकारी होगा। अिग्लैंड के भाग्य में यह सम्मान अबतक नहीं बदा है। अिटली की क्रांति में अुच्च आदर्श तथा अुच्चतम वीरता का परिचय मिलता है; फिर भी अितने वैभवपूर्ण समय में भी अिटली अेक लक्ष्मी को न अुपजा पायी।

हमारे भारतवर्ष का सचमुच अहोभाग्य है, कि अैसा स्त्रीरत्न यहाँ पैदा हुआ। अग्नि से भी बढ़ कर तेज से वह रत्न प्रकाशमान है। बाबा गंगादास की झोंपडी के सामने धधकती ज्वालाओं द्वारा वह दमक रहा है! किन्तु, हमारी वैभवशीला मातृभू भी अैसे रत्न को शायद ही पैदा कर सकती, यदि यह स्वातन्त्र्य-समर, यह स्वाधीनता का महायज्ञ रचा न जाता। अनमोल मोती सागर की सतह पर नहीं अुतराते! रात्रि के अंधकार में सूर्यकान्तमणि तेज की किरणें नहीं फेंकती; चकमक का पत्थर मुलायम सिरहाने पर घिसने से चिनगारी नहीं देता। अिन सब को विरोध की अपेक्षा होती है। अन्याय मन को बेचैन बना दे; अूपर से नहीं, अंदर रक्त का हर बिंदु खौलना चाहिये। अति तीव्र स्वदेशभक्ति, तल से मथी जाने पर, ज्वलनबिंदु की अग्र पर जलनेवाली अग्नि से अुत्तेजित हो जाय। खौलते क्रोध से भट्टी के बरतन को खूब हिलाया जाय; अन्याय का अींधन भट्टी को लगातार तपाता रहे; लपटें अेक दूसरें को क्रोड में छिपातीं अूपर ही अूपर अुठें, अैसी भट्टी में, फिर, सद्गुणों के कण चमकने लगते हैं; कसौटी चलती रहती है; अूपर का सारा मल निकल जाता है; फुटकर कण द्रवरूप बनकर अेक हो जात हैं और फिर सब सद्गुणों का निचोड दिखायी पडने लगता है। १८५७ में हमारी भारत माता में कृत्रिम नहीं, सचमुच ही आग भडक अुठी; फिर संसार के कान फाडनेवाला धमाका हुआ और कैसा अुत्पात! देखो, कितना विशाल फैलाव अिस आग का हुआ है! अूँची और अूँची लपट पर लपट—मेरठ में चिनगारी और डलहौसी के 'रोलर' मे समथल बना और धूल के ढेर सा सारा देश ज्वालाग्राही बारूद के अम्बार सा मालूम पडा। जैसे आतशबाजी का अनार खुलने पर अुसमें से रंग बिरंगे बाण, पेड तथा अन्य कअी प्रकार की वस्तुअें छूटती, घुसती, जलती और शान्त हो जाती है, अुसी तरह अिस क्रांति के अनार से तप्त लहू, वृहां, शस्त्रास्त्र और मुठभेडें निकलीं—अुपर अुठीं, वेग से अूँची अुठीं। और यह अनार भी कितना बडा! मेरठ से विंध्याचल तक लम्बा; पेशावर से ब्रह्मदेश तक चौडा! और अुसे सुलगाया गया! आग की लपटें सभी दिशाओं में व्याप्त हो गयीं और अुस अनार के पेट में क्या क्या

अजीब चीजें थीं। लहू बारिश की तरह बरसा, ओलों के साथ! दिल्ली के घेरे, पलासी के प्रतिशोध, कानपुर की तथा लखनऊ के सिकंदराबाग की कत्लें! सहस्त्रों सहस्त्र वीर झूझ रहे हैं और मर रहे है; नगर जल रहे हैं; कुँवरसिंग आता है, झूझता है, गिरता है; मौलवी आया, लड़ा और मरा; कानपुर, लखनऊ, दिल्ली, बरेली, जगदीशपुर, झाँसी, बाँदा, फर्रुखाबाद के सिंहासन; पाँच हजार, दस हजार, पचास सहस्त्र, लाख लाख तलवारें; ध्वजाऍं; झण्डे; सेनापति घोड़े, हाथी, ऊट-सब अिस अनार से बाहर अेक के बाद अेक आग के फव्वारे में निकलते है! अेक कुछ ऊँचाओी की लपट पर, कुछ दूसरी पर; ये ऊँचे चढ़ जाते हैं, लड़खड़ाते हैं और लुप्त हो जाते हैं! सब दूर लड़ाओी-बिजली की गड़गड़ाहट! ज्वालामुखी के भीषण ज्वालाओं का फव्वारा यह!!

और वह चिता-बाबा गंगादास की झोंपड़ी के पास जल रही है; १८५७ के स्वातंत्र्य-समर के ज्वालामुखी को अग्निप्रलय की यह अन्तिम ज्वाला है!

तीसरा खण्ड समाप्त

अस्थायी शान्ति

"अिस हमारे देश में, विदेशी फिरंगी - तुम यहाँ के शासक और हम चोर ठहरे क्यों?" नानासाहब के यही अन्तिम शब्द अितिहास में गुंजित हैं। बाजीराव (द्वि.रा.) के क्षीण तथा दुर्बल कार्यकाल का, पेशवा के गद्दीपर लगा धब्बा, अब रक्त के सोते बहाकर धो डाला गया है, जिस से चित्तौड की अुन राजपूतनियों के समान वह गद्दी लडते लडते स्वातंत्र्य-यज्ञ की ज्वाला में स्वाहा हो गयी।

—और अिस तरह अब तक धधकता हुआ ज्वालामुखी का मुख फिर अेक बार ढँक गया। हरियाली फिर से अुस मुँह पर जम गयी। सर्वत्र शान्ति, सुरक्षा और परस्पर सुहृद-भाव का साम्राज्य फैल गया। किन्तु, अिस ज्वालामुखी की सतहपर भले ही सब कुछ नयन-मनोहर तथा मृदु-मधुर भासमान होता हो, अुन की अिसी सतह के नीचे भीषण और भडकनेवाला ज्वालामुखी सोया पडा हुआ है---अिस का तनिक भी भान किसी को है?

योग नहीं दिया गया। सिक्ख नरेश तथा सिक्ख पथ के लोगों का क्रांति-कारियों से पूरी तरह विरोध था। सो, वे युद्ध में चुप तो नहीं रहे बल्कि खुल्लमखुल्ला अंग्रेजों का पक्ष लेकर मैदान में अपने देशवासियों का खून बहाने में तनिक भी पीछे न रहे!

राजपूताने की सर्वसाधारण जनता की सहानुभूति क्रांतिकारियों के साथ थी, यह तो कभी प्रसंगों में सिद्ध हो चुका है। जयपुर, जोधपुर तथा अुदयपुर से अंग्रेजों के मातहत लडनेवाले भारतीय सैनिकों को किस तरह लाखों गंदी गालियाँ दी जाती थीं, क्रांतिकारियों की विजय के संवाद पाते ही वहाँ के बाजारों में आनंदप्रदर्शक जयध्वनि किस प्रकार फूट पडती थीं तथा अपजश की बात सुन कर अुन के अंतःकरण दुख के दबावसे कैसे दबोचे जाते थे, अिन बातों को देखकर यही परिणाम निकलता है, कि अिस महान राष्ट्रीय अुत्थान में क्रांतिकारियों के यश की कामना दिन रात राजपूताने वाले किया करते थे। अब राजपूत नरेशों को देखा जाय तो मालूम होता है, कि अुन में से बहुतेरे राजा कोअी विशेष चिन्ह पैदा होने तक किसी दल को प्रकटरूप से सहायता न देते थे। किन्तु, जब जब अंग्रेजों से सैनिक सहायता के बारे में अुनपर दबाव डाला जाता तब तब अुन की सेनाअें ही अपने राजा की आज्ञा का भंग कर, फिरंगियों की ओर से अपने भाअियों से लडने से साफ अिनकार कर देतीं!

१८५७ क स्वातंत्र्य-समर के कुरुक्षेत्र का मदान अवध, रुहेलखण्ड, बिहार, बंगाल बुंदेलखण्ड तथा मध्यभारत था। रंगून में अेक छोटासा बलवा हुआ, किन्तु यह सब व्यर्थ था, क्यों कि चिडियाँ खेत पहले ही चुग गयी थीं।

विंध्याचल के अुत्तर पर हमने सरसरी दृष्टि डाली, अब हम दक्षिण की ओर दृष्टि घुमाअें। सब से पहले हमारी नजर पडेगी शिवाजी महाराज के मराठा साम्राज्य पर। अिस साम्राज्य के प्रेमी अुत्तर भारत में जा कर कानपुर, कालपी, झाँसी की भीषण लडाअियाँ लड रहे थे। अिस तरह, रायगढ से पदच्युत सिंहासन, कानपुर में रक्तसागर म नहाया, फिर से खडा दीख पडा।

और संताजी और धनाजी से अुत्तोलित स्वराज्य-ध्वज तात्या टोपे अभीतक फहरा रहा था। अुत्तर भारत में पाया गया सराहनीय मतैक्य, साहस तथा दृढ संकल्प, यदि दक्षिण में भी पाया जाता, तो समस्त अिंग्लैंड भारत में लडने आता तो भी जरीपटका-पेशवाओं का झण्डा-कभी नीचे न झुकता। जरीपटका जब आकाश में लहराता है तब अुस के प्रेम और गर्व का अनुभव न करनेवाला शुद्ध बीज का मराठा ढूँढने पर भी नहीं मिलेगा। १८५७ में भी वह वीरता की प्रेरणा सभी मराठों के हृदय में स्वाभाविकतया जाग अुठी थी। किन्तु ढुलमुल नीति और दृढ निश्चय का अभाव-अिन दो रोगों ने वह वीर भाव, वह प्रेरणा गर्भ ही में मार डाली। क्रांति की योजना जब अुत्तर भारत में प्रगति कर रही थी, तब क्रांति का सदेश लेकर दक्षिण भर की रियासतों में तथा हर गाँव में क्रांतिदूत प्रचार कर रहे थे। सातारे के रंगो बापूजी कानपूर में नानासाहब के साथ लिखापढी कर रहे थे। पुणें, धारवाड, बेलगाँव, हैदराबाद आदि स्थानों की भिन्न भिन्न पलटनों में पुरोहित, मौलवी तथा अुत्तर भारत के विद्रोहियों के प्रतिनिधि क्रांति की मशाल अुठाकर गुप्तरूप से संचार कर रहे थे। और मैसूर से ठेठ विंध्य पर्वत तक 'अुत्तर में बलवा होते ही साथ साथ यहाँ भी बलवा करेंगे" वाली शपथें की गयी थीं। दक्षिण, बलवा करने को न भूली; किन्तु हाँ, अुत्तर में बलवा होते ही साथ साथ अुठने की बात भूल गयी। अुत्तर में अकल्पनीय विद्युत्वेग से क्रांति का अुत्थान हुआ और वह भी अिस निर्धार से कि 'मारें या मरें'। तुरन्त विद्रोह करने के बदले दक्षिणवाले देखते रहे, कि अुत्तर की लडाअी का अूट किस करवट पर बैठता है। क्रांति के जोखों के समय में अेक क्षण जीवन मरण का निर्णय कर देता है। दोनों ओर से अिस में घाटा होता है-अुतावलेपन तथा देरी करने से। दुविधा के अैसे क्षण में, क्षमता रखनेवाला व्यक्ति अैसा महूरत चुनता है, जिस में तेज और धैर्य से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त हो। क्रांति अंकगणित के नियमों पर नहीं चलती। मानव के हृदय में होनेवाले आत्मिक अद्भुत सामर्थ्य के बूते पर क्रांति सफल होती है; अकर्मण्य के लचरपन से वह ठंडी पड-

जाती है! कर्तृत्व की तीव्रता से क्राति जारी रहती है। संयम, दूरंदाजी विद्रोह का दिन निश्चित करना आदि बातें सिद्धता करने तक काम की हैं। किन्तु अेक बार शंख फूँका गया, डंके पर चोट पडी कि प्राणों की परवाह न करते हुअे डट कर लडाअी करना ही कर्तव्य है। अुस क्षण में जो हिचकिचायगा, वह अन्त में अवश्य हारेगा। जो अुस क्षणमें विद्रोह करना अच्छा या बुरा है अिस की चिंता करेगा वह सदा के लिअे गिर जायगा। हमारा ब्रीदवाक्य हमारी टेक होना चाहिये। सिद्धता में धीरज और प्रत्यक्ष काम में साहस हो। सिद्धता करने में धीरे धीरे सावधानी से काम हो-होना चाहिये, जैसे अेक कालीन की बुनायी में होता है, किन्तु अेक बार विप्लव फूट पडने पर क्षणमात्र भी न झिझक कर धधकती आग के विस्तार में भी तीर के समान घुस जाना चाहिये। फिर विजय हो या पराजय, जीयें या मरें—घमासान युद्ध होना चाहिये, मारते मारते मर जाने का निश्चय लोगों में होना चाहिये। क्यों कि, अेक बार क्रांतियुद्ध के नगाडे पर डंडा पड जाय तो क्रांति को सफल बनाने का अेकमेव मार्ग है 'आगे बढना और कभी न रुकना!'

यह प्रधान सिद्धान्त दक्षिणवाले भूल गये। अुत्तर में विद्रोह होते ही वे न अुठे। वे धीरे धीरे काम करते गये और बारबार झिझकते रहे। सफलता की अत्यधिक चिंता और अुसके फलस्वरूप जोश में आकर, बिरले बलवे से पराजय के बिना दूसरा कोअी परिणाम न था। यह कैसे हुआ अिसका कुछ निरीक्षण हम करें।

दक्षिण में तीन महत्त्वपूर्ण सेना केन्द्र थे। कोल्हापुर में २७ वीं, बेलगाँव में २९ वीं और धारवाड में २६ वीं पलटन थी। लिखापढी द्वारा क्रांति की योजनाअें बनीं तब बलवे का दिनांक १० अगस्त १८५७ निश्चित हुआ था, किन्तु बीचमें कोल्हापुर की जनता तथा सिपाहियों को दबाव में रखने के लिअे अेक गोरी सेना भेजी गयी। तार खाते के अेक अधिकारीने यह गुप्त संवाद सिपाहियों पर प्रकट किया। पहले से जलते हुअे सिपाहियों ने

अिसे सुन कर ३१ जुलाअी १८५७ ही को कुसमय, बलवा कर दिया। अुन्हों ने अुनके कुछ अधिकारियों को मार डाला, खजाने पर कब्जा कर लिया, अभी पहुँचे गोरे सैनिकों से भिडन्त की और महाराष्ट्र के घाटियों की ओर चल दिया। भिन्न भिन्न क्रांतिकारी दस्ते सावंतवाडी के रामजी शिरसाट के नेतृत्व में अिकट्ठे हुअे और कडी के जगल के रास्ते में गोरी सेना को सताने लगे। गोवे के पुर्तुगालियों के सहयोग से अंग्रेजों ने, कुछ महीनों के बाद, अुन्हे हरा दिया और तितर बितर कर दिया। कोल्हापुर में आये नये अंग्रेज अफसर जेकबने शेष सिपाहियों से हथियार डलवा लिये और अुन के नेताओं को गोलियों से अुडा दिया।

किन्तु कोल्हापुर के सिपाहियों ने बलवा किया, तो भी वहाँ की जनता राह देखती चुप रही। बीचमें कानपुर के नानासाहब के दूत की कोल्हापुर के युवक नरेश के साथ मंत्रणा हुअी; अुसको राष्ट्रीय क्रांति में हाथ बँटाने के लिअे अुकसाया; लखनअू के दरबार की ओर से अेक तलवार भी कोल्हापुर नरेश को भेंट की गयी। अुसी तरह सांगली, जमखिंडी तथा अन्य दक्षिणी संस्थानों से भी गुप्त लिखापढी हो रही थी। किन्तु कोल्हापुर के महाराजा से अधिक गाढा शिवाजी का रक्त अुस के छोटे भाअी चिमणासाहब की नसों में था। अब तक बने बनावों से बिगडे हुअे क्रांतिकारी कार्यक्रम को फिर से कार्यान्वित करने के लिअे गुप्त मन्त्रणाअें अुस ने शुरू कीं। अुस ने कोल्हापुर के अस्थायी सिपाहियों तथा स्वंयंसेवकों का संगठन बलवे के लिअे बनाया और १५ दिसंबर के तडके कोल्हापुर ने फिर से विद्रोह किया। नगर के द्वार बद कर दिये, तोपों को ठिकाने लगाया गया और नगर के मार्गों में क्रांति का डंका बजाया गया। जेकब को सवाद मिलतेही अुसने अपनी सेना को जमा कर अेक कच्चे द्वार पर हमला किया। तब से अंग्रेजी सेना के राजमहल पर कब्जा जमाने तक भीषण मुठ-भेडें होती रहीं। हार होने पर, जैसा कि होता रहा है, राजाने घोषणा की कि बलवा सैनिकों ने तथा, राजाज्ञा का भंग कर, जनता ने शुरू किया था। जब विद्रोहियों के नेताओं के नाम तलब किये गये तो राजाने बताया कि वह

कुछ नहीं जानता! जेकब ने नेताओं को पकडने की अनथक चेष्टा की। कअी लोगों को, बारी बारी से, संदेह में बंदिशाला में ठूँसा; किन्तु अुसे अुस विशाल और विकराल षडयंत्र का तनिक भी सुराग न मिला। अेक क्रांतिनेता को जब पकडा जा रहा था तब अपने हाथ के दोषी पत्र के टुकडे कर वह अुसे निगल गया—पकडनेवालों के सामने! कअी लोगों को तोपों से अुडा दिया गया; अुन में से अेक पहली बार घायल हुआ, मरा नहीं; तब वह स्वयं स्थिर खडा रहा—दूसरी बार तोप से अुड जाने के लिअे। तब जेकब अुस के पास जा कर बोला:—मुझे तुम पर तरस आता है; तुमको धोखे से किसी ने बलवे में शामिल किया होगा। सो, तुम यदि कुछ विद्रोहियों के नाम बता दो तो तुम्हारे प्राण बच जायँगे।" किन्तु अुस महान् वीर ने, धैर्य के साथ अपने टूटे अंगों का असहनीय दुख सहा और "अुसने मेरी ओर (जेकब) घृणा-युक्त क्रोध से देख कर स्पष्ट शब्दों में कहा 'मैंने विद्रोह किया; मैंने किया।' किसी का भी नाम न देते हुअे वह मुडा और मृत्युदात्री तोप के सामने डट कर खडा हो गया। दूसरे अेक क्रांतिकारीने तोप दगने के पहले अपने अेक नेता को स्मरण किया। यह देख अेक सरकारी कर्मचारी, जो वहाँ खडा था चुपचाप खिसक गया और शहर में होनेवाले नेताओं तथा अन्य कार्यकर्ताओं को सचेत किया। तब गोरे अधिकारी अुस नेता को, जिस का स्मरण किया गया था, पकडने के लिअे अुस की खोज करने लगे किन्तु वह तो कोल्हापुर के बाहर जा चुका था और सुरक्षित था। यही आपसी श्रद्धा षडयंत्र का काम चालू रखती, अलग अलग टोलियों और दस्तों को संगठित रखती और अुसमें किसी तरह की रुकावट या गडबडी न पडने देती।*

जहाँ कोल्हापुर में ये घटनाअें हो रही थीं तब वहाँ बेलगाँव में भी १० अगस्त के आसपास विद्रोह के लच्छन दीखने लगे; किन्तु ठीक समय पर सैनिक नेता ठाकुरसिंह तथा नागरिक-प्रमुख अेक साहसी मुनशी को पकडा गया। साथ साथ अेक गोरी पलटन भी भेजी गयी। बेलगाँव और धारवाड का

---

* सं. ५० । सर जॉर्ज ले ग्रॉंद जेकब कृत वेस्टर्न अिंडिया.

अिसतरह बल टूट गया और फिर किसी प्रकार की हलचल न दिखायी दी। अपर्युक्त नौकर अेक सरकारी कर्मचारी थी और अुस के भेजे हुअे विद्रोही पत्र पुणें तथा कोल्हापुर के सैनिकों के पास पाये गये थे। अिस सबूत पर अुसे तोपसे अुडा दिया गया।

सातारे में रंगो बापूजी तो पहले ही से सरकारी कृपा से अुतर चुका था। कोल्हापुर में विद्रोह फैलाने के अपराध में रंगो बापूजी के पुत्र को अंग्रेजों ने फाँसी दिया था। अिसी समय सातारे के राजपरिवार के दो व्यक्तियों को समापार कर दिया गया था। जिस सातारे के सिंहासन की सेना में अुसने अपनी पूरी आयु लगा दी थी अुसी की अैसी बुरी गत देखकर स्वामिभक्त रंगो बापूजी सातारा छोड चला गया। अुसे पकडा देने के लिअे पारितोषिक घोषित करने पर भी अंग्रेजों की किसीने सहायता न की। स्वदेशभक्त रंगो बापूजी का क्या हुआ अिस की जानकारी आजतक किसी को न मिली।

अिन्हीं दिनों अेलफिन्स्टन नामक अेक सुयोग्य गोरे को बम्बअी का गवर्नर बना दिया गया। अपने प्रांत की शांति का जो दायित्व अुसपर था अुसे अपनी क्षमता से निबाहकर भी अुसने राजपूताने की ओर सेना भेजी। किन्तु बम्बअी के बलवे को समय पर दबा देने के काम में जो चतुरता और फुर्ती दीख पडी वह श्री. फारेस्ट की थी। बम्बअी केवल आलसू सुखासीनों और राष्ट्रद्रोही कायरों का घर था। अिस दशामें राष्ट्रीय क्रांति की ज्वालाअें धधकने के योग्य ज्वालाग्राही अंतःकरण थे केवल अुन सैनिकों के, जो वहाँ डेरा डाले पडे थे; अिस बात को ताड कर फारेस्टने अुन सैनिकों पर कडी नजर रखी! बलवे के लिअे दीपावलि के दिन निश्चित हो चुके थे और अुसके अनुसार सिपाहियों की गुप्त सभाअें होने लगीं, जिनमें फारेस्टने अपने खास पिठ्ठुओं को घुसेडने की चेष्टा की; किन्तु सिपाहियों की दक्षतासे अुसकी अेक न चली। फारेस्ट स्वयं कभी ब्राह्मण, तो कभी और किसी का भेष बनाकर लोगों में, सामूहिक भोजों में भी, पहुँच जाता। निदान, अुसे पता लगा, कि गंगाप्रसाद नामक अेक सज्जन के

घर में सिपाहियों की गुप्त बैठकें हुआ करती थीं। कुछ डॉटहपट के बलपर वह गंगाप्रसाद के घरमें घुस गया और एक दिवार की ओटमें बैठ अेक छेद द्वारा क्रांतिकारियों की पूरी बैठक देख ली, जिसकी कानोकान भी खबर अुन्हें न मिलने पायी। और तो और, कुछ अंग्रेज अधिकारियों को वहाँतक ले जाकर अुस ने सब कुछ बता दिया। जब अंग्रेजोंने देखा, कि जिनपर अुन्हे संपूर्ण विश्वास था वेही अीमानदार और 'राजनिष्ठ' सिपाही अेक अेक कर के अुस बैठक में आ रहे हैं, तब दाँतोंतले अगुली दबाकर वे कानाफूसी करने लगे "है! बापरे! ये तो हमारे ही सिपाही! यह कैसे हुआ?" सिपाहियों की योजना का स्वरूप साधारणतया यों था। पहले बम्बअी में बलवा हो, फिर पुणें पर चढाअी कर अुसपर दखल किया जाय, वहाँ मराठा साम्राज्य का झण्डा 'जरीपटका' फहराया जाय और नानासाहब को पेशवा घोषित किया जाय। * किन्तु अिसपर अमल होने के पहले ही फॉरेस्ट ने भंडा फोड कर दिया और दो प्रमुख क्रांतिकारियों को फॉसीपर लटका दिया; तथा छः नेताओं को सीनापार जाने का दण्ड दिया। अिस तरह बम्बअी का बलवा मूलतः रौंध डाला गया.।

अिन्ही दिनों नागपुर तथा जबलपूर में क्रांति की चिनगारियाँ चमकने की सम्भावना दीख पडी। १३ जून १८५७ को नागपुरने विद्रोह करने की ठानी थी; अिस योजना का समर्थन सभी प्रमुख नागरिकों ने भी किया था। निश्चय यह हुआ था, कि १३ जून की रात को गाँव के लोक तीन आकाशदिये जलाकर आकाश में चढा दें, जो सैनिकों के अुठने की सूचना समझी जायगी। और अेक बात क्रांतिकारियों के हित में थी, कि नागपूर जबलपूर के टापूमें अेक भी गोरी पलटन अंग्रेज न राख पाये थे। किन्तु थोडे ही समय में मद्रास से भारतीय पलटन आयी, जिससे बलवे की आग तुरन्त बुझा दी गयी। जबलपूर का गोंड राजा शंकरसिंह क्राति के लिअे तन मन से चेष्टा कर रहा था। अुसे पकडकर अुसके राजमहल की तलाशी लेनेपर रेशमी बस्ते में लपेटा हुआ अेक कागज मिला, जिसपर प्रतिदिन रटने का प्रातःस्मरण लिखा हुवा था। वह

* फॉरेस्ट कृत रियल डेंजर अिन अिंडिया

थोडेमें यों था:—जगन्माता चण्डी के विकराल स्वरूप का ध्यान करते हुअे शंकरसिंह रटता था "पाखण्डी निंदकों की जिव्हाअें काट डालो; पापियों को मार डालो। हे शत्रुसंहारिके। शत्रुओं को नष्ट करो। धर्म की करुण पुकार सुनो; तुम्हारे दास को शुभ वरदान दे कर अुस की पृष्ठपोषक बनो; चण्डीमाते। ब्रिटिशों का संहार करो और अुन्हे यहाँ से मटियामेट कर डालो।*

राजा शंकरसिंह और अुस के बेटे ने जबलपुर में होनेवाली ५२ वीं भारतीय पलटन को क्रांतिदल में शामिल करा लेने की चेष्टा की थी। अिस अपराध म अिन दोनों राजपुरुषों को १८ सितंबर १८५७ को तोपसे अुडा दिया गया। अिस संवाद से गलितधैर्य न होकर अुलटे अुछलते त्वेष से ५२ वीं पलटन ने बलवा किया और अुसके अफसर मॅकग्रेगर की हत्या कर युद्ध की घोषणा की।

धार, महीदपुर, गैारिया और अन्य स्थानों में भी शाहजादा फीरोजशाह के प्रयत्न से विद्रोह की ज्वालाअें अुठी थीं। स्थानाभाव के कारण अिस का पूरा विवरण हम यहाँ दे नहीं सकते।

किन्तु अुपर्युक्त सब संस्थानों से बढकर भारत की भवितव्यता अेक मात्र दक्षिणमें भागानगर (हैदराबाद) के निजाम के हाथ में थी। निजाम अफजलुद्दौला १८५७ की मअी में सिंहासन पर बैठा था। अुस के प्रधान मंत्री के स्थान पर सर सालारजंग था, जिस के अिशारे पर समूचा दक्षिण प्रांत चलने को सिद्ध था। भागानगर का निजाम यदि क्रांति में साथ देता, तो सारा भारत एक हो कर अुठता और अुत्तर भारत के विद्रोह के खिंचाव से करक कर टूटने को होनेवाला ब्रिटिश सत्ता का रस्सा, अिस दबाव से, टुकडे टुकडे हो कर बिखर पडता। यह कैसे कहा जाय, कि अंग्रेजों के विरुद्ध हुअे स्वाधीनता के संग्राम के सिद्धान्त सालारजंग को किसी ने नहीं समझाये होंगे? माना जाय, कि स्वधर्म, स्वराज्य तथा स्वतन्त्रता के प्रेम की अेक भी लहर अपने अंतःकरण में न अुठने देने की मात्रा में 'राजनिष्ठा' सालारजंग में थी; तो

* चार्लस् बॉलकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २, पृ. १४४.

भी क्रांतियुद्ध में हाथ बँटाने के लिअे भागानगर की जनता अुसे अुभाडने में कोअी बात अुठा नहीं रखती थी ! किन्तु सालारजंग टस से मस न हुआ; तब १२ जून १८५७ को भागानगर में बडी तीव्र अुत्तेजना दीख पडी। अुस दिन लब्धप्रतिष्ठ मौलवी के हस्ताक्षर से निकले पर्चे दीवार पर चमकने लगे। क्रांतिकारी हस्तपत्रकों के तो ढेर लगे थे। मसजिदों में मुसलमानों की बडी बडी सभाअें हुअीं, जहाँ अुत्तेजनापूर्ण भाषण दिये जाते थे और लोगों से प्रतिज्ञाअें करायी जातीं, कि फिरंगी काफिरों को भारत से निकाल बाहर कर देने की चेष्टा करेंगे। सालारजंग पर अिन सभी बातों का कोअी प्रभाव न पडा; अुलटे अुसने कुछ नेताओं को पकड कर अंग्रेजों के हवाले कर दिया। तब जुलाअी १७ को भागानगर में बलवे का प्रारंभ हुआ और क्रांतिकारी नारोंने धूम मचा दी। झण्डे लहराकर अपने क्रांतिकारी नेता को छुडाने के लिअे लोग ब्रिटिश रेसिडेन्सी में घुस पडे। सब से पहले निजाम की सेना के रुहेलों तथा ५०० नागरिकों ने बलवा किया। लोग मानते थे, भागानगर संस्थान सीधी तरह सहायता भले ही न दे सके, अप्रत्यक्षरूप से सालारजंग चुपकी से सहानुभूति रखेगा; कमसे कम तटस्थ रह कर ब्रिटिशों का साथ तो न देगा; किन्तु सालारजंग ने सब को निराश किया। वह तटस्थ रहा ही नहीं, अुलटे अुसने ब्रिटिश सैनिकों से मन्त्रणा कर अपने ही संस्थान के सैनिको की हत्या करने में ब्रिटिशों का हाथ बँटाया। अेक भिडन्त में क्रांतिकारी नेता तोराबाजखाँ मारा गया और अल्लाअुद्दीन पकडा गया, जिसे तुरन्त अंडमान भेजा गया। अिस तरह भागानगरवालों की चेष्टाअें व्यर्थ हो गयीं। अंग्रेज अितिहासकार खुलकर मान्य करता है, "तीन महीनोंतक समूचे हिंदुस्थान का भाग्य अकेले सालारजंग के हाथ में था। भागानगर की दूरंदाजी से यही सिद्ध होता है, कि विद्रोही सिपाहियों के प्रयत्न से दिल्ली के सिंहासन का पुनरुज्जीवन होने की आशापर संदेहपूर्वक अवलंबित रहने की अपेक्षा, आज के अंग्रेजों की छत्रछाया के नीचे माण्डलिक बन कर रहना अधिक अच्छा है; हैदराबाद के शासकों का यही विचार था।"

निजामने क्रांतियत्नों के सिर पर ओले गिराये तो भी अुसके पडोसी जोहरापुरके हिंदु राजाने स्वातंत्र्य-समर में अपने सब कुछ पर खेलने का प्रण किया। अुस के अनुसार अुसने अरब, रुहेले और पठानों की सेना बना ली। नानासाहब के क्रांतिदूतों ने आ कर अुसे पेशवा के पक्ष में लडने को सिद्ध किया। रायचूर के हिंदु-मुसलमानोंने अुस का समर्थन किया। अुतावले लोगों के कहनेपर वह जब बलवा करने के लिअे सिद्ध न हुआ तब अुसे कायर कहने में भी वे न हिचकिचाये। आगे चल कर अुसने पेशवा के झण्डे के नीचे बलवा किया। अंग्रेज और निज़ाम दोनों ने अुस पर चढाअी की। जब अिन दोनों के सामने सफल होने की आशा न रही, तब यह नौजवान राजा फरवरी १८५८ के आसपास अेकाअेक भागानगर ही में चला गया। बाजार में अुसे सालारजंग की आज्ञा से पकड कर अंग्रेजों को सौंप दिया गया। मेंडोज टेलर के साथ बचपन से बहुत मेलमिलाप था; टेलर को वह 'अप्पा' कह कर बुलाता। सो; अिस राजा के द्वारा क्रांति के गुप्त संगठन का भेद लेने तथा प्रमुख क्रांतिकारियों के नाम जानने के लिअे राजा की मुलाकात के लिअे मेंडोज को जेल में भेजा; किन्तु गुप्त संस्था तथा अुस में सम्मिलित होने के बारे में जब टेलर राजासे पूछने लगा, तब राजाने क्या अुत्तर दिया? टेलर के शब्दों में ही बताना अच्छा होगा। मेंडोज टेलर लिखता है :— वह झट तन कर खडा रहा और आवेश से बोला ' नहीं, अप्पा, अिस बारे में तुम मुझे रेसिडेन्ट से मिलने कह रहे हो; मैं यह बात नहीं मानूँगा। रेसिडेन्ट मानता होगा, कि मैं अपनी जान बचाने के लिअे अुससे याचना करूँगा; किन्तु ध्यान रहे, अप्पा, मैं कायर की तरह क्षमा माँग कर जीना नहीं चाहता। मैं अपने सहयोगी देशबंधुओं के नाम मरने दमतक न बताअुँगा।" टेलर फिर अेक बार अुस के पास पहुँचा और अुसने बताया कि राजा यदि षडयंत्रियों के नामभर बता दे तो अुसपर दया दिखायी जाने की पूरी आशा है। राजाने अुत्तर दिया ' मैं जबसे क्रांतिदल में शामिल हुआ तबसे आज तक मैंने क्या क्या किया वह सब बता सकता हूँ। किन्तु मेरे स्फूर्तिदाता का नाम बताने को मुझे यदि बाधित किया जाता हो, तो मेरा स्पष्ट अुत्तर है ' नहीं '। क्या? काल

के गाल में जाने को सिद्ध बना मैं, अपने नेताओं के नाम बताऊँ ? तोप; फॉसी या कालापानी कोअी भी दण्ड मुझे देशद्रोह से भयंकर मालूम नहीं होता।" मेडोजने जब अुसे बताया, कि तब तो अुसे फॉसी ही दिया जायगा तब राजाने कहा, 'अप्पा, मै तुम से प्रार्थना करता हूँ; मुझे फॉसी पर न लटकाओ; मैं कोअी चोर या गॅठकटा हूँ ? मुझे तोपसे अुडा दो; तुम देखोगे कि मैं कितनी निडरता तथा शान्तिसे तोप के सामने खडा हो जाअूँगा !"

अिस स्वदेशभक्त राजा को पहले फॉसी का दण्ड सुनाया गया और फिर मेडोज टेलर के हस्तक्षेपसे अुसे फाँसी के बदले कुछ वर्षों तक कालेपानी की सजा दी गयी। अुसे जब अंदमान भेजा जाता था तब अुसने जेल के वॉर्डर की पिस्तौल, आसपास किसी को न देख कर, छीन ली और स्वयं गोली खाकर गिर पडा। मरने के पहले वह कहा करता 'कालेपानी से मृत्यु ही अच्छी है। मेरा अेक साधारण प्रहरी भी बंदिशाला में नही रहेगा, फिर मै तो अुन का राजा ! मै बंदी कभी न रहूँगा।" ×

अिसी जोहरापुर के राजा के निकट का दूसरा व्यक्ति था नरगुंद के नरेश भास्करराव बाबासाहेब। किन्तु जब जोहरापुरने बलवा किया तब वह अुचित समय न जानकर नरगुंद नरेश चुप रहा। किन्तु जोहारपुर का खात्मा होने आया, तब नरगुंदवालों ने विद्रोह किया। अिसी प्रकार के लचर और असामायिक अुत्थान ही से दक्षिण में किसी को विजय न मिली। बाबासाहब सभ्य तथा विद्याप्रेमी था। अुत्तम से अुत्तम ग्रंथों का अेक संग्रहालय भी अुस ने बनाया था। अुस की सुंदरी धर्मपत्नी साहसी थी। जब से अुसे दत्तक पुत्र गोद में लेने की अनुज्ञा न मिली तब से अुस ने फिरंगी का सत्यानाश करने का निश्चय किया था। अुसी की प्रेरणा से, बडी झिझक के बाद, निदान २५ मअी १८५८ को नरगुंद ने फिरंगी के विरुद्ध शस्त्र अुठाया। बाबासाहब ने ब्रिटिश राजसत्ता की पराधीनता का बोझ अुतार फेंका। जब अुन्हें पता चला

× मेडोज टेलर कृत स्टोरी ऑफ माय लाअिफ.

कि अंग्रेज अफसर मॅन्सन अुन पर चढ आ रहा है, तब चुनिन्दे लोगों के साथ नरगुद के पास, अेक रात, जंगल में अुसे गाँठा। मॅन्सन मारा गया तब अुस का सिर काट कर नरगुंद को अेक जलूस में लाया गया, दूसरे दिन सबेरे वह नरगुद के शहर के द्वार पर टँगा हुआ पाया गया। अिधर बाबासाहब के सौतेले भाअी ने क्रांतिकारियों से मिलने से अिनकार ही नहीं किया, बल्कि वह अंग्रेजों के पास गया। अंग्रेज सेना नरगुद पर चढ गयी और वहाँ के क्रांतिकारियों की हार हुअी; किन्तु बाबासाहब अुस समय शत्रु के हाथों से छटक गये। आगे चल कर गुप्तरूप से घूमते हुअे पकडे जानेपर १२ जून को अुन्हें फाँसी दिया गया। अुन की नौजवान, सुंदरी तथा साहसी रानी अंग्रेजों को ठुकरा कर अपनी सास के साथ मलप्रभा नदी में डूब मरी।

अलावा अिस के, कोमलदुर्ग का भिमराव, खानदेश के भिल्ल तथा अुनकी युद्धको कटिबद्ध धनुष्यधारिणी औरतें और अन्य टोलियाँ महाराष्ट्रमें कम-अधिक मात्रा में बलवे की चेष्टाअें करती रहीं। नासिक के पास त्र्यंबकेश्वर के दिवान जोगलेकरने बलवा कर अपना किला लडाया, किन्तु अुन की हार के बाद पकडे जानेपर अंग्रेजों ने अुन्हे फाँसीपर लटकाया। दक्षिण में अिस तरह छोटी मोटी हलचलें हुअीं। किन्तु पूरी सिद्धता के अभाव में विद्रोह का ठीक मौका ढूँढने की चतुरता की कमी से तथा जो बलवे हुअे वे असमय, अकाकी, असगठित मनुष्यबल के आधारपर होने से दक्षिण अंग्रेजों को बहुत कष्टदायी न हुआ, जिस से वे अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग अुत्तरभारत में कर सके।

दक्षिण की हलचलों का सरसरी दृष्टि से अिस प्रकार निरीक्षण किया। अब फिर हमें तडपते, कराहते मानी अवध की ओर ध्यान देना चाहिये। मौलवी अहमदशाह के वीरचरित्र का अन्तिम अवलोकन करते हुअे अवध का कथासूत्र अधूरा छोड दिया गया है। मौलवी जैसे असाधारण वीर की मृत्यु भी अुस के जीवन की तरह वैभवशाली होती है। दूसरे कभी जब मैदान में लडते हुअे मारे जा कर स्वर्ग सिधारते होंगे, किन्तु जिन के हृदय में देशप्रेम की अग्नि

धधकती हो अुसे शान्त करने के लिये 'रक्त, रक्त,' कहकर रणभूमीपर तांडव करते हुअे जो अपने जौहर दिखाते है अुन्हें वास्तव में मृत्यु मार ही नहीं सकती। अैसे रणयोद्धा प्रतिशोध की प्यास पूरी बुझने के पूर्व खेत रह जायँ तो वे जमराज के अधीन नहीं होते। देखा गया है, कि अैसे वीर का सिर तनसे अलग हो जाय तो अुस का कबंधही समरांगणमें लडता है। और यह मान्यता लोगो में प्रचलित है, कि अुस कबंध के टुकडे करनेपर भी अुस वीर का अदृश्य भूत रातमें शत्रु की छातीपर चढकर प्रतिशोध लेता है।

अिस मान्यता की जड में कुछ तत्त्व अवश्य होता है। मौलवी अहमदशाह जब समरांगण में झूझ रहा था, तब लॉर्ड कॅनिंग ने अवध प्रांत के लिअे अेक घोषणापत्र प्रकट किया था; 'जो स्वयं हथियार डाल देंगे अुन्हें बागी न मानते हुअे, पूर्व के अपराधों की दयापूर्वक क्षमा की जायगी; और आज जो हमारा साथ दे रहे हैं अुन की जागीरें और अधिकार लौटा दिये जायँगे। विद्रोह के दबाने में अब ब्रिटिश शासन को पूरी सफलता प्राप्त है। ध्यान रहे, अब भी कोअी ब्रिटिश शासन का विरोध करने पर डटे रहेंगे तो अुन की अिस अुद्दण्डता के लिअे अुन्हें भयंकर दण्ड दिया जायगा।" अंग्रेजों को विश्वास था, कि अिस घोषणा के बाद तथा बडे बडे नेताओं की अेक अेक कर के रण में मृत्यु होने के बाद अवध में 'सब ठीक' हो जायगा। अिसी के साथ अवध की साढेसाती में कोढ की तरह यह संवाद मिला, कि 'पोवेन के नीच राजाने ५ जून १८५८ को लोगों के आदरपात्र मौलवी का सिर काट लिया है। किन्तु अतिमानुष प्रयत्नों की पराकाष्ठा कर थका हुआ, पराजयसे पस्त और शरण लेने के लिअे जिसे क्षमा के लालच के मोह में फँसाया जा रहा था-वह अवध, मौलवी की मौत पर स्यापा रोने के बदले, भूत का संचार होने की तरह, 'प्रतिशोध' के नारे लगाते हुअे खूनखराबी में फिर कूद पडा। नीच शत्रुने मौलवी का सिर नगर के तोरण पर लटकाया किन्तु अुस का कबंध मैदान में अंग्रेजों को सताने लगा। मौलवी की मौत से दबने के बदले समूचे अवध का यह भूत, अब बलाबल, यशापयश, आशा निराशा अेव जीने मरने की चिन्ता न करते हुअे नये अुत्साह से शत्रु से भिडने के

लिअे मैदान में खडा हो गया। मौलवी की हत्या का बदला लेने को निजाम अली पिलिभीत पर चढ आया, खान बहादुर खॉं चार हजार सेना के साथ आया, फरुखाबाद से पॉंच सहस्र लोग आ पहुँचे; विलायतशाह २००० सैनिकों के साथ आया और नानासाहब, बालासाहब, अलीखान मेवाती आदि नेताओंने मिलकर रुहेलखण्ड तथा अवध में ५००० सैनिकों के साथ भयकर धूम मचायी। अितनी बडी सेना मौलवी का बदला लेने वेगसे आक्रमण करती देख पोवेन–नरेश के छक्के छूट गये। अंग्रेजों ने अुस की रक्षा के लिये तुरन्त सेना भेज दी। अिस प्रदेश के आसपास शत्रु से क्रांतिकारियों की प्राणघातक मुठभेडें हो रही थीं। अुधर घाघरा नदी के किनारे बेगम हजरतमहल तथा हमू खानने डेरा डाला था। साथ साथ राजा रामबख्श, बाहुनाथसिंह, चांदासिंह, हनुमंतसिंह और अन्य बडे बडे जमींदार अपनी सारी सेना लेकर, अंग्रेजों से आक्रमित अवध को फिर से छुडाने के लिअे, अिकट्ठे हुअे थे। अुसी तरह शाहजादा फीरोजशाह, जो पहले धार में लड रहा था, अवध में आ पहुँचा। असाधारण निरधार से रुअिया का किला सम्हालनेवाला राजा नरपतसिंह भी वहाँ आया। अिस के पिता, खुसरासिंह, जो नानासाहब के परम मित्र थे, स्वाधीनता के युद्ध की घमासान में खेत रहे थे। सच्चे क्षत्रिय की तरह अपने पिता के स्थान ही में रणमैदान में डट कर नरपतसिंहने अपना खड्ग सॅंवारा था। नानासाहब को अपने किले में आश्रय दिया। अुसी तरह देशाभिमान की प्रेरणा, दृढता तथा त्वेष से अुछलता राजा बेनीमाधव भी अपने किले से झपट कर कानपुर होकर लखनअू पर चढाअी करनेवाला था। विजय की आशा न होनेपर भी अपने सम्मान तथा कर्तव्य के लिअे जो लोग मौतको भी गले लगाते है, अुन के असाधारण धैर्य की कोअी सीमा ही नहीं होती। क्षत्रिय कुल की आन को निबाहने, विजय की तनिक भी सम्मावना न होनेपर अितनी देरी से, वह सीधे लखनअू पर चढ आया। लखनअू में अुसने विज्ञापन लगवाये–नगरनिवासी सभी भारतीयों को बाहर निकल जाना चाहिये, क्यों कि बेनीमाधव फिरंगियों को भुन डालेगा। विजय से अुन्मत्त, संपूर्ण अनुशासित सेना से सुरक्षित होनेपर भी अिस विज्ञापन के अनोखे धैर्य से अंग्रेज चौंक पडे।

लखनअूपर हमला ? क्या बात है ? जैसे अभी लडाअी शुरू हो गयी हो,. रक्तसागर अुछले न हों, सारे सालभर अवध में यह कुछ नहीं हुआ क्या ?

सो, १३ जून को, होप ग्रॅंटने क्रांतिकारियोंपर अचानक धावा बोल दिया, जो लखनअू के पास नवाबगंज में जमा थे। गोरे और काले सिपाहियों के नेतृत्व में जो अचानक हमला किया अुस से असावधान क्रांतिकारी तितर बितर हो जाते—किन्तु सिपाहियो ! ठहरो ! मौलवी की हत्या को अभी अेक सप्ताह भी नहीं बीता है—सो, ठहरो ! सिपाहियोंने, अैसी विचित्र दशा में भी, डट कर लडने की सिद्धता की। और देखो ! अन्य किसी जगह न मिलने वाली अद्‌भुत वीरता का परिचय क्रांतिकारियोंने यहाँ दिया। शत्रु भी अुस से प्रभावित हो जायगा। होप ग्रॅंट लिखता है:—फिर भी अुनके हमले बडे जोरदार थे और अुन्हे विफल करने के लिअे हमें बहुत कडी मिहनत करनी पडी। बडे दृढ और साहसी जमींदार वीरोंने हमारी पिछाडी पर दो तोपों से हमला किया। मैंने भारत में कअी लडाअियाँ देखी हैं और 'जीतेंगे या मरेंगे' की आनसे लडनेवाले सूरमाओं को भी देखा है; किन्तु अिन जमींदारों की सी असाधारण वीरता मैंने शायद ही देखी है। पहले पहल अुन्होंने हाडसन के रिसालेपर हमला किया और अुसे तितर बितर कर दिया और अुनकी दो तोपों को भी विचलित कर दिया। तब मैंने सातवीं हुजार पलटन के दस्तों को आगे बढने की आज्ञा दी; अुनके साथ चार तोपें थीं, जो क्रांतिकारियों से केवल ५०० गज के फासलेपर थी और आग बरसा रही थी। क्रांतिकारी हॅंसियासे काटे भुट्टों की तरह गिर रहे थे। अेक मोटे आदमीने निडर होकर दो झण्डे अपनी तोपों के पास गाड दिये, जो वहाँ डट जाने का अिशारा था। किन्तु हमारी तोपों की मार इतनी भयंकर थी, कि जो भी अुन तोपों के पास आता वह मारा जाता। हमारी सहायता के लिअे और दो दस्ते आये, जिससे क्रांतिकारियों को हटना पडा...अुन दो तोपों के पास १२५ लाशों का ढेर लगा था। तीन घंटे के बाद हमारी जीत रही। *

---

* होप ग्रॅंट कृत अिन्सिडेंटस ऑफ दि सिपाय वॉर पृ. २९२.

पूरब, मध्य, अुत्तर अवध में—लगभग सभी स्थानों में—अिस तरह की घमासान भिडन्तें हुआीं। और ये भिडतें केवल अंग्रेजों से ही नहीं, मानसिंह तथा पोवेन नरेश के समान विश्वासघातियों से, जो क्षमा के लालच में शत्रु दल में बने रहे थे, भी हुआीं। अवध को अिस तरह दोहरी लडाअी लडनी पडती थी। पोवेन पर धावा बोल दिया; लखनअू की ओर युद्ध जारी था; सुलतानपुर में भिडन्त हुअी; नीच विश्वासघाती मानसिंह को अुस के किले में बद कर दिया गया; अंग्रेजों के मार्गों पर रुकावटें पैदा की जाती थीं; अंग्रेजों की चौकियाँ लुटी गयी थीं; और अिस तरह क्रांतिकारियों ने अवध की चप्पा चप्पा भूमि अपने महान् आत्मत्याग से पूजनीय बना दी थी। जहाँ जहाँ अंग्रेज अुन्हें घेर लेते वहाँ वहाँ घेरे को तोड कर ये देशभक्त फैल जाते और युद्ध और प्रतिशोध के नारे लगातार चालू रखते। स्थलाभाव के कारण अिन हलचलों का हम ब्योरा नहीं दे सकते।

अैसी भीषण लडाअी अवध लडा। निदान, १८५८ के अक्तूबर में हिंदुस्थान के अंग्रेज जंगी लाट ने गोरे और काले सिपाहियों की बडी भारी सेना फिर से बनायी, सब दिशाओं से अेक साथ आक्रमण किया और क्रांति-कारियों को सब ओर से दबा कर नेपाल की ओर धकेलने की आज्ञा दी। फिर भी, अवध ने धैर्य न छोडा और बिना लडाअी के अेक चप्पा भी भूमि न छोडी!

बेनीमाधव के शकरपुर को तीन ओरसे तीन सेनाओं ने घेरा था। रसद अुस की कम हो गयी थी, जहाँ शत्रु सब तरह से लैस था, फिर भी बेनी-माधवने हथियार नहीं डाले। तब स्वयं प्रधान सेनापतिने अुसके पास सदेसा भेजा कि अब लडाअी चालू रखनेसे व्यर्थ रक्तपात होगा, क्यों कि जीत के कोअी लच्छन नहीं दिखायी देते। यदि वह शरण माँगे तो अुसे पूरी क्षमा की जायगी तथा अुस की सारी संपत्ति लौटा दी जायगी। बेनीमाधव का उत्तर था:— 'किले का बचाव करना अब असम्भव है, मैं अुसे छोड रहा हूँ। किन्तु शरण? मै कभी तुम्हारी शरण नहीं माँगूगा; क्यों कि, मेरी देह मेरी अपनी नहीं; मेरे प्रभु की है।" किला तुम्हारे हाथ आयगा; बेनीमाधव नहीं; क्यों कि, अुस की देह

स्वराज्य की दासी है। यह अकल्पनीय अेकता, भारतमाता की भक्ति अपने निष्ठावंत सपूतों में प्रेरित करती है और अुस से देशभर में अलौकिक वीरता चमक अुठती है! .x.

१८५८ के नवंबर में अिंग्लैंड की महारानी ने वह सुप्रसिद्ध घोषणा की और पहले की भविष्यवाणी सच निकली—ठीक सौ वर्ष के बाद कंपनी के शासन का अन्त हुआ—हाँ, किन्तु अिंग्लैड की महारानी की सत्ता अुस के स्थान में चढ ही बैठी! अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र युद्ध करनेवालों को तब क्षमा मिलनेवाली थी, जब वे हथियार डाल दें। अुस घोषणा में यह वचन दिया गया था, कि अुन की संपत्ति जब्त नहीं होगी; यहाँ तक कि अुन के अपराधों की जाँच भी न होगी।*

.x. सं. ५१। चार्लस बॉल कहता है.—"अुपर्युक्त घोषणा के बाद भी अवध का झगडा बडा अजीब-सा रहा। अिन सभी बागियों की टोलियों को जनतासे अपूर्व सहानुभूति तथा आदमियों की कुमुक मिला करती थी। ये बागी बिना किसी रसद के कूच कर देते, क्यों कि हर स्थान के लोग अुन्हे खिलाते पिलाते। ये अपना सामान चाहे जहाँ, बिना प्रहरी के, छोड जाते, क्यों कि लोग अपने आप अुस की रक्षा करते। अिन बागियों के पास अंग्रेजों की हर हलचल के समाचार घंटे घंटे पर पहुँचते रहते, जिस से अपनी तथा अंग्रेजों की दशा को वे पूरी तरह जान लेते। हर खाने के मेज के आसपास खडे खानसामें बागियों से गुप्त सहानुभूति रखनेवाले थे, जिस से हमारी कोअी योजना गुप्त न रह पाती; अैसे तो अंग्रेजों के हर खेमे में बागियों के गुप्तचर खडे होते थे। बागियों पर अचानक हमला नहीं किया जा सकता था। कोअी कौतुक बन जाय तो दूसरी बात है। क्यों कि अेक मुँह से दूसरे मुँह तक पहुँचनेवाले समाचार हमारे घुडसवारों को मात कर देते।" खण्ड २, पृ.५७२

* सं. ५२। यह संदर्भ विशेष महत्त्वपूर्ण है; क्यों कि १८५७ के किसी अितिहासमें यह जानकारी न मिलेगी। और तो और, लंदन—टाअिम्स के लिअे भेजे गये श्री. रसेल के संवाद-पत्रों में भी अिस का जिक्र नहीं मिलेगा। अर्थात्

राजामहाराजाओं के दत्तक गोद लेने का अधिकार मान लिया गया। अिंग्लैंड की महारानी के अुस घोषणापत्र में यह अलग अभिवचन दिया गया था, कि जनता के धार्मिक अधिकारों तथा रूढियों में तनिक भी हस्तक्षेप नहीं किया जायगा और अुपर्युक्त सभी वचन पूर्णतया पालन किअे जायेंगे।

आगे कहा गया था, "अीस्ट अिंडिया कंपनी के कार्य काल में नागरी तथा सैनिकी महकमों के भिन्न भिन्न पदों पर काम करनेवाले आज के नौकरों को हम अुन्हीं पदों तथा अधिकारों पर रखने की प्रतिज्ञा करते हैं; हाँ, यह सब कुछ हमारी अिच्छा पर तथा आगामी नियम निर्बंधों पर निर्भर रहेगा।"

"देशी नरेशों के लिअे प्रकट किया जाता है, कि अीस्ट अिंडिया कंपनी के साथ अुन्हों ने जो संधियाँ या ठहराव किये होंगे वे हमें भी अक्षर अक्षर मंजूर है; अुसपर पूरी तरह अमल करने को हम राजी हैं। हाँ, नरेशों को चाहिये, कि वे अुस पर अमल कर आपसी सहयोग की चेष्टा करें।"

"अिस समय जो है, अुस से अधिक प्रदेश जीत कर अुस पर राज करने का हमारा अिरादा नहीं है; और, जिस तरह हमारे सार्वभौमत्व के अधिकारों तथा हमारे मातहत प्रदेशों पर हम किसी तरह का, तथा किसी का,,

---

निम्नलिखित सब जानकारी श्री. रसेल के जॉन डीन (लंदन टािअम्स के संपादक) को लिखे व्यक्तिगत पत्र में है। यह पत्र डीन की जीवनी में शामिल न होता तो लोगों को कभी न मालूम होता। पत्र यों है:—१८५९ के अन्त में डब्ल्यु अेच. रसेल लॉर्ड क्लाअिड के साथ था। प्रधान सेनापतिपर लिखे अपने पत्र में, अिलाहाबाद के अपने मकान–मालिक–अेक अँग्लो अिंडियन जनरल मर्चेंट–के विषयमें लिखते हुअे लॉर्ड क्लाअिड कहता है:—तुम्हें ठीक पता है अुसने क्या किया ? नहीं। अच्छा, जब विद्रोह फूट पडा तब देशी बेपारियों का अुसपर काफी ऋण था। अुसे स्पेशल कमिशनर बनाया गया और सबसे पहला काम अुसने किया, अपने सभी साहुकारों को फाँसी चढाना।

भी अन्याय्य आक्रमण चुपचाप नहीं सहेंगे, अुसी तरह दूसरों के अधिकारों पर कोअी आक्रमण करना चाहे तो कभी अुसे अनुमति न देंगे। देशी नरेशों के अधिकार, सम्मान तथा पद पर ध्यान देकर अुन के साथ हम अत्यंत आदर से बरताव करेंगे। हमारी यह भी अिच्छा है, कि हमारी जनता के समान अुनकी भी अुन्नति हो और अंतर्गत शांति तथा सुराज्य-प्रबंध से ही प्राप्त होनेवाली सामाजिक प्रगति तथा अुन्नति का लाभ अुन्हें मिले। ”

“ और यह भी हमारी अिच्छा है, कि हमारे प्रजाजनों से कोअी भी अपनी शिक्षा, क्षमता तथा कर्तृत्व से सुयोग्य हो तो, जाति, धर्म, पंथ-किसी का विचार न करते हुअे अुसे निष्पक्ष होकर और निःसंकोच हमारी सेवा में किसी भी पद पर भरती किया जायगा। ”

“ ब्रिटिश प्रजाजनों की प्रत्यक्ष हत्या करने में जिन्हों ने सक्रिय हाथ बँटाया हो और फि वह अभियोग सिद्ध हो चुका हो अुन अपराधियों को छोड अन्य सभी को हम क्षमा घोषित करते है।

“ और अब भी सशस्त्र होकर हम से युद्ध कर रहे हैं वे भी यदि अपने गाँवो को लौट जायँगे तथा अपने अपने पहले के धंधों में लग जायँगे, तो हमारे और हमारे शासन के विरुद्ध अुन के किये सभी अपराध, बिलाशर्त, क्षमा कर दिये जायँगे और अुन अपराधों को हम बडी कृपा कर भूल जाने को सिद्ध है। ”

अिस तरह यह भारत का भाग्यलेख (?) ‘ महारानी का घोषणापत्र’ प्रकट किया गया। अिस का प्रमुख अुद्देश अवध की क्रांतिको ठंढा कर देना ही, निस्सदेह, था। किन्तु अवध ने अिस की ओर ध्यान तक न दिया। अुलटे अिसके सामने अवध की बेगमने अेक घोषणापत्र यों प्रकट किया:— अिंग्लैंड की रानी के घोषणापत्र में यह बताया गया है, कि देशी नरेशों से कपनी ने जो संधियों या ठहराव किये हों वे सब के सब अुस पर बंधनकारी हैं। किन्तु भारतीय जनता अिस कपट को अच्छी तरह जान ले। कंपनी तो सारा भारत हडप गयी है और अिस को सिर आँखों पर रखना हो तो अिंग्लैंड की रानी ने

क्या नयी बात कही ? भरतपुर के राजा को कंपनी ने वचन दिया, कि अुसे अपने पुत्र के समान माना जायगा और प्रत्यक्ष में अुस का सारा राज हडप लिया गया ! लाहौर नरेश (दिलीपसिंह) को लंदन में बंदी रख छोडा जो कभी यहाँ लाया नहीं जाता। नवाब शमसुद्दीन खाँ को अेक हाथ से फाँसीपर लटकाया गया और दूसरे हाथ से अुसे सलाम करते अिन अंग्रेजों को लज्जा न आयी ! सातारे के छत्रपति के पुणें के पेशवा को बंदी बनाया और मरते दमतक बिठूर में अुसे पेन्शन चढवाते रहे। बनारस नरेश को आगरे में बंदी बना रखा। बिहार, अुडीसा, बंगाल के नरेश या जागीरदारों को तो मटियामेट कर डाला गया। बकाया वेतन बाँटने के बहाने अवध का पुरातन मौरूसी धन सब का सब हडप लिया। हाँ, संधी के ७ वें परिच्छेद में प्रतिज्ञा लिख दी कि अब आगे चलकर कुछ नहीं लेंगे। अिस दशा में जो कंपनी ने किया अुसी को मंजूर करने की बात अिंग्लैंड की रानी करती हो तो पहले तथा आज की स्थिति में भेद क्या हुआ ? ये तो सब पुरानी बातें है। किन्तु अभी अभी प्रतिज्ञापूर्वक लिखीं संधि-पत्र की शर्तों को ताकपर रख कर और हमारे लाखों रुपयों का ऋण अुस के सिरपर होते हुअे भी कंपनी को ढूँढने पर भी कोअी बहाना न मिला तो 'राजकर्ता का और प्रजा का असंतोष' यह झूठा कारण बता कर हमारी अपरपार मत्ताओं तथा करोडों के प्रदेश को साफ हडप लिया ! यदि हमारे प्रजाजन पहले के नवाब वाजिदअली शाह के कार्यकाल में असंतुष्ट थे, तो फिर अब हमारे कार्य काल में प्रजा पूरी संतुष्ट और सुखी होने का क्या कारण है ? राजनिष्ठा और प्रेम जितना हमें मिल रहा है वैसा शायद ही किसी राजा को अुसकी प्रजाने दिखाया हो ! अिस दशा में हमारा प्रांत हमें क्यों कर नहीं लौटाया जा रहा है ? अिंग्लैंडवालीने और कहा है, कि अधिक प्रदेश जीत कर अुसपर राज करने की अुसे अिच्छा नहीं-फिर भी रियासतों पर दखल करना कम नहीं होता ! अुसने यदि पूरा शासन अपने हाथ में ले लिया हो, तो फिर हमारी प्रजाने अपनी अिच्छा साफ प्रकट करनेपर भी अब तक हमारा राज हमें क्यों कर नहीं लौटाया जाता ? "

" आज तक कभी सुना नहीं गया कि कोअी रानी या राजा विद्रोह के लिअे सारी सेना या सपूर्ण राष्ट्र को शिक्षा देती है। सब को क्षमा किया जायगा; क्यों कि, समूची सेना को तथा सभी भारतियों को दण्ड देना समझदारों को कभी पसंद नहीं आयगा। अन्हें यह भी मालूम है, कि जबतक 'दण्ड' शब्द सुनाया जाता हो तबतक असंतोष और विद्रोह कभी शान्त नहीं होते। कहावत प्रसिद्ध है; मरता क्या न करता! मरी मुर्गी आगसे थोडे ही डरती है?

" अिंग्लैंडवाली की घोषणामें यह भी कहा गया है, कि जिन्होंने विद्रोह किया या अुसे प्रोत्साहन दिया अुन को प्राणदान दिया जायगा; किन्तु अुनकी जॉच कर कुछ दण्ड भी दिया जायगा। और फिर जिन्होंने स्वयं हत्या की है या अुसकी सहायता की है, केवल अुन्हीं हत्यारों को छोड, सब को क्षमा घोषित की जायगी। अब अिसे देख अेक गॅवार भी ताड सकता है, कि चाहे अपराधी हो या निरपराधी कोअी नहीं बच पायगा; बचना असम्भव है। अिंग्लैंडवाली का घोषणापत्र देखकर हमारे प्रजाजनों के लिअे हमारा जी बिना छटपटाये कैसे रह सकता है? क्यों कि, यह घोषणापत्र तो ज्वलन्त द्वेष-भाव का बढिया प्रदर्शन है! अिसी से हम अब स्पष्ट आज्ञा देते हैं, कि गाँव के मुखिया के नाते जो लोग मूर्खता से ब्रिटिशों के सामने पेश हुअे हों, वे १ जनवरी १८५९ के पहले तुरन्त हमारे शिबिर में अुपस्थित हो जायँ। अर्थात् अुनका अपराध निश्चित क्षमा कर दिया जायगा। हमारी अिस घोषणापर विश्वास कर भारतीय नरेश कितने दयालु और अुदार होते हैं अिसे ध्यानमें रखा जाय। सहस्र सहस्र लोगोंने अिसका अनुभव किया है। लाखों लोगोंने यह सुन रखा है। हाँ, यह कभी किसी ने सुना भी नहीं कि अंग्रेजोंने किसीको क्षमा कर दिया हो।"

" शान्ति प्रस्थापित होने पर लोगों की सुखसुविधा में वृद्धि करने के लिअे नअी सडकें बनाने; नयी नहरें खोदने आदि सार्वजनिक कल्याण के काम हाथ धरने की बात अिंग्लैंडवाली ने की है। अुस पर भी गौर करना चाहिये।

मालूम होता है, सडकें बनाने और नहरें खोदनेसे बढकर अन्य अच्छा धंधा भारतीयों के लिअे वह ढूंढ न सकी।

"जनता यदि यह सब कुछ जान न ले तो फिर आशा की तनिक भी सम्भावना नहीं है।"

"हमारी यही अिच्छा है, कि अुस अिंग्लैंडवालों की घोषणा के जाल में कोअी फँस न जाय।"

हाँ, तब महारानी से अुद्घोषित बिलाशर्त क्षमादान का लाभ न अुठाने का अवधने निश्चय किया। अुसके अनुसार अब भी वह अपनी तलवार चमका रहा था, घोडे पर सवार था, रणमैदान में डटा हुआ था, रक्त से लथपथ था, अेव यज्ञ की ज्वाला में कूद रहा था। स्वातन्त्र्य, या तो अन्ततक युद्ध, यही अुसका मन्तव्य था। शत्रुके पाँवपर आलोट ने की अपेक्षा अुस के गलेपर झपटना ही अुस की प्रकृति को जँचता था। अब भी शकरपुर, डूढियाँ खेडा, रायबरेली, सीतापुर के रणमैदान झूझ रहे थे, स्वय चीरे जाते थे और फिर भी लडे जाते थे!

अिस प्रकार अवध १८५८ के जून मे नवंबर तक तथा दिसंबर से अप्रैल १८५९ तक लडते हुअे सब ओर से दबाया गया और अुसे नपाल में खदेडा गया। क्रातिकारी नेपाल में घुसे तब भी अंग्रेजों ने अुन का डटकर पीछा किया। किन्तु अेक आशा तन्तु था—नेपाल का हिंदु नरेश अुन्हे आसरा देगा?

अिस समय नेपाल में पहुँचे क्रांतिकारियों की संख्या लगभग साठ सहस्र थी। अिन के नेता थे नानासाहेब, बालासाहेब, बेगम हजरत महल तथा अुसका पुत्र तथा अन्य। नेपाल के जंगबहादुरने अुनके नाम अेक पत्र भेजा, अिस के अुत्तर में नानासाहबने अितना स्पष्ट, मुँहतोड और व्यंगपूर्ण लिखा था, कि कम से कम अुसका कुछ भाग यहाँ दिये बिना नहीं रहा जाता। अुत्तर यों था:—" पत्र प्राप्त। भारत के कोने कोने में हम नेपाल की कीर्ति

सुन रहे थे। भारत के अनेक प्राचीन नरेशों का अितिहास हम पढ चुके हैं और अनेक विद्यमान राजाओं के गुण–दोष भी हम जान चुके हैं, तो भी, निश्चय से, हम कह सकते हैं, कि आप का काम कोअी सानी नहीं रखता! क्यों कि, आपके प्रजाजनों से ही दुष्टतापूर्ण व्यवहार करनेवाले ब्रिटिशों की आप महाराज ने सहायता की। और अुस में तनिक भी न हिचकिचाये। केवल अुन के माँगने पर आप सहायता को दौड गये। अहा! आप की अुदारता की सीमा न रही! अच्छा, तो मैं भी मानता हूँ, कि आप के प्रजाजनों से पेशवा के जो वंशज सदा से मित्रता का बरताव करते आये हैं अुन की सहायता आप अवश्य करेंगे; क्या यह मेरी आशा अस्वाभाविक है? और खास कर तब, जब कि आप ने कट्टर शत्रु ब्रिटिशों को खुले हाथों सहायता प्रदान की है। जिसने अपने शत्रु को घर के अंदर बुलाया वह अपने मित्र को कमसे कम निकाल बाहर तो नहीं करेगा। आप महाराज को वह सुप्रसिद्ध विवरण फिरसे सुनाना अनावश्यक है–हिंदुस्थान किन अन्यायों की चोटों से कराह रहा है; ब्रिटिशों ने संधियों को ठुकरा दिया है; वचनों को कुचल डाला है; भारतीय नरेशों के मुकुट छीन लिये है। यह भी आप को बताना आवश्यक नहीं, कि स्वराज्य नष्ट होते ही अुस राष्ट्र का धर्म भी खतरे में पड जाता है। आप यह सब जानते ही हैं। अिन्हीं कारणों से यह युद्ध छिडा है। मैं अपने भाअी बालासाहब को आप के पास भेज रहा हूँ, जो और बातों को स्वयं आप के सामने स्पष्ट कर देंगे। *

अुस पत्र पर पेशवाने अपनी मुहर लगायी और जंगबहादुर के पास भेज दिया। अिस पर काफी चर्चाअें हुअीं। जंगबहादुरने अपने अेक सरदार कर्नल बलभद्रसिंह को क्रांतिकारियों के नेताओं से मिलने के लिअे भेजा था। अुसे अेक स्वरँ से बताया गयाः—"हमने भारत के धर्म की लडाअी लडी। महाराजा जंगबहादुर अेक हिंदु हैं और हमारी सहायता करना अुन का कर्तव्य है। यदि महाराज सहायता दें, यदि अपने अफसरों को हमारा नेतृत्व

* चार्लस बॉल कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड २.

करने की आज्ञा दें, तो हम अब भी कलकत्तेतक जा सकते हैं। रसद का प्रबंध हम स्वयं कर लेंगे और आज्ञा अुनकी मानेंगे। हम जो भी प्रदेश जीतेंगे अुसपर गोरखा सरकार का स्वामित्व होगा। यदि अितना भी न हो सके तो महाराज हमें अपने राज में आसरा दें और हम अुनके आज्ञाकारी बनकर रहेंगे।" कर्नल बलभद्रसिंग गोरखा प्रतिनिधि बोला–' अंग्रेजों ने दयाका द्वार पूरा खोल दिया है; सो,अपने हथियार अंग्रजों के सामने धर दो और अुनका आसरा माँगो।" क्रांतिकारी नेताओं ने कहा 'हमने वह घोषणा सुनी है। किन्तु दूसरों को हानि पहुँचा कर हम अपने कुछ मित्रों के प्राण बचाना नहीं चाहते। महाराजा जगबहादूर हिंदू है, हम गोरखों के विरुद्ध लडना नहीं चाहते। वे चाहते हों तो हम अपने हथियार अुन के सामने धर देते है। यदि हममें से कुछ की हत्याअें करना चाहें तो भी हम प्रतिकार नहीं करेंगे। किन्तु ब्रिटिशों को हमारा प्रतिशोध लेने का मौका देने के लिअे अुनकी शरण में क्यों कर जायें ? "

और भी बातचीत हुअी। किन्तु अन्त में क्रांतिकारियों को जग–बहादुरने सूचित किया, कि यदि क्रांतिकारियों की सहायता करना वह चाहता तो अुनकी कत्ल करने लखनअू को अपनी सेना क्यों कर भेजता ? केवल अिस नीच अुत्तर को दे कर ही वह न रुका, अुसने ब्रिटिशों को नेपाल में घुस कर क्रांतिकारियों का शिकार करने की पूरी स्वतन्त्रता दी !

तब क्रांतिकारियों की सभी आशाओं पर पानी फिर गया। अपने शस्त्र छिपाकर भी गर्दन झुका कर वे अपने अपने घर चले गये। अब अुनको अुभाडने में लाभ न देखकर अंग्रेजों ने भी अुन्हें न छेडा। फिर भी कुछ अैसे वीर महात्मा थे, जो अंग्रेजों का पौरा फिरसे भारत की पवित्र भूमिपर जम रहा है यह दृश्य देख न सकें। वे अन्य लोगों के समान घर जाने के बदले जंगलमें, जानते हुअे कि अिसका परिणाम भूखों मरना है, चले गये। अिसी अर्से में अंग्रेज सेनापति होप ग्रँट को नानासाहबने अेक पत्र लिखा था। क्या होगा अुस पत्र में ? आत्मसमर्पण की बातचीत चलायी होगी ? छिः कभी नहीं।

ब्रिटिश कूटनीति की घोर निंदा तथा ब्योरेवार आलोचना करने के पश्चात् अुस पत्र में नानासाहब पूछते हैं:—" हिंदुस्थान हडप कर मुझे ' बागी ' कहने का तुम्हे क्या अधिकार है ? भारत पर राज करने का हक तुमको किसने दिया है ? क्या ? तुम विदेशी फिरंगी भारत के राजा ? और हम अपने ही देश में चोर ठहरे ? " येही अन्तिम शब्द नानासाहब के नाम पर अितिहास ने संग्रह कर रखे हैं। ये शब्द क्या है—बालाजी विश्वनाथ पेशवा के सिंहासन की आह है ! शिवाजी के पेशवा के अन्तिम अुत्तराधिकारी के योग्य दृढ, न्यायपूर्ण, आत्माभिमान तथा शान को शोभा देनेवाले ये शब्द हैं ! बाजीराव (२ य) के स्त्रैण शासन का कलंक रक्त के सोतों से धो डाला गया और वह शुद्ध पेशवा का सिंहासन चित्तौड की राजपूतनियों के समान लडते, झगडते आत्मत्याग की अूंची अुठती अग्निज्वालाओं में जलते हुअे संसार के रंगमंच से लोप हो गया, अुस की अन्तिम चीख थी:—" भारत में विदेशी राजा बने और भारत के सपूत चोर ? "

अिस पत्र के प्रसंग के बाद नानासाहब का क्या हुआ, अितिहास नहीं जानता। अपनी अिच्छा से स्वीकृत दरिद्रता में बालासाहब की जंगल में मृत्यु हुअी। आगे चल कर जंगबहादुरने अवध की बेगम तथा अुसके पुत्र को आसरा दिया था। गुजरानसिंह नामक अेक क्रांतिनेता अेक अन्तिम भिडन्त में मारा गया।

अिस तरह १८५७ का यह राष्ट्रीय क्रांतियुद्ध अवध में समाप्त हो गया। अपनी स्वाधीनता के लिअे, अिस से अधिक जीवट और वीरता से संसार में अन्य कोअी देश न लडा होगा।

मॅलेसन कहता है:—अवध के लोग, अपने भाअी सिपाहियों के छेडे हुअे विद्रोह में (क्रांतिकारियों में बहुसख्य अवधवाले ही थे) शामिल हुअे और स्वाधीनता के लिअे लडे। कितने हठीलेपन से झगडा किया गया अिसका वर्णन दे चुके हैं। भारत के दूसरे किसी भी हिस्से में अितना दृढ तथा दीर्घकालिक प्रतिकार न हुआ, जैसा कि अवधने किया। झगडे भर में

१८५६ के अन्यायों की चिढ से लोगों का मन फौलादसा कठोर बनता और अुनके निश्चय को और दृढ बना देता। कभी कभी ठीक समय पर भाग जाते अिस आशा से, कि फिर किसी दिन विजय की सम्भावना दीख पडते ही संघर्ष शुरू करें। निदान, लॉर्ड क्लाअिडने अवध पर अन्तिम धावे का तूफान मचा दिया और शेष सैनिकों को नेपाल के जगलों में आसरा ढूंढने पर मजबूर किया, तब अुन्होंने शरण की अपेक्षा भूखों मरना पसद किया। किसान, तालुकदार, जमींदार, व्यापारी सबने, दीर्घकालिक संघर्ष के बाद, अुसका अन्त देख कर हार मान ली।*

* मॅलेसनकृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ५, पृ. २०७.

अध्याय २ रा

पूर्णाहुति

२० जून १८५८को गवालियर के रणमैदान में जो भिडन्त हुअी अुस में झाँसीवाली रानी लक्ष्मीबाअी खेत रही। अिस तरह अंग्रेजों का अेक कट्टर शत्रु सदा के लिअे कम हुआ। किन्तु अंग्रेजों के और अेक कट्टर शत्रुने, जो युद्धतंत्र में रानी से भी अधिक मँजा हुआ था, मैदान से यशस्वी पीछेहट से अंग्रेजों को झाँसा दिया था। गवालियर से वह २० जून को गायब हो गया। फिर जावरा और अलीपूर से दिनांक २२ को अंग्रेजों के हाथोंसे छटक गया—किन्तु कहाँ ?

थोडे ही समय में सारे मध्यभारत भर में जगलों, नदियों, पहाडों, अुपत्यकाओं, गाँवों अेवं नगरों से भीषण रणगर्जनाअे बुलंद हुअीं; और हर स्थान से 'तात्या टोपे, तात्या टोपे' का घोष अुठने लगा।

क्यों कि, शिकारियों के बरछे सब ओर से अुठ जाने से यह मराठा शेर मध्यभारत के जंगलों में घुसा था। गवालियर के मैदान मे रानी लक्ष्मीबाअी खेत रहने से, मानो, अुस का दाहिना हाथ ही गिर पडा। अनेक हारों के बोझ से क्रांति लगभग दब चुकी थी। नानासाहब से वह हमेशा के लिअे बिछुड गया था। भारतीय पिट्ठुओं ही की सहायता से अंग्रेजी सत्ता अब भारत में अजेय होने की शेखी बघार रही थी। न तात्या के पास तोपें, न

आवश्यक सेना रही थी, न अुसे प्राप्त करने की आशा भी। फिर भी अंग्रेजों को परेशान करनेवाले तथा पराजय को भी लज्जित करनेवाले अिस बाँके वीर ने अपना झण्डा नीचे नहीं झुकाया था। शत्रु के आगे झण्डा झुकाना ? नहीं, कदापि नहीं ! क्यों कि, अिमी जरीपटके (झण्डे) का डंडा अैसे वृक्ष से बनाया गया है, कि अुसे कभी विदेशी तोड दें तो शायद टूट जायगा; किन्तु अुन के आगे झुकेगा नहीं—कभी नहीं !

गवालियर, जावरा और अलीपुर की हारों के बाद बची हुअी सेना के साथ तात्या टोपे तथा रावसाहब पेशवा सारमथुरा नामक गाँव में गये। अुन की युद्ध की योजना अब तीन महत्वपूर्ण सिद्धान्तोंपर खडी थी—(१) अंग्रेजी सेना से किसी मैदान में भिडन्त न की जाय; (२) असरक्षित प्रांतों में वृकयुद्ध की नीति से छापे मारे जायँ; (३) मार्ग में जो रियासत मिलेगी अुस से युद्ध सामग्री, धन और सेना अुगाहे जायँ; क्यों कि, अिस तीसरे सिद्धान्त के बिना अुपर्युक्त दोनों सिद्धान्त लूले पड जायँगे। अुत्तर तथा मध्यभारत में लगभग हर मुकाम पर संस्थान है। हर अेक के पास साल भर के लिअे आवश्यक रसद तथा शस्त्रास्त्र जमा किये रहते हैं और देश की रक्षा में अुसे लगाना अुन का प्रथम कर्तव्य है। १८५७ की क्रांति में जनता के बलवा करने की माँग को, अिन्हीं नरेशों ने अपने व्यक्तिगत पापी स्वार्थ के लिअे ठुकरा कर प्रकटरूप से क्रांति की सहायता न की। अिन रियासतों में व्यर्थ का संग्रह किया हुआ गल्ला पडा हो, तब स्वदेश के सैनिक क्यों कर भूखों मरें ? सो, अिन विश्वासघाती नरेशों से आवश्यक सहाय हथियाने के लिअे तात्या टोपे और रावसाहब ने बडी सुंदर योजना बनायी। अिस तरीके से देश की सेना को खिलाने तथा अुसे लडती रखने में जनता पर कोअी बोझ न पडा। अिन नरेशों के पास नगण्य सेना होती थी, तब अुन पर यह युद्ध—कर लादने का काम कठिन न था और रियासतें पास पास होने से सेना के साथ सामग्री ढोने का कष्ट भी न करना पडता। माँग करते ही ये नरेश मान लें, तो अच्छा ही था, नहीं तो अुन्हे मजबूर करने से काम बन जाता! बस।

हाँ, तो अुपर्युक्त तीन बातों पर तात्या टोपे ने अपनी आगामी लडाअी का कार्यक्रम रचा था। अिस संघर्ष को चालू रखने में तात्या का अन्तिम अुद्देश्य यही था, कि कूच करते रहना और सुनहला अवसर पात ही नर्मदा पार हो कर मराठा शेर को अपने घर के पहाडों और जंगलों में पहुँचा देना; जहाँ अंग्रेजों का ध्येय था, नर्मदा पार करने का अवसर तो दूर, किन्तु नर्मदा के पास भी तात्या को फटकने न देना। दोनों में यह चढाअूपरी चालू हुअी।

पहले तात्या की दृष्टि भरतपुर पर थी, किन्तु प्रबल अंग्रेजी सेना वहाँ पहुँचने की खबर पाते ही अुसने अपना रुख जयपुर की ओर मोडा। जयपुर की राजसभा में तात्या के सहानुभूतिक कअी लोग थे। जनता और सैनिकों का झुकाव भी अुसी की ओर था। सो, तात्या ने जयपुर को आदमी भेज कर अपने हितुओं को सिद्ध रहने की पूर्वसूचना दी; किन्तु अंग्रेजों के कानों में यह भनक पडी और तुरन्त अुन की सेना नसीराबाद से जयपुर को चल पडी। जयपुर को यह बनाव देख कर तात्या दक्षिण की ओर मुडा। यहाँ कर्नल होम्स ने तात्या का पीछा किया। तात्या टोपे ने वही चतुरता से अुस को झाँसा दिया और वह टोंक रियासत पर चढ गया। नवाब स्वयं सुरक्षित नगर में बैठा रहा और तात्या का सामना करने के लिअे कुछ सैनिकों को चार तोपों के साथ नगर के बाहर भेज दिया। अब भीषण लडाअी छिड जाती, किन्तु टोंक के सैनिकों ने तात्या के सैनिकों को गले लगाया; अपनी तोपें तात्या को दे दीं। अिस तरह फिर से नयी तोपें, सेना और सामग्री के साथ निश्चयपूर्वक दक्षिण की ओर कूच किया। वह ठेठ अिंद्रगढ तक पहुँचा और कुछ आराम किया। अुस के पीछे होम्स की सेना और अेक पासे पर राजपूताने से रॉबर्टस् आ रहे थे। अिस समय मूसलाधार वर्षा हो रही थी; सामने चम्बल भरी पडी थी। पीछे से भयंकर शत्रु–सेना की, तथा सामने चम्बल में, बाढ थी! अिस से अुत्तर–पूरब को मुड कर वह बुंदी पहुँचा। वहाँ से बडी चतुरता से शत्रु को भुलाता हुआ, पहले से क्रांति में सहयोग देने वाले नीमच, नसिराबाद के प्रदेश में आ पहुँचा। भिलवाडे में वह आराम के लिअे रुका। यह समाचार मिलते ही ७ अगस्त १८५८ को सरवर गाँव

से बहुत जल्दी निकल कर रॉबर्टसने तात्या की सेना पर धावा बोल दिया। दिन भर तात्याने अुस को रोक रखा और रात होते ही तोपों और सेना को अुदेपुर राज्य के कोटरा गॉव में पहुँचा दिया। वहॉ सेना को सुस्ताने का समय दे कर, पास ही होनेवाले नाथद्वार के पवित्र क्षेत्र में ठाकुरजी के दर्शन के लिअे तात्या चला गया। वह आधी रातमें ही वहॉ से लौटा और तभी अुसे पता लगा कि पीछा करनेवाली अंग्रेजी सेना बहुत पास पहुँच गयी हैं। तात्या ने अुसी समय वहॉ से कूच करने की आज्ञा अपनी सेना को दी। किन्तु सैनिक अितने थके मॉदे थे, कि पैदल सैनिकों ने साफ बता दिया, 'कल सबेरे तक अेक डग भरने की हममें शक्ति नहीं; रिसाला चाहे तो आगे चला जाय।' अिस दशा में तात्या को लडाअी करने के बिना चाराही न था। तडके, जितनी हो सके, सेना की व्यूह–रचना अुसने कर ली। १४ अगस्त के अिस लडाअी में तात्या की सेना हार कर तितर–बितर हो गयी और अुस की तोपें भी शत्रु के हाथ लगीं! अब फिर तात्या के पास न रहीं तोपें, न युद्धसामग्री और अुधर विजयोन्मत्त शत्रु हाथ धो कर पीछे पडा था। तात्याने फिर झॉसा दे कर चम्बल की ओर दौड लगायी, किन्तु पीछे से और अेक पासे पर अंग्रेजी सेना ताबडतोड हमले कर रही थी और अब तो अेक अंग्रेज कमाण्डर चुनी हुअी सेना के साथ प्रत्यक्ष चम्बल के किनारे सामने टपक पडा। किन्तु, अेक को झॉंसा दे कर, अेक को पीछे हटा कर और अेक की ऑख बचा कर बडी कुशलता से तात्या, मॅजिल पर मॅजिल तय करता हुआ चम्बल पर आया और अंग्रेजों को टापते रख कर चम्बल पार कर गया!

अब तात्या और शत्रु की सेना के बीच चम्बल का बॉंध पडा था। किन्तु तात्या के पास तोपें न थीं, न रसद; न धन। तब नर्मदा का मार्ग छोड अुसे झालरापट्टण को जाना पडा। वहॉ के अंग्रेजनिष्ठ नीच नरेश ने तोपों से सुसज्ज अीमानदार सेना के साथ तात्या पर धावा बोल दिया। किन्तु कैसा चमत्कार! तात्या और सैनिकों की चार आखें होते ही वे तात्याही को 'स्वामी' कहकर वदन करने लगे! झालरापट्टण में अुसे घोडे, गाडियां और भरपूर रसद मिल गयी। तात्या गया था खाली हाथ, अब अुस के पास ३२ तोपें हुअीं। रावसाहब

पेशवाने वहाँ के राजा को २५ लाख का दण्ड किया; किन्तु अुस के बहुत गिडगिडाने पर १५ लाख पर समझौता किया। तात्या वहाँ पाँच दिन रहा। हर घुडसवार को ३० और पैदल सैनिक को २० के मासिक वेतन के हिसाब से सब का वेतन चुका दिया। अब फिर दक्षिण जाने के कार्यक्रम की चर्चा तात्या, रावसाहब और बाँदा के नवाब करने लगे। पेशवा की अिस सेना का प्रमुख अुद्देश नर्मदा पार कर दक्षिण में प्रवेश करना था। अंग्रेजों ने तात्या की योजना को असफल बनाने के लिअे अपनी सेना का मजबूत और कुशलता-पूर्ण व्यूह रचा तथा अुसके बाहर जाने के सभी मार्गों को रोक रखा। किन्तु तात्या के हाथ तोपें जो लगी थीं! हर विपत्ति का सामना करने को वह सिद्ध था। अुसने अपने मित्रों को मंत्र दिया 'अब सीधे अिंदौर'!

यह अनोखी सूझ तात्या के साहसी स्वभाव के योग्य ही थी। अपनी अेक भी सेना पास न होते हुअे तात्या ने नयी सेनाओं, नये राज्यों अेवं नये राजमुकुटों का निर्माण किया था। अिस तरह के अद्भुत बल के नेता को अिंदौर पर चढ जाना तनिक भी असम्भव न था। होलकर का कर्तव्य था, कि अपने स्वामी पेशवा की सहायता करे। सीधे बन कर यदि न दे, तो बलात् अुससे लेनी पडेगी। अिंदौर की सेना गुप्तरूप से तात्या के वश में थी; यहाँ तक कि अिंदौर के दरबारी तात्या को निमंत्रण दे रहे थे! सो, तात्या ने यह दाँव रचा और झालरापट्टण से वह त्वरा से दक्षिण की ओर बढ कर मालवे में घुसा और सीधे रायगढ के पास आ खडा रहा!

तब तात्या का पीछा करने के लिअे सब दिशाओं से रॉबर्ट्स्, होम्स, पार्क, मिचेल, होप, अेव लॉकहार्ट–ये सेनापति दौड पडे! तात्या अिंदौर पर हमला कर रहा है, यह सुन कर अिनका कलेजा काँपने लगा। मअू से अेक चल पडा; दूसरा नालखेड की ओर दौडा; तिसरा अिस पशोपेश में रहा कि वह रायगढ जाय या नहीं! कडे कष्ट के बाद मिचेल ज्यों ही अेक पहाडी पर चढा, अुसने दूसरी ओर तात्या को वहीं से अुतरते देखा; किन्तु तब अंग्रेजी सेना अितनी थकी हुअी थी, कि अेक डग आगे धरना दूभर हो गया था।

सो, वह वहीं रुकी। तात्या ने अिस से पूरा लाभ अुठाया और आगे कूच कर दिया। दूसरे दिन तनतोड चेष्टा कर मिचेल ने तात्या को गाँठा। अब क्रांतिकारी थके हुअे थे; फिर लडाअी को सिद्ध हुअे। अुन की संख्या पाँच हजार थी और साथ ३२ तोपें। किन्तु तमाशा यह रहा कि अेक हजार अंग्रेजी सेना अुनपर टूट पडते ही लहू का लेनदेन होने तक तोपें छोडकर क्रांतिकारी हटने लगे। यहाँ पर तात्या टोपे और कुँवरसिंह के वृकयुद्ध के ढग का भेद प्रकट होता है। अंग्रेजी सेना से खुले मैदान में सामना कभी न करने का नियम तोडा न जाय, अिस लिअे मार्ग में हाथ आये कअी अच्छे सुअवसर तात्या की सेना ने गँवाये थे।

रायगढ का मैदान छोड तात्या की सेना बेतवा नदी के पास जंगल में घुस गयी और दूसरी ओर सिरंग गाँव के पास निकल आयी। वहाँ तात्या को चार तोपें मिलीं; अिसी अर्से में बारिश बहुत जोरों से शुरू हुअी, जिस से अंग्रेजी सेना की हलचल बद हो गयी। तात्या की सेना को भी सुस्ताने का समय मिला। अेक सप्ताह आराम करने के बाद वह अुत्तर की ओर मुडा शिंदे के राज के अिसागढ गाँव ने अुसे रसद देने से अिनकार किया। तब तात्या को बलात् सब कुछ लेना पडा। अिधर आठ तोपें भी अुसे मिल गयीं। यहाँतक ठीक हुआ। किन्तु नर्मदा तो अब दूर रह गयी। अितनी अंग्रेजी सेनाअें जब अकेले तात्या के पीछे पडी हों, तो नर्मदा की बात ही कौन कहे? अेक अंग्रेज लेखक लिखता है:—' फिर पीछेहटों का वह अनोखा ताँता बँध गया, जो दस महीनों तक, पराजय की खिल्ली अुडाता चलता रहा, जिस से तात्या का नाम बहुतेरे आँग्लो अिंडियन सेनापतियों की अपेक्षा युरोप के लोगों को अधिक परिचित हुआ। अुसके सामने जो समस्या थी वह साधारण सी न थी! हारे हुअे अेशियाअियों की सेना को अेक सूत्र में बाँधना था, जिस का तात्यासे व्यक्तिगत कोअी संबध न था, और आपस में भी अुस सेना के सैनिकों का अेक ही बँधन था—समान द्वेष और समान डर, ब्रिटिशों के नाम से द्वेष और अुन की फाँसी का भय। अैसे कबाड को सेना का रूप देकर सदा ही अुसे चलती रखना पडता था आर वह भी अुस

वेग से, जिससे केवल पीछा करनेवाले शत्रु ही हक्काबक्का नहीं रह जाते थे, बल्कि तात्या के कूच की रेखा से समकोण करते हुअे दौडनेवाले भी हैरान हो जाते थे। अपने अर्धसंगठित कबाड को पागल के समान दौडते रखने में तात्या को कअी दर्जन शहरों को जीतना पडा, नयी रसद जुटानी पडी, नयी तोपें हथियाने की बारी आयी, और तो और, जनता से स्वयंसेविकोंको भरती करना पडता था, जिन को केवल प्रतिदिन ६० मीलों के वेगसे भागते रहना ही नसीब था। अितनी सभी बातों को यथाप्राप्त साधनों से सफल बनाने में तात्या की असाधारण क्षमता का परिचय मिलता है। हमारे विद्रोही शत्रु के नाते हम भले ही अुस की हेठी करें, किन्तु था हैदरअली की बराबरी का। और यदि अुस की योजना पर पूरा अमल वह कर सकता और नागपुर से घुसकर मद्रास की ओर निकल जाता, तो हैदरअली के समान वह भयानक शत्रु बन जाता। नेपोलियन को अिंग्लिश चॅनल ने रोका; ठीक अुसी तरह नर्मदाने तात्या को रोका। अेक नर्मदा पार करना छोड, वह सब कुछ कर पाया था। अंग्रेजों की सेनाअें पहले तो अुन की अंग्रेजी आदत के अनुसार कूच करती रहीं और आखिर वेग से बढना जब वे सीख गयी, तो ब्रिगेडियर पार्क तथा कर्नल नेपियर तात्या की आधी रफ्तार तक पहुँच पाये थे। फिर भी वह छटक गया; और गरमी, बरसात, जाडा फिर गरमी से झूझते हुअे भी वह भागा ही जा रहा था—कभी दो हजार 'दिल टूटे' अनुयायियों के साथ तो कभी १५००० की सेना लेकर। *

अब क्रांतिकारियोंने अपनी सेना को दो भागों में बाँटा। अेक का नेतृत्व रावसाहब पेशवाने तथा दूसरे का तात्याने किया। दोनों सेनाअें भिन्न भिन्न दिशाओं में भले ही जाती थीं, किन्तु अुन की युद्ध-पद्धति अेक ही थी, शत्रु को चकमा दे, नयीं तोपें पा तथा गवाँ, कभी शत्रुसे सफल सामना कर के दोनों सेनाअें ललितपुर के पास मिलीं। किन्तु नर्मदा अब भी दूर थी।

* 'फ्रेन्ड ऑफ अिंडिया' से.

और, तात्या और रावसाहब अब शत्रु के चंगुल में पक्के फँस गये थे। दक्षिण से मिचेल, पूरब से कर्नल लिडेल, अुत्तर से कर्नल मीड, पश्चिम से कर्नल पार्क तथा चम्बल की ओर से रॉबर्टस्–अिस तरह शत्रु के पाश तात्या को जकड रहे थे और वह पूरी तरह घिर गया था। तब तात्या और रावसाहबने मंत्रणा की, जिस के अनुसार वे झट कजूरी को आ निकले, किन्तु वहाँ भी अेक अंग्रेजी सेना खडी थी। सो, वे फिर से जंगलों में घुस गये और अुत्तर को तलभाट तक पहुँच गये। अंग्रेजोंने समझा, अब दक्षिण जानेका विचार तात्याने छोड दिया होगा। किन्तु वहीं से तात्या और रावसाहब धडक मार कर, बेतवा लाँघ तथा कजूरी और रायगढ में अंग्रेजों से अेक भिडन्त कर कभी खुले तौरपर, तो कभी छिप कर दक्षिण को रुख कर कूच करते जाते थे। तात्या के अिस साहसी हलचल से अंग्रेज दुविधा में पडे। अुसे रोकने को वे चारों ओर से दौड पडे। किन्तु अजीब हलचल से शत्रु को चकमा दे कर अिस सूरमाने बिजली के वेग से घाटियों तथा नदियों को पार कर, जंगलों में होते हुअे, ठेठ दक्षिण की ओर प्रगति की। पार्क अेक पासेपर, मिचेल पीछे से, और बेचेर सामने से चढ आया, तो भी तात्याने अपनी अनोखी मार्ग-क्रमणा को न रोकते हुअे दक्षिण की ओर प्रगति जारी रखी, निदान वह नर्मदापार आ धमका। अचरज से हक्केबक्के संसारने तात्या की जय पुकार कर आनद से तालियाँ पीटीं! तात्या नर्मदा पार कर और दक्षिण के मार्ग पर चल पडा। मॅलेसन लिखता है:—तात्याने अिस जीवट तथा हठ से पीछेहट की यह अनोखी योजना सफल कर दिखायी, अुस की प्रशसा न करना असम्भव है!" अिस बारे में १७ जनवरी १८५९ के (लंदन) टाअिम्स का विवरण पढतें ही बनता है (देखो सदर्भ ५३)!

निदान, मराठों का राजा अपनी सेना के साथ दक्षिण आ पहुँचा! होशंगाबाद के पास नर्मदा पार कर तात्या नागपुर के नजदीक पहुँच जाने का संवाद पाते ही, न केवल तीन प्रांतों में, न केवल अिंग्लैड में, सारे युरोप

भर में कहा गया, 'धन्य ! तात्या टोपे धन्य, सबने तात्या की प्रशंसा की! अेकाअेक क्रांति का रुझान ही बदल गया। *

अुस के सामने वह निजाम का राज था, जहाँ तात्या के सहानुभूतिक दरबार में थे, जहाँ परली और पुणें, बम्बअी, तथा समूचा महाराष्ट्र फैला पडा था। वह जरिपटका–मराठों का स्वाधीन झण्डा–फिरसे महाराष्ट्र में आ पहुँचा था! महाराष्ट्र के अिसी रायगढसे, अिसी पावन–खिंडसे, अिसी वडगाँवसे कौनसी अत्यद्भूत गुप्त सामर्थ्य फिर जागृत हो अुठेगी अिसका क्या पता था? भागानगर का निजाम, मद्रास का लॉर्ड हॅरिस, बम्बअी का लॉर्ड अेलफिन्स्टन तथा कलकत्तेवाला लॉर्ड कॅनिंग सब ने दाँतों तले अुंगली दबायी! तात्या ने दक्षिण में पहुँच कर अेक अद्भूत चमत्कार कर दिखाया था। किन्तु वह अेक चमत्कार ही था। क्यों कि, अुस से पुरा लाभ अुठाने का समय कबका बीत चुका था। लगभग सभी स्थानों में क्रांति की पूरी हार हुअी थी। और अिस विराट क्रांति में जो भीषण रक्तपात हुआ अुस की स्मृति अबतक जनता के मन मे हरी होने से सारा राष्ट्र दुबला और बावला सा बन गया था। तिस पर भी यदि नागपुर, कम से कम, कुछ जीवट से काम लेता तो भी क्रांति की शकल बदल जाती। अुत्तर में हर देहात से और हर किसान–नागरिक से अपनी ओर से तात्या को युद्ध की सामग्री पहुँचायी गयी थी और अेक महान् देशभक्त के नाते जनता तात्या को आदर से पूजती थी। किन्तु महाराष्ट्र में–तात्या के महाराष्ट्र में–अिस अुदात्त कार्य में हाथ बँटाने का धैर्य किसीने न दिखाया। हाँ, अुस कुप्रसिद्ध रानी बका की 'वफादारी' के बीज से और क्या फबल पैदा हो सकती है? अपने असाधारण यत्नों का अैसा शून्य स्वागत देख कर भी, तनिक भी धीरज न छोडते हुअे, तात्या टोपे वहीं रहा और आगामी योजनाओं को सोचने लगा।

तुरन्त चारों ओर से अंग्रेजी सेना जमा होने लगी, तात्या का पीछा करने वाली सब शत्रु सेनाअें अब नर्मदा पार कर दक्षिण में आ चुकी थीं। तो भी

* सं. ५४। मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड ५, पृ. २३९।२४०.

यह सूरमा अडिग खडा था । यहाँ तक, कि शत्रु को झाँसा दे कर आगे बढ जाने का और भी अत्यद्भुत बनाव अुसने प्रत्यक्ष कर दिखाया । पीछा करने वाली तथा घेरनेवाली सेनाओं की रोक-थाम कर अुनकी डाक लूट, तारायंत्र को तोड तथा चौकियाँ लूट कर तात्या ठेठ नर्मदा के मूलस्थान तक पहुँच गया । क्यों ? क्यों कि, अब बडोदे ने अुस का मन आकर्षित किया था । नर्मदा के सब घाटों को शत्रु ने दोनों ओर से रोक रखा था, तो भी तात्या नर्मदा लाँघने के लिअे करजन गाँव के पास आया । वहाँ पर मेजर संदरलंड से अेक घमासान भिडन्त की, जिस में अुस की तोपें छिनी गयीं, तब वह नर्मदा में कूद पडा और तैर कर निकल गया । अिस समय तात्याने तथा अुसकी सेनाने अजीब यौद्धिक चालों का परिचय दिया । मॅलेसन लिखता है:— " अुनकी तोपें जब छिनी गयी थीं, तब मानो, तात्या के सैनिकों ने असाधारण वेग से मार्ग तय करने का प्रत्यक्ष पाठ ही हमें सिखाया । अिसे देख मैं तो मानता हूँ, मँजिल दर मँजिल दौडते रह कर सफल पलायन करने में संसार की कोअी भी सेना अिस भारतीय सेना का मुकाबला न कर सकेगी ! अिस भगदड में भी तात्या ने बडोदे की दिशा में अपनी मँजिल जारी ही रखी थी । बडोदे में, बडोदे के दरबार में तथा सेना में नानासाहब की नीति को पसंद करनेवाला दल बहुत प्रबल होने से गायकवाड की सेनाअें मचल रही थीं, कि कब तात्या आयगा और वे खुल्लम खुला अुस के अधीन हो जायँगी । तात्या अब रायपुर से छोटा अुदयपुर रियासत में पहुँच चुका था । बडोदा अब केवल ५० मीलों पर ही रहा था ।

अंग्रेजी सेना पीछा कर ही रही थी । छोटा अुदेपुर में 'पार्क' तात्या पर चढ आया, जिस से बडोदा का विचार तात्या को छोडना पडा ! पश्चिम का रुख छोड वह सीधे अुत्तर की ओर चल पडा और अुस ने बाँसवाडे के जंगल का आसरा लिया । किन्तु ठीक अिसी समय अिंग्लैंड की रानी की घोषणा का विश्वास कर, बाँदा के नवाब ने हथियार डाल दिये । तात्या और रावसाहब अब अैसे चंगुल में फँसे थे, जिस से छुटकारा पाना दूभर था । दक्षिण में नर्मदा, पश्चिम में राबर्टस् और अुत्तर तथा पूरब में अूँची खडी

ढलान ! अैसी दशा में तात्या और रावसाहब हथियार डाल देते, तो भी अुन्हें कौन दोष लगाता ? किन्तु, धन्य हैं वे वीर ! अैसी दशा में भी अुन्हों ने झुकने की न सोची ! अेक अंग्रेज ग्रंथकार आश्चर्य से थकित हो कर लिखता है:-' किन्तु ये अैसे दो व्यक्ति थे, जो अुन के जीवन के किसी प्रसंग के समान शांति, धैर्य तथा नयी नयी सूझ से अिस प्राणांतिक संकट का सामना डट कर कर रहे थे। " * दिसंबर ११ को तात्या जंगल से बाहर निकला और अेक किलेदार से कुछ सामग्री जुटा कर सीधे अुदयपुर को चल पडा। किन्तु तुरन्त कअी अंग्रेजी सेनाअें अुस पर टूट पडीं, जिस से अुसे फिर जंगल में जाना पडा। अब अेक सप्ताह से अधिक टिकना तात्या के लिअे असम्भव-सा हो गया था और स्पष्ट था कि अुसे झुकना पडेगा। क्रांतिकारी नेता भी आपस में चर्चा करने लगे, कि अब संघर्ष समाप्त कर दिया जाय। अब वह जंगल न रहा था; "चारों ओर से खदेडे हुअे और बंद किये हुअे मराठा शेर का जंगला था। सब ओर से अंग्रेजी सेना के पाश अुस की गर्दन को कसते जा रहे थे; तब भी अुस मराठा वीर ने लडाअी स्थगित करने का विचार तक न किया। अेक दिन वह रावसाहब के साथ प्रतापगढ की दिशा में बाहर निकला। तात्या की सेना बाहर निकल भी न पायी थी, कि मेजर रॉके की सेना अुस के मार्ग म ही आ टपकी। तात्याने अिधर अुधर की न सोची और सीधे रॉके पर टूट पडा और अैसे जोरसे, कि रॉके के सैनिक हैरान हो गये। अिस प्रकार वह जंगला तोड कर फिर अेक बार वह मराठा शेर कटघरे से बाहर कूदा; अंग्रेजी सेनापति लज्जा से सिर झुकाये हाथ मलते रह गये।

२५ दिसबर १८५८ को तात्या टोपे बॉसवाडे के जगल से बाहर हुआ। अिन्हीं दिनों शूर वीर शाहजादा फीरोजशाह भी अपनी सेना के साथ तात्या की सहायता को आ रहा था। * मिर्जा फिरोजशाह ने गगा

* मॅलेसन कृत अिंडियन म्यूटिनी खण्ड; ५ पृ. २४७

* सं. ५५। लंदन टाअिम्स २० मअी १८५९ का अेक अुद्धरण.

यमुना पार कर कौनसे करिश्मे कर दिखाये और मार्ग तय करते हुअे तात्या को कैसे मिल गया, आदि बातों का विवरण अब स्थलाभाव के कारण नहीं दिया जा सकता। फीरोजशाह तथा शिंदे के दरबारी मानसिंग-अेक क्रांतिकारी सरदार-को जा मिलने के लिअे तात्या टोपे तथा रावसाहब कअी मिहनतों के बाद १३ जनवरी १८५९ को अिंद्रगढ पहुँचे। फिर ये चार क्रांतिनेता आगामी कार्यक्रम पर चर्चा करने लगे। अंग्रेजों की हलचलों की छोटी से छोटी और पक्की खबर तात्या को मिला करती थी, जिस से चारों ओर से फिर अंग्रेज दबाव डालने की चेष्टा करने की खबर पाते ही वह धडल्ले के साथ मार्ग तय कर देवास पहुँचा। अब अंग्रेजों के पंजे से अुसे किसी तरह छटकने का रास्ता न रहा था। यश की आशा तो रच भर भी न रही थी, जिससे नयी साहसी योजना बनाने का अुसे बिलकुल अुत्साह न था। सो, वह अपनी थकी सेना को अंग्रेजों के पंजे से कैसे छुडाता? अंग्रेज सेनापति अपनी मूँछों में बल देते हुअे कह रहे थे 'देखें, अब बच्चा कैसे छटकता है!' फिरोजशाह, मानसिंग, तात्या टोपे अेवं रावसाहब अिन चार क्रांतिनेताओं को पूरी तरह फाँस कर अपने जाल को अंग्रेज खूब कस रहे थे। अब काहे का छुटकारा?

१६ जनवारी १८५९ को तात्या, रावसाहब तथा फीरोजशाह युद्ध समिति की विशेष बैठक में आगामी योजना की चर्चा कर रहे थे, अितने में, बाहर कुहराम मचा हुआ सुनायी पडा तात्याने ताड लिया कि अब अंग्रेजों ने पूरी तरह दबा लिया है, अिस विचार से अुसने सिर अुठाकर झाँका तो पता चला, कि तात्या की छावनी में गोरों ने तहलका मचा दिया है। "तात्या मिल गया, अिस प्रकार की आनंदपूर्ण चिल्लाहट गोरे सैनिकों के मुँहों से हो रही थी। है! सहसा वह आनंद लुप्त क्यों हो गया? 'अरे, कहाँ है? अभी तो यहीं था। दौडो, सैनिको, दौडो देखें।" यही हो हल्ला अब सुनायी पडता था। गोरे सोजीरोंने कोनाकचोना छान मारा किन्तु व्यर्थ-तात्या टोपे गायब था।

यह जादूगर तात्या, फिर, रावसाहब, फीरोजशहा तथा अन्य सहयोगियों के साथ २१ जनवरी को अलवर के पास सिखार में प्रकट हुआ। अंग्रेज फिर पागलों की तरह अुस का पीछा करने लगे। होम्स की सेना के साथ क्रांतिकारियों की अेक भिडन्त हुअी, जिस में अुन्हें हार खानी पडी।

सिखार की हार से क्रांतिकारियों की, विजय के बारे में, निराशा न हुअी—क्यों कि, वह आशा बहुत पहले नष्ट हो चुकी थी। हॉ, अब प्रतिकार करना पूर्णतया असम्भव हो चुका। नर्मदा पार कर बडोदे पर चढाअी करने की तात्या की योजना टूट गयी थी, तब वृकयुद्ध के ढंग में कुछ सुधार करने के प्रस्ताव पर तात्या और रावसाहब सोच रहे थे और कुछ निश्चय कर तात्या टोपे तथा रावसाहब ने अपनी सेना से बिदा ली। अुसने अपने साथ केवल दो घोडे, अेक टट्टुआ, दो ब्राम्हण रसोअिये और अेक टहलुवा रखा। अपने अिस परिवार के साथ वह गवालियर के सरदार मानसिंग के पास गया, जो पारौन के जंगलमें छिपा हुआ था। मानसिंहने कहा, 'तात्या, तुम सेना को छोड आये—अच्छा नहीं किया,। तात्या का अुत्तर था, 'चाहे वह अच्छा है या बुरा, मैं तो अब तुम्हारे साथ ही रहने आया हूं। दम—तोड दौरों से अब मैं तो अुब गया हूं।'*

तात्या मानसिंह के पास रह रहा है यह समाचार अंग्रेजों के पास पहुंचा। रणमैदान में आमने सामने लडकर अुसे पकडने में अंग्रेज असमर्थ रहे। तब अुन्हों ने अपने स्वाभाविक हथकण्डे से काम लेना, छल कपट और विश्वासघात के नीच साधन, जो चलाना आसान होता है, अमल में लाना तय किया। पहले मानसिंह के पास दूत भेजा गया और कहा गया, कि यदि मानसिंह स्वयं आत्मसमर्पण कर तात्या को पकडवा दे तो अुसे क्षमा बख्शी जायगी और नरवाड की रियासत अुसे दे देने का अनुरोध शिंदे से किया जायगा। यह मानसिंह, जिसने पहले अपने चाचा को अंग्रेजों को सौंप देने तक नीचता की थी, लालचमें फँसा और अंग्रेजों के वश में हो गया। अुसने तात्या को बताया,

* तात्या टोपे की डायरी से

कि वह अंग्रेजों को आत्मसमर्पण कर रहा है । तात्याने आत्मसमर्पण से अिनकार कर दिया । अिसी समय फीरोजशाह ने अपनी छावनी में आने के लिये तात्या को पत्र लिखा था । वह पत्र तात्या ने मानसिंह को बताया और पूछा 'मैं चला जाअूँ या रहू ? जैसा तुम कहो मैं करूंगा ।' नीच मानसिंह ने कहा 'अभी कुछ दिन ठहरो, फिर तय करेंगे'। तात्या जान गया था, कि मानसिंह ने अंग्रेजों को आत्मसमर्पण कर दिया है, तो भी तात्याने अुसे अपने बारे में अीमानदार समझा था । मानसिंह ने कहा "मेरे लौटनेतक तुम वहाँ पर रहो, जहाँ मेरा आदमी तुम्हे ले जायगा।" अुस की बतायी जगह में, सुरक्षित जान कर, तीन दिन तक तात्या रहा । तीसरे दिन आधी रात में वह शूर मराठा शेर, जिसने अबतक हजारों लडाअियों में शत्रु को हैरान किया था, हजारों मील रौंद कर तथा प्राणघातक संकटों से बडे कष्ट तथा चातुर्य से अपने को बचाकर शत्रु को आजतक घुमाया था, अन्तमें विश्वासघाती देशबंधु से पकडवाया गया ।

मानसिंह तात्या को छोड सीधे अंग्रेजों के पास पहुँचा। अुन्हों ने बम्बअीवाली पलटन के दस्ते के साथ मानसिंह को तात्या को पकडने के लिअे, भेज दिया । तात्या के लिअे हर भारतीय के हृदय में अितना आदर और प्रेम था, कि अंग्रेज किसी भी भारतीय का विश्वास नहीं करते थे । सो, बम्बअीवाले सनिकों को केवल अितना ही बताया गया था, कि 'मानसिंह की आज्ञा मान कर अुस के बताये अभियुक्त को पकड लाना'। मानसिंह अिन सिपाहियों के साथ पारौन के जगल में पहुँचा । तात्या को अुस ने तीन दिनों का समय दिया था, वह ठीक बेला पर पहुँच गया । मानसिंह के आदमी के बताये स्थान में तात्या सो रहा था । नीच मानसिंह ने साथ आये हुअे बम्बअीवाले सिकरों को छोड दिया और वे अुस शेर पर झपटे । तात्या ने आँखें खोलीं तब अंग्रेजों का बंदी था ।

७ अप्रैल १८५९ की आधी रात में तात्या टोपे विश्वासघातसे पकडा गया, दूसरे दिन सवेरे अुसे सिप्री में जनरल मीड की छावनी में ले जाया

गया। तुरन्त सैनिक न्यायसमिति की बैठक हुअी; ब्रिटिश राजशासन के विरुद्ध बलवा करने के अपराध में अुस की जाँच हुअी। बुधवार को तात्या ने अपना वक्तव्य लिखा :—

"मैंने जो कुछ किया अपने स्वामी की आज्ञा से किया। कालपी तक मैं नानासाहब के मातहत रहा; फिर मैंने रावसाहब की आज्ञा मानी। युद्धनीति को छोड तथा प्रत्यक्ष लडाअी के बिना मैंने या नाना ने किसी भी गोरे पुरुष, स्त्री या बच्चे को निर्दयतासे नहीं मारा, न फाँसी दिया। बस; मुझे न्यायसमिति के काम में कुछ भाग नहीं लेना है।"

अंग्रेजों के प्रार्थना करने पर तात्या ने क्रांति के प्रारंभसे तब तक की दैनंदिन घटनाओंका महत्त्वपूर्ण तथा विश्वस्त विवरण थोडे में बताया। मुनशी ने यह सब लिख लिया और तात्या को पढ सुनाया और फिर अुस वक्तव्य तथा दैनंदिन कार्यक्रम के नीचे तात्या ने बढिया रोमन अक्षरों में 'Tatia Tope' लिख दिया; किन्तु अुस से पूछे गये प्रश्नों के अुत्तर, अपने वक्तव्य तथा विवरण के अनुसार हिंदी में दिये; जो साफ, थोडे में और तेजस्वी थे। अुससे अंग्रेजो में से कोअी प्रश्न पूछे तो वह शान्ति से हिंदी में अुत्तर देता 'मालूम नहीं।' मामूली अंग्रेज अफसर जब अुसके पास से अैंठकर निकलता तो अुसके चेहरेपर तुच्छता और घृणा के भाव दिखायी पडते। तीन दिन यह जाँच हो रही थी। भारतीयों के झुण्ड के झुण्ड अुसके दर्शन को जमा होते, किन्तु अुन्हें लौटा दिया जाता। जिन को तात्या के दर्शन की अनुज्ञा मिलती वे अुसे देखते ही आदर और प्रेम से झुक कर प्रणाम करते। तात्या को अंग्रेजों ने पहले जब बताया, कि न्यायसमिति अुसका न्याय करेगी और वह अपने बचाव के लिअे आवश्यक सबूत भी जमा कर रखे। तब अुसने कहा, "मै, जब कि अंग्रेजो के विरुद्ध लडा हूं, मुझे पूरीतरह मालूम है कि मुझे मरने के लिअे सिद्ध रहना चाहिये। न मुझे तुम्हारी न्यायसमिति, न तुम्हारी जाँच की आवश्यकता है"। और भारी हथकडियों से कसे हुअे हाथों को अूंचा कर कहा, 'अिन भारी शृंखलाओं से, अेक मात्र अुपाय है, तोपसे अुडा दिया जाना या फाँसीपर लटकना। हाँ, मै तुम्हें अेक बात कहना चाहता हूं। ग्वालियर में

मेरा परिवार है; उसका मेरे कामों से तनिक भी सम्बंध नहीं है; सो, मेरे लिये मेरे वृद्ध पिता को, कृपया, रंच भी कष्ट न दो।'

१८ अप्रेल को जाँच का नाटक समाप्त हुआ, तात्या को फाँसी की सजा सुनायी गयी और दोपहर ४ बजे उसे ३ री बंगाली गोरी पलटन के सैनिकों के पहरे में वधस्थल को ले जाया गया। फाँसी के तख्ते के पास आने पर सैनिकोंने चौकोर व्यूह बनाकर उसे घेर लिया। हिंदी पैदल सैनिकों, रिसालेवाले सैनिकों तथा अन्य तमासबीनों की बडी भारी भीड जमा थी। फिर एक बार, तात्याने अपने पिता को न सताने के लिये अंग्रजो को जताया। तात्या को उसपर लगाया अभियोग तथा उसका दण्ड पढ सुनाया गया, फिर लुहार ने उसके पाँव की बेडियाँ तोड दीं; तब तनिक भी झिझक के बिना वह वधमञ्च की ओर धीर और धीमी चालसे गया; सीढीपर से दनादन चढा। नियम के अनुसार जल्लाद जब उस के हाथ पाँव बाँधने आये, तो मुस्कराकर तात्याने कहा, 'इस क्रम की जरा भी आवश्यकता नहीं, यह कहकर स्वयं अपने हाथों अपनी गर्दन में फाँसी का फदा डाल लिया! फंदा कसा गया, तख्ता गिरा और झटके के साथ ..!!!

पेशवा का राजनिष्ठ आज्ञाकारी, १८५७ का एक महान् वीर योद्धा, स्वदेश का हुतात्मा, स्वधर्म का रक्षक, आत्माभिमानी, भावुक, तथा उदार तात्या टोपे अंग्रेजों के बनाये फाँसी की टिकटिकी से निष्प्राण लटक रहा था। वधमंच खून से लथपथ हुआ, और स्वदेश आँसुओं से भींग गया। तात्या का दोष ?—यही, कि स्वदेश की स्वाधीनता के लिये उस ने अकथनीय यंत्रणाओं को सहा! उसे पारितोषिक मिला विश्वासघाती की दोहरी नीचता! और अंग्रेजों ने उसे किसी खूनी डाकू की तरह फाँसी लटकाया!! तात्या टोपे! तात्या!! इस अभागे राष्ट्र में तुम पैदा ही क्यों हुये? इन विश्वासघाती, नीच और अक्ल के दुश्मनों के लिये तुम लडे ही क्यों? तात्या; क्या, हम देशभक्तों की आँखों से बरसनेवाले आँसुओं को तुम नहीं देख पाते हो? हाँ, तुम्हारे रक्त का प्रतिदान हम दुर्बलों के आँसू! कैसा बेढगा सौदा!

तात्या का निष्प्राण शरीर छिन्नभिन्न दशा में लटकता देख कर अपनी बहादुरी पर गर्व करते हुअे, संतोषित अंग्रेज वीर लौट पडे। तात्या की देह अुसी दशा में सूर्यास्तपर्यंत लटक रही थी। अुस के पहरेदार जब चले गये, तब भीड को चीरते हुअे गोरे दर्शक आगे बढे और स्मृति के रूप में तात्या के बालों के गुच्छों को प्राप्त करने में चढाअूपरी करने लगे।

१८५७ के स्वातंत्र्य-समर की धधकती भव्य-भीषण यज्ञवेदी में यह अन्तिम पूर्णाहुति पडी!

अिस तरह वह भीषण ज्वालामुखी, जिस ने अपना जबडा पूरा खोल कर क्रोधावेग से माँस, रक्त, लाशों, बिजली, गडगडाहटों, जलते हुअे लाल लाल उष्ण लावा रस को अुगला था, अब अपना मुँह बंद करने लगा था। अुसका अुष्ण लावा रस अब लोप रहा था; अुस की तलवारों की जीभें फिरसे म्यानों में समेट रही थीं; कडकती बिजलियाँ, कान फाडनेवाली गडगडाहटें, अुस के वात्याचक्र, अुस के तूफान वेग, अुस की भीषणता—सब मदारी के पिटारे में गुप्त हुअे और वायुरूप बन कर वायुमण्डल में मिल गये। और ज्वालामुखी का मुँह बंद हो गया; अुस की सतह पर फिरसे हरियाली अुगने लगी, खेती फिर से शुरू हुअी; हलाअी पड गयी; शान्ति, सुरक्षा और सुकोमलता का बोलबाला हुआ। और अिस ज्वालामुखी का पृष्ठभाग अितना मुलायम और आनंदप्रद है, कि किसी को विश्वास नहीं होता, कि अिस के नीचे अेक भीषण ज्वालामुखी सुस्ता रहा है!
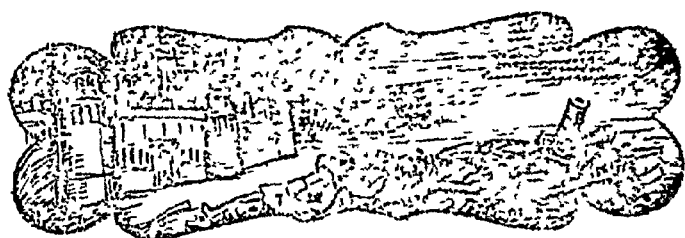
अध्याय ३ रा

समारोप

ज्वालामुखी कुछ समय क लिअे तो शान्त हो गया है। पाठक पूछेंगे, फीरोजशाह और रावसाहब का क्या हुआ ?

तात्या के बिदा लेने के बाद रावसाहब अेक महीने तक पूरे जीवट से लडते रहे और जब कोअी चारा न रहा था, तब भेष बदल कर जंगल में चले गये; किन्तु तीन वर्षों के बाद अुन्हें पकड लिया गया और २० अगस्त १८६२ को कानपुर में फाँसी दिया गया। फिरोजशाह भी अुसी तरह भेष बदल कर घूम रहा था किन्तु सौभाग्यसे भारत से बाहर चले जाने में सफल हो कर अीरान में करबला में जा बसा।

१८५७ की क्रांति के बारे में स्थान स्थान पर चर्चा कर चुके हैं। क्या, सिद्धता पूरी होने के पहले ही क्रांति का असमय विस्फोट हुआ था ? नहीं, हम अैसा नहीं मानत। ५७ के अुत्थान में जो योजनाअें और तैयारियाँ की गयी थीं, वैसी तो बडी बडी यशस्वी क्रांतियों में भी नहीं पायी जातीं। जब सैनिकों की पलटन पर पलटन, बडे बडे प्रबल राजा महाराजा, सरकारी नौकरी क अूँची श्रेणी के अधिकारी, पुलीस, और नगर अेक अेक कर के बलवा करने का अभिवचन दे कर आगे आते, तब तुरन्त विद्रोह करने के लिअे कौन हिचकिचायगा ? और सदा से यह अनुभव है, कि किसी कार्य के प्रारंभ ही

में अडचनें पैदा होती हैं; समूचा देश बाद में ही अुठता है। अिस से स्पष्ट होगा, क्रांतिनेताओं ने तनिक भी अुतावली न की थी। अितनी सुविधाअें होने पर भी जो न अुठेंगे, वे कभी विप्लव करने के योग्य होते ही नहीं!

तो फिर यह क्रांति असफल क्यों हुअी? अिस विषय में छोटे मोटे कारणों का विवेचन पहले योग्य स्थानों पर किया ही गया है; किन्तु अेक महत्त्वपूर्ण कारण यह था:—यद्यपि क्रांति की सिद्धता पर्याप्त तथा पूरी तरह की गयी थी; पहला विध्वंसक कार्यक्रम भी बहुत अच्छी तरह निभाया गया; किन्तु अुस के रचनात्मक कार्यक्रम का क्या? अंग्रेजी शासन नष्ट करने के विरुद्ध कोअी भी न था; किन्तु फिर वे ही पहले का आपसी घातक झगडे, वे ही मुगल, वे ही मराठे। वही पहले का ढला हुआ अंदाधुंद और वैर का वायुमण्डल,—यही सब फिर भारत में आने का डर हो, तो अुस के लिअे सर्वसाधारण अज्ञ जनता को अपना रक्त बहाने की अुतनी आवश्यकता प्रतीत न होना स्वाभाविक ही था। क्यों कि, अुसी तानाशाही और अन्यायपूर्ण शासन से अूब कर, पागलपन के दौरे में, अुस जनता ने विदेशियों को अपने सिरपर बिठा लिया था। क्रांति का प्रथम भाग—विध्वसन—बडी सफलता से पूरा किया गया। किन्तु तुरन्त जब विधायक, रचनात्मक भाग का प्रारंभ हुआ तो मतभेद, आपसी डर तथा अविश्वास की धूम मची। जनता के अंत:करण को आकर्षित करनेवाला कोअी नया ध्येय—नया आदर्श अत्यंत स्पष्टरूप से लोगों के सामने रखा जाता, तो क्रांति की प्रगति तथा अन्त भी प्रारंभ के समान ही यशस्वी और प्रभावपूर्ण परिणामकारी हो जाता।

कम से कम लोगों को अितना भी पूरी तरह जँचाया जाता, कि प्रलय के बाद तुरन्त फिर से नया सृजन, नया निर्माण होता ही है, तो भी क्रांति यशस्वी होती। किन्तु, निर्माण की बात तो दूर, संहार का, प्रलय का कार्य भी भारत पूरीतरह सफल न कर सका। और अुसका कारण? कारण यही, कि राष्ट्र का गला, अपने निजी स्वार्थ के लिअे, घोंटने की नीच वृत्ति ही भारत से पूर्णरूपेण नष्ट नहीं हुअी थी। क्रांति की असफलता के प्रमुख दो कारण

हैं—(१) पहले के किसी प्रकार के अनघड स्वराज्य से भी बढ़कर अंग्रेजों का शान्तिपूर्ण शासन अधिक हानिकर है—यह बात न समझनेवाले मूर्खों का किया स्वदेशद्रोह और, (२) स्वदेशबंधुओं के विरुद्ध विदेशी शत्रु को रंच भी सहायता न देने की प्रेरणा करनेवाली सचाओी तथा देशभक्ति की तीव्रता की कमी।*

और अिसी से असफलता का सब पातक केवल अुन देशद्रोहियों के ही सिर आ पडता है। अधिक स्पष्ट, अधिक सरल, अधिक आकर्षक आदर्श यदि अुस समय जनता के सामने होता, तो ये देशद्रोही भी देशभक्त बन जाते। क्यों कि, देशभक्ति ही जब लाभकारी और स्वार्थ को पूरा कर देनेवाली हो, तब जानबूझकर देशद्रोही का कलंकित तथा धोखे का धंधा, कौन करने जायगा? सच्चा अुज्वल जश अुन वीरों को है, जो अिस बात को, कि स्वराज्य से विदेशी सत्ता बहुत बुरी होती है, अपने हृदयपर अंकित कर स्वाधीनता के लिअे युद्ध करने को खडे हो जाते हैं—फिर चाहे वह स्वराज्य गणतंत्र, अेकतंत्र, राजतंत्र या अराजक ही क्यों न हो? अपने देश को संपत्तिशाली बनाना यही अुद्देश स्वतंत्रता को बनाये रखनेका नहीं होता है, किन्तु अिसलिअे स्वतंत्रता ही में आत्मशान्ति होती है, लाभ या हानि की अपेक्षा आत्मसम्मान अधिक महत्त्वपूर्ण होता है; पराधीनता के सुनहरे पिंजडे की अपेक्षा स्वाधीनता का जंगल सहस्र गुना अच्छा है। जिन्होंने अिन सिद्धान्तों को जान लिया, अपने धर्म और देश के प्रति अपना कर्तव्य पूरीतरह निबाहा, स्वधर्म और स्वराज्य के लिअे तलवारें सँवारी और, केवल यश की आशा से नहीं, कर्तव्यपूर्ति के लिअे मौत को गले लगाया अुन के नाम सदाही अेक गौरवपूर्ण स्मृति बनकर रहेंगे; वे नाम गर्व के साथ लिये जायेंगे! हमारा देश अुन जीवों के नाम कदापि स्मरण न करें, जिन्होंने लापरवाही या झिझकसे स्वाधीनता के युद्ध में हाथ न बँटाया। और जो शत्रु के पक्ष में चले गये तथा अपने ही देशबंधुओं के विरुद्ध लड अुनके नाम सदा अभिशप्त रहे—अुन की घोर निंदा हो! १८५७

* स. ५६—रसेल कृत माय डायरी अिन अिंडिया.

की क्रांति यह नापने का अेक नाप था, कि भारत अेकता, स्वाधीनता और जनप्रिय शासन की ओर कितना झुका है–कितना अभिभूत हो चुका है। ×

१८५७ की क्रान्ति की असफलता का दोष अुन के सिर है जो आलसी, डरपोक, स्वार्थी और विश्वासघाती थे; जिन्होंने सत्यानाश किया। किन्तु जिन्होंने अपनाही अुष्ण रक्त टपकानेवाली तलवार को अुठाकर, अुस महान पूर्वप्रयोग के लिअे अग्निमय रंगमंचपर प्रवेश किया; जो प्रत्यक्ष मृत्यु की छाती पर आनंदपूर्वक नाचते रहे, अुन वीरों को दोष लगाने का साहस कोअी जीभ न करे! वे कोअी पागल नहीं थे; अुतावले न थे; हार में हाथ बँटानेवाले न थे; अविचारी भी न थे और अिसी से अुन्हें कोअी दोष नहीं लग सकता। अुन्हीं की प्रेरणा से भारतमाता अपनी गहरी नींद से जाग अुठी और पराधीनता की धज्जियाँ अुडाने के लिअे दौड पडी। किन्तु जब अुस के अेक हाथने अत्याचार के सिर पर अेक जबरदस्त वार दे मारा, हाय, हाय, अुस के दूसरे हाथ ने माता की छाती में छुरा घोप दिया। और घायल माता फिर अेक बार लडखडाती भूमिपर गिर पडी! अब अिन दो हाथों में कौनसा हाथ दुष्ट, नीच, विश्वासघाती और घृणायोग्य तथा दूषणयोग्य था ?

× सं. ५७। भारतीय विद्रोह से अितिहासकारों को कअी पाठ मिल सकते हैं; अुन में अिस से बढकर कोअी महत्त्वपूर्ण पाठ नहीं है, कि भारत में ब्राह्मण तथा शूद्र, हिंदु और मुसलमान हमारे (अंग्रेजों के) विरुद्ध अेक हो कर क्रांति कर सकते हैं और हमारे अधिराज्य के बारे में यह मानना धोखे से खाली नहीं, कि भिन्न भिन्न धार्मिक रीतिरिवाजों का पालन करनेवाली जातियों से देश भरा है, तबतक अधिराज्य शान्तिपूर्वक बना रहेगा; क्यों कि, ये लोग अेक दूसरे के रहन–सहन, रीत–रिवाजों और कार्यों को समझते हैं और अुनका आदर भी करते हैं; अुसमें हाथ भी बँटाते हैं। ५७ के विद्रोह ने हमें याद दिलाया है, कि हमारा अधिराज्य अेक पतली परत पर खडा है, और समाज–सुधार तथा धार्मिक क्रान्तियों के भयंकर विस्फोटों से किसी भी समय यह परत फट सकती है।–फॉरेस्ट के ग्रंथ की भूमिका से।

सम्राट बहादुरशाह ऊँची श्रेणी का कवि था। क्रान्ति के कोलाहल में किसीने अेक शेर कहा था?

दम-दमे में दम नहीं, अब खैर माँगो जान की।
अै सफर! ठंढी हुअी शमशीर हिंदुस्थानकी॥

[सम्राट, आप हर दम में दुबले होते जा रहे है। अब आप के प्राणों की रक्षा के लिअे प्रार्थना करो (अंग्रेजों से), क्यों कि सम्राट अब हिंदुस्थान की तलवार के सदा के लिअे टुकडे हो चुके हैं]

कहा जाता है, कि सम्राट ने यों जवाब दिया:-

गाजियों में बू रहेगी जब तलक ईमानकी।
तब तो लंदन तक चलेगी तेग हिंदुस्थानकी॥

[समाप्त]

संदर्भ

['१८५७ का भारतीय स्वातंत्र्य-समर' ग्रंथ में स्थान स्थान पर अुद्धृत अंग्रेजी अुद्धरणों का अनुवाद अुसी जगह दिया है; किन्तु जो सज्जन मूल अुद्धरण पढना चाहें, अुन की सुविधा के लिअे नीचे दिये जाते हैं। ग्रंथ में संदर्भ के क्रमांक दिये हुअे हैं, जैसे 'सं. १.' अुस का मूल अुद्धरण नीचे पढिये।]

सं. १ पृ. २०

"The Valiant English Government on its par agrees to give the country or territory specified, to the Government or State of His Highness The Maharaja Chatrapati (The Raja of Satara): His Highness the Maharaja Chhatrapati and his Highness's sons and heirs and successors are perpetually, that is from generation to generation, to reign in sovereignty over the said territory."

सं. २ पृ. २२

Treaty of perpteutal friendship between the Honourable East India Company and His Highness the Maharaja Raghoji Bhonsle, his heirs and successors.

सं. ३ पृ. ३७

"A quiet and unostentatious young man not at all addicted to any extravagant habits."—Sir John Kaye.

सं. ४ पृ. ३८

"Nothing could exceed the cordiality which he constantly displayed in his intercourse with our coun-

trymen. The persons in authority placed an implicit confidence in his friendliness & good faith, and the ensigns emphatically pronounced him a capitol fellow."
—Trevelyan's Cawnpore.

सं. ५ पृ. ५०

"The chances against him were many & great, for he had diverse ordeals to pass through and he seldom survived them all. When the claims of a great Talukdar could not be altogether ignored, it was declared that he was a rogue or a fool.. They gave him a bad name & they straightway went to ruin them. It was at once a cruel wrong and a grave error to sweep it away as though it were an encumbrance and an usurpation."

सं. ६ पृ. ५५

"It is my firm belief, that if our plan of education is followed up, there would not be a single idolator in Bengal thirty years hence."—Macaulay's Letter to his Mother, October 12, 1836.

सं. ७ पृ. ६३–६४

Kay says "There is no question that beef fat was used in the composition of this tallow." (Vol. 1 Page 381)

Lord Roberts says "The recent researches of Mr. Forrest in the records of the Government of India prove that the lubricating mixture used in preparing the cartridges was actually composed of objectionable ingredients, cow's fat and lard and that incredible disregard of the soldier's religious prejudices was displayed in the manufacture of these cartridges."—Forty years in India Page 431.

सं. ८ पृ. ७२

"There were numerous letters from his English Fiancees and two from a Frenchman...It seems proba-

ble that 'les principales' chooses to which Lafont hopes to bring satisfactory answers, were invitations to the disaffected and disloyal in Calcutta, & perhaps, the French settlers in Chandernagore to assist in the effort to be made to throw off the British yoke. A portion of the correspondence was unopened and there were several letters in Azimullah's own handwriting. Two of these were to Omar Pasha of Constantinople that told of the Sepoy's discontent and the troubled state of India generally."—Forty years in India Page 429

सं. ९ पृ. ७२

"Nana's object, then, was to lay the foundation of his future sovereignty at Cawnpore. The mighty power excercised by the Peshwas was to be restored: and to himself, the architect of his own fortunes, would belong the glory of replacing that vanished sceptre. There can be no doubt that such thought induced him."
—Trevelyan Page 133.

सं. १० पृ. ७६

"No society of rich and civilised Christians who ever undertook to preach the gospel of peace and good-will can have employed a more perfect system of organisation than was adopted by these rascals whose mission it was to preach the gospel of sedition and slaughter."—'Cawnpore' Page 39

सं. ११ पृ. ७७

"For months, or years indeed, they had been spreading their net work of intrigues all over the country. From one Native Court to another, from one extremity to another of the great Continent of India, the agent of Nanasahib had passed with overtures and invitations secretly-perhaps mysteriously-worded to princes and chiefs of different races and religions, but most hopefully of all to Marhattas...There is nothing in my mind more substantiated than the complicity of

Nanasahib, in widespread intrigues before the outbreak of Mutiny. The concurrent testimony of witnesses examined in part of the country widely distinct from each other takes this story altogether out of the claims of the conjectural."—Kaye's Indian Mutiny Vol. 1 P. 24-25.

सं. १२ पृ. ७८

"Jawan Bakht commenced abusing, declaring that the sight of the Kaffir Feringhi disturbed his serenity, spat in his face and desired him to leave."—Military Narrative Page 374.

सं. १३ पृ. ८०

"The second grenadier said that the whole regiment is ready to join the Nabob of Oudh." Subhadar Madarkhan, Sirdarkhan and Ram Shahilal said that "In treachery no one could come up to the level of the "beti-chod" Feringis. Though the Nabob of Oudh gave up his Kingdom, he could not even get a pension." Many other letters, like this, the English came across afterwards-Kaye's Indian Mutiny Vol. 1 Page 429.

सं. १४ पृ. ८५

"A mandate had, of late, gone forth from the palace of Delhi enjoining the Mohomedans, at all their solemn gatherings, to recite a song of lamentation indited by the regal musician himself which described in touching strains the humiliation of the race and the degradation of their ancient faith, once triumphant from the the northern snows to southern straits, but now trodden under the foot of the infidel and the alien." —Trevelyan's Cawnpore.

सं. १५ पृ. ८६

"Of this conspiracy the Moulvie was undoutedly a leader, it had its ramifications all over India, certainly

at Agra where the Moulvie stayed sometimes and almost certainly at Delhi, at Meerut; at Patna and at Calcutta where the ex-king of Oudh and a large following was residing."—Vol. V. page 292.

सं. १६ पृ. ८१

"These incediary fires were soon followed by nocturnal meetings. Men met each other with muffled faces and discussed in exciting language the intolerable outrages the British Government had committed upon them."—Kaye's Indian Mutiny Vol. 1 page 365.

सं. १७ पृ. ९२

"On the Parade-ground about 1300 men were assembled. They had their heads covered so that only a small part of the faces was exposed. They said they were determined to die for their religion."—Narrative of Indian Mutiny Page 5.

सं. १८ पृ. ९४

"A man appeared with a lotus flower and handed it to the chief of the regiment. He handed it on to another. Every man took it and passed it on and when it came to the last, he suddenly disappeared to the next station. There was not, it appears, a detachment, not a station in Bengal, through which the Lotus flower was not circulated. The circulation of this simple symbol of conspiracy was just after the annexation of Oudh."—Narrative of Mutiny Page 4.

सं. १९ पृ. ९८

"Afterwards the worthy couple (Nana and Azimulla) on the pretence of piligrimage to the hills visited the military stations all along the main trunk road and went so far as Umballa. It has been suggested that their object in going to Simla was to tamper with the Gurkha regiments stationed on the hills. But

finding at their arrival at Umballa, a portion of the regiments was in the Cantonment, they were unable to effect their purposes with these men and desisted from their proposed journey, on the plea of the cold weather —Russell's Diary.

सं. २० पृ. १०४

"In this lesser sense, then, and in this only, did the cartridges produce the mutiny. They were instruments used by the conspirators and those conspirators were successful in their use of the instruments only because, in the manner I have endeavoured to point out the mind of the Sepoys and of certain sections of the population had been prepared to believe every act testifying bad faith of their masters."

Medley says :—"But in fact, the greased cartridge was merely the match that exploded the mind which had, owing to the variety of causes, been for a long time preparing."

"Mr. Disraeli dismissed the greasing of the cartridges with the remark that nobody believed that to have been the real cause of the outbreak."—Charles Ball's Indian Mutiny Vol. 1 Page 629.

Another author goes one step further and says," "that the fear about the cartridges was a mere pretext with many, is shown beyond all question. They have not hesitated to use freely when fighting against us the very cartridges which they declared would if used, have destroyed their caste."

सं. २१ पृ. ११४

"The name has become a recognised distinction for rebellious Sepoys throughout India"—Charles Ball.

"This name was the origin of the Sepoys generally being called 'Pandeys'.—Lord Roberts Fortyone years in India.

सं. २२ पृ. ११५

"It is certain, however that if this sudden rising in all parts of India had found the English unprepared, but few of our people had escaped this swift destruction. It would then have been the hard task of the British to reconquer India or else to suffer our Eastern Empire to pass into an ignominious tradition." Malleson Vol. V.

"The calamitious revolt at Meerut was, however. of signal service to us in one respect, in as much as it was a premature outbreak which disarranged the pre-concerted plan of simultaneous mutiny of Sepoys all over the country settled to take place on Sunday the 31st May 1857"—White's History page 17.

सं. २३ पृ १२२

"From this combined and simultaneous massacre on the 31st of May 1857, we were, humanly speaking, saved by the frail ones of the Bazaar. The mine had been prepared and the train had been laid. and it was not intended to light the slow match for another three weeks. The spark which fell from the female lips ignited it at once and the night of the 10th May saw the commencement of the tragedy never before witnessed since India passed under British sway."—J. C. Wilson's official Narrative.

"However much of cruelty and bloodshed there was, the tales, which gained currency, of dishonour to ladies, were, so far as my observation and enquiries went, devoid of any satisfactory proof"—Hon. Sir Wm. Muir K. C. S. I., Head of the Intelligence Department.

सं. २४ पृ. १२२

"Officers as they went to sit on the court-martial swore that they would hang their prisoners, guilty or innocent, and, if he dared to lift up his voice against such indiscriminate vengeance, he was instantly silenced by the clamours of his angry comrades. Pri-

-soners condemned to death after a hasty trial were mocked at and tortured by ignorant privates before their execution, while educated officers looked on and approved "—Holme's History of the Sepoy War Page 124.

सं. २५ पृ. १४०

"Had the Punjab gone, we must have been ruined. Long before reinforcements could have reached the upper provinces the bones of all Englishmen would have been bleaching in the Sun. England could never have recovered the calamity and retrieved her power in the East. "—Life of Lord Lawrence Vol. II, Page 335.

सं. २६ पृ. १४२

Sir John Lawrence writes in one of his letters :— "Had the Sikhs joined against us, nothing humanly speaking, could have saved us. No man could have hoped, much less foreseen, that these people would have withstood the temptation to avenge their loss of National Independence."—October 21st, 1857.

सं. २७ पृ. १८०

"At every successive stage of the Military revolt, the fact of a deep seated and widespread feeling of hatred and an unappeasable revengefulness for an assumed wrong is more plaintly developed. The desire for plunder was only a secondary influence in producing the calamities to which the European residents of various places were exposed. "—Charles Ball's Indian Mutiny, Vol. 1 page 245.

सं. २८ पृ. १८०

"No sooner had been known in the districts that there had been an insurrection at Benares, than the whole country rose like one mass. Communications were cut off with the neighbouring stations and it appeared as if the Ryots and the Zemindars were about

to attempt the execution of the project which the Sepoys failed to accomplish in Benares."—Red Pamphlet Page 91.

सं. २९ पृ. १८२

"Volunteer hanging parties went out into the districts and amateur executioners were not wanting to the occassion. One gentleman boasted of t. e numbers he had finished off quite "in an artistic manner," with mango trees for gibbets and elephants as drops. The victims of this wild justice being strung up, as though for pastime, in the form of a figure of eight."—Kaye and Malleson's History of the Indian Mutiny Vol. II Page 177.

सं. ३० पृ. १८८

"And with them went on not only the Sepoys who, a day before had licked our hands but the super-annuated pensioners of the Company's native army who though feeble for action, were earnest in their efforts to stimulate others to deeds of cowardice and cruelty." —Kaye's Indian Mutiny, Vol. III page 193. See also Red Pamphlet.

सं. ३१ पृ. २००

"Indeed one of the most remarkable features of the Mutiny has been the certainty and rapidity with which the natives were made aware of all important movements in distant places. The means of communication is chiefly by runners who forwarded messages from station to station with extraordinary celerity." —Narrative page 23.

सं. ३२ पृ. २०७

Trevelyan says :" The Sepoys,familiar as they were with the brutality of low Europeans and the vagaries of Military justice, would at a less critical season have expressed small surprise either at the outrage or the

decision. But now their blood was up and their pride awake and they were not inclined to overrate the privilages of an Anglo-Saxon or the Sagacity of the Military Tribunal."—Cawnpore page 93.

सं. २३ पृ. २२८

"Before the Mutiny broke out, the Moulvie travelled through India on a roving commission, to excite the minds or his compatriots to the steps then contemplated, by the master spirits of the plot. Certain it is that in 1857, he circulated seditious papers throughout Oudh, that the police did not arrest him, and to obtain that end, armed force was required. He was then tried and condemned to death But before the sentence could be executed Oudh broke into revolt and like many a political criminal in Europe, he stepped at once from the floor of a dungeon to the footsteps of a throne."—Malleson Vol. IV, page 379.

Says Gubbins:—"The Moulvie of Fyzabad was released from jail by the mutineers. He was of a respectable Mohamedan family and had traversed much of upper India, exciting the people to sedition He had been expelled from Agra for preaching sedition." etc; etc.

सं. २४ पृ. २४७

"The well-known writer of the Red Pamphlet says:—"All Oudh had been in arms against us. Not only regular troops but sixty thousand men of the army of the ex-king, the Zemindars, and their retainers and two hundred & fifty forts-most of them heavily armed with guns have been working against us. They have balanced the rule of the Company with sovereignty of their kings & have pronounced almost unanimously, in favour of the latter. The very pensioners who have served in the Army have declared definitely against us & joined in the insurrection."

सं. २५ पृ. २५१

"It was a most favourable moment for recovering his lost authority. It was merely necessary to accede to the proposal of the mutinious contigents & to revenge himself on the British. Had he so acceded and put himself at the head and accompanied likewise by his trusty Marhattas, and proceeded to the scene of action, the consequences would have been most disastrous to ourselves. He would have brought at least twenty thousand troops-and half of them drilled and disciplined by European officers—on our weak points. Agra and Lucknow would have been at once fallen. Havelock would have been shut up, in Allahabad, and either that fortress would have been beseiged or the rebels giving it a wide berth, would have marched through Benares on to Calcutta. There were no troops, no fortification to stop them."—Red Pamphlet Page 941.

सं. २६ पृ २५४

"Wherever the Chiefs of the Native States hesitated to join the revolution, the people of the States became uncontrollable and tried to throw off the yoke even of their own chief, if he would not join the nation's war. Seeing this extraordinary upheaval of the populace Malleson says :—Here too, as at Gwalior, as at Indore, it was plainly shown that, when the fanaticism of the oriental people is thoroughly roused. not even their king, their Raja-their father as all consider him. their God as some delight to style him—not even their Raja can bend them against their convictions. "The Sepoys of the Raja of Jaypur and Jodhpur refused point blank to raise their hands against their countrymen who were fighting for the nation, even when asked by their Rajas to do so."—Malleson's Indian Mutiny, Vol. III Page 172.

सं. २७ पृ. २६२

Sir W. Russell, the famous correspondent of the London Times remarks :—We who suffered from it

think that there never was such wickedness in the world; and the incessant efforts of a gang forgers and utterly base scoundrels have surrounded with horrors that have been vainly invented in the hope of adding to the indignation and burning desire for vengeance which hatred failed to arouse. Helpless garrisons surrendering without condition have been massacred ere now. The history of Medeaval Europe affords many instances of crimes as great as those of Cawnpore. The history of the more civilised periods could afford some parallel to them in more modern times and amid most civilised nations. In fact, the peculiar aggravation of the Cawnpore massacre was this—that the deed was done by the subject race, by black men who dared to shed the blood of their masters and that of poor helpless ladies and children. Here we had not only a Servile War and a sort of Jacquerie combined, but we had a war of religion, a war of race and a war of revenge, of hope, of national determination to shake off the yoke of a stranger and to reestablish the full power of native chiefs and the full sway of native religions."—Russell's Diary, Page 164.

सं. २८ पृ. २६८

"Revolt had, in consequence swept before it, in many cases all regard to personal interest and all attachment to the former master. The imputations of remaining faithful to Government in such circumstances have been intolerable. It is well-known that the few Sepoys who have remained in our services are deemed out-castes, not only by their comrades but their caste people in general. These even say they can not venture to go to their home: for, not only would they be reproached and denied brotherly office, but their very lives would be in danger."—Rev. Kennedy.

सं. २९ पृ. २८९

"It is related that, in the absence of tangible enemies, some of our soldiery, who turned out on this

occasion, butchered a number of unoffending camp followers, servants and others who were huddling together, in vague alarm near the Christian Churchyard. No loyalty, no fidelity, no patient good service on the part of these good people could extinguish for a moment, the fierce hatred which possessed our white soldiers against all who wore the dusky livery of the East."—Kaye and Malleson's Indian Mutiny, Vol II, Page 438.

सं. ४० पृ. २९४

"After the defeat of Nanasahib's forces at Fatehpur some reputed spies were brought to Nanasahib. They were accused of being the bearers of letter supposed to have been written to distant stations by the helpless women in prison. In the correspondence, some of the Mahajans and Baboos of the city were believed to be complicated. It was therefore resolved that the said spies together with the women and children, as also the few gentlemen whose lives have been spared, should be all put to death."—Narrative of Revolt Page 113.

सं. ४१ पृ. २९६

"The refinement of cruelty-the unutterable shame with which, in some chronicles of the day this hideous massacre was attended, were but fictions of an excited imagination, too readily believed without enquiry and circulated without thought. None were mutilated, none were dishonured......This is stated in the most unqualified manner by the official functionaries, who made the most diligent enquiries into all the circumstances of the massacres in June and in July." — Kaye and Mallesson's Indian Mutiny, Vol. II, Page 281.

सं. ४२ पृ. ३०५

"As soon as the Sikhs entered the town a wild Fakir rushed forward into the road & with savage menaces & threatening gestures reviled them as traitors and accursed."—Patna Crisis, by Tayler.

सं. ४३ पृ. ३०८

Commissioner Taylor himself says : Pir ali himself was a model of a desparate and determined fanatic, repulsive in appearance with a brutal and sullen coutenance, he was calm, self-possessed, almost dignified in language and demeanour. He is the type of class of men whose unconquerable fanaticism renders them dengerous enemies and whose stern resolution entitles them in some respects. to admiration and respect."

सं. ४४ पृ. ३७१

"The following graphic picture is given of the defeat by an English officer " You will read the account of the day's fighting with astonishment; for it tells how English troops, with their trophies and their mottoes and their far-famed bravery were repulsed, and they lost their camp, their baggage and position to the scouted and despised natives of India! The beaten Firinghies-as the enemy has a right to call them-have retreated to their entrenchments amidst overturned tents, pillaged baggage, men's kits, fleeing camels, elephants and horses, and servants. All this is most melancholy and disgraceful."- Charles Ball's Indian Mutiny Vol. II, Page 190.

सं. ४५ पृ ३८१

"The slaughter of the English is required by our religion. The end will be the destruction of all the English and all the Sepoys-and then God knows." Charles Ball's Indian Mutiny Vol. II, page 242.

सं. ४६ पृ. ३९१

'Sir W. Russel says about this Begum; "The great bulk of Sepoy army is supposed to be inside Lucknow, but they will not fight as well as the Match-

lock-men of Oudh who have followed their chiefs to maintain the cause of their King Birjis Kadir, and who may be fairly regarded as engaged in a patriotic war for their country and their sovereign. The sepoys during the seige of the Residency never came on as boldly as the Zemindary levies and Nujeibis. The Begum exhibits great energy & ability. She has excited all oudh to take up the interets of her son & the chiefs have sworn to be faithful to him. We affect to disbelieve this legitimacy but the Zemindars who ought to be better judges of the fact accept Brijis Kadir without hesitation. Will Government treat these men as rebels or as honourable enemies? The Begum declares undying war against us. It appears from the energetic characters of these Ranees & Begums that they acquire in their Zenanas and harems a considerable amount of actual mental power and at all events, become intriguers. Their contests for the ascendency over the minds of men give vigour and acuteness to their intellect."—Russell's Diary. pege 275.

सं. ४७ पृ. ४५०

"No sooner did we turn into the road leading towards the gate, then the enemy's bugle sounded, and a fire of indescribable fierceness opened upon us from the whole line of the walls and from the tower of the Fort overlooking this site. For a time it appeared like a sheet of fire, out of which burst a store of bullets, round shots and rockets destined for our annihilation... But the fire of the enemy waxed stronger, and amidst the chaos of sound, of volleys, of musketry and roaring of cannon hissing and bursting rockets, stink pots, infernal machines, huge stones, blocks of wood and trees, all hurled upon our heads, it seemed as though Pluto and the Furies had been loosened upon us, carrying death amongst us fast. At this instant a bugle sounded on our right for the Europeans to retire."—Lowe's central India P. 254.

सं. ४८ पृ. ४५७

" With regard to this injustice done to Rao, Malleson has to confess : " Not a shot had been fired against him (Whitlock) but he resolved nevertheless to treat the young Rao as though he had actually opposed the British forces. The reason for this perversion of honest being lay in the fact that in the palace of Kirwi was stored the wherewithal to compensate soldiers for many hard fight & many a broiling sun. In its vaults and strong rooms were specie jewels and diamonds of priceless value. The wealth was coveted."—Kaye and Malleson's Indian Mutiny Vol. V. P. 140-141.

सं. ४९ पृ. ४५८

" Then was witnessed action on the part of the rebels which impelled admiration from their enemies. The manner in which they conducted their retreat could not be surpassed. They remembered the lessons which the European officers had well taught them. There was no hurry, no disorder, no rushing to the rear. All was orderly as on a field day. Though their line of skirmishes was two miles in length, it never wavered in a single point, the men fired, then ran behind the relieving men, and loaded. The relieving men then fired, and ran back in their turn. They even attempted, when they thought the pursuit was too rash, to take up a position, so as to bring on it an infilading fire." - Malleson's Indian Mutiny Vol. V. P. 124.

सं. ५० पृ. ४८०

" But it is difficult to describe the wonderful secrecy with which the conspiracy was conducted and the forethought supplying the schemes, and the caution with which each group of conspirators worked apart, concealing the connecting links, and instructing them with just sufficient information for the purpose in view.

And all this was equalled onled by the fidelity with which they adhered to each other." –Western India, by George Le Grande Jacob, K. C. S. I; C. B.

सं. ५१ पृ. ४१२

Charles Ball says :—" After the proclamation, still the struggle in Oudh was wonderful, and all these bands of rebels were strengthened and encouraged to an inconceivable degree by the sympathy of their countrymen They could march without commissariat for the people would always feed them. They could leave their baggage without guard for the people would not attack it. They were always certain of this position and that of the British for the poople brought them hourly information. And no design could be possibly kept from them while secret sympathisers stood around every mess table and waited in almost every tent in the British camp. No surprise could be effected but by a miracle, while rumour, communicated from mouth to mouth, outstripped even our cavalry."—Vol. I Page 572

सं. ५२ पृ. ४१२-१३

" At the end of January 1859, Sir W. H. Russell was still with Lord Clyde and in one of his last letters from Lucknow he tells a delightful story which he heard from the Commander-in-Chief. Alluding to this landlord at Allahabad (Anglo-Indian general merchant), Lord Clyde said, " You doubtless heard what he did ? " 'No'. 'Well, he was much in debt to native merchants when the mutiny broke out. He was appointed special commissioner and the first thing he did was to hang all his creditors."

This 'delightful story' is not of course contained in any 'History of the Indian Mutiny'. It was not even contained in the Time's special correspondents letters to the Times intended for publication. It was mentioned only in a private letter of Sir W. H. Russel to John Delane.

सं. ५३ पृ. ५०९

Our remarkable friend, Tatia Tope, is too trouble-some and clever an enemy to be admired. Since last June he has kept Central India in a fervour. He has sacked stations, plundered treasuries, emptied arsenals; collected armies, lost them; fought battles, lost them; taken guns from native princes, lost them; taken more lost them; then his motions were like forked lightening; and for weeks, he has marched thirty and forty miles a day. He has crossed the Narbuda to and fro; He has marched between our colums, behind them and before them. Ariel was not more subtle aided by the best stage mechanism. Up mountains, over rivers, through ravines and valleys, amid swamps, on he goes, backwards and side ways and zig-zag ways, now falling upon a post-cart and carrying off the Bombay mails, now looting a village, headed and burned yet evasive as Proteus."—The Times, 17th January 1859.

सं ५४ पृ. ५१०

"It was accomplished. The nephew of the man recognised by the Marhattas as the heir of the last reigning Peshwa was on the Marhatta soil with an army. The Nizam was loyal. But the Times were peculiar. Instances had occurred before, as in the case of the Scindia, of a people revolting against their sovereign when that sovereign acted in the teeth of the national feeling. It was impossible not to fear lest the army of Tatia should rouse to arms the entire Marhatta population and that the spectacle of a people in arms against the foreigner might act with irrisistable force on the people of the Dekhan."—Malleson's Indian Mutiny, Vol. V. Page 239, 240.

सं. ५५ पृ ५१२

"One of the Great results that have flowed from the rebellion of 1857-1858 has been to make the inhabitants of every part of India acquaited with each other.

We have seen the tide of war rolling from Nepal to the borders of Gujerat,from the deserts of Rajputana to the frontiers of the Nizam's territories, The same men overrunning the whole land of India and giving to their resistance, as it were, a national character. The paltry interests of isolated states, the ignorance which men of petty principality have laboured under, in considering the habits & customs of other principalities — all this has disappeared to makeway for a more uniform appreciation of public events throughout India. We may assume that, in the rebellion of 1857 no national spirit was aroused, but we cannot deny that our efforts to put it down have sown the seed of a new plant and thus laid the foundation for more energetic attempts on the part of the people if, in the course of future years, England has not done something towards reconciling the numerous inconsistencies and suppressing some of the dangerous tendencies of its rule in India."—The Times 20th May 1859.

सं. ५६ पृ ५२१

Yet it must be admitted that, with all their courage they (the British) would have been quite exterminated if the natives had been all and altogether hostile to them. The desperate defences made by the garrisons were no doubt heroic; but the natives shared their glory, and they by their aid and presence rendered the defence possible. Our seige of Delhi would have been quite impossible, if the Rajas of Patiala and Jhind had not been our friends and if the Sikhs had dot recruited in our battalions and remained quiet in the Punjab. The Sikhs at Lucknow did good service, and in all cases our garrison were helped, fed and strengthened by them in the field. Look at us all, here in camp, at this moment, our out-posts are native troops, natives are cutting grass for our horses and grooming them, feeding the elephants, managing the transports, supplying the commassariat which feeds us, cooking their tents, waiting on our officers, and even lending us their money. The soldier who acts as my amanuensis

declares that his regiment could not have lived a week but for the regimental servants, Doly bearers, hospital men, and their dependents. Gurkha guides did good service at Delhi and the Bengal artillery men were as much exposed as the Europeans."—Russel's My Diary in India.

सं. ५७ पृ. ५२२

" Among the many lessons the Indian Mutiny conveys to the Historian, none is of greater importance than the warning that it is possible to have a Revolution in which Brahmins & Shudras, Hindus and Mohamedans, could be united against us, and that it is not safe to suppose that the peace and stability of our Dominions, in any great measure, depends on the continent being inhabited by different religious systems; for they mutually undersfand and respect and take a part in each others modes and ways and doings. The Mutiny reminds us that our dominions rest on a thin crust ever likely to be rent by titanic fire of social charges and religious revolution—Forrest's Introduction.